विषयानुक्रमणिका

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष २६ } जनवरी १९५५, पौष २०११ वि०, दयानन्दाब्द १३० { अङ्क ११

वैदिक प्रार्थना

न तं विदाथ य इमा जजानान्यद्युष्माकमन्तरं बभूव । नीहारेण प्रावृता जल्प्या चासुतृप उक्थशासश्चरन्ति ॥ ४४ ॥ यजु० १७ । ३१ ॥

व्याख्या—हे जीवो ! जो परमात्मा इन सब भुवनों का बनाने वाला विश्वकर्मा है उसको तुम लोग नहीं जानते हो, इसी हेतु से तुम "नीहारेण" अत्यन्त अविद्या से आवृत मिथ्यावाद नास्तिकत्व बकवाद करते हो, इससे दुःख ही तुमको मिलेगा सुख नहीं, तुम लोग "असुतृप." केवल स्वार्थसाधक प्राणपोषणमात्र में ही प्रवृत्त हो रहे हो "उक्थशासश्चरन्ति" केवल विषय भोगों के लिये ही अवैदिक-कर्म करने में प्रवृत्त हो रहे हो और जिसने ये सब भुवन रचे हैं उस सर्वशक्तिमान् न्यायकारी परब्रह्म से उलटे चलते हो अतएव तुम उसको नहीं जानते । (प्रश्न) वह ब्रह्म और हम जीवात्मा लोग, ये दोनों एक हैं वा नहीं ? (उत्तर) "यद्युष्माकमन्तरं बभूव" ब्रह्म और जीव की एकता वेद और युक्ति से सिद्ध कभी नहीं हो सकती, क्योंकि जीव ब्रह्म का पूर्व से ही भेद है, जीव अविद्या आदि दोषयुक्त हैं ब्रह्म अविद्यादि दोषयुक्त नहीं है । इससे यह निश्चित है कि जीव और ब्रह्म एक न थे, न होंगे और न हैं, किंच व्याप्यव्यापक, आधाराधेय, सेव्यसेवकादि सम्बन्ध तो जीव के साथ ब्रह्म का है, इससे जीव ब्रह्म की एकता मानना किसी मनुष्य को योग्य नहीं ॥ (आर्याभिविनय)

सम्पादकीय

आत्म-वञ्चना

कई लोग दूसरों को धोखा देते हैं, परन्तु अपने को धोखा देने वालों की संख्या उनसे अधिक है। अपने को धोखा देने वालों में बड़ी संख्या भले पुरुषों की होती है। वे दूसरों को धोखा देना तो बुरा समझते हैं, परन्तु अपने आप को धोखे में रखना यह उनसे प्रायः हो जाता है। यही आत्म वञ्चना है। आर्यों और आर्य नेता दूसरों को धोखा देने के तो अपराधी नहीं, परन्तु आत्म-वञ्चना के अपराधियों की संख्या तो उनमें पर्याप्त है।

मैं इस छोटे से अग्रलेख में अभी केवल दो आत्म-वञ्चनाओं की ओर आपका ध्यान आकर्षित करता हूँ। आर्य समाज के तीसरे नियम में है"....वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।" कितने आर्य सदस्य और आर्य नेता आज हैं जो प्रति दिन बिना किसी नागा के वेद के कम से कम एक ही मन्त्र का प्रतिदिन स्वाध्याय करते हों। बड़ी संख्या है जो न वेद का स्वाध्याय करते हैं न आगे किसी को सुनाते हैं। परन्तु अपने को आर्य, आर्य सदस्य, आर्य समाजी और आर्य नेता कहते हैं। क्या वे आत्म-वञ्चना नहीं करते ? वेद का स्वाध्याय परम धर्म कहा है, परम धर्म सब धर्म होते हैं, केवल परम धर्म ही नहीं होता।

एक आर्य महानुभाव से जब मैंने यह बात कही तो उन्होंने प्रतिदिन सन्ध्या और अग्निहोत्र के मन्त्रों को दुहराने में ही प्रतिदिन के वेद के स्वाध्याय को सीमित कर दिया। मैंने उन्हें कहा यही तो आत्म वञ्चना है। यूं तो कोल्हू का बैल भी उसी बीस फुट के घेरे में दिन भर चलते रहने पर कह सकता है 'मैं प्रतिदिन बीस मील का सफर करता हूँ।' 'जैसे बैल की आंखों पर पट्टी वैसे आप की आंखों पर पट्टी।' कहने लगे अन्य धर्मावलम्बी ईसाई, मुसलमान आदि कौन-सा सभी प्रतिदिन बाईबल और कुरआन पढ़ते हैं ? मैंने कहा "उन्हें महर्षि स्वामी दयानन्द जैसा पथ-प्रदर्शक कहां मिला, जिसने मनुष्य के शारीरिक सामाजिक और आत्मिक उत्थान के लिये धर्म ग्रन्थ वेद का पढ़ना पढ़ाना, सुनना सुनाना परम धर्म निश्चित कर दिया हो।

हम में से बहुतेरे तो कोल्हू के बैल जितना भी वेद के विषय में प्रयत्न और प्रगति नहीं करते। फिर पर भी हम कहते हैं आर्य समाज में प्रगति नहीं। आर्यों का धर्म है वैदिक धर्म, आर्यों का परम धर्म है वेद का स्वाध्याय, जो वेद का स्वाध्याय नियम पूर्वक नहीं करता, वह अधर्मी हुआ या न ? अभी किसी को बे धर्म कह दो तो काटने को दौड़ेगा। इसलिए तो अपने गिरेबान में मुंह ! टटोलिए तो अपना कृत्य !! कर्तव्य और कृत्य में आकाश पाताल का अन्तर है।

व्यक्तियों से ही तो समाज बनता है। लोहे की कड़ियों से जंजीर बनती है। मेरी ६ वर्ष की पोती ने ५०-६० सेफ्टी-पिन एक दूसरे के बीच में पिरो कर ५-६ फुट की चेन बनाली और मुझे दिखाते हुए कहा "मैंने जंजीर बनाया है।" मैंने कहा यह तो बड़ा सुन्दर है। इससे हम अपनी गौ बांधेंगे। उसने बड़े जोर की हंसी हंसते हुए कहा 'सुन्दर तो है, पर सुन्दर ही है, बस सुन्दर ही है। सेफ्टी पिन के जंजीर से भी कभी कोई कुछ बांध सकता है ? ऐसे जंजीर से तो, पिता जी ! छोटी सी चिड़िया भी नहीं बांधी जा सकती। पिता जी ! सेफ्टी पिन में भी भला कोई मजबूती होती है ? बस जरा सी होती है। बस तितली जितनी ताकत होती है। यह तो मैंने खेलने के लिए बनाई है।" अंग्रेजी में किसी कमजोर निर्बल और स्थिरता रहित वस्तु को House of cards भी कहते हैं—ताश के पत्तों से निर्मित घर। जैसे ताश के पत्ते, वैसा उनसे बना घर वेद के स्वाध्याय की दृष्टि से जैसे आर्य होंगे, वैसे उन से बना आर्य समाज होगा। वेद का स्वाध्याय न करना और 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का दावा करना आत्म-वञ्चना नहीं तो क्या है ? आओ हम नए वर्ष के प्रथम दिन इस आत्म-वञ्चना से मुक्त होने का संकल्प करें।

—कविराज हरनामदास

संसार को आर्य कैसे बनायें ?

प्रथम साधन—अपना आर्य जीवन

महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना इस उद्देश्य से की थी कि संसार भर में वैदिक धर्म का प्रचार करके मनुष्यमात्र को आर्य बनाया जाय। उद्देश्य जितना महान् है उतना ही विशाल भी है और उसकी पूर्ति उससे भी अधिक कठिन प्रतीत होती है। कठिनाई के अनेक कारण हैं। उन कठिनाइयों में से सबसे बड़ी यह है कि आर्यत्व स्वयं एक कठिन वस्तु है। ईसाई उसे कहते है जो ईसाई पादरियों द्वारा बतलाये गये सिद्धान्तों को स्वीकार करता हो। मुसलमान वह समझा जाता है जो हजरत मोहम्मद और कुरानशरीफ पर एतकाद रक्खे। इस दृष्टि से ईसाई अथवा मुसलमान को पहचानना बहुत आसान है। परन्तु आर्य शब्द की व्याख्या इतनी सरल नहीं। आर्य शब्द देववाणी का है। इसका अर्थ है श्रेष्ठ। जिसके कर्म और विचार दोनों श्रेष्ठ हों वह आर्य कहलाता है। महर्षि दयानन्द ने अपने स्थापित किये हुए समाज का नामकरण न तो अपने नाम से किया और न किसी ग्रन्थ के नाम से। उन्होंने समाज का नाम 'आर्य समाज' और उसके सदस्यों का नाम आर्य रक्खा। इसकी यही सुन्दरता है कि महर्षि ने नामकरण द्वारा ही अपने अभिप्राय को सर्वथा स्पष्ट कर दिया। वह आर्यसमाज को अन्य मत मतान्तरों की तरह कोई पन्थ नहीं बनाना चाहते थे और न ही यह चाहते थे कि केवल किन्हीं मन्तव्यों को मानकर कोई व्यक्ति धार्मिक समझा जा सके। वह धार्मिक तभी समझा जा सके जब उसके कर्म भी आर्यत्व लिये हुए हों।

"आर्य किसे कहते हैं ?" इस प्रश्न का सरलतम उत्तर यह है कि जिसके विचार शुद्ध और जीवन धर्मानुकूल हो वह आर्य है।

दूसरा प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि धर्म क्या है ? इस प्रश्न के उत्तर में महर्षि दयानन्द ने काशी के शास्त्रार्थ में जो उत्तर दिया था वह अत्यन्त सरल और सुबोध है। आपने मनु का यह श्लोक उद्धृत किया था—

धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधोएतद्दशकं धर्मलक्षणम् ॥

धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय निग्रह, धी, विद्या, सत्य, अक्रोध जो मनुष्य इन दस गुणों को अपने जीवन में धारण कर लेता है, वह धार्मिक होने से आर्य पदवी के योग्य है।

वैदिक सिद्धान्त सत्य होने के कारण मनुष्य के जीवन को धार्मिक बनाते हैं। सत्य सिद्धान्त सत्यकर्म के आधारभूत होने के कारण धार्मिक जीवन के लिये आवश्यक है। परन्तु यदि केवल सिद्धान्त तो हों परन्तु उनके अनुसार कर्म न हों तो मनुष्य धार्मिक या आर्य नहीं कहला सकता। इस विचार परम्परा से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वही मनुष्य आर्य कहलाने के योग्य है जिसका जीवन धर्मानुकूल और श्रेष्ठ हो।

ऐसे मनुष्य के बाह्य चिन्ह क्या होंगे ? किसी विशेष प्रकार के कपड़े या किसी विशेष प्रकार के तिलक आदि धार्मिकता या आर्यत्व के चिन्ह नहीं हो सकते। यदि वस्तुतः उसके जीवन में धर्म के लक्षण विद्यमान हैं तो उसके चेहरे पर शान्ति होगी, व्यवहार में उदारता और क्षमा होगी। वह क्रोध या क्षोभ के वश में नहीं आयेगा। उसके लिए सार्वजनिक भ्रष्टाचार अर्थात् रिश्वत लेना या देना सर्वथा असम्भव होगा। सारांश यह कि उसका जीवन अच्छे और ऊंचे जीवन का एक आदर्श होगा। वह सबके साथ प्रेम का बर्ताव करेगा, दीन दुःखियों की सहायता करेगा और अत्याचारियों के सामने दृढ़ता से खड़ा रहेगा। भय या लोभ उसे अच्छे मार्ग से न गिरा सकेंगे। वह निजी जीवन में अच्छा पुत्र, सदाचारी, गृहस्थी और अच्छा नागरिक होगा।

ये सब आर्यत्व के चिन्ह हैं। यह स्पष्ट है कि यदि हम मनुष्यमात्र को वैदिक धर्म का उपदेश देकर

आर्य बनाना चाहते हैं तो सबसे पहला कार्य जो हमें करना चाहिए वह यह है कि हम अपने आपको आर्य बनायें। "स्वयं बद्धा परान्ह कथं मोचयेत्" जो स्वयं बंधा हुआ है वह दूसरों को बन्धनों से क्या छुड़ायेगा। यदि हमारे मन में और हमारे आचरण में आर्यत्व नहीं तो हम वैदिक धर्म और आर्यसमाज के विषय पर चाहे कितने ही व्याख्यान दें और इन व्याख्यानों में महर्षि दयानन्द का नाम लेकर कितनी ही तालियां बजवायें, श्रोताओं पर हमारे शब्दों का कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। इसके विपरीत यदि हम मन, वाणी और कर्म से आर्य और सच्चे वैदिकधर्मी हैं तो हमारे चार सीधे सादे शब्द भी लोगों के हृदयों में परिवर्तन उत्पन्न कर सकते हैं। भरा हुआ घड़ा बोलता कम है परन्तु लोगों की प्यास को बुझाने को अधिक शक्ति रखता है। अधभरा घड़ा छलकता और बोलता है। वह कुछ देर के लिये प्रभाव जमा सकता है परन्तु अन्त में उसी का मान होगा जो भरा हुआ है। जो मनुष्य आर्यत्व से पूर्ण है वह यदि मौन भी रहे तो केवल उसके जीवन का दृष्टान्त दूसरों को आर्य बनाने के लिये पर्याप्त है।

आर्य समाज का इतिहास लिखने के प्रसंग में मुझे पुराने आर्य सामाजिक पत्रों को पढ़ने और आदि काल के आर्यजनों के जीवनों पर विचार करने का अवसर मिला है। जिन महानुभावों ने महर्षि के बोये हुये बीज को सींच कर वृक्ष रूप में पहुंचाने का श्रेय प्राप्त किया उनके जीवनों की सबसे बड़ी विशेषता यही थी कि वह क्रियात्मक धर्म के नमूने थे। वह सच्चे थे और निर्भय थे। लोभ या भय के कारण अपनी टेक को छोड़ना उनके स्वभाव के विरुद्ध था। किसी नगर या ग्राम में यदि एक भी ऐसा आर्य होता था तो आस पास के लोग उसे बड़े आदर की दृष्टि से देखते थे। कभी २ यह भी होता था कि लोग उसके विचारों से सर्वथा असहमत हों परन्तु फिर भी उस निर्भय, सच्चे और व्यवहार के खरे आर्य समाजी के जीवन से प्रभावित होकर लोग आर्य समाज की ओर झुक जाते थे।

उस समय आर्य समाज का दायरा छोटा था। आज बहुत बढ़ गया है। तब देश का वातावरण हमारे विचारों के प्रतिकूल था। अब बहुत अनुकूल हो गया है। तो भी यदि हम यह अनुभव करते हैं कि हमारे प्रचार की शक्ति कम हो गई है, नौजवान आर्यसमाज की ओर नहीं झुकते या हमारा संगठन बिखर गया है तो इसका मुख्य कारण यही है कि सामाजिक विस्तार के बढ़ जाने पर व्यक्तिगत जीवनोंकी शुद्धता पर हमारा इतना ध्यान नहीं रहा। साधारण जनता हमारे सिर अपने से ऊंचे नहीं समझती। मेरा आर्यजनों से यह निवेदन है कि वह दूसरे धर्मों और व्यक्तियों के जीवनों की कड़ी आलोचना करने से पूर्व अपने अपने जीवनों पर दृष्टि डालें और देखें कि उनमें क्या न्यूनता है। उस न्यूनता को पूरा करके ऐसे आर्य बनने का यत्न करें कि उनका जीवन स्वयं उपदेशात्मक बन जाय। यदि हम इस ओर विशेष ध्यान देंगे तो हमारी यह शिकायत जाती रहेगी कि आर्य समाज का प्रचार रुक गया है। —*इन्द्र विद्यावाचस्पति*

स्वर्गीय डा० श्यामस्वरूप जी के प्रति श्रद्धांजलि

यह समाचार आर्य जगत् में बड़े दुःख से सुना गया कि बरेली के सार्वजनिक जीवन के प्राणस्वरूप श्रद्धालु और कर्मठ आर्य समाजी डा० श्यामस्वरूप सत्यव्रत का देहान्त हो गया है। डा० श्यामस्वरूप उन थोड़े से आर्य पुरुषों में से थे जिनके विश्वास और क्रिया में रेखा मात्र का भी अन्तर नहीं रहता। जो बात उनके मन में आई उसे कार्य परिणत करने में देर नहीं लगती थी। ऋषि दयानन्द के परम भक्त थे। आर्य समाज के सिवा अन्य किसी संस्था में उनका दिल नहीं लगता था। उनके अन्दर जितना स्नेह और अपनावट की मात्रा थी वह सब महर्षि दयानन्द और आर्य समाज के लिये अर्पित थी। बरेली वाले खूब जानते हैं कि वह अमृतपाणि वैद्य थे। राख की चुटकी भी उठा कर दे देते थे तो रोगी नीरोग होने लगता था। कमाई भी खूब की परन्तु उस कमाई का कोई हिस्सा भी कभी अपना न समझा। बरेली में कितनी ही संस्थाएं हैं जिनके सर्वेसर्वा डाक्टर जी थे। डाक्टरी

की कमाई इनमें लग जाती थी। डाक्टर जी के गुण ही उनके दोस्त थे। रुपये पैसे की वह कोई कीमत नहीं समझते थे जो आया सो 'इदम् आर्य समाजाय इदन्नमम्' का पाठ करके आर्य संस्थाओं के अर्पण कर देते थे। उनके मित्र अनुभव करते हैं कि यदि वह कुछ अधिक संसारी होते तो वह आर्य समाज में और अन्य सार्वजनिक क्षेत्रों में भी बहुत ऊंचे पद पर पहुँच सकते थे। परन्तु वह तो अपने विश्वास के दीवाने थे। धन, मान और पद इनमें से कोई भी जीवन भर उन्हें न खेंच सका। जिसे अपना धर्म समझा उसे जी जान से करने में लग गये और उस पर सर्वस्व वार दिया। यही डा० श्यामस्वरूप जी के जीवन का रहस्य था। आर्य समाजियों की दृष्टि में उनके बिना आज बरेली सूनी हो गई और उत्तर प्रदेश का आर्य संगठन दरिद्र हो गया। —इन्द्र विद्यावाचस्पति

श्रीयुत डाक्टर श्याम स्वरूप जी के असामयिक निधन से बरेली नगर अपने एक प्रसिद्ध नागरिक और आर्य समाज के एक पुराने भक्त और निस्पृह सेवक से वंचित हो गया जिसका तन, मन, धन और सर्वस्व आर्य समाज पर अर्पण था और जिन्होंने अपनी सादगी, आतिथ्य सेवा, त्याग परोपकार वृत्ति और व्यवसायिक योग्यता एवं सेवा से आर्य समाज को लोक प्रिय बनाया था। बरेली नगर की अनेक आर्य सामाजिक सस्थाओं स्कूल, कालेज, गुरुकुल अनाथालय का जन्म और उत्तम संचालन उनकी अचिन्त्य सेवाओं का फल था जो उन्हें सन्तानवत प्रिय रहीं।

डाक्टर महोदय प्रसिद्ध सार्वजनिक कार्यकर्त्ता थे अतः उनके आलोचकों और प्रशंसकों का होना स्वाभाविक था। भले ही वे उनके वैयक्तिक और सार्वजनिक जीवन के मूल्यांकन में एकमत के न रहे हों परन्तु जिस एक बात में वे एकमत के रहे वह थी उनकी आर्य समाज के प्रति अगाध निष्ठा और उसके लिये अपना सर्वस्व न्यौछावर करने की प्रवृत्ति। उनके बड़े से बड़े आलोचक भी उनके क्रियात्मक त्याग भाव की प्रशंसा किये बिना न रहते थे।

इस महान् दुःख में हम उनके परिवार के प्रति हार्दिक समवेदना का प्रकाश करते हुये परमपिता से उनकी आत्मा की सद्गति के लिये प्रार्थना करते हैं।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

आज के पत्रों में एक दुखद सूचना मिली कि बरेली नगर व आर्य समाज के नेता डा० श्यामस्वरूप सत्यव्रत का देहावसान हो गया। डाक्टर जी स्वामी दयानन्द और आर्य समाज के बहुत पुराने भक्त थे। उन्होंने डी० ए० वी० कालेज लाहौर में शिक्षा प्राप्त की थी और महात्मा मुन्शीराम जी (स्वामी श्रद्धानन्द) तथा प्रो० रामदेव जी का गुरुकुल के आदि काल में बड़ा सहयोग दिया था। श्री नारायण स्वामी जी के तो वह अनन्य भक्त थे और अन्त काल तक उनकी सेवा करते रहे। मेरा और उनका १९१९ ई० से परिचय था। जब वह यू० पी० प्रतिनिधि सभा के उप प्रधान और मैं उपमन्त्री चुना गया था। डाक्टर जी को आर्य सामाजिकों से इतना प्रेम था कि यदि कोई रोगी उनके पास पहुंच जाता तो वह बिना किसी फीस के उसकी दवादारू करते और परिवार के मनुष्य की तरह उसकी सेवा सुश्रूषा करते। बरेली की अनेक आर्य सस्थाओं के संपोषक डाक्टर श्याम स्वरूप जी ही थे। डाक्टर जी के चले जाने से आर्य समाज को बड़ी क्षति पहुँची है। हम उनके पुत्रों व परिवार के साथ हार्दिक समवेदना प्रकट करते हैं।

— गंगाप्रसाद उपाध्याय

एक लड़की का उद्धार

श्री स्वामी धर्मानन्द जी तथा अन्य एक नवयुवक के यह सूचित करने पर कि देहली के काठबाजार (वेश्यालय) में एक हिन्दू कन्या गुण्डों द्वारा बह काई जाकर बाहर से लाई गई है और उससे बलात् पेशा कराया जा रहा है, सार्वदेशिक आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति श्री ओ३म् प्रकाश जी पुरुषार्थी ने तुरन्त पुलिस की सहायता से उसका उद्धार किया और उसके विवाह की भी व्यवस्था कर दी, जो शीघ्र ही सम्पन्न हो जायगा।

बाहर गांव तथा पहाड़ी क्षेत्रों से ये गुण्डे या इनके दलाल बेचारी बहिनों को शहर के सिनेमा, अच्छे विवाह आदि का प्रलोभन देकर भगा लाते हैं और उनसे यहां बलात् पेशा कराते हैं। गुण्डों का इतना सुदृढ़ जाल है कि वहां उनके विरुद्ध मुंह खोलने का भी साहस नहीं होता। जो बहिन उनका विरोध करती हैं उसे बैंतों से पीटा जाता है।

नगर के बीच में बेहयायी का यह केन्द्र प्रातः दस बजे से रात के दस बजे तक चलता रहता है। पास के भले परिवारों तथा वहां से गुजरने वाले नव-युवकों पर इस केन्द्र का बड़ा ही घातक प्रभाव पड़ रहा है।

देहली सरकार तथा म्युनिसिपैलिटी ने न जाने कौन सी भलाई देखी है जो इसे अब तक सुरक्षित रख छोड़ा है। अपने को नगर पिता कहने वालों के लिये यह बात कदापि शोभा नहीं देती।

आत्महत्या

आत्म हत्या पाप और जघन्य अपराध है। इस की भावना ही ग्लानि प्रद है। इसका सम्बन्ध मस्तिष्क की घोर विकृत अवस्था के साथ होता है जो मनुष्य के मानस चक्षुओं के सामने निराशा के काले बादल व्याप्त करके मनुष्य को कायरों की मौत मरने के लिए सन्नद्ध कर देती है।

आत्म हत्या का प्रायः सभी सत्शास्त्रों में खण्डन पाया जाता है। शरीर परमात्मा का मन्दिर होता है इसीलिए इसे नष्ट करने पर दिव्य प्रतिबन्ध लगा होता है। उसे स्वयं नष्ट करना परमात्मा के प्रति अक्षम्य अपराध माना जाता है। कहावत है कि शरीर को नष्ट करके जीवित प्रकाश को बुझा देने से आत्मा असीम अन्धकार में भटकता है।

दुर्भाग्य जीवन के कठोर परीक्षणों एवं अरुचिकर परिस्थितियों पर विजय पाने में ही वीरता है। दुर्भाग्य से विजित होकर मौत की शरण जाने में वीरता नहीं होती अपितु कायरता होती है। मृत्यु का गौरव तो सम्मानपूर्वक मरने में ही रहता है।

भूख, असाध्य रोग-पीड़ा, अपमान के भय, समाज के अत्याचार, प्रणय-जनित निराशा, मादक द्रव्य आदि २ कारणों से आत्म हत्याओं के समाचार पढ़ने और सुनने को मिलते हैं जो स्वतः निन्दनीय और तिरस्कृत होते हैं परन्तु ऐसे कारणों से भी आत्म हत्याओं के होने के समाचार मिलते हैं जो न केवल घृणित ही अपितु कौतूहल पूर्ण भी होते हैं। लन्दन आब्सर्वर पत्र के अनुसार एक पाश्चात्य गायक ने आत्म हत्या इसलिए की कि एक आपरेशन के फल-स्वरूप वह एक बैंड पार्टी में बड़ा ढोल ले जाने में असमर्थ हो गया था। कपड़ों का डिजाइन बनानेवाली एक महिला ने इसलिये विष पान किया कि वह ४० वर्ष की आयु में मोटी होती जा रही थी।

एक टैक्सी ड्राइवर ने क्रोध में आकर अपनी टैक्सी एक गहरी नदी में डालकर अपना अन्त इसलिए कर डाला कि एक अमेरिकन मुसाफिर ने जाते समय उसे इनाम न दिया था।

अनुकरणीय परम्परा

देहली के सुप्रसिद्ध आर्यनेता श्रीयुत प्रो० रामसिंह जी एम० ए० सदस्य दिल्ली विधान सभा के सुपुत्र का विवाह ६-११-५४ को सम्पन्न हुआ। परमात्मा करे यह विवाह वर वधु, परिवार और समाज के लिए मंगलकारक सिद्ध हो।

इस विवाह का निमन्त्रण पत्र संस्कृत में छपाया गया था। गत वर्ष श्रीयुत शिवशंकर जी गौड़ भूतपूर्व सदस्य पब्लिक सर्विस कमीशन मध्यभारत की सुपुत्रियों के विवाह के निमन्त्रण भी संस्कृत में छपे थे। यह परम्परा अनुकरणीय एवं प्रशंसनीय है।

आवश्यक कर्त्तव्य

श्रीयुत अर्जुनदेव (पेशावर) वानप्रस्थी लिखते हैं:—

"आर्यसमाज की सेवा करता हुआ मैं अपनी सत्तर वर्ष की आयु में इस परिणाम पर पहुँचा कि आर्य-समाज में बहुत अधिक संख्या ऐसे महानुभावों की है जो अपने सिद्धान्तों से पूरे परिचित नहीं। अब भी

किसी अन्य मत वालों की युक्ति को सुनते हैं तो झट उनकी हां में हां मिला देते हैं और मन से उसी गढ़े में गिर जाते हैं और स्वयं डावांडोल और झिलमिल विश्वास रहते हैं, क्योंकि अपने घर से परिचित नहीं। वे भाई आर्य समाज के कामों को देखकर सदस्य बने, और एक वर्ष बीतने पर आर्य सभासद् बन जाते हैं। यदि कुछ भाई समझते भी हैं तो उनके घर की अवस्था उनसे विपरीत होती है, क्योंकि हमने देवियों की ओर बहुत कम ध्यान दिया है। यदि देवियां ठीक रास्ते पर आ जावें तो पुरुषों की तो कोई बात ही नहीं, वह तो नकेल बन्धे हुवे सीधे रास्ते पर चल सकते हैं। यह मेरे अनुभव की बातें हैं।

२—मेरी सम्मति है कि हम भ्रम जाल आदि के जिस गढ़े मे गिरे हुये हैं उस गढ़े से निकलने के लिये केवल सत्यार्थप्रकाश ही एक ठीक सहारा है, जिसको पकड़कर हम उस गढ़े से ऊपर निकलकर समतल भूमि पर अर्थात् सच्चाई के द्वार तक पहुंच सकते हैं, फिर प्रभु के विचित्र उपवन या भवन के अंदर जाने के लिये वेदभाष्य भूमिका और वेदादि सत्य ग्रंथों को स्वय ही पढ़ना आरम्भ कर देवेंगे। उस समय स्वय अन्दर से इच्छा इसके लिये उठेगी।

३—इस सम्बन्ध में मेरा यह सुझाव है कि प्रत्येक भाई और बहिन आर्य सभासद् जब तक कि वह सत्यार्थ प्रकाश को कम से कम एक बार प्रथम भूमिका से लेकर अंत तक विचार पूर्वक पढ़ लेवे, स्वयं अपने आप को आर्य सभासदी से पृथक समझे और चालीस दिन में प्रतिदिन एक एक घन्टे में दस पृष्ठ पाठ करे, फिर आधा घन्टा उस पढ़े हुये पर विचार करे। इस प्रकार वैदिक यन्त्रालय अजमेर का ३६८ पृष्ठ का पुस्तक चालीस दिन में समाप्त हो जावेगा। यदि इकट्ठे मिल कर पढ़े तो प्रत्येक पढ़ने और सुनने वाले भाई और बहिन नियमपूर्वक प्रतिदिन पढ़ें। इस प्रकार आर्य भाई और बहिनें जब अपने आप को दृढ़ विश्वासी समझ लेवे, तब वह अपने आप को हृदय से आर्यसभासद् जानें। यह बल का काम नहीं, दबाव नहीं, सब भाई और बहिनें जो सच्चाई के साथ हार्दिक प्रेम रखते हैं वे स्वयं इस प्रस्ताव पर आरूढ़ हो जावें। प्रभु की कृपा से प्रत्येक आर्य सभासद् सच्चा उपदेशक बन जावेगा। यह आर्यसमाज की उन्नति की इस समय पहली सीढ़ी है। यदि मेरी बहिनो और माताओं ने नम्रता पूर्वक किये गये इस निवेदन को अपना लिया, तो शीघ्र ही बेड़ा पार है, वरन् याद रखिये, "मुखालिफ हवाएं बड़े जोरों से चल रही हैं और काबू से बाहिर होती जा रही हैं।"

४—इस कार्य का आगामी परिणाम यह होगा कि प्रतिनिधि सभाओं में जाने वाले प्रतिनिधि महाशय और देवियां आर्य सिद्धान्तों से परिचित होंगे। वहां से सार्वदेशिक सभा में जाने वाले सभासद् भी इसी तरह सब के सब ऐसे ही महानुभाव होंगे, जिसका अंतिम परिणाम स्वयं ही यह हो जावेगा, कि उपनियम में आर्य सभासद् की परिभाषा में उपस्थित और चन्दा की शर्त के साथ, यह अनिवार्य शर्त भी बढ़ा दी जावेगी, कि आर्य सभासद् और प्रतिनिधि ने आरम्भ से अंत तक सत्यार्थप्रकाश को कम से कम एक बार पढ़ लिया है। इसकी समाज भी पुष्टि करेगी और सभासद् की ओर से भी स्वीकार पत्र हो जावेगा।

५- --अंत में आर्य संन्यासी महात्माओ, आर्य उपदेशक महानुभावो और आर्यसमाजों के प्रधान व मन्त्री महाशयों से नम्रतापूर्वक निवेदन है कि इस आवश्यक काम को आप ही पूर्ण कर सकते हैं जिससे थोड़े समय में आर्य समाज बहुत ऊंचाई पर पहुँच जावेगा, इसलिये अवश्य इसको कार्य रूप में लाने की कृपा करें।

कुछ और प्रकाश

मराठा 'केसरी' (पूना) ने इस राजद्रोहात्मक कारस्तानियों पर ५ सितम्बर के लेख में बहुत बातों पर प्रकाश डाला है।

जमीयत उलेमा के पक्षपाती लोगों का विचार है कि अमेरीका ने नेहरू सरकार को मात देने के लिये

वे दंगों का उपक्रम कराता है क्योंकि भारत की नीति अमरीका के विपरीत है इसलिये गोहत्या बन्दी में भी अमरीका की प्रेरणा है। गोहत्या विरोधी आन्दोलन का ध्येय केवल दंगा करा कर नेहरू को चक्कर में डालकर अमरीका को प्रसन्न करना है।

यह अमेरिका के खराब पक्षपाती लोगों की इस युक्ति परम्परा का और कोई ध्येय नहीं है, सिवाय सर्वोच्च नेहरू सरकार परेशान है।

निश्चय ही गोहत्या बन्दी आन्दोलन का इन दंगों से कोई सम्बन्ध नहीं है। पाकिस्तानी झण्डा फहराने से भी गोहत्या आन्दोलन का कोई संबन्ध नहीं है।

पाकिस्तान को पीठ पर अमरीका है। पाकिस्तान के झण्डे की हैदराबाद में ही नहीं सारे भारत में यह कारस्तानी की गई है।

मध्य प्रदेश के रायपुर में कचहरी पर, उत्तर प्रदेश में अलीगढ़, इलाहाबाद, बरेली, रामपुर, मथुरा इत्यादि स्थानों में भी पाकिस्तानी झंडा फहराया गया है।

श्री सम्पूर्णानन्द जी गृहमन्त्री उत्तर प्रदेश ने स्पष्ट कहा है कि मुस्लिम जमात संस्था जातीय द्वेष फैला रही है। परन्तु श्री पं० नेहरू की कांग्रेस समिति के आदेश पत्रों में हिन्दू सभा और जन संघ पर सब दोषारोपण करने की वृत्ति दिखाई गई है। तो भी उत्तर प्रदेश की सरकार सतर्क है।

क्या कारण है कि हैदराबाद के नगरों में जहां दंगे हुए हैं वहां के मुसलमानों ने अपनी दुकानें कई दिन पहले खाली कर दीं, वहां के बड़े अधिकारी छुट्टियां ले लेकर स्थानान्तर चले गये। वहां के पाकिस्तानी पत्रों ने हिन्दुओं को ही पाकिस्तानी झण्डा फहराने वाला बतलाया है। कुछ भी हो मामला यह सब एक भारी षड्यन्त्र है, और भारतीय चक्र ध्वज के आदर के ऊपर यह एक करारा अपमान का आघात द्रोहियों ने किया है।

ईसाई मिशनरियों के प्रश्न पर तो अभी सरकार का ध्यान जा रहा है पर अभी पाकिस्तानी पंचम स्तम्भी लोगों पर सरकार की दृष्टि होनी है।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

बधाई

"सार्वदेशिक" पत्र के दिसम्बर मास के अंक से यह जानकर कि सरहदी जन्म के सुप्रसिद्ध आर्य नेता श्री ठाकुर धर्मसिंहजी के पुत्र का सम्बन्ध जिसके लिये कुछ समय से यत्न हो रहा था और पत्रों में भी कुछ आन्दोलन हुआ था, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री कविराज हरनामदास जी ने अपनी भांजी के साथ निश्चित कर दिया है मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई।

आर्य जनता को यह भली भांति विदित है कि शुद्धि कार्य में शिथिलता का मुख्य कारण यह है कि जो सज्जन शुद्ध होते हैं या शुद्धि के लिये इच्छुक होते हैं उनकी सन्तान के साथ आर्य लोग विवाह करने को तय्यार नहीं होते। यह बात भी छिपी हुई नहीं है कि ऐसे सज्जनों की पुत्रियों के साथ आर्य लोग अपने पुत्रों के विवाह कर भी देते हैं परन्तु उनके पुत्रों को अपनी कन्याएं विवाह में देना नहीं चाहते। यह आर्य समाज के लिए एक घोर कलंक की बात है। श्री ठाकुर धर्मसिंह जी के विषय में ऐसा ही हुआ। उनकी तीन कन्याओं के विवाह आर्य परिवारों में हो गये। परन्तु उन के पुत्र के विवाह के लिये यत्न किये जाने पर भी अब तक असफलता रही। आर्य जनता के लिये यह लज्जा की बात है। इसलिये श्री कविराज हरनामदास जी का साहस विशेष प्रशंसा के योग्य है। मैं आर्य परिवार संघ की ओर से श्री कविराज जी को हार्दिक बधाई व साधुवाद देता हूँ और आशा करता हूं कि उनका अनुकरण करके अन्य आर्य सज्जन भी ऐसी अवस्थाओं में अपनी कन्याओं का विवाह करने के लिये तैयार होंगे जिससे शुद्धि के कार्य में प्रगति हो।

गंगा प्रसाद, एम. ए. रिटा. चीफ जज,
पूर्व प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
व संरक्षक, जातिभेद निवारक आर्य परिवार संघ,
जयपुर (२१-१२-५१)

क्या संसार व मनुष्य जीवन दुःखमय है ?

Pessimism Vrs. Optimism.

(लेखक—श्रीयुत प० गंगा प्रसाद जी रि० चीफ जज, जयपुर)

(नवम्बर के अंक से आगे)

जीव भी अनादि है। ईश्वर हर प्रलय के अन्त में नई सृष्टि रचते समय उन सब जीवों को जिनके कर्म शेष हैं उनके कर्मों के अनुसार जन्म देता है, जैसा यजुर्वेद के ४० अ० के नीचे लिखे ७वें मन्त्र में कहा गया है—"याथा तथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।" (अर्थ) ईश्वर ने अपनी (शाश्वतीभ्यः) सदा स्थित रहने वाली (समाभ्यः) प्रजा को अर्थात् असंख्य जीवों को (याथातथ्यतः) यथा तथा अर्थात् उनके कर्मों के अनुसार (अर्थान् व्यदधात्) फल दिये।

सृष्टि में विकास—सृष्टि का क्रम अनादि है, पर हर "सृष्टि के दो उद्देश्य होते हैं—एक जीवों को कर्मों के अनुसार फल देना, दूसरा उनकी क्रमानुसार उन्नति करना।" इसी को आज कल की भाषा में विकास Evolution कहते हैं। जैसा कि पैरा ७ में कहा गया प्राणियों की सृष्टि के "१४ लोक" या सर्ग हैं, और "८४ लाख योनियां" कही जाती है, जिनमें सब लोकों के जीव शामिल हैं। सब से निचला लोक 'स्थावर' व 'उद्भिज' अर्थात् वृक्ष वनस्पति आदि का है। उसमें भी लाखों प्रकार के जड़ी बूटी, वनस्पति वृक्ष आदि हैं, जो आत्मिक विकास की दृष्टि से ऊंचे नीचे हो सकते हैं, इस लोक को पार करके जीव दूसरे लोक में आता है जिसको 'स्वेदज' कहते हैं, उसमें भी ऊंची नीची असंख्य योनियां हैं। उससे ऊपर 'अंडज' लोक है जिसमें लाखों या हजारों 'जलचर' जीव मछली आदि हैं, और 'रेंगने वाले' सर्प आदि हैं। उनसे ऊपर 'पक्षी' आदि है जो 'अंडज' लोक के अन्तर्गत हैं। इससे ऊपर का लोक जरायुज है। इसमें असंख्य प्रकार के पशु आदि है जिनके बच्चों को उनकी माता दूध पिलाकर पालती है। इन को अंग्रेजी में nuammals कहते हैं। मनुष्य भी इन्हीं में एक योनि है जो 'आत्मिक' विकास में सब से ऊंची है। मनुष्य के सिवाय शेष 'जरायुज' योनियां 'तिर्यक' सर्ग में शामिल हैं।

सृष्टि का साधारण नियम—मनुष्य योनियों में जब जीव जन्म लेता है तो पूर्व जन्म के कर्मानुसार अच्छा या बुरा "स्थूल शरीर" पाता है, और उसी प्रकार अच्छा या "बुरा सूक्ष्म शरीर" पाता है जिसमें बुद्धि, मन, व इन्द्रियां शामिल हैं। यह संभव है किसी जीव के कर्म ऐसे बुरे हों कि उसको मानव शरीर छोड़ने पर किसी पशु का शरीर मिले अथवा उससे भी नीचे। परन्तु इसको "अपवाद" समझना चाहिये सृष्टि का "साधारण नियम उन्नति" का है। इसलिये साधारणतया मृत्यु के बाद मनुष्य योनि ही मिलती है। इस योनि में अच्छे बुरे ऊंचे नीचे सेकड़ों प्रकार के शरीर हो सकते हैं।

उच्चतर योनि—यदि किसी मनुष्य के ज्ञान व कर्म बहुत अच्छे हो (परन्तु ऐसे न हों कि वह मोक्ष का अधिकारी हो), तो मनुष्य से "उच्चतर लोक में भी जा सकता है।" यह बात "बृहदारण्यक" उपनिषद् के अध्याय ४ के नीचे मन्त्र से बहुत स्पष्ट हो जायगी —

तद्यथा पेशस्कारी पेशसो मात्रामोदाय अन्यन्नवतरं कल्याणतरं रूपं तनुते, एवमेवायमात्मेदं शरीरं निहत्या विद्यां गमयित्वा अन्यन्नवतरं कल्याणतरं रूपं कुरुते, पैत्र्यं वा, गान्धर्वं वा, दैव्यं वा, प्राजापत्यं वा, ब्राह्मं वा अन्येषां वा भूतानाम् ॥१॥ (बृहद् ४ । ४ । ४)

(अर्थ) जैसे स्वर्णकार सोने की मात्रा लेकर (पुराने आभूषण या पदार्थ से) भिन्न, नया, और पहले से अच्छा (कल्याणतर) रूप बनाता है, इसी प्रकार यह 'आत्मा' (मृत्यु के समय) इस शरीर को नष्ट करके और अविद्या को दूर करके, उस से भिन्न, नया, और

पहले से अच्छा कल्याणतर) शरीर रखता है –वह चाहे (मनुष्य योनि का हो), वा "पितृ योनि" का हो, वा 'गंधर्व' योनि का हो, वा 'देव योनि' का हो, वा 'ब्रह्म' योनि का हो, अथवा अन्य किसी योनि का हो।

श्री अरविन्द का मत–योगिराज स्वर्गीय श्री अरविन्द घोष ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ Life Divine में सृष्टि का उद्देश्य विकास Evolution मानते हुए "पुनर्जन्म" के सिद्धान्त को 'विकास का मुख्य साधन" माना है, अर्थात् मृत्यु के बाद जीव को साधारणतया पहले से अच्छा शरीर मिलता है, जैसा कि स्वर्णकार के उदाहरण से स्पष्ट होता है, यह नियम केवल मनुष्य योनि के लिये नहीं है किन्तु "सारी सृष्टि में लागू है।" वृक्ष वनस्पति उन्नत होकर 'स्थावर' योनि से 'जंगम' योनि में आते हैं। जंगम योनि में भी 'अंडज' से उन्नत होकर जीव 'जरायुज' योनि में जाता है, जरायुज योनि में भी ऊंचे नीचे दर्जों के अनेक जीव जन्तु हैं। सब से ऊंचा दर्जा मनुष्य का है।

मृत्यु व पुनर्जन्म–'पुनर्जन्म का द्वार मृत्यु ही है।" इसके बिना दूसरा जन्म नहीं हो सकता इस लिये "आत्मिक उन्नति का मुख्य साधन मृत्यु है" और "संसार की प्रगति के लिये मृत्यु परम आवश्यक है।

यहां एक बात स्पष्ट करनी चाहिये, मैं मनुष्य के लिये "मांस भक्षण" अधर्म ही मानता हूं। यह शास्त्रों से भी सिद्ध है और युक्ति व तर्क से भी सिद्ध है। परन्तु हिंस्र जन्तुओं के लिये दूसरे जीव या पशु ही उनके खाद्य हैं, इसलिये "उनके लिये पशु हिंसा पाप नहीं," क्योंकि यही सृष्टि का नियम है। 'जलचर' जीवों का तो नियम ही है (जिसको "मत्स्य न्याय" कहते हैं) अर्थात् बड़ी मछली छोटी मछली को खाती है। ऐसे जीवों की संख्या 'जलचर' जीवों से कहीं अधिक है। 'थलचर' जीवों में भी मांस भक्षी जीवों की संख्या अधिक है, और ऐसा ही 'खेचर' या पक्षियों में पाया जाता है।

'नास्तिक' तथा कुछ अन्य लोग भी सृष्टि कर्त्ता 'ईश्वर पर यह झूठा लांछन" लगाया करते हैं कि "संसार में जहां देखो हत्या काण्ड मचा हुआ है।" परन्तु जो युक्ति ऊपर दी गई उसको ध्यान में रखते हुए यही परिणाम निकलता है कि "जीवों की जो हत्या होती है वही वास्तव में जीवों के विकास का साधन है, और उनकी आत्मिक उन्नति उसके बिना नहीं हो सकती। मोटी दृष्टि से देखने पर एक सिंह का किसी मृग की हत्या करना बड़ा क्रूर कर्म प्रतीत होता है, पर सिंह के लिए वह क्रूर कर्म नहीं। मृग के लिये भी ऐसी मृत्यु साधारण मृत्यु से अधिक दुख दायी नहीं। "हर जीव की मृत्यु अवश्यम्भावी है," और साधारणतया 'मृत्यु' में जीव को बहुत दुख नहीं होता। यदि ईश्वर के नियमों के अनुसार (जिनका उद्देश्य संसार की उन्नति और जीवों का विकास ही है), एक हिंस्र जन्तु के द्वारा मृत्यु हुई तो कोई घृणित या निन्दनीय बात नहीं। यह सृष्टि का साधारण नियम ही है।

(१०) जरा वा बुढ़ापा—मृत्यु के दूसरे दर्जे पर जरा वा बुढ़ापे का दुख समझा जाता है। यदि मनुष्य सदाचार का नियमित जीवन रक्खे, और स्वास्थ्य रक्षा के नियमों का पालन करे तो बुढ़ापा बहुत समय तक टल सकता है। अमरीका के एक विद्वान् की एक प्रसिद्ध पुस्तक Prevention of Old Age मैंने देखी। उसका हिन्दी अनुवाद "बुढ़ापा रोकने के उपाय" भी प्रकाशित हो चुका है। उसमें लेखक ने स्वास्थ्य रक्षा के अनेक नियमों के सिवाय कुछ ऐसे सरल व्यायाम भी बतलाये हैं जो (हठ योग के आसनों की तरह) घर पर रहते हुए ही किये जा सकते हैं, और कुछ बिस्तर पर लेटे हुए ही हो सकते हैं। सब बड़े सरल व उपयोगी हैं।

स्वास्थ्य की उचित रक्षा करते हुए बुढ़ापा अधिक दुखदाई नहीं होना चाहिये, इसके सिवाय उसके कुछ सुखदाई फल भी हैं। काम क्रोध, लोभ, मोह को बहुधा लोग पाप या दोष ही मानते हैं। पर

साधारण अवस्था व उचित मात्रा में वे सदा बुरे नहीं। गृहस्थाश्रम व युवावस्था में उनका उपयोग भी है। पर दुरुपयोग करने पर ये दोष हो जाते हैं। युवावस्था में इनके दुरुपयोग की संभावना रहती है, अथवा इनकी मात्रा बढ़ जाती है। वृद्धावस्था में मनुष्य इनका नियंत्रण कर सकता है। यम व नियमों का पालन कर सकता है जिससे सदाचार की उन्नति हो। यह बुढ़ापे से एक स्पष्ट लाभ है। युवावस्था में मृत्यु होने पर मनुष्य उससे वंचित रहता है और उसका सूक्ष्म शरीर उतना उन्नत नहीं होने पाता जितना वृद्धावस्था के उच्चतर जीवन से हो सकता है।

एक विद्वान् ने Pleasures of Age नामक पुस्तक अंगरेजी में लिखा है जिसमें बहुत सी रोचक व उपयोगी बातें लिखी गई हैं।

(११) रोग दुख—मृत्यु व बुढ़ापा दुःखों के बाद रोग दुःख है। महात्मा गौतम को तपस्या के लिये गृहत्याग करने से पहले इन्हीं तीन दुःखों के दृष्टान्तों को देखकर परम वैराग्य हुआ था।

आयुर्वेद व चिकित्सा शास्त्र Medical Science के सब विद्वान् वैद्य, हकीम व डाक्टरों का यह मत है कि रोग बिना कारण नहीं होता, और स्वास्थ्य रक्षा के नियमों का उल्लंघन करने का ही परिणाम होता है। होमियोपैथी के विद्वानों का मत है कि साधारण रोग (जैसे अजीर्ण वा ज्वर) वास्तव में रोग नहीं किन्तु इस बात की सूचना रूप होते हैं कि मनुष्य ने स्वास्थ्य सम्बन्धी कोई भूल की है। और आरम्भ में कोई औषधि लेनी भी आवश्यक नहीं होती, यदि सूचना पाकर उचित यत्न किया जाय तो रोग दब जाता है। असावधानी व अनुचित चिकित्सा से कठिन रोग हो जाते हैं, जैसे संग्रहणी या विषम-ज्वर।

विज्ञान की उन्नति के साथ चिकित्सा शास्त्र Medicine & Surgery में भी बहुत उन्नति हो गई है। कई ऐसे रोगों की जो पहले असाध्य समझे जाते थे, अब उत्तम औषधि बन गई हैं। शल्य शास्त्र surgery में अब चीड़ फाड़ operation करने में रोगी को उतना कष्ट नहीं होता जितना पहले होता था, और रोग बढ़ने या मृत्यु हो जाने की भी उतनी आशंका नहीं रहती। श्री सन्तराम बी. ए. (मन्त्री जात-पांत तोड़क मण्डल व सह-सम्पादक 'विश्व ज्योति' होशियारपुर) ने इस पत्र के गतांक में एक उत्तम लेख में लिखा है जिसका शीर्षक है—"अपने अस्वास्थ्य से लाभ उठाओ।" लेख में अच्छे व हितकर सुझाव दिये गये हैं।

(१२) जीवन की सामान्य दशा—पांडोचेरी के योगी स्वर्गीय श्री अरविन्द घोष ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ Life divine के भाग १ अ० ११ व १२ में यह सिद्ध करने का यत्न किया है कि मानव-जीवन मुख्यतः आनन्द मय है। उनका कहना है कि साधारण मनुष्य के जीवन में ऐसा समय बहुत कम होता है जिसमें उसको दुःख व पीड़ा होती है, और ऐसा समय बहुत अधिक होता है जिसमें दुःख नहीं होता। इस सामान्य या सुख दुःख रहित neutral अवस्था को लोग न दुःख कहते हैं न सुख।

श्री अरविन्द ने इसको Delight of existence माना है अर्थात् जीवन की प्रसन्नता। इसी के कारण मनुष्य कितना ही दुःखी या रुग्ण हो वह मरना नहीं चाहता। योग में इसका नाम अभिनिवेश रक्खा गया है। मनुष्य से नीचे की अर्थात् तिर्य्यक योनियों में भी यही बात पाई जाती है। कोई भी जन्तु हो वह हर दशा में मौत से बचना चाहता है। शिकार के समय कोई जन्तु जख्मी हो गया हो वह उस दशा में भी भाग कर बचना ही चाहता है। यह सृष्टि में एक व्यापक नियम है। श्री अरविन्द ने लिखा है—Delight of being is universal, Illimatable, and self existent." (vol. I P. 149)

अर्थात् "जीवन की प्रसन्नता विश्वव्यापी है, अनन्त है, और स्वयंभू है।" इस दृष्टि से जीवन का बहुत बड़ा भाग सुखमय ही रहता है।

भूख व प्यास को भी कई लोग दुःख कहने लगते हैं। यह स्पष्ट भूल है। भूख उसी दशा में दुःखदाई होती है जब कि समय पर भोजन न मिले। भोजन मिल जाने पर यदि वह साधारण भी हो तो भोजन में सुख का अनुभव होता है। यदि कुछ स्वादिष्ट हो (जैसा बहुधा लोग बनाने का यत्न करते हैं) तो और भी अधिक सुख का अनुभव होता है। इसी प्रकार प्यास भी तब ही दुःखदायी होती है जब प्यास लगने पर पानी न मिले, समय पर मिल जाने से साधारण पानी पीने में भी सुख होता है। यदि शर्बत आदि हो तो और भी अधिक सुख होगा।

(१३) दुख व सुख सापेक्षिक हैं—यह प्रसिद्ध बात है कि दुख-सुख सापेक्षिक Relative है, निश्चित या नियत Abesolute नहीं हैं। कोई वस्तु एक मनुष्य को सुख देती है दूसरे को दुख देती है। एक ही मनुष्य को कोई वस्तु एक समय सुखदायी होती है, दूसरे समय दुखदाई हो जाती है। ये सब लोगों के साधारण अनुभव की बातें हैं।

(१४) Hypnotism हिपनौटिज्म व तप आदि की अवस्था—हिपनौटिज्म के द्वारा जो एक प्रकार की साधारण यौगिक साधना व मानसिक क्रिया है, साधक की इच्छा पर साध्य की ऐसी दशा हो जाती है, जिसमें उसको होश रहते हुए भी दुख नहीं मालूम होता। अपने ही सुझाव auto-suggestions से अभ्यासी मनुष्य स्वयं अपनी ही ऐसी दशा कर सकता है।

तप या तपस्या करने की अवस्था में अभ्यासी मनुष्य को बहुत प्रकार के शारीरिक दुखों का अनुभव नहीं होता। धार्मिक अत्याचार के इतिहास व कथाओं से सिद्ध है कि बहुत से मनुष्यों को अनेक प्रकार के घोर शारीरिक कष्ट दिये गये परन्तु उन्होंने उनको इस प्रकार सहन किया जिससे परिणाम निकलता है कि उस विशेष आध्यात्मिक दशा के कारण उनको दुःख नहीं हुआ।

ईश्वर चिन्तन के विषय में किसी महात्मा का वचन है—

"दुःख मे तो हर कोई भजे, सुख में भजे न कोय।
जो कोई सुख में भजे तो दुख काहे को होय॥

इसी भाव से मिलता हुआ यह दूसरा वचन है—

"सुख के सिर पत्थर धरूं जो हरि को देय भुलाय।
बलिहारी उस दुःख के जो हरि से देय मिलाय॥"

(१४) सारांश—जो कुछ ऊपर लिखा गया है उससे स्पष्ट है कि संसार व मानव जीवन मुख्यतः सुखमय है। सामान्य नियम सुख ही है, दुख अपवाद रूप है। दुःख जब होता है तो अकारण नहीं होता, बिना उद्देश्य भी नहीं होता। उस का उद्देश्य साधारणतया आत्मा का सुधार होता है।

'तैत्तिरीय उपनिषद्' में यह ठीक कहा है—

"आनन्दाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते। आनन्देन जातानि जीवन्ति। आनन्दं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति।" (तैत्ति० भृगु वल्ली अनुवाक ६)

अर्थ—"आनन्द रूप परमेश्वर ही से सब भूत उत्पन्न होते हैं। आनन्द ही से उत्पन्न होकर जीवित रहते हैं। आनन्द ही में सब पहुँचकर लीन हो जाते हैं।" ॥ ओं शमिति ॥

* ज्ञानोपदेश *

(श्री स्वामी शिवानन्द जी)

मनुष्य अनुभव करता है कि उसे किसी वस्तु का अभाव है। परन्तु उस वस्तु के स्वरूप को वह स्वयं नहीं समझ पाता। वह मन चाही डिग्रियां, डिप्लोमे, शक्ति, पद, नाम और यश प्राप्त करता है। वह सुन्दर कन्या के साथ विवाह करता है और प्यारे बच्चों की सृजना करता है। इस पर भी वह अशान्त और क्लान्त रहता है।

क्यों? मनुष्य सदैव रहने वाला आनन्द चाहता है और प्रत्येक पदार्थ में जिसके साथ उसका वास्ता पड़ता है, वह आनन्द की खोज करता है। वह सोचता है कि पत्नी और बच्चों में ही सच्चा सुख है। परन्तु दुःख है कि वह सर्वत्र नीचे की ओर जाता दीख पड़ता है। जिस सुख की वह खोज करता है उसे किसी वस्तु से वह सुख नहीं मिल पाता। गृहस्थी यह समझता है कि अविवाहित सुखी है, अविवाहित यह सोचता है कि गृहस्थी सुखी है। दोनों यह सोचते हैं कि 'त्यागी' व्यक्ति सुखी है।

हे मनुष्य तू जाग! अज्ञान की नींद को छोड़दे। तू नित्य सुख चाहता है। वह तो नित्य में ही प्राप्त होगा। उसी में उसकी खोज कर। अपनी इच्छाओं का दमन कर, मन को शान्त बना, विकारों को दबा, मनन कर, अपनी दृष्टि अन्दर ले जा। उसी में आनन्द के नित्य स्रोत अपने आपको देख।

अपने हृदय को लचकीला बना, हाथ को दान शील, वाणी को मधुर और जीवन को परोपकारमय बना।

जो कुछ अच्छा हो उसका विचार कर। उसे ही कह और उसी को कर।

विनम्र परन्तु दृढ़ बन सभ्य परन्तु वीर बन, एकान्त प्रिय परन्तु सच्चा बन, सीधा सादा परन्तु साहसी और आत्म गौरवमय बन।

परोपकार करना, इन्द्रियजित बनना और पशुत्व को दिव्यता में परिवर्तित करना ही उच्चतम धर्म है।

प्रत्येक सप्ताह कोई निष्काम सेवा करो। अपने सांसारिक कर्तव्यों का भी इसी भाव में अनुष्ठान करो। काम ही पूजा है। इस काम को भी परमात्म अर्पण करो।

धैर्य, प्रेम, दया और सहिष्णुता के द्वारा क्रोध और ईर्ष्या पर काबू रखो। भूलने और क्षमा करने की आदत डालो। अपने को परिस्थितियों का स्वामी बनाओ। अपनी इच्छाओं को कम करो, अपने साधन को कम करो। धीरे २ आसक्ति से छुटकारा पाओ, आत्मावलम्बी बनो, सादे जीवन और उच्च विचार के सांचे में जीवन को ढालो।

नैतिक जीवन

(श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक)

सूर्य सदैव अपनी कीली पर घूमता है। पृथ्वी अनवरत गति से सूर्य के चहुँ ओर घूमती रहती है। वायु सदैव चलता रहता है। प्रकृति के तत्वों की नियमित गति और प्रगति से हमें कर्मण्यता का उत्तम पाठ प्राप्त होता है।

मनुष्य एक क्षण के लिये भी निष्क्रिय नहीं रह सकता। क्रिया आत्मा का स्वाभाविक गुण है और कर्म करने के लिये ही मनुष्य को मानव जन्म प्राप्त होता है। जीवन क्या है? वह काम करने का दिन होता है भले ही वह छोटा क्यों न हो?

कर्मण्यता से बुराई पैदा हो सकती है परन्तु बिना कर्मण्यता के अच्छाई पैदा नहीं हो सकती। कर्मण्यता

से प्रसन्नता का प्राप्त न होना सम्भव है परन्तु कर्मण्यता के बिना प्रसन्नता का प्राप्त होना असम्भव है। उदासी और आलस्य कर्मठ व्यक्ति से कोसों दूर भागते हैं। कर्मशील व्यक्तियों को उदास होने के बहुत कम अवसर मिलते हैं। कर्मण्यता से जीवन को शक्ति और संयम से सौन्दर्य प्राप्त होता है। जितना ही हम अधिक कार्य करेंगे उतनी ही अधिक उस कार्य के करने की हमें शक्ति प्राप्त होगी। जितना ही अधिक हम अपने को किसी अच्छे कार्य में व्यस्त रखेंगे उतनी ही अधिक हमें फुरसत प्राप्त होगी।

मानव शरीर का कोई भी अवयव ऐसा नहीं है जो कर्मण्यता के बिना विकसित हो सके। समस्त शक्तियों से समुचित रीति से पूरा काम लेने पर ही मानव की प्रफुल्लता पूर्ण होती है परन्तु कर्मण्यता के साथ विवेक और दूरदर्शिता जुड़े होने चाहिये। विवेकहीन कर्मण्यता से अधिक भयंकर कदाचित ही कोई अन्य वस्तु हो। मुगल सम्राट औरंगजेब अन्य समस्त सम्राटों की अपेक्षा अधिक कर्मण्य था। उसका समस्त जीवन मुगल साम्राज्य को हस्तगत करने, उस की रक्षा करने और उसको विस्तृत करने में व्यतीत हुआ। परन्तु उसकी कर्मण्यता विवेकपूर्ण सिद्ध न हुई और हृदय पर अत्यधिक बोझ रखे हुए उसे यहां से विदा होना पड़ा।

जिनके निश्चय बहुत सोच विचार के पश्चात् होते हैं जो अपने निश्चयों पर अमल करते हैं जो गौरव के साथ अपनी हार मानते और पूरी शक्ति के साथ किसी बात का विरोध करते हैं वे कर्म के क्षेत्र में उत्तम उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। राजा पुरु युद्ध में सिकन्दर से पराजित हुआ परन्तु उसने गौरव के साथ ही सिकन्दर को आत्मसात किया। महात्मा लिंकन ने दास प्रथा के उन्मूलन के लिये वर्षों तक गृह युद्ध को टाले रखा परन्तु जब युद्ध अनिवार्य हो गया तब उसमें कूद कर सफलता प्राप्ति तक निमग्न रहे। जब महात्मा गांधी भारत की स्वतन्त्रता के लिए प्रबल ब्रिटिश राज्य से असहयोग करने के लिये कटिबद्ध हुए तो वे अकेले थे। देश और विदेश के प्रमुख राजनीतिज्ञ उनके इस निश्चय और साहस पर हंसते थे परन्तु धीरे धीरे उनका मार्ग प्रशस्त होता गया और अन्त में वे अपने प्रयास में सफल हो गये। प्रत्येक उच्च कार्य अपना मार्ग स्वयं बना लेता है क्योंकि उसमें परमात्मा का हाथ रहता है।

प्रत्येक पवित्र कार्य स्वतः अपना पारितोषिक होता है। उसके लिए बाह्य पारितोषिक की आवश्यकता नहीं होती। वह पारितोषिक आन्तरिक प्रफुल्लता होती है जो जीवन को अधिकाधिक उन्नत करती और जिसके सहारे जीवन खूब फलता फूलता है।

भीतर से उठने वाली उत्साह और उमंग, भय, लज्जा और शंका की अनुभूतियों के द्वारा मनुष्य को कर्तव्य और अकर्तव्य का सहज ही आभास होता रहता है। परमात्मा की सहायता और कृपा के वे ही जन अधिकारी होते हैं जिनका प्रत्येक विचार और कार्य पवित्र अन्तरात्मा की प्रेरणा और परमात्मा के भय से अनुप्राणित रह कर शुद्ध और पवित्र होता रहता है। ऐसे व्यक्ति उच्च कार्य की सफलता पर परमात्मा के प्रति कृतज्ञ भावना से आनन्द विभोर हो विनम्र बन जाते हैं।

इस जन्म के कार्य दूसरे जन्म का प्रारब्ध बनाया करते है। अत: हमें अपना भविष्य जीवन अच्छा बनाने के लिये इस जन्म में सदैव उत्तम कर्म करते रहना चाहिये। कोई भी कर्म चाहे वह अच्छा हो या बुरा, कभी नष्ट नहीं होता और न हम उसके फल से बच सकते हैं। अच्छे कर्म से हम उस निधि का निर्माण करते हैं जो आवश्यकता पड़ने पर हमारा कार्य सिद्ध करती है। कर्म में जितनी निस्पृहता और उच्चता होगी उतना ही वह श्रेष्ठ होगा। व्यापारी उस दिन को अपने लिये नष्ट हुआ समझता है जिस दिन उसे लाभ नहीं होता। निष्काम भाव में कर्तव्य भावना से सत्कर्म करने वाले जन उस दिन को नष्ट हुआ समझते हैं जिस दिन अस्त होता हुआ सूर्य उन पर नहीं मुसकराता।

कौन काम अच्छा है और कौन काम बुरा इसका निर्णय करना सुगम नहीं है। संकुचित सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक दृष्टिकोणों से अच्छा काम बुरा और बुरा काम अच्छा देख पड़ने लगता है। यह मति-भ्रम सुख और शान्ति का सबसे प्रबल शत्रु होता है। आज युद्ध के द्वारा शान्ति और भौतिक सम्पन्नता के द्वारा मानव की समस्याओं के हल का ज्यों ज्यों यत्न किया जाता है त्यों त्यों शान्ति दूर भागती और मानवीय समस्यायें जटिल बनती जा रही हैं। युद्ध काल में नागरिक प्रजा को सुरक्षित रखना युद्ध की एक विशिष्ट मर्यादा मानी गई है परन्तु आज शत्रु पर विजय प्राप्त करने के लिए नागरिक प्रजा को आतंकित करना या उसका विनाश करना युद्ध कला मानी जाने लगी है। दुराचार, अनाचार, बलात्कार, लूटमार, हत्या, अग्निकांड, अन्याय और असत्याचरण प्रायः प्रत्येक सभ्य समाज में पाप माने जाते हैं परन्तु किसी मत (धर्म) विशेष के नाम पर किये गये लूट मार हत्या आदि के जघन्य कृत्य पुण्य माने जाते हैं। असभ्य जातियों में दया, त्याग, परोपकार आदि का व्यवहार अपने वर्ग के लोगों तक ही सीमित रहा है। दया और न्याय के साक्षात् प्रतिमान नेता और शासक अपने वर्ग से बाहर के लोगों के लिए क्रूरता के देहधारी प्रतीक सिद्ध हुए हैं। बेबोलिया के एक राजा की रानी ने जो अपने वर्ग में देवदूत के समान समादृत था अपने पति देव के साथ जुआ खेलते हुए दूसरे वर्ग के अपने एक दास का जीवन दाव पर लगाया और राजा के हारने पर राजा की आज्ञा से उस दास की जिव्हा खाल खिचवाई गई। असभ्य जातियों की असभ्य कालीन यह वर्ग भावना आज भी राष्ट्रीयता के उनकी बर्बर पाशविक प्रवृत्तियां चमकीली सभ्यता के और चमड़ी जन्य उच्च बोध की दूषित भावना काले गोरे के भेद भाव में व्यक्त होकर न केवल मानवता को ही कलंकित कर रही अपितु विश्व में अनाचार अत्याचार और अशान्ति व्याप्त कर रही है।

धर्म और भोग अमर्यादित रूप में दुःख का कारण माने और तिरस्कृत समझे जाते हैं परन्तु आज अमर्यादित धन और भोग सुख का साधन और सभ्यता का चिन्ह माना जाता है। जो कर्म मत, सम्प्रदाय, देश रंग, जाति और अपने पराए के भेदभाव की कृत्रिम दीवारों को लांघ कर विशाल मानव समाज को लक्ष्य में रखता और मानवता को स्पर्श करता हुआ अपना स्पन्दन परम पिता परमात्मा तक ले जाता हो वही सत्कर्म कहलाता है। नैपोलियन बोनापार्ट की आज्ञा से एक शत्रु राजा के राजमहल में आग लगाई गई। राजा और राजमहल के निवासी अपनी जान बचाकर भाग गये परन्तु रोग शैया पर पड़ा हुआ एक राजकुमार भागने में असमर्थ होने के कारण आग की लपटों में घिर गया। नैपोलियन को ज्यों ही इस बात का पता लगा त्यों ही उसने राजकुमार के जीवन की रक्षा की आज्ञा जारी कर दी। सेनापति को नैपोलियन की यह आज्ञा सैनिक अनुशासन के विरुद्ध जान पड़ी उसने नैपोलियन से इस आज्ञा को रद्द करने की प्रार्थना की। नैपोलियन ने इन्कार करते हुए कहा—"सेनापति! मानवता सैनिक अनुशासन से ऊंची होती है"

बुरा कर्म पतनकारी होता है। उसके विष का दूषित प्रभाव हमारे समस्त शरीर पर व्याप्त हो जाता है। बहुत से धर्म ध्वजी और सदाचार की मूर्ति दीख पड़ने वाले व्यक्ति एकान्त में वा रात्रि के अन्धकार में बुरे से बुरा दुष्कर्म करते और समझते हैं कि उनके दुष्कृत्य को कोई नहीं देखता, परन्तु उनके शरीर वा मुखाकृति से उनका वह दुष्कर्म दुनियां के लोगो पर प्रकट हो ही जाता है। यदि दुनियां के लोगों पर प्रकट न भी हो तो परमात्मा पर प्रकट हुये बिना नहीं रहता। परमात्मा हमारे प्रत्येक कार्य को देखता है अतः उसको प्रसन्न रखने के लिए हमें अच्छे ही कर्म करने चाहियें। इस भावना के हृदय में बद्धमूल हो जाने पर मनुष्य बहुत सी बुराइयों और अपराधों से बच जाता है।

बिना खतरा मोल लिये अच्छा कार्य करना साधारण बात है परन्तु अच्छे व्यक्तियों का यह स्वभाव

होता है कि वे अपने को खतरे में डाल कर भी उच्च और महान् कार्य करते हैं। इस प्रकार के व्यक्तियों के सत्कर्मों से मीठी गन्ध निकलती है और उन गन्ध का प्रभाव चिरकाल पर्यन्त रहता है। उनके कर्म धूल में भी फलते फूलते रहते हैं। क्या चित्तौड़ गढ़ की राख राजपूत रमणियों के आत्म-बलिदान से सुवासित नहीं है ?

अच्छे विचारों का महत्व होता है परन्तु उस महत्व की रक्षा उन विचारों को क्रियान्वित करने से ही होती है। मनुष्य के कर्म उसके विचारों के द्योतक होते हैं। वृक्ष की पहचान उसके फल से होती है। मनुष्य को विचार और कर्म दोनों में ही महान् होना चाहिए। मर्यादा पुरुषोत्तम राम, योगिराज कृष्ण प्रभृति महान् आत्माओं के विचारों का हमें बहुत कम ज्ञान है। हम तो उनके महान् कार्यों के सम्बन्ध में ही पढ़ते और सुनते हैं। इच्छा करना और अवसर प्राप्त होने पर चूक जाना, इच्छा न करने के समान होता है। अच्छा काम करने से प्रेम करना और जब अच्छा काम करने की सम्भावना हो तब अच्छा काम न करना अच्छे काम से प्रेम न करने के समान होता है।

हमारा जीवन एक पुस्तक के समान है उसकी विषय सूची का वही भाग महत्वपूर्ण होता है जो अधिक से अधिक शुभ कर्मों से परिपूर्ण हो और उसके वे ही पृष्ठ चमकदार होते हैं जो उच्च कार्यों के वर्णन से प्रकाशमान हों।

* राष्ट्र की आधार शिला *

(लेखक-सम्पादक "प्रबुद्ध भारत" कलकत्ता)

कोई भी शासन चाहे वह कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो एक मात्र राजनैतिक शक्ति पर निर्भर रहकर राष्ट्रीय समस्याओं का सफलता पूर्वक न तो हल कर सकता है और न राष्ट्र का गौरव ही बढ़ा सकता है। देश की समस्याओं का हल करने और उसको समृद्ध बनाने में देश की प्रजा का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व होता है। शासन तो अधिक से अधिक यही कर सकता है कि वह प्रजा के सम्मिलित प्रयास को सुसंगठित करके देश के साधनों के अनुपात में उसे उपयोगी मार्ग पर डाल उसका पथ प्रदर्शन करदे। जो प्रजा अपनी सहायता स्वयं किए बिना बात बात में शासन के मुंह की ओर देखती है वह उन्नति के पथ पर दूर तक जाने की आशा नहीं कर सकती। यह बात ध्यान देने योग्य है कि प्रजातन्त्र में प्रजा को अधिकार तभी प्राप्त होते हैं जबकि वह नागरिक के रूप में अपने कर्त्तव्यों और उत्तरदायित्वों को पूरा करें। प्रत्येक देश के दूरदर्शी नेता और विवेकशील विचारक शासन के वास्तविक स्वरूप की अपेक्षा नागरिक के उत्तरदायित्व की इस भावना पर विशेष बल देते हैं।

सुनियंत्रित और चरित्रवान् राष्ट्र अकाट्य सिद्धांतों की नींव पर खड़ा होता है। व्यक्ति के आचरण को बदलने के लिए यह आवश्यक है कि उसको प्रभावित करने वाले आदर्श और प्रेरणाएं उसके हृदय को स्पर्श करें और वे उसके जीवन के साथ समन्वित हों। उन आदर्शों को उसकी बीज रूप दिव्यता को जाग्रत करके उसको यह अनुभूति करानी होती है कि वह और राष्ट्र एक ही हैं। मुख्य रूप से आध्यात्मिक संस्कृति से ही यह एकत्व सिद्ध होता है। राष्ट्रीय आदर्श (शैक्षिक, सामाजिक और आर्थिक आदि २) स्वार्थ मय व्यक्तित्व का दमन करने में बड़ी सीमा तक सहायक होते हैं। राष्ट्रीय आदर्शों से आध्यात्मिक आदर्श को बल मिलना चाहिए। भारतवर्ष में राष्ट्रीय आदर्शों की आधार शिला आध्यात्मिक आदर्श होता है। भारत के राष्ट्रीय आदर्श

हैं त्याग और सेवा। इन आदर्शों को प्रतिष्ठित करदो बाकी की वे स्वयं खबर रखेंगे।

पश्चिम के तथाकथित धर्म्म निरपेक्षता के आदर्श पर भारत को ढालने का यत्न करते हुए हम जल्दी में उन्मत्त हुए उस पग के खतरे की उपेक्षा नहीं कर सकते जो हमारे देश के लिए अनुपयुक्त है। धर्म्म पर अत्यधिक बल देने से साम्प्रदायिकता की उत्पत्ति नहीं होती। धर्म के समन्वयकारक भावना को समझ न सकने के कारण मतान्धता जनित असहिष्णुता पैदा हो जाती है। धर्म्म व्यक्ति का निजू मामला है इस धारणा से स्थिति नहीं सुधर सकती। इस धारणा के कारण धर्म के सम्बन्धी भ्रम अछूते रह जाते हैं जो अशिक्षित जन साधारण मे व्याप्त मतान्धता के मूल में काम करते हैं। इतिहास के विद्यार्थी भली भांति जानते हैं कि साम्प्रदायिक तनाव राजनैतिक सामाजिक वा आर्थिक स्पर्धा मे ही अधिकांश रूप में पाया जाता है। धर्म निरपेक्षता से अनेक समस्याओं की सृष्टि होती है और आध्यात्मिकता घाव पर मरहम का काम करती है। धर्म आभ्यन्तर को पवित्र करता है। धर्मशास्त्र मार्ग पर चला हुआ राष्ट्र वास्तविक शक्ति प्राप्त करता है और राष्ट्र के सर्व सुखी विकास और कल्याण के लिए जिन अन्य विशेषताओं की आवश्यकता होती है वे भी उसे उपलब्ध हो जाती हैं।

साधनवाद को चुनौती

श्री कृष्ण जी के जीवन पर वृथा आक्षेप

'सरिता' की नई शरारत

(श्री विश्वनाथ जी आर्य्योपदेशक दुघली 'गोरखपुर')

वैदिक धर्म में अहिंसा को परम धर्म कहा है, परन्तु पूज्य महात्मा गांधी जी ने इसकी ऐसी व्याख्या की जिससे कायरता और अत्याचार को प्रोत्साहन मिला। अब श्री विनोबा भावे ने इसी प्रकार के साधन वाद अर्थात् साध्य अच्छा तो साधन भी अच्छा होना चाहिये का प्रचार गांधीवाद के नाम से आरम्भ कर रखा है। अतः यह वाद अब राजकीय रूप भी धारण कर चुका है। अतः इसके प्रसाराकांक्षी इस पर अधिक बल दे रहे हैं। सितम्बर मासकी 'सरिता' में श्री रामेश्वराचार्य शास्त्री का इसी विषय पर लेख है और शोक है कि आर्य जाति के परम मान्य श्रीकृष्ण जी पर कीचड़ उछाला गया है। उन्हे दम्भी, कपटी, ठग, झूठा, बेईमान, विश्वासघाती, कुकर्मी आदि कहते हुए तनिक भी लज्जा अनुभव नहीं की गई। यहीं तक नहीं सरिता के स्वामियों ने गोपाल के लेख की भांति इसके रिप्रिंट निकाले हैं। मैं पूछता हूँ अन्य मतों के प्रवर्तक भी इसी नीति के थे। बहुविवाह के भी पोषक थे। क्या आप उनके जीवन पर भी इसी प्रकार के आक्षेप कर सकते हैं? क्या आर्य जाति को ही ऐसा क्षुद्र समझा गया है कि जो चाहे उस पर चोट कर दे। अधिक शोक इस बात का है कि आर्य जाति की सन्तान स्वयं गोद में बैठी दाढ़ी नोच रही हैं। यह लेख श्री कृष्ण जी को मध्य में लाये बिना भी लिखा जा सकता था। ऐसा ज्ञात होता है कि आर्य सभ्यता पर आक्रमण के लिए ऐसे विषयों को बहाना बनाया जाता है। अस्तु हम यहां साधनवाद की चीर फाड़ के साथ यह सिद्ध करेंगे कि श्री कृष्ण जी की नीति से नहीं, प्रत्युत इस के त्याग से भारत की अधोगति हुई और आगे को होगी। यह मेरी चुनौती है तदर्थ सरिता में शास्त्रार्थ करने को उद्यत हूँ।

श्री कृष्ण जी की नीति का यह अर्थ कदापि नहीं कि सदा सदाचार के नियमों का उल्लंघन करो प्रत्युत जहां पर दुष्टता का सामना हो और सदाचार के नियमों से सफलता न हो सके वहां पर 'दुष्टे दुष्ट

समाचरेत्' के नियमानुसार दुष्ट साधनों से भी अपने उत्तम साध्य की सिद्धि करनी चाहिये। महाभारत कर्ण पर्व ६९।३२ में आपका सिद्धान्त श्लोक है—

भवेत्सत्यं अवक्तव्यं वक्तव्यं अनृतं भवेत्।
यत्रानृतं भवेत्सत्यं सत्यञ्चैवानृतं भवेत्॥

जहां झूठ वस्तुतः सत्य हो और सत्य झूठ हो, वहां पर सत्य नहीं झूठ बोलना चाहिये। मानव सदा अन्न का सेवन करता है जो अमृत के रूप में बल पुष्टि देता है। परन्तु विशेष रोगों में इसका सेवन विष का प्रभाव उत्पन्न करता है और औषधि जो एक प्रकार से साधारण अवस्था में विष का प्रभाव करता है वह रोगावस्था में अमृत बन जाती है। यही अवस्था सत्य और अहिंसादि की है। उदाहरण के लिये यदि घर में विषधर सांप हो और अहिंसावाद से उसकी हिंसा न की जावे तो घर के लोगों की हिंसा होगी और उस की हिंसा से रक्षा। अतः यहां पर अहिंसा वस्तुतः हिंसा होगी और हिंसा अहिंसा। यह कहना नितान्त भ्रान्ति है, कि दुष्ट के साथ दुष्टता के व्यवहार से दोष व पाप हो गये। वस्तुतः दुष्ट को यदि निश्चय हो कि मेरी दुष्टता का उत्तर दिया जावेगा, तो वह दुष्टता पर उतारू ही न होगा। और यदि दुष्टता कर ही देगा तो उसके साथ दुष्टता का व्यवहार होने पर पुनः दुष्टता का उसे साहस न होगा। और चुप रहने पर तो उसे अत्याचार का अधिक अवसर मिलेगा। भेड़ बकरी के चुप रहने पर कसाई को कभी दया नहीं आई। शोक है कि महात्मा गांधी ने मानवातिरिक्त प्राणियों के सम्बन्ध में इस नियम को स्वीकार करके भी मानवावस्था में सुधार की आशा से इसे स्वीकार नहीं किया यद्यपि इतिहास और संसार की वर्तमान अवस्था बतलाती है कि जब कोई मानव अत्याचारी बन जाता है तो उसकी हिंसा शतशः विषधर सांपों और हिंसक सिंहों से भी बढ़ जाती है।

यही बात हम साध्य और साधन के सम्बन्ध में भी कह सकते हैं। वस्तुतः साधन का अपना कोई मूल्य नहीं है। साध्य की सिद्धि के रूप में ही उसका महत्व है। निकृष्ट साध्य की सिद्धि के लिए उत्तम साधन भी निकृष्ट कहलावेगा और उत्तम साध्य के हेतु निकृष्ट साधन भी उत्तम बन जावेगा। स्वर्ण बहुमूल्य धातु है परन्तु यदि कोई धनी कृषक हलका फाला सोने का बना ले तो उसकी मूर्खता को सिद्ध करेगा। यहां पर लोहा ही उत्तम साधन है कहा जावेगा। एक धूर्त पुरुष किसी युवती को मधुर वचनों और सेवा भाव से विश्वास दिला कर उसको भ्रष्टाचार के प्रयोग में लावे तो यह मधुर वचन और सेवा कर्म दुष्ट साधन ही कहे जावेंगे। इसके प्रतिकूल एक वीर युवक सरोवर में डूबती युवति को बचाने के लिए पकड़ता है उसका हाथ किसी लज्जा-जनक स्थान पर पड़ जाता है यदि छोड़े तो उसके डूबने का भय है अतः इसी अवस्था में बाहर लाकर छोड़ देता है। साधारण अवस्था में यह अति दुष्ट कर्म होगा परन्तु एक उत्तम साध्य युवति के जीवन रक्षार्थ यह निर्दोष ही समझा जायगा।

वैज्ञानिक संसार मे भी उत्तम साध्य के लिए सम्पन्न साधन ही ढूंढा जाता है अच्छे बुरे का ध्यान नहीं किया जाता, अन्यथा फुफूंदी से पिसलीन कैसे बन सकती थी। साधनवाद में बड़ा दोष यही है कि अच्छे बुरे के विचार से सम्पन्न साधन दृष्टिगोचर न होकर साध्य कभी सिद्ध नहीं होता। श्री कृष्ण जी ने जब उत्तम साधनों को प्रयोग में लाकर देख लिया। दुर्योधन पांच ग्राम तो क्या सूई के नोक भर भूमि देने को भी तैयार न हुआ तो स्वाधिकार प्राप्ति तथा उत्तम शासन के लिए युद्ध को साधन बनाया और इसमें विजय प्राप्ति के लिए अच्छे बुरे का विचार न करके सम्पन्न साधनों को प्रयोग में लाकर अपना उत्तम ध्येय प्राप्त किया। दुर्योधन के गुप्तचर संजय ने भी इसी साधनवाद को सम्मुख रख कर कहा—

भिक्षाशित्वमन्धक वृष्णिराज्ये श्रेयोमन्ये न तु युद्धेन राज्यम्॥

हे युधिष्ठिर युद्ध से राज्य प्राप्ति से तुम्हारा भिक्षा मांग कर खाना मैं उत्तम समझता हूं। परन्तु श्री कृष्ण की नीति ने उसका बस न चलने दिया।

लेखक ने श्री कृष्ण के विरुद्ध ऐसा भावावेश में आ गया है कि जिसने अपने त्यागभाव से कंस को मार कर स्वयं राजा न बन कर न्यायोचित उग्रसेन ही को मथुरा का राजा बनाया। उसने दुर्योधन को अपनी सेना देकर स्वय निःशस्त्र पांडव पक्ष में होने को भी स्वार्थ माना। यद्यपि यह एक अर्जुन की परीक्षा थी जिसमें वह उत्तीर्ण हुआ। अपनी भक्ति और बुद्धि का परिचय दिया। शस्त्र बल से बुद्धिबल को उत्तम समझा।

बुद्धिर्यस्य बलंतस्य निर्बुद्धेस्तु कुतोबलम्।

इसी भावावेश में पिता को कारागार में डालने वाले कंस, राजपुत्रों का बलिदान देने वाले जरासंध, अत्याचारी शिशुपाल और दुर्योधन को देवता समझ लिया गया था।

यही नहीं श्री कृष्ण के कल्पित पौराणिक रूप जिसमें—

बाहू प्रसार परिरम्भ कराल कोरू नीवी स्तना-लभन मरम न खाम पार्तैः का वर्णन है अच्छा समझा गया है क्योंकि पश्चिमी सभ्यता के भावुक भारत में भी नर नारी के सम्मिलित नाच को चाहते हैं। इसी प्रसंग में युधिष्ठिर के जीवन पर भी आक्षेप किया गया है परन्तु वह तो साधनवाद ही का परिणाम था। विदुर के निमन्त्रण पर उसने कहा—

निकृतिर्देवनं पापं क्षात्रो नात्र पराक्रमः। आहूतो न निवर्त्तेय इति मे व्रत माहितम् ॥

जुआ खेलना पाप है इसमें क्षात्र पराक्रम भी नहीं परन्तु मेरा यह व्रत है कि चुनौती देने पर मैं पीछे नहीं हटता। नितान्त यह ऐसी बात है जैसे कोई कहे कि चाहे देश को परतन्त्र करना पड़े पर हम तलवार हाथ में न लेंगे। द्रौपदी पाँचों भाइयों की पत्नी भी इसीलिए बनी कि माता का वचन नहीं टाल सकते। वस्तुतः यह कथा मिलावटी है। द्रौपदी अर्जुन की ही पत्नी थी

इस विषय में श्री राम की प्रशंसा की गई है कि रावण के मारने में कोई अनुचित साधन प्रयोग में नहीं लाया गया। यह बात लेखक की अनभिज्ञता को सिद्ध करती है। वस्तुतः राम और कृष्ण दोनों की नीति एक ही थी। ताड़का वध के समय विश्वामित्र जी ने राम को यही शिक्षा दी है—

नृशंस मनृशंसं वा प्रजा-रक्षण कारणात्। पातकं वा सदोष वा कर्तव्यं रक्षता सदा।

सदाचार हो अथवा अत्याचार पातक हो अथवा दोष जिससे प्रजा की रक्षा हो वह राजा का कर्तव्य है। इसी सिद्धान्त के अनुसार ताड़का का वध, शूर्पणखा को कुरूप किया और छुप कर बाली पर तीर चलाया। हनुमान जी ने भी कहा—

उग्रोजसो महावीर्या बलवन्तश्च राक्षसाः। वञ्च-नीया मया सर्वे जानकी परिमार्गता।

लंका के राक्षस बलवान वीर और तेजस्वी है परन्तु सीता के लिए मैं सब को धोखा दे जाऊंगा।

अब संक्षेप मे भारतीय इतिहास की सुनिये। राजपूतों ने कृष्ण की नीति को भुला रखा था और साधनवाद जैसी रूढ़ियों को अपना रखा था। यही कारण था कि वे आपस में लड़ते झगड़ते थे और विदेशी रिपुओं को पकड़ कर छोड़ देते थे। पृथ्वीराज का उदाहरण इसका ज्वलन्त प्रमाण है। अब तनिक इसके आधुनिक इतिहास पर भी दृष्टि डालिये। महात्मा गांधी जी के इस दूषित अहिंसावाद से अत्याचारी हिन्दुओं को बेज़बान भेड़ बकरी समझने लगे। इसी का परिणाम था कि मुस्लिमसरकारें बनते ही बंगाल और पश्चिमी पंजाब में हिन्दुओं का घात और लूट मार आरम्भ हो गई। लाहौर का उपद्रव तो स्वतन्त्रता प्राप्ति तक होता रहा। मुसलिम लीग के स्पष्ट वक्तव्य पर भी हमारे नेता पहले उपद्रवों के प्रकाश में यह निश्चय न कर सके कि इस्लामी राज्य में हिन्दुओं की क्या दुर्दशा होगी। हिन्दू पाकिस्तान में ५ लाख घर, २२००० प्लाट, १२००० कारखाने, ६० लाख एकड़ भूमि, १० लाख ग्राम के मकान, १८१५ करोड़ रुपये का सर्वस्व छोड़ आये। इसकी अपेक्षा मुसलमान भारत में १ लाख घर, १० हजार प्लाट, १००० कारखाने, ४८ लाख एकड़ भूमि, डेढ़ लाख गांव के मकान छोड़ कर गये। यह भी तब हुआ

अब पञ्जाबियों ने कृष्ण की नीति को अपनाया। अन्यथा भारत में इन्हे सिर छिपाने का भी स्थान न मिलता। पाकिस्तान बनने पर इसे ५५ करोड़ रुपया ऋण दिया। उसने काश्मीर पर आक्रमण कर दिया और अब ऋण उतारने का नाम भी नहीं लेता।

इस अहिंसावाद और साधनवाद से हैदराबाद का अत्याचार और काश्मीर का आक्रमण हटाया जा सकता था? काश्मीर के युद्ध में इन वादों ने फिर सुनली की तो आधा काश्मीर पाकिस्तान में ही रह गया। इस युद्ध में एक चौकी पर सब भारतीय सैनिक वीर गति को प्राप्त हो गये। एक घायल सैनिक ने देखा, पाकिस्तानी ऊपर बढ़ रहे हैं। उसने ऊंचे स्वर में कहा पाकिस्तानी निकट आ गये। तोपों का मुह इधर कर दो यह सुनकर वे भाग गये। इस सैनिक को पुरस्कार दिया गया। आपके विचार में यह अच्छा साधन न था। पाकिस्तानियों का चौकी पर स्वत्व हो जाना चाहिये था।

भारत किसी देश से युद्ध करना नहीं चाहता तो इसका यह परिणाम नहीं हो सकता कि पाकिस्तान भी चुप रहेगा। यदि भारत पर इसका अथवा किसी अन्य देश का आक्रमण हो जावे तो गुप्तचरों से रिपुओं का भेद न लोगे? अपनी युद्ध सामग्री को छुपाने के लिये बनावटी चिन्ह रिपु को धोखा देने के लिये न लगाओगे? रिपु के फौजी ठिकानों पर उनकी दूरमार तोपों से बचते हुए बम न बरसाओगे? क्या इन्हे धोखा चोरी समझकर छोड़ दोगे? यदि ऐसा है तो भारत की स्वतन्त्रता को हर समय भय रहेगा।

लेखक ने व्यौपारी और वकील के जो दृष्टान्त दिये हैं वे मिथ्या हैं क्योंकि उनका साध्य भोग का जीवन उत्तम नहीं कहा जा सकता।

लोकसभा में २९-११-५४ को सेठ गोविन्ददास जी का प्रभावशाली भाषण

यदि जनमत लिया जाय तो ९९ प्रतिशत लोग गोवध बन्द करने तथा वनस्पति तेल (घी) के जमाये जाने को रोकने के पक्ष मे हैं

नई दिल्ली, भारत गोसेवक समाज के प्रधान सेठ गोविन्ददास जी ने वनस्पति तेल (घी) के जमाये जाने को रोकने के पक्ष में भाषण देते हुए कहा कि इसमें कोई सन्देह नहीं कि कोई तीस वर्ष से मैं स्वयं देख रहा हू कि यहां या राज्य सभा में किसी न किसी रूप में यह पेश होता रहा है जहां तक मुझे याद है सन् १९२९ में पहले पहल कौंसिल आफ स्टेट में, उस वक्त वह कौंसिल आफ स्टेट कहलाती थी, कौंसिल आफ स्टेटस नहीं श्री रामसरनदास ने इस विषय को उठाया था मैं उस समय उस सदन का एक सदस्य था। उस समय वनस्पति के कारखाने शायद भारतवर्ष में इने गिने ही थे। उसके बाद न जाने कितनी बार यह विषय उठाया गया। कुछ मांगें जनता की ऐसी होती हैं कि चाहे वे कितनी ही पुरानी क्यों न हो जायें, वे सदा ही नई रहती हैं।

इस विषय का गोवध से बहुत बड़ा सम्बन्ध है। सब लोग इस बात को जानते है कि मैं उन व्यक्तियों में से हूँ जो यह मानते हैं कि इस देश की आत्मा को तब तक सन्तोष नहीं हो सकता जब तक कि गाय के खून की एक बूंद भी इस पुण्यमयी भूमि पर गिरती है। इस विषय में पंडित जवाहरलाल जी का चाहे कुछ भी मत हो, चाहे वह कुछ भी कहे, वैसे हम उनके सच्चे अनुयायी हैं लेकिन गोवध का विषय ऐसा है कि जिसमें पंडित जी कुछ भी कहे या कोई भी कुछ कहे, हम इस मामले में झुकने को तैयार नहीं हैं और गोवध बन्द किया जाय इस मांग

पर दृढ़ बने रहेंगे। मैं इस बात को भी जानता हूं कि यदि इस देश का, इस सम्बन्ध में जनमत लिया जाय तो देश के ९९ प्रतिशत व्यक्ति इस पक्ष में निकलेंगे कि इस देश में गोवध बन्द हो और वनस्पति को कोई न कोई रंग दिया जाय अन्यथा उसका जमाना बन्द किया जाय। यदि हमें इस देश में प्रजातन्त्र को चलाना है तो हमें जनता की उचित भावनाओं का आदर करना चाहिये।

रक्षा संगठन मन्त्री (श्री त्यागी) :—इन दोनों सवालों का एक दूसरे से क्या सम्बन्ध है? सेठ जी ने उत्तर देते हुए कहा कि जी हां, दोनों सवालों का एक दूसरे से बड़ा सम्बन्ध है। स्वयं त्यागी साहब दूसर हाउस में बैठ कर इसके हक में थे। अपनी बात को सिद्ध करने के लिये मैं बोरे के बोरे ऐसे साहित्य के पेश कर सकता हूं जिनसे सिद्ध हो जायगा कि गोवध के प्रश्न से वनस्पति का घनिष्ठ सम्बन्ध है और इन दोनों को अलग २ नहीं रखा जा सकता।

तो मैं आप से कह रहा था कि कुछ ऐसे विषय हैं कि जो विषय चाहे कितने ही पुराने क्यों न हो जायें, वे सदा नये रहेंगे और उनमें वे विषय भी हैं और इनका एक दूसरे से अन्योन्य सम्बन्ध है, अर्थात् गोवध का बन्द होना और उसी के साथ वनस्पति को रंग दिया जाना और यदि यह सम्भव न हो तो उसका जमाया जाना बन्द होना।

अभी पंडित ठाकुरदास जी भार्गव ने नये कृषि मन्त्री जी को बधाई दी। मैं भी उस बधाई में उनका साथी होना चाहता हूं। मैं भी उनको हृदय से बधाई देता हूँ। वे एक ऐसे मन्त्री के स्थान पर आये हैं कि जो भी अपनी कार्य पटुता के लिये सारे देश में प्रसिद्ध थे, भले ही उनका किसी अन्य विषयों में मतभेद रहा हो। यह लोग जानते हैं कि किदवई साहब से जब टंडन जी हमारी कांग्रेस के सभापति थे, उस वक्त हमारा बड़ा मतभेद रहा था, लेकिन तो भी श्री किदवई उन लोगों में से एक थे जिनको मैं बहुत ज्यादा इज्जत की निगाह से देखता हूँ और मेरा तो यह विश्वास है कि यदि वे और जीवित रहते तो इस देश में कल या परसों गोवध भी बन्द हो जाता और वनस्पति के लिये भी कोई न कोई रास्ता निकल आता। अब नये मन्त्री जी उनके स्थान पर आये हैं, श्री जैन को मैं बधाई देता हूँ और मैं विश्वास करता हूँ कि वे इस विषय में और आगे बढ़ेंगे क्योंकि वह अपना नाम खाली "अजीतप्रसाद" नहीं लिखते बल्कि अपने नाम के साथ 'जैन" भी लिखते हैं। जहां तक जैनियों की अहिंसा का सवाल है वह केवल इस देश में नहीं, सारे संसार में विख्यात है।

अब प्रश्न यह है कि इस वनस्पति का हमें क्या करना है। सब से पहले तो मैं यह कहना चाहता हूँ कि यदि कुछ लोग यह समझते हैं कि वनस्पति हमारी तन्दुरुस्ती को नुकसान नहीं पहुंचाता तो ऐसे लोग भी हैं, और बहुत अधिक तादाद में हैं, और वैज्ञानिकों में भी हैं, जो यह मानते हैं कि नहीं, इससे हमारी तन्दुरुस्ती को हानि पहुँचती है। कई सज्जन यह कहा करते हैं कि हमारे यहां वनस्पति इतने वर्षों से खाया जाता है, हमारे यहां तो इससे कोई हानि नहीं पहुंची। जिनको वनस्पति से कोई हानि नहीं पहुँची उनमें से अधिकांश ऐसे हैं जो कि मांसाहारी हैं, जो लोग मांस खाते हैं और मांस के साथ यदि वनस्पति भी खाते हैं तो उनको उतना नुकसान नहीं पहुंचता। फिर कुछ ऐसी चीजें होती हैं जिनसे तत्काल नुकसान नहीं पहुँचता और धीरे २ हानि पहुँचती है। वनस्पति ऐसी चीजों में से एक है जिनसे चाहे तत्काल हानि न पहुँचे मगर धीरे २ हानि पहुंचती है। एक बहुत बड़े नेता ने मुझ से कहा, उनका नाम लेने की आवश्यकता नहीं है, कि कुछ देश ऐसे हैं कि जहां पर दूध का अथवा छाछ का उपयोग नहीं किया जाता। लेकिन वहां के लोग भी तन्दुरुस्त रहते हैं। उन्होंने मुझ से कहा जापान देश ऐसा देश है, चीन ऐसा देश है। सत्य बात है, इसमें कोई सन्देह नहीं। जापान और चीन मैं भी हो आया हूं और मैंने देखा

है कि वहा दूध और छाछ नहीं पी जाती। लेकिन आप जानते हैं कि इसी के साथ वह क्या क्या खाते हैं कोई ऐसी चीज बाकी नहीं है दुनिया में जो वह न खाते हों। मेंढक वह खाते है, साप वह खाते हैं, और चूहा वह खाते हैं। लेकिन हमारा भारतवर्ष एक देश है कि जो निरामिष भोजन करने वालों का देश है। मे वैज्ञानिक तो नहीं हूँ लेकिन मेरा यह निवेदन है कि चू कि वह मांसाहारी हैं और उनसे कोई चीज बची नहीं है इसलिये उनको घी और दूध वगैरह की जरूरत नहीं पड़ती। अकेले एक हमारा देश ऐसा है जिसमें निरामिष भोजन करने वालों की जितनी बड़ी सख्या है उतनी बड़ी सख्या शायद दुनिया के किसी देश में नहीं है। मैं जब इस देश में ऐसा प्रचार होते देखता हूँ कि लोग यहाँ पर मछलिया खायें, अण्डे वगैरह खायें तो मेरे हृदय पर एक बहुत बड़ा आघात लगता है। शताब्दियों के प्रयोग के बाद और नाना प्रकार के दर्शन पर विचार करने के बाद हमने इस देश में निरामिष भोजन का सिद्धान्त अपनाया, निरामिष भोजन को हमने सब से उत्तम और श्रेष्ठ माना, देश में खाद्य पदार्थों में कमी आने के कारण घी दूध की कमी हो जाने के कारण आज इस देश में हम यह प्रचार करते हैं कि यहा पर लोगों को मछलिया खानी चाहियें, लोगों को अण्डा का सेवन करना चाहिये, कम से कम मेरे हृदय को ऐसा सुन कर बड़ी भारी ठेस पहुचती है, इस निरामिष भोजी देश में मैं आप से निवेदन करना चाहता हू कि यह वनस्पति सब से अधिक हानिकारक चीज है। पर यदि हम इस विषय को छोड़ भी दें थोड़ी देर के लिये हम यह मान भी जायें कि यह वनस्पति हानिकारक नहीं है जैसा कि कुछ वैज्ञानिकों की राय है, यद्यपि जैसा मैंने अभी आप से निवेदन किया कि वैज्ञानिकों में भी आपस में इस विषय को लेकर बड़ा मतभेद है तो भी कम से कम कोई यह तो स्वीकार नहीं कर सकता कि दो रुपये की चीज चार रुपये सेर के हिसाब बिके। किसी को यदि वनस्पति खाना है तो वह यह जानकर खाये कि वह वनस्पति खा रहा है। इसलिये मेरा यह निवेदन है और जो हमारे इस विषय में सब से बड़े विशेषज्ञ हैं पंडित ठाकुर दास भार्गव, वह भी इस बात को कह चुके हैं कि यदि वनस्पति में कोई रंग डाला जा सकता है तो डाल दिया जाय। पर यदि रंग उसे नहीं दिया जा सकता तो फिर हमारा निवेदन यह हो जाता है कि उसका जमाना ही बन्द कर दिया जाय। यदि आप उसका जमाना बन्द कर दें और उसको यदि आप तेल के रूप में बेचें तो जैसा अभी हमारे एक साथी ने कहा कि लोग अपनी इज्जत के लिये इस तरह की चीजों का उपयोग करना चाहते हैं, वह बिना जमाये हुए वनस्पति तेल का उपयोग कर सकते हैं। इसमें उनको कोई कठिनाई नहीं पड़ेगी।

जिन कारखानों में यह वनस्पति तैयार होता है उन कारखानों की मशीनरी को अगर आप देखें तो आपको मालूम होगा कि कुल मशीनरी का केवल पाच फीसदी हिस्सा ऐसा है जो कि इस तेल के जमाये जाने का काम करता है। ९५ फीसदी मशीनरी में इनके यहा केवल इसका तरल बनता है। इस तरह से उन कारखानों को कोई बड़ी भारी हानि पहुचे ऐसी बात भी नहीं है। अगर कोई वनस्पति खाना चाहेगा तो वह उसको तरल रूप मे प्राप्त रहेगा। साथ ही उनको वह उसी कीमत में मिलेगा जिस कीमत में कि वनस्पति को मिलना चाहिये। हमारी आपत्ति तो यह है कि दो रुपये सेर की चीज चार रुपये सेर में बची जाय यह तो अनुचित है। वनस्पति जितनी आसानी के साथ घी में मिलाया जा सकता है उतनी आसानी के साथ अन्य चीजें नहीं मिल सकतीं।

जो वैज्ञानिक हाइड्रोजन बम और एटम बम जैसी चीजें बना सकते हैं वे ऐसा रंग नहीं निकाल सकते यह मेरी समझ में नहीं आता। मेरा यह निवेदन है कि यदि आज तक रंग नहीं निकला और नहीं निकाला जा रहा है, तो इसका कारण केवल एक है कि हमारी सरकार इस सम्बन्ध में बहुत दत्तचित्त नहीं है। यदि पंडितजी को, यदि हमारे कृषिमन्त्री जी

की इच्छा यह होती कि नहीं हमें तो इस प्रकार का रंग वनस्पति में देना ही है तो मेरा यह विश्वास है कि तीन दिन के अन्दर रंग निकाला जा सकता है। इसके लिये वर्षों की आवश्यकता नहीं थी। आप इस विषय को किसी भी दृष्टि से विचार करके देखें, आप को यह स्वीकार करना ही होगा कि कम से कम वनस्पति लोग घी के रूप में खरीदें यह किसी भी दृष्टि से उचित नहीं है। हमने तो यह भी कह दिया था कि यदि सरकार इस रंग की खोज नहीं कर सकती है तो जितने वैजिटेबिल के कारखाने हैं उनको ही इस बात का नोटिस दे दिया जाय। विनोबा जी ने भी यह कहा था कि आप लोग तीन महीने के अन्दर या छः महीने के अन्दर ऐसा रंग निकालें जिसको आप वनस्पति में मिला सकें। यदि आप तीन महीने या छः महीने के अन्दर इस प्रकार का रंग नहीं निकाल सकेंगे तो हम आपके द्वारा वनस्पति का जमाया जाना बन्द कर देंगे। मेरा यह विश्वास है कि अगर सरकार इस रंग को नहीं निकाल सकती है, सरकार के वैज्ञानिक नहीं निकाल सकते हैं, यद्यपि यह बात मेरी समझ में नहीं आती कि क्यों नहीं निकाल सकते? मैंने तो निवेदन किया कि यदि सरकार चाहती है और इस सम्बन्ध में कुछ दिलचस्पी लेती है तो रंग निकाल सकती है, लेकिन अगर वह नहीं निकाल सकती है तो वनस्पति वालों को इस बात का स्पष्ट नोटिस दे दिया जाना चाहिये कि वे तीन महीने के अन्दर या छः महीने के अन्दर इस प्रकार का रंग निकालें जिससे वे वनस्पति को रंगें और अगर वे इस प्रकार का रंग नहीं निकाल सकते हैं तो इतने समय के अन्दर उसका जमाया जाना बन्द कर दिया जावेगा। यदि इस प्रकार का प्रयत्न हुआ तो मेरा विश्वास है कि कारखाने वाले इस प्रकार का रंग निकाल लेंगे क्योंकि उनको सब से अधिक भय होगा इनका जमाया जाना बन्द करने का। मैं फिर कहना चाहता हूं कि यदि हमको इस देश में प्रजातन्त्र चलाना है, तो प्रजातन्त्र में हमको प्रजा की जो इच्छा है उसका ध्यान अवश्य रखना होगा। गोवध के सम्बन्ध में मैं जानता हूँ कि प्रजा की क्या इच्छा है, वनस्पति के सम्बन्ध में मैं जानता हूं कि प्रजा की क्या इच्छा है, हमारा कांग्रेस का जो संगठन है, जिसके हम सबसे बड़े भक्त हैं और आज भी हम यह मानते हैं कि इससे बड़ा कोई संगठन, केवल इस देश में नहीं, लेकिन गैर सरकारी दृष्टि से शायद दुनिया के किसी देश में नहीं, ऐसे संगठन में भी, हमारे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अहमदाबाद अधिवेशन में, इस प्रकार का प्रस्ताव स्वीकृत हो चुका था कि वनस्पति का जमाया जाना बन्द किया जाय। यदि हम इसको प्रजातन्त्र की दृष्टि से देखें, प्रजा की राय की दृष्टि से देखें, कांग्रेस संस्था की दृष्टि से देखें तो कांग्रेस की ही जो सरकार है उसके लिये लाजिमी हो जाता है कि प्रजा की इच्छा के अनुसार और कम से कम इस मिलावट के पाप को रोके। मैं इसे पाप कहता हूं क्योंकि कोई भी देख सकता है कि दो रुपये सेर की चीज चार रुपये सेर से बिकती है, इस मिलावट के कारण बिकती है, सरकार भी इस पाप की भागी होती है। हम अवश्य समझते हैं कि अब इस विषय में कोई न कोई कदम तत्काल उठाया जाय।

अन्त में मैं आपसे यह भी कह देना चाहता हूँ कि इस सम्बन्ध में जब तक कुछ नहीं होगा तब तक यह विषय सदा उठता रहेगा। जनता में इस विषय में सदा आन्दोलन होता रहेगा, जो कोई अच्छी बात नहीं है। इसलिये जिन सज्जन ने इस विधेयक को रखा है उनका मैं हृदय से समर्थन करता हूं।

* साहित्य-समीक्षा *

महर्षि श्री स्वामी विरजानन्द जी का जीवन चरित्र

लेखक-श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ, प्रकाशक वैदिक साहित्य सदन सीताराम बाजार देहली। पृष्ठ सं० १८० मूल्य १॥)

आर्य संस्कृति के पुनरुद्धार का बीजारोपण करने वाले स्वनामधन्य श्री स्वामी विरजानन्द जी महाराज का यह जीवनचरित्र अत्यन्त अपूर्व तथा महत्वपूर्ण है। परम विद्वान लेखक ने इस पुस्तक को आठ अध्यायों में एक अनूठा रूप दिया है। उत्थानिका में पुरातन भारत की भौगोलिक तथा सांस्कृतिक स्थिति का नवीन स्वरूप प्रदर्शित कर श्री स्वामी विरजानन्द जी के बाल्यकाल से लेकर गृहत्याग विद्याध्ययन तथा विद्याध्यापन स्वामी दयानन्द जैसे शिष्य के अध्यापन समावर्तन पर्यन्त का इतिवृत्त अपने गम्भीर भावपूर्ण आकर्षक प्रभावोत्पादक क्रान्तिकारी और ओजस्वी शब्दों में वर्णित किया है। अनेक भ्रान्तियों का निवारण करते हुए सत्यतत्त्वों का प्रतिपादन इस पुस्तक का ध्येय है। श्री स्वामी विरजानन्द जी किन २ बातों को नहीं मानते थे और किन्हें मानते थे यह भी इसमें मिलेगा। श्री स्वामी विरजानन्द जी के अन्दर क्या दैवी प्रेरणा थी क्या ज्योति जगमगाती थी जिसे उन्हों ने दयानन्द जैसे शिष्य को देकर उन्हें ऋषि पद पर पहुँचाया वेद, समाज देश, और संसार का उद्धारक तथा श्रेष्ठ पुरुष बनाया है यह इसी पुस्तक में मिलेगा। पुस्तक प्रत्येक आर्यसमाजी ही नहीं भारतीय मात्र अपितु सच्चा मानव बनने की इच्छा रखने वाले और सत्यविवेचनप्रिय विद्यानुरागी के पढ़ने योग्य है। आय विद्यालयों में पढ़ाने योग्य है। —स्वामी ब्रह्ममुनि

सार्वदेशिक प्रेस, दिल्ली की पुस्तकें

दैनिक तिथि प्रकाश

पृष्ठ १८८ उत्तम कागज, सजिल्द, मूल्य ॥) आने सार्वदेशिक प्रेस ने अपने अन्य उत्तम और सस्ते प्रकाशनों के समान ही इसका प्रकाशन किया है। इस दैनिक डायरी में अंग्रेजी हिन्दी, पंजाबी तिथियों के साथ सूर्योदय सूर्यास्त का समय भी दिया है।

इसकी बड़ी विशेषता यह है कि इसमें सन्ध्या हवन स्वस्तिवाचन, शान्ति पाठ आदि पंच यज्ञ तथा सम्पूर्ण आर्याभिविनय और ईशोपनिषद् भी दिये हैं।

प्रत्येक आर्य पुरुषों को इसे अपनाना चाहिए।

धर्म वीर स्वामी श्रद्धानन्द

पृष्ठ संख्या ३२ चित्र सं० २१ मूल्य केवल -) आना ४) सैं० बलिदान दिवस पर सार्वदेशिक प्रकाशन की महान् भेंट कही जा सकती है। कागज छपाई चित्र आदि सभी उत्तम है। इसके लेखक श्री पं० हरिश्चन्द्र विद्यालंकार हैं।

लाखों की संख्या में इसका प्रचार होना चाहिए।

मानवता का मान

विश्वेश्वरानन्द प्रकाशन होशियारपुर द्वारा प्रकाशित तथा श्री पं० विश्वबन्धु जी शास्त्री एम० ए० एम० ओ० एल० की कृति 'मानवता का मान'' नामक पुस्तक का मैंने ध्यानपूर्वक पाठ किया है। तदनन्तर आद्यन्त संगति योजना को गम्भीरता से विचार कर इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि उक्त पुस्तक शास्त्री जी के पर्याप्त स्वाध्याय तथा शास्त्रानुशीलन का सुफल है पुस्तक छः भूमि भागों में विभक्त है। और प्रत्येक भूमि भाग में अनेक उपभाग हैं जो प्रथम भूमि के "अद्वेषभाव'' से प्रारम्भ होकर षष्ठ भूमि के "सदाचार संकल्प और बुद्धियोग' पर समाप्त होते हैं। उपभागों में कुछ विशेष शीर्षक भी हैं। प्रयोजन यह है कि पुस्तक का संकलन क्रम तथा अर्थानुसन्धान रुचिकर रूप से संगत किये गये हैं और प्रस्तुत विषय को अत्युत्तमता तथा सरलता से सिद्ध किया गया है। सम्भवतः कुछ कट्टर भक्तों को किसी भी कारण से प्रतिपाद्य विषय अरुचिकर प्रतीत हों परन्तु तो भी

इससे पुस्तक की उपादेयता में कोई भी अन्तर नहीं पड़ सकेगा। पुस्तक पठन तथा मनन के योग्य ही रहेगी। प्रत्येक आत्मोद्धारेच्छु नर नारी को इसके अध्ययन से अवश्य ही लाभ उठाना और आनन्द लेना चाहिये। लेखक महोदय ने जिस मनः कामना से उक्त पुस्तक का निर्माण किया है उसी प्रकार से उसका आदर होना चाहिये। इस रूप में पुस्तक की प्रियता की भावना से प्रेरित होकर लेखक महोदय को साऩुरोध परामर्श भी देता हूं कि पुस्तक के अग्रिम संस्करण में "सदाचार पाठ" में वर्णित १० श्लोकों को कुछ विशेष विशद तथा तर्कानुमोदित रूप से अंकित करें कि जिससे वैदिकता का उज्ज्वल और वास्तविक रूप यथार्थता से प्रकट हो सके। और साथ ही नवीन संस्करण में पुस्तक का नाम भी "मानवता का मान' के स्थान पर "मानवता का मान दण्ड" परिवर्तित कर दें। क्योंकि 'मानवता का मान" यह नाम सामान्य रूप से अर्थावबोध में भ्रान्ति उत्पन्न करता है।

मिलने का पता— मूल्य ।॥=)

श्री विश्वेश्वरानन्द संस्थान प्रकाशन,

होशियारपुर —लोकनाथ तर्कवाचस्पति

वैदिक-धर्म-प्रसार के समाचार

> इस पृष्ठ में आर्यसमाज की उन विशेष प्रवृत्तियों की चर्चा की जायगी जो मास भर में वैदिक धर्म के प्रसार के लिये की गई। स्थान परिमित है इस कारण वार्षिक चुनाव आदि के समाचार इस पृष्ठ में न दिये जा सकेंगे। —सम्पादक

उत्तर-प्रदेश में शुद्धि मास

दिसम्बर के महीने में अमर शहीद श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान हुआ। इस कारण उत्तर-प्रदेश में इस महीने को शुद्धि कार्य के अर्पण करने की घोषणा की गई है।

सभा मंत्री श्री कालीचरण जी आर्य ने इस सम्बन्ध में निम्नलिखित सूचना निकाली है:—

उत्तर प्रदेशीय समस्त आर्य समाजों से प्रार्थना है कि वे दिसम्बर का पूरा मास शुद्धि के कार्य को बल देने में लगाएं। स्थान स्थान पर सार्वजनिक सभाएं की जाएं और उनमें 'वैदिक धर्म ही क्यों?" विषय पर प्रभावशाली व्याख्यान कराए जाएं। विरोधी प्रांत मतों, इस्लाम, ईसाई और पौराणिक मत वालों के विचारों को परिवर्तित करने में पूरा बल लगाया जाए। २३ दिसम्बर को श्रद्धानन्द बलिदान दिवस आ रहा है। उस दिन बड़े पैमाने पर सार्वजनिक शुद्धियां की जाएं। यही अमर शहीद के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

आशा है जनता ध्यान देगी।

पंजाब में शुद्धि आन्दोलन की योजना

पंजाब में भी आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से शुद्धि आंदोलन की योजना बनाई जा रही है। सभा के संयुक्त मन्त्री श्री वीरेन्द्रजी की ओर से समाजों के नाम जो गश्ती पत्र जारी किया गया है कि उसमें उन्हें निम्नलिखित प्रेरणा की गई है—

शुद्धि आन्दोलन—सभा ने यह निश्चय किया है कि शुद्धि आंदोलन को और भी अधिक जोर से चलाया जाए। विशेषकर ईसाई मिशनरियों के आन्दोलन का अच्छी तरह प्रतिकार किया जाए। इस लिए आपके जिले में जहां २ भी ईसाई मिशनरी कार्य कर रहे हैं, उनके विषय में पूरी जानकारी प्राप्त करके आप सभा के मन्त्री श्री नार.यणदास जी कपूर को लिखें।

हमारे मंत्री श्री भारतीय शुद्धि सभा के भी मन्त्री हैं और शुद्धि आंदोलन को चलाने का सारा भार इस समय उनके कन्धों पर है। हमारा कर्तव्य है कि इस महान् कार्य में उनका हाथ बटाएं। इस विषय में

आर्यसमाज की ओर से जो भी कार्य हो रहा हो उसकी सूचना भी श्री मन्त्री जी को देते रहें। इसके साथ आप अपने जिले में विशेषकर अपनी आर्यसमाज के उत्सवों पर यदि शुद्धि सम्मेलन रखें तो अधिक उत्तम होगा।

लन्दन में आर्यसमाज की पुनः स्थापना

महर्षि दयानन्द के निर्वाण के पश्चात् आर्यसमाज के प्रथम युग में लन्दन में आर्यसमाज स्थापित हुआ था। बहुत वर्षों तक वह चलता रहा। राजनैतिक उथल-पुथल के आरम्भ होने पर वह बन्द सा होगया। हर्ष और सन्तोष की बात है कि अब उसका पुनरुद्धार हो गया है। ८ नवम्बर १९५४ को लन्दन के प्रसिद्ध कैक्स्टन हौल में एक सार्वजनिक सभा करके आर्यसमाज की वैधानिक स्थापना करदी गई। सभा में निम्नलिखित महानुभाव उपस्थित थे—

१. श्री सौरेन्सन (सदस्य ब्रिटिश पार्लियामैन्ट)
२. ,, रेवरेन्सडी आर्थर पीकौक (मंत्री विश्वधर्म सम्मेलन)
३ ,, हर्नवर्थ वाकर मंत्री अन्तर्जातीय निरामिश-भोजी सघ)
४. ,, प० उपबुध जी
५ ,, पं० धीरेन्द्रजी शील

सभापति का आसन श्री सौरेन्सन ने ग्रहण किया। उन्होंने अपने भाषण के अन्त में कहा कि हमें आशा है कि आर्यसमाज पूर्व और पश्चिम मे एक-दूसरे को ठीक २ समझने की भावना का प्रचारक सिद्ध होगा। आपने यह भी कहा कि १७ वीं शताब्दी में जब हमारे मिशनरी धर्म, दर्शन तथा सभ्यता का प्रचार करने गये थे तब उन्हें यह पता नहीं था कि भारतीय इन विषयों में हमसे भी अधिक ज्ञान रखते हैं। श्री वाकर ने आशा प्रकट की कि आर्यसमाज शाकाहार के प्रचार में पश्चिम में इस आशय से बनी हुई संस्थाओं का पूर्ण सहयोग देगा। श्री धीरेन्द्र जी तथा ब्र० उपबुध जी ने आर्यसमाज के सिद्धान्तों और कार्यों की विशद व्याख्या की। इस सभा में भारतीयों की अपेक्षा यूरोपियन अधिक उपस्थित थे।

झाबुआ में शुद्धि

नवम्बर मास के अन्त में मध्य भारत के झाबुआ नामक स्थान में कोरी जाति के १५० ईसाई व्यक्तियों को आर्य धर्म में पुनः प्रवेश कराया गया। इन लोगों को विदेशी पादरियों ने भारत की स्वतंत्रता के उपरांत ईसाई बनाया था। मध्यभारत में ईसाइयों के अनेक मिशन चिरकाल से कार्य कर रहे हैं। उनका कार्य विशेष रूप से भील जाति में हो रहा है। उनके प्रचार के ढंग के बारे में एक संवाददाता ने आर्यमित्र में लिखा है :—

"विदेशी मिशनरी इन जातियों के ग्रामों में जाकर मूंगफली व बताशे बांटते हैं फिर एक एक रुपये के नोट वितरित कर आते हैं। कुछ दिन बाद फिर दो दो रुपये दे आते हैं। बाद में उनको इकट्ठा कर बपतिस्मा देते हैं तथा चोटी काट लेते हैं तथा ईसाई घोषित कर देते हैं। ये अत्यन्त भोले आदमी अपने को हिन्दू-धर्म से पतित मानने लगते हैं और इनके दिलों में यह संस्कार भी ईसाई पादरी डाल देते हैं कि तुम अब हिन्दू नहीं हो सकते।"

इस प्रान्त में श्री स्वामी वेदानन्द जी बड़े उत्साह से वैदिक धर्म प्रचार का कार्य कर रहे हैं।

आवश्यक सूचना

'सार्वदेशिक पत्र', 'सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार', तथा सार्वदेशिक सभा सम्बन्धी समस्त डाक श्रद्धानन्द बलिदान भवन, श्रद्धानन्द बाजार (नया बाजार) देहली ६ के पते पर भेजनी चाहिए।

—मन्त्री, सार्वदेशिक सभा

महिला जगत्

राज माता जीजाबाई

(इतिहास का एक विद्यार्थी)

पुण्यवती जीजाबाई छत्रपति महाराज शिवाजी की माता थी। बचपन से ही वह हिन्दू जाति के मान गौरव की रक्षा के लिये सर्वस्व समर्पण करने को तैयार थी। सोलहवीं सदी में जिन मराठों ने अद्भुत कार्य कर दिखाये थ, उनमें सिन्दखेड के देशमुख (अधिपति) जाधवराव बहुत प्रसिद्ध थे, वे यदुवंशी क्षत्रिय थे। सन् १५९७ ई० में उनकी कन्या जीजाबाई का जन्म हुआ। चौदहवीं सदी में मेवाड़ के राणा के एक वंशज सुजानसिंह ने दक्षिण में अपना किला बनाया और वहीं रहने लगा। टाड ने भी लिखा है कि नैपाल और सतारा के राज्य संस्थापक मेवाड़ के राणा के ही वंश धर थे। सतारा का राज्य कुल अपने को भोंसवन्त या भोंसला कहता था। इस वंश में मालोजी नामक एक सरदार बड़े वीर थे। सिन्दखेड के राजा जाधवर व स उनकी बहुत पटती थी। मालोजी के पुत्र का नाम शाहजी था। एक बार होली का उत्सव हो रहा था मालोजी सिन्दखेड में ही थे। उन्होंने जाधवराव की छोटी कन्या को देख कर कहा यह तो मेरी पुत्र वधू होने के योग्य है। जाधवराव ने शाहजी से पूछा, उन्हों ने जीजा के मुख पर अबीर छिड़क दिया जीजा ने भी शाहजी के ऊपर अबीर डाल दिया। उस समय दोनों अबोध थे। जब दोनों बड़े हुये, विवाह कर दिया गया।

समय बीतते देर नहीं लगती, धीरे धीरे दोनों घरानों मे वैमनस्य उठ खड़ा हुआ। जाधवराव मुगलों के सहायक थे, शाहजहां दक्षिण विजय की तैयारी कर रहा था। गोलकुन्डा और बीजापुर राज्यों की बढ़ती से वह मन ही मन जलता था। शाहजी निजाम की ओर थे, जाधवराव मुगलों के पक्ष में थे। एक बार शाहजी बड़ी विपत्ति में पड़ गये थे। जाधवराव उनका पीछा कर रहे थे। शाहजी ने अपने एक मित्र की सहायता से जीजा को शिवनेर के किले में सुरक्षित कर दिया और आप आगे बढ़ गये। उस समय जीजा का पांव भारी था, उन्होंने शिवनेर में पिता को देख कर कहा मैं आपकी दुश्मन हूँ, क्योंकि मेरा पति आपका वैरी है। दामाद के बदले कन्या ही हाथ लगी है जो कुछ करना चाहो करलो। राव ने कहा कि यदि तुम नैहर चलना चाहो तो ले चल सकता हू। साध्वी जीजाबाई तो पातिव्रत की प्रतिमूर्ति ही थी। उन्होंने ठढ़ककर कहा, आर्य नारी का धर्म है कि वह अपने पति के आदेश के अनुसार काम करे। जाधवराव अपना सा मुह लेकर चले गये। बादशाह ने बाद में उन्हे मरवा डाला क्योंकि उन्होंने राजद्रोह किया था। १० अप्रेल १६२७ ई० को शिवनेर दुर्ग में जीजाबाई ने गोब्राह्मण प्रतिपालक, हिन्दू राज्य के संस्थापक महाराज शिवाजी को जन्म दिया। जीजा ने अपने पुत्र रत्न के साथ तीन साल इसी किले मे बिताये। जीजाबाई ने बड़ी दृढ़ता से कठिनाईयों का सामना कर तथा अनेक प्रकार की यातनायें झेल कर शिवाजी का लालन पालन किया। शिवाजी की शिक्षा के लिये उन्होंने कोई बात उठा न रक्खी। पढना लिखना, तीर चलाना, गोली मारना, पटा खेलना, घोड़े पर चढ़ना जीजा ने ही शिवाजी को सिखाया था।

ये आदर्श माता थी। मावलियों के छोटे छोटे लड़कों को बुला कर पुरस्कार देती थी, शिवाजी ने इन लोगों की टोलियां बना कर छोटे मोटे गावों पर माता के आदेश से हमला भी करना आरम्भ कर दिया। माता के ही आशीर्वाद का फल था कि बालक शिवा ने बीजापुर के सुलतान के नाको में दम कर दिया। जीजाबाई तत्कालीन वातावरण का दूषित स्वरूप अच्छी तरह समझती थीं। वे शिवाजी को धर्म का गूढ़ तत्व समझाती थीं, रामायण, महाभारत और राणा प्रताप की वीर गाथायें सुना कर बालक की नसों में हिन्दुत्व की भावनायें भरती थीं। दादोजी कोंडदेव ऐसे गुरु को नियुक्त कर उन्होंने शिवाजी को आदर्श

हिन्दू सन्तान बना दिया। वे अपने प्यारे पुत्र से कहा करती थी अपनी व्यथा को सुनाया करती थी, कि यदि तुम संसार में आदर्श हिन्दू बन कर रहना चाहते हो तो स्वराज्य की स्थापना करो। देश से यवनों और विधर्मियों को निकाल कर हिन्दू धर्म की रक्षा करो।

पति की मृत्यु पर साध्वी जीजा ने चिता जलाकर सती हो जाना चाहा, लेकिन शिवाजी ने आग्रह किया, माता बिना तुम्हारे पवित्र आदर्शों के स्वराज्य की स्थापना न हो सकेगी। धर्म पर विद्रोहियों का आघात फिर आरम्भ हो जायेगा। राजमाता ने पुत्र के अनुरोध का महत्व समझा।

शिवाजी ने औरंगजेब की कैद से निकल कर माता का दर्शन सब से पहले किया। उस समय वे सन्यासी के वेष में थे। फाटक पर खड़े होकर भिक्षा मांगी। माता ने आवाज़ पहचान ली और उस हिन्दू नारी रत्न ने कहा अब मुझे विश्वास हो गया कि मेरा पुत्र स्वराज्य स्थापित करेगा। हिन्दू पद पादशाही आने में अब कुछ भी विलम्ब नहीं है।

महाराष्ट्र में तथा भारत के एक बड़े भूभाग में स्वराज्य की स्वतन्त्र पताका देख कर राजमाता जीजा ने स्वर्ग की यात्रा की। वे स्वराज्य की आदि देवी थी।

बाल जगत
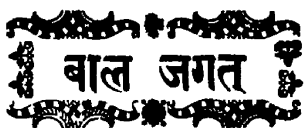
उपेक्षित आदि-वास और उनके बालक

(*लेखक—श्री अखिल विनय जी*)

आदिवासियों का नाम लेते ही हमारे सामने देश के करोड़ से कुछ ऊपर उन भाइयों का दृश्य आखों के आगे नाच उठता है, जो आज उपेक्षित, अनपढ़ और पिछड़े हैं। ये लोग दरिद्रता में हरिजनों से भी बढ़ कर हैं। आज भारत की आबादी में २० व्यक्तियों में एक व्यक्ति आदि वासी है, जो शेष १९ व्यक्तियों से कहीं अधिक पिछड़ा, अज्ञानी और दीन हीन हैं। आदिम जातियों के ये लोग भारत के सभी राज्यों में, वन्य और पर्वतीय भागों में व १ हुये है। भारत की आदिम जातियो में ४० से ऊपर ऐसी हैं, जिनको जन संख्या अलग अलग एक एक लाख से अधिक है तथा कतिपय प्रमुख जातियां गोंड, संथाल और भील आदि तो क्रमश ३१,२७ और २३ लाख से कुछ ऊपर हैं।

यदि हम भारत के विभिन्न स्थानों (राज्यों) में बसने वाली आदिम जातियों को निवास स्थान के दृष्टिकोण से देखें तो बिहार राज्य में संथाल लोगों का भागलपुर डिवीजन में एक अलग ही जिला है, जो "संथाल परगना" कहलाता है। और ये वहा ४० ४१ प्रतिशत हैं। इसी प्रकार छोटा नागपुर डिवीजन के तो सभी जिलों मे ये अधिक संख्या में आबाद हैं। सन् १९४१ की जनगणना के अनुसार तो बिहार राज्य में ये कुल आबादी का १३ ४१ प्रतिशत अर्थात् संख्या में ४०, ४४, ६४७ थे। आसाम में तो सन् १९४१ में इनकी जनसंख्या २७६०१०९ थी जो कि उक्त राज्य की कुल आबादी का चौथाई भाग है। इसी प्रकार उड़ीसा राज्य में इनकी जन संख्या ३४०९४४८ थी और उस राज्य के गंजाम एजेंसी तथा कोरापट जिले में तो इनका अनुपात क्रमश ८० ७ प्रतिशत और ८६ ४१ प्रतिशत था। १९४१ की जन गणना के अनुसार मद्रास राज्य में भी आदिवासियों की संख्या कुल आबादी का १ १ प्रतिशत थी। इसी भांति बम्बई राज्य में ये लोग ७ ७ प्रतिशत थे। मध्यप्रदेश में इनकी जनसंख्या २९ लाख से ऊपर थी। राजस्थान मध्यभारत, हैदराबाद, ट्रावनकोर कोचीन संघ आदि राज्यों में भी वे काफी संख्या में आबाद हैं।

विचित्र रीति रिवाज

समस्त देश के विभिन्न राज्यों में फैले हुये इन आदिवासियों के भिन्न २ रीति रिवाज और एक से एक विचित्र परम्परायें हैं। प्राय एक जाति का रहन सहन, खान पान दूसरी जाति के रहन सहन और

खान पान से पृथक् ही है, लेकिन ये सारे के सारे लोग अज्ञान, अन्धविश्वास और अन्धपरम्परा से ग्रसित हैं। अशिक्षा, बाहरी लोगों से असम्पर्क और हीन आर्थिकावस्था के कारण ये शेष भारतीयों से भी सभ्यता की दौड़ में पिछड़ गये हैं। इन लोगों की अपनी विविध समस्यायें हैं। इनमें सुधार किया जाना आवश्यक है और वह इसलिये कि ये भी भारत भूमि पर जन्मे हैं। आज इनके नन्हे २ बालकों को सुशिक्षित किया जाना आवश्यक है क्योंकि ये भारत के लाड़ले लाल हैं और बड़े होकर राष्ट्रनिर्माण के लिये एक महत्वपूर्ण शृंखला की कड़ियां साबित होंगे। बालक का मन कोमल होता है और उस पर बचपन में जैसे संस्कार पड़ जाते हैं, वह जन्म भर उसे बांधे रहता है, इसलिये आदि वासियों के बालकों का प्रश्न नगण्य नहीं, अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ये बालक यदि सुनागरिक के रूप में प्रतिष्ठित किये जा सकें तो देश के गौरव सिद्ध हो सकते हैं।

गोतुल गृहों में निवास

भारत के आदि वासियों या आदिम जातियों में गोंडों की संख्या सब से अधिक है। सन् १९४१ की गणनानुसार इनकी कुल आबादी ३२०१००४ थी। ये मध्य प्रदेश के अतिरिक्त बंगाल बिहार, मध्यभारत, उड़ीसा, और हैदराबाद में भी बसे हैं। अकेले मध्य प्रदेश में ही इनकी संख्या २४८८४४१ थी। गोंडों में बालकों के लालन पालन की एक विचित्र प्रथा है। विवाह होने से पूर्व समस्त बालक बालिकायें एक विशाल भवन में रहते हैं, जिसे "गोतुलगृह" कहा जाता है। "गोतुलगृह" प्रत्येक ग्राम में होता है और इसे एक प्रकार से समाज शिक्षा का शिक्षण केन्द्र ही कहा जाना चाहिये। "गोतुलगृह" प्रत्येक गांव में एक प्रकार के विशेष मकान होते हैं जहां किसी भी व्यक्ति के सारे अविवाहित युवक और युवतियां विशेष रूप से रात्रि में रहते हैं। यह घर बड़े आयताकार आकृति का बनाया हुआ एक बड़ा कमरा (डोरमेटरी) होता है। बांस के बड़े २ खम्भों पर घास और फूस की छत छायी जाती है। अन्दर पहुँचने का केवल एक ही दरवाजा होता है और उसके अतिरिक्त दीवाल में न कोई छेद और न कोई खिड़की ही होती है। गांव के सभी अविवाहित बच्चे और लड़कियां वहां खेलते कूदते नाचते गाते और सोते हैं।

गोंड माता पिता सभी बच्चों को प्रसन्नतापूर्वक गांव के "गोतुलगृह" में भेजते हैं। ऐसा न करना जातीय अपराध भी समझा जाता है। वहां प्रबन्ध की सुन्दर व्यवस्था होती है। एक चुना हुआ नेता होता है जो सब कार्यों को देखता है। उसके विवाह कर लेने पर दूसरा नेता चुना जाता है। युवक युवतियां साथ साथ रहते २ जब अपना योग्य साथी चुन लेते हैं तब उनका विवाह हो जाता है। विवाह हो जाने के उपरान्त ये लोग एक दिन भी 'गोतुलगृह' में नहीं ठहर सकते। कहा जाता है कि समाज के लिये ये 'गोतुलगृह' सामाजिक, आर्थिक वा व्यावहारिक दृष्टिकोण से प्रत्येक रूप में उपयोगी सिद्ध होते हैं।

आसाम के नागा लोगों की जन संख्या सन् १९४१ ई० में २८०६७० थी। इनमें भी गोंडों के गोतुल गृहों की भांति अविवाहित नवयुवकों के लिये स्वतन्त्र घर "रंगकी" अथवा "दकजुंग" होते हैं। अविवाहित लड़कियों का घर "हिलोकी" कहा जाता है। इन घरो मे कट्टर अनुशासन का पालन होता है। इसी प्रकार अधिकांश आदिम जातियों में बालक बालिकाओं के अपने अनुशासन विशेष के अनुसार रहने की व्यवस्था है। 'उरांव जाति' मे ऐसे गृह 'धुमकुरिया' कहे जाते हैं। आदिवासी बालक ऐसे ही वातावरण में पलकर बड़ा होता है और जब वह किसी शहर में जाता है तथा वहां के लोगों के सम्पर्क में विचित्रता का अनुभव करता है तथा एक विचित्र ही स्थिति में अपने आप को पाता है। लंगोटी लगाने वाला वह बालक जब वस्त्रालंकृत किसी व्यक्ति को देखता है तब हैरानी का आभास पाता है।

भूत प्रेत और अन्धविश्वास

प्रायः सभी आदिम जातियों का जादू टोना, भूत

प्रेत और चुड़ैलों पर विश्वास है। रोगी चाहे वृद्ध हो या बालक प्रत्येक बीमारी पर झाड़ फूंक होती है। भूत प्रेतों के निवारणार्थ अपने इष्ट देवताओं को मुर्गे आदि की बलि दी जाती है। लगभग सभी जातियों के पृथक् २ देवी देवता हैं। बिहार की 'उरांव जाति' में चडी नामक देवता शिकार और युद्ध का अधिष्ठाता माना जाता है तथा अविवाहित उरांव नवयुवक इसका पूजन करते हैं। इनका एक अन्य देवता 'दरहा' है जिसका निवास शालवृक्ष में मानते हैं।

कुछ समय पूर्व उरांव जाति' मे कन्या के ७ वर्ष होने पर प्रत्येक लड़की के मस्तिष्क पर अग्नि द्वारा जला कर आयताकार निशान बना देते थे और इसी प्रकार का एक चिन्ह बालकों के बायें दंड पर भी अंकित करना जातीय संस्कार समझा जाता था। इन में 'घुमकुरिया' मे प्रायः १२ वर्ष के बाद ही भेजा जाता है। और ये लड़के लड़कियों के लिये अलग ही बने होते है। मुंडा लोगों में भी पहले ८-१० वर्ष के बच्चे की बांह पर गरम लोहे के निशान बना देने का प्रचलन था।

दक्षिण भारत की टोडा जाति को छोड़ कर सारे देश के आदिवासियों में मांस और मदिरा का अतिशय प्रचार है। उड़ीसा के 'जुआंग जाति' के लोग तो सब तरह का मांस खा लेते हैं। चूहे, बन्दर, शेर, भालू, सांप, मैंढक यहां तक कि अखाद्य समझ कर फेंक दिये जाने वाले मांस को भी खा लेते है। जहरीले सांपों का मांस विषहीन करके खा जाते हैं। उड़ीसा की एक अन्य जाति 'बौन्डा परजा' है। इनमें स्त्रियां तथा पुरुष दोनो ही नग्नावस्था में वास करते हैं। ये लोग जगारों मुन्ताइ नामक २० मील के क्षेत्र में बसे हैं। वे 'सोलोपे' नामक शराब पीते हैं और भयंकर पियक्कड़ हैं। इनमें कभी २ तो शराब के लिये पिता पुत्र की और पुत्र पिता की हत्या भी करते सुने गये हैं।

आदिवासी बालक

हम देख चुके हैं कि आदिवासी भाई किन परि-स्थितियों में जीवन यापन करते हैं। बालक अपने माता पिता से ही जीवन का पहला पाठ पढ़ता है और आदिवासियों के बालकों के लिये तो यह और भी सत्य है क्योंकि वे प्रायः जीवन भर ही अपने माता पिता के साथ रहते हैं। बाल्यावस्था के बाद युवावस्था भी उनकी इसी वातावरण मे व्यतीत होती है और इस प्रकार अन्धपरम्पराओं के वे स्वाभाविक विकास में भक्त बन जाते हैं तथा कट्टर रूढ़िवादी हो जाते हैं। चूंकि ये बाहरी लोगों के सम्पर्क मे भी नहीं आते इन में परिवर्तन की गुंजाइश भी कम ही रहती है। एक बार जो संस्कार सुदृढ़ हो जाते हैं वे हटाने का प्रयत्न करने पर भी मुश्किल से हटते हैं फिर इनमें तो प्रयत्न की सम्भावना ही नहीं होती।

आदिवासी बालक स्वाधीन भारतीय राष्ट्र के लिये एक चुनौती है। जब तक उनकी उन्नति के लिये कुछ क्रियात्मक योजना बना कर और उस पर अमल न किया जायेगा, इस दिशा में कुछ भी न हो सकेगा। उनके बालको के लिये शिक्षा की कोई ठोस योजना कार्यान्वित की जानी चाहिये। यह सच है कि पिछले कितने ही वर्षों से आदिम जातियों मे ईसाई मिशनरी शिक्षा प्रसार का कार्य कर रही है लेकिन क्या वह शिक्षा उनके लिये हित कर हो सकती है? कोई भी समझदार व्यक्ति कह सकता है कि कदापि नहीं क्योंकि वे भारतीय संस्कृति और सभ्यता के विरुद्ध विषैले कीटाणु इनमें भर रहे हैं, वे भगवान् के स्थान पर ईसा में ईमान लाना सिखलाते हैं। राम और कृष्ण की जगह वे यीसू के गुण बखानते हैं तथा उनके द्वारा बनायी गयी पाठ्य पुस्तकों में भी यही भरा है। वे लोग गरीब और भोले भाले आदिवासी बालकों में पाश्चात्य सभ्यता के प्रति रुचि जाग्रत करते हैं। भूत-पूर्व ब्रिटिश सरकार ने इस कार्य के लिये हमारे ही देश का करोड़ों रुपया व्यय किया था।

शिक्षा कैसी हो?

हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि आदिवासी भाई अपने वर्तमान रीति रिवाजों से हिन्दुओं के अधिक निकट हैं या भील आदि भाइयों के रहन सहन से हम

कह सकते हैं कि इस देश में बसने वाले आदि वासी हिन्दू ही हैं और उन्हें वही शिक्षा दी जानी चाहिये जो हम अपने बालकों को दिलाना पसन्द करेंगे। उनको दी जाने वाली शिक्षा प्रणाली में उससे भी कुछ विशेषता होनी चाहिये जो कि उन्हें स्वावलम्बी बना सके। ये लोग बहुत गरीब हैं अतः इन्हे ऐसी शिक्षा दी जाये जिससे वे आर्थिक चिन्ता से मुक्त हो सकें और वह खर्चीली न हो। उड़ीसा के कतिपय क्षेत्रों में बुनयादी तालीम काफी हद तक सफल हुई हैं। इनमें मनोवैज्ञानिक पद्धति पर मांटेसरी प्रणाली से भी शिक्षा प्रारम्भ की जानी चाहिये ताकि बच्चों के मानस का प्रारम्भ से ही विकास हो।

आदिवासी बालकों के लिये मात्र साक्षरता प्रसार वाली शिक्षा उपयोगी न हो सकेगी। आज देश में ही पढे लिखे बेकारों की संख्या अधिक है और यदि हम उन्हें भी कोरा किताबी ज्ञान दिला कर शिक्षित बनावें तो कुछ भी लाभ न होगा। आवश्यकता यह है कि उनकी शिक्षा ऐसी हो, जिससे वे सही अर्थों में मनुष्यता का पाठ सीखें तहज़ीब सीखें, उन्हे धर्म का भी यथेष्ठ ज्ञान हो, भारतीय संस्कृति और सभ्यता से वे परिचित हों। आदिवासी बालकों को ऐसी शिक्षा दी जानी चाहिये जिससे हाथ से किये जाने वाले कार्य के प्रति उनकी अरुचि नहीं, प्रत्युत भक्ति हो तथा उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेने पर भी वे शिल्पकला में अभिरुचि रखें तथा ऐसे कार्य करने वाले अपने भाइयों से घृणा न करें।

हमारा अपना ख्याल यह है कि आज देश में नास्तिकता बढ़ती जा रही है और उसे रोकने के लिये प्रयत्न किया जाये। आदिवासियों में तो विभिन्न आदिम जातियों के अपने पृथक् २ देवता हैं और वे उनकी उपासना करते हैं तथा उन्हें खुश करने के लिये अपने त्योहारों और मनौतियों के विभिन्न पशुपक्षियों की बलि वे आमतौर पर देते हैं। इस प्रकार आदिवासी बालकों में शिक्षा के साथ ही साथ उचित धार्मिक संस्कार डालने चाहिये। गीता के अनुसार स्वधर्म निधन श्रेयस्कर है और इसी लिये उन लोगों को संस्कार सम्पन्न किया जाना चाहिये। इनमें बहुत सी बातें अच्छी भी हैं। उनका विरोध न किया जाकर उनके बालकों में अच्छे संस्कारों का प्रचलन प्रारम्भ किया जाना चाहिये। आज भारतीय सरकार धर्म के मामले में सेक्यूलर है, लेकिन इससे बहुत हानि हुई है। इस धर्म निरपेक्ष नीति से हिन्दू संस्कृति पर कुठाराघात किया जा रहा है। दिल्ली में बैठ कर कानून बना देने मात्र से कुछ नहीं हो जाता, आज के धार्मिक संस्कार शताब्दियों में बने हैं। इसलिये आदिवासी बालकों में धार्मिक सुसंस्कारों को चालू किया जाना चाहिये।

शिक्षा का माध्यम

विभिन्न प्रदेश के आदि वासियों की विभिन्न बोलियां हैं और ये कुल मिलाकर सैकड़ों होंगी। इस कारण हमारा विनम्र मत है कि साधारणतया प्रत्येक प्रदेश में आदिम वासियों के बालकों की शिक्षा उस प्रान्त की भाषा में होनी चाहिये जिसमें वह प्रदेश हो प्रायः आदिम जातिवालों को अपने प्रान्त के आदमियों से कुछ काम पड़ता ही रहता है और वे अपनी जातिगत बोली के अतिरिक्त प्रान्तीय भाषा को थोड़ी बहुत समझ सकते हैं। प्रायमरी शिक्षा के बाद राष्ट्रभाषा हिन्दी के माध्यम से उनमें शिक्षा प्रसार किया जाना चाहिये। लिपि और पाठ्य पुस्तकों का प्रश्न भी विवादास्पद है। आदिवासी बालकों के लिये ऐसी पाठ्य पुस्तकें होनी चाहिये जो उनके धर्म, रीतिरिवाजों पर प्रकाश डालते हुए उनमें सुधरे हुए विचारों का प्रचार भी कर सकें। भारतीय महापुरुषों की जीवनियां उन्हें पढ़ायी जानी चाहिये। ईसाइयों ने रोमन लिपि के द्वारा शिक्षा देना प्रारम्भ किया था और भाषा उनकी ही रक्खी थी तथा बाद में अंग्रेजी को माध्यम रखा गया लेकिन जहां तक लिपि का प्रश्न है वह तो अब देवनागरी ही होनी चाहिये।

आदिवासी बालकों में शिक्षा प्रचार करने के लिये अध्यापक भी योग्य होने चाहिये। उस अध्यापक में सब से बड़ी योग्यता यह होनी चाहिये कि वह उनसे सहानुभूति रखे उनमें मिल जुलकर उनका होकर रहे। वह उनकी कमी वा बुराइयों को धीरे धीरे दूर करने

को अपने जीवन का उद्देश्य समझे। ऐसा ही कार्य कर्ता भी होना चाहिये जो सेवाभावना से प्रेरित होकर उनमें कार्य करने के लिये आवे। उसके रहन सहन, व्यवहार और घर तथा सामाजिक जीवन का दूसरों पर स्वय ही अच्छा प्रभाव पड़ेगा। अध्यापक और कार्यकर्ता ऐसा होना चाहिये जो छूतछात न मानता हो और सुधारवादी दृष्टिकोण रखता हो। जहां तक हो सके प्रारम्भिक स्कूलों मे तो हिन्दी शिक्षित उन्हीं जातियों के अध्यापक होने चाहिये। अभी ऐसे अध्यापकों की बहुत कमी है लेकिन ऐसा प्रयत्न किया जाना चाहिये और उन्हे इस ओर आकृष्ट किया जाना चाहिये।

आर्य समाज के इतिहास की झलक

श्री परोपकारिणी सभा, (दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर)

> इस नए स्तम्भ मे परोपकारिणी सभा, प्रदेशीय सभाओ, आर्यसमाजों एवं आर्य संस्थाओं के विवरण प्रकाशित किए जाया करेंगे जो कालान्तर में आर्यसमाज के इतिहास के लिए मूल्यवान सामग्री का काम देंगे। इन विवरणों को यथासभव सचित्र बनाने का भी प्रयास किया जाएगा। आशा है इस स्तम्भ के लिए हमे प्रचुर उपयोगी सामग्री प्राप्त होती रहेगी। प्रस्तुत अंक मे परोपकारिणी सभा अजमेर का वृत्तान्त आरम्भ किया जाता है।
>
> —सम्पादक

श्रीमद् परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री१०८ स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपनी चल, अचल सम्पत्ति की रक्षा, वृद्धि और उसके अपने वांछित उद्देश्यों की पूर्ति में व्यय की सुव्यवस्था करने केलिये १६ अगस्त १८८० को अपना स्वीकार पत्र (Will मेरठ में पञीकृत (Registered) किया। इस स्वीकार पत्र द्वारा स्वामी जी महाराज ने अपनी स्थापनापन्न सभा का नामकरण 'परोपकारिणी सभा' किया और १८ सज्जनों को उसका सदस्य बनाया। मन्त्री राय बहादुर श्री प० सुन्दर लाल जी अलीगढ़ को नामांकित किया इसके उपरान्त जब स्वामी जी महाराज राजस्थान और बम्बई प्रचार करते हुवे सवत् १९३९ (१८८२ई०) में उदयपुर पधारे और मेवाड़ाधिपति महाराणा श्री सज्जन सिंह जी की श्रद्धा वैदिक धर्म में बढ़ती हुई पाई तो स्वामी जी महाराज ने मेरठ में पञीकृत (Registered) स्वीकार पत्र अमान्य कर दिया और मेवाड़ राज्य की महद्राज सभा में मगलवार ५ फाल्गुण १९३९ (२७-२ १८८३) की सायकाल ७ बजे दूसरा स्वीकार पत्र पञीकृत कराया।

इस दूसरे स्वीकार पत्र में स्वामी जी महाराज ने पूर्व के स्वीकार पत्र में नामांकित सदस्यों में से देहांत हो जाने के कारण मेरठ के डाक्टर बिहारी लाल जी का और वैदिक सिद्धान्तों के विरुद्ध आचरण के कारण कर्नल एच० एस० आलकाट मैडम एच० पी० बलेवट्स्की और मुन्शी इन्द्र मणि के नाम पृथक कर दिये। और कुछ नये सज्जनों को नामांकित कर सदस्यों की कुल संख्या २३ कर दी।

स्वामी जी महाराज ने आदेश दिया कि उक्त सभा जैसे कि वर्तमान काल व आपत्काल में नियमानुसार मेरी और मेरे समस्त पदार्थों की रक्षा करके सर्वहितकारी कार्य में लगाती है वैसे ही मेरे पश्चात् अर्थात् मेरी मृत्यु के पीछे भी लगाया करे।

(प्रथम) वेद और वेदांगादि शास्त्रों के प्रचार, अर्थात् उनकी व्याख्या करने कराने, पढ़ने पढ़ाने, सुनने सुनाने, छापने छपवाने आदि में।

(द्वितीय) वेदोक्त धर्म के उपदेश और शिक्षा अर्थात् उपदेशक मण्डली नियत करने, देश देशान्तर

और द्वीपान्तर में भेज कर सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग कराने आदि में।

तृतीय) आर्यावर्तीय अनाथ और दीन मनुष्यों के संरक्षण पोषण और सुशिक्षा में व्यय करे और करावे।

अपने अंत्येष्टि संस्कार के सम्बन्ध में स्वामी जी महाराज का आदेश था कि—

जैसे इस सभा को अपने सामर्थ्य के अनुसार वर्तमान समय में मेरी और मेरे समस्त पदार्थों की रक्षा और उन्नति करने का अधिकार है, वैसे ही मेरे मृतक शरीर को संस्कार करने कराने का भी अधिकार है। अर्थात् जब मेरा देह छूटे तो न उसको गाड़ने, न उसको जल में बहाने, न जंगल में फेंकने दें। केवल चन्दन की चिता बनावें और जो यह सम्भव न हो तो दो मन चन्दन, चार मन घी, पांच सेर कपूर, ढाई सेर अगर तगर और दश मन काष्ठ लेकर वेदानुकूल जैसे कि संस्कार विधि में लिखा है वेदी बनाकर तदुक्त वेद मन्त्रों से होम करके भस्म करें। इससे कुछ भी वेद विरुद्ध न करें। इस आदेश के अनुसार स्वामी जी महाराज का अन्त्येष्टि संस्कार सम्पन्न हुआ जिस में २१७)॥ व्यय हुआ।

(१) अपने स्थापना काल से (अर्थात् १८८३ई०) १८९९ की समाप्ति तक परोपकारिणी सभा के ९ अधिवेशन नीचे लिखे स्थानों पर सामने अंकित तारीखों को हुये :—

प्रथम अधिवेशन	मेवाड़ दरबार की कोठी पर मेयोकालिज अजमेर	ता० २८, २९-१२ सन् १८८३ ई०
द्वितीय	यथापूर्व	ता० २८, २९-१२। १८८५ ई०
तृतीय	आर्य समाज, अजमेर	ता० २८, २९-१२। १८८० ई०
चतुर्थ	यथापूर्व	ता० २८ २९ १२। १८८८ ई०
पंचम	दयानन्द आश्रम महाविद्यालय	ता० २८, २९ १२। १८९० ई०
षष्ठ	यथापूर्व	ता० ६, ७ ६। १८९१ ई०
सप्तम	यथा और आर्य समाज भवन	ता० २८, २९ १२। १८९३ ई०
अष्टम	सम्भवतया दयानन्द आश्रम	ता० २७, २८ १२। १८९७ ई०
		और ता० १, ३, ४, ५, ६ १। १८९५ ई०
नवम	वैदिक यन्त्रालय	ता० २८, २९ १२। १८९९ ई०

(अ) सभा के सभापति श्रीमन्महाराजाधिराज मेवाड़ाधिपति महाराणा सज्जन सिंह जी बहादुर स्वयं प्रथम अधिवेशन में पधारने को उत्सुक थे, परंतु अस्वस्थ हो जाने के कारण स्वयं न पधार सके और प्रतिनिधित्व करने के लिए राज राणा श्री फतहसिंह जी देलवाड़ा और सभा मंत्री कविराज श्री श्यामलदास जी को नियुक्त किया। इस अधिवेशन के कुछ ही महीनों पश्चात् श्री महाराणा साहब का स्वर्गवास हो गया। जिससे सभा की महती हानि हुई। सभा ने इस सम्बंध में अत्यन्त शोक प्रकट किया और इस महान् अभाव की पूर्त्यर्थ महाराणा श्री फतहसिंह जी से प्रार्थना कराई कि जिस प्रकार श्रीमानों ने उदारता प्रकट कर सभा का संरक्षक बनना स्वीकार किया, सभापति का पद भी स्वीकार करने की कृपा करावें। परंतु महाराणा जी ने केवल संरक्षक बनना ही पर्याप्त समझा।

(ब) मंत्री कविराज श्री श्यामलदास जी १, ३ और ५ अधिवेशनों में स्वयं पधारे और २ और ४ अधिवेशन में उनका प्रतिनिधित्व श्री मोहन लाल जी विष्णु लाल जी पांड्या ने किया। कविराज जी ने अस्वस्थ रहने के कारण मंत्रित्व पद से अधिवेशन ५ ही के अवसर पर त्यागपत्र दे दिया जिसे अत्यन्त खेद के साथ स्वीकार कर श्री मोहन लाल जी विष्णु लाल जी पांड्या को मंत्री पद स्वीकार करने को कहा

गया जिसे उन्होंने सभा के समस्त सदस्यों और आर्य समाजों के उपस्थित प्रतिनिधि के अत्यन्त आग्रह पर अंगीकार किया। श्री कविराज जी का स्वर्गवास सभा के ८वें अधिवेशन के पूर्व सन् १८९४ में हो गया।

(ख) उप सभापति श्री मूलराज जी एम० ए० ने १, २, ४, ५, और ६ अधिवेशनों में स्वयं उपस्थित हो सभा का सभापतित्व कार्य संचालन किया और ३ अधिवेशन में अत्यावश्यक कार्यवश स्वयं उपस्थित न हो सकने के कारण लाला साईंदास जी को अपना प्रतिनिधित्व करने की व्यवस्था की।

(ग) सभा के प्रथम अधिवेशन के पूर्व ही द्वितीय मंत्री रामशरण दास जी मेरठ निवासी का देहान्त हो चुका था अतः उनके द्वितीय मंत्री पद पर माननीय राय बहादुर पं० गोपालराव हरिदेशमुख डिस्ट्रिक्ट जज बम्बई प्रदेश सर्व सम्मतिसे निश्चित हुए और सदस्यता के स्थानमें निश्चय किया गया कि मेवाड़ाधिपति द्वारा जोधपुर मारवाड़ के महाराजा श्री प्रतापसिंह जी सी० एस० आई० से सदस्यता स्वीकार कराई जावे।

(५) उपमन्त्री श्री मोहन लाल जी विष्णु लाल जी पंड्या (जो जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है द्वितीय अधिवेशन में ही मन्त्री निश्चित हो गये थे) अधिवेशन ८ के अतिरिक्त शेष सब अधिवेशनों में उपस्थित थे।

(६) शाहपुराधीश राजाधिराज सर नाहर सिंह जी वर्मा ने प्रथम अधिवेशन में कविराज श्यामलदास जी, द्वितीय अधिवेशन में पुरोहित कृष्ण दत्त जी, तृतीय अधिवेशन में राम जीवन जी और चतुर्थ और पंचम अधिवेशन में प० हमीरमल जी को अपना प्रतिनिधि बनाया। राजाधिराज स्वयं एक दिन के लिए ६ वें अधिवेशन में पधारे।

(७) ८, ९ और १० बदेला राव तख्त सिंह जी, देलवाड़ा के श्री फतेह सिंह जी, आसींद के श्री अर्जुनसिंह जी और शिवरति के महाराज श्री गजसिंह जी राजकीय परिस्थिति वश चारों एक साथ एक समय में नहीं पधार सकते थे यह स्पष्टीकरण श्री मोहन लाल जी विष्णु लाल जी पंड्या ने सभा के प्रथम अधिवेशन में कह दिया था। अतः इन चारों के प्रतिनिधि स्वरूप प्रथम अधिवेशन में कविराज श्यामलदास जी अथवा श्री फतह सिंह जी, द्वितीय अधिवेशन मे श्री अर्जुन सिंह जी, तृतीय में कविराज श्यामल दास जी और चतुर्थ में पंड्या मोहन लाल जी ने किया। श्री फतहसिंह जी का देहान्त प्रथम अधिवेशन के पूर्व और श्री तख्त सिंह जी का देहान्त ७ वें अधिवेशन के पूर्व हो गया। प्रतीत होता है कि श्री अर्जुन सिंह जी का सम्बन्ध सभा से अधिवेशन ८ और ९ के बीच छूट गया। कारण अधिवेशन ९ की सदस्य सूची मे उनके स्थान पर श्री करणसिंह जी बदेला का नामोल्लिखित है जो इसी अधिवेशन में सदस्य चुने गये। (क्रमशः)

आर्य समाज के इतिहास की प्रगति

प्रथम भाग समाप्त

आर्यसमाज के इतिहास का प्रथम भाग पूरा लिखा जा चुका है। बीच बीच में कुछ अंश खाली छोड़े गये हैं क्योंकि उनके लिये पर्याप्त सामग्री प्राप्त नहीं हुई। कापी टाइप हो रही हैं। आशा है कि जिस सामग्री की आवश्यकता है, वह शीघ्र ही प्राप्त हो जायगी। जब सब अध्याय पूरे हो जावेंगे तो उनकी टाइप की हुई कापियां उस उपसमिति के सदस्यों को भेजी जायेंगी जिसकी नियुक्ति सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा ने इस निमित्त से की है कि वह छपने से पूर्व ग्रन्थ को देख जायें और उसे यथासम्भव पूर्ण बनाने के लिये उचित परामर्श दें।

इस भाग में प्रारम्भ से लेकर सम्वत् १९५८ (सन् १९०१) तक का इतिहास दिया गया है। इस समय का इतिहास लिखने में सबसे अधिक सहायता भिन्न भिन्न प्रान्तों की प्रतिनिधि सभाओं की रिपोर्टों और आर्यपत्रों से मिल सकती थी। यह खेद की बात है कि तीन प्रान्तों को छोड़कर अन्य कहीं से रिपोर्टें प्राप्त नहीं हुईं। अत्यन्त आग्रह पूर्वक प्रार्थना करने पर भी कुछ प्रान्तों से तो छोटे-मोटे लिखित विवरण भी प्राप्त नहीं हुये। सबसे अधिक सामग्री उत्तरप्रदेश

से प्राप्त हुई है। राजस्थान से भी पर्याप्त रिपोर्टें प्राप्त हो गई हैं। पंजाब प्रतिनिधि सभा का लगभग सारा कार्यालय विभाजन के कारण नष्ट हो गया था। यदि वहां की प्रतिनिधि सभा का स्वर्गीय पं० चमूपति जी द्वारा लिखा हुआ वह इतिहास न मिल जाता जो सभा की ओर से सम्वत् १९९२ में प्रकाशित हुआ था तो बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ता। जिन प्रान्तों से बहुत कम वस्तुयें मिली हैं वह बम्बई, बंगाल और मध्यप्रदेश हैं। बम्बई से कुछ लिखित वृत्तान्त आना प्रारम्भ हुआ है। आशा है शीघ्र ही और भी आयेगा। प्रादेशिक सभा को जो कई पत्र लिखे किसी का उत्तर भी प्राप्त नहीं हुआ। इन सब सभाओं से आग्रह पूर्वक निवेदन है कि वह महीने भर के अन्दर ही अन्दर इतिहास के लिये जो भी रिपोर्ट अथवा पुराने समाचार पत्रों की फाइलें आदि भेज सकें, भेज दें।

दूसरे भाग की रूप रेखा

इस समय यह विचार है कि दूसरा भाग १९०२ ई० से प्रारम्भ होकर हैदराबाद सत्याग्रह की समाप्ति तक पहुँच जाये। दूसरे भाग का पहला खंड लिखा जा चुका है। उसमें गुरुकुलों की तथा अन्य शिक्षणालयों तथा सार्वदेशिक सभा की स्थापना का वृत्तान्त देकर उनकी प्रारम्भिक प्रगति का भी दिग्दर्शन कराया गया है।

दूसरे खंड में १९१२ से १९१८ तक के वर्षों में देश के प्रान्तों और विदेशों में आर्यसमाज के कार्य का जो तीव्र विस्तार हुआ उसका विवरण दिया जायगा। यह खंड लिखा जा रहा है। इसके लिये भी सभाओं की रिपोर्टों और आर्यपत्रों की फाइलों की आवश्यकता होगी। आर्य पत्रों की फाइलें जिन सभाओं, समाजों या व्यक्तियों के पास हों वह मुझे सूचित करने की कृपा करें। जिन फाइलों की आवश्यकता होगी मैं उनसे मंगवा लूंगा। इतिहास का लेखन कार्य समाप्त होने पर यदि भेजने वाले चाहेंगे तो फाइलें उन्हें वापिस भेज दी जायेंगी अन्यथा सार्वदेशिक सभा के पुस्तकालय में रखी जायेंगी। दूसरे भाग के तीसरे खंड में भारत के स्वाधीनता संग्राम में आर्यसमाज के नेताओं और सदस्यों ने जो महत्वपूर्ण भाग लिया है, उसका विस्तृत विवरण भी देने का विचार है। सब प्रान्तिक सभाओं से प्रार्थना की गई है कि वह अपने-अपने प्रांत में आर्यसमाजियों द्वारा देश की जो राजनीतिक सेवायें की गई हों उनका विवरण इकट्ठा करके यथासम्भव शीघ्र भेजें। इस खण्ड को यथाशक्तिपूर्ण बनाने का विचार है।

चौथे खण्ड में शुद्धि का प्रकरण रहेगा। उस प्रकरण में बहुत विवादग्रस्त विषय रहेंगे। उन वर्षों में न जाने आर्यसमाज पर कितने आरोप लगे और उसका कितना विरोध किया गया, उन सभी की ऐतिहासिक दृष्टिकोण से समीक्षा की जायगी।

पांचवें खण्ड में १९२७ के आरम्भ से लेकर सन् १९३९ तक का इतिहास दिया जावेगा। इस समय की मुख्य घटना हैदराबाद का सत्याग्रह है। यह न केवल आर्यसमाज के अपितु हैदराबाद और भारतवर्ष के इतिहास की बहुत महत्वपूर्ण घटना थी। यह सन्तोष की बात है कि उस शान्तिमय संग्राम का विस्तृत विवरण बहुत कुछ प्राप्त है और जो कमी होगी वह आसानी से पूरी की जा सकेगी क्योंकि उस युद्ध के कई सेनानी और सैनिक उसे पूरा करने के लिये विद्यमान हैं। इन पांच खण्डों से दूसरा भाग कितना बड़ा बन जावेगा अभी यह कहना कठिन है। पांच खण्ड लिखे जाने पर यह निश्चय हो सकेगा कि १९४० से लेकर अब तक का इतिहास दूसरे भाग में आवेगा अथवा तीसरे भाग में।

आर्य जगत् से निवेदन

इस महान कार्य की पूर्ति के लिये सभी आर्य संस्थाओं, आर्य समाजों और आर्यजनों से निवेदन है कि उनका सहयोग प्राप्त करने के लिये बार बार प्रेरणा की आवश्यकता न होनी चाहिये। यह तो समाज का कार्य है। समाज के प्रत्येक अंग का कर्तव्य है कि इसे अपना कार्य समझ कर इतिहास के सम्बन्ध में जितनी भी सामग्री उपलब्ध कर सके, इतिहास कार्यालय में भेज दें। इतिहास की उपयोगिता उसकी पूर्णता पर आश्रित है और उसकी पूर्णता आर्यजनों के सहयोग पर।

इन्द्रविद्यावाचस्पति
२९, भक्तागंज, जवाहर नगर, देहली

समस्त आर्य कुमार सभाओं, प्रदेशीय परिषदों के मन्त्री महोदयों, प्रतिष्ठित सदस्यों, परीक्षा केन्द्र के व्यवस्थापकों एवं अन्य सज्जनों की सेवा में

[लेखक—श्री देव दयाल आर्य प्रधान मंत्री भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद्, खारावावली, देहली]

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् का द्वितीय अन्तरंग अधिवेशन

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् का द्वितीय अधिवेशन तारीख १२ दिसम्बर १९५४ को रविवार मध्यान्ह १ बजे से श्रद्धानन्द बलिदान भवन देहली में श्री पं० नरदेव जी स्नातक संसद सदस्य के सभापतित्व में हुआ। २१ सदस्य उपस्थित थे। जिनमें उल्लेखनीय नाम निम्न प्रकार हैं:—

१ श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज
२ श्री पं० नरदेव जी स्नातक
३ श्री देवी दयाल जी आर्य

विशेष निमंत्रण पर श्री स्वामी व्रतानन्दजी महाराज, श्री पं० देवव्रत जी धर्मेन्दु तथा श्री ज्ञानेन्द्र कुमारजी उपस्थित थे।

कार्यवाही

श्री प्रकाशचन्द्र जी चन्दौसी के आकस्मिक निधन पर शोक प्रस्ताव पास हुआ।

श्री राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री को उनके संन्यास प्रवेश पर बधाई दी गई तथा प्रेमदत्त जी शास्त्री को उनके गृहस्थ प्रवेश पर बधाई दी गई।

अन्तरंग सभा के रिक्त स्थानों की पूर्ति करने का अधिकार प्रधान जी को दिया गया।

बजट

४०००) की आय तथा व्यय का बजट आगामी वर्ष के लिए स्वीकृत हुआ।

त्यागपत्र

पूज्यपाद श्री राजगुरु पं० धुरेन्द्रजी शास्त्री का त्यागपत्र

सर्व सम्मति से पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री का त्यागपत्र स्वीकार हुआ और उनके स्थान पर श्री स्वामी ध्रुवानन्दजी महाराज को अन्तरंग सदस्य चुना गया।

गत सत्र के कोषाध्यक्ष, परीक्षामन्त्री, प्रकाशनमन्त्री तथा प्रधान मन्त्री के आय व्यय ३१-१२-५४ तक श्री एन० डी० कपूर नई देहली के पास आडिट होने के लिए पहुंच जावें उसके बाद वे सब हिसाब आडिट रिमार्क्स के साथ अन्तरंग सभा में पेश हों तथा यह भी निश्चय हुआ कि गत वर्ष के परीक्षामन्त्री नये परीक्षामन्त्री को शीघ्र ही चार्ज दे देवें।

नियम संशोधन समिति अपनी रिपोर्ट अगली अन्तरंग सभा में पेश करेगी।

शान्तिपाठ के बाद अन्तरंग सभा विसर्जित हुई।

सिनेमा या सर्वनाश

कला के नाम पर सिनेमा की गन्दी फिल्में भारत के नवयुवक नवयुवतियों का चारित्रिक ह्रास किस सीमा तक कर रही हैं, और इसके कुप्रभाव से किस प्रकार भले परिवारों को उजाड़ा जा रहा है या उनकी इज्जत धूल में मिलाई जा रही है इसका विश्लेषण बड़े ही वैज्ञानिक ढङ्ग से सार्वदेशिक आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति श्री ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी ने अपने "सिनेमा या सर्वनाश ट्रैक्ट में किया है।

मेरी दृष्टि में प्रत्येक आर्यकुमार तथा माता पिता को इसे स्वयं पढ़ना चाहिये और अपने इष्ट मित्रों को पढ़ाना चाहिये। इसके मिलने का पता सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली है—मूल्य =) प्रति १० रुपये सैंकड़ा।

देवी दयाल, प्रधानमन्त्री
भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद्
दिल्ली

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् के अन्तरग सदस्य जो १२-१२-५४ की अन्तरग सभा मे जो दिल्ली मे हुई उपस्थित थे जिनमे से मुख्य २ ये हैं :—

(१) श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज, प्रधान सार्वदेशिक सभा, देहली।
(२) श्री प० नरदेव जी स्नातक एम० पी० ससद सदस्य प्रधान। (३) श्री देवीदयाल जी आर्य प्रधान मन्त्री।
(४) श्री स्वामी व्रतानन्द जी महाराज विशेष निमन्त्रित। (५) श्री देवव्रत जी धर्मेन्दु (विशेष निमन्त्रित)

* दक्षिण भारत प्रचार *

सत्यार्थप्रकाश के कन्नड़ अनुवाद के संशोधन का काम ९ दिसम्बर को पूर्ण हो गया। उसकी प्रेस कापी पर्याप्त तैयार हो चुकी है और २७ दिसम्बर तक पूर्णतः तैयार हो जायगी। जनवरी के प्रथम सप्ताह में प्रतिनिधि प्रकाशन समिति की अन्तरंग में प्रमाणित होने के बाद उसके द्वारा निर्धारित मुद्रणालय में मुद्रणार्थ दे दिया जायगा।

इसकी कुछ विशेषतायें हैं जिनका उल्लेख करना मैं आवश्यक समझता हूँ तथा ये सब श्रद्धालु पाठकों के हाथों में इस ग्रन्थ के आने पर स्वयं भी वे अनुभव कर लेंगे। १. महर्षि दयानन्द के हिन्दी सत्यार्थ-प्रकाश के भाव ज्यों के त्यों इसके वाक्यों में अंकित हैं। २. भाषा न अनावश्यक व्याख्यात्मक और न अनावश्यक रूप में संक्षिप्त ही है। अपितु एक एक हिन्दी वाक्य का ज्यों का त्यों कन्नड़ वाक्य में अनुवाद है। इससे उत्तरभारतीय श्रद्धालु आर्य सज्जन यदि कन्नड़ भाषा सीखना चाहेंगे तो इससे उन्हें पूरी सहायता मिल सकती है। केवल कन्नड़ भाषा की वर्णमाला जानने की उन्हें आवश्यकता पड़ेगी। ३. हिन्दी व कन्नड़ भाषा की रचना शैली में भेद होने के कारण हिन्दी वाक्य में शब्दों का अन्वय आदि ठीक २ लगा कर अनुवाद किये जाने के कारण बहुत से स्थलों पर संदिग्ध हिन्दी वाक्यों के लिए भी व्याख्या रूप बन गया है। ४. इतना सब होने पर भी कन्नड़ भाषा का साहित्यिक सौन्दर्य उसी प्रकार और अच्छे रूप में बना हुआ है क्योंकि संशोधनकार स्वयं एक साहित्यिक तथा कन्नड़ भाषा में महर्षि दयानन्द सरस्वती के ऊपर महाकाव्य लिखने वाले प्रसिद्ध सहृदय श्री पं० सुधाकर जी हैं। इस सब के अतिरिक्त सब से बड़ी विशेषता इस संस्करण की यह है कि इस मंहगाई के युग में भी इसका मूल्य बहुत कम रखा गया है। क्योंकि सार्वदेशिक सभा के संरक्षण में निर्मित इस प्रतिनिधि प्रकाशन समिति का उद्देश्य पुस्तकों का अधिक से अधिक संख्या में अनुवाद कर प्रचारार्थ कम से कम दामों में श्रद्धालु पाठकों के हाथों में पहुँचाना है। प्रत्येक प्रति का वास्तविक मूल्य १॥=) एक रुपया दस आने तक पड़ने की सम्भावना है और जैसा कि समाजों को सूचना दी जा चुकी है कि ३१ दिसम्बर तक जिनकी धनराशि समिति के मन्त्री जी को पहुँच गई है, तो उनको इसी वास्तविक मूल्य पर पुस्तक भेंट की जावेगी।

कन्नड़ भाषा में व्यवहार भानु का प्रकाशन प्रारम्भ हो चुका है। २००० प्रतियां छपवाई गई हैं। सार्वदेशिक सभा ने दक्षिण भारत में ट्रैक्टों के प्रकाशनार्थ २५०) अढ़ाई सौ रुपये की धनराशि देकर बड़ा कृतार्थ किया। इसका भी मूल्य =) दो आने रखे जाने की सम्भावना है। जो समाजें व सहृदय सज्जन इनको लेना चाहें वे "श्री रामशरण जी आहूजा, मन्त्री प्रतिनिधि प्रकाशन समिति, अमेरिकन स्टोर्स, शिवराम पैट, मैसूर" के पते पर लिख कर भिजवा सकते हैं।

समिति की ओर से इन दो पुष्पों के प्रकाशन के पश्चात् श्री आनन्द स्वामी जी सरस्वती लिखित "आज की समस्या तथा उसका समाधान" इस पुस्तिका का कन्नड़ अनुवाद तथा 'संस्कारविधि' व 'कल्प सरित्' के कन्नड़ अनुवाद को प्रकाशित करने का विचार है। इनके अनुवादों का काम भी प्रारम्भ हो चुका है।

श्री प्रधान जी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के दक्षिण भारत में प्रवास के समय में इस समिति को और भी विशाल और स्थायी रूप देने की योजना हो रही है।

इसके अतिरिक्त उनके प्रवास के समय में दक्षिण भारतीय प्रतिनिधि सभा की स्थापनार्थ एक बीज समिति के निर्माण की भी योजना चल रही है।

मैं समिति की योजना तथा सत्यार्थ प्रकाश के प्रकाशनार्थ धन संग्रह करने के लिए १३ ता० को बम्बई, हुबली, हैदराबाद, गुलबर्गा तथा रायपुर आदि

विभिन्न स्थानों पर जा रहा हूँ। आशा है परमात्मा की कृपा से यह उठाया हुआ पहला कदम सफल होगा।

श्री प्रधान जी के आगमन की बात सुन कर दक्षिण की सभी समाजों में एक नई चेतना व जागृति का उद्भव हुआ है तथा वे उस दिन की प्रतीक्षा में हैं जब कि वे उनका स्वागत करके अपने अन्धकारमय प्रदेश में भी पावनतम अमर वैदिक ज्योति का आधान कर सकें। आशा है उनकी यह आशा शीघ्र ही पूर्ण होगी।

मैसूर में "आर्य धर्मार्थ औषधालय" की स्थापना हो चुकी है तथा कई व्यक्ति इससे लाभ उठा रहे हैं। आर्यसमाज की ओर से एक हिन्दी विद्यालय भी चालू हो गया है जिसमें श्री कदलय्या जी मुख्य अध्यापक के रूप में कार्य कर रहे हैं।

गत मास नगर की नगरपालिका ने ईसाई प्रचारकों को नगर का पुरभवन प्रचारार्थ दे दिया था। कई दिनों तक उनका प्रचार चला। पर धीरे २ संस्कृति पुनरुत्थान सभा के आर्यवुवकों ने उन पादरियों के सम्मुख प्रश्न रखने प्रारम्भ किये जिनका वे कोई भी उत्तर न दे सके। पश्चात् जनता भी उन प्रचारकों का खोखलापन समझ गई तथा नगरपालिका के अध्यक्ष के पास उनका प्रचार बन्द करने के लिए पत्र पहुँचने लगे। आखिरकार अध्यक्ष स्वयं एक दिन आये और अगले दिन से उनका प्रचार समाप्त कर दिया गया। आर्ययुवकों की अराष्ट्रीय प्रचार के विरोध में यह प्रथम सफलता थी। इसी प्रकार के और भी विरोध केन्द्र बनाये जा सकते हैं यदि सार्वदेशिक सभा द्वारा स्थापित ईसाई प्रचार विरोध समिति अपना एक दृढ केन्द्र मैसूर में स्थापित करे। समस्त दक्षिण भारत इसमें उसको सहयोग देगा और सुदूर दक्षिण में इन अराष्ट्रीय प्रचारों और प्रचारकों का विरोध करने के लिए यही स्थान सबसे उपयुक्त है। आशा है समिति ध्यान देने की कृपा करेगी।

आर्य समाज मैसूरमें ईसाई परिवार की शुद्धि हुई। पिता का नाम कृष्ण और पुत्र का नाम वेदप्रिय रखा गया। पिता समाज का सदस्य है तथा प्रति सप्ताह समाज के सत्संग में भाग भी लेता है। ता० १२-१२-५४ रविवार को भी एक और परिवार शुद्ध हुआ। पिता का नाम कान्तराज माता का नाम चन्द्रमती बड़ी लड़की का नाम सुलोचना, छोटी का नाम अनुसूया तथा एक और बच्चे का नाम सुरेन्द्र रखा गया। यह परिवार भी आर्यसमाज में नियमित रूप से आने की प्रतिज्ञा कर आर्य रीति से अत्यन्त प्रभावित हुआ।

—सत्यपाल शर्मा, स्नातक
दक्षिण भारत आर्यसमाज आर्गेनाइजर
(१०-१२-१९५४)

आर्य वीरदल आन्दोलन

सवा लाख एकत्रित कर प्रधान सेनापति की आन को रखिए।

श्री जियालाल रक्षा सचिव की घोषणा

प्रिय भाई,

क्या आपको ज्ञात है कि आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति ने प्रण किया है कि वे आर्य वीर दल के लिये एक लाख रुपये का संग्रह करेंगे।

और जब तक यह संग्रह न हो तब तक आप लोगों से सैनिक नमस्ते ग्रहण नहीं करेंगे।

नमस्ते लेना या न लेना कायर पुरुषों के लिये साधारण सी बात है किन्तु आप तो कायर नहीं हैं, आर्य वीर हैं। एक सच्चे सैनिक हैं।

सैनिकों के लिये आन जान से प्यारी होती है।

क्या अब हमारा यह कर्तव्य नहीं कि हम अपने सेनापति को इस प्रणपाश से मुक्त करें।

कार्य कुछ भी कठिन नहीं है।

हमें एक लाख आर्य वीर भरती करने हैं।

प्रत्येक आर्य वीर भरती होते समय सवा रुपया

इस आन रक्षा में प्रदान करें। चार आना सदस्यता का और एक रुपया सेनापति की आन का।

इसमें एक पन्थ तीन काज होंगे।

१. सेनापति की आन की रक्षा।

२. सवा लाख रुपये का कोष।

३. एक लाख सदस्यों की प्राप्ति।

आगामी दीपावली तक यह कार्य सम्पन्न हो जाना चाहिये।

कमर कस लो और एक दम आगे बढ़ो।

दीपावली आ रही है इसमें ११ मास शेष हैं, आगे बढ़ो।

निवेदक—

शिवालाल, रक्षा सचिव,

सार्वदेशिक आर्य वीर दल, देहली।

हम इस अपील का बलपूर्वक समर्थन करते हैं।

आर्य वीर तो अपने सेनापति की आन के लिए जान तक लड़ायेंगे ही। हमारी सम्पूर्ण आर्य जनता से प्रार्थना है कि इस पुण्य यज्ञ में सहयोग देकर आर्य वीरों का उत्साह बढ़ावें।

प्रु आनन्द—प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

कविराज हरनाम दास—मन्त्री, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

राम गोपाल—उपमन्त्री, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

नरेन्द्र—प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा, हैदराबाद राज्य।

कालीचरण—मन्त्री, आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश।

मिहिरचन्द्र धीमान—प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा, बंगाल आसाम।

वासुदेव शर्मा—उपप्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा, बिहार।

बुद्धदेव विद्यालंकार, सदस्य, सार्वदेशिक सभा देहली

———

आर्यवीर दल के सदस्यता आन्दोलन में भाग लें

आपको यह जानकर हर्ष होगा कि इस वर्ष सार्वदेशिक आर्य वीर दल का सदस्यता आन्दोलन १५ दिसम्बर १९५४ से लेकर फरवरी १९५५ ई० तक चलेगा। आपका कर्तव्य है कि तुरन्त प्रधान कार्यालय देहली से सदस्यता फार्म मंगवा कर अधिक से अधिक दल के सदस्य बनावें। आप उन सभी सदस्यों को दल का सदस्य बनाने की चेष्टा करें जोकि दल की विचार धारा तथा कार्यक्रम से सहमत हों अर्थात् हमें केवल अपनी दैनिक शाखाओं, गोष्ठी, मंडलों तथा साप्ताहिक शाखाओं की सीमा में ही दल को सीमित न रख कर इसे जनता का आन्दोलन बनाना चाहिये।

साधारण, वृत्ति, दीक्षित तथा सहायक ये चार श्रेणियां दल के सदस्यों की होंगी। शाखा व शिविरों में भाग लेने वाले वृत्ति तथा दीक्षित वीर व वीरांगना से एक रुपया लिया जावेगा और साधारण सदस्य से चार आने। १६ वर्ष से कम आयु वाले बाल वीर तथा १४ वर्ष से कम आयु वाली वीरांगना से चार आना लिया जायगा। सहायक सदस्य जितना चाहें उतना धन सहायता रूप में दे सकते हैं।

इस प्रकार संग्रहीत धन राशि का एक चौथाई भाग प्रधान कार्यालय,श्रद्धानन्द बलिदान भवन देहली तथा एक चौथाई भाग प्रांतीय कार्यालय को मार्च १९५५ के प्रथम सप्ताह में भेज दें। शेष धन स्थानीय तथा मांडलिक दल कार्य के लिए स्थानीय दल के पास रहेगा। सदस्यता फार्म भरने के पश्चात् धन के साथ प्रधान कार्यालय को वापिस भेजने होंगे।

जो आर्यवीर दल सदस्यता आन्दोलन में भाग नहीं लेगा, उसे वैधानिक रूप से सार्वदेशिक आर्यवीर दल का अंग नहीं समझा जायगा।

ओ३म् प्रकाश त्यागी

प्रधान सेनापति, सार्वदेशिक आर्य वीर दल,

श्रद्धानन्द बलिदान भवन, श्रद्धानन्द बाजार, देहली ६।

शोक प्रस्ताव

बम्बई प्रान्तीय आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति श्री एम. के. अमीन के पूज्य पिता जी के स्वर्गवास पर अखिल भारतीय आर्य वीर दल के नेताओं ने शोक और सम्वेदना प्रकट की। प्रत्येक आर्य वीर अपने सहयोगी भाई श्री अमीन के दुःख से दुःखी हैं और उनके प्रति हार्दिक सम्वेदना प्रकट करता है।

राजस्थान आर्य वीर दल सम्मेलन

जोधपुर

अखिल भारतीय आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति श्री ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी की अध्यक्षता में १६-१२-५४ को राजस्थान प्रान्तीय आर्य वीर दल सम्मेलन हुआ। इस अवसर पर विशेष प्रदर्शन हुए।

बिजनौर

बिजनौर मण्डल आर्य वीर दल के मन्त्री श्री कृष्ण चन्द्र जी सूचित करते हैं कि हम अपने मण्डल में १००० सदस्य पत्र भरवा रहे हैं और आगामी जून मास में मंडलीय शिविर लगाने की व्यवस्था कर चुकेंगे। इस समय समस्त मण्डल सदस्यता की हलचल का केन्द्र बना हुआ है।

रक्सौल

नैपाल राज्य आर्य वीर दल के संयोजक श्री रामाज्ञा ठाकुर अभी समस्त स्थानीय राज्य के दलों का निरीक्षण कर के लौट रहे हैं। अपने दौरे का अनुभव बताते हुए उन्होंने कहा है कि बड़ी संख्यामें तराई के जिलों में विदेशी पादरी बड़ी हलचल मचा रहे हैं। उनकी प्रवृत्तियां स्पष्टतः अराष्ट्रीय हैं। उन्होंने दलों को आदेश दिया है कि यथाशीघ्र उन पर दृष्टि रक्खें और आवश्यकतानुसार उनका विवरण केन्द्रीय कार्यालय को भेज दें।

देहली

आर्य समाज दीवान हाल के वार्षिकोत्सव पर २८ नवम्बर को रात्रि को स्थानीय आर्य वीर दल के शारीरिक प्रदर्शन किया जिसमें मुख्यतः चार वीरों के शारीरिक व्यायाम पसन्द किये गये।

भिवानी

स्थानीय आर्य वीर दल के तत्वावधान में ईसाई प्रचार निरोध समिति की हलचल प्रारम्भ हो गई है। वार्षिकोत्सव के अवसरपर शुद्धि सम्मेलन हुआ जिससे ईसाइयों के हृदय दहल गये। इस अवसर पर प्रो० रामसिंह और श्री प्रकाशवीर शास्त्री के व्याख्यान महत्वपूर्ण रहे।

ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन

श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति कार्यकर्त्ता प्रधान, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा की शुद्धि प्रचार के लिए १२५००० रुपयों की अपील

अन्य धर्मों के अनुयायियों में वैदिक धर्म का प्रचार और आर्य धर्म को छोड़ कर अन्य धर्मों में गये हुए लोगों को वापिस लाने के कार्य के लिए इस वर्ष के प्रारम्भ में सार्वदेशिक सभा की ओर से १२५००० रुपये की अपील प्रकाशित की गई थी। खेद की बात है कि इस अपील पर आर्य प्रतिनिधि सभाओं, आर्य समाजों तथा आर्य जनों ने पूरी तरह ध्यान नहीं दिया। ऐसे महत्वपूर्ण कामों के लिये बार बार याद दिलाने की आवश्यकता तो नहीं होनी चाहिए परन्तु जब दस महीने निकल जाने पर भी आर्य जनता का ध्यान आकृष्ट नहीं हुआ तो एक बार फिर उन्हें याद

दिखाना आवश्यक हो गया है। इस वर्ष शुद्धि प्रचार के लिए बड़ी राशि रखने का कारण यह था कि ईसाई पादरियों द्वारा अशिक्षित भारतवासियों से भले बुरे सभी प्रकार के उपायों से ईसाइयत का जो प्रचार हो रहा है उसके रोकने की तुरन्त व्यवस्था करना आवश्यक समझा गया था। ईसाइयों का देशव्यापी गहरा संगठन अब सभी पर प्रकट हो गया है। उस संगठन के दो आधार हैं। एक धन, दूसरे प्रचारक। सबसे बड़ी आवश्यकता तो उत्साह और त्यागभाव से काम करने वाली मिशनरियों की है परन्तु वह तभी सम्भव है जब उनसे काम लेने के लिए सभा के पास पुष्कल धन राशि हो। भारत में काम करने वाले ईसाई मिशनों को योरप और अमेरिका से करोड़ों रुपये प्राप्त होते हैं। उनके सहारे पर मिशनरी लोग जीवन निर्वाह की ओर से निश्चिन्त होकर अपने तन, मन, धन की सारी शक्ति प्रचार के काम में लगा देते हैं। उनके करोड़ों के उत्तर में यदि हम लाखों भी खर्च न करें तो हमें सफलता की आशा नहीं रखनी चाहिए। साधनों के बिना शुद्धि या ईसाई प्रचार निरोध जैसे नारे लगाना ऐसा ही है जैसा खजाने में गोला बारूद न हो और युद्ध की घोषणा कर दी जाय।

किसी युद्धकी सामग्री न होते हुए उसकी घोषणा कर देने का बुरा परिणाम यह होता है कि विरोधी सचेत हो जाता है और आक्रमण होने से पहले ही प्रत्याक्रमण जारी कर देता है। हमारे निरोध आंदोलन का भी यही हाल हुआ है। वर्ष के आरम्भ में चर्चा चलने पर और प्रेरणा मिलने पर प्रायः सभी प्रान्तों की आर्य संस्थाओं की ओर से ईसाइयों में प्रचार कार्य करने की व्यवस्था जारी की गई।

मध्य प्रदेश में श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त के नेतृत्व में विधिपूर्वक कार्य आरम्भ हो चुका है। पंजाब के प्रचार विभाग ने ईसाई लोगों में काम करने के लिये विशेष उपदेशक नियत कर दिये हैं और उत्तर प्रदेश के मेरठ आदि हलकों में संगठित रूप में प्रचार कार्य हो रहा है। उड़ीसा और आसाम में भी आर्य समाज के सन्यासी और प्रचारक कार्य कर रहे हैं। परन्तु उन सब की एक ही कठिनाई है, उन्हें धन चाहिए। वह सार्वदेशिक सभा से आर्थिक सहायता मांगते हैं और यह भी चाहते हैं कि सभा की ओर से कोई अधिकारी या विद्वान् प्रचारक उनकी सहायता के लिए पहुँचे। इनमें से कोई भी काम धन के बिना नहीं हो सकता। आर्य जनता को यह जान कर आश्चर्य होगा कि प्रचार कार्य केलिये एक लाख पच्चीस हजार रुपये की जो अपील की गई थी उसके उत्तर में केवल १२०० रुपये की राशि प्राप्त हुई है। हमारी अपील से प्रभावित होकर ईसाई पादरियों ने दुगने प्रयत्न से काम आरम्भ कर दिया और हम केवल शब्दों द्वारा आन्दोलन करके शान्त हो गये। मेरी सम्मति में इस से परिस्थिति पहले से भी खराब हो गई। आशा थी कि हैदराबाद के आर्य सम्मेलन में जो प्रेरणा मिली है उसके प्रभाव से पर्याप्त धन राशि सभा को प्राप्त हो जायगी, वह आशा भी पूरी नहीं हुई।

मेरे इस निवेदन का यह अभिप्रायः नहीं है कि मैं आर्य जनता को कोई दोष दू। यदि श्रोता पर वक्ता की बात का असर न हो तो दोष वक्ता का ही माना जाता है। आर्य जनों की ओर से यह उत्तर दिया जा सकता है कि उनसे धन प्राप्त करने का यत्न ही नहीं किया गया या उन्हें याद ही नहीं दिलाया गया। एक दूसरे से शिकायत करने का कोई लाभ नहीं। अब तो सब शिकायतों को रद्दी की टोकरी में डाल कर खोये हुए अवसर को प्राप्त करना ही सबसे बड़ा कर्तव्य है। अभी हमारे पास इस वर्ष के दो महीने शेष हैं। यदि सब प्रान्तों की प्रतिनिधि सभायें, सब आर्यसमाज और सब नर नारी शुद्धि प्रचार के कोष के लिये एक सप्ताह के अन्दर अन्दर अपनी यथाशक्ति सहायता भेज दें तो हम यह वर्ष समाप्त होने से पूर्व ही प्रचार की मशीन को तेजी से चला सकते हैं। प्रत्येक प्रतिनिधि सभा, आर्य समाज और आर्य सभासद् अपनी अपनी हैसियत के अनुसार जो राशि भेजने का निश्चय करें उसे तत्काल भेज दें। प्रचार कार्य के लिए कौन कितनी राशि दे सकता है इसका निर्णय वह स्वयं करें परन्तु

यह राशि उनके कोष से निकल कर इसी मास के अन्दर अन्दर सभा के कोष में आ जाय, इस विषय में वह मेरा निवेदन मान लें। यदि इस मास के अन्त तक पर्याप्त राशि इकट्ठी हो जायगी तो अगले महीनों में जहां प्रचार केन्द्रों को आर्थिक सहायता भेजी जा सकेगी। वहां कुछ नये प्रचारकों को कार्य पर भी लगाया जा सकेगा।

ईसाइयों के काम की रोकथाम के लिये एक बड़ा आवश्यक साधन सेवा केन्द्रों को स्थापित करना है। वह भी धन साध्य है। मुझे पूरी आशा है कि कार्य के महत्व और समय की न्यूनता को अनुभव करके आर्य प्रतिनिधि सभायें, आर्य समाजें तथा समस्त आर्य नर नारी सार्वदेशिक सभा की प्रचार निधि में अपना २ भाग भेजने में विलम्ब न करेंगे। धन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के पते पर भेजें।

इन्द्र विद्यावाचस्पति
कार्यकर्त्ता प्रधान सार्वदेशिक सभा

मध्यभारत में ईसाई मिशनरी

मध्यभारत शासन ने राज्य में ईसाई मिशनरियों की प्रवृत्तियों की जांच पड़ताल करने के लिये एक समिति नियुक्त की है। इस समिति के अध्यक्ष मध्यभारत के उच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश श्री रेगे हैं। यद्यपि समिति ने अपना जांच कार्य अभी पूरा नहीं किया है, फिर भी समिति के अध्यक्ष ने पत्र-प्रतिनिधियों के सामने ईसाई मिशनरियों की प्रवृत्तियों के सम्बन्ध में कुछ प्रारम्भिक जानकारी दी है। ईसाई मिशनरियों के खिलाफ यह शिकायत थी कि वे लोगों की गरीबी और अज्ञानका लाभ उठाकर और प्रलोभन देकर बड़ी संख्या में धर्म परिवर्तन कर रहे हैं। अंग्रेजों के जमाने में ईसाई मिशनरी राज्य के कृपाभोगी वर्गों में थे और अंग्रेज अधिकारियों से उनका मेलजोल रहता था। इसलिए शासन की ओर से उन्हें अपने काम में अधिकाधिक सुविधायें मिल जाया करती थीं और उनके धर्म परिवर्तन के काम में राज्य की ओर से कोई हस्तक्षेप जैसी बात नहीं होती थी। किन्तु अब राज्य इस विषय में उदासीन नहीं रह सकता। मध्य भारत शासन ने कोई भी कदम उठाने के पहले यह जरूरी समझा कि वास्तविकता का पता लगा लिया जाये। उसने जांच समिति की नियुक्ति कर के उचित ही किया।

उत्तरी मध्यभारत ईसाई मिशनरियों की प्रवृत्तियों से अछूता रहा है। उन्होंने अधिकतर दक्षिणी मध्य-भारत को ही अपने हलचलों का केन्द्र बनाया है। जांच समिति के अध्यक्ष श्री रेगे का कहना है कि पिछले ६ वर्षों में ११०० से कुछ अधिक व्यक्तियों का धर्म-परिवर्तन किया गया है और यह कार्य ४४६ ईसाई मिशनरियों ने सम्पन्न किया है। इधर धर्म परिवर्तन की घटनायें काफी कम हो गई हैं, कारण ईसाई मिशनरियों को यह पता चल गया है कि राज्य उनकी धर्म परिवर्तन की प्रवृत्तियों को पसन्द नहीं करता। राज्य में जो मिशनरी काम कर रहे हैं, उनमें कुछ कनाडी हैं और कुछ रोमन कैथोलिक हैं। ईसाई मिशनरी प्रति वर्ष करीब दस लाख रुपया अपनी प्रवृत्तियों पर खर्च कर रहे हैं। ईसाई मिशनरियों ने अपने केन्द्र ऐसे भागों में स्थापित किये थे जो या तो सीमावर्ती अथवा अन्तःवर्ती थे। उन्होंने विशेषकर वनजातियों के क्षेत्र को पसन्द किया। वे ऐसे क्षेत्र हैं जहां आवा-गमन के साधन दुर्लभ होते हैं और उनके बीच जाकर बसना एक बड़े ही औघट का काम होता है। अब तो फिर भी सामाजिक कार्य कर्ताओं ने इन क्षेत्रों में रहने वालों के सम्पर्क में आने की शुरुआत की है, किन्तु आज से पचास या सौ वर्ष पहले ईसाई मिशनरियों ने इन क्षेत्रों में अपने केन्द्र स्थापित किये थे। वन-जातियां स्वभाव से सहज विश्वासी होती हैं और जब कोई किसी भी रूप में उनका भला करने की सोचता है, तो उसका असर पड़े बिना नहीं रह सकता। ईसाई मिशनरियों ने शिक्षा और चिकित्सा के माध्यम से इन क्षेत्रों में प्रवेश किया और राज्य ने भी उनके प्रभाव को बढ़ाने में मदद दी। ईसाई मिशनरियों ने मानव-सेवा का जो भी काम किया, उसकी सभी तारीफ करेंगे। किन्तु ईसाई मिशनरियों की प्रवृत्ति के मूल में जो धर्म-परिवर्तन की दृष्टि रही है, उसके कारण भारतीय जन समाज ने उनको शंका और सन्देह की दृष्टि से देखा है और उनका विरोध भी किया है।

मध्य भारत की जांच समिति के अध्यक्ष ने शिकायत की है कि उसके काम में लोगों की ओर से सहयोग नहीं मिल रहा है। यह जांच समिति हिन्दू महा सभा, जन संघ, और आर्य समाजों की मांग पर ही नियुक्त हुई थी और इसलिए इन संस्थाओं केलिए तो और भी आवश्यक हो जाता है कि वे समिति के काम में हाथ बटायें। उनकी ओर से उदासीनता प्रदर्शित होना आश्चर्य का ही विषय हो सकता है। ईसाई मिशनरियों की शिकायत आसानी से की जा सकती है, किन्तु उनके काम के ढंग से कुछ सीखा भी जा सकता है। उदाहरण के लिए श्री रेगे ने बताया कि झाबुआ जिले की जोबट तहसील में मिशन अस्पताल है, उसमें योग्य से योग्य डाक्टर मौजूद हैं और इन अस्पतालों में कीमती से कीमती दवाओं का इस्तेमाल किया जाता है—ऐसी दवाओं का जो अच्छे से अच्छे राजकीय अस्पतालों में भी उपलब्ध नहीं होतीं। पिछड़ी हुई जातियों में से ही ईसाई मिशनरियों को धर्म परिवर्तन के उम्मीदवार मिलते हैं। इसका स्पष्ट कारण यह है कि उनकी सभ्य समाज सदियों से उपेक्षा करता आया है और उन्हें गरीबी और अज्ञान में रहने दिया है। अब उस उपेक्षा वृत्ति का अन्त हो रहा है, यह खुशी की बात है। किन्तु अभी भी पिछड़ी जातियों के उत्थान के लिए बहुत काम करने को पड़ा हुआ है। इस काम को अगर निष्ठा और लगन के साथ पूरा करने की चेष्टा की जायगी तो वे प्रलोभन व्यर्थ हो जायेंगे जो विदेशी धर्म प्रचारकों की ओर से दिए जाने की अक्सर शिकायत की जाती है।

(हिन्दुस्तान)

जहां तक आर्य समाज का सम्बन्ध है, श्री रेगे महोदय की शिकायत के सम्बन्ध में आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य भारत से आवश्यक जानकारी प्राप्त की जा रही है। —सम्पादक

समूचे भारत को ईसाई बनाने का षड़यन्त्र

अमेरिका में "विंग्स आव हीलिंग" नामक एक ईसाई संगठन है (पो० बाक्स ४८ पोर्टलैंड ओरेगन) वह संसार व्यापी ईसाई धर्म परिवर्तन की योजना बना रहा है। इस संगठन के डा० थोमस वायट और आर जी होवस्ट्रा ने अमेरिकन जनता के नाम एक सार्वजनिक अपील प्रचारित करके अधिक से अधिक धन की मांग की है और कहा है कि परमात्मा की कृपच्छाया में संगठित अमेरिकन प्रजा की आत्मिक शक्ति को गति देने और बाहर जाकर राष्ट्रों को अनुशासित करने के महान मिशन को हम हाथ में ले रहे हैं। उनकी धारणा है कि यदि वे १ अरब ईश्वर-विमुख आत्माओं को ईसा की शरण में न ला सके तो संसार साम्यवादी बन जायगा। कहा जाता है कि भारत के ७०० ईसाई चर्चों ने डाक्टर वायट महोदय को प्रेरणा की है कि वे अपनी सैनिक टुकड़ियों को इस महान् देश में ले जाकर उसके जरूरतमन्द लाखों व्यक्तियों को परमात्मा के साम्राज्य में लाने का कार्य आरम्भ करें।

अमेरिका के ४५७ रेडियो स्टेशनों से प्रति रविवार को इस प्रकार का धमर्गल प्रचार होता है।

भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् अमेरिकन मिशनरियों की दुगनी संख्या हो जाने का कारण उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है। पता नहीं भारत को ईसाइयत में रंगने के लिए कितना धन लगाया जा रहा है। ———

यह उपेक्षा घातक

[लेखक—श्री ओ३म् प्रकाश जी पुरुषार्थी]

एक समय वह था कि जब हम दास थे और यहां के विदेशी शासक मुख्यतः आर्यजाति के ही शत्रु थे। परन्तु उस समय यदि कहीं भी एक हिन्दू मुसलमान या ईसाई बन जाता था तो देश भर का आर्यसमाज तड़फ उठता था और जब तक उस अपने बिछुड़े भाई को वापिस नहीं लौटाया जाता था तब तक एक विचित्र बेचैनी सी प्रत्येक आर्य के हृदय में रहती थी।

परन्तु आज खेद के साथ कहना पड़ता है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् जहां हमारी यह तड़प तथा उत्साह कई गुणा अधिक होना चाहिये था, वहां

यह अब शिथिलता का ग्रास बनता जा रहा है। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि मानों हिन्दू की वही पुरानी बीमारी 'संसार के प्रति उपेक्षा अथवा संसार असत्य है, जो कुछ हो रहा है वह प्रभु की लीलामात्र है, हमारा उसमें कोई दखल नहीं है आदि २" हमको भी लगती जारही है। यदि यह मेरा अनुमान असत्य है, तो मैं आपसे पूछना चाहता हूँ कि जब विदेशी लोग धर्म की आड़ में यहां हजारों की संख्या में आकर और करोड़ों रुपया व्यय करके हमारे निर्धन तथा अपढ़ भाइयों को बलात् ईसाई बना रहे हैं, तो फिर आप क्यों मौन साधे बैठे हैं? क्यों नहीं अब तक आपने इन विदेशियों का मुंह तोड़ उत्तर दिया?

प्रतीत होता है कि आपको स्थिति का भान नहीं है। यदि है और फिर आप आलस्य व प्रमादवश चुप बैठे हैं तो सचमुच यह हमारे लिये लज्जा का विषय है। विदित हो—अभी ८ दिसम्बर ५४ को राज्यसभा श्री दीवानचन्द जी खन्ना के प्रश्न का उत्तर देते हुये देश के उपगृहमन्त्री श्री दातार जी ने बतलाया कि इस समय भारत में राष्ट्र मण्डलीय देशों को छोड़कर अन्य देशों के ६८८० ईसाई मिशनरी हैं। राष्ट्र-मण्डलीय देशों के मिशनरियों की संख्या ११८९ है।

१३ दिसम्बर को मि० ए० के० गोपालन के प्रश्न का उत्तर देते हुये श्री दातार जी ने बतलाया कि बाहर के देशों से इन मिशनरियों को जनवरी सन् ५० से जून सन् ५४ तक ३॥ वर्ष में कुल २९'२७ करोड़ रुपया प्राप्त हुआ जिसमें अकेले अमरीका ने २०'६८ रुपया भेजा है।

इन आंकड़ों के अतिरिक्त भारत में ४५,००० भारतीय ईसाई प्रचारक वैतनिक रूप से कार्य कर रहे हैं। ११,३१८ नियमित और १३,०६९ अनियमित गिरजा घर हैं। ४० कालिज, ४४८ हाई स्कूल, ५५३ मिडिल स्कूल, १०३ टीचर्स ट्रेनिंग स्कूल तथा ८३ बाइबिल स्कूल हैं और २७४ अस्पताल हैं कि जहां नियमित रूप से हमारे गरीब हरिजन तथा पर्वतीय भाइयों को ईसाई बनाने का षड्यन्त्र रचा जाता है और उन्हें क्रियात्मक रूप दिया जाता है।

यह विशाल ईसाई सेना नित्य हजारों हिन्दुओं को ईसाई बना रही है। यह सुनकर मेरे कुछ आर्य भाई चौंकेंगे अवश्य; परन्तु उन्हें विदित होना चाहिये कि भारत में ऐसे एक दो क्षेत्र नहीं अनेकों हैं जहां रेल तो दूर, मोटर और साइकिल भी जाना असम्भव है और जहां के लोगों ने आर्यसमाज का नाम तक नहीं सुना है। वहां के बीहड़, सघन, दूरस्थ जंगलों में विदेशों से आई नवयुवतियां, नवयुवक अपनी समस्त सांसारिक उमंगों को दफनाकर तपस्वियों के समान जीवन व्यतीत कर रहे हैं और जनता की सराहनीय सेवा कर रहे हैं। बगला भक्तों की भांति ये लोग भी अपनी सेवाओं के पीछे ईसाई जाल बिछाये रहते हैं। यदि इनके जालों का चमत्कार देखना है तो आसाम की नागा, खासिया, अबर, छोटा नागपुर के संथालों, राजस्थान के भीलों तथा मध्यप्रदेश के उमरांव आदि लोगों में जाकर देखो।

अब स्थिति ऐसी भयंकर बन गई है कि यदि हमने इस षड्यन्त्र की अधिक उपेक्षा की तो इसका अति ही भयंकर परिणाम होगा। आप यदि यह समझते हो कि हमारी सरकार ही इसका समाधान कर देगी तो यह आप का कोरा भ्रम है। क्योंकि सरकार स्वयं सैक्यूलरिज्म के एक जाल में फंस गई है कि वह चाहती हुई भी कुछ नहीं कर सकती है। उसमें ऐसे लोगों की भी कमी नहीं है कि जिनकी दृष्टि में इन धर्म परिवर्तनों का कोई मूल्य नहीं है।

अतः मेरी वैदिक धर्मियों और मुख्यतः आर्यजनों से प्रार्थना है कि वह अपने नागरिक वार्षिक उत्सवों की चहल पहल के भुलावे में न रहकर देश अथवा जाति के समस्त नक्शे को अपने सामने रक्खें; और इस महान् धर्मसंकट में अपने कर्तव्य को पहिचाने। जब विदेशी सैंकड़ों मील पार करके और अपने वैभवशाली नगरों की जगमगाहट तथा विलासिता को छोड़कर यहां के दूरस्थ जगत में आकर अपनी प्रकृति के विपरीत जलवायु में हमारे विनाश के निमित्त नक्शे बना सकता है तो क्या हम अपने घर में ही

बैठे २ दूर पर फूंक तमाशे को देखते रहेंगे और आर्य जाति की परम्परा को बट्टा लगा देंगी।

सारांश! हमारी वर्तमान उपेक्षा अथवा शिथिलता असह्य, अदूरदर्शितापूर्ण एवं विनाशक है इसका परित्याग करने में ही हमारा कल्याण है। हमें विदेशी एवं अराष्ट्रीय तत्वों से शीघ्र मुक्ति पानी चाहिये अन्यथा इन कीड़ों से राष्ट्र का शरीर खोखली होजायगा और महर्षि दयानन्द के स्वप्न, स्वप्न बन कर रह जायेंगे।

———

ईसाइयों की प्रगति का दिग्दर्शन

संसार में १९१ ईसाई मिशन सम्प्रति कार्य कर रहे हैं। इनमें कैथालिकों का केवल एक किन्तु व्यापक महाशक्तिशाली मिशन है जिसका केन्द्र रोम है। रोम का महापुरोहित संसार भर के कैथालीक मिशनों का अधिष्ठाता है। संसार के प्रायः सभी देशों में इसका जाल बिछा हुआ है। संसार में १९५१ की जनसंख्या के अनुसार ईसाइयों की कुल संख्या ७० करोड़ के लगभग है जिनमें कैथालिकों की जन गणना उन्हीं के पत्रों के अनुसार ४२३०००००० है।

भारत में ईसाइयों की कुल जन संख्या ८० लाख के लगभग है जिनमें कैथालीक ४६०२९४६ हैं। इन ४६ लाख कथालिकों में से ३५ लाख दक्षिण भारत में हैं और ११ लाख उत्तरीय भारत व मध्य भारत में हैं। इन्होंने भारत को १४ महा धर्म प्रान्तों में विभक्त किया हुआ है। जिनमें से ८ महाप्रान्त तो केवल दक्षिण भारत में हैं। १४ प्रान्तों के नाम व कैथालीक जनसंख्या निम्न प्रकार है :—

१ मद्रास	१९२२७२
२ बंगलौर	३४०२४३
३ हैदराबाद	२२४०३५
४ मदुरा	४१०८९९
५ पांडीचेरी	३३३५३४
६ त्रीरापल्ली	८४२६१८
७ एलाकुलम	१०६३०५७
८ त्रिवेन्द्रम	७९७८०
९ आगरा (उत्तर प्रदेश)	२६१२३१
१० देहली (पंजाब,पेप्सु,हिमाचल)	१२३६९
११ बम्बई (बम्बई+गुजरात सौराष्ट्र)	३६६१०३
१२ कलकत्ता (बंगाल+आसाम)	२४३५९३
१३ नागपुर (मध्यभारत,मध्यप्रदेश)	११२६९३
१४ रांची (बिहार उड़ीसा) राजस्थान	३१५०७२

कैथालीक मिशनों के पास जहां बड़े २ गिरजाघर व आलयादें हैं वहां इनके समाचार-पत्र भी बहुत हैं।

भारत में प्रकाशित होने वाले इनके कुछ पत्रों के नाम निम्न हैं:—

१ संजीवन	(हिन्दी)	पटना
२ हैरेल्ड	(अंग्रेजी)	कलकत्ता
३ ऐग्जमिन्न	,,	बम्बई
४ टिंसर्च	,,	मद्रास
५ न्यू लीडर	,,	मद्रास
६ कोनवेहिन्द	रोमन	लखनऊ

उत्तरप्रदेश में ईसाइयों की कुल संख्या के आंकड़े निम्न प्रकार हैं:—

सन् १८८१—४०००० सन् १९३१—२०८०००

सन् १९४१—१९३००० सन् १९५१—१२४०००

इनमें एंग्लो इण्डियन तथा विदेशी जन भी सम्मिलित हैं। सन् १९४१ में इन अधगोरे विदेशियों की संख्या १३९३० थी किन्तु १९५१ में केवल ६०६३ रह गई। यह संख्या विदेशी सेनाओं के भारत से चले जाने के कारण घटी है। ईसाइयों की इस प्रदेश में जन संख्या की कमी का कारण धर्म परिवर्तन नहीं है अपितु विदेशी शासन की समाप्ति, जमींदारी का नाश तथा हिन्दू हरिजन को दिये गये संरक्षण एवं सुविधायें हैं। सितम्बर १९५० के राष्ट्रपति के अध्यादेश ने मिशनरियों के कुछ प्रलोभनों को भी नष्ट कर दिया है। अब हरिजनों में यह भाव द्रुतगति से घर करता जा रहा है कि उनकी सन्तान के ईसाई बने रहने के कारण उनकी राजनीतिक एवं शैक्षणिक प्रगतियां रुक गई हैं। सरकारी नौकरियों में ब्रिटिश काल में ईसाइयों को उनकी जनसंख्या के अनुपात से १० गुणा अधिक स्थान दिये गये हैं अब वह अन्याय

भी अधिक समय तक सहन नहीं किया जा सकेगा। आज नहीं तो कल सरकार विवश होकर अनुपात को दृष्टि में रख कर इनके लिये सरकारी नौकरियों के दरवाजे एक निश्चित समय तक बन्द करने पड़ेंगे।

इस समय इनका विशेष प्रचार क्षेत्र पहाड़ी जातियों तथा वन्यजातियों के निवास क्षेत्र हैं। हरिजनों में ईसाई केवल वहां ही सफल हो रहे हैं जहां छूत-छात, ऊंच नीच, जात-पांत एवं रूढ़िवाद अभी तक पराकाष्ठा को नहीं पहुँचा हुआ है तथा सवर्णों के अन्याय चालू हैं। अस्पृश्यता निरोधक कानून तथा ग्राम-उद्योग योजना के दृढ़ता के साथ प्रयुक्त होने की दशा में इन क्षेत्रों में भी ईसाइयों का जाल छिन्न हो जावेगा।

पार्वत्य तथा वन्य जातियों में जहां मिशनरियों के आक्रमण अभी चल रहे हैं और विदेशी जन धन के सहारे पूरे पूरे वेग के साथ चल रहे हैं हमें डट कर मोर्चा लेना होगा तथा जिन क्षेत्रों में हरिजन आदि को ब्रिटिश काल में ईसाई बनाया हुआ है वहां शुद्धि आन्दोलन को जिले २ में संगठन बना कर योजना बद्ध रूप में चालू करना होगा। हमें प्रत्येक जिले में ईसाई मिशनों, उनके केन्द्रों तथा संस्थाओं का तुरन्त परिचय प्राप्त करना चाहिए। सबसे बार उन ग्रामों की पड़ताल करना चाहिए जो कभी ईसाई बने हैं और वहां के सवर्णों में प्रचार कर शुद्धि का चक्र घुमा देना चाहिये।

भारत में अमेरिकन पादरियों का षड्यंत्र

[ले०-श्री पं० रुद्रदत्तसिंह प्रचारक आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश]

कर्म करते जाओ—इसी अमर वाणी की पुकार सुनकर राष्ट्र के असंख्य त्यागी तपस्वी कर्मवीरों ने जीवन में बिना विश्राम लिए सारे आनेवाले संकटों में संघर्ष करते करते अपने जीवन का उत्सर्ग कर दिया। यवन साम्राज्य का अन्त होते ही भारत में ईस्ट इंडिया कम्पनी स्थापित हुयी। अंग्रेजों ने दो साधनों से काम लिया : प्रथम उन्होंने पादरियों की सेवाएं लीं। उन्हें सब प्रकार की मदद दी और उन्हें भारतीयों का धर्म परिवर्तन के लिए उत्साहित किया। द्वितीय रायफलों से सुसज्जित गोरे सैनिकों की सहायता। भारत में अपने साम्राज्य के पांव जमाने के लिए पादरियों द्वारा धर्म का ढोंग रचकर भोली-भाली जनता पर अपना जादू चलाया। तत्पश्चात् व्यापारी का स्वांग रचकर भारत की धर्मप्रिय जनता पर गोरे सैनिकों का आतंक जमाकर भारतीय साम्राज्य की सत्ता अपने हाथ में लेली परन्तु दो सौ वर्ष के राज्यकाल में इतना धर्म-परिवर्तन न कर सके जितना आज सफलतापूर्वक कर रहे हैं। पूर्वकालीन उनकी असफलताओं के कुछ आंकड़े यहां दिए जाते हैं। पाठकगण कृपया विचार करें :—

(१) सन् १८११ में चर्च मिशन सोसायटी के द्वारा जो रिपोर्ट प्रकाशित हुई उसके अनुसार ११११०००० रुपया व्यय करके केवल १८२१ व्यक्ति ईसाई बनाये जा सके।

(२) पश्चात् सन् १९०३ में मद्रास के लार्ड बिशप ने लिखा है कि मिशन सोसायटी ने भारत में चार वर्ष तक निरंतर ४८८१ प्रचारकों द्वारा प्रचार कराया तथा १२५१००० रुपया व्यय किया परन्तु केवल २२०० व्यक्ति ईसाई बने। वे भी पिछड़ी जातियों के लोग थे।

(३) बंगाल में जहां लोग अधिक अंग्रेजी सभ्यता का अनुकरण करते थे और सर्वप्रथम अंग्रेजी शिक्षालय में रोज बायबिल की प्रार्थना होती थी ४७३ पादरियों द्वारा लगातार प्रचार तथा २२५००० रुपया व्यय करने के पश्चात् केवल १०१ व्यक्ति ईसाई बन सके।

(४) मद्रास की मेथोडिस्ट सोसायटी ने २७४ पादरियों को रखकर प्रचार कराया तथा ३११८००० रुपया व्यय करने के पश्चात् केवल १४ व्यक्तियों को ईसाई बना सके।

उपर्युक्त घटनाएं उस समय की हैं जब भारत में अंग्रेजी राज्य था और भारत में विदेशी मिशनरियों को कार्य करने की हर प्रकार की राज्य में सहायता और सुविधा प्रदान की जाती थी।

समय बदला, भारत का भाग्य पलटा। लाखों

माताओं के लालों ने अपने जीवन की बाजी लगाकर १५ अगस्त सन् १९४७ को भारत मां को गुलामी की शृंखलाओं से मुक्त कराया। उस समय अनेक विदेशी पादरी अंग्रेजी राज्य का अन्त होते देख भारत से मिशनों की जायदाद इत्यादि बेचकर स्वदेश चले गये। परन्तु सन् १९४८ में एक राजनीतिपटु पादरी अमरीका से चलकर बम्बई आया और उसने सारे भारतवर्ष का भ्रमण करके आन्तरिक स्थिति का अध्ययन किया और पुनः स्वदेश लौटकर विभिन्न देशों के बड़े बड़े पादरियों से विचार विमर्श करके पुनः भारत की पवित्र भूमि पर सदलबल सेवा और धर्मप्रचार का ढोंग रचकर भारत में यत्रतत्र फैल गये।

अभी कुछ दिन पूर्व मध्यप्रदेश का भ्रमण करते हुए एक ईसाई मिशनरी से जो अमेरिका की थी कुछ चर्चा हुई उससे जो जानकारी प्राप्त हुई उसके अनुसार अंग्रेजी राज्यकाल में हमारे देश में विभिन्न देशों के मिलाकर केवल ६२५० पादरी धर्म प्रचार का कार्य करते थे परन्तु आज उनकी संख्या बढ़ कर ६५००० होगयी है और ये लोग उत्तर व दक्षिण भारत में अधिक फैले हुए हैं।

किन्तु मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ विभाग में और उड़ीसा प्रान्त के तीन जिलों में इनका कार्य बड़े वेग से चल रहा है। प्रमाणस्वरूप सुन्दरगढ़ (उत्कल) जिले में जो इनके मुख्य केन्द्र हैं उनकी नामावली निम्न प्रकार है :—हमीदपुर, बीरमित्रपुर, हाथीबाड़ी, कुलंगा, राजगांगपुर, केसरमाल, सबडेगा, बड़ागांव इत्यादि मुख्य गढ़ हैं जहां हजारों की संख्या में भोली-भाली हिन्दू जनता का धर्म परिवर्तन कराया जाता है।

सुन्दरगढ़ जिले में आदिवासियों की संख्या ३०००००० है जिनमें अब तक २ लाख का धर्म परिवर्तन कराया जा चुका है। इसी प्रकार दक्षिण भारत में मैसूर, त्रावणकोर, कोचीन, मद्रास से लेकर बंगाल तक और उत्तर भारत में आसाम, भूटान नैपाल और देहरादून की पहाड़ियों तक इनका जाल बिछा हुआ है। इसके अतिरिक्त इनके कितने साधु जो रंगे कपड़े पहनकर भोलीभाली जनता तथा साधारण पढ़े लिखे लोगों को भी जाल में फँसाकर ईसाई बना रहे हैं। भारत के कोने-कोने में प्रतिदिन बड़े वेग से धर्म परि-वर्तन का कार्य चल रहा है। भगवान राम और श्रीकृष्ण की अनुयायी प्रजा विधर्मी बनती जा रही है। ऐसे संकटपूर्ण स्थिति का सामना करने के लिए "आर्य सार्वदेशिक सभा देहली" द्वारा सारे भारत में ईसाई विरोधी शुद्धि आन्दोलन चलाया जा रहा है।

श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी सरस्वती उत्कल प्रदेश में कुलंगा आर्य समाज को केन्द्र बनाकर इस दिशा में ठोस कार्य कर रहे हैं।

卐卐卐 गोरक्षा आन्दोलन 卐卐卐

उत्तरप्रदेश की गोसंवर्द्धन समिति गोवध बन्दी के पक्ष में

(हिन्दुस्तान के संवाददाता द्वारा)

उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा बिठाई गई गोसंवर्द्धन समिति के अध्यक्ष डा० सीताराम ने कृष्ण गोपालन शिल्प शिक्षालय (कलकत्ता) के श्री एस० के मुखर्जी के एक पत्र के उत्तर में कहा है कि भारत में प्राचीन-काल से ही गाय को महत्व दिया जाता रहा है, क्योंकि वह हमें दूध तथा दूध से बनने वाले पदार्थ देती है, हमारी कृषि के लिये बैल देती है, भूमि के बहुमूल्य भोजन गोबर तथा गोमूत्र के रूप में देती है, यहां तक कि मृत्यु के उपरान्त भी अपने चर्म तथा अस्थियों से सेवा करती है। इस बात में हमारे देश में गाय को पश्चिम की अपेक्षा अधिक सम्मान दिया जाता है। ऐसी अवस्था में यदि पश्चिम के देश गोवंश की उन्नति कर सके हैं तथा उसके दूध की मात्रा में वृद्धि कर सके है तो भारत के लोगों और यहां के देश-भक्त तथा प्रगतिशील नेताओं के नेतृत्व में चलने वाली लोकप्रिय तथा जन-कल्याणकारी सरकार के लिये तो गाय की राष्ट्रीय उपयोगिता को

बढ़ाने के साधन तथा इच्छा दोनों ही उपलब्ध होने चाहिएं।

उन्होंने समिति के निर्माण का इतिहास बताते हुए लिखा है कि दो गैरसरकारी सदस्यों ने उत्तर-प्रदेश की विधान सभा में सम्पूर्ण गोवधबन्दी विषयक प्रस्ताव रखे थे। मुख्य मन्त्री द्वारा यह आश्वासन दिये जाने पर कि इस प्रश्न पर विचार करने के लिये एक समिति बिठाई जायेगी, प्रस्ताव वापस ले लिये गये थे। १९५३ के आरम्भ में यह समिति बिठाई गई, जिसमें २१ सदस्य थे। इनमें से एक सदस्य ने एक बैठक में सम्मिलित होने के बाद त्यागपत्र दे दिया, क्योंकि उन्हें केन्द्रीय सरकार में नौकरी मिल गई थी। शेष २० सदस्यों में तीन मुस्लिम, एक ईसाई; अनेक कांग्रेसी समाजवादी, हिन्दू सभाई, सर्वोदय समाजी, एक शास्त्री पंडित तथा एक संन्यासी थे। इनमें अनेक उत्तर प्रदेश विधान परिषद् तथा संसद के सदस्य थे। इस समिति की चार उपसमितियां बनाई गई, जिन्होंने राज्य भर में घूम कर सम्मतियां लीं। इस समिति की सिफारिशें सर्वसम्मति से ७ अप्रैल १९५४ को तैयार हो गई थीं तथा एक भी सदस्य ने उसमें कोई आपत्ति अंकित नहीं कराई थी।

इनमें से जो सिफारिशें सब से आवश्यक थीं उनको आरम्भ में मुख्य मन्त्री तथा कृषि मन्त्री के सम्मुख प्रस्तुत कर दिया गया। रिपोर्ट अपने अन्तिम रूप में ७ सितम्बर को सरकार के सामने प्रस्तुत कर दी गई। इसमें लगभग १०० सिफारिशें हैं।

डा० सीताराम जी का कहना है कि इस समिति ने गाय के प्रश्न को राजनीति, साम्प्रदायिकता अथवा धार्मिक प्रश्न से ऊपर रखा है। इसका एक प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि सभी सदस्यों ने एकमत होकर समिति की रिपोर्ट पर हस्ताक्षर किये। समिति की अनेक सिफारिशों में से प्रमुख ये हैं:—पशुधन की उन्नति पर बल, गिरी हुई नस्ल की गायों को बन्ध्या कर देना, उत्तम जाति के बिजारों का प्रयोग तथा रद्दी बिजारों को बधिया करना, गोसदन खोलने पर बल, बूढ़ी गायों तथा उन गायों से जो दूध न दे रही हों, उनका काम लेने को प्रोत्साहित करना, पशुओं के चारे की व्यवस्था, वनस्पति घी की बिक्री पर प्रतिबन्ध, दूध के चूर्ण के आयात पर आयातकर में वृद्धि, भैंसों की अपेक्षा गायों की ओर अधिक ध्यान दिया जाने पर बल, खुले फिरने वाले पशुओं की व्यवस्था, गोबर तथा गोमूत्र का खाद के रूप में प्रयोग, शहरी क्षेत्रों में सहकारी समितियों द्वारा गो दुग्ध की बिक्री की व्यवस्था, पशु पैंठों पर नियन्त्रण की आवश्यकता गोवंश की नस्ल में उन्नति करने के वैज्ञानिक साधनों का प्रयोग तथा पशुओं के रोगों की रोकथाम के लिए कर्मचारी वर्ग की वृद्धि आदि।

डा० सीताराम ने बताया कि गोवध-निषेध के सम्बन्ध में समिति का निश्चित मत यह था कि कानून द्वारा सम्पूर्ण गोवध बन्दी हो तथा स्थानीय निकायों में बदलती हुई इच्छाओं की कृपा पर इस प्रश्न को न छोड़ा जाय। समिति का खयाल था कि जब तक सम्पूर्ण गोवधबन्दी न होगी तब तक गोवंश की नस्ल की वास्तविक उन्नति सम्भव नहीं हो सकती। इस समय की परिस्थितियों में उत्तम नस्ल की गाय तथा बैल जीवित की अपेक्षा मृत अवस्था में अधिक मूल्यवान् हैं। यद्यपि इस प्रश्न में अनेक कठिनाइयां हैं किन्तु जनता तथा सरकार का परस्पर सहयोग हो तो गाय को फिर भारत की कृषि व्यवस्था तथा कृषि जन्य आर्थिक व्यवस्था का केन्द्र बिन्दु बनाया जा सकता है।

—हिन्दुस्तान

हरयाना प्रान्त में सार्वदेशिक सभा के उपदेशक श्री पोहकर मल जी द्वारा गोरक्षा आन्दोलन कार्य मार्च सन् १९५४ से नवम्बर १९५४ तक

लगभग ६०० रु० के १-१ रुपये वाले टिकट बेचे गए।

लगभग ४००० प्रतिज्ञा पत्र भरवाये गये।

२० स्थानों में नये आर्य समाज स्थापित किये गये।

१०० स्थानों में गो रक्षिणी सभायें स्थापित की गई।

२० गोरक्षा सम्मेलन कराये गये।

मई मास में १०० ईसाइयों को शुद्ध किया गया।

लगभग १०० मनुष्यों को यज्ञोपवीत दिये गये।

२०० गोकरुणा निधि बेची गई।

लगभग १०० ग्रामों में पंचायतें करवाकर क्रियात्मक रूप में हरएक घरमें गायें रखने और अविश्वासी आदमी के हाथ गौएं न बेचने और चमड़े की वस्तुओं का बर्ताव कम करने का नियम बंधवाया।

लगभग २०० भाषण दिये गये जिसको लगभग १०००० नर नारियों ने सुना।

लगभग १०० ग्रामों की ग्राम पंचायतों से श्री राष्ट्रपति, प्रधान मन्त्री भारत सरकार की सेवा में भारत से गो हत्या बन्द करने के लिये प्रस्ताव भिजवाये गये।

---

* चयनिका *

ईश्वर और अनीश्वरवाद

श्रीयुत पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय ने 'आर्य-मित्र' में प्रकाशित 'अनीश्वरवाद विवेचन' शीर्षक लेख में अनीश्वरवाद की समीक्षा की है। संसार में सर्वोच्च चेतन सत्ता है इस सत्य से अनीश्वरवादी भी इन्कार नहीं कर सकता क्योंकि "मनुष्य शक्तिशाली होते हुए भी सीमित शक्ति वाला है और उस शक्ति से अधिक प्रबल भी कोई शक्ति है।" हक्सले आदि वैज्ञानिकों और एंजिल्स आदि कम्यूनिस्टों ने जो प्रसिद्ध अनीश्वरवादी हैं इस प्रकार की किसी सत्ता को माना है। वे सृष्टि नियम (Law of Nature) की महत्ता से इन्कार नहीं करते।

'ईश्वरवाद' की उत्पत्ति से ही अनीश्वरवाद की उत्पत्ति हुई है। यदि ईश्वर को मानने वाले ईश्वर के काल्पनिक स्वरूपों को जन्म न देते और इतना ही माना जाता कि सृष्टि के भीतर कोई ऐसी सत्ता है जो सभी मनुष्यों की शक्ति से प्रबल है और उसे परमेश्वर कहना चाहिए तो अनीश्वरवाद की आवश्यकता न पड़ती। ईश्वर के काल्पनिक स्वरूपों की सृजना अनीश्वरवाद के लिए किस प्रकार उत्तरदाता है इस सम्बन्ध में पं० जी प्रकाश डालते हुए लिखते हैं:—

"यदि महादेव परमेश्वर को पार्वती का पति और डमरू बजाने वाला आदि २ मान लिया तो शंका हो सकती है। इसी प्रकार यदि ईश्वर को इकलौते बेटे ईसा का पिता माना जाय तो एक बुद्धिमान के हृदय में अनेक शंकाएं उत्पन्न हो सकती हैं। ऐसी कल्पनाएं केवल कविता तक ही सीमित नहीं हैं इन्होंने अनेक मत मतान्तरो के अगुआओं को जन्म दिया है और मनुष्य जाति की अधिक संख्या दिन रात घंटा हिलाने, मन्दिर बनवाने और नबियों, मुजाविरो, पुरोहितो और मुल्लाओं की अनेक प्रकार की चालाकियों में फंसी हुई है तो ईश्वर विश्वास से घृणा और अनीश्वरवाद के लिए प्रेरणा हो सकती है। और ईश्वर विश्वासके नैसर्गिक और सदा सत्य होते हुए भी अनीश्वरवाद के लिए उपयुक्त क्षेत्र प्राप्त हो ही सकता है। यही कारण है कि हर ईश्वरवाद के विरुद्ध या तो अनीश्वरवाद उत्पन्न होता रहा या दूसरी प्रकार का ईश्वरवाद नए २ मतों के रूप में प्रकट होता रहा। यूरोप का एक नास्तिक जब ईश्वर के नाम को सुनता है तो उसके साथ वे समस्त संस्कार जाग उठते हैं जिनका बाइबिल की पुरानी या नई पुस्तकों में वर्णन है। इसी प्रकार भारत में शिव या विष्णु का नाम सुनते ही पौराणिक कहानियां याद आ जाती हैं और अनीश्वरवादी उनके खण्डन में संलग्न हो जाता है।"

अनीश्वरवाद कब तक रहेगा? इस प्रश्न के

उत्तर में श्री उपाध्याय जी लिखते हैं "अनीश्वरवाद उस समय तक रहेगा जब ईश्वरवाद रोग है और लोग उससे पीड़ित हैं। महर्षि दयानन्द इसीलिए मत मतान्तरों को मतवाला कहते हैं। इस नशे को दूर करो तो अनीश्वरवाद के लिए स्थान न रहेगा। ऋषि ने आर्यसमाज के पहले दो नियमों में जो ईश्वर के गुण, कर्म और स्वभावों का निरूपण किया है उसको यदि प्रचलित मतों की गाथाओं और भ्रान्त कल्पनाओं के वातावरण से दूर कर देखा जाय तो अनीश्वरवादियों को अधिक कहने का अवसर नहीं मिल सकता।"

धर्म और राजनीति

पाश्चात्य जगत् राजनीति की एक सर्वथा पृथक् सत्ता स्वीकार करता है जबकि वैदिक धर्म में राजनीति धर्म का ही एक विभाग माना जाता है। राजनीति का वास्तविक कार्य मनुष्य को एक सामाजिक प्राणी के नाते धर्म मार्ग पर आरूढ़ रहने में सहायता करना है। धर्म का कार्य मनुष्य को अपना वास्तविक स्वरूप पहचानने और परमात्म दर्शन में समर्थ बनाना है। आज राजनीति कुटिल नीति का और धर्म मत मतान्तर का रूप लिए हुए है। इसलिए यदि इनके पृथक् पृथक् रहने की मांग की जाय तो उचित ही है। इस सम्बन्ध में श्रीमती सावित्रीदेवी जी एम० ए० प्रकाश डालते हुए 'आर्य मित्र' में लिखती हैं —

"जब राजनीति और धर्म दोनों ने ही वास्तविक स्वरूप को छोड़ दिया तो इनको पृथक् हो ही जाना चाहिए। जब राजनैतिक ने राजधर्म को छोड़कर कुटिल नीति का रूप ग्रहण कर लिया तो धर्म ने भी दश विध लक्षण वर्णित स्वरूप छोड़कर सम्प्रदायवाद का रूप धारण कर लिया तो उनको पृथक् हो ही जाना चाहिए। हम लोगों ने राजनीति और धर्म जैसे अन्योन्याश्रित शब्दों के सच्चे स्वरूप को भुलाकर आकाश पाताल का अन्तर कर दिया।"

राजनीति और धर्म के पारस्परिक सम्बन्ध का निरूपण करती हुई श्रीमती सावित्री देवी जी लिखती हैं —"राजनीति यदि शरीर है तो धर्म उसका प्राण है। धर्म के बिना राजनीति आत्मशक्ति रहित शरीर की भांति निष्प्राण है।" भारत के प्राचीन आदर्श राज्यों ने इस सत्य को भली भांति प्रतिष्ठित किया। इसीलिए भारत जगद्गुरु कहलाता था?

धर्म और राजनीति के मौलिक स्वरूप के सम्बन्ध में व्याप्त भ्रान्तियों का हम भारतीयों पर यह दुष्प्रभाव पड़ा और पड़ रहा है कि 'हमारी सारी सफलताएं और योजनाएं व्यर्थ रहीं और भारतीय शक्ति दिनों-दिन क्षीण होती गई।

विदुषी लेखिका का यह परामर्श ठीक ही है कि "विद्वानों को धर्म और राजनीति विषयक भ्रम को समझकर इसके निराकरण का प्रयास करना चाहिए। और पाश्चात्य प्रस्ताव से प्रादुर्भूत अज्ञान और अविवेक से दूर रह कर प्रकाश की कामना करनी चाहिए।" आधुनिक युग में दयानन्द ने राजनीति को धर्म से एक क्षण के लिए भी अलग नहीं देखा और गांधी ने इस उच्चादर्श को न केवल माना ही अपितु इस आदर्श के सहारे भारत को आसुरी राजनीति के बन्धनों से मुक्त कर दिखाया।

क्या पाकिस्तान धर्म निपेरक्ष राज्य होना चाहिये?

जनरल इस्कन्दर मिर्जा के इस वक्तव्य का कि धर्म और राजनीति पृथक् २ रखे जाने चाहिए। स्वागत करते हुए लाहौर के साप्ताहिक पत्र 'स्टार' ने 'मुस्लिम स्टेट' के समस्त सुझावों का खण्डन और पाकिस्तान के लिए धर्म निरपेक्ष राज्य का समर्थन किया है।

इस पत्र में पाकिस्तान सरकार को परामर्श दिया है कि वह 'मुल्लाओं, मौलवियों, मौलानाओं और उलमाओं का दमन करे जो उस वर्ग के प्रतिनिधि हैं जिसके सदस्य (अपवाद सम्भव है) इतिहास के वर्णनों के अनुसार अत्यन्त घृणास्पद दरबारी और अवसरवादी रह चुके हैं और जो षडयन्त्रों और कुचक्रों पर जीवित रहते थे।

उलमाओं के इस दावे का खण्डन करते हुए कि एकमात्र वे ही खुदा के नाम में और इस्लाम की ओर से बोलने के अधिकारी हैं स्पष्ट लिखता है "क्या यह ईश्वरप्रदत्त अधिकार के मृतप्राय: सिद्धान्त का खेदजनक पुन: प्रतिष्ठान नहीं है? क्या यह आधुनिक काल में उस संगठन के निर्माण की मांग की शरारत पूर्ण आवाज नहीं है जो न तो मतदाता के प्रति उत्तरदाता हो और न प्रजा की इच्छा को पूर्ण करने वाला हो? क्या यह जनतन्त्र और शासन के वैधानिक गठन की अस्वीकृति नहीं है? क्या यह प्रजा की उच्चता और उसकी प्रभुता को चुनौती नहीं है?"

पत्र में आगे कहा गया है कि यदि पाकिस्तान इन लोगों के शासनाधीन हुआ जो काल्पनिक रूप से इस्लाम के विषय में प्रामाणिक व्यवस्था देने का अधिकार रखते हैं तो निश्चय ही 'हमारा एकतन्त्र शासन के साथ अन्त हो जायगा जो एक प्रकार का धार्मिक मतान्धता का प्रभुत्व होगा जिसके कड़ुवे फलों को हम भूतकाल में चख चुके हैं।

उलमा लोग कुछ अधिकारों और विशेषाधिकारों की मांग करते थे परन्तु उनकी मांगों के औचित्य का निर्णय करने का कोई प्रामाणिक आधार न था। पत्र में प्रश्न किया गया है कि किसी व्यक्ति में इस्लाम के सम्बन्ध में अधिकार पूर्वक बोलने के लिए 'शैक्षणिक सामाजिक, नैतिक और धार्मिक क्या २ योग्यताएं होनी चाहिएं'?

'यदि इस्लाम पाकिस्तान के सर्व साधारण मुस्लिम प्रजा का सम्मिलित प्रकाश स्रोत है और मुल्लाओं मौलवियों और उलमाओं की व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं है तो हमारे विधान शास्त्रियों और संविधान निर्माताओं को उस वर्ग को शासनाधिपति बनाकर जिसका न तो उस पर अधिकार है और न कभी होगा, देश वासियों के साथ धोखा न करना चाहिये।

१९-११ ५१ के एक दूसरे सम्पादकीय अग्रलेख में स्टार लिखता है "क्या मुस्लिम राज्य सम्भव है?" इस प्रश्न का हमारा निश्चित उत्तर 'नहीं' है।

इस लेख में कहा गया है कि 'मुस्लिम राज्य' की भूल ने ४ वर्ष के बाद भी देश को संविधान बनाने से रोक रखा है। इस भूल ने हमारे देश को ऐसे देश का रूप देकर "जहां धर्मान्धता खाने के रूप में खाई जाती हो, जहां धार्मिक कट्टरता का धर्म संहिता के रूप में प्रचार किया जाता हो, जहां हठधर्मी का कला के रूप में प्रचलन हो, जहां संसार के लोगों की दृष्टि में पाकिस्तान का वर्चस्व कम कर दिया है। यदि बाहर वाले इस प्रकार की सम्मति देवें तो इसमें उनका दोष नहीं है।

इस पत्र की सम्मति है कि "ऐसे कामों में जो विशाल राष्ट्रीय हितों की दृष्टि से नगण्य देख पड़ते हैं। हमारे मूल्यवान समय और शक्ति का, हमारे सुधारात्मक उत्साह का और हमारी सृजनात्मक प्रतिभा का नष्ट किया जाना दण्डयोग्य पागलपन था" मुस्लिम राज्य के पक्ष पोषकों का यह विश्वास था कि मुसलमानो को पीटने के लिए कोई भी इस्लामी लाठी अच्छी है परन्तु वह लाठी डंडा सिद्ध हुई। समय आ गया है कि हम उस वर्ग का पर्दा फाश करें जिसने हमारी उन्नति को रोका और जिसने उस सड़क पर हमारी गति को रोका है जिस पर हम आज संसार के आधुनिक एवं सभ्य राष्ट्रों को चलता हुआ देखते हैं।"

सिनेमा-फिल्मों पर प्रतिबन्ध

राज्यसभा ने बिना किसी विरोध के इस आशय का प्रस्ताव पास कर दिया है कि सरकार, चाहे कानून बनाकर और चाहे अन्य प्रकार, ऐसे स्वदेशी और विदेशी सिनेमा फिल्मों पर आवश्यक प्रतिबन्ध लगाए जिनके प्रदर्शन से जनता के मन पर, आचार की दृष्टि से, प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

यह प्रस्ताव सभा में श्रीमती लीलावती मुन्शी ने उपस्थित किया था। और यद्यपि इस पर विवाद के प्रसंग में विविध सदस्यों ने विविध विचार प्रकट किये

थे, परन्तु इनका विरोध, एक श्री पृथ्वीराज कपूर को छोड़कर प्रायः किसी भी सदस्य ने नहीं किया था। सरकार की ओर से श्री बी० वी० केसकर ने इस प्रस्ताव के सिद्धान्त से एक प्रकार यह कहकर सहमति ही प्रकट की थी कि यद्यपि भारतीय संविधान के अनुसार सरकार फिल्म निर्माताओं की स्वतन्त्रता का अपहरण नहीं कर सकती, तथापि भारत सरकार का आदर्श लोककल्याणकारी राज्य होने के कारण, वह ऐसे फिल्मों की ओर से आंख भी नहीं मींच सकती जिनका प्रदर्शन जनता के लिये इष्ट न हो।

सूचनामंत्री श्री केसकर और राज्य सभा के अन्य सदस्यों के उक्त विचारों से असहमति प्रायः कोई भी प्रकट नहीं कर सकता। परन्तु श्री पृथ्वीराज कपूर और श्री हरिश्चन्द्र माथुर आदि कुछ सदस्यों ने यह कह कर फिल्म व्यवसाय की वकालत करने का यत्न किया था कि जनता के चारित्रिक पतन के लिए उत्तरदायी केवल सिनेमा फिल्म ही नहीं हैं, अन्य सामाजिक परिस्थितियां भी उसके लिए उत्तरदायी हैं।

वस्तुतः इन सज्जनोंका यह तर्क अति हेत्वाभासपूर्ण है। इनके तर्क का अर्थ दूसरे शब्दों में यह होता है कि क्योंकि किसी बुराई के कारण अनेक है, इसलिए जिस कारण की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट हो गया है उसका भी निराकरण नहीं करना चाहिए।

अनिष्ट सिनेमा फिल्मों का जनता के, विशेषतः बालक और युवक जनता के मन और चरित्र पर खराब प्रभाव पड़ने की समस्या हमारे देश में ही नहीं है, अमेरिका आदि उन देशों में भी है जो अधिक सुशिक्षित और सम्पन्न माने जाते हैं। वहां भी शिक्षा शास्त्रियों और अन्य नेताओं द्वारा खराब फिल्मों पर प्रतिबन्ध लगाने की आवाज बहुत समय से उठाई जा रही है, परन्तु सम्पन्न फिल्म व्यवसायियों का प्रभाव अत्यधिक होने के कारण उनकी पुकार का फल अभी तक कुछ नहीं निकलने पाया।

अमेरिका आदि लोकतन्त्री देशों के विपरीत, रूस और चीन आदि जिन देशों का शासन ऊपरी नेताओं के आदेश से चलता है, उनमें सिनेमा फिल्म का उपयोग इस प्रकार किया जा रहा है कि पदारूढ़ राजनीतिक पार्टी को नापसन्द किसी बात का प्रदर्शन फिल्मों द्वारा हो ही नहीं सकता। हमारे देश ने जनतंत्र के मार्ग पर चलना अभी आरम्भ ही किया है। इसलिये हमको अमेरिका और रूस, दोनों के चरम मार्गों से बचकर, औचित्य और संयम के ही मार्ग पर चलना चाहिए।

—नवभारत टाइम्स

मादक द्रव्यों का निरोध

योजना प्रायोग ने मादक पदार्थों के निषेध के बारे में राज्य सरकारों से कुछ जानकारी संग्रह की है उनसे पूछा गया था कि मद्य निषेध का अब तक क्या नतीजा रहा है और भविष्य में वे क्या कदम उठाने का विचार करती हैं। बम्बई, मद्रास और सौराष्ट्र केवल ये तीन राज्य ऐसे हैं जिन्होंने पूर्ण मद्य निषेध किया हुआ है और उस पर दृढ़तापूर्वक अमल करने का इरादा रखती हैं। कांग्रेस के आदर्श और संविधान के निर्देश का पालन करने के लिये इन राज्यों की सरकारों की जितनी सराहना की जाय, उतनी ही थोड़ी होगी। जो काम ये तीन राज्य कर सकते हैं, वह अन्य राज्यों के लिए असम्भव होगा, यह मानने को जी नहीं चाहता। असलियत यह है कि अन्य राज्य सरकारों की मद्य निषेध के प्रति उतनी गहरी निष्ठा नहीं है। किसी को विदेशी यात्रियों की सुविधा की चिंता है तो किसी को अपनी आय कम हो जाने का भय सताता है। कुछ सरकारें कहती हैं हम धीरे धीरे मद्य निषेध की दिशा में कदम बढ़ायेंगी तो कुछ मादक द्रव्यों की बिक्री को मर्यादित करके अपने अन्तःकरण को समाधान देने की कोशिश करती हैं। किसी को यह शिकायत है कि हमारे पड़ौसी राज्यों में मद्यनिषेध नहीं है तो हम अपने यहां कैसे मद्य निषेध कर सकते हैं? किसी का कहना है कि जनता का उचित सहयोग नहीं मिलता। किसी काम को न करने के लिए हजार बहाने सोचे जा सकते हैं। मद्य निषेध के आदर्श से कोई इन्कार नहीं कर सकता, किन्तु उसके प्रति शाब्दिक निष्ठा प्रगट करके काम चला लेने की प्रवृत्ति मालूम देती है। इस पर केवल खेद ही प्रकट किया जा सकता है।

—हिंदुस्तान

❀ हमारी शिक्षण संस्थाएं ❀

गुरुकुल कांगड़ी समाचार

गत २१ नवम्बर को फ्रैंच दूतावास के सांस्कृतिक विषयों के अधिकारी श्री ए० पैद्रो महोदय अपनी पत्नि सहित विशेष रूप से गुरुकुल का अवलोकन करने के लिये पधारे। आपने पूरा एक दिन गुरुकुल में व्यतीत किया और बड़ी रुचि के साथ गुरुकुल की कार्यप्रवृत्तियों का अवलोकन किया। छोटे ब्रह्मचारियों का संस्कृत श्लोक पाठ करना आपको बहुत पसन्द आया। पुरातत्व संग्रहालय, पुस्तकालय तथा विद्यालय के प्राथमिक विभाग को आपने विशेष दिलचस्पी से देखा। अपराह्न में आपके स्वागत के लिये श्री पं० सुखदेव जी के सभापतित्व में कुलवासियों की एक सभा समवेत हुई। पहले श्री प्रो० नन्दलाल जी खन्ना ने मान्य अतिथि महोदय को गुरुकुल के प्रयोजन और इतिहास से परिचित किया। तत्पश्चात् गुरुकुल के विद्यालय तथा महाविद्यालय विभाग के छात्रों ने दो सामयिक राजनीति के विषयों पर संस्कृत भाषा में वाद विवाद किया। तदनन्तर मान्य अभ्यागत महोदय ने अपने भाषण में बताया कि मैं भी संस्कृत भाषा तथा भारतीय विद्याओं का एक विद्यार्थी हूं, परन्तु अपने जीवन में संस्कृत भाषा का इस प्रकार का सहज वाग् व्यवहार आज पहली बार निहार रहा हूं। इस गुरुकुल संस्था में पुराने और नवीन ज्ञान के सुभग समन्वय को देख कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है। आपको यह जान कर आनन्द होगा कि मेरे फ्रांस देश में भारतीय विषयों के अनुशीलन की प्रवृत्ति बढ़ रही है। हमारे देश में बारह ऐसी संस्थाएं हैं जिनमें भारतीय विद्याओं का अध्ययन किया जाता है। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् भारतीय विषयों का अनुशीलन करने वाले छात्रों में पांच गुनी वृद्धि हुई है। आज जो कुछ मैंने यहां देखा है उससे पर्याप्त प्रभावित हुआ हूं और यहां पर पुनः आने का आकर्षण मेरे चित्त में पैदा हो गया है। मेरी हार्दिक आकांक्षा है कि भारत और फ्रांस के सांस्कृतिक सम्बन्ध दृढ़तर होते जायें और इस प्रकार मानव मैत्री के सुपथ पर हम अग्रसर होते रहें।

मान्य अतिथि महोदय ने संस्कृत भाषा के गुरुकुल के कुछ प्रकाशन बड़े प्रेम से स्वीकार किये। आप के आत्मीयतापूर्ण व्यवहार से कुलवासी भी बहुत प्रभावित हुए हैं।

"शुद्धि क्या है?"

(लेखक—श्री नारायणदास कपूर, मन्त्री, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब प्रधान मन्त्री, भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, देहली।)

अनगिनत धर्म भारतवर्ष में विद्यमान है। हिन्दू बहुत से धर्मों का समूह है। परन्तु फिर भी एक ही कहा जाता है, दूसरे मुख्य धर्म उदाहरणतया मुस्लिम और ईसाई है। दोनों धर्म भारतवर्ष की राष्ट्रीयता से बिलकुल भिन्न है। इसी कारण वह हिन्दुओं से अलग रह रहे हैं। ईसाइयों का भारत की राष्ट्रीयता से कोई संबन्ध नहीं। परन्तु अन्य देशों की राष्ट्रीयता ने भी उन्हें नहीं अपनाया। इस कारण विवश होकर उन्होंने अपने आपको भारतीय कहना आरम्भ कर दिया। यदि अंग्रेजों और भारत में उत्पन्न हुए ईसाइयों में रंग का भेद न होता तो भारत के ईसाई भी अपने आपको भारत का विजेता कहते। जिस प्रकार कि भारत में हर एक मुसलमान जुलाहा भी अपने आपको फतेह हिन्दुस्तान कहता है। भारत का मुसलमान हिन्दुओं की सन्तान होता हुआ भी अपना नाता राम कृष्ण से नहीं, अपितु इब्राहीम और इस्माइल से जोड़ता है। वह अपने आपको इब्राहीम, लूत और दाऊद के वंश का बतलाता है। भारत के तीर्थ मथुरा, वृन्दावन, हरिद्वार और प्रयाग के बदले अरब के मक्का और मदीना को अपने तीर्थ स्थान मानता है। प्रतिदिन

पांच बार भारत से मुंह मोड़ कर अरब में स्थित मक्का मदीना की ओर मुंह कर, भगवान को छोड़ कर अल्ला से दुआ मांगता है।

अरब की सूखी खजूरों में जो उसको स्वाद आता है, वह भारत के आम में नहीं। भारत के वेश को छोड़कर अरब का पाजामा पहनना अपना गौरव समझता है। हिन्दी को छोड़ उर्दू को अपनी मातृ भाषा बनाता है। मुसलमान बनते ही अपने असली पुरखाओं और वीर योधाओं की गाथाएं इसको रोमांचित नहीं करतीं अपितु यहूदियों की क्रूर कथाओं को पढ़कर बड़ा प्रफुल्लित होता है। हिन्दू क्षत्रिय से मुसलमान बनते ही वह पृथ्वीराज और महाराणा प्रताप, शिवाजी और गुरुगोविन्द सिंह जी को भूलकर महमूद और तैमूर तथा औरंगजेब के कारनामों को पढ़कर अपनी छाती फुला लेता है। इसी प्रकार भारत का ईसाई भी अपने असली पूर्वज रामकृष्ण, जिनका खून उसकी नस नाड़ियों में अब भी बह रहा है, उसके स्थान पर यूरोप के पोप की ओर ही ताकता है। भारत के मुसलमान और ईसाई अपने वास्तविक पूर्वजों को गालियां देने से भी नहीं लजाते। ईसाई अपने भारतीय नामों के आगे विदेशी नाम जोड़ लेते हैं। और मुसलमान तो अपने नाम अरबी भाषा के ही रखते हैं। उनको तो भारतीय नामों से इतनी चिढ़ है कि वह रुस्तम खां और सुहराब खां, जो कि मुसलमान नहीं थे, वह नाम रख लेते हैं। परन्तु भीमखां और अर्जुन खां नाम रखने के लिये कदापि तैयार नहीं। राम के नाम से तो इतनी चिढ़ है कि किसी नगर का नाम यदि राम के शब्द से आरम्भ हो तो वह राम के स्थान पर वहां रसूल का नाम लेंगे।

भारत में उर्दू किसी प्रान्त की भाषा नहीं और नाही सब मुसलमान ही उसे बोलते हैं, अपितु मुगल बादशाहों की वह देन है। इस कारण उर्दू को ही अपनी भाषा मानते हैं।

फारसी कविता में माशूक। प्रियसी। शब्द है। परन्तु भारतीय मुसलमान फारसी के शब्द को जो कि अशुद्ध प्रयोग हो रहा है, अपनाता है। कमल के स्थान पर गुलाब की उपमा मुसलमान देंगे। मुसलमान भूमंडल पर जहां भी गए हैं, वहां की सभ्यता, संस्कृति और भाषा को नष्ट भ्रष्ट कर अरबी संस्कृति को फैलाना अपना धर्म समझते रहे हैं। इसी का नाम जहाद है। भारत में क्योंकि पूरी तरह सफल नहीं हुआ, इस कारण यहां संघर्ष होते रहते हैं। वह कांग्रेसी हो या सोशलिस्ट, जहाद उनका ध्येय होता है। यदि शासन मुसलमान के हाथ आ जाय तो वह तलवार से भी अपने अरबी धर्म को फैलाने में नहीं हिचकिचाता।

हैदराबाद में निजाम शासन के समय उसने भारत की राष्ट्रीयता को नष्ट करने का पूरा प्रयत्न किया और हैदराबाद रियासत में अल्प संख्या में होते हुए भी हिन्दुओं पर वह अत्याचार किये, जिसको भारतीय कभी भूल नहीं सकेंगे। आज स्वतन्त्र भारत में मुसलमानों को कोई कष्ट नहीं। परन्तु उनको केवल मात्र एक बात का दुःख है कि वह हिन्दुओं पर अत्याचार नहीं कर सकता और भारत की सभ्यता और संस्कृति को नष्ट भ्रष्ट करने में अपने आपको असमर्थ पा रहा है।

मुसलमान हिन्दु भावनाओं पर इस प्रकार आघात करना अपना धर्म समझते हैं, इसका एक उदाहरण रामपुर रियासत में रामगंगा तट पर एक बड़ा नगर शाहबाद है। वहां से हिन्दू प्रातःकाल स्नान करने के लिये रामगंगा के तट पर जिस मार्ग से आया करते थे, उसी मार्ग पर मुसलमान हिन्दुओं की भावना को अपमानित करने के लिये खुले मैदान गौवध किया करते थे। मुसलमान अन्य मतों के साथ केवल बेबसी की हालत में रह सकता है अन्यथा नहीं। क्योंकि कुरान की शिक्षा ही ऐसी है।

"मुसलमानों को चाहिये कि वह मुसलमानों को छोड़कर काफरों से मित्रता न जोड़ें और जो ऐसा करता है उसे अल्ला की दोस्ती से कोई लगाव नहीं। हां मगर ऐसी दशा में कि तुम्हें उनके विद्रोह से किसी प्रकार बचना हो। कुरान सूरत अलाईमान ३ पारा। भाष्य ख्वाजा हसन निजामी। ऊपर मित्रता और भीतर से शत्रुता को ही "तकईया" कहते है। "ऐसी शिक्षाओं का ही प्रभाव है कि महात्मा गांधी जैसे

शांति के देवता को हिन्दू मुस्लिम मिलाप में सफलता प्राप्त नहीं हो सकी।

एक मुस्लिम कांग्रेसी नेता ने जब यह कह दिया कि एक डाकू, चोर और बदमाश मुसलमान एक महात्मा गांधी से भी अच्छा है और उसके अधिक निकट है, क्योंकि वह मुसलमान है। कांग्रेस में आकर भी मुसलमान ने अपने आपको पृथक् रखा। कारण केवल एक है कि उसकी राष्ट्रीयता विदेशी है। धर्म भेद तो जैन और सनातन धर्म का भी बहुत है, ब्रह्म समाज और आर्य समाजी का भी बहुत है, परन्तु राष्ट्रीयता एक होने से सब में एकता दृश्यमान होती है।

भारत की स्वतन्त्रता के पश्चात् ईसाइयों ने धर्म प्रचार की आड़ में बिहार के आदिवासियों में और आसाम के नागाओं में यह विष भरा कि उन्होंने अपने पृथक् पृथक् प्रदेश मांगने आरम्भ कर दिए हैं। मुसलमानों के इन अराष्ट्रीय धर्मों के विचार बदलने का नाम ही शुद्धि है। शुद्धि संस्कार कोई साम्प्रदायिक कार्य नहीं, अपितु राष्ट्रीय कार्य है। अराष्ट्रीय भावनाओं को निकाल कर उसके स्थान पर राष्ट्रीयता का आरोप शुद्धि के द्वारा होता है।

अराष्ट्रीय विचारों ने पाकिस्तान बना दिया और ईसाइयों के अराष्ट्रीय विचारों ने झारखंड और नागाओं के पृथक् प्रदेश मांगने आरम्भ कर दिये हैं।

स्वतन्त्र भारत में यह अराष्ट्रीय धर्म दीमक का काम कर रहे हैं। किसी भी समय यह स्वस्थ शरीर को अस्वस्थ कर सकते हैं। यह अराष्ट्रीय धर्म कभी भी भारत की स्वतन्त्रता में विघ्न बाधा डाल सकते हैं। जिसकी दृष्टि में अपनी मातृभूमि की ओर प्रेम न हो और अन्य मतावलम्बियों की ओर घृणा के भाव हो, उनके भाव मातृ भूमि और उसके निवासियों की ओर प्रेम बनाना ही मातृभूमि की बड़ी सेवा है और इसी को शुद्धि कहते हैं।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली की अन्तरंग सभा दिनांक २८-११-५४ की कार्यवाही

शोक प्रस्ताव

(१) यह सभा गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ के भूत पूर्व मुख्याधिष्ठाता श्रीयुत प्रो० गोपाल जी बी० ए० के असामयिक निधन पर दुःख प्रकट करती है और उनके परिवारके प्रति हार्दिक समवेदना का प्रकाश करती है।

(२) गताधिवेशन की कार्यवाही पढ़ी गई और सम्पुष्ट हुई।

(३) विज्ञापन का विषय सं० १ श्रीयुत राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री (पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज) का सभा के प्रधान पद से दिनांक ७।११।५४ का त्याग पत्र प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि श्रीयुत राजगुरु पं० धुरेन्द्र शास्त्री का त्याग पत्र, उनकी बहुमूल्य सेवाओं के लिये धन्यवाद देते हुये, स्वीकार किया जाये। और पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज (जो श्री राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री का संन्यास लेने पर नाम रखा गया है) अनुरोध किया जाये कि वे प्रधान पद का कार्य करते रहें। श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज ने प्रधान पद का उत्तरदायित्व लेने की अनिच्छा प्रकट की। इस पर निश्चय हुआ कि श्री प्रधान जी की भावना का आदर करते हुये श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति से प्रार्थना की जाये कि वे कायकर्ता प्रधान का कार्य करते रहें।

(४) विज्ञापन का विषय सं० २ श्रीयुत ठा० अमर सिंह जी बरसियां निवासी का निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत हुआ।

दयानन्द निर्वाण दिवस का नाम महर्षि दयानन्द बलिदान दिवस रखा जाये।" निश्चय हुआ कि नाम परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है।

(५) विज्ञापन का विषय सं० ४ सार्वदेशिक गोरक्षा समिति की बैठक दिनांक २६।११।५४ के निश्चय पर विचार कर विषय प्रस्तुत हो कर निम्न निश्चय पढ़ा गया और सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

अहल सार्वदेशिक आर्य महा सम्मेलन हैदराबाद के गोवध निरोध सम्बन्धी प्रस्ताव संख्या ३ से इस समिति की पूरी सहमति और श्रद्धा है और उसके सम्बन्ध में पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज द्वारा तथा उनके मार्ग प्रदर्शन से अब तक जो कार्य हुये हैं उनसे यह समिति पूर्ण सन्तोष प्रकट करती है।

गोवध निरोध के सम्बन्ध में जितनी जानकारी प्राप्त हुई है उससे इस समिति का विश्वास है कि गोवध निरोध की भावना जनता के हृदयों में उत्तरोत्तर वृद्धि पर ही है और उसके परिणाम स्वरूप कहीं २ प्रादेशिक और स्थानीय शासनों ने गोवध का न्यूनाधिक निरोध भी किया है, परन्तु भारत के नाम से यह बिलकुल सन्तोषप्रद नहीं कहा जा सकता। सम्पूर्ण भारत में गोवध पूर्णरूपेण निषिद्ध हो इसके लिये यत्न जारी रखना चाहिये और विविध शासनों को इसे कार्यान्वित करने के लिये उन पर प्रभाव डालना भी जारी रहे।

उत्तर प्रदेश के शासन ने जो सर सीताराम समिति नियुक्त की थी, उसका प्रतिवेदन रिपोर्ट शासन के पास उन्होंने भेज दिया है ऐसी खबर है। परन्तु सर सीताराम समिति का प्रतिवेदन अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ है और उस पर शासन का निश्चय भी प्रकाशित नहीं हुआ है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की यह समिती आशा करती है कि सर सीताराम समिति के प्रतिवेदन को उत्तर प्रदेश का शासन शीघ्र प्रकाशित करेगा और उस पर उनका क्या निश्चय है यह भी जनता के सूचनार्थ प्रकाशित किया जावेगा।

सत्याग्रह के सम्बन्ध में आर्य समाज की नीति के बारे में जो पूछा जाता है इस विषय में यह समिति हैदराबाद आर्य महा सम्मेलन के प्रस्ताव की पुष्टि करती है और इष्ट की सिद्धि के लिये आवश्यक होने पर सत्याग्रह को अवैध नहीं मानती।

(६) विज्ञापन का विषय सं० ६ श्री ब्र० धीरेन्द्र जी शीघ्र का ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के पुनर्मुद्रण सम्बन्धी १२।६।५४ का पत्र प्रस्तुत किया जा कर पढ़ा गया। ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के अंग्रेजी अनुवाद के नये संस्करण के प्रकाशन के सम्बन्ध में सभा कार्यालय और आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के मध्य हुआ पत्र व्यवहार भी पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि पुस्तक प्रकाशित हो जाने पर आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश से ५०० प्रतियां बढ़िया संस्करण की और ५०० साधारण संस्करण की प्रतियां उचित मूल्य पर क्रय करली जावें।

(७) विज्ञापन का विषय सं० ७ कार्यालय की अवकाश सूची में परिवर्तन का विषय प्रस्तुत होकर सभा मन्त्री के सुझाव पढ़े गये निश्चय हुआ कि वर्तमान सूची में; जो २२४५० की अन्तरंग की बैठक द्वारा संशोधित होकर इस समय प्रचलित है, निम्न परिवर्तन स्वीकार किया जाता है।

दशहरा ३ दिन के स्थान में १ दिन
दिवाली ३ दिन के स्थान में २ दिन
होली ३ दिन के स्थान में २ दिन

यह भी निश्चय हुआ कि श्री प्रधान जी किसी अवकाश की वृद्धि करना उचित समझें तो कर देवें।

(८) विज्ञापन का विषय सं० ८ सभा के उपदेशक श्रीयुत पं० मदनमोहन जी का विषय प्रस्तुत होकर सभा मन्त्री जी का मद्रास प्रचार की नीति में परिवर्तन विषयक १२ ६।५४ का तथा पं० मदनमोहन जी के कार्यव्यवहार के विषय में कार्यालय की २३।११-५४ का नोट पढ़ा गया। विचार विमर्श के पश्चात् निश्चय हुआ कि :

१, आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के अनुरोध पर अन्तरंग सभा की स्वीकृति की आशा में सभा कार्यालय ने पं० मदनमोहन विद्यासागर जी की सेवायें जो १ वर्ष के लिये दयानन्द उपदेशक विद्यालय हैदराबाद को निम्न शर्तों के आधीन दी हैं वे स्वीकार की जाती हैं।

(१) पंडित जी का वेतन सार्वदेशिक सभा पूर्ववत् देती रहेगी।

(२) दक्षिण प्रचार और हाउस एलाउंस के ३०) मासिक उपदेशक विद्यालय देगा।

(३) इस एक वर्ष की अवधि में आन्ध्र प्रचार का उत्तरदायित्व आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद पर होगा जिसकी सूचना प्रति ३ मास सभा को मिलती रहनी चाहिये। सभा कार्यालय विचार विमर्श में पूर्ण सहयोग देता रहे।

२, मद्रास प्रचार विषयक सभा की नीति में परिवर्तन किया जावे या नहीं अथवा क्या परिवर्तन किया जावे इस सम्बन्ध में श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज, सभा प्रधान जी के दक्षिण प्रदेश के भ्रमण के उपरान्त जो सम्भवतः दिसम्बर या जनवरी में होगा, उनकी रिपोर्ट और सभा मन्त्री तथा कार्यकर्त्ता प्रधान जी की पारस्परिक सम्मति के प्रकाश में आगामी बैठक में विचार किया जावे।

३, उपर्युक्त विषय के निर्णीत हो जाने पर पंडित मदनमोहन जी विद्यासागर के ग्रेड परिवर्तन आदि के विषय पर यदि सभा उनकी सेवायें आगे जारी रखे, तो आगामी अन्तरंग सभा में उस पर विचार किया जावे।

(९) विज्ञापन का विषय स० ९ धर्मार्य सभा के संगठन में संशोधन विषयक श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति के सुझाव पर विचार का विषय प्रस्तुत होकर प्रकट किया गया कि यह पत्र संशोधन उपसमिति को भेज दिया गया है, अतः निश्चय हुआ कि संशोधन उपसमिति की रिपोर्ट आने पर इस विषय पर विचार किया जावे।

(१०) विज्ञापन का विषय स० १० अंग्रेजी सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशन की स्वीकृति का विषय प्रस्तुत होकर सभा कार्यालय का २२।११।५४ का नोट पढ़ा गया। २७।८।५४, २०।११।५४ की अन्तरंग के निश्चय क्रमशः स० १६,३ पढ़े गये। श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी का ७।१।११ का पत्र भी पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि २०।११।५४ की अन्तरंग के निश्चयानुसार श्री डा० चिरंजीव भारद्वाज कृत अंग्रेजी सत्यार्थप्रकाश की १००० प्रतियां अच्छे टाइप में आफसेट प्रेस (फोटो लेकर) में छपाई जायें। इसके ६०००) तक व्यय की स्वीकृति दी जाती है। यह भी निश्चय हुआ कि आफ सेट की प्लेटें सुरक्षित रखी जायें। प्रथम १००० प्रति के समाप्त होने पर १०००, १००० प्रतियां छपवाई जाती रहें। इन पर प्रति सहस्र मय कागज के छपाई का व्यय अनुमानतः २०००) आता रहेगा जो स्वीकार किया जाता है।

(११) विज्ञापन का विषय सं० ११ संस्कृत सत्यार्थप्रकाश के नवीन संस्करण के सभा द्वारा प्रकाशन का विषय प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि अनुवाद का निरीक्षण और आवश्यकतानुसार संशोधन कराने के पश्चात् निरीक्षित और संशोधित लिपि के साथ यह विषय पुनः अन्तरंग की आगामी बैठक में प्रस्तुत किया जावे।

(१२) विज्ञापन का विषय स० १३ सभा की मुहर में छपे ओ३म् शब्द पर आपत्ति विषयक श्रीयुत स्वामी वेदानन्द जी महाराज का १३,६,१२ का पत्र प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि यह विषय निर्णयार्थ धर्मार्य सभा को भेजा जावे।

(१३) विज्ञापन का विषय स० ५ ईसाई प्रचार निरोध समिति के कार्य की रिपोर्ट तथा श्रीयुत पं० इन्द्र जी के व्ययादि सम्बन्धी पत्र पर विचार का विषय प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि यह विषय आगामी बैठक में प्रस्तुत किया जावे।

(१४) विशेष रूप से प्रधान जी की आज्ञा से श्रीयुत स्व० प्रो सुधाकर जी कृत सन्ध्या के इंग्लिश अनुवाद 'डेली प्रेयर आफ एन आर्य' पुस्तक के स्वत्वाधिकार सभा द्वारा लिये जाने का विषय प्रस्तुत होकर प्रकट किया गया कि कार्यालय ने २२५) रायल्टी (स्वत्वाधिकार) पर यह स्वत्वाधिकार स्व० सुधाकर जी की धर्मपत्नी जी से लेने का निश्चय कर उन्हें स्वीकृति दी है। श्रीयुत पं० यशपाल जी सिद्धान्तालंकार ने बताया कि श्रीयुत पं० हरिशरण जी सिद्धान्तालंकार द्वारा सन्ध्या का अंग्रेजी अनुवाद होकर वह प्रकाशित हो चुका है उसके द्वारा सभा अपनी आवश्यकता बिना रायल्टी (स्वत्वाधिकार) का व्यय किये पूरी कर सकती है। निश्चय हुआ कि कार्यकर्त्ता प्रधान जी को अधिकार दिया जावे कि वे दोनों अनुवादों को देखकर निश्चय कर देवें। यदि उनकी सम्मति में श्री प्रो० सुधाकर जी कृत अनुवाद का स्वत्वाधिकार लिया जाना उचित जान पड़े तो २२५) देकर स्वत्वाधिकार प्राप्त कर लिया जावे।

(१५) श्रीयुत पं० धीरेन्द्र जी शील को उनके

(शेष पृष्ठ १२१ पर देखें)

दान-सूची

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

(२१-७-५४ से २२-१२-५४ तक)

दान आर्यसमाज स्थापना दिवस

१५) आर्य समाज निजामाबाद
२०) ,, खुरजा
५) ,, बुरहानपुर
१६) ,, गुना
१००) ,, पूरनपुर जि० पीलीभीत द्वारा श्री राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री
११) , रायचूर
३।) नगर , आगरा
२०) ,, बहराईच

२००।) योग
८३२।-) गतयोग

१०३२॥-) सर्वयोग

विविध दान

२२१) श्री डा० दु खनराम जी प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार पटना (द्वारा श्री राजगुरु जी)
५) आर्य समाज नवादा (गया)
१०) ,, अकोला
३) ,, डाल्टनगंज (पलामू)
१२) ,, शोलापुर
१३।≈) नगर ,, आगरा
१०) श्री जगत राम जी देहली
१०) ,, धर्मचन्द्र जी कूसी इलाहाबाद
६०) गुप्त दान
५०) आर्य समाज हरदोई द्वारा श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज
३२) ,, सदर मेरठ ,, ,, ,,
३२) ,, मेरठ सिटी ,, ,, ,,
१७) , लालकुर्ती मेरठ ,, ,, ,,
३॥) श्री मुकुन्द जी पाठक

५१७॥≈) योग
१२२५॥।≈) गतयोग

१७४३॥।) सर्वयोग

दान आर्यसमाज सहायता निधि

१०) श्री बी० आर० कम्बिकाल जी देहली

१०) योग
४०) गत योग

५०) सर्वयोग

आर्य संस्कृति रक्षा निधि

५१) श्री शिव प्रसाद जी कानपुर
१२३॥≈) हैदराबाद आर्य महा सम्मेलन में दान में मिली घड़ियों की कीमत से
२२) ,, ,, ,,

१९६॥≈) योग
३१५५।≈) गत योग

३३५२।-) सर्व योग

दान गोरक्षा आन्दोलन

२५) श्री रामचरन लाल जी रस्तोगी महुआ डाबर
२) आर्य समाज बालपुर (मेरठ)
११) ,, गंरोठ (होल्कर)
६००) श्री स्वा० धामन्द भिक्षु जी
५०) ,, मा० पोहकर मल जी उपदेशक
२५) आर्य समाज इस्लाम नगर बदायूं
१०१) ,, गाजियाबाद द्वारा श्री राजगुरु जी
१०६) ,, मेरठ सदर, मेरठ शहर, लालकुर्ती मेरठ द्वारा श्री राजगुरु जी

५००) श्री स्वा० आनन्द भिक्षु जी
६६) ,, मा० पोहकर मल जी उपदेशक
२६) आर्य समाज रुड़की
३३॥) ,, अम्बेहटा (सहारनपुर)
६००) श्री स्वामी आनन्द भिक्षु जी मोम्बासा
३०) आर्य समाज सरकड़ा बिरनोई
६०) श्री मा० पोहकर मल जी उपदेशक
२१) आर्य समाज मुजफ्फर नगर (श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के यू.पी.के दौरे में प्राप्त)
२१) ,, दौराला ,, ,,
१०१) ,, सहारनपुर ,, ,,
१०१) ,, मुरादाबाद ,, ,,
२१) ,, रामपुर ,, ,,
२५) ,, भूड़ बरेली ,, ,,
२५) ,, सुभाषनगर बरेली ,, ,,
२६) ,, बिहारीपुर ,, ,,
१०१) ,, बदायूं ,, ,,
२१) ,, हल्द्वानी ,, ,,
१०१) ,, फर्रुखाबाद ,, ,,
२१) ,, कायमगंज ,, ,,
११) ,, ओरैपुर ,, ,,
१०१) ,, कानपुर ,, ,,
६६) ,, फतेहपुर ,, ,,
२०) ,, रानी मंडी प्रयाग ,, ,,
२०) ,, कटरा प्रयाग ,, ,,
१०१) ,, चौक प्रयाग ,, ,,
२०) श्री मुन्नूलाल जी प्रयाग ,, ,,
१०) आर्य समाज सुल्तानपुर ,, ,,
१०१) ,, फैजाबाद ,, ,,
२५१) ,, शाहगंज ,, ,,
२५) ,, खेता सराय ,, ,,
२६१) ,, (जौनपुर श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के यूपी दौरे से प्राप्त)
२) श्रीराम जग्गीसिंहजी जौनपुर ,, ,,
२५१) आर्य रक्षा समिति ,, ,, ,,
१०१) आर्य समाज बुलानालाकाशी,, ,,
१०१) ,, गोरखपुर ,, ,,
२) ,, सहारनपुर ,, ,,
७) ,, बदायूं ,, ,,
२॥) ,, फर्रुखाबाद ,, ,,
२००) श्री स्वामी आनन्द भिक्षु जी
२१) ,, घनश्याम जी गुप्त, प्रचार मन्त्री गोरक्षा समिति पो० चौमू (जयपुर) द्वारा श्री राजगुरु जी
५) आर्य समाज छुबली जि० गोरखपुर
२५०) श्री स्वामी आनन्द भिक्षु जी
६०) ,, मा० पोहकर मल जी उपदेशक
१२७२) श्री स्वामी आनन्द भिक्षु जी
१२) आर्य समाज जमखुर्नपुर पो० केसरगंज
२००) श्री स्वामी आनन्द भिक्षु जी
६०) ,, मा० पोहकर मल जी उपदेशक
२) ,, रामावतार जी ओवरसीयर मुरादनगर
४) ,, डा० धर्मप्रकाश जी नई मण्डी मुजफ्फरनगर
४००२॥= श्री स्वामी आनन्द भिक्षु जी

११७०४॥=) योग
२७२७॥) गत योग
१४५०२।=) सर्व योग

दान दाताओं को धन्यवाद

कविराज हरनामदास बी० ए०
सभा मन्त्री

(पृष्ठ ६२२ का शेष)

द्वारा लन्दन में स्थापित हुए आर्य समाज के स्थापना व्यय तथा भावी व्यय के लिए १०००) की सभा से सहायता दिये जाने का विषय प्रस्तुत होकर श्री धीरेन्द्र जी के १७ ११-५४ तथा २२ ११-५४ के पत्र पढ़े गये। निश्चय हुआ कि समाज की स्थापना व्यय का ५००) सभा से दिया जाये और भावी व्यय के लिए भी ५००) की सहायता स्वीकार की जाये जो कार्यकर्ता प्रधान जी की आज्ञानुसार यथावश्यकता यथा समय भेजी जा सकती है।

(१६) (१) श्रीयुत पं० नरेन्द्र जी के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि अन्तरंग सभा दिनांक २७-८-५४ के निश्चयानुसार सभा के २७ वें कार्यविवरण के आगे अब तक का कार्यविवरण तैयार कराके शीघ्र से शीघ्र प्रकाशित कराया जावे।

(२) श्रीयुत पं० नरेन्द्र जी के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि श्री डा० रामप्रसाद जी द्वारा लिखित हैदराबाद सत्याग्रह के इतिहास की हस्तलिपि को देखकर श्री कार्यकर्ता प्रधान जी सभा की आगामी बैठक में उसकी छपाई के सम्बन्ध में अपनी सम्मति प्रस्तुत करें।

कविराज हरनाम दास बी. ए. मन्त्री
सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा।

ओ३म्

कार्यालय:—

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,

देहली।

दिनाक १-१-१९५५ ई०

आर्य पर्वों की सूची

वर्ष १९५५

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली आर्य समाजों की सूचना के लिये प्रतिवर्ष स्वीकृत आर्य पर्वों की सूची प्रकाशित किया करती है। इस वर्ष की सूची निम्न प्रकार है:—

क्र० स० नाम पर्व	सौर तिथि	चन्द्र तिथि	अंग्रेजी दिनांक
१. मकर सक्रान्ति	३०-९ २०११	माघ कृष्ण ६	१४ १ १९५५
२. बसन्त पचमी	१४-१०-२०११	माघ शुक्ल	२८-१-१९५५
३. सीताष्टमी	३-११-२०११	फाल्गुन कृष्ण ८	१५-२-१९५५
४. दयानन्द जन्म दिवस	८-११-२०११	,, ,, १३	२०-२-१९५५
५. लेखराम वीर तृतीया	१ ११-२०११	,, शुक्ल ३	२५-२-१९५५
६. बसन्त नव सस्येष्टि (होली)	२४-११-२०११	,, ,, १५	८-३-१९५५
७. नवसम्वत्सरोत्सव ८. आर्यसमाज स्थापना दिवस	११-१२-२०११	चैत्र शुक्ल १	२५-३-१९५५
९. राम नवमी	१८-१२-२०११	चैत्र शुक्ल ९	१-४-१९५५
१०. वैसाखी	१-१-२०१२	वैसाख कृष्ण ७	१४-४-१९५५
११. हरि तृतीया (तीज)	६-४-२०१२	श्रावण शुक्ल ३	२२-७-१९५५
१२. श्रावणी उपाकर्म	१८-४-२०१२	,, ,, १५	३-८-१९५५
१३. सत्याग्रह बलिदान स्मारक दिवस			
१४. कृष्णाष्टमी	२६-४-२०१२	भाद्रपद कृष्ण ८	११-८-१९५५
१५. विजय दशमी	९-७-२०१२	आश्विन शुक्ल	२६-१०-१९५५
१६. ऋषि दयानन्द निर्वाण दिवस (दीपावली)	२८-७-२०१२	कार्तिक कृष्ण ३०	१४-११-१९५५
१७. श्री श्रद्धानन्द बलिदान दिवस	९-९-२०१२	पौष कृष्ण १४	२४-१२-१९५५

कविराज हरनामदास, बी० ए०,

सभा मन्त्री

नोट—इन पर्वों को उत्साह पूर्वक समारोह से मनाकर इन्हें आर्यसमाज के प्रचार और वैदिक धर्म के प्रसार का महान साधन बनाना चाहिए॥

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार

के

कतिपय उत्तम ग्रन्थ

भजन भास्कर मूल्य १।।।)

तृतीय संस्करण

यह संग्रह मथुरा शताब्दी के अवसर पर सभा द्वारा तय्यार कराके प्रकाशित कराया गया था। इस में प्रायः प्रत्येक अवसर पर गाए जाने योग्य उत्तम और सात्विक भजनों का संग्रह किया गया है।

संग्रहकर्त्ता श्री पं० हरिशंकर जी शर्मा कविरत्न भूतपूर्व सम्पादक 'आर्य मित्र' है।

स्त्रियों का वेदाध्ययन का अधिकार मूल्य १।)

लेखक—श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति

इस ग्रन्थ में उन आपत्तियों का वेदादि शास्त्रों के प्रमाणों के आधार पर खंडन किया गया है जो स्त्रियों के वेदाध्ययन के अधिकार के विरुद्ध उठाई जाती है।

आर्य पर्व्व पद्धति मूल्य १।)

तृतीय संस्करण

लेखक—श्री स्व० पं० भवानी प्रसाद जी

इस में आर्यसमाज के क्षेत्र में मनाए जाने वाले स्वीकृत पर्व्वों की विधि और प्रत्येक पर्व्व के परिचय रूप में निबन्ध दिए गए हैं।

दयानन्द-दिग्दर्शन

(लेखक—श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी)

दयानन्द के जीवन की ढाई सौ से ऊपर घटनाएं और कार्य वैयक्तिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, वेद प्रचार आदि १० प्रकरणों में क्रमबद्ध हैं। २४ भारतीय और पाश्चात्य नेताओं एवं विद्वानों की सम्मतियां हैं। दयानन्द क्या थे और क्या उनसे सीख सकते हैं यह जानने के लिये अनूठी पुस्तक है। छात्र, छात्राओं को पुरस्कार में देने योग्य है। कागज छपाई बहुत बढ़िया पृष्ठ संख्या ८४ मूल्य ।।।)

वेदान्त दर्शनम् मू० ३)

(श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी)

यम पितृ परिचय मूल्य २)

अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र ,, २)

वैदिक ज्योतिष शास्त्र ,, १।।)

(ले० पं० प्रियरत्न जी आर्ष)

स्वराज्य दर्शन मू० १)

(ले० पं० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित)

आर्य समाज के महाधन मू० २।।)

(ले० स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी)

दयानन्द सिद्धान्त भास्कर मू० २)

(ले० श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी)

राजधर्म मू० ।।)

(ले० महर्षि दयानन्द सरस्वती)

एशिया का वैनिस मू० ।।)

(ले० स्वामी सदानन्द जी)

मिलने का पता—**सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा**, बलिदान भवन, देहली ६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पटौदी हाउस, दरियागंज, दिल्ली ७ में छपकर श्री रघुनाथ प्रसादजी पाठक पब्लिशर द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ६ से प्रकाशित

विषयानुक्रमणिका

❀ ओ३म् ❀

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष २९ } फरवरी १९५५, माघ २०११ वि०, दयानन्दाब्द १३० { अङ्क १२

वैदिक प्रार्थना

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ २० ॥ यजु० १३ । ४ ॥

व्याख्यान—जब सृष्टि नहीं हुई थी तब एक अद्वितीय हिरण्यगर्भ (जो सूर्य्यादि तेजस्वी पदार्थों का गर्भ नाम उत्पत्तिस्थान उत्पादक) है सो ही प्रथम था वह सब जगत् का सनातन प्रादुर्भूत प्रसिद्ध पति है, वही परमात्मा पृथिवी से ले के प्रकृतिपर्यन्त जगत् को रच के धारण करता है, 'कस्मै' (क प्रजापति , प्रजापतिर्वै कस्तस्मै देवाय, शतपथे) प्रजापति जो परमात्मा उसकी पूजा आत्मादि पदार्थों के समर्पण से यथावत् करैं, उससे भिन्न की उपासना लेशमात्र भी हम लोग न करैं, जो परमात्मा को छोड के वा उसके स्थान में दूसरे की पूजा करता है उसकी और उस देश भर की अत्यन्त दुर्दशा होती है यह प्रसिद्ध है, इससे चेतो मनुष्यो ! जो तुम को सुख की इच्छा हो तो एक निराकार परमात्मा की यथावत् भक्ति करो, अन्यथा तुम को कभी सुख न होगा ॥ २७ ॥ (आर्याभिविनय से)

योगी की जीवन यात्रा

शिवरात्रि और दीपावली ये दो आर्य जाति के महान् पर्व हैं। यह एक महत्वपूर्ण बात है कि महर्षि दयानन्द की जीवन यात्रा का आरम्भ शिवरात्रि की रात में और अन्त दीपावली की रात में हुआ।

माता पिता के घर में मूलशंकर ने कई वर्ष पहले जन्म ले लिया था। परन्तु उसका आध्यात्मिक जन्म वस्तुतः उस शिवरात्रि में हुआ जिसमें बालक मूल शंकर के मन में भगवान् के सच्चे स्वरूप को जानने की अभिलाषा उत्पन्न हुई। उस दिन मोक्ष मार्ग के उस महान् यात्री की जीवन यात्रा आरम्भ हुई।

जानने की इच्छा उत्पन्न होने के पश्चात् जो ज्ञान प्राप्त होता है उसका आधार बहुत दृढ़ होता है। उसकी दृढ़ता ऐसी होती है जैसी गहरी खुदी भूमि में चिनी हुई नींव की। जो ज्ञान केवल ऊपर से, अनिच्छा पूर्वक डाला जाता है वह उस नींव के समान होता है जो भूमि के ऊपर ही बना दी जाय। शिवरात्रि के सन्नाटे में मूलशंकर के संस्कारी मन में यह जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि वस्तुतः सत्य क्या है? और भगवान् का स्वरूप कैसा है?

यह दो प्रश्न मन में लेकर वह घर की माया ममता का त्याग करके ज्ञान-मार्ग के यात्री बन गये और जंगल में और पर्वतों में वर्षों तक भ्रमण करके सत्य और भगवान् के स्वरूप की तलाश की। उस समय जो ज्ञान यात्रा आरम्भ हुई उसकी समाप्ति दीपावली की उस रात्रि में हुई जब योगी दयानन्द ने यह कहते हुए आंखें बन्द करलीं—'हे प्रभु! तेरी इच्छा पूर्ण हो।'

शिवरात्रि का पर्व पुराना है। न जाने कब से उस रात को प्रभु चिन्तन में व्यतीत करने की परम्परा चली आती थी। वह परम्परा अवश्य ही किसी ऊंचे उद्देश्य से प्रारम्भ हुई होगी। परन्तु जैसे संसार की अन्य परम्पराओं का नियम है, समय ने बहुत से अनावश्यक विधि विधानों का परदा डालकर उस परम्परा को रूढ़ि के रूप में परिणत कर दिया। उसका असली रूप लुप्त हो गया। जिस उद्देश्य और भावना से उसे जारी किया गया होगा वह सर्वथा लुप्त हो गई। अन्दर से सार निकल गया, बाकी रह गया केवल खोखला शरीर मूलशंकर के संस्कारी अन्तःकरण में शिव पूजा की रूढ़ि को देखकर वास्तविक शिव-पूजा की भावना उत्पन्न हुई। जैसे कोई मैला हुआ बर्तन यत्न पूर्वक मांजने से चमक उठता है और उसमें मानो नया जीवन आ जाता है उसी प्रकार मूलशंकर की जिज्ञासा ने शिवरात्रि के पर्व को मानों मांज कर फिर से चमका दिया। मेरी दृष्टि में अब यह पर्व सार्थक बन गया है परन्तु यह सार्थकता तभी सम्भव है यदि हम शिवरात्रि पर से रूढ़ि का परदा उठाकर उसके असली स्वरूप को समझें।

यह रात्रि आस्तिकों के लिये सत्यज्ञान की रात्रि होनी चाहिए। वह उस समय अपने शास्त्रों का स्वाध्याय करें अथवा धार्मिक विषयों पर प्रवचन सुनें। मनन और श्रवण के पश्चात् निदिध्यासन आवश्यक है। एकान्त में बैठकर परमात्मा को साक्षी करके अपने जीवन पर दृष्टि डालना और कर्तव्यों का ध्यान करना ही साधारण मनुष्य का निदिध्यासन है। निदिध्यासन से मनुष्य को वह ज्ञान प्राप्त होता है जो उसे अमृत का अधिकारी बनाता है।

मेरा आर्यजनों से यह निवेदन है कि वह बोध रात्रि को केवल अन्यों को उपदेश देने अथवा प्रचार करने का साधन मानकर ही सन्तोष न करें, अपितु उसे आत्म चिन्तन और आत्म-सुधार का अवसर बनायें। बोधरात्रि से पहला दिन किसी प्रकार के समारोह तथा उत्सव के रूप में व्यतीत करने के पश्चात् रात्रि का बहुत सा समय व्यक्तिगत चिन्तन और शुभ संकल्पों के अर्पण करना प्रत्येक आर्य नर नारी को अपना कर्तव्य समझना चाहिए। ऋषि ऋण को उतारने का यही एक उपाय है।

—इन्द्र विद्या वाचस्पति

भारत में गोवध का सर्वथा निषेध हो

उत्तर प्रदेश की सरकार ने गोरक्षा के विषय पर विचार करने के लिये श्री सीताराम जी की प्रधानता में जो कमेटी बनाई थी उसकी रिपोर्ट प्रकाशित हो गई है। रिपोर्ट में यह सुझाव दिया गया है कि भारत में गोवध का सर्वथा निषेध होना चाहिये। यदि आज गोवध निषेध के सम्बन्ध में भारत की समस्त जनता का स्वतन्त्र मत लिया जाये तो इसमें सन्देह नहीं किया जा सकता कि वह इसी पक्ष में होगा कि भारत में कानून द्वारा गोवध बन्द होना चाहिये। नब्बे फीसदी मत इस प्रस्ताव के पक्ष में आयेंगे इसमें संशय नहीं। जो दस फीसदी मत इस प्रस्ताव के विरोध में आयें वह भी शायद गोवध का समर्थन न करके यही कहेंगे कि गोवध का सीधा निषेध न करके प्रकारान्तर से गोवंश की रक्षा करनी चाहिये। यदि किसी को परिस्थिति के इस विश्लेषण में सन्देह हो तो वह निजी तौर पर देश का मत संग्रह करके देखले। आशा रखनी चाहिये कि उत्तर प्रदेश की सरकार सीताराम कमेटी के परामर्श को स्वीकार करके अपने प्रदेश में गोवध को सर्वथा बन्द करदे। उसके पश्चात् अन्य प्रदेशों की सरकारों के लिये कर्तव्य का मार्ग सर्वथा स्पष्ट हो जायेगा। उन्हें भी अपने यहां गोवध बन्द करा देना चाहिये। भारत की सरकार चाहे किसी पार्टी के हाथ में हो उसका अपना कल्याण भी इसी में है कि प्राचीनतम परम्परा का पालन करते हुये देश में गोवध पर रोक डाल दे। यह परम्परा इतनी प्रबल रही है कि मुगल बादशाहों ने जब भारत में जमकर राज्य करनेका निश्चय किया तब उन्होंने भी गोवध को नियम विरुद्ध करार दे दिया था। वस्तुतः गोवध निषेध का निश्चय तो देश का संविधान बनने के समय ही हो जाना चाहिए था। उस समय यह आशा दिलाई गई थी कि उपयोगी पशुओं की रक्षा के सम्बन्ध में जो धारा बनाई जारही है उससे धीरे-धीरे स्वयं गोवध बन्द हो जावेगा परन्तु वैसा हुआ नहीं। केन्द्रीय सरकार तो यह कह कर बात को समाप्त कर देती है कि यह विषय प्रदेशों के निश्चय करने का है। हम इसमें कुछ नहीं कर सकते। देश के बहुत भारी बहुमत और संविधान की भावना को ध्यान में रखते हुये प्रादेशिक सरकारों का यह कर्तव्य है कि वह गोवध को बन्द करने के लिये आवश्यक नियमों के निर्माण में विलम्ब न करें। यह स्मरण रखना चाहिये कि भारत की जो सरकार गोवध को सर्वथा बन्द कर देगी उसकी जड़ें जनता के हृदयों में बहुत गहरी चली जायेंगी परन्तु जो सरकार इस कर्तव्य में टाल से काम लेगी उसका आसन हिलता रहेगा।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियां ❀

आपत्तिजनक नाटक

पिछले दिनों मद्रास प्रान्त के मदुराई नगर में तथा अन्यत्र एक द्रविड़ संस्थान के तत्वावधान में ऐसे नाटकों का अभिनय हुआ जिसमें द्रविड़ों के सम्भावित पूर्वज के रूप में रावण की प्रशंसा और द्रविड़ों को परास्त करने वाले आक्रान्ता के रूप में आर्य राजाराम की निन्दा की गई थी। इस प्रकार के प्रदर्शन से, भारतीय संस्कृति की एक महान् पूजनीय विभूति के विषय में असंगत भाषा के प्रयोग से, भारतीय संस्कृति के उपासकों एवं प्रेमियों की भावनाओं को ठेस लगना और अशान्ति के वातावरण का व्याप्त हो जाना स्वाभाविक था। हुआ भी ऐसा ही। इस प्रकार के नाटकों के प्रदर्शन का उद्देश्य न तो कला के सौष्ठव की अभिव्यक्ति हो सकती है और न निर्दोष मनोरंजन ही हो सकता है। इनका उद्देश्य तो आर्य संस्कृति का महत्व कम करने तथा नास्तिकता का प्रचार करने का दुष्टतापूर्ण असफल यत्न ही हो सकता है। भारतवर्ष जैसे आस्तिक और धर्म प्रधान देश में जहां रामकृष्ण आदि इतिहास की महान् विभूतियां लोगों के हृदयों में पवित्रतम रूप में प्रतिष्ठित हैं इस प्रकार का निन्दनीय आचरण करना अपनी क्षुद्रता का ही परिचय देना है।

परन्तु इस प्रकार का दुर्व्यसन इस समय भले ही उपेक्षणीय साधारण सार्वजनिक बाधा प्रतीत हो, कालान्तर में वह एक भयंकर खतरा बन सकता है, जिसकी ओर से कोई भी जिम्मेवार सरकार आँखें बन्द नहीं कर सकती। अतः मद्रास राज्य शासन ने सार्वजनिक नाटकों के प्रदर्शनों को अधिक नियंत्रित करने के लिए एक आवश्यक विधान बनाने का काम हाथ में लिया है। १८७६ का एक कानून पूर्व से विद्यमान है परन्तु वह बहुत पुराना है और वर्तमान भारतीय संविधान की दृष्टि से इसमें कई कानूनी त्रुटियां हैं इन्हीं त्रुटियों के कारण मद्रास सरकार को उपर्युक्त आपत्तिजनक नाटक खेलने वालों के विरुद्ध चलाए गए कुछ मामले वापस लेने पड़े हैं।

१८७६ के कानून के अनुसार आपत्ति जनक प्रदर्शनों के अन्तर्गत ३ वर्ग आते हैं:—

१ सरकार के विरुद्ध भावों को भड़काने वाले

२ बदनाम करने वाले

३ उपस्थित दर्शकों को बिगाड़ने वाले।

मद्रास सरकार के नए बिल में १९५१ के प्रेस ऐक्ट के सभी छः वर्ग आ जाते हैं जिनमें भारतीय नागरिकों के किसी भी वर्ग के धर्म वा धार्मिक भावनाओं का अपमान करके उस वर्ग के लोगों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाने वाली सामग्री भी सम्मिलित है।

आशा है यह बिल शीघ्र ही कानून का रूप लेगा और केन्द्रीय सरकार १८७६ के कानून का अविलम्ब संशोधन कर देगी जिससे उसको उपर्युक्त प्रकार के प्रदर्शनों को अखिल भारतीय रूप में रोकने की शक्ति प्राप्त हो जाय।

नारियों का व्यापार

पिछले दिनों पंजाब के गवर्नर श्री सी० पी० एन सिंह ने सोशल एण्ड मौरल हाईजीन एसोसिएशन (सामाजिक एवं नैतिक स्वास्थ्य परिषद्) के चतुर्थ वार्षिक सम्मेलन का चण्डीगढ़ में उद्घाटन करते हुए कहा कि एक राज्य में अनुसंधान करने पर विदित हुआ कि आर्थिक आवश्यकता के कारण ८० प्रतिशत सामाजिक अत्याचार के कारण १५ प्रतिशत और मनोवैज्ञानिक कारण वश ५ प्रतिशत स्त्रियां पेशा कमाने की ओर प्रवृत्त होती हैं। उन्होंने यह भी कहा कि यह अनुपात समस्त भारत पर लागू हो सकता है। जहां तक देश की नारियों के कुपथगामिनी होने के कारणों का सम्बन्ध है वहां तक तो हम गवर्नर महोदय के विचारों से सहमत हैं परन्तु हम इस बात से सहमत नहीं हैं कि देश की ८० प्रतिशत नारियां 'पेशा' कमाने की ओर आकृष्ट होती हैं।

आर्थिक कठिनाइयां इस बुराई के लिए जिम्मेवार हैं परन्तु सबसे अधिक जिम्मेवार स्त्रियों का संगठित व्यापार है, जो प्रलोभनों और भय के आवरण में धूर्त और दुष्ट व्यक्तियों के द्वारा चलाया जाता है और पर्वतों और ग्रामों की भोली भाली सुन्दरियां नागरिक जीवन के आकर्षणों से आकृष्ट होकर जिसकी सहज ही शिकार बन जाती हैं। नारियों के संगठित व्यापार दल देश के भीतरी भागों में मुख्यतया पर्वतीय प्रदेशों में घुसकर लड़कियों को नागरिक जीवन की सुविधाओं और सुखों के सब्ज बाग दिखाकर बहकाते, वेश्या मां बाप से इन्हें क्रय करते और यहां तक कि इन्हें बलात् भगा लाते हैं। समाज और राज्य दोनों का परम-कर्तव्य है कि वे इस बुराई के विरुद्ध उग्र युद्ध छेड़कर उन हजारों न सही सैंकड़ों स्त्रियों का जीवन बर्बाद होने से रोकें जो प्रतिवर्ष शहरों के चकलों में लाई जाकर स्वेच्छा से वा मजबूरी से नारकीय जीवन व्यतीत करती हैं और जिनके सतीत्व और जीवन-विनाश पर वे व्यापारी लोग अपना जीवन व्यतीत करते हैं।

शहरों में इन चकलों के चलने का प्रमुख कारण नौकरी और मजदूरी में लगे हुए व्यक्तियों का मकानों की असुविधा के कारण अपने परिवार से पृथक् रहना भी है। अतः मालिकों को और सरकार को इन लोगों के परिवारों को रखने की सुविधा उत्पन्न करनी चाहिए। ऐसा होने से यह बुराई काबू में लाई जा सकती है। स्त्रियों के सम्मान और पारिवारिक जीवन के विनाश पर व्यापार का फलना फूलना और शासन आदि का संचालित होना नितान्त गर्हित है

समाज के अन्याय और अत्याचार के कारण भी हमारी देवियां शर्म का जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य होती हैं। जो समाज विधवा लड़कियों को निरन्तर वैधव्य और अमर्यादित दहेज आदि की कुप्रथाओं के कारण कौमार जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य करता है वह नारियों के व्यापारियों के लिए खुला बाजार खोल देने का कारण बनता है। यदि कोई लड़की या स्त्री जान में या अनजान में गलत मार्ग में पड़ जाती है अथवा जिसके विषय में झूठा अपवाद फैला दिया जाता है उसे सदैव के लिए छोड़ देने अथवा उसे परित्यक्ता समझ लेने तथा दूसरी ओर मनुष्यों के सम्बन्ध में भिन्न माप दंड अपनाए रहने से भी इस बुराई में वृद्धि होती है। मनुष्य समाज यदि अपनी इस दुष्प्रवृत्ति को छोड़कर इन देवियों के प्रति जरा भी सहानुभूति और कोमलता से काम ले तो बहुत सी देवियों का जीवन संभल सकता है। दुर्भाग्य से मध्यम वर्ग के बहुत से परिवारों में बच्चों मुख्यतया लड़कियों के साथ जो व्यवहार किया जाता है वह ऐसा नहीं होता जिससे वह सुखी और सन्तुष्ट जीवन व्यतीत कर सकें। परिवारों में लड़कियों और लड़कों के पालन-पोषण में भेद भाव का व्यवहार न हो माता पिता और संरक्षकों को यह सीखना वा सिखाया जाना चाहिए। स्वस्थ पारिवारिक जीवन का विकास भी इस बुराई को रोकने का मौलिक साधन है जिस पर हमारे समाज संशोधकों को विशेष ध्यान देना चाहिए। शाखा को सींचने के स्थान पर मूल को सींचना उत्तम है।

कानून और व्यवस्था, आर्थिक और सामाजिक सभी पहलुओं से समस्या का मुकाबला किया जाकर उसका सम्यक् हल होना आवश्यक है। यह सब कुछ होने पर भी मनोवैज्ञानिक अथवा अन्य कारणों से नारियों के कुपथगामिनी होने के कुछ मामले अवश्य हो सकते है परन्तु तब भी समाज का कर्तव्य स्पष्ट है। श्रीमती जोसेफाइन बी० टसर डाइरेक्टर "इन्टरनेशनल डिवीजन आव अमेरिकन सोशल हाईजीन एसोसियेशन" ने चंडीगढ़ में उपयुक्त सम्मेलन के अन्त में यह कहा था कि स्त्रियों का कुपथगामिनी होना एक आवश्यक बुराई है। हम इस कथन का घोर प्रतिवाद करते हैं। हमारा परम कर्तव्य है कि हम गुंडों द्वारा लड़कियों का भगाया जाना अथवा नारी व्यापारियों के द्वारा फुसलाई जाकर अपमान एवं पतन का जीवन व्यतीत करना रोकें साथ ही जो लड़कियां उनके चंगुल में फंस गई हैं उनका उद्धार करके उन्हें सम्मानित जीवन व्यतीत करने में समर्थ बनाने में कोई यत्न उठा न रखें।

निस्सन्देह इस प्रकार की स्त्रियों को संभालने का कार्य कठिन है फिर भी बड़े धैर्य और सहानुभूति से काम लेने की आवश्यकता है। विवाह की आयु पार कर लेने वाली अविवाहित लड़कियों को किसी उपयोगी काम का शिक्षण दे दिलाकर उन्हें या तो किसी काम पर लगा दिया जाय या उन्हें उनके परिवार में खपा दिया जाय अथवा उनका विवाह करा दिया जाय। इस प्रकार की नारियों की शादी का कार्य यद्यपि सरल नहीं है तथापि असंभव भी नहीं है। यदि इन नारियों की विवाह समस्या का ठीक ढंग पर हल किया जाय और संरक्षण गृहों में उनके निवासकाल में उनमें नैतिक जागरण हो जाय तो उनको अंगीकार करने वाले पुरुषों की कमी न रहे। यदि समाज की चेतना अपनी पतिता देवियोंके प्रति दायित्व के विषय में जाग्रत हो जाय तो निश्चय ही उनके उद्धार एवं संरक्षण का कार्य बहुत सुगम हो सकता है।

२६ जनवरी

२६ जनवरी अर्थात् 'गणतंत्र दिवस' राष्ट्रीय आनन्द का दिवस है। इस दिन हम जितनी खुशी मनाएं उतनी ही कम है। परन्तु प्रश्न होता है कि क्या गणतंत्र दिवस के आनन्दोत्सवों का नृत्य, गायन और सौन्दर्य प्रदर्शन का कार्यक्रम हमारे जातीय गौरव, गंभीरता, पवित्रता, सादगी एवं सौष्ठव के अनुरूप हैं? इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक है। इन कार्यक्रमों को अमीरी महफिलों और तमाशों का रूप दिया जा रहा है। वस्तुतः निर्धन भारत इस प्रकार के महंगे तमाशों का आयोजन सहन नहीं कर सकता।

वे हमारी उस विलासिता की मनोवृत्ति के द्योतक हैं जो दुर्भाग्य से हमारे शासन में व्याप्त हो रही है। ऐसी राष्ट्रीय परम्परा कदापि न पड़नी चाहिए जो हमारी गणतंत्रीय विलासिता की आदत के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत की जाने लगे। गणतंत्र राज्यों का विनाश विलासिता की आदतों से हुआ करता है।

यह दिवस आनन्दोत्सव मनाने के अतिरिक्त हमारे लिए यह आवश्यक ठहराता है कि इस दिन हम अपनी सफलताओं का मूल्यांकन करें, अपने हृदय को टटोलें और अपने को देश सेवा के लिए अर्पण करें।

जन साधारण की आर्थिक, सामाजिक और शैक्षिक स्थिति के सुधार के लिए भगीरथ प्रयत्न किया जा रहा है। इन सुधारों के प्रकार के विषय में तो मत भेद हो सकता है परन्तु उद्देश्य की ईमानदारी के विषय में सन्देह नहीं किया जा सकता। हमारी दो मुख्यतम सफलताओं की ओर सहज ही संकेत किया जा सकता है। एक तो खाद्य समस्या के सम्बन्ध में आत्म निर्भरता और दूसरी संसार के तनाव में कमी लाने और संसार की राजनीति की धारा को 'शान्ति' की दिशा में प्रेरित करने में अद्भुत योगदान जिसका श्रेय हमारे सम्मानित प्रधान मंत्री को प्राप्त है।

यह बात स्पष्ट रूप से स्वीकार करनी चाहिए कि हम पर नागरिकता, देशभक्ति राज्य और राजनीतिज्ञता के आदर्श की ठीक २ भावना अंकित नहीं हुई है। इन विषयों में हमें पूर्ण प्रशिक्षण प्राप्त होना आवश्यक है। सार्वजनिक स्थानों तक पर आपस में गाली गलौज करना यहां तक कि पशुओं को भी गाली देना, लोगों को सड़कों में पत्तियों पर से फिसलते हुए, गिरते हुए गम्भीर चोटें खाते हुए, रेल्वे स्टेशनों पर, बसों पर भीड़ में एक दूसरे को धक्का देते, लड़ाई झगड़ा, मारपीट करते हुए देखना हमारी नागरिकता और शिष्टता की भावना का खेदजनक परिचय देना है। यह बड़े खेद की बात है। इस से भी अधिक खेद की बात यह है कि राष्ट्रीय महत्व के विषयों पर हम साम्प्रदायिकता, प्रांतीयता और संकुचित जात-पांत के दृष्टिकोण से सोचते हैं जिसके फलस्वरूप राष्ट्र की उन्नति कुंठित होती एवं एकता और संगठन का पहिया पीछे की तरफ घूमता है। देशभक्ति का स्थान दर्शन, मानसिक दासता, आत्म संवर्धन, भ्रष्टाचार, अराजकता और निकृष्ट कोटि के अनुकरण की शक्तियों तथा प्रवृत्तियों से आच्छादित है। हम सादे जीवन और उच्च विचार के आदर्श से गिरकर विलास मय जीवन और अधम विचार के स्तर पर आ गए प्रतीत होते हैं। यदि तप, संयम आत्म त्याग और सादगी का वही वातावरण व्याप्त रहता जिसके दर्शन ब्रिटिश राज्य के साथ संघर्षकाल में होते थे तो मामला निकृष्टतर से निकृष्टतम न हो जाता। इसके लिए कांग्रेस पर अधिक उत्तरदायित्व है। इस खेदजनक स्थिति के मूल में भय और प्रेरणा का अभाव ही हो सकता है।

स्वतन्त्रता की प्राप्ति के पश्चात् हम इन विविध राजनैतिक दलों और राजनीतिज्ञों को राज पद और राज्याधिकार के लिए निरन्तर संघर्ष करते हुए पाते हैं जो अगली पीढ़ी के स्थान में अगले चुनाव की ओर अपने देश की सफलता के स्थान में अपनी निजी या अपनी पार्टी की सफलता की बात सोचते हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पहले भारत ने स्वस्थ राजनैतिक विचारधारा का जो श्रेय प्राप्त किया था वह तेजी के साथ लुप्त होता जा रहा है।

आओ हम अपने राज्य का इस प्रकार विकास और संगठन करें जिसमें स्वार्थियों और दुष्टों की चाल न चले अपितु जिस पर सज्जनों का अधिकार रहे। हमारा राज्य नैतिकता पर आश्रित रहे जो उसकी शक्ति की प्रबलतम आधारशिला उसकी स्थिरता और नैतिक तथा ऐहिक समृद्धि की सुनिश्चित गारण्टी होती है। हमारे देश में ऐसे राजनीतिज्ञों का अधिकाधिक प्रादुर्भाव हो जो लोभ, स्वार्थ-परता अथवा पालिसी या पार्टी से अनुप्राणित न हो, जो सत्य निष्ठ, सत्कर्मी, सत्यव्रती एवं सम्मानित हों, जो आत्म संवर्धन एवं पद और अधिकार से उपराम हों, जो अपनी आत्मा, परमात्मा और प्रजा की दृष्टि में ऊंचे उठे हुए

हों, जिनके मर जाने पर प्रजा रोए और जो धर्म की बात सदैव मानने के लिए उद्यत रहते हों।

हम देश प्रेम से ओत प्रोत हों, परमात्मा और सत्य हमारे लक्ष्य में रहे। परमात्मा करे हमारा देश एक बार फिर शानदार स्मृति चिन्ह बने—अत्याचार, निर्धनता और चरित्रहीनता का नहीं अपितु बुद्धिमत्ता, शान्ति, प्रकाश और स्वतन्त्रता का जिसे संसार आदर की दृष्टि से देखे।

चिन्ता कुछ कम हुई

आर्य जगत् को यह जान कर सन्तोष होगा कि अब श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के रोग की अवस्था में सुधार हो रहा है। श्री स्वामी जी उत्तर प्रदेश के गोरक्षा आन्दोलन सम्बन्धी दौरे पर आते समय ही अस्वस्थ थे और वहां से लौटने के पश्चात् तो वे रोग शय्या पर पड़ गये थे। तब से अब तक वे रुग्ण चले आ रहे हैं। बीच में उनके रोग की भयंकरता ने लोगों को चिन्ता में डाल दिया था। परमात्मा को शतशः धन्यवाद है कि उसकी कृपा से चिन्ता कुछ कम हो चली है। श्री स्वामी जी का जीवन आर्य समाज के लिए देन है इसलिए लोगों का चिन्तित होना स्वाभाविक था। स्वामी जी १३ बारह खम्भा रोड नई देहली में श्री स्व० लाला नारायणदत्त जी की कोठी में विराजमान हैं। इस समय श्रीयुत डा० बेरी की होम्योपैथ चिकित्सा हो रही है जो उन्हें अनुकूल पड़ी प्रतीत होती है। श्री स्वामी जी उनकी निरन्तर परिचर्या में संलग्न हैं।

परमात्मा करे श्री स्वामी जी शीघ्र ही स्वस्थ होकर पूर्ण आरोग्य लाभ करें।

श्री स्वामी आनन्द भिक्षु जी का विदेश से प्रत्यागमन

श्रीयुत स्वामी आनन्द भिक्षु सरस्वती मौरीशस, केनिया, युगन्डा और टांगानीका (ईस्ट अफ्रीका) में लगभग एक वर्ष तक वैदिक धर्म का प्रचार करके गत १६ जनवरी को भारत लौटे हैं।

श्री स्वामी जी ने इस प्रवास काल में परिवारों में १७४ यज्ञ कराये। ११३८ व्यक्तियों को यज्ञोपवीत दिये। २५०) की पुस्तकें प्रचारार्थ बांटी। ११९ व्याख्यान दिये। १२०००) (बारह हजार रुपया) सार्वदेशिक सभा की गोरक्षा निधि में भेजा। ८११) सार्वदेशिक सभा में अपनी विदेश प्रचार निधि में जमा कराये। १०० लंदन में प्रचारार्थ सहायता रूप में भेजे। श्री स्वामी जी को १५००) दक्षिणा रूप में प्राप्त हुआ। जिसमें से १२५) आर्य्य प्रतिनिधि सभा मौरीशस को तथा २३७४) भारत की आर्य्य संस्थाओं को अपनी ओर से सहायतार्थ प्रदान किये। २ मुस्लिम देवियों को वैदिक धर्म्म में दीक्षित किया। २ बार रेडियो से भाषण दिये। मौरीशस में ३ गायत्री महायज्ञ कराये। १ सज्जन को वानप्रस्थाश्रम में दीक्षित किया १००० व्यक्तियों से शराब और तम्बाकू का सेवन छुड़ाया।

इस प्रशंसनीय और आश्चर्य जनक कार्य्य के अतिरिक्त श्री स्वामी जी महाराज ने जो स्थायी महत्व का कार्य्य किया है वह यह है कि उन्होंने मौरीशस के १० युवकों को भारत में उपदेशक विद्यालय में प्रशिक्षित करने का निश्चय किया है जिसका व्यय भार वे स्वयं उठायेंगे। ४ युवक वैदिक साधनाश्रम यमुना नगर में प्रविष्ट हो चुके हैं और २ युवक शीघ्र ही आने वाले हैं।

निश्चय ही श्री स्वामी जी का यह कार्य्य उनकी आर्यसमाज के प्रति निष्ठा और लगन का द्योतक है। इस कार्य का महत्व और भी बढ़ जाता है जब हम यह देखते हैं कि उन्होंने यह कार्य्य चुपचाप बिना प्रदर्शन वा विज्ञापन के किया है।

हम उनकी इस सफल यात्रा पर स्वामीजी के प्रति अपना आभार प्रदर्शित करते हुए आशा रखते हैं कि श्री स्वामी जी महाराज अपनी अमूल्य सेवाओं से आर्य्यसमाज को उपकृत और गौरवान्वित करते रहेंगे।

आर्य समाज गोरक्षा आन्दोलन

उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री से शिष्ट मण्डल की भेंट का आयोजन

बड़े खेद के साथ उद्घोषित किया जाता है कि रोगग्रस्त होने के कारण आर्य समाज के गोरक्षा आंदोलन के सर्वाधिकारी श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द महाराज ने अपने पद से त्याग पत्र दे दिया है और गो-रक्षा समिति भंग कर दी है। १६ फर्वरी १९५५ को सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग की विशेष बैठक देहली में बुलाई गई है। अन्तरंग सभा द्वारा भावी प्रबन्ध व्यवस्था का निश्चय होने तक आंदोलन सम्बन्धी पत्र व्यवहार प्रकाशन तथा शिष्ट मंडल की व्यवस्था करने आदि का कार्य सार्वदेशिक सभा के कार्यालय को अपने हाथ में लेना पड़ा है। डाक्टर सीताराम कमेटी की सिफारिश के अनुसार उत्तर प्रदेश में सम्पूर्णतः गोवध निषेध के सिलसिले में उत्तर प्रदेश राज्य के मुख्य मन्त्री से एक शिष्ट मण्डल की शीघ्र ही भेंट कराने की व्यवस्था की जा रही है।

कविराज हरनामदास
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली।

स्व० हर विलास शारदा

परोपकारिणी सभा के भूतपूर्व मन्त्री श्री दीवान हर बिलास शारदा के निधन से परोपकारिणी सभा आर्यसमाज और अजमेर नगर एक सम्मानित व्यक्तित्व से वंचित हो गये हैं. उन्होंने परोपकारिणी सभा की चिरकाल पर्यन्त अथक सेवा की। यदि उन्हे परोपकारिणी सभा का एक दृढ़ स्तम्भ कह दिया जाय तो इसमें अत्युक्ति न होगी।

श्री शारदा जी कलम के धनी थे। ८८-८९ वर्ष की आयु हो जाने पर भी वे कुछ न कुछ लिखते ही रहते थे। वे अंग्रेजी के प्रौढ़ लेखक थे। हिन्दू सुपीरियारिटी नामक अंग्रेजी ग्रन्थ ने एक अच्छे मंजे हुए लेखक के रूप में उनकी ख्याति फैला दी थी। इस ग्रन्थ के अतिरिक्त उन्होंने राजस्थान के वीरों की स्मृति में कई छोटी २ उपादेय पुस्तकें भी लिखी थीं।

शारदा जी ने महर्षि दयानन्द का विस्तृत अंग्रेजी जीवन चरित्र लिख कर और डाम मेमोरियल वाल्यूम का उत्तम सम्पादन करके आर्य समाज के अंग्रेजी के साहित्य में उल्लेखनीय योग दिया था। उनका लिखा हुआ अंग्रेजी जीवन चरित्र भाषा और शैली की दृष्टि से ऐसा ग्रन्थ है जो विदेश की जनता के हाथों में बिना संकोच के रखा जा सकता है।

श्री शारदा जी ब्रिटिश काल में कई वर्ष तक केन्द्रीय धारा सभा के सदस्य रहे। उसी में उन्होंने "बाल विवाह निरोधक" कानून बनवाया जो शारदा ऐक्ट के नाम से प्रसिद्ध है।

इस महान् दुःख में हम शारदा परिवार के प्रति हार्दिक समवेदना प्रकट करते हुए प्रभु से दिवंगत आत्मा की सद्गति के लिए प्रार्थना करते हैं।

अध्यात्म-धारा

साध्य की प्राप्ति सुगम जब साधक उसके रहस्य को समझे

(लेखक - श्री स्वामी प्रभु आश्रित जी महाराज)

प्यारे महानुभावो ! मानव शरीर को दो चीजें चाहिये। १-नीरोगता और २-शुद्धि। शरीर नीरोगता के दो उपाय हैं। नियमित भोजन और पाचन-शक्ति। और शुद्धि के भी दो उपाय हैं। मलत्याग और सावधानी। ऐसे ही सूक्ष्म शरीर अर्थात् अन्तः करण या मन, बुद्धि, चित्त की नीरोगता और शुद्धि जरूरी है। नीरोगता से शरीर में बल और शुद्ध शरीर से समीपवर्ती लोगों को प्रसन्नता और उनका आशीर्वाद, प्यार-प्रेम प्राप्त होता है। अन्तःकरण की नीरोगता तो नियम के पालन और विज्ञान से होती है तथा शुद्धि यम के पालन और कर्म से होती है। वेद शास्त्र मर्यादा के पालन करने अथवा पूज्य देवों (बुजुर्गों की आज्ञा पालन करने के लिये मनुष्य को अपने स्वार्थ और अपने अहम् को और अपनी कामनाओं को कुरबान या त्याग करना पड़ता है। इसके लिये तप और ज्ञान की जरूरत है। कोई भी तप और त्याग बिना यथार्थ ज्ञान के सफलता के साधन नहीं बन सकते। बिना ज्ञान के तप त्याग स्थायी साधन नहीं बन सकते। मगर तप उन्हें कठिन प्रतीत होता है। उनका त्याग त्यागवृति से नहीं होता बल्कि मान, यश और प्रतिष्ठा की इच्छा से होता है। और तप मोह के कारण से नहीं हो सकता। बहुत से साधक तप करना तो बड़ा सरल समझते हैं मगर त्याग उनके लिये महाकठिन हो जाता है। उनका तप कंजूसी अथवा हठवृत्ति से होता है और त्याग आसक्ति के कारण नहीं कर सकते। सबसे पहले अगर साधन के रहस्य को समझ लिया जावे तो साध्य की प्राप्ति आसान हो जाती है।

१—परसम्पत्ति स्वसम्पत्ति,

२-स्वार्थ और अहंकार से बचो।

प्रत्येक मनुष्य के पास दो प्रकार की सम्पत्ति है। १-परसम्पत्ति २-स्वसम्पत्ति। परसम्पत्ति तो वह होती है जो परिश्रम से और अपने से गैर से प्राप्त की जावे और स्वसम्पत्ति वह सम्पत्ति है जो अपनी निज सम्पत्ति, बिना किसी परिश्रम के और गैर के बिना अपने आप प्राप्त हो। आप जानते हैं आहार की सब सामग्री और सामान, व्यवहार के लिये धन और ज्ञान दूसरों से और परिश्रम करने से मिलते हैं। विचार तथा आचार की सम्पत्ति अपने निज की पूंजी कहलाती है। परसम्पत्ति अन्त में त्यागनी पड़ती है चाहे हम खुद त्याग करें अथवा जबरदस्ती छीन ली जावे। मगर आचार और विचार वह सम्पत्ति है जिसका त्याग हम नहीं कर सकते, न ही हमसे कोई छीन सकता है। जैसे मनुष्य का बाहर का धन धान्य महल माड़ी उसकी अवस्था अर्थात् गरीबी और अमीरी को प्रकट करती है, ऐसे ही मनुष्य का आचार मनुष्य के विचारों को और उसकी दुष्टता और श्रेष्ठता को प्रकट करता है। बाहर की सम्पत्ति तो मनुष्य के जीवन काल तक के नाम को प्रकट करती है। मगर आन्तरिक सम्पत्ति मनुष्य के मरने के बाद कायम रहती है। बुद्धिमान् मनुष्य वह है जो अपने सद् विचारों और सद् आचार की सम्पत्ति को बढ़ाता है और उसका स्वामी बनता है। विचारों को स्वार्थ भ्रष्ट करता है और आचार को भ्रष्ट करता है अहंकार। आज इस संसार में स्वार्थ और अहंकार का राज्य होने से मोह और क्रोध पैदा हो गया है। मोह से कठोरता और क्रोध से घृणा संसार में फैली हुई है। इसलिये संसार सारा दुखी ही दुखी है। इसका एकमात्र उपाय है कि विचार पवित्र हों और आचार शुद्ध हो जावें। प्रभु की समीपता से और प्रभुभक्ति और विद्वानों के सत्संग से मनुष्य का जीवन बन सकता है।

प्रकृति

(२)

(मार्च ५४ के अङ्क से आगे)

अचर-विजय

लेखक—श्रीयुत पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय

जिस प्रकार चर और अचर का संग्राम इस विस्तृत तथा विशाल संसार में हो रहा है उसी प्रकार मनुष्य के मस्तिष्क के भीतर भी हो रहा है। सब से बड़ी रणस्थली तो मानव मस्तिष्क ही है जिसमें—

समवेता युयुत्सवः

अपनी अपनी वीरता नित्य प्रति दिखाया करते हैं हम इस युद्ध का पुराना वृत्तान्त लिखना नहीं चाहते। सौ दो सौ वर्ष से क्या हो रहा है उसी का उल्लेख करेंगे। एक समय था कि ब्रह्म की ही प्राप्ति समस्त मानवी क्रियाओं की परम गति थी। यद्यपि ब्रह्म के विषय में अनेक मत थे तथापि उन सब में एक बात समान थी अर्थात् सभी का ध्येय था कि ब्रह्म की प्राप्ति मनुष्य जीवन का परम उद्देश्य है। ऋग्वेद में आया है :—

तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः।

अर्थात् विद्वान् लोग उसी पर ब्रह्म के परम पद की ओर ध्यान लगाते हैं।

ब्रह्म क्या है? कहा है कि

चेतनश्चेतनानाम्

अर्थात् चरों का चर, जंगमों का जगम, चेतनों का चेतन अर्थात् जो परम चेतन है वही ब्रह्म है। उसके लिये उपनिषद् में कहा कि—

सर्वं तस्योपव्याख्यानम् (माण्डूक्योपनिषद्)

अर्थात् यह समस्त संसार उसी महा चेतन का उपव्याख्यान मात्र है।

यह वह युग था जिसमें आधुनिक विज्ञान ने पदार्पण नहीं किया था। परन्तु जब साइन्स ने उन्नति की तो उसको मनुष्य की यह प्रवृत्ति जंची नहीं। मनुष्य ने अपनी इन्द्रियों को सृष्टि की बारीक से बारीक बात की जांच में लगा दिया। जो लोग अब तक घर के कोने में बैठे माला जपा करते थे उन्होंने जगत् की प्रत्येक प्रगति का निरीक्षण किया। अब उन को न तो ऋषि मुनि नबी या पैगम्बरों की बात पर कुछ विश्वास रहा और न वह धर्म ग्रन्थों को आदर की दृष्टि से देख सकें। उनको यह ब्रह्म, धर्म तथा उपासना आदि भ्रम तथा उन्नति विरोधी प्रतीत होने लगे। चेतन क्या है और परम चेतन क्या है? केवल मनुष्य का भ्रम, मनुष्य की कल्पना। अफीमची की बड़। आत्मा क्या है, चेतन क्या है, ईश्वर क्या है? कुछ भी नहीं। जो कुछ है जड़ है अचेतन है।

धारणा तो कुछ २ किसी पुराने ही जमाने के कुछ लोगों की थी। वे कहा करते थे कि—

अग्निरुष्णो जलं शीतं समस्पर्शस्तथानिलः।
केनेदं चित्रितं तस्मात् स्वभावात् तद्व्यवस्थितिः॥

अग्नि गर्म है, जल शीतल है। वायु बीच की है। इनको किसने बनाया है? यह तो सब स्वभाव का ही चमत्कार है।

अर्थात् चेतन विशेष पदार्थ मानने की आवश्यकता नहीं।

परन्तु वह युग था मोटी मोटी बातों का। अग्नि का, जल का, वायु का। वैज्ञानिक युग में न तो अग्नि ही कोई मौलिक पदार्थ रहा, न जल, न वायु। विज्ञान ने प्रत्येक का विश्लेषण किया और ऐसी अवस्था तक पहुँचा दिया जहां अग्नि का अग्निरूप नहीं रहता, जल का जलरूप नहीं, वायु का वायु रूप नहीं। पिछले युगों में लोग पांच तत्त्वों की बनी सृष्टि पर विश्वास करते थे। 'क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा' का अब युग नहीं है। अब तो वैज्ञानिक लोग आगे

बढ़ चले हैं। जल क्या है? आक्सीजन (ओषजन) और हाइड्रोजन (उद्जन) के विशेष परिमाण (H_2O) में मिलने का नाम है। परन्तु यह तो हुई जल की व्याख्या। ओषजन और उद्जन की भी तो व्याख्या चाहिये। पहले पहल वैज्ञानिकों ने पता लगाया कि पांच तत्वों के बजाय नव्वे से अधिक तत्व हैं जिन के मिलने से यह पांच तत्व बनते और उनसे यह समस्त सृष्टि बन जाती है। परन्तु जब उन्होंने इन्हीं भिन्न २ तत्वों का आगे विश्लेषण करना आरम्भ किया तो विद्युत्-प्रेरणा (Electric charge) से अधिक ठोस कोई चीज मिली ही नहीं। यह विद्युत्-प्रेरणा क्या वस्तु है और किस प्रकार काम करती है यह एक टेढ़ी समस्या है जिसके हल करने में वैज्ञानिक मस्तिष्क रत हो रहे हैं। परन्तु जैसे पहले यह समझा जाता था कि जल को शीतलता प्रदान करने के लिये अन्य किसी वस्तु या तत्व की आवश्यकता नहीं यह तो स्वयं ही अपने स्वभाव से शीतल है इसी प्रकार आगे चलकर यह माना जाने लगा कि विद्युत् प्रेरणायें भी तो स्वभावतः ही हुआ करती हैं। इनको प्रेरक और कोई चेतन संज्ञा नहीं। कहने का तात्पर्य यह है कि पहले जो चेतन-वादी यह मानते थे कि चेतन वस्तुयें अपनी चेतनता को जड़ पदार्थों को उधार देकर उनमें चरत्व उत्पन्न कर देती हैं उनकी बात का सर्वथा खण्डन हो गया। अब कोई चेतन पदार्थ नहीं रहा। जो कुछ है सब जड़ है। आत्मा कुछ नहीं, परमात्मा कुछ नहीं। पहले लोग कहा करते थे कि:

What is mind ? No matter.
चेतनता क्या है ? अभौतिकता
What is matter ? Never mind.
भौतिकता क्या है ! चेतनता का अभाव।
परन्तु अब मानने लगे कि—
What is mind ? A child of matter.
चेतनता क्या है ? भौतिकता की प्रजा।
What is matter ? Parent of mind
भौतिकता क्या है ? चेतनता की जननी।

जब लोगों ने प्रश्न किया कि शरीर कैसे चलता है? यदि आत्मा नहीं तो शारीरिक व्यापार कैसे होते हैं। तो वैज्ञानिकों ने उत्तर दिया कि जैसे इंजन चलता है उसी प्रकार शरीर चलता है रेल के इंजन में आग और कोयला और पानी डाल देते हैं। वह चल पड़ता है। क्या इंजन की कोई विशेष आत्मा है? जहां कोयला पानी समाप्त हुआ इंजन की चाल भी बन्द हो जाती है। इसी प्रकार जहां भोजन न मिले शरीर भी जड़ हो जाता है। आग और कोयले और पानी की समाप्ति का यह अर्थ तो नहीं कि इंजन में से आत्मा निकल गया। इसी प्रकार मनुष्य या प्राणी के मरने का यह अर्थ नहीं कि कोई शरीरी था जो निकल गया और शरीर पड़ा रह गया। इसका तो केवल यह अर्थ है कि जिन तत्वों के संयोग से यह मशीन चल रही थी इसमें कोई त्रुटि आ गई और वह व्यापार बन्द हो गया।

"भस्मी भूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।"

इसी बात को एक उर्दू के कवि ने इस प्रकार वर्णन किया है—

ज़िंदगी क्या है ? अनासिर को जुमासिब तर्कीब।
मौत क्या है ? इन्हीं अजज़ा का परेशां होना॥

अर्थात् तत्वों का समन्वय ही जीवन है और उनका बिखर जाना ही मृत्यु।

यह तत्वों का समन्वय किस प्रकार हो जाता है और यह समन्वित तत्व किस प्रकार बिखर जाते हैं इसकी मीमांसा के लिये कोई स्थान नहीं था। वह सब स्वभावतः ही हो जाता होगा। चेतनता के मानने की आवश्यकता क्या है? क्या विपत्ति पड़ी है कि हम एक चर या चेतन संज्ञा मानें और एक जड़ संज्ञा मानें। फिर चेतन सत्ता का जड़ सत्ता पर आधिपत्य मानें? क्या केवल जड़ सत्ता से ही समस्त सांसारिक व्यापारों की व्याख्या नहीं हो सकती?

अच्छा आइये सांसारिक घटनाओं का वर्गीकरण करें। हम इन को चार मोटे २ वर्गों में विभाजित कर सकते हैं:—

(१) जड़-जगत् (the cosmo sphere) जिसमें वायु का बहना, आग का जलना, ओस का पड़ना, नदियों का चलना आदि सभी छोटे से छोटे और बड़े से बड़े व्यापार हैं। सूर्य और चांद की गतियां,

आकाश मंडल में तारागण का प्रकाश, भूमण्डल की आकर्षण शक्ति, विद्युत् के चमत्कार। यह सब हैं तो जड़ ही। इनमें चेतनता के कौन से चिह्न हैं?

(२) वनस्पति जगत् (Botanic sphere) जिस में घास के छोटे से छोटे पत्ते से लेकर बड़े २ विशाल वृक्षों तक सम्मिलित हैं। संसार इन पौधों से भरा पड़ा है मुट्ठी भर मिट्टी को लेने से इसमें सैकड़ों वनस्पतियों के कण मिल जाते हैं।

(३) प्राणि जगत् (Zoo sphere) इसमें कीट पतंग, मच्छर, भिनगा आदि से लगाकर सब पशु, पक्षी तथा मनुष्य भी सम्मिलित हैं।

(४) सामाजिक-जगत् (Socio-sphere) इसमें मनुष्य की वह प्रगतियां सम्मिलित हैं जो अन्य प्राणियों से मनुष्य में विशेषता उत्पन्न करती हैं। यद्यपि पशु पक्षी या कीट, पतंग, या कृमि आदि उसी प्रकार खाते तथा बढ़ते हैं जैसे मनुष्य बढ़ता है परन्तु मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। कुछ पशु एक प्रकार का समाज रखते हुए भी उस अर्थ में सामाजिक नहीं कहे जा सकते। मनुष्य नगर बसाता, व्यापार करता, संस्थायें स्थापित करता और जीवन के भिन्न भिन्न विभागों को चलाता है। इस प्रकार का कार्य चींटियों और समाज रखने वाले कीड़ों में भी नहीं पाया जाता। दूसरी, तीसरी और चौथी कोटियों को एक कोटि अर्थात् जीवन-जगत्(bio sphere भी कह सकते हैं। बहुत से लोगों के विचार में तो मनुष्य ही एक जीवधारी सत्ता है अन्य सब केवल भौतिक पदार्थों का रूपान्तर है। इस प्रकार आदि काल से लेकर अब तक इस विषय में इतने मत पाये जाते हैं:—

(१) मनुष्य तथा मनुष्येतर पदार्थ।

मनुष्य चेतन है, जीवधारी है। अन्य सब पशु, पक्षी, कीट, पतंग वृक्ष, लता, गुल्म, पत्थर, मिट्टी, जल आदि जीव रहित जड़ पदार्थ हैं। यद्यपि पशु पक्षी चलते फिरते हैं, फिर भी इनमें कोई ऐसा आत्मा नहीं है जिसका शरीरान्त के पश्चात् कोई अस्तित्व समझा जा सके, जो स्वर्ग, नरक आदि में जाता हो।

(२) मनुष्य, पशु पक्षी तथा वनस्पति यह सब सजीव हैं अन्य निर्जीव।

(३) मनुष्य, पशु पक्षी आदि सजीव हैं। वनस्पतियां तथा अन्य पदार्थ निर्जीव हैं।

(४) मनुष्य से लेकर मिट्टी पत्थर तक सभी पदार्थ जड़ हैं; निर्जीव हैं। न मनुष्य ही जीवधारी है न अन्य कोई पदार्थ। भौतिक पदार्थों का ही रूपान्तर उत्तरोत्तर उन्नति करता हुआ वनस्पति आदि बन जाता है।

(५) अचेतन कोई वस्तु है ही नहीं। सब कुछ चेतन है। आर्गनिक (org nic जीवित) और इनार्गनिक (Inorganic अजीवित) का भेद भाव ऊपरी है वास्तविक नहीं।

इस प्रकार पता चलता है कि वैज्ञानिक तथा दार्शनिक संसार में कभी तो चेतन का इतना आधिपत्य हो गया कि मनुष्य से लेकर मिट्टी पत्थर तक सभी ने चेतनत्व का आधिपत्य स्वीकार कर लिया और कोई वस्तु ऐसी नहीं रही जिसको जड़ कहा जा सके या दूसरे शब्दों में यह कहना चाहिये कि जड़त्व को संसार से काला मुंह करके सदैव के लिये निकाल दिया गया। कभी जड़' या 'अचर' ने अपनी सेना फिर इकट्ठी की और चेतन से कुछ दुर्ग जीत कर अपना झंडा फैला दिया। कभी जड़ की शक्ति इतनी बढ़ गई कि मनुष्य भी जो चेतनों का भी चेतन और चरों का भी चर समझा जाता था; चेतनत्व के आधिपत्य से अपने को निकाल कर 'जड़' की दासता स्वीकार कर बैठा।

पिछली कुछ शताब्दियों में इस संग्राम ने किस रूप को धारण किया उसका कुछ सूक्ष्म वर्णन हम यहां करते हैं। अति प्राचीन भारतीय दर्शन युग पर विचार किया जाय तो पता चलता है कि यद्यपि यह संग्राम किसी न किसी रूप में अवश्य रहा है तथापि न तो कभी सर्वथा चेतनवादियों का ऐसा आधिपत्य रहा कि कि सभी किले, सभी सेना तथा सभी प्रजा इन्हीं के हाथों आगई हो। न कभी जड़ वादियों का ऐसा प्रभाव रहा कि उन्होंने अपनी विजय-पताका सर्वत्र फैला दी हो। रहे जड़वादी भी और चेतनवादी भी, और वह

परस्पर लड़ते भी रहे। अवश्य कतिपय दुर्ग जड़वादियों के हाथ में रहे और कतिपय चेतनवादियों के। वहां से यह यथा शक्ति तथा यथा अवसर अपने अपने बाण एक दूसरे के ऊपर छोड़ते रहे। परन्तु साधारण जनता या रूपक की भाषा में सार्वजनिक शक्ति दोनों को ही मान की दृष्टिसे देखती रही। न सर्वथा 'जड़' को बहिष्कृत करने की चेष्टा की गई न सर्वथा 'चेतन' को विस्मृत किया जा सका। जो नाम को अद्वैतवादी भी हुये और जिन्होंने 'एकाधिपत्य' या 'अनन्य भक्ति' को अपना ध्येय समझा वह भी केवल नाम मात्र ही एक कैम्प से सम्बद्ध रहे। वास्तविक जीवन में तो वे भी बाह्यरूप से नहीं तो कम से कम गुप्तरीति से ही दोनों से मिलते जुलते रहे। उनके सिद्धान्तों में ऐसे भेद रहे कि बाह्य पुरुष को यह जानना कठिन प्रतीत हुआ कि यह जड़ तथा चेतन के बीच में किस स्थल पर भेद करते हैं। यूरोप और पाश्चात्य देशों में जब से दार्शनिक अथवा वैज्ञानिक नया युग आरम्भ हुआ इस संग्राम ने कुछ अधिक भीषण रूप धारण किया। इस युग में हम पूर्वी देशों में कुछ ढीलढाल पाते हैं। इन की विचार धारा कुछ शिथिल पड़ गई। इनका नैतिक अधःपतन होने के साथ साथ इनके समस्त जीवन में 'लकीर का फकीर' पन आगया—पाश्चात्य देशों में जीवन नवीनता के साथ साथ नई समस्यायें उठती रहीं। ऊहा पोह होता रहा। संग्राम की कचकच और कटाकट जारी रही। और प्रति क्षण 'विजय विजय' 'पराजय पराजय' की ध्वनि भी और प्रतिध्वनि भी सुनाई देती रही।

इस नये युग के प्रवर्तक होने का श्रेय फ्रांस के प्रसिद्ध दार्शनिक डिकार्टे (Des Cartes) को है। इस विद्वान् ने नये ढंग से सोचना आरम्भ किया कि जड़ क्या है और चेतन क्या है? जड़ और चेतन के बीच में कितनी भेदक भित्ति है, और यह दोनों मिलकर संसार में किस प्रकार से रह सकते हैं। डिकार्टे से पूर्व दर्शन का आधार दन्त कथा, धर्म-कृत्य तथा धार्मिक सिद्धान्त थे। स्वतन्त्रता के साथ दार्शनिक ऊहा पोह की शैली नहीं थी। डिकार्टे को लकीर का फकीर होने से संतोष न था। उसने कहा कि दार्शनिक भवन की नींव सुदृढ़ प्राकृतिक सिद्धान्तों पर रखनी चाहिये। डिकार्टे एक निपुण गणितज्ञ था। उसका विचार था कि गणित सब से निश्चयात्मक प्राकृतिक सिद्धान्त है। दो और दो चार होते हैं। इसमें किसको संदेह है? एक त्रिभुज की दो भुजायें मिलकर तीसरी भुजा से बड़ी होती हैं। इसमें किसको विरोध हो सकता है? यदि दार्शनिक मीमांसा में भी हम इसी गणित की शैली का अवलम्बन करें तो बहुत कुछ मार्ग स्पष्ट हो सकता है।

उस ने चेतनता से आरम्भ किया; क्योंकि मीमांसा चेतनता का पहला प्रकाश है। बिना चेतनता के मीमांसा कैसी? जो कहता है कि मैं अमुक बात की मीमांसा करना चाहता हूँ वह सब से प्रथम मान बैठता है कि मैं चेतन हूं। जड़ नहीं। क्या कोई जड़ वस्तु भी सोच सकती है? इसीलिये डिकार्टे का प्रसिद्ध प्राथमिक सिद्धान्त था कि—

कोजीटो (Cogito)=मैं विचारता हूं।

अर्गो (Ergo)=इस लिये।

सम् (Sum)=मैं हूँ।

अर्थात् मेरा विचार ही मेरे चेतन होने की सिद्धि करता है।

अंगरेजी महीनों और दिनों का नामकरण

(लेखक—श्री सेतुबन्ध 'पल्लव', २४ चन्द्रनगर, देहरादून)

ईसाई-धर्म के प्रचार से बहुत पहले यूरोप की अधिकांश जनता मूर्तिपूजक (पेगन) थी। उनकी आशाओं, आकांक्षाओं और विश्वासों पर निष्प्राण मूर्तियों का गहरा प्रभाव था। उनके प्रत्येक कार्य की नियामक ये ही मूर्तियां हुआ करती थीं। किसी भी कार्य के शुभारम्भ के लिए इन मूर्तियोंको मुख्यता दी जाती थी। आज के युग में इस विचार से बहुत कम लोग सहमत हैं। फिर भी जहां तहां इन मूर्तियों का संस्कारगत प्रभाव आज भी झलक पड़ता है। अंग्रेजी महीने, जिनसे अंग्रेजी पंचांग बनता है, इस बात के समुचित साक्षी हैं।

जनवरी

रोमन पंचांग मार्च से प्रारम्भ होता था, किन्तु अनेक सुधारों के बाद जनवरी (जैन्युअरी) वर्ष का प्रथम मास बना। यह मास 'जैनस' देवता को समर्पित किया गया, जिसको द्विमुखी माना जाता है—एक मुख पीछे की ओर देखता हुआ, दूसरा सामने की ओर। उनके बाएं हाथ में एक कुंजी बताई गई है, क्योंकि रोमन लोग यह विश्वास करते थे कि वह स्वर्ग का द्वारपाल है। उसके मन्दिर के १२ द्वार केवल युद्धकाल ही में खोले जाते थे। जैनस आदि और अन्त का देवता था। रोमन लोग जब किसी कार्य का शुभारम्भ करना चाहते या शुभ फल निकालना चाहते तब वे जैनस देवता से याचना करते थे। इसलिये साल के प्रथम मास का नाम 'जैनुअरी' उचित ही रखा गया। प्रत्येक व्यक्ति यह अनुभव करता है कि वर्ष का प्रारम्भ बीते वर्ष पर मुड़कर दृष्टिपात करने का और नवागत वर्ष की ओर उन्मुख होने का समय होता है।

फरवरी

फरवरी (फैब्रुअरी) मास का नाम फैब्रुआ' (रोमन लोगों के पवित्र भोज) से लिया गया है। फरवरी अनिश्चित महीना है। वर्षों तक वह पंचांग का अन्तिम मास था। किन्तु अब यह दूसरा मास माना जाता है। प्रत्येक चौथे वर्ष पर फरवरी के २८ दिनों में एक अतिरिक्त दिन जोड़ा जाता है। यह इस लिए होता है कि वर्ष में ३६५ दिन और ६ घंटे होते हैं। अतः प्रत्येक चार वर्षों में इन घंटों का योग २४ हो जाता है। वह समय फरवरी को दे दिया जाता है क्योंकि उसमें सबसे कम दिन होते हैं।

मार्च

युद्ध के देवता मार्स ने मार्च मास को अपना नाम दिया है। यह महीना सनसनीभरा और कोलाहलमय माना जाता था। रोमन लोगों का विश्वास था कि बलवान मार्स देवता सब कुछ कर सकता था। जब वे युद्ध के लिए जाते थे तब एक पिंजरे में मुरगी के बच्चे मार्स के सम्मान में ले जाते थे। युद्ध से पहले उनको दाने दिए जाते थे। सैनिक आतुरता से परिणाम की प्रतीक्षा करते थे। यदि पक्षी दानों का परित्याग कर देते थे तो उन्हे पराजय का भय होता था। यदि वे उन्हे ग्रहण कर लेते थे तो रोमनिवासियों को विजयी होने में कोई शंका नहीं रहती थी। मार्स रोम निवासियों के लिए भयभीत कर देनेवाला शक्तिशाली देवता था, जो टेरर' (भय) और फ्लाइट' (उड़ान) नाम के दो घोड़ों के रथ पर गति-मान होता था। मार्स के शरीर पर एक ढाल लटकती रहती थी और वह तेज बरछी को लपलपाता रहता था। जब वह अपना मस्तक ऊपर उठाता था तब कहते हैं, उसके ताज से लपटें चमकती थी।

अप्रैल

अप्रैल (एप्रिल अर्थात्) [ओपनर] को वसंत का संदेशवाहक कहा जाता है उसके नाम का उद्गम प्रकृति के विकास में पाया जाता है। इस विषय में

रोमन कहते हैं—"मोमनिया एपिरिट," जिसका अभिप्राय है कि वह सब वस्तुओं का विकास करता है, क्योंकि इस मास में पृथ्वी शरद्-कालीन निद्रा से जग कर विकास पाती है। कलियां छिटक-छिटककर पुष्पों में परिवत हो जाती है, और समस्त प्रकृति संगीतमय।

मई—

मई मास कुछ बातों में वर्ष का सबसे अधिक स्मरणीय मास माना जाता है। इसके नाम का मूल 'मेया' है। मेया एटलस की पुत्री थी, जिसके कन्धों पर समस्त विश्व का भार स्थित माना जाता है।

जून—

पल्लव और पुष्पों के मास जून का नाम जूपिटर की हठिगन किन्तु कमनीय पत्नी जूनो के नाम पर रखा गया। जूनो की कल्पना मोरों से खींचे जानेवाले रथ पर गतिमान होनेवाली रमणी के रूप में की गई है।

जुलाई—

रोम के महानतम सम्राट् जूलियस सीज़र ने अपना नाम जुलाई को दिया। यूरोप पर विजय पाने के अतिरिक्त उसने न्याय का मानदण्ड स्थापित किया तथा पंचांग में सुधार किया। उसी ने यह आज्ञा दी थी कि वर्ष का सातवां महीना जुलाई हो।

अगस्त—

अगस्त का नामकरण जूलियस सीजर के नाती अगस्त के नाम पर किया गया। उसका पूर्व प्रचलित नाम 'सावटेलियस' था। अगस्त का अर्थ कुलीन होता है। कहीं अगस्त जूलियस सीजर के जुलाई मास के अतिरिक्त दिन से डाह करने लगे, इसलिए रोम-निवासियों ने एक दिन सितम्बर से लेकर अगस्त में जोड़ दिया। अगस्त का यह दावा था कि उसने ईंटों से बना हुआ रोम पाया था। उसका राज्यकाल रोम का सुनहरी युग कहलाता है, क्योंकि उसने विद्या का प्रसार किया और युद्ध का सदा विरोध किया। इसी समय में ईसामसीह का भी जन्म हुआ था।

शेष माह—

सितम्बर [सैप्टेम्बर] लैटिन शब्द है, जिसका अर्थ आठ, सात होता है। इसी प्रकार अक्टूबर का अर्थ आठ नवम्बर का नौ तथा दिसम्बर का दस होता है। ये सभी नाम पुराने पंचांग पर आधारित हैं, जबकि वर्ष मार्च से शुरू होता था। पंचांग में सुधार होने के बाद भी उनको पूर्व क्रम से ही रहने दिया गया।

सन-डे -

महीनों की भांति अंग्रेजी दिनों पर भी रोमन देवताओं का प्रभाव झलकता है। इनमें से कुछ देवता नक्षत्रों के रूप में हैं। सृष्टि के प्रारम्भ से मनुष्य जिस आश्चर्य जनक वस्तु को देखता आ रहा है, वह है सूर्य [सन], जिसके नाम पर रविवार भी अंग्रेजी नाम सन-डे रखा गया। प्राचीन ईसाई-प्रथा के अनुसार सन-डे प्रसन्नता, विश्राम और प्रार्थना का दिन था।

मन-डे—

सूर्य से दूसरे स्थान पर मनुष्य चन्द्रमा [सोम या मून] को पूजते थे। अंग्रेजी में चन्द्रमा स्त्री है। वह डायना कहलाती है और मुख्यतः लड़के-लड़कियों की देवी है। प्राचीन काल में डायना के मन्दिर भी बनवाए गए। उसे कुलीन और सुन्दर समझा जाता था। दिन और रात की ओर संकेत करनेवाले नक्षत्रों में चन्द्रमा मुख्य है। अतः जिस डायनाके नामपर एक दिन तय किया गया—मून-डे, जिसे आज हम केवल मन-डे ही कहते हैं।

ट्यूस-डे—

टायर मार्स स्कैनडिनेविया के लोगों का देवता माना जाता था। उसका केवल एक ही हाथ दिखाया जाता है। इसकी भी एक कहानी है। एक नार्समैन से युद्ध के देवता की प्रतिष्ठा पाकर टायर ने एक भयानक भेड़िए की आत्मा को बांधने का निश्चय किया, जिसे फेनरिस कहते थे। फेनरिस ने यह कहते हुए बंधने से इन्कार कर दिया था कि कोई ऐसा वीर देवता भेजा

(शेष पृष्ठ ६५५ पर)

महात्मा अब्राहम लिंकन की पुण्य स्मृति में

[लेखक—श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक]

अमेरिका में प्रति वर्ष १२ फरवरी को महात्मा अब्राहम लिंकन का जन्म दिवस बड़े समारोह और उत्साह के साथ मनाया जाता है। इस दिन अमेरिका में स्थान २ पर उत्सव होते हैं। सार्वजनिक सभाएं होती हैं जिनमें महात्मा लिंकन के प्रति श्रद्धांजलियां प्रस्तुत की जाती हैं। लाखों नर नारी स्प्रिंग-फील्ड की यात्रा करते हैं।

महात्मा लिंकन की गणना संसार के महापुरुषों और अमेरिका के विशिष्टतम राष्ट्रपतियों में की जाती है। अमेरिका की प्रजा के हृदयों में और अमेरिका के इतिहास में उन्हें मूर्धन्य स्थान प्राप्त है। उनके नाम का स्मरण होते ही हृदय में श्रद्धा और भक्ति के भाव उमड़ आते हैं।

लिंकन प्रजातन्त्र के घोर पक्षपाती पीड़ित जन समाज के हितों की रक्षार्थ मर मिटने वाले व्यक्ति माने जाते हैं। जिन लोगों को स्प्रिंग फील्ड देखने का सौभाग्य प्राप्त होता है, उनके मानस चक्षुओं के सम्मुख उनकी वैयक्तिक श्रेष्ठता और सामाजिक पवित्रता मूर्त रूप धारण कर लेती है। वे शान्ति और स्वतन्त्रता के प्रतीक थे। शान्ति और स्वतन्त्रता के लिये लोगों की आशाएं और स्वप्न इस मूर्ति की ओर स्वतः प्रेरित हो जाते हैं।

लिंकन का जन्म १८०६ ई० में स्प्रिंग-फील्ड के एक छोटे से साधारण झोंपड़े में हुआ था। बड़े होने पर वे दिन भर खेतों में उग्र परिश्रम करने के उपरांत रात्रि को अध्ययन किया करते थे। बिना किसी अध्यापक से पढ़े अपने बल से उन्होंने अंग्रेजी भाषा पर इतना अधिकार कर लिया था कि शब्दलालित्य की दृष्टि से उनकी वाग्मिता की बराबरी न हो पाती थी। लिंकन स्वनिर्मित महान् व्यक्ति थे। अपने ही प्रयत्न से वे प्रकांड पण्डित, वकील और विचारक बने थे।

जिस युग में लिंकन का जीवन व्यतीत हुआ वह अमेरिका के इतिहास में विकास का युग था। (१८०६ से १८६५ तक) सहस्रों की संख्या में नर नारी बाहर से आकर अमेरिका में बस रहे थे। नए २ नगर अस्तित्व में आ रहे थे। अनेक नए कृषि फार्म बन रहे थे उद्योग धन्धों का पर्याप्त विस्तार हो रहा था। लिंकन अपने युग की उपज थे। अमेरिका के एक सीमा प्रदेशीय निवासी होने के कारण उनके चरित्र में साहस, आत्म विश्वास और पर दुःख कातरता कूट २ कर भर गई थी।

स्टोर कीपर, सैनिक, वकील, वक्ता और राष्ट्रपति के रूप में उनकी जीवन झांकियां इस बात की द्योतक हैं कि प्रजातन्त्र की शासन पद्धति में छोटे से छोटे व्यक्ति को भी उन्नत होने का अधिकार और अवसर प्राप्त रहता है। देश का कोई अप्रसिद्ध और अकिंचन व्यक्ति भी उच्चतम स्थिति प्राप्त कर सकता है उनका जीवन इस बात का ज्वलन्त उदाहरण है कि स्वतन्त्र देश के नागरिकों को, जिसमें नागरिकों का जीवित रहने, स्वतन्त्रता का उपभोग करने और सुख समृद्धि के लिये यत्न करने का अधिकार स्वीकृत और व्यवहृत होता है तथा बड़ी से बड़ी सुविधाएं प्राप्त रहती हैं।

इतिहास का प्रत्येक विद्यार्थी लिंकन के जीवन और उनके चरित्र की पवित्रता से परिचित है। वे कोमलता, मृदुता, शिष्टता, शिशु-प्रेम, सौजन्य, बुद्धि-मत्ता, मृदुपरिहास और दृढ़ इच्छा शक्ति के लिये प्रसिद्ध हैं। इन वैयक्तिक गुणों के अतिरिक्त दास प्रथा के उन्मूलन मानवीय समानता के दृढ़ विश्वास और गृह-युद्ध में अमेरिका की राष्ट्रीय एकता को स्थिर

रखने के सत्प्रयत्नों और सफलताओं के लिये भी अमेरिका की प्रजा लिंकन को प्रेम करती है।

दास-प्रथा के प्रश्न पर अमेरिका में गृह-युद्ध हुआ था। १८६१ १८६५) यह युद्ध अमेरिका के राष्ट्रीय जीवन के विकास की दृष्टि से बड़ा महत्वपूर्ण है। लिंकन ने इस युद्ध को प्रजातन्त्र के उग्र परीक्षण के नाम से संबोधित किया और कहा था 'हमें इस बात का निश्चय करना है कि क्या कोई राष्ट्र जिसकी प्रवृत्ति दास प्रथा को जीवित रखने और उसके लिये मर मिटने की हो, जीवित रह सकता है?" इन्होंने यह भी कहा था आधी दासों की और आधी आजादों की सरकार टिक नहीं सकती हममें यह भावना उत्पन्न होनी चाहिये कि सत्य ही बल होता है और हमें अपना कर्त्तव्य पूरा करते रहना चाहिये।"

इस गृह युद्ध से दो बातों का निर्णय हुआ था। एक तो दास प्रथा का अन्त और दूसरी राष्ट्रीय प्रभुत्व की स्थापना। अमेरिका के विभिन्न राज्य अस्थिर-स्थित रूप से बिना अधिकार के इस युद्ध में कूदे थे और युद्ध के परिणाम स्वरूप अमेरिका एक प्रबल राष्ट्र के रूप में परिणत होकर निकला था।

राष्ट्रपति लिंकन का १९ नवम्बर १८६३ का ग्रेटिस बर्ग में दिया हुआ भाषण संसार प्रसिद्ध है जो उस समय तक गृह युद्ध में काम आये हुये वीरों की राष्ट्रीय समाधि के उद्घाटन के अवसर पर दिया था। यह भाषण था तो संक्षिप्त परन्तु था बड़ा सार गर्भित और ऐतिहासिक। यह भाषण अमेरिका के प्रजातंत्रीय आदर्शों की स्पष्ट और सीधी व्याख्या का बहुमूल्य रिकार्ड है जिसका संसार की प्रत्येक भाषा में अनुवाद हो चुका है।

समय के व्यतीत होने के साथ २ यह भाषण जीवित प्राणियों के सामने एक नई स्फूर्ति और व्याख्या के साथ समुपस्थित होता है। "हमारे सामने जो महान् कार्य करने को है उस पर हम अपने को अर्पित करते हैं। इन हुतात्माओं के उत्सर्ग से हम उस महान् कार्य के लिये अधिकाधिक प्रेरणा ग्रहण करते हैं जिस पर इन्होंने अपने को मिटा दिया।"

क्या आज अमेरिका और संसार के व्यक्ति उस उद्देश्य के लिये मरमिट रहे हैं जिसका लिंकन ने इन शब्दों में समर्थन किया था "आज हम यह महान् निश्चय कर रहे हैं कि इन वीरों का उत्सर्ग व्यर्थ न जाने दिया जायगा। यह देश (अमेरिका) परमात्मा की कृपाछाया में स्वतन्त्रता के नवजीवन से अनुप्राणित होगा और प्रजा द्वारा निर्मित प्रजा के (योग्यतम्) प्रतिनिधियों द्वारा सचालित और प्रजा के लिये अभिप्रेत राज्य का अस्तित्व पृथ्वीतल से लुप्त न होगा।"

गृह युद्ध के सफल सचालन के फलस्वरूप लिंकन विजयी हुए परन्तु कटुता निःशेष न हुई। १८६५ ई० के १४ अप्रैल के दिन मित्रों के विशेष अनुरोध पर वाशिंगटन के एक थियेटर हाल में विजयोपलक्ष में आयोजित एक अभिनय को देखने के लिये गए।

अभिनय के बीच में ही बूथ नामक एक अप्रसिद्ध अभिनेता ने गोली मारकर इस महान् जीवन का अन्त कर दिया।

(पृष्ठ ६४३ का शेष)

जाना चाहिए, जो उसके मुंह में अपना हाथ डाल सके। टायर ने ऐसा किया और क्रोधावेश में फेनरिस ने उसका हाथ काटकर पृथक् कर दिया। इस प्रकार ट्यूस-डे [मंगलवार] का नाम मार्स देवता टायर पर रखा गया।

वेडनेस-डे

औडिन या वुडेन भी महान मार्स देवता माने जाते थे, जो कि 'वल्हाला' सोने और चांदी से बने महल-में रहता था। उसके कन्धों पर दो मुरगे बैठे रहते थे। जब कभी वह दुनियां की घटनाओं को जानना चाहता तब वह इन पक्षियों को ही भेजता था वे सारी दुनियां की उड़ान भरते और उसे सदेश ला देते। वेडनेस-डे [बुधवार] का नाम औडिन देवता पर रखा गया। —हिन्दुस्तान साप्ताहिक

आत्म बल की पशुबल पर और त्याग की भोग पर अपूर्व विजय

(*लेखक—इतिहास का एक विद्यार्थी*)

तक्षशिला को विजय करने के बाद ब्राह्मणसमाज के अग्रणी महामति दण्डी को बुलानेके लिये सिकन्दर ने अनसंक्रिटस को भेजा। उसने दण्डी के पास जाकर कहा, "युपिटर के पुत्र मनुष्य जाति के अधीश्वर सिकन्दर ने तुम्हें शीघ्र ले आने का आदेश दिया है। उनके पास यदि तुम आओगे तो पुरस्कार मिलेगा अन्यथा अव मानता के लिये प्राण दण्ड होगा।"

तृण शय्या पर सोये हुए महामति दण्डी के कान में जिस समय ये शब्द पड़े, उस समय उन्होंने उसी तरह लेटे २ हंसकर कहा, "महामहिमान्वित परमेश्वर द्वारा जगत् में किसी का अनिष्ट नहीं होता। मृत्यु के मुख में जाने पर भी वे फिर सबको जीवन प्रदान कर पुनर्जीवित कर दिया करते हैं। वे कभी हत्या को प्रश्रय नहीं देते और न युद्ध ही चलाते हैं। तुम्हारे सिकन्दर परमेश्वर नहीं हैं। उन्हें भी एक न एक दिन मरना ही पड़ेगा। जो इस समय तीव्र वहा(Tyber sbos) नदी तक न जा सके, जो अब तक गाधि (Gades—काम्य कुब्ज राज्य) की सीमा तक न पहुँच सके, वे किस तरह विश्व ब्रह्माण्ड के अधीश्वर बनने की कल्पना करते हैं। जो अब तक यह न जान सके कि आकाश मण्डल के सूर्यदेव किस पथ से गमनागमन करते हैं और जिनका नाम अबतक कई लाख मनुष्य नहीं जानते, वे किस साहस पर अपने को सब मनुष्यों का राजा कहते हैं? इतने दिनों के युद्ध से उनकी तृप्ति न हुई हो तो उनसे कहना कि वे और भी नद-नदी उल्लंघन कर आगे बढ़ें। वहां उन्हें ऐसी भूमि प्राप्त होगी कि उनकी आकांक्षा पूर्ण हो जायगी सिकन्दर ने मुझे जिस पुरस्कार का प्रलोभन दिया है, उसका मेरे लिए कुछ भी मूल्य नहीं है। मेरी कुटी और शय्या के लिए पत्ते मौजूद हैं, वृक्ष के फल मूल से मेरी क्षुधा और इस अञ्जलि द्वारा जल पान कर पिपासा निवृत्त हो जाती है। जो श्रम लब्ध द्रव्य संग्रह करते हैं, वे दुःख में पड़ते हैं। वह द्रव्य उनके दुःख का कारण बन जाता है। मुझे उन पदार्थों की इच्छा नहीं, बल्कि उनसे घृणा करता हूँ। स्वर्णप्राप्ति की आकांक्षा उत्पन्न होते ही मुझे अच्छी तरह सुख की नींद न आयेगी। जननी जिस तरह सन्तान का पालन पोषण करती है, पृथ्वी भी उसी तरह मेरे समस्त अभावों को दूर कर दिया करती है। जहां इच्छा होती है वहीं मैं जाता हूं कमी को दूर करने केलिए कहीं नहीं जाता। तुम्हारे सिकन्दर मेरा मस्तक काट लेने पर भी मेरी आत्मा को अपने वश में नहीं ले जा सकते। सिकन्दर मेरे छिन्न मस्तक पर अधिकार जमा सकते हैं परन्तु मनुष्य जिस तरह जीर्ण-वस्त्र परित्याग कर देता है, उसी तरह मेरी आत्मा पृथ्वी पर उत्पन्न हुआ यह शरीर पृथ्वी पर त्याग कर जो इस शरीर का रचने वाला है, उसी ईश्वर के पास चला जायगा। पृथ्वी पर आकर हम लोग उसके आज्ञानुरूप चलते हैं या नहीं? इसी बात की परीक्षा के लिए उसने हम लोगों को पृथ्वी पर भेजा है। जीवन का अन्त होने पर वह हम लोगों के सब कार्यों का विचार किया करता है। पीड़ितों का आर्तनाद और दीर्घ निश्वास कष्ट देने वालों को शान्ति देता है। मैं जब इस विचारक के पास खड़ा होकर अपना विचार होता देखूंगा, तब शान्ति प्राप्त करूंगा।

तुम जाकर अपने सिकन्दर से कहो कि जिन्हें स्वर्ण की आकांक्षा हो, जो सम्पत्ति लाभ के लिये अ-कार्य को कार्य समझ कर डालते हों और जो सदा मृत्यु भय से विह्वल रहते हों, वे ही तुम्हारे इस भय प्रदर्शन से डर जायेंगे। ब्राह्मणों को सोने पर प्रीति नहीं होती, इसलिये मृत्युभय उन्हें कभी व्याकुल नहीं

(शेष पृष्ठ ६५४ पर)

धार्मिक शिक्षा और उसकी आवश्यकता

(लेखक—प्रो० पंडित शिवकंठ लाल जी 'सरस' एम० ए०)

स्वतन्त्रता के स्वर्णिम प्रभात में जिन मधुर स्वप्नों की कल्पना की गई, वह सत्य न हो सकी। भारतीय जीवन आशा और निराशा के झूले में झूलने लगा। चारों ओर आपत्तियों के बादल छा गये। न जाने कितनी ही जटिल समस्यायें जीवन को झकझोर देने के लिए उत्पन्न हो गयी। भारत में ही नहीं सारे विश्व में अशांति असंतोष और दुःख की बाढ़ सी आ गई है। विश्वप्रांगण में पशुता के नग्न नृत्य को देख कर मानवता कराह रही है। हमारे देश की दशा प्रतिदिन शोचनीय होती जा रही है। विषमता का विष रोग सारे भारतीय समाज को निस्तेज और निष्प्राण किये डालता है। प्रत्येक क्षेत्र में भ्रष्टाचार, पक्षपात, गुटबन्दी तथा नोच खसोट खुल कर जनता का शोषण कर रहे हैं। भारत जैसे देश में इस प्रकार का पतन वास्तव में बड़ी लज्जा और दुःख की बात है। प्रश्न उठता है कि हमारा ऐसा पतन क्यों हुआ ?

पतन का कारण स्पष्ट है। नैतिक पतन के कारण हमारी यह दशा हुई। नैतिक उत्थान के साथ भारत उन्नति के शिखर पर चढ़ा और नैतिक पतन के साथ भारत अवनति के गर्त में गिरा। सारी विषमता, असन्तोष तथा भ्रष्टाचार का मूल कारण नैतिकता का अभाव है। भौतिकता का प्रचार भी हमारे मार्ग मे बाधक सिद्ध हुआ। आध्यात्मिकता का अभाव हमारे जीवन का बहुत बड़ा अभाव है। सच्चा सुख और आनन्द बिना आध्यात्मिकता के प्राप्त नहीं हो सकता। मानवता को भी भुला दिया गया। विश्व बन्धुत्व की भावना कहीं दीख नहीं पड़ती। विषय वासना तथा व्यक्तिगत स्वार्थों की ओर जन साधारण का झुकाव हो रहा है। अत. हमें विचार करना है कि वह कौनसा उपाय है जिसके द्वारा हम पतन के गर्त से उठ कर उत्थान के शिखर पर पहुँचें और सारे विश्व को एक अमर सन्देश दे सकें। किस प्रकार ज्ञान की अखंड ज्योति लेकर सारे विश्वमें प्रकाश करसकें। किस प्रकार जर्जर मानवता में फिर एक बार शक्ति भर सकें। इस का एक मात्र उपाय धर्म है। धर्म के द्वारा ही मानवता की यथार्थ उन्नति हो सकती है तथा दैनिक जीवन में इसके अनुसार कार्य करने के लिए यह परम आवश्यक है कि धार्मिक शिक्षा का प्रबन्ध सभी विद्यार्थियों के लिये अनिवार्य किया जाय। जिस देश में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में धर्म का स्थान सर्वोच्च था, प्रत्येक वस्तु और क्रिया का धर्म के साथ सम्बन्ध था, उसी देश में विद्या मन्दिरों के कपाट धार्मिक शिक्षा के लिये बन्द कर दिये गये। इसीके फलस्वरूप समाज का नैतिक पतन हो रहा है। वास्तव में धर्महीन शिक्षा व्यक्ति और राष्ट्र दोनों के लिए भयंकर है। शिक्षा का कार्य शरीर को सशक्त, मस्तिष्क को उर्वर, मनको पवित्र बनाना तथा आत्मा का विकास करना है, पर इसके अभाव में भारत की शिक्षा जीवन को उच्च बनाने में असमर्थ सी हो गई। इसी से हमारा आदर्श गिरा, चरित्र का पतन हुआ तथा इच्छा शक्ति का ह्रास हुआ।

धार्मिक शिक्षा देने के तीन प्रकारके विरोधी हैं—एक दल वह जो धर्म को बिलकुल मानता ही नहीं, अतः ऐसे अधार्मिक लोगों के विषय में कहना ही व्यर्थ है। दूसरा वह दल जो सेक्यूलर स्टेट की बात कर अपनी नासमझी का परिचय देता है। तीसरे वे लोग जो धार्मिक शिक्षा तो चाहते हैं पर उसे विद्यामन्दिरों से अलग रखना चाहते हैं। अत: दो प्रकार के लोगों पर विचार करना है।

सेक्यूलर स्टेट की आड़ में लोग धार्मिकता पर प्रहार करते हैं। अतः हमें सेक्यूलर स्टेट को भली प्रकार समझ लेना है।

In all public and political matters the state will not ally itself to any particular religion and will not give preference to any group or individual on religious grounds But it does not mean it is anti-religious.

अर्थात् सभी सार्वजनिक तथा राजनीतिक मामलों में राज्य किसी विशेष धर्म से अपना सम्बन्ध नहीं जोड़ेगा तथा धार्मिक आधार पर किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तिसमूह को कोई विशेषता नहीं देगा, पर इसका यह अर्थ नहीं कि राज्य अधार्मिक होगा। अतः सेक्यूलर राज्य में धार्मिक शिक्षा न तो गैर कानूनी ही है और न राष्ट्रीयता के ही विरुद्ध है। आजकल धर्म से भागने का प्रयत्न हो रहा है। धर्म का नाम लेते ही लोग जबान पकड़ने लगते हैं। धर्म पर अत्याचार तथा रक्तपात के दोष मढ़े जाते हैं पर ये सब बातें तर्कहीन तथा नासमझी की हैं और धर्मको न समझने के कारण ही कही जाती हैं। यह कटुता तथा भेद भाव पैदा करने वाली हठवादिता है, धार्मिकता नहीं। इस विषय में एक विद्वान् का मत प्रकट करना उचित होगा। मजहब, सम्प्रदाय तथा रिलीजन की बातों पर विवाद और भेद हो सकता है। धर्म तो नित्य है वह अनित्य जीवन से कहीं अधिक मूल्यवान् है।

यतोऽभ्युदयनिः श्रेयससिद्धिः स धर्मः। जिससे इस लोक में अभ्युदय–सर्वांगीण उन्नति हो और मानव जीवन के लक्ष्य में निःश्रेयस मोक्ष की प्राप्ति हो, वही धर्म है। ऐसे धर्म से तो सभी का कल्याण होता है। धर्म कहता है, स्वयं रहो और दूसरों को भी रहने दो। गोस्वामी तुलसीदास जी के अनुसारः–

पर हित सरिस धरम नहिं भाई।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई॥

आदि बातें धर्म के मौलिक तत्वों में समाविष्ट हैं। धर्म के सामान्य लक्षण बड़े उच्च कोटि के हैं।

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

अर्थात् धैर्य, क्षमा, मनका निग्रह, चोरी न करना, बाहर भीतर की पवित्रता, इन्द्रियों का संयम, सात्विक बुद्धि, आध्यात्मविद्या, यथार्थ भाषण और क्रोध न करना—ये धर्म के दस लक्षण हैं। ऐसे उच्चकोटि के लक्षण वाले धर्म को हानिप्रद समझना सिवाय पागलपन के और क्या हो सकता है? वेद, गीता और उपनिषद् अनन्त काल से प्रकाश देते आ रहे हैं इन ग्रन्थों की महत्ता से विदेशी विद्वान् चकित हैं, पर आश्चर्य की बात है कि इन्हीं के नाम से भारतवासी आगबबूला हो जाते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि मजहब के नाम पर संसार में रक्तपात हुए, पर हमें ध्यान रखना चाहिए कि मजहब और मतवाद का नाम धर्म नहीं है। धर्म तो वह वस्तु है जिसके बिना मनुष्य पशु बन जाता है (धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः) धार्मिक व्यक्तियों से ही प्राणियों में सद्भावना भर सकती और विश्व का कल्याण हो सकता है। सर राधाकृष्णन् के अनुसार सच्चा धार्मिक व्यक्ति एक अद्भुत क्रांतिकारी होता है। वह सारे दुषणों को क्षण में नष्ट भ्रष्ट करके सद्भावना और शान्ति की स्थापना करता है। संसार की सर्वश्रेष्ठ वस्तु धर्मसे घृणा करना अपना, समाज का और राष्ट्र का अहित करना है।

तीसरे प्रकार के लोग धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था विद्यामन्दिरों में नहीं चाहते हैं। संसार के सभी प्रगतिशील देशों ने माना है कि जो शिक्षा धर्म के आधार पर प्रतिष्ठित नहीं वह मूर्खता से भी निकृष्ट है। शिक्षा सदैव उन वस्तुओं की प्राप्ति का माध्यम रही है जिनकी मनुष्य को बड़ी आवश्यकता है। शक्ति, ज्ञान, पवित्रता, चातुर्य तथा कला आदि प्राप्त करने का साधन शिक्षा ही रही। अतः हमें नैतिकता प्राप्त करने के लिये विद्या के मन्दिर का सहारा लेना पड़ेगा। कुछ लोगों का मत है कि धार्मिक शिक्षा घर पर ही जावे पर राजनीतिक तथा सामाजिक पराधीनता के कारण सभी घर ऐसे नहीं रह गये जो आवश्यकता की पूर्ति कर सकें। घर में शिक्षा की व्यवस्था भली-भांति चल सके ऐसा सम्भव नहीं। अतः विद्यालयों में ही प्रबन्ध करना होगा।

कुछ लोग धार्मिक शिक्षा के लिए अलग से स्कूल खुलवाना चाहते हैं। उनके मतानुसार धार्मिक शिक्षा के स्कूलों का सम्बन्ध दूसरे स्कूलों में नहीं होना चाहिए पर यह ढंग भी ठीक नहीं। विद्या मन्दिर में धर्म को स्थान न देना मानव समाज का बहुत बड़ा अहित करना है। आदर्श जीवन का निर्माण करने के लिये ही धार्मिक शिक्षा दी जाती है। जिस वस्तु का जीवन से इतना गहरा सम्बन्ध हो उसे दूर रखना किसी भी दशा में हितकर नहीं हो सकता। हमारी वर्तमान शिक्षा पद्धति कृत्रिम है। उसमें जीवन की समस्याओं का समाधान नहीं है। यही कारण है कि स्कूल का जीवन अधिक गम्भीरता से नहीं देखा जाता। वहां जीवन की कोई तैयारी नहीं हो पाती। वहां शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक विकास नहीं होता। इन सारी कमियोंको पूरा करने केलिए धार्मिक शिक्षा होना परम आवश्यक है।

अब हमें विचार करना है कि किस प्रकार की शिक्षा किस उद्देश्यको लेकर दी जाये। शिक्षाका ध्येय आदर्श जीवन की तैयारी होना चाहिये। विद्यार्थियों में नैतिकता तथा नागरिकता की सच्ची भावना भरने के लिए उनका उच्चकोटि का चरित्र निर्माण करने के लिए धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था अवश्य होनी चाहिए धार्मिक शिक्षा इस प्रकार दी जाय जिसमें आत्मा का विकास हो, जीवन का उत्थान हो, विश्व का कल्याण हो। विद्यालयों का जीवन स्वाभाविक तथा उन्नतिशील होना चाहिये। जीवन से शिक्षा का सीधा संबंध होना चाहिए। जीवन में जो कुछ सुन्दर है, सत्य है उसी की कामना करना सिखाना धार्मिक शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। जीवन में धर्म के स्थान को डाइनेमिक दृष्टि से देखना चाहिए। अपना भला और संसार का भला करने की निःस्वार्थ भावना होनी चाहिए। प्राणियों से प्रेम करना, उनमें भगवान् की झांकी देखना उनका स्वभाव होना चाहिए। धार्मिक शिक्षा पाने वाले को यह नहीं सोचना चाहिए कि मैं जीवन से क्या ले सकता हूँ वरन् यह सोचना चाहिए कि मैं जीवन को क्या दे सकता हूं। सच्ची धार्मिक शिक्षा द्वारा ऐसे स्वस्थ विचार विद्यार्थियों में भरे जायें कि वे हठवादिता के विषाक्त वातावरण को नष्टभ्रष्ट करने में सफल सिद्ध हों।

धार्मिक शिक्षा के साथ २ हमें अपनी नवजात स्वतन्त्रता का भी ध्यान रखना है। प्रजातन्त्र राज्य को शक्तिशाली बनाने के लिए भी धार्मिक शिक्षा की बड़ी आवश्यकता है। पूर्ण प्रजातन्त्र राज्य उच्च नैतिक स्तर की रक्षा और उन्नति के बिना स्थापित नहीं हो सकता। धार्मिक शिक्षा बड़ी सहायक सिद्ध होती है। धर्म हमें असत्य से सत्य की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर, मृत्यु से अमरत्व की ओर ले जाता है। धर्म की शिक्षा का कार्य प्रत्येक नागरिक को देश, समाज और संसार के प्रति ईमानदार बनाने का है। इसके बिना प्रजातन्त्र राज्य के स्वप्न देखना व्यर्थ है। प्रजातन्त्र में बहुमत की प्रधानता है और बहुमत यदि अधार्मिकों का होगा तो प्रजातन्त्र सर्वथा दोषमय, दुःखमय, अशान्तिमय और जन अहितकारी ही होगा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि धार्मिक शिक्षा की भारत को बड़ी आवश्यकता है। इसके बिना सुख, सन्तोष और शान्ति की प्राप्ति कठिन ही नहीं वरन् असम्भव है। आज आवश्यकता है मानव निर्माण की। मानव निर्माण का अर्थ है मानवता के निर्माण का प्रयत्न, पर ऐसा धर्म के बिना असम्भव है। हमारे समाज की दशा कानून या नियन्त्रण से नहीं सुधर सकती। उसकी शुद्धि इस प्रकार सम्भव नहीं है। उच्चतम समाजनिर्माण तो उच्चतम चरित्र और नैतिक साहस के ही बल पर सम्भव है और इसके लिये धर्म का आश्रय लेना ही पड़ेगा। अतः देश, समाज तथा संसार के कल्याण के लिए धार्मिक शिक्षा का सभी विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य होना परम आवश्यक है। अन्त में हम कामना करते है—

हृदय में धर्मका निवास होने से चरित्र में सौन्दर्य का विकास होगा।

चरित्र में सौन्दर्य का निवास होने से घर में सामंजस्य का वास होगा।

घर में सामंजस्य का निवास होने से विश्व में शान्ति का प्रकाश होगा।

अखिल भारतीय आकाश वाणी से वार्त्तालाप

मैं क्या न कर सका (१)

श्रीयुत प० इन्द्र विद्या वाचस्पति

मैं स्वभाव से घोर आशावादी हूँ। यदि किसी वस्तु या घटना के दो पहलू हों तो मेरी दृष्टि पहले प्रायः उसके प्रकाश युक्त पहलू पर जाती है। मेरे कुछ बन्धुओं की सम्मति है कि इस स्वभाव के कारण मैं सुलभ सन्तोषी हो गया हूं, और समझने लगा हूँ कि मैं जो कुछ हूँ, या और लोग जो कुछ हैं सब ठीक है। इस स्वभाव का ही यह फल हुआ कि जब मैं इस प्रश्न पर विचार करने लगा कि मैं क्या नहीं कर सका तो चिरकाल तक मुझे इस प्रश्न का उत्तर न मिला। यदि १९४७ में अंग्रेज भारत को छोड़कर न चले गये होते तो मैं प्रस्तुत प्रश्न का यह उत्तर देता कि मैं स्वतन्त्र देश का नागरिक न बन सका परन्तु अब तो यह उत्तर भी नहीं दे सकता। जो बात एक दिन असम्भव प्रतीत होती थी, वह अवश्य सत्य बन गई। देश स्वतन्त्र हो गया।

अन्त में प्रस्तुत प्रश्न का उत्तर लेने के लिए मैंने अपने अब तक के जीवन पर एक गहरी दृष्टि डाली और अपनी अन्य इच्छाओं का स्मरण किया। 'मनोरथानामगतिर्न विद्यते।' मनुष्य के हृदय में और भी अनेक इच्छायें उठती रहती हैं। वह सोचता है, मैं चक्रवर्ती राजा बन जाऊं या किसी प्रजातन्त्र का राष्ट्रपति बन जाऊं। उसकी यह इच्छा भी हो सकती है कि मैं संसार प्रसिद्ध कवि या लेखक बनकर नोबल पुरस्कार का विजेता बन जाऊं। यह भी न सही, तो कोई ऐसा ग्रन्थ लिख सकूं, जो चिरकाल तक जीवित रहे। ये सब मानवीय अभिलाषायें हैं। यह पूरी हुई या नहीं, यह तभी कहा जा सकता है जब मनुष्य अपनी यात्रा के अन्तिम पड़ाव पर पहुँच गया हो। आशावादी व्यक्ति का अन्तिम पड़ाव तब तक नहीं आता, जब तक वह सामने आकर ही न खड़ा हो जाय। मेरी भी यही दशा है। आज जीवन के मध्य में यह मानने को जी नहीं चाहता कि मैं क्या नहीं कर सका? नहीं कर सका का अर्थ यह होगा कि क्रिया समाप्त हो गई। क्रिया अभी चल रही है। इस प्रकार पहले तो मुझे यह प्रतीत होने लगा कि मैं प्रस्तुत विषय पर कुछ कह ही नहीं सकूंगा।

जब मैंने अपने अब तक के जीवन पर गहरी दृष्टि डाली, तो उससे मुझे अनुभव हुआ कि सचमुच मैं अब तक एक प्रयत्न में सफल नहीं हो सका, और वह प्रयत्न यह था कि मैं सर्वप्रिय हो जाऊं—मुझसे कोई नाराज न हो, मुझे लोग अजात शत्रु समझें। शिक्षा समाप्त करके, सार्वजनिक जीवन में आने के समय मेरे मन में यह दृढ़ निश्चय था कि यदि कोई मनुष्य सब से प्रीति पूर्वक बर्ताव करे, किसी की बढ़ती से ईर्ष्या न करें, और केवल अपने कर्तव्य का पालन करता जाय तो उसकी बात सब को अच्छी लगनी चाहिये। वह किसी का शत्रु क्यों बने, और कोई उसे अपना शत्रु क्यों समझे? मैंने १९१२ मे बाह्य जगत् में प्रवेश किया, और अब १९५४ है, इन ४२ वर्षों के अनुभव के आधार पर आज मेरा यह मत है कि मै सब को प्रसन्न रखने या सन्तुष्ट करने में समर्थ नहीं हो सका। कभी कभी तो ऐसा हुआ कि मैंने असन्तुष्टों के असन्तोष को दूर करने का जितना यत्न किया, दलदल में उतना ही अधिक फंसता गया। अन्त मे अब कुछ वर्षों से मुझे यह मान लेना पड़ा है कि सब को एक समान प्रसन्न और सन्तुष्ट रखना मेरे बस का काम नहीं। मुझे यह मान लेने में कोई संकोच नहीं है कि सर्वप्रिय बनने या अजात शत्रु कहलाने में मुझे पूरी असफलता हुई है? यह भाव मेरे मन मे इतना गहरा हो गया है कि अब "अजात

आल इंडिया रेडियो के सौजन्य से

शत्रु" इस शब्द पर मेरा विश्वास ही नहीं रहा। मेरे मन में उस महानुभाव के दर्शनों की अभिलाषा प्रबल हो उठी है, जो अपने "अजात शत्रु" होने के दावे को सिद्ध कर सके।

जिन अनुभवों ने मुझे सर्वप्रिय होने की अपनी अभिलाषा के अपूर्ण होने का निश्चय दिलाया है, वह अनगिनत हैं। सब याद भी नहीं हैं। जो याद हैं उनमें से कुछ उदाहरण सुनियेः—

पहला उदाहरण उस समय का है जब मैं शिक्षक था। मैं महाविद्यालय में उपाध्याय का काम करता था। छात्रों की परीक्षाओं का परिणाम उपाध्यायों की समिति में पेश होता था। उत्तीर्ण अनुत्तीर्ण का निश्चय वहीं होता था। जो छात्र स्पष्ट रूप से पास या फेल हो जाते थे, उन पर तो कोई विवाद न होता था, परन्तु यदि किसी छात्र को उत्तीर्ण होने के लिए आवश्यक अंकों से चार पांच अंक कम आये, तब यह प्रश्न सामने आता था कि उसे वह अंक दिये जायं या नहीं। मेरा मत यह था कि केवल चार-पांच नम्बरों के लिए किसी छात्र का एक वर्ष खराब करना ठीक नहीं है। चुपचाप उसे अंक देकर पास कर देना चाहिये। मैं समझता था कि मेरा यह मत सर्वथा निष्पाप है। एक बालक का साल बच जाता है, और किसी की जेब खाली नहीं होती। परन्तु मुझे यह देख कर आश्चर्य हुआ कि मेरे कुछ साथी मुझ से सर्वथा असहमत थे। वह समझते थे कि कृपांक देने से शिक्षणालय का शिक्षा स्तर नीचा होजाता है। जब सभा में परीक्षा परिणाम पेश होता तभी घोर विवाद होता। मैं अपनी बात पर अड़ा रहता, और वह अपनी बात पर, अन्त में कई बार केवल एक मत से कृपांक दिलाना पड़ा। यों देखने में इसमें किसी के रुष्ट होने की बात नहीं थी, परन्तु मैंने देखा कि वह महानुभाव जो अंक देने के विरोधी थे, मुझ से अत्यन्त रुष्ट हो गये, मुझे संस्था के लिए भयावह समझने लगे। काटे अंकों में उदारता दिखाने पर हर दिल अजीजी मिलना तो एक ओर रहा, कई मित्र विरोधी बन गये।

अध्यापकी छोड़कर दिल्ली आ गया और पत्रकारी के अपने जन्मसिद्ध पेशे में पड़ गया। पत्रकारिता में मैं लगभग ११ वर्षों तक रहा। इन ११ वर्षों में मैंने इतना अनुभव प्राप्त किया, जितना कोई अपत्रकार व्यक्ति ११ जन्मों में प्राप्त करे। कभी कभी एक-एक दिन का अनुभव वर्षों के बराबर हो जाता था। क्योंकि उन दिनों के पत्रकार को बाहर की दुनिया से सीधा वास्ता रखना पड़ता था। मालिक, सम्पादक, जनरल मैनेजर और कभी कभी स्थानीय संवाददाता का काम उसी को करना पड़ता था। फलतः पत्र के पाप-पुण्य का उत्तरदाता वही था। अब इसे आप शक्ति कहें या मुसीबत, यह आपकी इच्छा है।

उस पेशे में आकर भी मैंने यही लक्ष्य बनाया कि जहां तक बन पड़े किसी व्यक्ति को ऐसा अवसर न दिया जाय कि वह मुझसे नाराज हो। "भद्रं भद्रमिति ब्रूयात्" सब के लिए भला ही भला कहा जाय तो कोई क्यों असन्तुष्ट हो?

इस प्रयत्न में असफलता होने का एक दृष्टान्त सुनिये। एक बार एक मिल के कुछ मजदूर अपनी शिकायतों का एक चिट्ठा लेकर मेरे पास आये, और उसे प्रकाशित करने का आग्रह किया। चिट्ठे में शिकायतों के अतिरिक्त कोई विशेष कड़वी बात न थी। वह पत्र में छप गया। उस दिन रात के ९ बजे मिल के मैनेजर ने मुझ से टेलीफून पर कहा कि वह लेख मिल के मालिक के लिए अपमानजनक है, उसे आप वापिस ले लें। मैंने उत्तर दिया कि लेख को वापिस लेने का कोई अर्थ नहीं है, आप उसका प्रतिवाद कर दीजिये, वह पत्र में प्रकाशित कर दिया जायगा। यदि आप मुझ से ही उसका प्रतिवाद कराना चाहते हैं, तो मुझे छानबीन करने का अवसर दीजिये जैसा परिणाम होगा, सूचित कर दूंगा। कुछ समय बाद मैनेजर महोदय ने मुझ से कहा कि वह पत्र आपने छापा है, आपको ही वापिस लेना पड़ेगा। यदि न लोगे तो पत्र पर मान हानि का दावा किया जायगा। मैंने वही उत्तर दिया कि यदि आप मुझ से कुछ लिखाना चाहते हैं, तो वह तहकीकात करने के

बाद ही हो सकेगा। वह इस बात से सन्तुष्ट न हुए और रात को ही फाइल एक बड़े वकील के पास भेज दी। वकील ने फाइल वापिस करते हुए यह सलाह दी कि नालिश करने से पत्र को नाम और मित्र को हानि होगी, क्योंकि ऐसे मामलों में तलवार की धार सदा अभियोक्ता पर पड़ती है। यों आधी रात के समय मामला तो समाप्त हो गया, पर उनकी नाराजगी दूर न हुई। उसके पश्चात् वह अनेक रूपों में प्रकट होती रही।

इधर मजदूर चाहते थे कि मैं उनकी मांगों के समर्थन में अग्रलेख लिखूं। मैंने उन्हें भी वही उत्तर दिया कि यदि तुम मुझ से कुछ लिखाना चाहते हो तो मुझे छानबीन का अवसर दो। इस उत्तर पर वह भी असन्तुष्ट हो गये, और वर्षों तक मुझे और मेरे पत्र को सरमायेदारों का मददगार कहकर कोसते रहे। देखिये, मैंने दोनों को युक्तिसंगत उत्तर देकर सन्तुष्ट करने का यत्न किया, और दोनों रुष्ट हो गये।

एक और उदाहरण लीजिये वह मेरे सार्वजनिक जीवन का है। आम तौर पर मैं चुनाव के झगड़े में पड़ने से बचता हूं। चुनाव की खेंचातानी मेरे स्वभाव के विरुद्ध है। एक बार दिल्ली में एक महती संस्था के वार्षिक चुनाव के अवसर पर मेरे कुछ मित्रों ने मुझे खड़े होने की प्रेरणा की। मैं राजी न हुआ। उस वर्ष चुनाव में दो दलों की तनातनी हो गई थी। एक दल कुछ पुराने कार्यकर्ताओं का था, और दूसरा दल कुछ नौजवानों का। दोनों ओर से चुनाव युद्ध के सब दाव पेंच बर्ते जाने लगे। व्याख्यानों के बमों और पोस्टरों के छर्रों से आकाश धुआंधार हो गया। नौजवान पार्टी ने अपने उम्मीदवारों की जो सूची बनाई उसमें मेरा नाम भी रख दिया। जब वह सूची पुराने कार्यकर्ताओं के नेता के पास पहुँची तो उसने कहा—"इस सूची में इन्द्र का भी नाम है। मुझे पहले ही मालूम था कि वह इस पार्टी का लीडर है। वह खुल कर सामने क्यों नहीं आता? सामने आ जाय तो कुछ फैसला होने की आशा हो सकती है।"

जब यह शब्द मेरे कानों में पहुंचे तो मैंने सोचा कि यदि फैसला होने की सम्भावना हो तो मेरे यह नाम लेने में क्या हर्ज है कि मैं भी चुनाव में उम्मीदवार हूं। यदि इससे उनका सन्तोष होता हो तो क्यों न मैं चुनाव में खड़ा होना स्वीकार कर लूं। मैंने स्वीकृति दे दी। परिणाम बिलकुल उलटा हुआ। सन्तोष होना तो एक ओर रहा, वह मुझसे परम असन्तुष्ट हो गये, क्योंकि उनकी चुनाव की कठिनाई बढ़ गई। फिर वह जीवन भर मुझ से न बोले।

एक दृष्टान्त और लीजिये। मेरा ऐसा विश्वास है कि मनुष्य के लिये अपने देश और धर्म की समान रूप से सेवा करना सम्भव है। दोनों की सेवा करने में कोई परस्पर विरोध नहीं। मेरे सार्वजनिक जीवन के बहुत से साथी मेरे इस विचार से सहमत नहीं। उनसे सदा निवेदन करता हूं कि जब मुझे इन दोनों में कोई विरोध नहीं दिखाई देता तो आप लोगों को मेरे व्यवहार से क्या शिकायत होनी चाहिये। परन्तु वस्तु स्थिति यह है कि दोनों क्षेत्रों में कार्य करने वाले सज्जन मुझ से सहमत नहीं हुए, और अन्दर-अन्दर से असन्तुष्ट हैं धर्मपरायण सज्जन मुझे "पुलिटीकल" और राजनीति में काम करने वाले भाई मुझे 'मज़हबी' समझते हैं। इतने वर्षों में न मैं उन्हें अपने मत का बना सका, और न वह मुझे अपने मत का बना सके। मैं दोनों प्रकार के मित्रों को अपनी बात समझाने का यत्न करता रहता हूँ, परन्तु पूरी तरह सन्तुष्ट कोई भी नहीं।

प्रसिद्ध अजात शत्रु महाराज युधिष्ठिर थे। वह बहुत संस्कारी और गुणी पुरुष थे, तो भी न जाने क्यों समर भूमि में उनके विरुद्ध दस अक्षौहिणी सेना उतर आई थी? महाराज रामचन्द्र ने कर्त्तव्य पालन में ही अपना सारा जीवन व्यतीत कर दिया था। फिर भी उनके इतने शत्रु बन गये कि उनके संहार के लिए महाराज को समुद्र पार करना पड़ा था। इन ऐतिहासिक दृष्टियों पर विचार करके मन को सन्तोष दिया जा सकता है, परन्तु उससे इस सच्चो बात में कोई भेद नहीं आता कि मैं सर्वप्रिय या अजातशत्रु बनने में सफल नहीं हुआ। इसमें दोष मेरा है, अन्यों का है, या मनुष्य प्रकृति का है, इन प्रश्नों के उत्तर तो कोई महान् मनोवैज्ञानिक ही दे सकता है।

अच्छी खुराक की कमी

(देहाती पुरोगम के समय)

(२)

(श्रीयुत कविराज हरनाम दास)

प्रश्न—आइए कविराज जी कृपा करके यह बताइए कि अच्छी खुराक की कमी का सेहत पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

उत्तर—सिहयत के मुआमले में आपने एक बहुत जरूरी बात पूछी है । जब भी किसी की सिहत गिरती नजर आती है, या शरीर में किसी भी अंग में कोई रोग अथवा निर्बलता प्रतीत होती है तो उसके कारणों में अच्छी खुराककी कमी एक बड़ा कारण हुआ करता है । इसमें कोई सन्देह नहीं परन्तु पहले तो हमें इस विषय में विचार करना चाहिये कि अच्छी खुराक है कौनसी ।

सुनिये मास्टर साहिब, जो खुराक हम खाते हैं, उसमें कुछ तो हमारा शरीर बढ़ाने वाली होती है जैसे गेहूँ, चना, मक्की, बाजरा, मटर, मूंग, मसूर, दूध, दही आदि । शरीर को बढ़ाने वाली इस सर्वोत्तम खुराक की कमी से हम दुबले पतले रह जाते हैं, हमारा वजन कम हो जाता है ।

कुछ खुराकें हमारी ताकत बढ़ाने वाली होती हैं जैसे चावल, और सभी प्रकार के अनाज, आलू, सं'घाड़ा, शकरकन्दी, गन्ना, गुड़, खांड, शहद, दूध दही आदि । मास्टर साहिब, ताकत ही से तो सब काम धन्धे होते हैं। बिना ताकत न तो बढ़ई से हल बने, न लुहार से हल का फाला बने, न किसान से हल ही चले । यह तो सब काम ही चौपट हो जाय । और भला क्या बिना शक्ति के हमारी बहनों माताओं से कहीं दूध बिलोया जा सकता है। या रोटी का कहीं का धन्धा हो सकता है । भली बिना ताकत कहीं छोरे छोटे ढोर चरा सकें या पढ़ाई कर सकें । या मास्टर लोग पढ़ा ही सकें। सो हमने ताकत बढ़ाने वाली जो खुराकें गिनाई हैं उनकी कमी नहीं होने देनी चाहिये ।

ताकत बढ़ाने वाली खुराकों में हमने अभी घी, मक्खन का नाम नहीं लिया सो इनकी बाबत भी सुन लो । मनुष्य के खाने की घी, मक्खन, मलाई, सरसों, मूंगफली, नारियल का तेल, प्रसिद्ध चिकनाइयां से हमारे शरीर की चर्बी भी बढ़ती है और ताकत भी। एक और मजे की बात सुन लो । चिकनाई को पचाना अच्छे हाजमे का काम है और अच्छा हाजमा बनता है मेहनत मजदूरी से । पलंग पर बैठे २ गप्पों में दिन गुजार देनेवालों का हक नहीं घी मक्खन मलाई आदि के ज्यादा खाने का ।

हमारे शरीर में हड्डी बढ़ाने के लिये तथा खून को शुद्ध और ताकतवर बनाने के लिये सब्जियें, फल और दूध दही बड़ा महत्व रखते हैं । सब्जियों और फलों में कैलशियम (Calcium) एक प्रकार का चूना प्रचुरता से पाया जाता है । फल मंहगे हों तो सब्जियों से बहुत ही अच्छी तरह काम चल जाता है । फलों के स्वाद और फलों की मंहगाई ने बहुतों की जेबें खाली कर दी हैं । सो मुनासिब दाम वाले या अपने बागीचा के अमरूद, आम खरबूजा, तरबूजा, लुकाटें, सन्तरा, जामन आदि मुफ्त के फलों पर तो बेशक तरस ना करें, परन्तु फलों की महिमा सुनकर बाहिर से आए मंहगे फलों की खरीद में अपना हाथ तंग न करें । पर सब्जियों के इस्तेमाल से हाथ न खींचना चाहिए । सबसे अच्छी सब्जियां वही हैं जो ऋतु २ पर देहातों में उपजती हैं । बाथू, चौलाई, पालक, मेथी, चने की पत्ती,

---

आल इंडिया रेडियो के सौजन्य से —सम्पादक

गाजर मूली सलगम, पपीता, पेठा, पुदीना, खीरा, लौकी कद्दू, टमाटर, आलू, आंवला केला, करेला, गोभी, विशेष करके बन्द गोभी अच्छी सब्जियां हैं यथा ऋतु उचित मात्रा में प्रयोग में लानी चाहिये।

साग सब्जियों, फलों और दूध दही में एक और बहुत बड़ा गुण है वह रोगों का मुकाबला करने की शक्ति। वह शक्ति इन को प्राप्त होती है। इनके अन्दर होने वाले एक विशेष द्रव्य के कारण जिसे विटामीन कहते हैं। जिन्हें दूध दही प्राप्त न हों वे छाछ से विटामीन का काम ले सकते हैं, परन्तु हरे शाकों के बिना तो काम न चलेगा। जो दुर्भाग्य से सब्जियों से घृणा करते हैं उन पर रोग शीघ्र आक्रमण कर पाते हैं, क्योंकि विटामीन की कमी ऐसी है जैसे किले के अन्दर फौज की कमी।

विटामीन कई प्रकार के होते हैं। डाक्टरों ने उनके बहुत सरल नाम रख दिये हैं, ए०, बी०, सी०, डी०, ई०, जी० के आदि। सिवाय घी और मांस के सभी खाद्यपदार्थों में विटामीन पाये जाते हैं। किसी में विटामीन की कोई जाति अधिक होती है किसी में थोड़ी। आयुर्वेद का मत है कि यदि अनाज और दाल के साथ साथ हरे शाक अदल बदल कर खाये जाते रहें और दूध दही छाछ में से जो प्राप्त हो इस्तेमाल होते रहें तो सदाचारी मनुष्य को कोई रोग नहीं घेरेगा और यदि इनकी कमी रखी गई तो दुर्बलता और रोग शरीर में डेरा डाल देते हैं।

लगे हाथों विटामीन का कुछ थोड़ा सा विस्तार और सुन लीजिये। गाजर, मूली, शलगम, मटर, टमाटर, आलू, बन्द गोभी, तथा अन्य हरे पत्तों वाले शाकों में, और सन्तरा, आम, अमरूद आदि फलों में और हरे घास पर पलने वाले पशुओं के दूध में विटामीन सबसे अधिक होते हैं। विटामीन से रहित भोजन अर्थात् केवल अनाज, दाल, मांस और मशीन पर छिले हुये चावलों का प्रयोग करने वाले तथा पकवानों में क्रमा-क्रम घी प्रयोग करने वालों को हम भाग्यशील कदापि नहीं कहेंगे। गाजर, टमाटर, बन्द गोभी, मलाई, दूध आदि विटामीन ए० धारण करने वाले पदार्थों के बिना रिकेट्स नामक रोग हो जाता है जिस से हड्डियां टेढ़ी मेढ़ी हो जाती हैं। हड्डियों में डलता जाने वाला पदार्थ विटामीन ए० है। जैसे मसाले के बिना ईंट पर ईंट धरने से दीवार खड़ी नहीं रह सकती वैसे विटामीन ए० के बिना हमारे शरीर का ढांचा। बंगाल में लोगों का मशीन के छिले चावलों का प्रयोग करना और साथ में विटामीन बी० वाली खुराक, टमाटर, मटर, नारियल, दूध, दही, केला, आदि ताजे फलों तथा हरी सब्जियों का प्रयोग न करना बेरी बेरी नामक रोग का कारण बनता है। इस रोग से मनुष्य शक्तिहीन हो जाता है, दिल दिमाग काम नहीं करते, हाथ पैरों में सूजन आजाती है। इत्यादि। इसी प्रकार गाजर मूली आदि हरे शाक तथा सेब, आलू, दही छाछ, टमाटर, नारंगी आदि विटामीन सी० धारण करने वाले पदार्थ न खाने से दांतों की जड़ें कमजोर हो जाती हैं। मसूड़े फूल जाते हैं, दांत झड़ जाते हैं। मास्टर साहिब, दांत ही न रहे तो सब खाये पीये का मजा ही खतम होजाता है इसलिए यह बड़ा जरूरी है कि सेहत के लिए हम ठीक प्रकार की खुराक खाकर अपने से कमजोरी को दूर रखें और ताकतवर बनें जिससे हम अपना और अपने देश दोनों का भला कर सकते हैं। नमस्ते।

(पृष्ठ ६४६ का शेष)

कर सकता। तुम उनसे कहना कि दण्डी तुम से रत्ती भर भी सम्मान नहीं चाहता, इसलिए वह कभी तुम्हारे पास न आयगा। यदि उन्हें मुझसे कुछ काम हो तो स्वयं मेरे पास आयें।"

जीवनमुक्त दण्डी का यह उत्तर सुनकर सिकन्दर दण्डी का दर्शन करने के लिये व्याकुल होकर जंगल में गया और उनका दर्शन प्राप्त कर कृतार्थ हुआ। ग्रीक मेगास्थनिस ने लिखा है कि सिकन्दर अनिसे क्रिटिस के मुंह से दण्डी का उत्तर सुनकर उसके दर्शन के लिए बहुत ही उत्सुक हुआ था।

सम्पादक की डाक

सार्वदेशिक सभा के मन्त्री को बधाई

(१)

आर्य प्रतिनिधि सभा सिंध को यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि सार्वदेशिक सभा के मन्त्री श्री कविराज हरनामदास जी ने अपनी भानजी का विवाह सम्बन्ध श्रीयुत ठाकुर धर्म सिंह जी सरहदी के सुपुत्र के साथ निश्चित किया है। निश्चय ही इस साहसपूर्ण कदम के लिये श्री कविराज जी बधाई के पात्र हैं। यह उदाहरण शुद्धि के इतिहास में इस प्रकार के अलभ्य प्रेरणात्मक उदाहरणों के साथ विशिष्ट स्थान रखेगा। यह रिश्ता उस शिकायत का क्रियात्मक उत्तर है कि शुद्ध हुए भाइयों तथा उनकी सन्तानों के विवाह के प्रश्न का उचित रीत्या हल न कर सकने के कारण आर्य समाज उन्हे अपनाने में प्रायः असमर्थ रहता है। हमे विश्वास है कि कविराज जी की तरह अनेकों इस ऋण से उऋण होने के लिए तत्पर हो उठेंगे॥

—मन्त्री

यह लिखते हुए महान् हर्ष है कि श्री ठा० धर्म सिंह जी सरहदी के पुत्र रामपाल के साथ सार्वदेशिक सभा के मन्त्री श्री कविराज हरनामदास जी ने अपनी भानजी का सम्बन्ध तय कर दिया है। मैं इस समाचार को पाकर इतना हर्षित हूं कि यदि कोई तोलता तो मेरा वजन तथा मेरे हृदय को अपार उत्साह, हर्ष और आनन्द से वृद्धियुक्त पाता। उन्होंने अपने एक वज्र से भी कठिन सामाजिक दीवार को जो तोड़ने का अभूतपूर्व साहस दिखाया है उसके लिये उनकी जितनी भी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। काश! यह कार्य जो आज उन्होंने किया है ४० धर्मपाल के साथ आज से १० वर्ष पूर्व आर्य समाज की ओर से किया गया होता तो आर्य समाज की गति विधि बड़ी उन्नत होती। खेद है उस समय के नेता इसकी आवश्यकता को अनुभव न कर सके। मेरा तो विश्वास है कि आज पाकिस्तान को कहीं भी स्थान न मिलता यदि कविराज जी की सी हिम्मत दिखाई होती। हमारी समाज के समस्त सभासद् उनके इस पग की भूरि भूरि प्रशंसा करते हैं और उनको साधुवाद देते हैं।

भवदीय

रामचन्द्र आर्य

उपमन्त्री, आर्य समाज अजमेर

भूल सुधार

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय से प्रकाशित १९५५ की आर्य पर्व सूची में वैसाखी का पर्व भूल से अंकित हो गया है। यह पर्व सूची में अंकित न समझा जाय। मन्त्री

सार्वदेशिक सभा

विचार-विमर्श

महर्षि दयानन्द की जन्म तिथि (१)

लेखक—श्री इन्द्रदेव जी

१—"१८८१ वि० के पौष मास में एक बालक ने जन्म लिया।" महर्षि दयानन्द पृष्ठ १

इन्द्र जी विद्यावाचस्पति

२—"जन्म के नामराशि मूलशंकर ने शुद्ध चैतन्य नाम के दौर सन्यास मार्ग में पदार्पण करके क्या शुभ नाम पाया ?" स्वामी दयानन्द सरस्वती।"

लेखक—श्रीयुत कर्व कवि चन्द्रकोशी

डा० हरदुआ गंज जि० अलीगढ़

बहुत दिनों की बात है जब मैं प्रवास दशा में अपना जीवन व्यतीत कर रहा था उन दिनों ट्रावन-कोर में वैदिक धर्म का प्रचार करते हुये मैं अपनी जन्मभूमि से दूर था जहां आर्यसमाज का कोई साहि-त्य ही उपलब्ध नहीं था, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें जो मैंने मंगवा ली थी मेरे पास थी वे ही मेरे स्वाध्याय की सामग्री थी।

उपयुक्त रेखांकित प्रथम उद्धरण में पौषमास तथा द्वितीय उद्धरण में 'जन्म के नामराशि, इन शब्दों ने मेरे अन्दर एक जिज्ञासा पैदा की कि प्रयत्न करने पर ऋषि की जन्म तिथि मालूम की जा सकती है। इसी दृष्टि से उपरि कथित पुस्तकों का मैंने पुनः स्वाध्याय आरम्भ किया, एक दिन 'स्वरचित दयानन्द चरित, पढ़ते हुये मुझे अभीष्ट सामग्री मिली।

"मैं स्वामी दयानन्द संक्षेप से अपना जन्म चरित्र लिखता हूँ। सं० १८८१ के वर्ष में देश काठियावाड़ के मौरवी राज्य में एक नगर में औदीच्य ब्राह्मण के घर में मेरा जन्म हुआ।

माता पिता ने मुझ के विवाह की तैयारी की जब तक २१ वां वर्ष पूरा हो गया।

एक मास में विवाह की तैयारी भी हो गई फिर चुप २ सं० १९०३ के वर्ष में घर छोड़ के शाम के समय भाग उठा।

इस उद्धरण में:—

१—स्वामीजी का गृह त्याग १९०३ में तथा जन्म १८८१ में स्पष्ट है ही।

२—गृह त्याग तथा २१ वर्ष आयु पूर्ति काल में एक मास का अन्तर है।

यदि जन्म १८८१ के आदि या मध्य में हो तो एक मास अन्तर जीवन से गृहत्याग १९०३ में बनता नहीं। अतः सिद्ध होता है कि जन्म १९०३ आरम्भ होने से पहिले एक मास के अनन्तर ही हुआ। जो कि फाल्गुन मास है। अतः पौष मास की बात गलत सिद्ध हुई।

अब फाल्गुन मास में (कौन तिथि) को जन्म हुआ, यह प्रश्न पैदा हुआ तो उसके निर्णय के लिये 'जन्म के नामराशि, शब्द मेरे परम सहायक हुये। मूलशंकर नाम से मैंने विचार किया तो ४ २-१८२५ फाल्गुन बदि १ सिद्ध हुआ। क्योंकि मूलशंकर जन्म की नामराशि से होडाचक्रानुसार मघानक्षत्र के तृतीय चरण में आता है। किन्तु इस में और गृहत्याग काल में ११ मास का अन्तर पड़ जाता है अतः हेय है।

मूलनक्षत्र में पैदा होने के कारण मूलशंकर नाम रख दिया ऐसा मानकर विचार किया तो फाल्गुन बदि १० ता० १२-२-१८२५ आई। इसमें भी और गृह-त्याग काल में ११ महीने का अन्तर पैदा हुआ अतः हेय है। तब विचार पैदा हुआ कि मूलशंकर का दयाराम व दयालु भी नाम है इस नाम से विचार

किया तो जन्म १६ फरवरी १८२५ फाल्गुन शुदि १ शनिवार १८८१ सिद्ध हुआ। इसके अनुसार गृहत्याग ठीक सिद्ध है। जिसका विवरण मैं इसी वर्ष १९४९ ई० में सार्वदेशिक में प्रकाशित कर चुका हूं।

उपर्युक्त लेख से निम्न बातें सिद्ध होती हैं:—

१—ऋषि का मुख्य नाम दयाराम व दयाल था जो कि जन्म राशि के अनुसार रखा गया था और मूलशङ्कर नाम गौण है।

२—ऋषि का जन्म १६ फरवरी १८२५तदनुसार फाल्गुन शुदि १ शनिवार संवत् १८८१ को हुआ।

अपने इस पक्ष पर सामान्यतः दृष्टिपात करने के बाद पण्डित भीमसेन जी शास्त्री ने जो भी विपक्ष में लिखा है उसका निराकरण करूंगा?

ऋषि का मूल नाम क्या था?

"हम प्राणलाल शुक्ल का एक पत्र पहले पृष्ठ में उद्धृत कर आये हैं। इससे विदित होता है कि ऋषि दयानन्द के बाल्यावस्था में दो नाम थे। एक तो मूलशङ्कर दूसरे मूलजी दयाराम। इसी पत्र में यह भी बताया गया है कि सौराष्ट्र में अपनी सन्तानों के दो नाम रखने का प्रचलित रिवाज है। सिर्फ सौराष्ट्र में ही नहीं प्रत्युत सर्वत्र भारतवर्ष में ही सन्तान के दो नाम रखने की परम्परागत रीति प्रचलित है। उपर्युक्त वणिक देवचन्द भगवान् जी ने भी अपने वर्णन में कहा है कि कर्षन जी त्रिवेदी का जो पुत्र घर छोड़कर भाग गया था उसे दयाराम या दयाल कहते थे।

प्रभुराम आचार्य रोहीशाला वाले कहते हैं कि ऋषि दयानन्द की भगिनी प्रेमबाई ने उनसे कहा था कि 'दयाराम घर छोड़कर एक रात रामपुर के मारुति के मन्दिर में रहा था।' टङ्कारा के एक वृद्ध महाशय कहते हैं कि दयानन्द जी का मूल नाम मूल जी था।

ऋषि दयानन्द का बाल्यावस्था का नाम दयाराम था इस विषय में प्रेमबाई देवचन्द वणिक तथा प्राणलाल शुक्ल का एक मत प्रतीत होता है।

अब प्रश्न इतना ही रह जाता है कि उनका मुख्य नाम दयाराम था या मूलशङ्कर। सामान्यतः पिता इत्यादि अपने बालक को उपनाम से ही अधिक करके सम्बोधन करते हैं। पृष्ठ ८८ सा० आ० प्र० सभा का २७ वर्षीय कार्य विवरण—

प्रेमबाई जो खास ऋषि की बहिन है। टङ्कारा के एक वृद्ध महाशय जिनका नाम भी नहीं मालूम है केवल ऋषि का नाम मूल जी बताते हैं। वास्तव में ऋषि का नाम राशि के अनुसार दयाराम और दयाल ये दो रखे गये थे। परन्तु कर्षन जी के कोई पुत्र न होने के कारण अत्यधिक अवस्था में ऋषि के पैदा होने से समझा कि अब वंश की मूल पैदा हुई अतः मूल जी कहकर पुकारने लगे और आप स्वयं पक्के शैव थे अत. अपने इष्टदेव का नाम भी जोड़ दिया और मूल जी शङ्कर कहने लगे, क्योंकि उन्हें विश्वास था कि शङ्कर की आराधना से ही मूल जी का जन्म हुआ है।

१—कर्षन जी का वंश परम्परा में पहले शङ्कर किसी के नाम में नहीं है जैसे स्वयं कर्षन जी अपने छोटे पुत्र का नाम वल्लभ जी, लड़की प्रेमबाई। तो फिर मूल जी शङ्कर नाम, राशि का कैसे हो सकता है?

२—यदि नक्षत्र नाम मूलशङ्कर हो तो जैसे दयाराम व दयाल दो रखे गये वैसे ही मूल जी शङ्कर तथा एक और नाम होता।

३—दयाराम व दयाल नाम होने के कारण ही ऋषिने सन्यास लेते समय अपने नामराशि के साथ आनंद जोड़कर दयानन्द नाम रखा।

४—माता पिता बहुधा अपने प्रिय नाम को ही जो बहुधा गौण हुआ करते हैं पुकारा करते हैं अतः कर्षन जी ऋषि के गौण व उपनाम, मूलजी शङ्कर ही कहकर पुकारा करते थे।

उपर्युक्त कारणों से ऋषि का नामराशि दयाराम जी ही सिद्ध होता है जिसके अनुसार जन्म तिथि सिद्ध की जा चुकी है। इसी जन्म तिथि के उपलक्षार्थ जिसमें ठीक वही वार भी आया है आर्यसमाज मुंबई पर मुद्रित एक प्रस्तर शिला को उद्धृत कर रहा हूँ।

आर्य स्थान

श्रीमत्पण्डित दयानन्द सरस्वती स्वामीजी के सदोपदेश से सज्जन आर्य वैदिक धर्मों ने वेदानुकूल व्याख्यान और पठन पाठनादि कर्म करने के लिये यह स्थान बना के आर्य समाज के अधिकार में रखा है।

मिति फाल्गुन शुदी १ शनि १९३८ वि०

दूसरा पत्थर आर्य समाज मन्दिर मुंबई पर अंकित है जो कदाचित् गृहत्याग काल के स्मरणार्थ ही आर्य समाज आरम्भ किया।

आर्य समाज मुंबई

ओ३म्

॥ परमेश्वराय नमः ॥

सं० १९३१ वि० स्थापित हुआ सन् १८७५ ई०
चैत्र शुक्ला १ , ७ अप्रैल बुधवार।

श्रीयुत माम्बवर शास्त्री जी !

यह ज्योतिष का विषय है निम्न बातों से मैं समझता हूँ कि कदाचित् आप ज्योतिष से अनभिज्ञ। आप लिखते हैं :—

१—मूलनक्षत्र वर्ष में १२ होते हैं। सार्वदेशिक दिसम्बर १९५३ पृष्ठ ४३०।

२—दयाराम जन्म नाम होता ही नहीं।

पण्डित प्रवर ने पूर्वा भाद्रपद् के तृतीय चरण में जन्म होने से दयानन्द नाम माना है। पर इस काल में जन्म से दामोदर दानपति आदि नाम हो सकते हैं अर्थात् पूर्वा भाद्रपदा तृतीय चरण दा (द+आ) आकार विशिष्ट दकार से आरम्भ नाम दे सकते हैं। से सो दा दी पूर्वा भाद्रपदा, हमने सार्वदेशिक २००३ श्रावण के अपने लेख (पार्श्व २१८ प्रथम स्तम्भ) में लिखा था कि जन्म नक्षत्रानुसारी नाम के आरम्भ में द (अकार विशिष्ट दकार) नहीं दे सकता।' आप इससे सहमत नहीं थे तो आपको अपने पक्ष के साधक प्रमाण देने चाहिये थे पर आपने तो मौन को ही अपना भूषण बनाया हुआ है।" सार्वदेशिक मार्च १९५४ पृष्ठ २४।

१ मूलनक्षत्र

क—मूल संज्ञक ६ नक्षत्र हैं जो कि प्रति मास एक बार अवश्य आते हैं किसी २ मास में कोई दो बार भी आ जाता है।

ख—मूल नक्षत्र एक है जो वर्ष में १३ बार आता है और किसी वर्ष १४ बार आता है।

२ दयाराम नाम

प्रथम तो मैंने आपका वह लेख ही नहीं पढ़ा था जिसका उत्तर देता दूसरे पत्र भी लिया जाता तो भी उत्तर देने की आवश्यकता न थी क्योंकि प्रथम तो आपका मत ही निश्चित नहीं है पहले आपने ४-२-१८२४ जन्म माना अब आप एक सप्ताह और आगे बढ़े १२ फरवरी मानने लगे। यह मेरे लेख का प्रभाव है और मुझे आशा है कि अब इस लेख से आप एक सप्ताह और आगे बढ़ेंगे और १९ फरवरी मानने लगेंगे। और मानेंगे ही क्यों नहीं, वह पुण्य दिन ही ऐसा है जिस दिन भगवान ने जन्म लेकर जैमिनि के पश्चात् ऋषि नाम पाया और अपने ऋषि नाम को सार्थक करके हमारी अज्ञान बेड़ियां काट दी और हमें नया प्रकाश देकर वेदानुयायी बनाया, अमङ्गल से बचाया।

दूसरे इस लेख को पढ़कर केवल होडाचक्र जानने वाला भी समझ लेगा कि लेखक ज्योतिष के ज्ञान से शून्य है फिर इस विद्वत्ता को प्रकाश कराने से क्या लाभ था।

महोदय ! मुझे अब भी बड़ा विस्मय हो रहा है कि दुनियाँ में जहाँ नौ लाख में अनेकों अविष्कार हुये परन्तु आपने होडाचक्र तक को नहीं समझा। होडाचक्र में दो प्रकार के अक्षर लिखे गये हैं १-वे अक्षर जो ह्रस्व अकार संयुक्त हैं एक ही बार ह्रस्व अकार संयुक्त ही हैं २-वे अक्षर जो दीर्घ स्वर संयुक्त हैं। सबसे ह्रस्व और दीर्घ दोनों नाम रखे जाते हैं से सो दा दी पूर्वा भाद्रपद् के अनुसार दा से दाताराम भी और दयाराम दोनों सिद्ध हैं। तो क्या होडाचक्र में जो ह्रस्व स्वर संयुक्त व्यंजन नहीं लिखे हैं ह्रस्व स्वर

संयुक्त व्यंजन पर किसी का नाम नहीं होगा, यदि नहीं होगा तो आप ही बताइये दयाराम या दिवाकर या धर्मदेव का कौनसा नक्षत्र होगा।

आपने अपने पक्ष समर्थन के लिये निम्न आधार माने हैं :—

—महर्षि का जन्म नाम मूलशङ्कर है। पृ० २१ मार्च ५४ सार्वदेशिक।

२—जन्म तिथि से गृहत्याग अति समीप है यह अन्तराल सवा मास है। अधिक सम्भावना यह है कि यह अन्तराल लगभग डेढ़ मास है इसे पौने दो मास से आगे कदापि नहीं खींचा जा सकता। पृ०१७७ जनवरी ५४ सार्वदेशिक।

३—वह आंख खोल देने वाली शिवरात्रि चौदहवें वर्ष की अवस्था के आरम्भ में आई। पृ० ११ मार्च १९५४ सार्वदेशिक।

४—नामारम्भ का मू मघा नक्षत्र का तृतीय चरण का सूचक होता है और इसी आधार पर हमने अपने आठ वर्ष पुराने लेख में सं० १८८१ विक्रमी फागुन बदि १ शुक्रवार मघा तृतीय चरण (४ फरवरी १८२५) ऋषि जन्म माना था ...

इस विषय में इस प्रकार (अर्थात् मूलादि) नाम वालों से तथा ज्योतिषियों से विशेष पूछ गछ से यह निश्चय हुआ कि *मूल होने पर जन्म पत्र में होडाचक्र अन्य नाम रखे* जाते हैं पर व्यवहार में मूलचन्द आदि नाम रखे जाते हैं और मनुष्य इन्हीं नामों से प्रसिद्ध होता है। मघा नक्षत्र तृतीय चरण में जन्म होने पर मूलशङ्कर मूल कृष्ण आदि नाम रखे जाते हैं पर मूलशङ्कर मूलचन्द आदि नहीं क्योंकि ये मूलारम्भी नाम एक दम मूल नक्षत्र को ओर ध्यान खींचते हैं। पृ० ४२४ अक्तूबर १९५४ सार्वदेशिक।

विमर्श

आधार सं० १ आपने लिखा है कि मूलशङ्कर का लेख जन्म पत्र में तो था ही, कहीं सरकारी कागजों में हो तो कठिन नहीं, श्रीमन् शास्त्री जी ऋषि के जन्म पत्र की एक प्रतिलिपि हमें भी भेज दीजिये। फिर आप लिखते हैं कि पण्डित वर्ग कौनसी सन्यास पद्धति में नक्षत्र नाम अपनाने का विधान है? अच्छा हम पूछते हैं कि कहां पर निषेध है? क्या लौकिक व्यवहार आप नहीं देख रहे हैं आज भी अब पू० राजगुरु धुरेन्द्र जी शास्त्री ने सन्यास ग्रहण करके अपना नाम मिलता जुलता ध्रुवानन्द रक्खा। फिर आप लिखते हैं कि पं० श्री देवेन्द्रनाथ जी मुखोपाध्याय ने पहले दयाराम मुख्य नाम माना था बाद को मूलशङ्कर जी मानने लगे और अपने ग्रंथ में सैकड़ों बार मूलशङ्कर नाम का ही जिकर किया है। अच्छा हम पूछते हैं कि जो जिस नाम को मानकर जीवन लिखेगा क्या मध्य या अन्त में नाम भी बदल देगा जिसका जिकर आप बड़े गौरव के साथ कर रहे हैं। इसी प्रसंग में आप को मालूम होना चाहिये कि १९११ तक आर्य जगत् वार्षिकोत्सव चैत्र सुदी पंचमी को ही आर्य समाज स्थापना दिवस मनाता रहा है बम्बई को छोड़कर। परन्तु जब से मालूम हुआ कि आर्य समाज स्थापना दिवस चैत्र शुदि १ को हुआ तब से बराबर वही मानने लगे हैं। परन्तु देवेन्द्रनाथ जी ने चैत्र शुदि ५ ही आर्य समाज स्थापना दिवस लिखा है। अब आप बताइए जब उनकी यह एक मौलिक बात गलत है तो यह दूसरी बात कैसे मानी जा सकती है।

अब रही बात प्राक्कथन लेखक की इनका मैंने ही क्या सार्वदेशिक सभा ने भी मेरे अनुकूल बना डाला है। जिसका उल्लेख पहले आ चुका है यह उपनाम ही मूलशंकर है जिसको पं० देवेन्द्रनाथ जी ने अपने ग्रन्थ में अनेकों बार लिखा है। *मुख्य नाम दयाराम ही है।*

२—ऋषि ने तो *२१ वा पूरा होने और गृहत्याग में एक मास का अन्तर बताया है* परन्तु आप अपना पक्ष सिद्ध करने के लिये खींचातानी कर रहे हैं इस अन्तराल को १। महीने तक न मालूम कहां से कल्पना कर ली। पहले आपका मत था कि ४-२-१८२५ फागुन बदि १ को ऋषि का जन्म हुआ। तदनुसार चैत्र शुदि १ (इससे पूर्व मान नहीं सकते)

को ही गृहत्याग मान लें। तो १४ मास का अन्तराल हुआ, अतः आपको मेरा लेख पढ़कर अपनी प्रतिज्ञा झूठ मालूम हुई और वह तिथि बदलनी पड़ी लेकिन हठ फिर भी न छूटी, अब आपका हठ १। मास का है इस प्रकार आप सवा मास तक आ गये हैं और यह सब अन्तराल ऋषि के वचन के विरुद्ध हैं अतः हेय है।

आप लिखते हैं कि विवाह मुहूर्त वैशाख बदि १ तदनुसार १२ अप्रैल सं० ९६ से आरम्भ होते हैं चैत्र शुदि १ गृहत्याग मान लें तो १५ दिन पहले भागने की क्या आवश्यकता थी अर्थात् आपके मत में कुछ दिन और कम होना चाहिये।

यदि ऐसा है तो भी १६ फरवरी ही जन्म तिथि सिद्ध होती है। आप भी अपने मत के अनुसार वैशाख बदि १ तक गृहत्याग कर सकते हैं आप गृहत्याग की यही तिथि मान लें तथा अब आप का नया मत १२ फरवरी १८२९ फागुन बदि १० जन्म तिथि भी मान लें तो पौने दो मास अंतराल आता है और चैत्र शुदि १ को गृहत्याग मानलें तो १। मास का यह मनमाना पन है। इस प्रकार तो ७ या ८ मास का भी अन्तराल माना जा सकता है और भादों या क्वार की जन्म तिथियां भी सही हैं। परन्तु यह ऋषि के वचन के विरुद्ध हैं। ऋषि ने एक मास का अन्तराल लिखा है। १६ फरवरी १८२९ फाल्गुन शुदि १ जन्म तथा गृहत्याग चैत्र शुदि १ में १ मास का अन्तराल ठीक है जब आपको मालूम हुआ वह गृहत्याग का मुहूर्त ठीक खोज कर लिखा है।

३—आप लिखते हैंकि वह आंख खोल देने वाली शिवरात्रि चौदहवें वर्ष के आरम्भ में आई और ऋषि के निम्न लेख से सिद्ध किया है—

"इस प्रकार चौदहवें वर्ष की अवस्था के आरम्भ तक यजुर्वेद की संहिता सम्पूर्ण और कुछ २ अन्य वेदों का भी पाठ पूरा हो गया था और शब्द रूपावली आदि छोटे २ व्याकरण के ग्रन्थ भी पूरे हो गये थे।

घर में भिक्षा की जीविका नहीं थी किन्तु जमेदारी और लेनदेन से जीविका के प्रबन्ध करके सब काम चलाते थे वहां २ शिव पुराण आदि की कथा होती थी वहां पिता जी मुझको पास बिठला कर सुनाया करते थे और मेरे पिता ने माता के मना करने पर भी पार्थिव पूजन का आरम्भ करा दिया था।

जब शिवरात्रि आई तब त्रयोदशी के दिन कथा का महात्मय सुना के शिवरात्रि के व्रत करने का निश्चय करा दिया था।

पृष्ठ ९३, ९४ सा० आ० प्र० सभा का २७ वर्षीय कार्य विवरण

इस प्रकरण को विद्वज्जन मनन करें और बतावें कि क्या इससे यह सिद्ध होता है कि वह शिवरात्रि चौदहवें वर्ष के आरम्भ में आई इस प्रकरण से यह बात सिद्ध नहीं होती है। वह शिवरात्रि इस प्रकरण में चौदहवें वर्ष के अन्त और मध्य में भी हो सकती है। आदि को भी हो सकती है तो कैसे मानलें कि वह आदि में ही आई, अतः इस वाद में पड़ना व्यर्थ है और न शास्त्री जी को खींचातानी ही करनी चाहिये।

४—आप लिखते हैं कि मघा नक्षत्र तृतीय चरण में जन्म होने पर मूलशङ्कर मूलकृष्ण आदि नाम रखे जाते हैं पर मूलशङ्कर और मूलचन्द्र आदि नहीं। "श्रीमान जी इन दोनों बातों में क्या अन्तर हुआ।" आपको तो प्रबल हठ है अपनी बात सिद्ध करना। अब आप को मूलशङ्कर नामकरण की सूझी, मूल नक्षत्र में मूलशङ्कर नाम हो ही नहीं सकता जैसा कि आप भी मानते हैं तो आप बता इये मूल नक्षत्र के अक्षरों के अनुसार कौनसा नाम था और दयाराम क्यों प्रसिद्ध हुआ, इसका नक्षत्र से कोई सम्बन्ध नहीं है। मूलशङ्कर नाम नक्षत्रों के अक्षरों पर नहीं रखा गया है यह आप भी मानते हैं मैं यही कहता हूँ।

आपको मालूम होना चाहिये कि मूल नक्षत्र में जन्म होने से फलित का विधान इस प्रकार है:—

शौनकः अमुक मूलोत्पत्तौ वर्षाद्यकं शिशुत्यागः ततः शांतिः। तदन्न मूलोत्पत्तौ द्वादशाहे आगामि-भूतयुते शुभ दिने वा अन्यत्र शुभ दिने वा गोमुख प्रसव शान्तिं कृत्वा शान्ति : कार्या।

मूल शांति पद्धति पृ० ६१ चतुर्थीलाल का शांति प्रकाश।

मूल में जन्म होने से कट्टर शिव अनुयायी पिता कर्षन जी ने अवश्य यह माना होगा और इसकी प्रसिद्ध घटना हो गई परन्तु ऋषि ने कहीं भी इसका जिकर तक नहीं किया है। अतः आपको मानना पड़ेगा कि ऋषि का मुख्य नाम दयाराम व दयाल है और उपनाम मूलशंकर है इसके हेतु पूर्व आ चुके हैं।

इस प्रकार आपके सभी आधार निरर्थक सिद्ध हुये जिनके आधार पर आपने जगद्गुरु का जन्म फागुन बदि १० शनि १२ फरवरी स० १८१२ माना था। अब आपका दयानन्द पक्ष कहां ?

फाल्गुन शुदि १ जन्म के द्योतक पत्थर तथा चैत्र शुदि १ गृहत्याग के द्योतक दोनों पत्थर आज भी बम्बई आर्य समाज मन्दिर पर अमर हैं। गृहत्याग ही आर्य समाज स्थापना ऋषि की सिद्धि है जिसको आर्य जगत् प्रति वर्ष मनाता है। शिवरात्रि से फाल्गुन शुदि १ तक तीन दिन बोध दिवस मनाते ही हैं। इस शिवरात्रि से ही तो ऋषि का जन्म हुआ था जिसको कर्षन जी ने शिव की अनुकम्पा माना और दयाराम को प्रति वर्ष शिवरात्रि व्रत रखने का आग्रह किया।

धन्य है ऋषि जो आपने अपना रहस्य अपनी वाणी में छिपा रक्खा था वह प्रकट हुआ। धन्य है आपका जन्म जो शुक्ल प्रतिपदा से आरम्भ हुआ और अमावस्या ३० को पूर्ण में (शुक्ल प्रतिपदा मास का आरम्भ और अमावस्या ३० पर पूर्ण होता है अथवा सूर्य और चन्द्रमा एक सीध होने में वही एक संधि है) विलीन हुये। परमर्षिभ्यो नमः परमर्षिभ्यो नमः।

संस्कृत पुस्तक में आर्य जाति का अपमान (२)

इस समय मेरे सम्मुख यू० पी के जूनियर हाई स्कूलों की आठवीं कक्षा के लिये संस्कृत पाठ्य पुस्तक अमर वाणी, श्री आदित्येश्वर कौशिक शास्त्री साहित्यालंकार कृत है। इसके सत्रह पाठ पृष्ठ ४७ पर सत्यवीर कथा निम्न प्रकार है।

पुरा हस्तिनापुर नाम्नि नगरे महमद् नामा यवने प्रवरो बभूव। तस्मिन् धरत्रीं शासति काफर नरपतिः समभियोद्धु सकल बल सहितः तत्र आजगाम।

पहले हस्तनापुर नाम के नगर में महमद् नाम का यवन राजा हुआ है। उसके शासन काल में उससे युद्ध करने के लिये काफर राजा सारी सेना के साथ वहां आया। युद्ध में यवन राजा के पराजित हो जाने पर उसकी प्रेरणा से कर्णाटकी नरसिंहदेव तथा चाचिकदेव चौहान ने काफर सेना में घुसकर नरसिंहदेव ने काफर राजा को मार दिया, और चाचिकदेव ने उसका सिर काट लाया। पूछने पर उसने सत्य बताया कि नरसिंहदेव ने मारा है—यवन राजा के पुरस्कार देने पर उसने कहा यह चाचिकदेव को मिलना चाहिये। चाचिकदेव ने कहा नरसिंहदेव अधिकारी है। इस पर यवनेश्वर ने प्रसन्न होकर दोनों ही को पुरस्कार से सम्मानित किया।

(१) जहां तक मेरा ज्ञान है यह कथा ऐतिहासिक नहीं कपोल कल्पित है। यदि ऐतिहासिक भी हो तो भी दिल्लीश्वर के साथ युद्ध करने वाला कोई हिन्दू राजा ही हो सकता है। उसे काफर का नाम देना यह आर्य जाति का घोर अपमान है। मुसलिम मत की दृष्टि में काफर एक अत्यन्त घृणित और घृणित शब्द है जो वे अपने से भिन्न मतों के लिये प्रयोग में लाते हैं। परन्तु कोई जीती जागती जाति इसे सहन नहीं कर सकती। ऐसी अवस्था में कोई मुसलमान भी इसका प्रयोग नहीं कर सकता। मुझे आश्चर्य है कि

(शेष पृष्ठ ६६४ पर)

आर्य समाज की चिनगारियां

सरदार हरीसिंह जी

लेखक—श्री पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज

हरीसिंह जी एक छोटे से ग्राम के निवासी थे। इनके आर्य समाजी बनने और आर्य समाज का काम करने की कुछ बातें पाठकों को भेंट करता हूँ। सम्भव है किसी को कुछ लाभ हो जावे।

यह ग्राम मेंडोरोड़ा थाना देहलों जिला लुधियाना निवासी थे। जाट परिवार में जन्म हुआ था। तीसरी कक्षा तक उर्दू में शिक्षा प्राप्त की थी ग्राम में एक साधु रहता था उससे गुरुमुखी लिपि सीखी थी। इस प्रकार इनकी सारी शिक्षा यही थी।

इसके पश्चात् घर के कृषि कार्य में सम्बन्धियों के साथ कार्य करने लगे। विवाह भी हो गया। जिस समय युवा अवस्था को प्राप्त हुए उस समय इनके ग्राम में पं० नारायणदास जी गुड़ंदी निवासी ने भागवत कथा का पाठ आरम्भ किया. नर नारी श्रद्धा से कथा सुना करते थे, उन श्रोताओं में वे भी थे। उनसे इन्होंने देव नागरी लिपि की शिक्षा प्राप्त की। एक दिन इन्होंने बात चीत में उनसे पूछा; जपने के लिए उत्तम मन्त्र कौन सा है। पं० नारायणदास जी ने उत्तर दिया, गुरुमन्त्र गायत्री है। इन्होंने प्रार्थना की कि आप मुझे गायत्री मन्त्र सिखा दें। पंडित जी ने उत्तर दिया। जाट शूद्र होते हैं, आप जाट हैं इसलिए आपको न तो गायत्री मन्त्र सिखलाया जा सकता है ना ही आप इसका पाठ कर सकते हैं। इन्होंने कहा, पंडित जी हमारे वंश में जहां तक मुझे ज्ञान है, हमने कभी मांस मदिरा का व्यवहार नहीं किया। साधारण व्यवहार में भी हमने बुरी बातों से बचने का प्रयत्न किया है। कई ब्राह्मण भी ऐसे मिल जाते हैं जिनमें कोई दोष होता है, उन्हें गायत्री का अधिकार है, हमें नहीं। यह बात मेरी समझ में नहीं आई। पंडित नारायणदासजी ने उत्तर दिया कि शास्त्रकी ऐसी ही मर्यादा है। इसमें समझ में आने न आने का प्रश्न ही नहीं उठता। शास्त्र में स्त्री शूद्र को गायत्री का अधिकार नहीं है, इस लिये मैं आपको गायत्री नहीं सिखा सकता।

इस उत्तर से इनकी सन्तुष्टि तो न हुई किन्तु कर भी कुछ न सकते थे। चित्त में दुःखी भी थे। पश्चाताप भी था कि मैंने ऐसा कौन सा पाप किया था कि जिससे मन्त्र सीखने और जपने का भी अधिकार नहीं है। परन्तु चुप रहने के अतिरिक्त कोई उपाय भी नहीं था। कथा समाप्त हुई। पंडित जी अपने ग्राम चले गये। विषय समाप्त हुआ। मेंडोरोड़ा से २ कोस पर रायकोट कस्बा है। ग्राम निवासी आवश्यक वस्तुएं क्रय करने के लिये रायकोट आते जाते थे। उसी प्रथा के अनुसार यह एक दिन रायकोट गये हुए थे। वहां बाजार में सायंकाल के समय एक पंडित उपदेश दे रहा था। यह वहां सुनने के लिए खड़े हो गये। एक दूकानदार ने कहा, चौधरी जी कोई काम करें यह तो नास्तिक है, देवी, देवता, तीर्थ, आदि सबका खंडन करता है। इसकी बातों में समय नष्ट क्यों करते हैं? इन्होंने उसे उत्तर दिया, लाला जी सुनने में तो कोई हानि प्रतीत नहीं होती, सुन कर उस बात को मानना न मानना अपनी इच्छा की बात है।" इसलिए वहां खड़े होकर व्याख्यान सुनने लग गये। दैव योग से आर्य पंडित इस विषय पर बोल रहे थे कि वेद पढ़ने का सब को अधिकार है। इसे वह अपने ढंग से समझा रहे थे। जिस समय व्याख्यान

समाप्त हुआ और लोग इधर उधर चले गये यह पंडित जी की सेवा में उपस्थित हुए और पूछा, "पंडित जी मैं एक ग्राम का जाट हूँ। मुझे थोड़ी सी उर्दू, गुरुमुखी और हिन्दी लिपि भी थोड़ी सी आती है। क्या आप मुझे गायत्री मन्त्र बता देंगे। पण्डित जी ने उत्तर दिया, हां बता दूंगा। आप मेरे साथ चलें। यह उत्तर सुनकर इनका दिल प्रसन्न हो गया। गायत्री मन्त्र सीखने की इच्छा बड़ी प्रतीक्षा के बाद पूरी होते देख उनके साथ जहां वे ठहरे हुए थे, गये। उन्होंने सन्ध्या की पुस्तक निकाल कर उसमें से गायत्री मन्त्र दिखा कर कहा, यह गायत्री है। आप पढ़ लें। कहें तो मैं पाठ करवाये देता हूँ। बाकी यह पुस्तक सन्ध्या की है जो प्रातः और सायंकाल की जाती है। इन्होंने कहा, पडित जी आप पाठ करवा दें। उन्होंने पाठ करवा दिया और सन्ध्या की पुस्तक क्रय करके, लेकर चले आये। घर में आकर गायत्री तो याद कर ली और सन्ध्या के पाठ करने का यत्न किया। किन्तु अच्छी तरह पढ़ नहीं सके। फिर रायकोट जाकर आर्य समाजियों से मिले। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश क्रय करने को कहा। इन्होंने वह भी ले लिया और आकर उसे पढ़ना आरम्भ किया। जैसा स्वाभाविक था, कहीं समझे, कहीं न समझे, पाठ करते रहे। उस समय निश्चय किया कि संस्कृत पढ़े बिना यह काम तो न होगा।

रायकोट मे पं० दुर्गादत्त जो रहा करते थे। उनसे प्रार्थना की "पंडित जी मुझे संस्कृत पढ़ा दें।" उन्होंने कहा कि 'सारस्वत' पढ़ लें। यह उनसे सारस्वत पढ़ने लगे। ग्राम में घर का काम भी करते थे और नियमपूर्वक रायकोट पढ़ने भी जाते थे। इस लिए कुछ संस्कृत का बोध हो गया। फिर इन्होंने आर्य पंडितों को बुला कर यज्ञोपवीत लिया और ग्राम में प्रचार आरम्भ करवाया। धीरे २ इनके टोले में जो १२ २० घर थे वह सब आर्यसमाजी हो गये। इसके साथ २ ग्राम में ब्राह्मणों का विरोध बढ़ गया। वह ग्राम निवासियों को साथ लेकर इनका विरोध करने लगे। उनमें भी लगन थी। वे अपना काम करते थे।

अन्त में मेंडीरोड़ा में एक शास्त्रार्थ हुआ जिसमें आर्य समाज और सनातन धर्म की टक्कर हुई। प्रायः यह प्रान्त सिक्ख प्रधान है। सिक्खों की गाथाओं के लोगों के संस्कार थे। आर्य समाज सर्वथा नई वस्तु थी। इसलिये श्रोताओं का खूब जमाव हुआ। शास्त्रार्थ भी मूर्ति पूजा पर छिड़ गया। इसमें आर्य समाज की विजय स्वाभाविक थी। क्योंकि सिक्खों में ग्रन्थ की पूजा तो है, मूर्ति की पूजा नहीं। ब्राह्मणों में मूर्ति पूजा थी परन्तु उनकी संख्या अल्प थी, इस वास्ते विजय का सेहरा आर्यसमाज के सिर बंधा।

दैव योग से एक घटना और हो गई। जो धन प्राप्त हुआ सनातन धर्मी तीन पंडित थे, बंटवारे में कलह हो गई। आर्य समाजी २ थे जो धन मिला सभा को भेज कर आगे चल दिये। इसका प्रभाव भी आर्य समाज के विषय में जनता पर अच्छा ही पड़ा।

अब हरीसिंहजी ने आर्यसमाज का साहित्य इकट्ठा करना प्रारम्भ किया। ग्राम की दृष्टि से इनका अच्छा पुस्तकालय था। यथा—ऋषि दयानन्द की पुस्तकें थीं, पं० लेखराम जी कृत पुस्तकें थीं, पं० भीमसेन की 'वेद सिद्धान्त' मासिक निकाला करते थे उसकी फाइलें थीं, 'सद्धर्म प्रचारक' की सब फाइलें, प० महामहोपाध्याय आर्यमुनि जी के भी सब दर्शन और पुस्तकें थी। इसी भांति अन्य पंडितों की लिखी पुस्तकें थीं।

इसके पश्चात् इन्होंने अन्य ग्रामों में प्रचार आरम्भ किया। जलाला में डा० रूपोराम जी को आर्य समाजी बनाया। वहां उदासी साधुओंका डेरा था, उसमें संस्कृत पाठशाला थी। उसके अध्यापकों में प्रचार किया। उनमें कइयों को आर्यसमाजी बनाया, परवोवाल में कइयों को आर्य समाजी बनाया। अकालगढ़ ग्राम में जगसिंह आदि को आर्य समाजी बनाया। मालेरकोटला के पास एक ग्राम में टीकमसिंह नम्बरदार के परिवार को आर्य समाजी बनाया। इस प्रकार धीरे-धीरे इन्होंने जहां जहां इनका सम्बन्ध था अनेकों को आर्य समाजी बनाया और अनेकों को आर्य समाज के संस्कार दिये।

इनके घर में अपनी सन्तान न थी। इनका भतीजा सम्पूर्णसिंह अब भी है। इसको इन्होंने पहले स्कूल में पढ़ाया फिर संस्कृत पढ़ाई। यह उनका विस्तृत कार्य क्षेत्र था। व्यवहार विषय में, सत्य बोलने में, ग्राम में आस पास उनकी धाक थी। इस विषय में एक बात लिख कर समाप्त करना चाहता हूँ।

उस ग्राम में एक घटना हो गई। उसकी तफतीश के लिए थानेदार साहब आये। वह भी बहुत सज्जन पुरुष थे। घूस आदि न लेते थे। पक्षविपक्ष में लोगों ने बातें कीं। दोनों पक्षों की बातें सुनकर वह किसी निश्चित परिणाम पर न पहुंच सके। सन्दिग्ध अवस्था में वह कुछ करने से संकोच करते थे। उन्होंने पूछा इस ग्राम में कोई ऐसा आदमी है जो निष्पक्ष समझा जाता हो। लोगों ने कहा, यहां हरीसिंह हैं, किन्तु वह किसी झगड़े में आते ही नहीं। वह पुस्तकें पढ़ने व अपने घर पर लड़कियों को पढ़ाने या कहीं पर धर्म की बातें करने में लगे रहते हैं। थानेदार ने इनको बुलाया और कहा "हरीसिंह यहां जो घटना हुई है मैं उसके विषय में कुछ पूछना चाहता हूँ।" इन्होंने कहा, मैं तो किसी का गवाह नहीं हूं। आप मुझ से क्यों पूछते हैं। गांव वालों से पूछें, नम्बरदारों से पूछें। उसने कहा, "नहीं मुझे विश्वास है कि आप मुझे ठीक-ठीक बतला देंगे। इसलिए मैं आपसे पूछना चाहता हूं।"

हरीसिंह ने कहा, यदि आपने पूछना है तो उन दोनों को भी बुला लें जिनका विवाद है ताकि उनको मेरे विषय में कोई शिकायत न हो।" उसने बहुत अच्छा कह कर दोनों को बुला लिया। वे चारों एक जगह बैठ गये।

हरीसिंह ने उन दोनों को सम्बोधित करके कहा, "देखो भाई; मैंने कभी गवाही नहीं दी। यह भी आप जानते हैं कि मेरा ग्राम में किसी के साथ झगड़ा नहीं। आपके साथ भी कुछ नहीं। थानेदार साहब मुझे मजबूर कर रहे हैं कि जो आपका झगड़ा है मैं बताऊं, वह क्या है? न चाहते हुए भी मुझे कहना पड़ता है इस अवस्था में यदि आप मेरी सहायता कर सकते हैं तो करें। मैं थानेदार साहब से यह तो कह सकता हूँ कि आप इस झगड़े को बढ़ाने की अपेक्षा निपटाने का यत्न करें किन्तु न्याय तो होना ही चाहिये।

यह बात सुन कर थानेदार से उन दोनों ने कहा, "हमें हरीसिंह पर विश्वास है जो कुछ इन्होंने कहा है हम पर इसका इस समय प्रभाव है। इसलिये हमें दो मिनट बाहर जाकर सम्मति करने की आज्ञा दें।" थानेदार ने तथास्तु कहा। वे बाहर जाकर सम्मति करके लौट आये और आकर कहा कि थानेदार जी ये हरीसिंह बैठे हैं हम आपको सच २ बतलाये देते हैं, क्या हुआ? इसलिए हरीसिंह को बोलने के लिए मजबूर न करें यदि हम कुछ झूठ कहें तो ये बतलावें। थानेदार ने कहा, कहो। उन्होंने जो घटना थी, सच-सच बतला दी। थानेदार ने सारी घटना समझ ली और हरीसिंह का धन्यवाद करते हुए कहा, आप धन्य हैं, जो इस प्रकार का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मैं इन दोनों का राजीनामा करवाऊंगा, बढ़ाऊंगा नहीं। इसलिए आप प्रसन्नता पूर्वक जा सकते हैं। वे अपने स्थान पर चले आये। इस जीवन से धर्म प्रेम, संस्कृत शिक्षा, प्रचार की लगन, सत्यता पूर्वक जीवन व्यतीत करने की शिक्षा कोई लेना चाहे तो ले सकता है।

(पृष्ठ ६६१ का शेष)

हिन्दू होते हुये सम्पादक के मुख से यह शब्द कैसे निकल पड़ा।

(४) एक मुसलमान राजा का पक्ष लेते हुए हिन्दू राजा का गला काटने के लिये दो हिन्दू कौन कितनी वीरता दिखाते हैं। हिन्दुओं में जातिद्रोह को सिद्ध करने का कितना कुप्रयत्न है और वह भी एक हिन्दू की लेखनी से! इस कथा का माहात्म्य भी एक श्लोक में लिखा है सुनिये!

सत्यवीर कथां श्रुत्वा सर्वं पापैः प्रमुच्यते

इस सत्यवीर की कथा को सुनकर मनुष्य सब पापों से छूट जाता है तब तो जयचन्द की कथा का भी प्रति दिन पाठ होना चाहिये। शोक-शोक महा शोक! स्वार्थ में फंसकर मनुष्य का कितना पतन हो जाता है। क्या आपके शिवाजी का यवनेश्वरों को प्रसन्न करने और अपने को असम्प्रदायी सिद्ध करने के लिये तो यह कुप्रयास नहीं? यदि ऐसी कथा यवनेश्वरों के प्रतिकूल लिखी जाती तो मुसलमान अपने प्रबल नाद से गगन तक को हिला देते।

महिला-जगत्

पुराणों में पतिव्रत धर्म की विडम्बना और नारी जाति का घोर तिरस्कार

लेखक—श्रीयुत पं० गंगाप्रसाद जी, रि० चीफ जज

वैदिक समय में स्त्रियों व पुरुषों के समान अधिकार थे। स्त्रियां वेद पढ़ती थीं, यज्ञ करती थीं, विवाह होने पर पति व पत्नी में सब प्रकार की समानता थी। वैदिक युग के बाद स्त्रियों को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं रहा। *पौराणिक युग* में स्त्रियों का पढ़ने व लिखने का बिलकुल अधिकार जाता रहा। *"स्त्री शूद्रौ नाधीयताम्"* अर्थात् स्त्री व शूद्र न पढ़ें, ऐसा नियम होगया। पुराणों के अनुसार पति व पत्नी में समानता न रही। *पतिव्रत धर्म* का महत्व बढ़ता गया। *पत्नीव्रत धर्म* को कोई स्थान नहीं था। पुराणों में उसका नाम भी देखने को नहीं मिलेगा। स्त्रियां पुरुषों की दासी के समान होगईं। इस विचार-धारा का उद्देश्य यही था कि स्त्रियां पुरुषों के सब प्रकार अधीन रहें, उनकी पूर्ण रीति से आज्ञा पालन करें, और दासी के समान सेवा सुश्रूषा करें।

(२) पौराणिक युग में जिस प्रकार स्त्री जाति का निरादर हुआ उसी प्रकार *शूद्रों* का भी अधःपतन हुआ। शूद्र जन्म से ही नीच माने जाने लगे। उनकी हीनता व जन्म के ब्राह्मणों की श्रेष्ठता जतलाने के लिये ऐसे श्लोक पुराणों में रक्खे गये—

मूर्खोऽपि द्विजः श्रेष्ठः नच शूद्रो जितेन्द्रियः,
निर्दुग्धा चापि गौ पूज्या न च दुग्धवती खरी।"

(अर्थ) ब्राह्मण मूर्ख भी श्रेष्ठ है। शूद्र जितेन्द्रिय भी नहीं। जैसे कि गौ बिना दूध वाली भी पूज्य है, पर गधी दूध वाली भी नहीं हो सकती।

इस प्रकार *स्त्री जाति* व *शूद्र जाति* का पौराणिक समय में पतन हुआ। इस लेख में मुझ को *स्त्री जाति* के पतन के विषय में ही अपने विचार प्रकट करने हैं। *पातिव्रत धर्म* की जो महिमा पुराणों में गाई गई है उसका यही अभिप्राय है कि स्त्रियां अपने पति को, चाहे वह दुराचारी भी हो ईश्वर के समान समझे। उदाहरण के लिये मैं *मारकण्डेय* पुराण की एक *आख्यायिका* की ओर पाठकों का ध्यान दिलाऊंगा जो हिन्दी भाषा के प्रसिद्ध साप्ताहिक पत्र "धर्मयुग" के २ जनवरी १९५२ के *कहानी विशेषांक* में प्रकाशित हुई है, मैं कथा को अधिकांश उन्हीं शब्दों में लिखूंगा।

(३) कथा इस प्रकार है—

प्रतिष्ठानपुर में एक व्यक्ति कौशिक रहता था जो कुष्ठी था और चलने में भी असमर्थ था। उसने एक परम सुन्दरी वेश्या को मार्ग से जाते देखा। वह उस पर अत्यन्त आसक्त होगया। उसकी पत्नी बड़ी *पतिव्रता* थी। कौशिक ने उससे कहा कि यदि तू मुझको जीवित रखना चाहती है तो मुझको जैसे बने उस वेश्या के पास ले चल। पत्नी ने कहा—"स्त्री के लिये पति परमेश्वर है, और उसकी इच्छा ही ईश्वर इच्छा है। स्वामी जिस तरह हो सके मैं आपको उस स्त्री के पास ले चलूंगी।" पत्नी ने कौशिक की टांगें धोईं, स्नान कराया, और सायंकाल होने पर उसको अपने कन्धे पर चढ़ाकर ले चली। मार्ग में एक मांडव्य ब्राह्मण चोरी के अपराध में सूली पर चढ़ाया हुआ

था, उसने चोरी नहीं की थी। पर राजपुरुषों ने उसको चोरी के भ्रम से सूली का दण्ड दे दिया था और मांडव्य ने राज आज्ञा का मान करके दण्ड स्वीकार कर लिया था। कौशिक का शरीर मांडव्य के बदन से छूगया। मांडव्य की वेदना बहुत बढ़ गई, उसने शाप दिया कि कौशिक सूर्य निकलने से पहले मर जायगा। उसकी पत्नी ने निवेदन किया कि अपराध उसका है, पति के स्थान में उसको यह दण्ड दिया जाय। मांडव्य ने कहा कि कौशिक के शरीर लगा उसी को दण्ड मिलना चाहिये, यह भी कहा कि "ब्राह्मण के मुख से निकला हुआ शाप वृथा नहीं जाता।" कौशिक की पत्नी ने कहा—"अब मैं भी कहती हूं कि यदि मैं पतिव्रता होऊंगी तो मेरी प्रार्थना से सूर्योदय होगा ही नहीं जब तक आपका शाप नहीं वापिस होता।" कथाकार ने लिखा है—"ब्राह्मण तेज पर पातिव्रत तेज विजयी हुआ, रात का अन्त न हुआ।" सारे संसार में कोहराम मच गया। देवता लोग विष्णु के पास गये, विष्णु ने कहा कि अनुसूइया जी के पास जाओ वे पतिव्रता शिरोमणि है। देवता अनुसूइया जी के पास गये वे प्रतिष्ठानपुर गई, और कौशिक की पत्नी को समझाया और कहा—"जानती हो लोक मर्यादा के लिये *पातिव्रत का तेज* जितना अनिवार्य है, *ब्राह्मण* का तेज भी उतना ही है। अतः दोनों की मर्यादा का रक्षण होना चाहिये।" तब कौशिक पत्नी ने सूर्य से उदित होने की प्रार्थना की। सूर्य उदय हुए, पर *ब्राह्मण* के शाप से *कौशिक* की मृत्यु होगई। तब अनुसूइया ने उसको पुनर्जीवित किया, और कहा कि "मैंने भी जो कुछ प्रभाव प्राप्त किया है वह *पातिव्रत* की ही देन है, मुझ में स्वयं का कुछ नहीं।"

(२) इस कथा में *पातिव्रत तेज* और *ब्राह्मण तेज* के बीच संग्राम होना बतलाया गया। पहले *पातिव्रत तेज* विजयी हुआ, अन्त में *ब्राह्मण तेज* की भी विजय होगई। पातिव्रत तेज के मूल में *स्त्री जाति* का निरादर है। *ब्राह्मण तेज* के मूल में *शूद्रों* का अधःपतन है। *स्त्री जाति का पतन* व *शूद्रों का पतन* दोनों पौराणिक युग की देन हैं, और दोनों हिन्दू समाज के लिये अभिशाप हैं।

कथाकार ने अनुसूइया जी से ये शब्द कहलाये— "लोक मर्यादा के लिये पातिव्रत का तेज जितना अनिवार्य है, ब्राह्मण का तेज भी उतना ही।" समाज-सुधारक यह कहेगा—

"लोक मर्यादा और समाज की सुव्यवस्था के लिये पत्नीव्रत धर्म और स्त्रियों का सुधार उतना ही आवश्यक है कि जितना शूद्र व दलित जातियों का उद्धार। वास्तव में स्त्री जाति का निरादर करने के भाव से बनावटी पातिव्रत धर्म का महत्व इस कथा में इतना बढ़ाकर बतलाया गया है कि एक साधारण स्त्री के आदेश से रात्रि के अन्त होने पर भी सूर्य उदय नहीं हुआ, संसार में कुहराम मच गया, देवता लोग भी घबरा कर विष्णु की शरण में गये। विष्णु भी असमर्थ हुए, और एक पतिव्रता स्त्री की शरण लेनी पड़ी।" कौशिक एक ऐसा दुराचारी व्यक्ति था कि कोढ़ी और पंगु होने की दशा में भी वह एक वेश्या पर आसक्त हुआ, और अपनी पत्नी के पातिव्रत भाव से लाभ उठाकर उसी से इस दुष्कर्म में सहायता मांगी।

यह शोक की बात है कि ऐसी कथाएं भी (जिनके मूल में पाप कर्म की तथा देश व धर्म के पतन की भावनाएं हैं) धर्म की आदर्श कथा के रूप में प्रकाशित व प्रचारित होती हैं। ईश्वर भारतीयों को सद्बुद्धि देवे।

दीवार की तस्वीर

लेखक—नरेंद्र ठाकुर

किसी जमाने में विंध्याचल राज्य के ऊपर हरिहर राय का शासन था।

राजा के एक ही बेटी थी। जिसका नाम था चित्रावली। वह सयानी हुई। शादी की तैयारियां धूम धाम से होने लगीं। देश देश से चतुर कारीगर बुलवाये गये। नये नये मकान बनने लगे। मण्डप और चित्रशालाओं की रचना होने लगी।

सजावट पूरी हुई। विवाह मण्डप भी तैयार हो गया। मन्त्रियों और परिजनों के साथ आकर राजा ने सबका स्वागत सत्कार किया। सब सन्तुष्ट थे। कोई कमी न थी लेकिन मण्डप की दीवारों पर जो चित्र बने थे, वे बिलकुल मामूली जान पड़ते थे। उनमें कोई विशेषता नहीं दीख पड़ती थी। राजा को केवल यही कमी खटक रही थी।

राजा का रुख देखकर मन्त्री ने निवेदन किया—हम घोषणा करेंगे कि अद्भुत चित्र बनाने वालों को हम मुंह मांगा इनाम देंगे। उसके लिए जरूर योग्य व्यक्ति आ जायेंगे।' राजा को यह सलाह जंच गई।

ढिंढोरा पीटा गया। कुछ दिन के बाद दूर देश से दो चित्रकार आये। दोनों ने अपनी अपनी तारीफ कह सुनाई। दूसरे चित्रकार ने सिर्फ एक प्रार्थना की। पहला चित्रकार जिस दीवार पर चित्र बनाये, ठीक उसके सामने सामने की दीवार पर मैं अपना चित्र बनाऊं—इसकी आज्ञा मुझे दी जाय।

राजा ने उसकी यह शर्त मान ली।

दोनों के लिये दीवारें खड़ी की गईं। फिर चित्रकारों ने अपनी अपनी कूचियां सम्भालीं। दोनों अपने अपने काम में जुट गये। ठीक एक महीना पूरा हुआ। राजा को खबर भेज दी गई। मन्त्री, सामन्त, पण्डित और परिजनों के साथ आकर राजा सबसे पहले प्रथम चित्रकार की दीवार के पास गया और पर्दा हटा कर देखने लगा। राजा और उनके साथ के सब लोग अचरज में डूब गये। समस्त प्रकृति उस दीवार पर नाच रही थी। राजा ने कहा—अद्भुत! अत्यद्भुत!!

किसी की आज्ञा लिये बगैर ही दूसरे चित्रकार ने अपने चित्र का आवरण हटा दिया। लोगों की दृष्टि उस ओर मुड़ी। राजा देखते ही मन्त्र-मुग्ध हो गया। कुछ देर के बाद होश में आने पर बोला—'आहा! कैसी सुषमा!!'

पहले चित्रकार का चित्र अत्यन्त स्वाभाविक था और आश्चर्य उत्पन्न कर रहा था। दूसरे के चित्र ठीक वैसे ही थे। लेकिन उनमें एक अद्भुत जीवन्त ज्योति भर रहे थे। दोनों ने किस तरह ठीक एक से चित्र बनाये? इनाम अब किसे दिया जाय? यह समस्या उठ खड़ी हुई।

इसके बाद धीरे धीरे इसका रहस्य लोगों को मालूम हुआ। दरअसल दूसरे चित्रकार ने कोई चित्र नहीं बनाया था। जबसे पहले चित्रकार ने अपना काम आरम्भ किया, तब से वह अपनी दीवार को एक तरह के मसाले से चिकनाने और चमकाने लग गया। मांजते मांजते वह दीवार आईने की तरह चमकने लगी। उसके सामने ही दूसरा चित्रकार चित्र बना रहा था और वे सब चित्र इस दीवार पर पड़ कर चमक उठे। उस प्रतिबिम्ब ने ही राजा और उसके दरबारियों को आश्चर्य में डाल दिया था।

आर्य समाज के इतिहास की झलक

श्री परोपकारिणी सभा, (दयानन्द आश्रम, केसरगंज,) अजमेर

(गतांक से आगे)

(११) मसूदा राव साहब श्री बहादुर सिंह जी प्रथम अधिवेशन के प्रथम दिवस तो अपने दीवान श्री कृगन लाल जी द्वारा और द्वितीय दिवस तथा तृतीय और चतुर्थ अधिवेशन में स्वयं उपस्थित थे। अधिवेशन सं०७ में भी एक दिन आप विद्यमान थे। अधिवेशन ३ में आपका त्यागपत्र प्राप्त हुआ जो सखेद स्वीकार हो गया।

(१२) राय बहादुर सुन्दर लाल जी अलीगढ़ स्वयं प्रथम और तृतीय अधिवेशन में उपस्थित हुये और द्वितीय अधिवेशन में राजा जय कृष्ण दास जी ने आपका प्रतिनिधित्व किया। पंचम अधिवेशन के पूर्व आपका देहान्त हो गया।

(१३) ला० दुर्गा प्रसाद जी फर्रुखाबाद १, ३, ६, ३ अधिवेशन में स्वयं उपस्थित हुए तथा २ और ४ अधिवेशन में आपका प्रतिनिधित्व क्रमशः राजा कृष्ण दास जी और राव साहब बहादुर सिंह जी ने किया।

(१४) ला० जगन्नाथ प्रसाद जी फर्रुखाबाद १ और ६ अधिवेशन में स्वयं उपस्थित थे। २ और ३ में आपका प्रतिनिधित्व क्रमशः श्री मोहन लाल जी विष्णुलाल जी पंड्या और ला० दुर्गाप्रसाद जी ने किया। ७ वें अधिवेशन से पूर्व आपका देहान्त हो गया।

(१५) सेठ निर्भयराम जी प्रथम अधिवेशन में आपका प्रतिनिधित्व आपके सुपुत्र श्री श्रीराम जी ने और दूसरे अधिवेशन में श्री मोहन लाल जी विष्णु लाल जी पड्या ने किया। तृतीय अधिवेशन में आप स्वयं उपस्थित थे और पंचम अधिवेशन के पूर्व आप का देहान्त हो गया।

(१६) ला० कालीचरण जी, राम चरण जी, फर्रुखाबाद—दोनों भ्राताओं के नाम एक सदस्य के रूप में अंकित हुये। प्रथम अधिवेशन में आप दोनों उपस्थित थे, द्वितीयमें आपका प्रतिनिधित्व श्री मोहन लाल जी विष्णु लाल जी और तृतीय में श्री देवी प्रसाद जी ने किया। ५ वें अधिवेशन में श्री काली चरण जी ने त्याग पत्र दे दिया और श्री राम चरण जी ७ और ८ वें अधिवेशन में उपस्थित हुए।

(१७) श्री छेदी लाल जी मुरार का प्रतिनिधित्व प्रथम अधिवेशन में उनके भाई श्री शिव नारायण जी ने किया और तृतीय अधिवेशन में लाला नारायणदास जी ने किया।

(१८) ला० साईं दास जी लाहौर—आप १, २ ३ और ४ अधिवेशन में निरन्तर उपस्थित रहे और ५ वें से पूर्व आपका देहान्त हो गया।

(१९) श्री माधव लालजी दानापुर(पटना)—आप स्वयं प्रथम अधिवेशन में उपस्थित हुए। द्वितीय अधिवेशन में डा० गंगादीन जी और चतुर्थ में मन्त्री आर्यसमाज अजमेर आपके प्रतिनिधि थे।

(२०) मान्यवर महादेव गोविन्द रानाडे—प्रथम अधिवेशन में आप स्वयं उपस्थित थे। २, ३ में आप का प्रतिनिधित्व क्रमशः श्री मोहनलाल जी विष्णुलाल जी पंड्या ने और श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा ने किया।

(२१) मान्यवर श्री गोपाल राव हरि देशमुख—प्रथम अधिवेशन में उपस्थित थे। आप ला०रामशरण दास जी के स्थान में प्रथम अधिवेशन में सभा मन्त्री चुने गये। द्वितीय अधिवेशन में आपका प्रतिनिधित्व श्री मोहनलाल जी विष्णुलाल जी पंड्या ने किया और तृतीय में श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा ने किया।

द्वितीय अधिवेशन में राव साहब उन्हीं दिनों अपने ज्येष्ठ पुत्र श्री गणपत राव के विशूचिका से देहान्त हो जाने के कारण नहीं आ सके थे। ७ वें अधिवेशन के पूर्व आपका देहान्त हो गया।

(२२) श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा—१, ३, ४, ५, ६, ७ और ६ वें अधिवेशन में उपस्थित थे। द्वितीय अधिवेशन में श्री मोहन लाल जी विष्णुलाल जी और अधिवेशन ८ में श्री हर विलास जी ने आपका प्रतिनिधित्व किया। श्री मोहनलाल जी विष्णु लाल जी के सभा के मन्त्री निर्वाचित हो जाने पर आप सभा के उपमन्त्री निर्वाचित हुये और वैदिक यन्त्रालय के अजमेर आ जाने पर आप उसके अधिष्ठाता निर्वाचित हुये।

(२३) राजा जय कृष्ण दास जी घोड़े से गिर जाने के कारण प्रथम अधिवेशन में उपस्थित न हो सके। तदुपरान्त आप २, ५ और ६ वें अधिवेशन में पधारे।

ऊपर लिखित २३ सभासदों से परोपकारिणी सभा का निर्माण हुआ था। तदन्तर ज्यों ज्यों स्थान रिक्त होते गये उनकी पूर्ति नीचे लिखे प्रकार से हुई :—

(१) अधिवेशन ४ में श्री लालचन्द जी एम०ए० लाहौर।

अधिवेशन ५ में श्री ईश्वरदास जी एम० ए०, महात्मा हंसराज जी और दीवान बहादुर हर विलास जी शारदा।

अधिवेशन ६ में लोकमान्य लाला लाजपतराय जी और श्री रामदुलारे जी वाजपेयी।

अधिवेशन ७ में डा० मुकन्द सिंह जी, बैरिस्टर रामगोपाल जी और ला० पुरुषोत्तम नारायण जी फर्रुखाबाद।

अधिवेशन ६ में मुन्शी पदम चन्द जी, बैरिस्टर रोशन लाल जी, राव करण सिंह जी बेदला और श्री गौरीशंकर जी सदस्य चुने गये। यह महानुभाव जिन जिन अधिवेशनों में सम्मिलित हुये उनकी संख्या उनके नामों के नीचे अंकित है। विशेष उल्लेखयोग्य यह है कि महात्मा हंसराज जी, लाला लाजपत राय जी, मुन्शी पदमचन्द जी सदस्य निर्वाचित होने के कारण भी सभा के अधिवेशन में आर्यसमाजों के प्रतिनिधि स्वरूप योग देते रहे।

आर्यसमाजों में सभा की मान्यता का बोध कराने के लिये सभा को २ से ५ वें अधिवेशनों में सारे देश की आर्य समाजों से प्रतिनिधि स्वरूप पधारने वाले आर्य सज्जनों की संख्या नीचे दी जाती है :—

अधिवेशन	सभा कार्यालय को ज्ञात आर्यसमाज की संख्या	अधिवेशन में प्रतिनिधि भेजने वाले समाजों की संख्या	अधिवेशन में आने वाले प्रतिनिधियों की संख्या	प्रान्तीय संख्या
१	७३	२०	३३	उ०प्र० १८, राज १०, बंबई २ लाहौर २, जबलपुर १
३	१७४	४५	८०	उ. प्र. ५६, राज. १२, बंबई १ पंजाब ११
४	—	१६	३३	उ. प्र. ०, राज. ११, बम्बई २ पंजाब ४, सभा २, सन्यासी ब्रह्मचारी, विद्वान् ४
५	२५०	३०	६५	राज. ४२, पंजाब ८, उ. प्र. ६, बम्बई ३, म० भा० ३ संन्यासी ३
६	२११	—	—	
७	२२६	—	—	

(क्रमशः)

हमारी प्रदेशीय सभाएं

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब—

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अन्तरंग सभा ने अपनी २६-१२-५४ की बैठक में अपने अधीनस्थ स्कूलों और कालिजों में सहशिक्षा का अन्त करने का निश्चय किया है और स्कूल एवं कालिजों के अधिकारियों को इस निश्चय को अविलम्ब कार्यान्वित करने की प्रेरणा की है। किसी वैधानिक वा राजकीय बाधा के निराकरण के लिये प्रतिनिधि सभा से परामर्श करने का भी सम्बद्ध शिक्षणालयों को परामर्श दिया गया है।

नारायण दास कपूर
मन्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई—

प्रान्त की समस्त आर्य समाजों के कार्यकर्त्ताओं, हितैषियों तथा सम्बन्धित व्यक्तियों को सूचित किया जाता है कि 'वेदविद्यालय धरनिया बुलन्दशहर' की ओर से कोई अनधिकृत व्यक्ति चन्दा जमा कर रहा है। इस संस्था का आर्यसमाज के संगठन में कोई स्थान नहीं है। यह एक स्वतन्त्र संस्था है।

यद्यपि आर्य समाजें आर्य समाज के संगठन से स्वतन्त्र संस्थाओं को दानादि देने में सावधानता बर्तती हैं फिर भी आप से सानुरोध निवेदन है कि 'बिना प्रदेशीय वा सार्वदेशिक सभा' से प्रमाणित संस्थाओं के लिये कोई आर्य समाज वा आर्य भाई चन्दा न दें तो यह उनका उचित कार्य होगा। जिन लोगों वा संस्थाओं के पास प्रदेशीय सभा अथवा सार्वदेशिकसभा का प्रमाणपत्र हो उन्हीं को धन संग्रह में सहयोग दिया जाय।

बेणीभाई आर्य
मन्त्री सभा

आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान—

आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान व अजमेर, जयपुर का वार्षिक अधिवेशन दिनांक २० व २१ दिसम्बर को जोधपुर नगर में सम्पन्न हुआ। आगामी वर्ष के लिये निम्न पदाधिकारी निर्वाचित हुये—

१. श्री डा० मथुरालाल जी एम० ए० डि०लिट० जयपुर प्रधान
२. ,, उग्रसेन जी सेठी, जयपुर उपप्रधान
३. ,, पं० भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण अजमेर ,,
४. ,, पं० स्थयन जी आर्य, जोधपुर ,,
५. ,, पं० राज बहादुर जी, कोटा ,,
६. ,, हरिनारायण जी, बीकानेर ,,
७. ,, पं० सोहनलाल जी, उदयपुर ,,
८. श्रीमती रामप्यारी देवी जी एम०ए० शास्त्री उपप्रधाना
९. श्रीयुत भगवती प्रसाद जी सिद्धान्त भास्कर जयपुर मन्त्री
१०. ,, सरस्वती प्रसाद जी बी० ए० साहित्य रत्न, जयपुर उपमंत्री
११. ,, भवानी लाल जी भारतीय एम०ए० जोधपुर ,,
१२. ,, दामोदर लाल जी सिद्धान्त शास्त्री जयपुर कोषाध्यक्ष

इन अधिकारियों के अतिरिक्त २० अन्तरंग सदस्य चुने गये।

वैदिक-धर्म-प्रसार के समाचार

पूना में धर्म प्रचार

यद्यपि बम्बई प्रान्त के गुजरात प्रदेश में आर्य समाज का काफी प्रचार है परन्तु इसके दक्षिणी भाग में प्रचार की कमी के कारण अब तक प्रांत निर्बल सा रहा है। यह हर्ष की बात है कि बम्बई सभा के अधिकारियों का ध्यान दक्षिणकी ओर खिंचा है। २ जनवरी १९५५ के आर्य प्रकाश के अनुसार सभा के प्रधान पं० विजय शंकर जी तथा मंत्री श्री वेणीभाई आर्य पूना आर्य समाज के निमन्त्रण पर वहां गये और धार्मिक विषयों पर कई व्याख्यान दिये। पूना के सज्जनों ने प्रचार की उत्तम व्यवस्था करने के अतिरिक्त साहित्य द्वारा वैदिक धर्म के प्रचार के लिये आर्थिक सहायता भी दी। इस प्रकार समारोह से पूना के सामाजिक जीवन को बहुत पुष्टि मिली है।

वैदिक धर्म रक्षक सम्मेलन

मध्य प्रदेश के डुमार (सरगुजा) नामक स्थान पर १९-१२-५४ बुधवार के दिन दोपहर के ११ बजे से सायंकाल ५ बजे तक ठाकुर हरिप्रसाद जी कौंसिलर जनपद सभा कोरिया की अध्यक्षता में वैदिक धर्म रक्षक सम्मेलन का अधिवेशन बड़े उत्साह से मनाया गया। श्री श्यामलाल जी जाति सरपंच ओरांव ने स्वागत-भाषण देते हुए बतलाया कि आज हमारी जाति धर्म तथा संस्कृति संकट में हैं। कारण यह है कि हमारे बीच में विदेशी ईसाई मिशनरी अनेक प्रकार के भले और बुरे उपायों से हम लोगों में परस्पर फूट पैदा करके अपने मत का प्रचार कर रहे हैं जिससे सावधान होकर एकता के साथ हम वनवासी भाइयों को अपनी रक्षा के उपाय सोचने चाहियें। सम्मेलनमें जिन सज्जनों ने भाषण दिये उनमें से श्री बलराम जी गुप्त श्री बुधीराम जी ओरांव, श्री शंकर प्रसाद जी जाय सवाल, श्री चन्द्रभान सिंह जी राजगोंड, श्री बाबूलाल जी बड़का, श्री जगदीश प्रसाद जी टेलरमास्टर, श्री स्वामी आर्यबंधु जी उपदेशक आदि महानुभावों के भाषण हुये। सर्व सम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

'हम वनवासीजन कोरिया जिला सरगुजा निवासी डुमार ग्राम के इस सम्मेलन की ओर से प्रस्ताव द्वारा घोषणा करते हैं कि हम वनवासियों का हरएक व्यक्ति अपने प्राचीन धर्म तथा रीति रिवाज की रक्षा के लिये कटिबद्ध है। हम सब आर्य (हिन्दू) हैं। हम समस्त हिन्दू समाज के महापुरुषों से ईसाइयों के इस आक्रमण से बचाने के कार्य में सहायता की प्रार्थना करते हैं।"

वनवासी सेवा शिक्षण शिविर

मध्यप्रदेश में वनवासियों में धार्मिक जागृति उत्पन्न करने के लिये जो दूसरा बड़ा आयोजन किया गया वह रायपुर में वनवासी सेवा शिक्षण शिविर के रूप में था। शिविर के सैनिकों के निवास तथा भोजन आदि का प्रबन्ध वहां के दूधाधारी मठ के महन्त श्री वैष्णवदास जी की ओर से किया गया था। श्री स्वा० विद्यानन्द जी शिविर के अधिष्ठाता थे। शिविर में लगभग ३० युवकों ने भाग लिया। स्वामी जी के अतिरिक्त आचार्य रुद्रमित्र जी शास्त्री, श्री स्वामी शंकर देव जी वानप्रस्थी आदि विद्वानों ने शिक्षणकार्य किया। मध्यप्रदेश की प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री घ० श्यामसिंह गुप्त तथा श्री बलदेव प्रसाद जी मिश्र के शिविर में पधारने से कार्यकर्ताओं तथा सैनिकों के उत्साह में बहुत वृद्धि हुई।

फ्रैंच विद्वान् की गुरुकुल यात्रा

फ्रांस के एक प्रसिद्ध विद्वान् जैकस डी माफे पी० एच० डी० अपनी धर्मपत्नी के सहित मतलप्फाह गुरुकुल गये। आप वहां दो दिन रहे। आपने वहां

रहकर जो कुछ देखा और जानकारी प्राप्त की, उसके आधार पर आपने निम्न सम्मति प्रकट की है :—

'Our stay at the Gurukul Kangri has been a most happy and inspiring experience. My wife and I were impressed by the specious campue, the adequate equipment of the various colleges. the fine library musium and hospital, and above all by the remarkable health fitness and buoyant countenance of the Brahmacharies.

It was very gratifying to see here a blending of modern scientific methods .with traditional Indian culture. I was particularly happy that while the old Brahmachary a discipline of boys leaving of their families for the whole period of their education was faithfully adhered to yet it was not in an atmosphere of blind attachment to antique forms. Being deeply concerned with the bringing about of a new world civilization, based on "One God, one world. one religion." I am really grateful to the Arya Samaj for having preserved a deeply religious atmosphere in this university while bringing up the students in a spiritual outlook free from the cult of anthropomorphic deities and their images,"

हमने गुरुकुल कांगड़ी में निवास करके बहुत प्रसन्नता प्राप्त की और उत्साह वर्धक अनुभव प्राप्त किया। मेरी पत्नी के और मेरे मन पर गुरुकुल के विशाल मैदान, भिन्न २ महा विद्यालयों में पर्याप्त शिक्षा सामग्री, बढ़िया पुस्तकालय, संग्रहालय और चिकित्सालय और सबसे बढ़कर ब्रह्मचारियों के स्वास्थ्य और खिले हुये चेहरों का हम पर बहुत प्रभाव पड़ा। यहां पर हमें अर्वाचीन वैज्ञानिक शैली के प्राचीन भारतीय संस्कृति के मिश्रण को देखकर बड़ा सन्तोष हुआ। मुझे इस बात से विशेष प्रसन्नता हुई जबकि ब्रह्मचर्य के पुराने नियमों का बालकों को परिवारों से अलग रखकर पालन कराया जाता है। यहां दकियानूसी बातों पर अन्धविश्वास नहीं रखा जाता। मैं स्वयं "एक ईश्वर, एक संसार और एक धर्म" में विश्वास रखता हूं और उसका प्रचारक हूं। इस कारण मैं आर्य समाज का बहुत कृतज्ञ हूं कि वह अनेक देवताओं और उनकी मूर्तियों की पूजा से ऊंचे उठकर एकेश्वरवाद के आध्यात्मिक वातावरण में छात्रों को शिक्षा देता है।

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी प्रधान सार्वदेशिक सभा का उड़ीसा का दौरा

सार्वदेशिक आर्य प्रति०सभा देहली के प्रधान श्री युत स्वा०ध्रुवानन्द जीसरस्वती हाल ही में उड़ीसाके उन स्थानोंका दौरा करके आये हैं जहां पर निर्धन व्यक्तियों को ईसाई बनाने का कार्य किया जा रहा है।

कुआंगा, झार सुगुड़ा, सुन्दरगढ़, राजगंगपुर, पानपुरा, राउर, केशा, टीराकुण्ड और वेदव्यास नामक स्थानों में गये। गत २—६ मासों में सार्वदेशिक सभा देहली की ओरसे सुन्दरगढ़ जिलान्तर्गत कुआंगा नामक स्थान से उसके आसपास के क्षेत्रों में ईसाई प्रचार निरोध का कार्य चल रहा है।

स्वामी जी के दौरे से ईसाई प्रचार निरोध का कार्य करने वालों को बड़ा प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है। उड़ीसा के कृषि मन्त्री श्री कृपानिधि का कहना है कि उक्त क्षेत्रों में लगभग पौने दो लाख व्यक्ति ईसाई बन चुके हैं।

नैनीताल जिले में आर्य समाज का प्रसार

ईसाई लोग कुमाऊं प्रान्त के भीतरी भागों में अपने अनेक प्रचार केन्द्र बना कर अनेक प्रकार प्रलो-भन देकर लोगों को ईसाई बनाने में लगे हुवे हैं। इस तरफ करीब १२००० व्यक्ति आर्य समाजी हैं और अपने आपको आर्य समाजी कहने में गौरव समझते हैं लेकिन अधिकांश लोग जानते नहीं कि आर्यसमाज के क्या सिद्धांत हैं ? इन लोगों में प्रचार की अत्यन्त आवश्यकता है। साधु, संन्यासी, वानप्रस्थी तथा प्रचारकों को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

आर्य समाज नैनीताल के उत्साही कार्य कर्ताओं ने विशेष परिश्रम करके जीवन को संकट में डालकर इन भीतरी भागों में जाकर दो आर्य समाजें स्थापित की हैं। एक आर्य समाज क्वैडा पानी लाडेखेन पट्टी धनियाकोट पो० गरमपानी जिला नैनीताल तथा दूसरी आर्य समाज शिलमोडीया गहलना पोस्ट सुर-पाताल जिला नैनीताल में। इन दोनों समाजों में बड़ी श्रद्धा तथा स्नेह पाया गया और इन्हीं की प्रेरणा से कुछ नई समाजें और भी बनेंगी। श्रीमान पं० हीरा नन्द पाराशर जी के ऐसे प्रभावशाली तथा प्रेम उत्पन्न करने वाले व्याख्यान हुवे कि दो एक और ग्रामों से भी निमन्त्रण आये हैं कि हमारे यहां समाजें स्थापित की जाय।

'लता को सुरैया बनाया गया'

देवास नगर में हाल ही एक सनसनी सी मची और लोगों ने देखा कि कायस्थ घराने की एक लड़की बनाम लता को हुसैनी रंडी के यहां से बरामद किया गया, जिसका नाम सुरैया रख दिया गया था। इस सुरैया को बड़ौदा की रंडी जीया यहां लाई थी और तभी से संदेह होने पर नागरिक मोर्चे तथा नगर आर्य समाज के कार्यकर्ता गण इसकी असलियत जानने के लिये प्रयत्नशील थे और करीब २ मास बाद कार्यकर्ता गण सफल हुवे तथा सुरैया को लता के रूप में पूर्व समाज के बीच ले आये। इस सत्कार्य में पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट श्री काले साहब एवं सिटी साहब ने जिस लगनसे कर्तव्यशील होकर कार्य किया वह वास्तव में सराहनीय ही नहीं अन्य अधिकारियों के प्रति अनुकरणीय भी रहा।

चुने हुए मोती

—महान् व्यक्ति ३ बातों से पहचाना जाता है। कार्य्य क्रम में उदारता, कार्य सम्पादन में मानवता और सफलता में संयम।

—यदि कोई व्यक्ति महान् बनना चाहे तो उसे महत्ता को भूलकर सत्य की खोज करनी चाहिये। इस खोज में उसे दोनों वस्तुएं मिल जायेंगी।

—जो व्यक्ति अच्छा नहीं वह महान् नहीं।

—जो व्यक्ति अपने जीवन को मनुष्यसमाजका नहीं समझता और परमात्मा उसे जो कुछ देता है उसे मनुष्य समाज के अर्पण नहीं करता वह महान् व्यक्ति नहीं बन सकता।

—राष्ट्र या समाज की महत्ता उसकी भौतिक सम्पन्नता में नहीं अपितु उसकी इच्छा शक्ति, विश्वास, चातुर्य और सदाचार की शक्तियों में निहित होती है।

हमारी शिक्षण संस्थाएं

कन्या गुरुकुल देहरादून—

३१ वर्ष पूर्व श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की प्रेरणा से आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने स्वर्गीय श्री आचार्य रामदेव जी तथा आचार्या कुमारी विद्यावती जी सेठ की संरक्षता में इस संस्था की स्थापना की थी।

भारतवर्ष में कन्याओं के लिये यह सब से प्रथम गुरुकुल है। अब तक १०० के लगभग कन्यायें इस संस्था से शिक्षा लाभ कर चुकी हैं और २०० के लगभग कन्यायें शिक्षा प्राप्त कर रही हैं। उत्तर भारत में छात्रावास के ढंग की (Residential Institution) यही एक मात्र संस्था है।

कन्या गुरुकुल का समस्त प्रबन्ध श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर के आधीन संचालित होता है। बजट, मन्दिर निर्माण तथा अन्य सब बातों के लिये विद्यासभा की स्वीकृति लेनी पड़ती है। संवत् १९९२ से गुरुकुलों का प्रबन्ध अन्तरंग सभा के आधीन न रह कर विद्यासभा के आधीन कर दिया गया है। अब उसी विद्यासभा की देख-रेख में तथा विद्यासभा द्वारा निर्वाचित वर्तमान अधिकारी १. श्री पं० ठाकुरदत्त जी शर्मा वैद्य अमृतधारा मुख्याधिष्ठाता। २. श्रीमती दमयन्ती देवी जी विद्यालंकृता साहित्यरत्न एम० ए० आचार्या के निर्देश और नियन्त्रण में संचालित हो रहा है। यह संस्था देहरादून की सुन्दर प्राकृतिक दृश्यों से घिरी हुई स्वास्थ्यप्रद भूमि में स्थित है। यह जगह समुद्रीय पृष्ठ से २८०० फीट ऊंची है। छात्राओं के निवास के लिये ६० बीघा भूमि में सुन्दर तथा विस्तृत आश्रम, चिकित्सालय, भोजनालय, स्नानागार, धर्मशाला आदि आवश्यक इमारतें बनी हुई हैं। खेलने के लिये खुला मैदान है, चारों तरफ सुन्दर पर्वतीय दृश्य तथा वनों की हरियाली ने संस्था को प्राचीन ऋषियों के आश्रम का रूप दिया है।

गुरुकुल में ६ से १० वर्ष की बालिका को प्रविष्ट किया जाता है। यह संस्था सार्वदेशिक है क्योंकि यहां भारत से बाहर के देशों, अफ्रीका ब्रह्मा इत्यादि देशों की कन्यायें भी शिक्षा प्राप्त करती हैं।

इस कुल में वैदिक तथा अर्वाचीन साहित्य के साथ-साथ गृहविज्ञान, शिल्पकला, संगीत, इतिहास, भूगोल, गणित, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान, आर्यसिद्धांत गृहचिकित्सा तथा विज्ञानादि अर्वाचीन विषयों की शिक्षा राष्ट्रभाषा हिन्दी के माध्यम द्वारा दी जाती है। गृहशिक्षा विषय अनिवार्य है। इसके तीन भाग हैं—सिलाई, संगीत तथा अर्थशास्त्र। यहां के उच्च शिक्षणस्तर तथा यहां की कन्याओं की योग्यता को ध्यान में रखते हुये आगरा विश्वविद्यालय ने यहां की विद्यालंकृता उपाधि प्राप्त स्नातिका को बी० ए० के समकक्ष मान्यता प्रदान की है।

कन्याओं के बौद्धिक विकास के साथ-साथ शारीरिक विकास पर भी अच्छा ध्यान दिया जाता है। देहरादून में समय-समय पर होने वाली वाद विवाद प्रतियोगिताओं तथा खेल प्रतियोगिताओं में भी यहां की कन्यायें सफलता प्राप्त करती रहती हैं।

१६-१७-१८-२० नवम्बर ५४ को देहरादूनके Intermediate School Games and Sports Association की ओर से विभिन्न भारतीय तथा पश्चिमीय खेलों की एक प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इसमें देहरादून के प्रायः समस्त स्कूलों और कालिजों ने भाग लिया और टैनिकोटेनिस, बैडमिन्टन, कबड्डी इत्यादि कई खेलों में गुरुकुल की कन्याओं ने सफलतापूर्वक ट्राफी तथा अन्य पारितोषिक प्राप्त किये।

२० नवम्बर को गांधी हायर सेकेण्डरी स्कूल में एक आशु वाक् प्रतियोगिता (Extempore Debate) हुई। इसमें भी यहां की कन्याओं—कुमारी विमला द्वादश श्रेणी तथा धर्मवती द्वादश श्रेणी—ने सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया। वाणिज्य संघ का विजयोपहार भी इसी संस्था को मिला।

इसके अतिरिक्त समय २ पर राष्ट्रीय पर्व तथा महापुरुषों के स्मृति दिवस भी इस आर्य संस्था में उत्साह पूर्वक मनाये जाते हैं। ६ दिसम्बर को कुल के संस्थापक आर्य जगत् के प्रमुख नेता स्वर्गीय श्री आचार्य रामदेव जी की स्मृति में एक सभा का आयोजन किया गया। सभी छात्राओं ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। कतिपय सुन्दर कविताओं तथा व्याख्यानों द्वारा कन्याओं और शिक्षिकाओं ने उस पुण्यात्मा की स्मृति में अपनी श्रद्धा के फूल चढ़ाए। नगर के भी कुछ प्रतिष्ठित व्यक्तियों को आमंत्रित किया गया था। कुछ व्याख्यानों में श्री आचार्य जी की आर्यसमाज वैदिकधर्म और गुरुकुलों की अमूल्य सेवाओं का उल्लेख अत्यन्त मार्मिक शब्दों में किया गया। श्री दौलतराम जी शास्त्री ने आचार्य जी के प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुये कहा कि "मेरी भी जन्मभूमि वही बिजवाड़ा ग्राम है जो कि आचार्य जी की है, इसी नाते से मैं इनसे अपना घनिष्ठ सम्बन्ध मानता हूं। इस बिजवाड़ा ग्राम का पंजाब के इतिहास में अपना एक विशेष महत्व है। इस ग्राम ने बैजू बावरा, महात्मा हंसराज और श्री आचार्य रामदेव इन तीन विभूति स्वरूप मुनियों को जन्म दिया है। इस मुनि त्रय को मैं सादर नमस्कार करता हूं।" अन्त में श्री पूज्यपाद आनन्द स्वामी जी ने सभापति पद से भाषण देते हुये कहा कि "श्री आचार्य रामदेव जी ने अपना सम्पूर्ण जीवन आर्यसमाज, वैदिक धर्म और गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के प्रचार के लिये समर्पित कर दिया था। वे सच्चे अर्थों में एक शहीद थे। उनका जीवन वेदों में वर्णित ज्ञान, कर्म और उपासना के समन्वय का एक ज्वलन्त और मूर्त उदाहरण था। वह एक प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री, अप्रतिम विद्वान तथा अजेय वक्ता थे। मैं तो उन्हें चलता फिरता विश्व कोश (Encyclopedia) कहा करता था। गुरुकुल कांगड़ी को आर्थिक तथा बौद्धिक दृष्टि से दृढ़ करने के पश्चात् उन्होंने अपना शेष जीवन कन्या गुरुकुल के निर्माण में लगा दिया। महात्मा गांधी जी के शब्दों में कन्या गुरुकुल ही श्री आचार्य जी का सच्चा स्मारक है। इस अवसर पर इस बात का उल्लेख करते हुये मुझे विशेष प्रसन्नता है कि आचार्य जी की सुपुत्री श्रीमती दमयन्ती देवी जी के निरीक्षण में इस संस्था की प्रशंसनीय उन्नति हो रही है। कन्याओं के रहन सहन, शिक्षा और अनुशासन को देखकर मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ हूँ। श्री आचार्यजी एक महापुरुष थे। उनकी क्षति पूर्ति सम्भव नहीं है, परन्तु फिर भी जब तक आर्यसमाज और गुरुकुल जीवित हैं, उनका नाम अमर रहेगा। ऐसे वदान्य महापुरुष के प्रति मैं अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि भेंट करता हूँ।"

अन्त में शान्ति पाठ के साथ सभा विसर्जित हुई। इस प्रकार कन्या गुरुकुल में सभी क्षेत्रों में कन्याओं की मानसिक शारीरिक एवं बौद्धिक उन्नति के लिये निरन्तर प्रयास किया जा रहा है।

—आचार्या कन्या गुरुकुल देहरादून

गुरुकुल कांगड़ी—

हंसराज कालेज दिल्ली के कामर्स विभाग के तत्वावधान में हुई अखिल भारतीय डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी ट्राफी भाषण प्रतियोगिता में आ कालेज के श्री दीवान द्वारका खोसला ने प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया। प्रतियोगिता में विभिन्न शिक्षा संस्थाओं के १० वक्ताओं ने भाग लिया।

द्वितीय पुरस्कार रामजस कालेज के श्री सत्येन्द्र बीमा और तृतीय पुरस्कार गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार के श्री विश्वम्भर को मिला। गुरुकुल कांगड़ी की टीम ट्राफी भी जीत कर ले गई।

प्रतियोगिता की अध्यक्षता संसद सदस्य सेठ गोविन्ददास ने की।

प्रतियोगिता का विषय था "आर्थिक योजनाएं पूंजीवाद के दोष दूर करती हैं।"

वागीश्वर आचार्य, गुरुकुल विश्वविद्यालय, कांगड़ी

* दक्षिण भारत प्रचार *

श्रीयुत पं० सत्यपालजी एम० ए० के कार्य का विवरण

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा से दक्षिण भारत में आर्य समाज आर्गेनाईजर के पद पर नियुक्त होकर २१ अप्रैल १९२४ को मुख्य कार्यालय मंगलौर में पहुँच कर कार्य सम्हाला। इसके तुरन्त बाद ही हैदराबाद में होने वाला सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन सार्वजनरीय प्रतिनिधि सभा के अधिकारियों से परिचय प्राप्त करने तथा अपने आप को उनकी सेवाओं में समर्पित करने के लिए बड़ा सौभाग्यपूर्ण सुअवसर था, सभा की अनुमति मिली, तथा १० दिन तक सम्मेलन का एक क्रियात्मक भाग बनकर रहने का मैंने प्रयत्न किया। इस अवसर से प्रतिनिधि सभा के सभी अधिकारियों से बड़ा घनिष्ठ परिचय हो गया, जो मुझे आशा है दक्षिण भारत मे काम बढ़ाने में बड़ा सहकारी होगा।

इस सम्मेलन से लौटकर दक्षिण भारत की समाजों में जाने, उनके सदस्यों तथा अधिकारियों से परिचय प्राप्त करने, दक्षिण भारत में एक सुदृढ़ केन्द्र की स्थापना तथा उसमें सहयोग देने के लिए प्रेरणा देने तथा दक्षिण भारत में प्रचार सम्बन्धी पूर्व इतिहास तथा कठिनाईयों का पता लगाने में लगाया। नौ मास का दौरा किया तथा दक्षिण भारत के दक्षिण कनारा ट्रावनकोर कोचीन, मद्रास मलाबार तथा मैसूर रियासत की समाजों की अवस्था तथा प्रगति का अनुशीलन किया इसके अतिरिक्त पारस्परिक सहयोग बनाए रखने की भावना से हैदराबाद प्रतिनिधि सभा के प्रधान व मन्त्री जी की आज्ञा पर हैदराबाद में श्रावणी मास प्रचारार्थ घूमा जिस अवधि में यथाशक्ति रायपुर, गुलबर्गा, आलन्द, कमलापुर तथा परली बैजनाथ के कार्यक्रम पूर्ण कर सका।

इसी बीच में स्थान २ पर जाने पर ज्ञात हुआ कि वैदिक साहित्य का प्रसार इधर सर्वथा नहीं है और प्रांतीय भाषाओं में तो दुर्लभ ही है। आर्य भाषा अभी यहां के जनसामान्य के लिए अपरिचित है। इसमें भी कर्नाटक भाषा भाषी जनता अधिक होने से कर्नाटक भाषा में इस साहित्य की मांग बहुत अधिक है। कुछ व्यक्तियों ने सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय संस्करण केलिए प्रयत्न आरम्भ कर रक्खा था मैंने इस अवसर से लाभ उठा कर एक निरन्तर लोकसाहित्य के प्रकाशन के लिए तैयार करना चाहा। बेंगलौर नगर में श्री हरनामदास जी कपूर (जिनका दक्षिण भारत में प्रचार कार्य में बहुत बड़ा हाथ पहले भी रहा है) से भेंट एवं बातचीत हुई। कुछ और लोगों ने भी कुछ आश्वासन दिए। उत्साह बढ़ा। श्री कपूर जी के सहयोग से एक "समिति" बनाई गई। इसमें सामान्य सदस्यता के रूप मद्रास, मैसूर, उत्तर कनारा, दक्षिण कनारा, बंगलौर तथा हैदराबाद के कन्नड़भाषी प्रदेश की समाजों के उत्साही प्रतिनिधियों को लिया गया तथा उनकी एक अन्तरङ्ग सभा बना दी गई। इसका काम था सर्वप्रथम सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशन को प्रगति देना। श्री कपूर जी को संयोजक बनाया गया। श्री रामशरण जी को मन्त्री व कोषाध्यक्ष। चार सम्पादकों का एक सम्पादक मण्डल बना। परमात्मा के आश्रय एवं आर्य जनता के विश्वास पर कार्य आरम्भ कर दिया गया। सार्वदेशिक सभा ने इस समिति का संरक्षक बनने का आश्वासन दिया तथा १०००) एक हजार रुपये की सहायता की भी घोषणा की। पूर्व संस्करणका संशोधन आवश्यक था। बंगलौर में श्री पं० सुधाकर जी, श्री सुन्दर सिंह जी शास्त्री तथा मैंने नियमित रूपमें २० सितम्बर से काम प्रारम्भ कर दिया। ४ दिसम्बर को पहला काम पूर्ण हो गया। बीच में मैसूर में विजयादशमी प्रचार व दीपावली महोत्सव की आयोजना आदि भी चलती रही। कुल ९० दिन में ८०० पृष्ठों के सत्यार्थप्रकाश की प्रेसकापी

रथा कार्यालय काफी तैयार कर दी गई। अब प्रकाशन की योजना बन रही है। आशा है मार्च या अप्रैल के अन्दर अन्दर बहुत सस्ते मूल्य पर श्रद्धालु सज्जनों के पास पहुँचा सकेंगे। इसी बीच में सार्वदेशिक सभा ने २५०) ट्रेक्टों के प्रकाशन के लिये भिजवाया जिनसे सर्व प्रथम १००० प्रति व्यवहारभानु के कन्नड अनुवाद का प्रकाशन प्रारम्भ हो गया है। इस प्रकार इस प्रति निधि प्रकाशन समिति को प्रान्तीय साहित्य के उद्गम का मूल तथा स्थाई स्रोत बनाने की अभिलाषा है जो परमात्मा अवश्य ही पूर्ण करेंगे।

इस ओर प्रचार करने के लिए जहां साहित्य के प्रकाशन की बहुत आवश्यकता है वहां उत्तर भारत के शास्त्रार्थ युग को लाने की आवश्यकता का मुझे अनुभव होता है क्योंकि इधर आर्य समाज का वातावरण ही नहीं है। भाग्य नगर में सत्याग्रह ने वातावरण तैयार कर दिया था। मैं समझता हूं कि दक्षिण भारत में वातावरण बनाने के लिए हमें दो को ललकारना पड़ेगा एक ईसाई मत और दूसरा कम्यूनिज्म। साथ ही वर्ष में दो तीन पण्डितों का इस भाग में भ्रमण व प्रचार की योजना भी अत्यन्त आवश्यक है।

दूसरे, इधर की सब समाजें जो भी कुछ कर रही हैं वह सब व्यक्तिगत रूप में। आज के युग में व्यक्ति की आवाज कुछ नहीं अतः एक केन्द्र 'प्रतिनिधि सभा" की स्थापना की अत्यन्त आवश्यकता है जिससे सब समाज एक सूत्र में आबद्ध होकर काम कर सकें। इसके लिए पर्याप्त वातावरण तथा भूमिका बनाई जा चुकी है तथा अधिक से अधिक समाजों को स्थापित करने का प्रयत्न हो रहा है तथा दो की पुनःस्थापना हो भी चुकी है।

मेरी तो एक और धारणा है कि दक्षिण भारत प्रतिनिधि सभा न केवल समाजों का संगठन तथा वैदिक प्रचार करने में सहयोग दे सकती है अपितु उत्तर और दक्षिण के समन्वय में इसका बहुत बड़ा हाथ हो सकता है और वह एकीकरण का काम आर्य समाज जैसी निःस्वार्थ संस्था में ही हो सकेगा अन्य से नहीं।

पर इस सब के लिए न केवल सार्वदेशिक सभा को अपितु देश की अन्य सभाओं तथा समाजों को भी अपना अधिकतम ध्यान इस ओर केन्द्रित करना पड़ेगा और जिस प्रकार शरीर के एक अवयव में चोट लगने पर सभी ज्ञानतन्तुओं की दौड़ उसी ओर शुरू हो जाती है वही क्रम हमें अपनाना पड़ेगा। उत्तर भारत से प्रचारक मण्डलियां आवें, विद्वज्जन आवें, तथा वेद प्रचार प्रारम्भ हो। बौद्धों के निराकरणार्थ दक्षिण के श्री शंकराचार्य को उत्तर में आना पड़ा था उस समय दक्षिण को तड़प थी; अब दक्षिण के नास्तिकों के निराकरणार्थ उत्तर के आर्यों को आना पड़ेगा। आशा है परमात्मा वह सुअवसर लायेंगे।

प्रकाशन समिति मैसूर का कार्य विवरण

चिरप्रतीक्षित कन्नड भाषा में सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशन का कार्य मैसूर में प्रारम्भ हो गया है। श्री पं० सुधाकर जी, श्री पं० सुदर्शनसिंह जी शास्त्री, श्री पं० सत्यपाल जी तथा श्री पं० मंजुनाथ जी द्वारा संशोधन कर सम्पादित यह सत्यार्थप्रकाश भाषा व शैली में बड़ा सुन्दर है। साथ ही मूल सत्यार्थप्रकाश में निहित महर्षि के भावों का पूर्ण तथा दोष रहित अनुवाद है। न बहुत व्याख्या है और न बहुत संक्षेप। एक सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इस लगभग ८०० पृष्ठों की २०+३०+१६ पेजी आकार वाली क्राउन साईज की पुस्तक का मूल्य बहुत ही कम है ? १॥) वास्तविक मूल्य तथा २) विक्रय मूल्य रखे जाने की सम्भावना है। ५००० प्रतियों को प्रकाशित करने का हमारा संकल्प था परन्तु किन्हीं अज्ञात कारणों से कर्नाटक प्रान्तीय आर्य जगत् का पूर्ण सहयोग प्राप्त न होने से ३००० प्रतियां ही छपवाई जा रही हैं। इसके प्रकाशन में निम्न समाजों तथा व्यक्तियों ने सहयोग दिया है—

प्राप्त

१५००) मैसूर से
२००) सार्वदेशिक सभा से
१००) आर्यसमाज बम्बई फोर्ट से
५००) श्री हरनामदास जी कपूर
२०) श्री मोहनराव विठ्ठला बंगलौर

२३२०)

वायदा

७५०) आर्य समाज हुबली
७५०) आर्य समाज गुलबर्गा
१५०) श्री मथोल जी मद्रास
१५०) हैदराबाद आर्य प्रतिनिधि सभा
१०००) श्री नारायणराव आवडे सिटी डू स मैन्यु फैक्चरिंग क० गदीर
१५०) उडुपी आर्य समाज

२२५०।

आशा है वायदे के रुपये श्रद्धालु मान्य आर्य सज्जन इस मास के अन्त तक अवश्य ही भिजवा देंगे जिससे हमें प्रकाशन कार्य में कोई बाधा उपस्थित न हो। समिति इन सब समाजों तथा महानुभावों का अत्याधिक धन्यवाद करती है तथा आशा करती है कि आगे भी इसी प्रकार कन्नड साहित्य के अधिका धिक प्रकाशन में सहयोग देने की कृपा करेंगे।

सार्वदेशिक सभा के सहयोग से व्यवहारभानु के अनुवाद का प्रकाशन प्रारम्भ हो चुका है। उसका मूल्य तीन आने रखा गया है। १०० तथा १०० से ऊपर इकट्ठी प्रतियां मगवाने वालों को दो आने प्रति पुस्तक के हिसाब से दी जावगी।

संस्कारविधि के अन्तर्गत विवाह पद्धति तथा गृहस्थ प्रकरण का कन्नड अनुवाद श्री पं० सुधाकर जी कर रहे हैं। गुलबर्गा के माननीय ठक्कर जी परशुराम जी गरुवा पुस्तक के प्रकाशन का समस्त व्यय दे रहे हैं। वह भी फरवरी मास तक प्रकाशित हो सकेगी ऐसी आशा है।

इसके बाद चतुर्थ पुष्प के रूप में गोकरुणानिधि के कन्नड अनुवाद का इसी प्रकार बहुत सस्ते मूल्य में प्रकाशन करने की योजना चल रही है। यदि कोई दानी महानुभाव अपने धन से इसको प्रकाशित करवा चाहेंगे तो उसका स्वागत किया जायगा।

अन्त में सबसे प्रार्थना है कि दक्षिण भारत में आर्य समाज एवं वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार के लिए कन्नड साहित्य के प्रकाशनार्थ अधिकाधिक सहयोग इस समिति को दें। यह प्रामाणिक एवं वैदिक साहित्यों के कन्नड भाषा में प्रकाशनार्थ स्थापित सार्वदेशिक सभा देहली के संरक्षण में काम करने वाली एक मात्र समिति है। इसको जल्दी ही स्थाई तथा विशाल बनाने की योजनायें की जा रही हैं

निवेदक

१. हरनामदास कपूर—संयोजक समिति
२ रामशरण आहूजा—मन्त्री समिति
३ सत्यपाल शर्मा स्नातक—दक्षिण भारत आर्यसमाज आर्गेनाईजर सार्वदेशिक सभा

मृत्यु की महत्ता

महान् सिकन्दर ने डायोगनीज को मानवी हड्डियों के एक पार्सल को ध्यानपूर्वक देखते हुए उससे पूछा "आप क्या देख रहे हो ?" दार्शनिक ने उत्तर दिया "जो मुझे ज्ञात नहीं हो सकता।" सिकन्दर ने पुन पूछा "क्या ज्ञात नहीं हो सकता ?" डायोगनीज ने कहा "तुम्हारे पिता और उसके गुलामों की हड्डियों के बीच भेद"।

—प्लूटार्क

ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन

विदेशी ईसाई मिश्नरियों का घातक प्रचार

लेखक—श्री जनार्दन भट्ट, संयुक्त मन्त्री अ० भा० आर्य (हिन्दू) धर्म सेवा संघ

भारत में विदेशी मिश्नरियों का प्रचार कितनी तीव्र और अबाध गति से हो रहा है और विदेशी मिश्नरियों की संख्या किस तेजी के साथ बढ़ रही है यह हाल में लोक सभा में जो वाद विवाद इस सम्बन्ध से हुआ था उससे स्पष्ट और प्रगट है। माननीय गृह-मन्त्री डा० काटजू ने, लोक सभा में अपने वक्तव्य में आंकड़े देकर यह बताया कि जब १९४७ में कुल भारतवर्ष में विदेशी मिश्नरियों की संख्या केवल २२०१ थी, तब पांच वर्ष के बाद १९५२ में विदेशी मिश्नरियों की संख्या जिसमें अमेरिकन मिश्नरियों की संख्या ही अधिक है, बढ़कर ४६८३ अर्थात् दुगनी से भी अधिक हो गई। सन् १९५२ के बाद १९५४ तक तो यह संख्या और भी अधिक बढ़ गई है जिसका उल्लेख इस आंकड़े में नहीं है। मिशनरियों की खासी फौज की फौज हमारे देश में घुसी हुई राजनीतिक उद्देश्य से हम पर आक्रमण कर रही है और हमें पता भी नहीं है। स्वाधीनता के पहले अंग्रेजों के समय में विदेशी मिशनरियों को जो सुविधायें अपने मत का प्रचार करने तथा भारतीयों को ईसाई बनाने की प्राप्त थीं उससे अधिक सुविधायें हमने स्वाधीनता मिलने के बाद ईसाई मत का प्रचार करने तथा देशवासियों को ईसाई बनाने के लिये विदेशी मिशनरियों को प्रदान कर दी हैं। इन विदेशी मिशनरियों का एकमात्र उद्देश्य हमारे देशवासियों को ईसाई बना कर उन को अपने धर्म, रीति, नीति आचार, व्यवहार, संस्कृति तथा सभ्यता से च्युत तथा पराङ्मुख करके उन्हें विदेशी आचार व्यवहार तथा विदेशी संस्कृति तथा सभ्यता के सांचे में ढालना और राष्ट्रीयता विरोधी बनाना है। उनके प्रचार के केन्द्र इने गिने दो चार स्थानों में नहीं वरन् भारतवर्ष के कोने कोने में और विशेषकर उन स्थानों और बस्तियों में जाल की तरह बिछे हुए हैं जहां अधिकतर वनों तथा पहाड़ोंमें रहने वाली जन जातियां तथा ग्रामों में रहने वाले हमारे हरिजन भाई निवास करते हैं। आसाम और मणिपुर में नागा लोगों में, छोटा नागपुर में संथाल, उरांव और मुण्डा लोगों में, मध्यप्रदेश में गोंड और बैगा लोगों में, मध्यभारत, राजस्थान, दक्षिण हैदराबाद तथा बम्बई प्रान्त मे भील लोगों में तथा दक्षिण भारत में हरिजनों के बीच विदेशी मिशनरियों के प्रचार के केन्द्र विशेष तीव्र गति से चल रहे हैं।

विदेशी मिशनरियों के पास धन और जन दोनों के साधन अटूट और असीम हैं। उन्हें करोड़ों रुपये की मासिक सहायता विदेशों से और विशेषकर अमेरिका से मिलती है। इस धन के बल पर वे राजनीतिक उद्देश्यों को लेकर, शिक्षा आदि सेवा कार्यों के बहाने, स्कूल अस्पताल और अनाथालय खोल कर, औषधि, वस्त्र आदि बांट कर, अन्न और धन आदि प्रलोभन देकर तथा अनेक अनुचित दबाव डाल कर, भोले भाले, अज्ञान अनपढ़, गरीब और असहाय आदिवासियों, हरिजनों तथा ग्रामीण भाइयों को ईसाई बनाने में तत्पर हैं। ये मिशनरी पादरी भारत सरकार तथा हिन्दुओं के प्रति घोर विद्वेष की आग आदिवासियों तथा हरिजनों के बीच भड़का रहे हैं, जिससे देश का वातावरण दूषित और गन्दा हो रहा है। विदेशी मिशनरियों के प्रचार का दूषित प्रभाव कितनी दूर और हद तक फैला हुआ है यह नागा लोगों के स्वतन्त्र नागा राज्यकी मांग से प्रगट है। इन्हीं विदेशी मिशनरियों के प्रभाव में आकर नागा जाति के लोग

आज भारत से बिलकुल अलग एक स्वतन्त्र नागा राज्य की माग कर रहे हैं। छोटानागपुर के ईसाइयों की एक अलग झारखंड प्रदेश की मांग भी विदेशी मिशनरियों के घातक प्रभाव का ही दुष्परिणाम है। सुदूर दक्षिण ट्रावनकोर-कोचीन में विदेशी मिशनरियों का प्रभाव वहां की राजनीति पर कितनी गहराई तक है यह हाल के वहा के ऐसेम्बली के चुनाव से प्रगट है। अब तक जितने मंत्रिमण्डल वहा बने हैं उनके बनाने तथा बिगाड़ने में बहुत बड़ा हाथ इन विदेशी मिशनरियों का हो रहा है। ट्रावनकोर में जहां ईसाइयों की आबादी एक तिहाई है और जो हिन्दुओं से अधिक धनी, अधिक प्रभावशाली तथा अधिक शिक्षित हैं उनका एक दल अभी भी वहा ईसाई राज्य स्थापित करने का स्वप्न देख रहा है। इसी का परिणाम है कि ट्रावनकोर में वहा मुख्य मन्त्री और गृहमन्त्री दोनों ही कुछ पहले तक ईसाई रहे हैं। १९५० से लेकर अब तक १०० से अधिक हिन्दू मन्दिर जलाये या नष्ट-भ्रष्ट किये जा चुके हैं और एक भी अपराधी इस सम्बन्ध में अभी तक पकड़ा नहीं गया है।

हम पांडिचेरी, गोवा आदि दो चार इनी गिनी विदेशी बस्तियों की समस्या को हल करने के लिये प्रयत्न कर रहे हैं। परन्तु विदेशी मिशनरियों के विषैले प्रचार की कृपा से देशके हरएक भागमें विदेशी बस्तियां स्थापित होती जा रही हैं जहां अनेक प्रलोभनों के बल पर सामूहिक रूप से ईसाई बनाये गये हमारे देशवासी केवल नाममात्र के भारतीय हैं परन्तु वास्तव में संस्कृति तथा सभ्यता में विदेशी मिशनरियों के अनुकरण करने वाले, हृदय, विचार तथा भावना में पूर्ण विदेशी हैं। कुछ समय के बाद इन स्थानों में भी वही समस्या खड़ी हो जायगी जो नागा प्रदेश में खड़ी हो गई है। इस सम्बन्ध में डा० वेरियर एलविन ने जो स्वयं एक अंग्रेज पादरी थे पर बाद को चर्च से अलग हो गये थे, भारतीयों को एक चेतावनी दी थी। उनकी चेतावनी यह थी :—

"खेद है आज भी भारत के लोग यह अनुभव नहीं कर रहे हैं कि विदेशी मिशनरियों के प्रचार का प्रश्न कितना व्यापक, आवश्यक और महत्वपूर्ण है। छोटा नागपुर में लाखों आदिवासी ईसाई बना लिये गये हैं। सुन्दर प्राकृतिक दृश्यों से भरपूर सन्थाल परगना समूचे रूप से शीघ्रता के साथ ईसाई प्रदेश बनता चला जा रहा है। उड़ीसा की गंगपुर स्टेट का हर एक आदिवासी ईसाई बन चुका है। आसाम की समस्त करेन जाति ईसाई बन चुकी है। इसी प्रकार आसाम के लुसाई लोग भी प्रायः सब के सब ईसाई बना लिये गये हैं। पश्चिमी भारत में भीलों तथा अन्य आदिवासियों के बीच तीव्र गति के साथ धर्म-परिवर्तन का कार्य पादरियों द्वारा चल रहा है। मध्य प्रदेश के गोंड और बैगा लोगों को ईसाई बनाने में ईसाई पादरियों ने कोई कसर छोड़ नहीं रखी है। यदि इसी अबोध गति से मिशनरियों द्वारा ईसाई बनाने का कार्य चलता रहा तो कुछ ही वर्षों में समस्त वनवासी जातियां ईसाई बन जायेंगी और देश में ईसाइयों का एक ऐसा झगड़ालू, अड़ंगा लगाने वाला समुदाय उत्पन्न हो जायगा जिसकी भावनायें अराष्ट्रीय होंगी और जो भविष्य में भारत सरकार तथा भारत की जनता दोनों के लिये एक चुभता कांटा सदा के लिये बन जायेगा।"

यह चेतावनी उन्होंने आज से दस वर्ष पहले दी थी। पर हम अब तक नहीं चेते हैं।

अस्तु भारत में विदेशी मिशनरियों के खतरे को देखते हुए हम उसकी रोकथाम के लिये कुछ निम्न सुझाव सरकार तथा जनता के सामने रखते हैं और आशा करते हैं कि वे इन पर सहानुभूति के साथ विचार करेंगे।

सुझाव

विदेशी मिशनरी, चर्च की ओर से गरीब आदिवासियों तथा ग्रामवासियों को बहुधा ऋण देकर अपने वश में कर लेते हैं और जब वे ऋण नहीं चुका सकते तो उन्हें ऋण से छुटकारा पाने के लिये ईसाई हो जाने को बाध्य करते हैं। इस प्रकार अनेक भोले भाले एवं दीन तथा वनवासी ईसाई बनने को बाध्य हो जाते हैं। अतएव हमारा सुझाव है कि ऐसा कानून या विधान

बन जाना चाहिये कि चर्च या मिशनरी लोग आदि-वासियों तथा हरिजनों आदि को कर्ज न दे सकें और यदि कर्ज दें तो उनका दिया हुआ कर्ज गैर कानूनी माना जाय।

२ भारत में आने वाले विदेशी मिशनरियों की संख्या जो दिन पर दिन बढ़ती जा रही है उसपर रोक थाम होनी चाहिये। पहले तो अंगरेज यहां बड़ी संख्या में रहते थे उस समय उनके धार्मिक संस्कार आदि के लिये विदेशी पादरियों की आवश्यकता पड़ सकती थी पर अब अंगरेज यहां से चले गये हैं। उनकी थोड़ी संख्या केवल बड़े बड़े शहरों में जहां तहां पाई जाती है उनके लिये अब इतने पादरियों की कोई आवश्यकता नहीं है। अतएव हमारा सुझाव है कि विदेशी पादरियों की संख्या जो १९४७ में थी उससे भी बहुत अधिक घटाई जानी चाहिये। उनके लिये यह प्रतिबंध हो जाना चाहिये कि वे केवल नगरों की सीमाके अन्दर ही रहें और पहाड़ों, वनप्रांतों तथा देहातों में प्रचार करने तथा रहने की अनुमति उनको नहीं दी जाय। उनका काम तो बड़े बड़े नगरों जैसे कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, दिल्ली आदि में, जहां यूरोपियन, अमेरिकन लोग रहते हैं, उन्हीं के बीच धार्मिक कार्य करने का है। परन्तु वनों, पहाड़ों तथा ग्रामों में जहां देसी ईसाइयों की आबादी हो, वहां तो वहीं के देसी पादरी उनके बीच कार्य कर सकते हैं। अधिकांश देसी पादरी भी यही चाहते हैं। परन्तु विदेशी पादरी तो धर्म की आड़ में राजनीतिक उद्देश्य सिद्ध करने की चेष्टा में लगे रहते हैं इसलिये उनके ऊपर तथा उनके काम पर प्रतिबन्ध लगाना उचित है।

३—स्कूल, अस्पताल, अनाथालय आदि के द्वारा विदेशी मिशनरियों का प्रचार और उनके द्वारा ईसाई बनाने का कार्य देश में सब जगह हो रहा है। अत: हमारा सुझाव है कि मिशनरियों द्वारा खोले गये स्कूल अस्पताल तथा इसी प्रकार की और दूसरी संस्थायें तथा उनके द्वारा खोले गये खेती के फारम आदि सरकारी नियन्त्रण में होने चाहिये, जिसमें कि उनकी आड़ में वे दवा, धन आदि का प्रलोभन देकर या अनुचित दबाव डाल कर धर्म परिवर्तन का कार्य न कर सकें

४ – प्रायः भिन्न २ प्रलोभनों द्वारा विदेशी मिशनरी कम आयु के छात्रों तथा अनुभवहीन अबोध नवयुवकों को ईसाई बना लेते हैं। अतएव इस अनुचित कार्य को रोकने के लिये हमारा सुझाव है कि वे १८ वर्ष से कम आयु के नवयुवकों का धर्म परिवर्तन न करा सकें, ऐसा कानून बन जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त मिशनरियों द्वारा चलाये जाने वाले स्कूलों तथा अन्य सार्वजनिक संस्थाओं की प्रबन्ध-समिति में स्थानीय लोगों के तथा सरकार के प्रतिनिधि भी रहने चाहिये, यह भी हमारा सुझाव है।

५—प्रायः देखा जाता है कि हिन्दुओं के उत्सवों और मेलों में तथा उनके तीर्थस्थानों और मन्दिरों के आस पास ईसाई मिशनरी ईसाई मत का प्रचार करते हुए हिन्दू धर्म की निन्दा और खण्डन करके देश में कटुता का वातावरण पैदा करते हैं। वे प्रायः अनेक नगरों में आम सड़कों पर खड़े होकर हिन्दू धर्म के विरोध में प्रचार करते हुए भी देखे जाते हैं। अतएव हमारा सुझाव है कि उनको हिन्दुओं के मेलों और उत्सवों पर तथा तीर्थ स्थानों और मन्दिरों के पास तथा आम सड़कों पर प्रचार करने की छूट नहीं मिलनी चाहिये। इसके सम्बन्ध में उचित प्रतिबन्ध होना आवश्यक है।

६—एक कानून यह भी बन जाना चाहिये कि संयुक्त परिवार का कोई व्यक्ति यदि ईसाई या विधर्मी बन जाय तो उस अवस्था में संयुक्त परिवार की भूमि आदि की सम्पत्ति में उसके हिस्से की भूमि उसके नाम पर ३ वर्ष तक नहीं चढ़नी चाहिये जब तक कि यह पूरी तरह से निश्चय न हो जाय कि वह धनके लालच या अन्य किसी प्रलोभन या दबाव में पड़कर तो ईसाई नहीं हुआ है।

७—मध्य भारत सरकार तथा कई अन्य सरकारें वनवासी जातियों के बीच कार्य करने वाली संस्थाओं को उसके खर्च का आधा भाग सहायता के रूप में देती हैं। उससे भी लाभ केवल ईसाई मिशनरी ही

उठाते हैं, क्योंकि उनके पास पर्याप्त धन है और अधिक से अधिक व्यय करके उतनी ही रकम व सरकार से प्राप्त कर लेते हैं। हिन्दू संस्थाओं के पास धनका अभाव होने से वे अधिक व्यय नहीं कर सकतीं और फलतः सरकार से उनको जो सहायता मिल सकती है वह नगण्य है। इस प्रकार ईसाई मिशनरी हमारी सरकार से सहायता प्राप्त करते हैं और उस सहायता को हमारे ही वनवासी भाइयों को ईसाई बनाने में व्यय करते हैं। अतएव मध्यभारत सरकार तथा अन्य सरकारें इस प्रकार की जो भी सहायता विदेशी मिशनरियों को देती हैं, वह तुरन्त बन्द होनी चाहिये।

८—प्रायः देखा जाता है कि ऐसे क्षेत्रों में जहां वनवासी तथा पहाड़ी वन जातियां अधिक संख्या में निवास करती हैं और जहां ईसाई अधिक संख्या में हो चुके हों, वहां के अधिकारी भी प्रायः ईसाई होते हैं। दारोगा, पटेल, पटवारी आदि प्रायः ईसाई होते हैं और इन लोगों से ईसाई मिशनरियों को ईसाई मत के प्रचार में बड़ी सहायता मिलती रहती है। अतएव हमारा एक यह सुझाव भी है कि ऐसे स्थानों में ईसाइयों को अधिकारी कदापि नियुक्त नहीं किया जाना चाहिये।

सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती का उड़ीसा का भ्रमण

उड़ीसा उन पिछड़े हुए प्रान्तों में से है जिस में गरीबी और अज्ञान व्याप्त है। वहां एक बड़ी संख्या आदिवासियों की है। अन्य स्थानों की भांति ईसाई मिशनरी यहां भी खुले खेलते हैं। ईसाइयों के प्रचार का जोर इसी बात से लगाया जा सकता है कि केवल सुन्दरगढ़ जिले की ५ लाख १२ हजार की आबादी में से उड़ीसा के कृषि मन्त्री श्री कृपानिधि जी द्वारा एक सार्वजनिक भाषण में उद्धृत आंकड़ों के अनुसार पौने दो लाख ईसाई बन चुके हैं। इन ईसाइयों में २९ हजार लूथर मिशन के और शेष रोमन कैथोलिक के हैं।

श्री स्वामी जी महाराज अपनी यात्रा में कुलुंगा, झार, सुगुवा, सुन्दरगढ़, राजगंगपुर, पानपुश, राउर केला, हीराकुण्ड और वेद व्यास नामक स्थानों में गये। गत ५-६ मास से सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली की ओर से श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी सरस्वती के निरीक्षण में सुन्दरगढ़ जिलान्तर्गत कुलुंगा नामक स्थान से उसके आसपास के क्षेत्रों में ईसाई प्रचार निरोध का कार्य चल रहा है। बहुत समय से श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी की मांग थी कि सभा का कोई अधिकारी इस क्षेत्र में आकर ईसाइयों के बढ़ते हुये प्रचार को देख कर ईसाई प्रचार निरोध के कार्य की आवश्यकता को अनुभव करे और इस क्षेत्र में आर्य समाज के प्रचार क्षेत्र को बढ़ाया जाये। अतः श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज अस्वस्थ होते हुये भी इस क्षेत्र के दौरे पर निकल पड़े। जिस समय वे इस क्षेत्र की यात्रा के लिये देहली से चले थे तो उन्हें ज्वर, नजला आदि की बहुत शिकायत थी परन्तु मार्ग के कष्ट की चिन्ता न करके वे अपने लक्ष्य की ओर बढ़ गये अत. इस यात्रा में उनके घुटने में भयंकर पीड़ा रोग उत्पन्न हो गया और इसी पीड़ा में लगभग २ उन्होंने उपरोक्त ८ स्थानों के कार्य का निरीक्षण किया। श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज, श्री स्वा० ब्रह्मानन्द जी सरस्वती के अब तक के कार्य से इतने प्रभावित हुये कि उन्हें आज से ३० साल पुराने युग की याद आ गई जबकि उस समय का प्रत्येक आर्य समाजी एक मिशनरी था और आर्य समाज के प्रचार की लगन उसे आठों पहर रहती थी। श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी नवयुवक, चरित्रवान् तथा बहुत उत्साही एवं लगन के संन्यासी हैं। वे उड़ीसा प्रांत के ही रहने वाले हैं। उन्होंने ५-६ आदिवासियों को जो पहले ईसाई हो चुके थे, शुद्ध करके आदिवासियों के लिये खोले गये स्कूलों में भेज दिया है जहां वे सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली की ओर से शिक्षण और प्रचार कार्य में लगे हुये हैं।

कुलुंगा केन्द्र में ईसाइयों के प्रचार का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि इस केन्द्र में उनके

१२ मिडिल स्कूल तथा १२ प्राइमरी स्कूल चल रहे हैं। एक बड़ा अस्पताल है जहां ४५० स्त्रियां ट्रेन्ड करके प्रतिवर्ष बाहर भेजी जाती हैं। कहना न होगा कि वे स्त्रियां दूर दूर तक अपनी सेवा द्वारा ईसाई मिशन को फैलाने का कार्य करती हैं।

इसी प्रकार हमीरपुर केन्द्र में दो मिडिल स्कूल और १७ प्राइमरी स्कूल ईसाइयों की ओर से चल रहे हैं और एक हस्पताल भी है।

राजगंगपुर केन्द्र के अधीन एक हाई स्कूल, ४ मिडिल तथा ६ प्राइमरी स्कूल चल रहे हैं।

हाथी बाड़ी केन्द्र के अधीन एक मिडिल, तीन प्राइमरी स्कूल और एक हस्पताल हैं।

केसरा माल केन्द्र के अधीन दो मिडिल तथा १० प्राइमरी स्कूल और एक हस्पताल चल रहा है।

सुन्दरगढ़ केन्द्र के अधीन एक हाई स्कूल, १ मिडिल स्कूल तथा ४ प्राइमरी स्कूल और एक हस्पताल है।

सबडेगा केन्द्र के अधीन एक हाई स्कूल, एक मिडिल स्कूल और एक हस्पताल है।

यह है संक्षिप्त में उड़ीसा के कुछ केन्द्रों में ईसाई प्रचार की एक झांकी। इसके मुकाबले में सार्वदेशिक सभा द्वारा केवल ४—५ स्थानों पर प्राइमरी स्कूलों की व्यवस्था है। परन्तु इतने थोड़े साधनों के होते हुए भी श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी सरस्वती की लगन ने आश्चर्यजनक कार्य करके दिखाया है। यदि इन्हें पूरी आर्थिक सहायता मिले तो कुछ ही दिनों में इस क्षेत्र में कायापलट हो सकती है। जहां ईसाइयों को अपने प्रचार के लिये प्रचुर मात्रा में धन व्यय करना पड़ता है वहां हमें बहुत थोड़े से धन से ही सफलता मिलती है। परन्तु सभा तो अपने सीमित साधनों के आधार पर ही प्रचार कर सकती है। यदि आर्य जनता इस दिशा में पूरा पूरा सहयोग सभा को दे तो निश्चय ही हमारा ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन बहुत आगे बढ़ सकता है। आर्य समाजों की सेवा में श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति, कार्यकर्ता प्रधान सार्वदेशिक सभा की ओर से इस कार्यके लिये १लाख २५ हजार रुपये की अपील भेजी गई है। यदि आर्य जगत् इस ओर अपने कर्तव्य का पालन तत्परता से करे तो उड़ीसा जैसे पिछड़े प्रांत में ही नहीं अन्य स्थानों पर भी जहां ईसाई मिशनरी लोगों का जोर है आर्य समाज का निरोध कार्य विस्तृत किया जा सकता है।

प्रसन्नता की बात है कि श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज की उड़ीसा प्रांत की इस यात्रा काल में बहुत अच्छा प्रभाव वहां की जनता पर पड़ा है। जहां कार्य कर्ताओं का उत्साह बढ़ा है वहां सभा को भी इस क्षेत्र की असली स्थिति का प्रत्यक्ष परिचय प्राप्त हुआ है। इस यात्राकाल में श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज को उड़ीसा में आर्य समाज के प्रचार कार्य के लिये ६२०) की धन राशि भी प्राप्त हुई है।

शुद्धि कार्य

३१ दिसम्बर तथा १ जनवरी को मुजफ्फरनगर जिले के दो ग्रामों में २२० ईसाइयों को शुद्ध किया गया है। ग्राम बाध के एक हरिजन का घर ईसाइयों ने फूंक दिया है जिसकी रिपोर्ट ७-१-५१ को लिखवा दी है। अपराधी को ९-१-५१ को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया है।

आपत्तिजनक पुस्तक

आर्य समाज कायमगंज फर्रुखाबाद ने भारतीय ईसाइयों द्वारा लिखित "धर्मतत्त्व" पुस्तक की ओर यू० पी० सरकार का ध्यान आकृष्ट करके पुस्तक को जब्त करने की मांग की है जिसमें लेखक ने हमारे मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी व योगिराज श्रीकृष्ण जी सरीखे महापुरुषों तथा आर्यों के मान्य ग्रन्थों के लिये अपशब्दों का प्रयोग किया है और हजरत ईसा को श्रेष्ठ बताया गया है।

मध्यप्रदेश में ईसाइयों की पराजय

अभी कुछ दिन पूर्व अमरिकन का एक दल निकटवर्ती गांव कंसरा ता० पारवा जि० यवतमाल में प्रचारार्थ आया और उन्होंने औषधि आदि का प्रलोभन देकर कुछ हरिजनों को ईसाई बनाया। ऐसी इस

गोरक्षा आन्दोलन

पं० रामस्वरूप प्रचारक सार्वदेशिक सभा का कार्य

(१) देवबन्द (सहारनपुर) में निश्चय से १० या १२ गौ प्रतिदिन कत्ल होती हैं इसमें कोई सन्देह नहीं ४ ११-२४ को बूचड़खाने में २ बैल मेरी आँखों के सामने काटे गये जब कि देवबन्द में कानूनन बन्द है।

(२) गुनवची (सहारनपुर) में १ गौ प्रतिदिन काटी जाती है। वहां के हिन्दू और मुसलमान सब मानते हैं मैंने स्वयं जाकर वह स्थान भी देखा जिस बाग में गौ कटती हैं।

(३) कुटसरा (मुजफ्फरनगर) में प्रतिदिन २ गौ कटती हैं। वहां पूर्व वर्ष एक ८ गौओं के कत्ल का केस भी पकड़ा था।

(४) खेड़पुर (सहारनपुर) में कसाइयों के घरों में ७-८ गौ प्रतिदिन कटती हैं इस ग्राम के कसाई कहते हैं यह हमारा पुराना पेशा है।

(५) श्रीचन्दा (सहारनपुर) में १० या १२ गौ प्रतिदिन कटती हैं। वहां के सब सज्जनों से मिलकर तसल्ली की है।

(६) प्राणकिशियर (सहारनपुर) में २ या ४ गौ प्रतिदिन कटती हैं। वहां के हिन्दू मुस्लिम दोनों मानते हैं।

(७) जलालाबाद (बिजनौर) में प्रतिदिन २ गौ मारी जाती हैं। इस ग्राम में १० १०-२४ को एक केस पकड़ा था जिसकी फोटू साथ दे रहा हूँ। रफीक कसाई का बयान है कि ६२ गौ इस महीने में काटी हैं।

(८) कलहेड़ो (बिजनौर) में ४ गौ प्रतिदिन कटती हैं वहां के सब पंचायती मानते हैं।

(९) नगीना (बिजनौर) में २० गौ प्रतिदिन घरों में मारी जाती हैं। इस नगर के कुछ घरों में सेवक ने खुद जाकर देखा है।

(१०) गढ़ी सलेमपुर (मुरादाबाद) में बूचड़खाना है। मेरे सामने ६ गौ काटी गईं, ६ गौ पहले से कटी पड़ी थीं।

(११) भगवानपुर (मुरादाबाद) के बूचड़खाने में ८ गौ मेरी आंखों के सामने काटी गईं।

(शेष पृष्ठ ६८६ पर)

की गतिविधि देखकर श्री भागीरथ जी तथा बोरी खरब निवासी ने आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश नागपुर को लिखा। तत्पश्चात सभा ने श्री शुकदेव जी वानप्रस्थी तथा प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश के प्रचारक श्री पंडित रुद्रदत्त सिंह जी आर्य को प्रचारार्थ भेजा। इनके उपदेशों और भजनों का जो ग्राम ता० ८-१२ २४ को बोरी खरब में व ता० ६ को आमोरा, तालुका, दारव्हा की यात्रा में और ता० १० को कंजरा ता० दारव्हा जहां कि ईसाई पादरी प्रचारार्थ आये हुये हैं वहां पहुंचकर उनसे क्रिश्चियन के मुख्य ग्रन्थ बाइबिल पर विचार करते हुए उनसे प्रश्नोत्तर होते रहे उन प्रश्नोत्तरों को वहां के उपस्थित श्रोतागण सुनकर बड़े प्रसन्न होते रहे। इस प्रकार ईसाईमत की पोलपट्टी निस्सारता सुनकर लोगों को क्रिश्चियन मत से अत्यन्त घृणा हुई व साथ २ वैदिक धर्म का महत्व सुनकर लोगों की ईसाई मत से अत्यंत घृणा हुई व साथ २ वैदिक धर्म का महत्व सुनकर लोगों की वैदिक धर्म पर श्रद्धा बढ़ती दिखाई दी। अब उस इलाके के लोग ईसाइयों के जाल में न फसेंगे ऐसी स्थिति पैदा हो गई है।

आर्य वीरदल आन्दोलन

असहायों की सहायता

अहमदाबाद:—आर्य वीर दल, अहमदाबाद की ओर से नगर के असहाय परिवारों तथा व्यक्तियों की सहायतार्थ एक योजना को क्रियात्मक रूप दिया जा रहा है, जिसके अनुसार नित्य बहुत से परिवार अपने यहां भिक्षा स्वरूप कुछ आटा या अनाज एक बर्तन में डालते रहते हैं और मास के अन्त में इस प्रकार संग्रहीत अनाज या आटे को दल के सैनिक कार्यालय में जमा करते हैं, जहां से असहायों की सहायता की जाती है। परिवारों से फटे-पुराने कपड़े भी दल के सदस्य जमा करते हैं।

इस प्रकार गत कुछ मासों में १० मन अन्न तथा २७६ कपड़ों का वितरण असहायों में दल की ओर से किया जा चुका है। नगर में इस योजना की बड़ी प्रशंसा हो रही है और नित्य नये परिवार इस योजना को अपना रहे हैं।

राजस्थान आर्य वीर दल सम्मेलन व चुनाव

जोधपुर—२० दिसम्बर १९५४ ई० को जोधपुर में प्रधान सेनापति श्री ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी की अध्यक्षता में राजस्थान आर्य वीर दल का सम्मेलन हुआ। इस अवसर पर जोधपुर आर्य वीर दल तथा वीराङ्गना दल ने अपना प्रदर्शन उपस्थित किया जिसमें लाठी, लेजम, बैलेंस, झूला, तलवार आदि खेलों का प्रदर्शन हुआ।

अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री पुरुषार्थी जी ने देश अथवा संसार की मुख्य समस्या 'मनुष्य निर्माण" बतलाया कि जिसकी सर्वत्र उपेक्षा हो रही है और जो वर्तमान अशान्ति का मूल कारण है। आपने आर्य वीर दल के सदस्यों को आदेश देते हुये कहा कि वह चरित्रवान सत्यप्रेमी तथा मानव हितकारी आदर्श नागरिक बनने तथा दूसरों को बनाने पर पूर्ण बल दें राष्ट्र कल्याण के निमित्त यह ठोस तथा सर्वोत्तम कार्य ही सब के लिये श्रेयस्कर है।

ता० २१ दिसम्बर को राजस्थान आर्य वीर दल का चुनाव हुआ जिसमें श्री हेतराम जी आर्य अलवर सेनापति श्री सुखदेव जी आर्य, जोधपुर मन्त्री तथा श्री चैनसिंह जी प्रधान शिक्षक चुने गये।

अलवर में दल की स्थापना

अलवर—पहिली जनवरी ५५ को श्री प्रधान सेनापति जी ने अलवर में आर्य वीर दल के पुराने कार्य कर्ताओं की एक बैठक बुलाई और दल की पुनः स्थापना की। दल की एक समिति का निर्माण हुआ जिसमें श्री डा० मनोहरलाल जी नगरनायक तथा ज्ञानेन्द्र जी बौद्धिक नायक चुने गये।

भव्य प्रदर्शन व प्रतियोगितायें

जोधपुर—मकर संक्रान्ति के पर्व को जोधपुर आर्य वीर दल ने बड़े ही उत्साह से १४-१ ५५ को जोधपुर नगरपालिका के अध्यक्ष श्री अजनसिंह जी के सभापतित्व में मनाया। खेलों की प्रतियोगताओं के विजेताओं को पारितोषक वितरण किये गये और उपस्थित आर्य वीरों को तिल के लड्डू दल की ओर से बांटे गये। अन्त में अध्यक्ष महोदय ने म्युनिसिपल बोर्ड की ओर से दल को मासिक सहायता दिलाने का आश्वासन दिया।

गाजियाबाद – २ जनवरी को गाजियाबाद (उ.प्र.) आर्य वीर दल ने अपने साधना मन्दिर में अपना प्रदर्शन देहली प्रान्तीय आर्य वीर दल के मन्त्री श्री चन्द्रप्रकाश जी की अध्यक्षता में किया। श्री चन्द्रप्रकाश जी तथा श्री जगदेव जी बी० ए० ने आर्य वीर दल के उद्देश्य पर बड़े ही ओजस्वी शब्दों में प्रकाश डाला।

आर्य वीर दल सम्मेलन, नजीबाबाद

नजीबाबाद—श्री ठा० अमरसिंह जी आर्य महो-

पदेशक की अध्यक्षता में ७ जनवरी को यहां आर्य वीर दल सम्मेलन हुआ जिसमें ध्वजा रोहण व राष्ट्र गान के पश्चात् आर्य वीराङ्गना दल की सदस्याओं द्वारा प्रदर्शन किया गया। अन्त्याक्षरी प्रतियोगिता हुई जिसमें आर्य बाल वीर दल तथा आर्य कन्या इन्टर कालेज की छात्राओं ने भाग लिया वक्ताओं में श्री प्रकाश वीर जी शास्त्री तथा सार्वदेशिक आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति थे। इसी दिन श्री प्रधान सेनापति जी का नगर में एक जलूस निकाला गया जिसमें नगर के प्रतिष्ठित आर्य जन सम्मिलित थे।

इसी अवसर पर नजीबाबाद में आर्य वीराङ्गना दल की विधिवत् स्थापना की गई और कोटद्वार, कीरतपुर, नगीना, धामपुर, शिवहारा आदि स्थानो से पधारें आर्य वीर दलों का एक प्रीति भोज श्री केशव प्रसाद जी भटनागर असिस्टैन्ट स्टेशन मास्टर के घर पर हुआ।

हरियाना आर्य वीर दल

रोहतक—१६ जनवरी को रोहतक में सार्वदेशिक आर्य वीर दल की कार्यवाहक समिति के मन्त्री श्री बालदिवाकर जी हंस तथा सेनापति श्री स्वा० सुरेन्द्रा नन्द जी की अध्यक्षता में हरियाना दल समिति की एक बैठक हुई जिसमें दल के भावी कार्य-क्रम पर विचार किया गया।

सदस्यता आन्दोलन

दल के सदस्यों को यह जानकर हर्ष होगा कि इस वर्ष सर्वत्र दल सदस्यता आन्दोलन के प्रति बड़ा उत्साह प्रगट किया जा रहा है और हजारो फार्म अब तक भेजे जा चुके हैं और नित्य नये स्थानों से फार्मों की मांग आ रही है। सदस्यता आन्दोलन ३१ मार्च तक रहेगा। अप्रैल के प्रथम सप्ताह मे फार्म भर कर वापिस भेजने होंगे।

(पृष्ठ ६८४ का शेष)

(११) सरायतरीन, छाबड़ी, गोविन्दपुर, नूरी सराय, सपसराय (मुरादाबाद) में इन ग्रामों में खुलो गौहत्या होती है, कोई भी देख सकता है इन ग्रामों का प्रतिदिन का अनुमान २० गौ का है।

(१३) बाहादरपुर (मुरादाबाद) में २ गौ प्रतिदिन कटती हैं। ग्राम के पूर्व दिशा में बूचड़खाना है।

(१४) हिगरपुर (मुरादाबाद) में घरो में ३ या ४ गौ प्रतिदिन कटती हैं। इसको सब लोग मानते हैं।

(१५) भोजपुर (मुरादाबाद) में २६ १२-५४ को १६ गौ कसाइयों के घरों में मेरी आंखों के सामने काटी गई। भोजपुर में बूचड़खाना भी है। कसाई कहते हैं कि दीवार छोटी हैं इसलिये बूचड़खाने में नहीं कटते।

(१६) पिपलसाना (मुरादाबाद) में ८ १० प्रति दिन गौ काटी जाती हैं। किन्तु घरों में यहां बूचड़ खाना भी है जिसके १६ सौ रुपये प्रतिवर्ष डी० बी० लेता है।

(१७ स्वार (रामपुर) में ५ ६ गौ प्रतिदिन कटती हैं। यहां के हिन्दू मुस्लिम मानते हैं। बूचड़ खाना हैं

(१८) रामपुर में १२ बैल ३० १२ ५४ को बूचड़खाने में काटे गये यह प्रतिदिन की संख्या है।

(१९) कुन्दरकी (मुरादाबाद) में ५ या ६ घरों में गौ काटी जाती हैं। यहां सरकारी कर्मचारी मानते हैं।

(२०) बक फाजिलपुर (मुरादाबाद) में ८ से १० तक प्रतिदिन कटती हैं। हर कोई देख सकता है। लेखक ने सब निश्चय करके लिखा है। ७१) दान मिला, २ सार्वदेशिक पत्र के ग्राहक बनाये। १७ प्रतिज्ञा पत्र भराये, ४० सार्वजनिक सभायें कीं, ३००० सज्जनों के सामने भाषण दिया। ४८ ग्राम वा नगरों में भ्रमण किया।

साहित्य-समीक्षा

वेदान्तदर्शनं ब्रह्ममुनिभाष्योपेतम्

पर

सम्मतियां

सब भाष्यकारों ने स्वामी शंकराचार्य की पद्धति का अनुसरण किया। स्वामी ब्रह्ममुनि जी ने अपनी नई पद्धति बनाई। सूत्रों की संगति लगाई है पूर्ण लाभ की वस्तु है।

—स्वामी स्वतन्त्रानन्द

स्वामी ब्रह्ममुनि जी ने त्रैतवाद का प्रतिपादन और शांकरभाष्य की आलोचना व्यास सूत्रों के द्वारा की है, आप अपने सिद्धान्त स्पष्टीकरण में सर्वथा सफल हुए। —स्वामी आत्मानन्द सरस्वती

यह भाष्य साम्प्रदायिक दोषों से रहित, मौलिक, अत्युत्तम, वैदिक सिद्धान्त प्रसारक तथा प्रामाणिक है।

—स्वामी वेदानन्द तीर्थ

स्वामी ब्रह्ममुनि जी द्वारा रचित 'वेदान्तदर्शन भाष्य' बहुत ही उत्तम और उपयोगी ग्रन्थ है, इससे आर्यसमाज का यश बढ़ेगा। इतने योग्यतापूर्ण भाष्य के लिखने पर आर्य जनता को आपका कृतज्ञ होना चाहिये। —इन्द्र विद्यावाचस्पति

चन्द्रलोक जवाहरनगर

सचमुच यह मौलिक खोज की गई है, यदि आर्यसमाज इसका प्रचार करे तो यह एक नई चीज होगी —सुखदेव दर्शनाचार्य

प्रोफेसर दर्शन विभाग, गुरुकुल कांगड़ी

आपने बहुत परिश्रम से अपने अभिमत को प्रकट किया है "शुगस्य तदनादर श्रवणात्" वाला प्रकरण देखा और भाष्यों से आपने विलक्षण अर्थ किया है। ग्रन्थ की सरल संस्कृत शैली बहुत रुची।

—वासुदेव शरण अग्रवाल

अध्यक्ष भारतीय पुरातत्व विभाग

हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस

पुस्तक मिलने का पता—

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

मूल्य ३)

सचित्र डीडवाना शास्त्रार्थ

मूल्य १)

प्रकाशक—

आर्यसमाज डीडवाना (राजस्थान)

साइज २०×३०/१६ पृष्ठ ११२

इस पुस्तक में मृतक श्राद्ध, महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थों की अवैदिकता, वेदों में पशु हिंसा, पुराणों की वेदानुकूलता इन विषयों पर आर्यसमाज और पौराणिकों के मध्य १३ से १६ नवम्बर २३ तक डीडवाना में हुए लिखित शास्त्रार्थ का पूर्ण वर्णन है। आर्य समाज की ओर से श्री पं० बुद्धदेवजी विद्यालङ्कार और श्री पं० लोकनाथ जी तर्क वाचस्पति तथा पौराणिकों की ओर से श्री पं० अखिलानन्दजी और श्रीपं० माधवाचार्य जी वक्ता थे। आर्य जनता इस शास्त्रार्थ को पढ़ कर यथेष्ट लाभ उठाए।

[illegible] द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पटौदी हाउस, दरियागंज, दिल्ली ७ में छपकर
श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक पब्लिशर द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ६ से प्रकाशित

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

ऋग्वेद — यजुर्वेद

वर्ष ३०

अङ्क १

मूल्य स्वदेश ५

विदेश १० शिल

(एक प्रति ॥)

फाल्गुन-चैत्र २०११ वि

मार्च १९५५

धर्मवीर श्री पं० लेखराम जी

(जिनकी बलिदान तिथि ६ फरवरी को मनाई गई)

सम्पादक—

कविराज हरनाम दास बी० ए०

सभा मन्त्री

सहायक सम्पादक—

श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक

सामवेद — अथर्ववेद

विषयानुक्रमणिका

भूल सुधार

आर्य संस्कृति के 'मूल-तत्व' तथा 'एकादशोपनिषद्' के सम्बन्ध में जो विज्ञापन 'सार्वदेशिक' में छपता रहा है उसमें मिलने का पता कुछ गलत छपता रहा है। उसे निम्न प्रकार सुधार लें:—

विजयकृष्ण लखनपाल, विद्या-विहार, बलवीर रोड, देहरादून।

(१) महाराजा जमवन्त सिह जी जोधपुर नरेश मृत्यु १८६६ ई०

(२ नन्ही जां भगतन मृत्यु १६०८ ई०

(३) हीरा दासी

ऐसे ऐसे वेश्यागामी और शगबी भारतीय महागजाओं को उपदेश देने और सुधारने में महर्षि दयानन्द मरस्वती जी का बलिदान हुआ।

* ओ३म् *

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष ३० } मार्च १९५५, फाल्गुन-चैत्र २०११ वि०, दयानन्दाब्द १३० { अङ्क १

वैदिक प्रार्थना

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः। भग प्र नो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम ॥ यजु० ३४। ३६ ॥

व्याख्यान—हे भगवन्! परमैश्वर्यवान् भग ऐश्वर्य के दाता, संसार वा परमार्थ में आप ही हो तथा "भगप्रणेत:" आपके ही स्वाधीन सकल ऐश्वर्य है, अन्य किसीके आधीन नहीं, आप जिसको चाहो उसको ऐश्वर्य देओ, सो आप कृपा से हम लोगों का दारिद्र्य छेदन करके हमको परमैश्वर्य वाले करें क्योंकि ऐश्वर्य के प्रेरक आप ही हो। हे "सत्यराधः" भगवन्! सत्यैश्वर्य की सिद्धि करनेवाले आप ही हो, सो आप नित्य ऐश्वर्य हमको दीजिये तथा जो मोक्ष कहाता है उस सत्य ऐश्वर्य का दाता आपसे भिन्न कोई भी नहीं है, हे सत्यभग! पूर्ण ऐश्वर्य सर्वोत्तम बुद्धि हमको आप दीजिये जिससे हम लोग आपके गुण और आपकी आज्ञा का अनुष्ठान ज्ञान इनको यथावत् प्राप्त हों, हमको सत्यबुद्धि, सत्यकर्म और सत्यगुणों को "उदवा" (उद्गम प्रापय) प्राप्त कर, जिससे हम लोग सूक्ष्म से भी सूक्ष्म पदार्थों को यथावत् जानें, "भग प्रनो जनय" हे सर्वैश्वर्योत्पादक! हमारे लिये ऐश्वर्य को अच्छे प्रकार से उत्पन्न कर, सर्वोत्तम गाय, घोड़े और मनुष्य इनसे सहित अत्युत्तम ऐश्वर्य हमको सदा के लिए दीजिये, हे सर्वशक्तिमान्! आपकी कृपा से सब दिन हम लोग उत्तम २ पुरुष स्त्री और सन्तान भृत्य वाले हों आप से यह हमारी अधिक प्रार्थना है कि कोई मनुष्य हम में दुष्ट और मूर्ख न रहै, न उत्पन्न हो जिससे हम लोगों की सर्वत्र सत्कीर्ति हो निन्दा कभी न हो ॥ ११ ॥ (आर्याभिविनय से)

चेतावनी

एक लोकोक्ति है—

दुःख में हरि को सब भजें, सुख में भजे न कोय।
सुख में हरि को जो भजें, दु.ख काहे को होय॥

मनुष्य आपत्ति पड़ने पर प्रभु को याद करते हैं और आपत्ति के टल जाने और सुख प्राप्त हो जाने पर प्रभु को याद करना छोड़ देते हैं। वह अपने मन में विश्वास कर लेते हैं कि हमें जो दु.ख मिला था वह ईश्वर के कोप का परिणाम था और जो सुख मिला है वह हमारे सुकर्मों का फल है। असल बात यह है कि हमें जो दु.ख प्राप्त हुए थे वह भी हमारे कर्मों के ही फल थे और जो सुख मिला है वह भी कर्मों का ही फल है और यदि हम फिर बुरे कर्म करेंगे तो फिर दु.ख का मिलना भी निश्चित है।

भारतवासियों को स्वाधीनता मिल गई। उनके पराधीनता के दु.ख मिट गये। जब देश पराधीनता के संकट में से गुजर रहा था तब देशवासियों ने हरि को स्मरण किया। वह राम धुन का गान करने लगे और सत्य, अहिंसा और त्याग को अपना मूल मन्त्र बनाया। लगभग २२ साल तक वाणी और कर्म से प्रभु की आराधना करने का यह फल हुआ कि पराधीनता की शृङ्खलायें कट गईं और देश स्वतन्त्र हो गया।

अब सुख का समय आया। संसार की प्रचलित रीति के अनुसार भारतवासियों के दृष्टिकोण में भी परिवर्तन होने लगा। जो राम धुन प्रतिदिन की जीवन-चर्या का हिस्सा बन गई थी, वह कहीं सातवें दिन और कहीं महीने में एक दिन का प्रदर्शन बन कर रह गई। सत्य का स्मरण भी व्यतीत इतिहास का हिस्सा बन गया और अहिंसा केवल विदेश सम्बन्धी नीति का अंग बन गई। त्याग का सौदा तो बाजार में बिल्कुल ही बन्द हो गया। साधारण पुरुषों की बात तो जाने दीजिये जिन्हें राष्ट्र के कर्णधार कहा जा सकता है उन लोगों के अन्दर भी यह भावना उत्पन्न हो गई। अब तो स्वराज्य मिल गया, फिर त्याग या तपस्या की क्या आवश्यकता है?

दृष्टिकोण के इस परिवर्तन का यह परिणाम हुआ है कि आज से दस साल पहले जिन कार्यों पर जोर दिया जाता था और जो हमारे दैनिक कार्यक्रम के अंग थे वह अब व्याख्यानों या रेडियो पर वार्ताओं के शीर्षक मात्र रह गये हैं। उस समय प्रत्येक भारतवासी के लिये विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार और खद्दर का पहनना आवश्यक माना जाता था आज महापुरुषों में भी समय आने पर विदेशी ढंग के वस्त्र पहन लेना कोई दोष नहीं माना जाता। उस समय अंग्रेजी राजभाषा थी इस पर भी हिन्दी में बोलना प्रशंसा के योग्य देश भक्ति का काम समझा जाता था और आज हिन्दी के राज्यभाषा बन जाने पर ऊंचे सर्कल में वही आदरणीय माना जाता है जो फर्राटे की अंग्रेजी बोल सके, चाहे वह अंग्रेजी अशुद्ध और बेमुहावरा ही हो। उस समय चर्खा कातना कांग्रेस के प्रत्येक सदस्य के लिये आवश्यक था। अब चर्खा केवल राष्ट्रपति और कुछ राज्यपालों तक परिमित रह गया है। समझा जाता है कि उनके पास समय भी है और सामर्थ्य भी।

चर्खे का स्थान अब बड़ी मशीनों ने ले लिया है। महापुरुषों के लिए पैदल चलना या बिलकुल सादा रहना अनुचित सा माना जाने लगा है। इन सब परिवर्तनों का परिणाम यह हुआ है कि गत सात वर्षों में देश का नैतिक स्तर एक दम नीचा हो गया है। स्वाधीनता संग्राम के दिनों में वातावरण में जो अच्छे बनने की प्रबल अभिलाषा पाई जाती थी उसका अभाव हो गया है। अब उसका स्थान केवल बड़े बनने की इच्छा ने ले लिया है। महात्मा जी का

शायद ही कोई प्रवचन ऐसा हो जिसमें ईश्वर, धर्म और सत्य की चर्चा न हो। अब राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति को छोड़ कर राष्ट्र का कोई कर्णधार इन वस्तुओं का नाम लेना भी पसन्द नहीं करता। परिणाम यह है कि देश का नैतिक स्तर बहुत नीचा चला गया है और यदि हमारी गति विधि ऐसी ही रही तो और नीचे जाना निश्चित है।

हम कभी स्वतन्त्र थे। जब हमारे निजी और सामाजिक जीवन गिर गये तब हम विदेशियों के पादाक्रान्त हो गये। समय आया जब हमारी आंखें खुलीं और अच्छे नेताओं के नेतृत्व में देश ने स्वाधीनता प्राप्त की। यह न समझना चाहिये कि यह स्वाधीनता नित्य है। यदि देश फिर उसी अन्याय और अनीति के गढ़े में चला गया जिससे उसका उद्धार हुआ था तो यह हमारी बहुत यत्नों से प्राप्त की हुई स्वाधीनता की विभूति फिर भी लुट सकती है। सुख, समृद्धि और यश की मस्ती में हमें यह न भूल जाना चाहिये कि इन सब उत्तम पदार्थों का आधार उत्तम जीवन है। जिस देश के लोगों में रिश्वत, ऐय्याशी और विषयलोलुपता बहुत अधिक बढ़ जाती है उसके पास चाहे कितना ही धन और कितनी ही सेनायें हों उसका पतन निश्चित है। यह इतिहास का पाठ है। यह जातियों के लिये एक चेतावनी है। जो जातियां इसे समय पर सुन लेती हैं वह जीवित बनी रहती हैं जो नहीं सुनतीं वह शीघ्र या देर में ठोकर खा जाती हैं।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

ईसाई प्रचार निरोध का कार्यक्रम

श्रीमद्दयानन्द सेवा सदन की स्थापना का निश्चय

यह चिरकाल से अनुभव किया जा रहा था कि पिछड़े हुए प्रदेशों और पिछड़ी हुई जातियों में ईसाई धर्म के प्रचार को रोकने के लिए आवश्यक है कि विशेष केन्द्रों में सेवा द्वारा प्रचार के स्थिर केन्द्र बनाना अत्यन्त आवश्यक है। ईसाई पादरियों की सफलता का एक मुख्य कारण यह है कि वह केवल व्याख्यानों या लेखों द्वारा प्रचार पर सन्तोष न करके प्रचार केन्द्रों में जम कर बैठ जाते हैं और अनपढ़ और निर्धन लोगों की सेवा और सहायता करके उन्हें अपने अनुकूल बना लेते हैं। उनका उत्तर केवल शब्दों द्वारा नहीं दिया जा सकता। भूखे के लिए अन्न और प्यासे के लिये पानी का जो मूल्य है केवल युक्ति का मूल्य उसका सौवां हिस्सा भी नहीं हो सकता।

इस समय देश के भिन्न २ स्थानों पर ईसाइयों के अनेक ऐसे मिशन बने हुए हैं जिनमें वह लोग स्थिर रूप से रहते हैं। वहां के निवासियों में घुल मिल जाते हैं और समय पर उनकी सहायता करके अपना अनुयायी बना लेते हैं। उसका एक मात्र उत्तर यही हो सकता है कि आर्यसमाज भी ऐसे तथा अन्य आवश्यक स्थानों पर अपने सेवा केन्द्रों की स्थापना करे।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने ईसाई प्रचार निरोध के लिये जो समिति बनाई थी उसने पहले सेवा केन्द्र की योजना बना कर अन्तरंग सभा के पास भेजी थी। अन्तरंग सभा ने अपने १३ फरवरी के अधिवेशन में सिद्धान्त रूप में उसे स्वीकार करते हुए निश्चय किया है कि गाजियाबाद में सभा की जो भूमि है उस पर श्रीमद्दयानन्द सेवा सदन की स्थापना के लिए मकान बनाने की योजना तैयार की जाय। मकान बनने पर १५ हजार तक रुपया व्यय किया जाय। योजना तैयार हो जाने पर सभा के वार्षिक अधिवेशन में बजट के अवसर पर उसे अन्तिम स्वीकृति के लिए उपस्थित किया जाय।

योजना का अभिप्राय यह है कि उस पर अगले वर्ष भर में जो व्यय होगा उसका आनुमानिक विवरण तथा विस्तृत कार्यक्रम की रूपरेखा सभासदों के विचार के लिए उपस्थित हो। उपसमिति का अनुमान है कि सेवा सदन के पहले वर्ष के व्यय के लिए न्यून से

न्यून ८ हजार रुपये की आवश्यकता होगी। सभा ने निरोध कार्य के लिये सवा लाख रुपये की अपील की थी। इसमें से अभी बहुत कम धन प्राप्त हुआ है। जो प्राप्त हुआ है वह समुद्र में से लोटा भर जल के समान ही है। सभा की ओर से आर्य समाजों के नाम पत्र भेजे जा रहे हैं जिनमें यह भी निर्देश किया गया है कि सभा उनसे कितनी राशि चाहती है। बड़े काम बड़े दिल से ही हुआ करते हैं। यह अत्यन्त आवश्यक है कि आर्यसमाजें तथा आर्यजन इस कार्य के लिये दिल खोल कर यथा सम्भव शीघ्र वह राशियां सभा कार्यालय में भेज दें जिनकी उनसे मांग की गई है।

इस निधि से जो कार्य किये जायेंगे वह इन तीन विभागों में बांटे जा सकते हैं:—

१—जिन स्थानों पर आर्यसमाजों अथवा आर्यसमाज की अन्य संस्थाओं की ओर से ईसाई प्रचार निरोध का कार्य हो रहा है वहां सहायता भेजी जाय। उड़ीसा, आसाम तथा मध्य प्रदेश में उत्साही कार्यकर्ता बहुत प्रशंसनीय कार्य कर रहे हैं। उन्हें आर्थिक सहायता देना अत्यन्त आवश्यक है।

२—प्रचार के लिये ऐसे साहित्य की आवश्यकता है जिसकी भाषा सरल हो और कहने का ढंग रोचक हो। सिद्धान्तों की सुबोध व्याख्या, आर्य महापुरुषों के संक्षिप्त जीवन चरित्र और आर्य समाज के कार्यों के विवरण आदि सब उपयोगी विषयों पर छोटी २ पुस्तिकाएं बांटने और सुनाने से जो लाभ होता है वह गम्भीर ग्रन्थों के प्रचार से अनपढ़ लोगों में नहीं हो सकता। ऐसा सरल साहित्य तैयार किया जायगा।

३—देश के विशेष केन्द्रों में श्रीमद्दयानन्द सेवा सदन स्थापित किये जायेंगे। उनमें से पहला सदन दिल्ली के समीप गाजियाबाद वाली भूमि में स्थापित किया जायगा।

आर्य जगत् उत्सुकता से पूछता है कि ईसाई प्रचार के निरोध के लिये क्या किया जा रहा है। योजना की रूपरेखा उनके सामने रख कर मैं उनसे प्रार्थना करता हूं कि वे आगामी दो महीनों में इतनी आर्थिक सहायता भेज दें कि सार्वदेशिक सभा ने सवा लाख की जो अपील की है, प्राप्त राशि उससे ऊपर चली जाय। सभी लोग मानते हैं कि ईसाइयों के प्रचार के कारण आर्यजाति के लिए धर्म संकट आ गया है; धर्म संकट के समय उसका प्रतिकार करने में देर लगाने से कभी कभी रोग लाइलाज हो जाता है। आर्यजगत् से यही निवेदन है।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियां ❀

राज्य की उपाधियां

भारत सरकार ने संभवतः ब्रिटिश राज्य काल की परम्परा का अनुसरण करते हुए जिसकी बुराई करते हुए हम नहीं थकते थे, राज्य की उपाधियों के सिलसिले को पुनः जारी किया है। इस वर्ष 'भारत रत्न' 'भारत भूषण' आदि कई उपाधियां प्रदान की गई हैं। आशा है उपाधियों को देने और लेने वाले दोनों ही पक्ष सन्तुष्ट होंगे।

इस सम्बन्ध में 'माडर्नरिव्यू' में उद्धृत एक मनोरंजक कथा का उल्लेख करना प्रासंगिक जान पड़ता है। जो काशी के एक विख्यात सुप्रसिद्ध संस्कृत के धुरन्धर पंडित के सम्बन्ध में कही जाती है। वे पंडित बनारस के प्रसिद्ध संस्कृत कालिज के चमकते रत्न थे।

तत्कालीन वायसराय लार्ड कर्जन उस कालेज को देखने गए। कालेज की ओर से उस आडम्बर-प्रिय वायसराय का औपचारिक रूप से भव्य स्वागत किया गया। उस स्वागत के समय कालेज के समस्त कर्मचारी और नगर के गण्य मान्य व्यक्ति उपस्थित थे। परन्तु वह पंडित हस्तलेखों को देखने के कार्य में व्यस्त थे। उन्होंने कालेज के प्रिंसिपल और कर्मचारियों के विशेष अनुरोध करने पर भी पंक्ति में खड़ा होने से इन्कार कर दिया था।

स्वागत समारोह के समाप्त होने पर लार्ड कर्जन ने पूछा कि हमारे सामने जिन लोगों को प्रस्तुत किया गया है उनमें वह प्रसिद्ध शास्त्री थे या नहीं जिनकी विशेष ख्याति हम तक पहुंची है। जब उन्हें यह बताया गया कि वे पंडित उपस्थित नहीं थे तो उन्होंने पंडित जी से मिलने की इच्छा प्रकट की। कालेज के प्रिंसिपल महोदय शास्त्री जी के कमरे में दौड़े हुए गए और उन्हें वायसराय महोदय की इच्छा बताई जो आदेश का रूप लिए हुए थी।

पंडित महोदय ने हस्तलेखों पर से अपना सिर हटाए बिना केवल यही कहा 'मैं वायसराय को यहां आकर मिलने की अनुमति देता हूँ।' पंडित महोदय की यह बात वायसराय को बताई गई और वे स्वयं पंडित को देखने के लिये गए।

नव वर्ष की उपाधियों में बनारस नगर का केवल एक ही नाम आया और वह था उन्हीं पंडित गंगाधर शास्त्री का जिन्हें सी० आई० ई० की पदवी से विभूषित किया गया था।

जिस दिन समाचार पत्रों में सूची प्रकाशित हुई पंडित गंगाधर शास्त्री का एक विद्वान् शिष्य जो बनारस की जिला कोर्ट में जज था, अपने गुरु को प्रणाम करने और बधाई देने के लिए उनके घर गया।

जब शास्त्री जी ने अपने शिष्य से उसकी प्रसन्नता का कारण पूछा तो उसने कहा "महाराज! आपको सी० आई० ई० की उपाधि से विभूषित किया गया है।"

यह सुनकर शास्त्री महोदय बड़े जोर से हंसे और कहा "अरे गिरीश, हम पर स्याही डाल दिया और तुम हो गया खुश।"

वस्तुतः सबसे बड़ी और ऊंची उपाधि 'मनुष्य' है जिससे अपने को अलंकृत करने का प्रत्येक व्यक्ति को यत्न करना चाहिए। यदि राजकीय सम्मान का आदान प्रदान आवश्यक ही हो तो इस सम्मान के अधिकारी शहीद, सन्त और वीर योद्धा हैं जिनकी योग्यता से उपाधियां चमकती हैं न कि उपाधियों से वे लोग चमकते हैं।

वैदिक डाइजेस्ट और कल्चरल इण्डिया

आत्माराम कल्चरल फाउन्डेशन (आत्मा राम रोड) बड़ौदा के तत्वावधान में 'वैदिक डाइजेस्ट' मासिक और 'कल्चरल इंडिया' साप्ताहिक दो अंग्रेजी पत्रों का उदय हुआ है। आर्य समाज में इन दिनों अंगरेजी का अपना कोई पत्र न होने से प्रचार कार्य में जो कठिनाई अनुभव की जाती है इन पत्रों से उसके दूर होने की उचित रीति से आशा की जा सकती है।

हम दोनों पत्रों की सफलता और समृद्धि की कामना करते हुए संचालकों को इस सत्प्रयत्न के लिए साधुवाद देते हैं। आशा करनी चाहिए कि सम्पादन, सामग्री, आकार प्रकार और छपाई प्रत्येक दृष्टि से इन पत्रों को उच्चकोटि का बनाने के लिए कोई प्रयत्न उठा न रखा जायगा और सर्व साधारण आर्यजनता का इन्हें यथेष्ट सहयोग प्राप्त होगा। प्रारम्भ के दोनों अंक अच्छी और पठनीय सामग्री से परिपूर्ण हैं।

आर्यमन्दिर और बाहरी संस्थायें

प्रायः आर्य समाजों और प्रदेशीय सभाओं के द्वारा सार्वदेशिक सभा से यह पूछा जाता है वे बाहरी संस्थाओं की प्रार्थना पर अपने भवनों को अथवा उनके किन्हीं भागों को, उनके अधिवेशनों, सभाओं वा समारोहों के लिए दे सकते हैं या नहीं? सन् १६४६ में सार्वदेशिक सभा के कार्यालय से यह आज्ञा प्रचारित की गई थी कि आर्यसमाजों, प्रदेशीय सभाओं और सार्वदेशिक सभा से सम्बद्ध आर्य संस्थाओं को आर्यसमाज के काम के लिए होने वाली सभाओं के लिए ही भवन दिये जाने चाहियें अन्य को नहीं। इस आज्ञा का उद्देश्य यह था कि आज कल के राजनैतिक और आर्थिक वातावरण में प्रायः समाजों के भवनों में होने वाली बाहरी संस्थाओं की सभाओं को भ्रम से जनता आर्यसमाज की सभाएं समझ लेती है और

कभी २ यह भ्रान्ति सरकारी क्षेत्रों में भी हो जाती है जिसके दुष्परिणामों के निराकरण के लिए पीछे से अनावश्यक कष्ट उठाना पड़ता है। आज्ञा में अभी तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ है अतः आर्य समाजों, आर्य संस्थाओं और प्रदेशीय सभाओं को इसके परिपालन पर विशेष ध्यान रखना चाहिए।

ऋषि दयानन्द का चित्रपट

गत वर्ष धर्मार्य सभा ने व्यवस्था दी थी कि महर्षि दयानन्द का फिल्म न बनना चाहिए। धर्मार्य्य सभा की अन्तरंग में १३ २-५५ को इस सम्बन्ध में पुनः विचार होकर निश्चय हुआ है कि इस विषय में जिसमें पक्ष और विपक्ष दोनों ही प्रबल हैं, प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं, आर्यसमाजों और आर्यजनता की व्यापक सम्मति प्राप्त करके, सार्वदेशिक सभा और धर्मार्य्य सभा दोनों की सम्मिलित साधारण सभा में विचार होकर निश्चय होना चाहिए जिससे इस विषय में और विचार की आवश्यकता शेष न रहे। वैधानिक दृष्टि से यह निश्चय ठीक ही है परन्तु इस अत्यन्त महत्व पूर्ण विषय में व्यापक विचार के लिये यह आवश्यक जान पड़ता है कि उक्त सम्मिलित अधिवेशन के निश्चय के बाद प्रदेशीय सभाओं और आर्यसमाजों के प्रतिनिधियों की एक विशेष बैठक बुलाई जाय जिसमें सम्मिलित अधिवेशन के निश्चय की सम्पुष्टि कराई जाय।

आर्यसमाज स्थापना दिवस

आगामी २८ मार्च को आर्यसमाज स्थापना दिवस मनाया जायगा। इसका विस्तृत कार्यक्रम यथासमय सार्वदेशिक सभा के कार्यालय से समाजों में प्रचारित होगा। आशा है यह दिवस समारोह पूर्वक मनाया जायगा और प्रत्येक आर्य समाज सार्वदेशिक सभा को वेद प्रचार निधि के लिये अधिक से अधिक धन एकत्र करके सभा में भेजेगा।

आर्यसमाज स्थापना दिवस हमारे सामने वर्ष भर की सफलताओं और विफलताओं पर सिंहावलोकन एवं आत्म निरीक्षण करने का अवसर उपस्थित करता है।

वर्ष भर में हमने कितने नये सदस्य बनाये, कितने नये आर्यसमाज स्थापित किये, कितनी नई संस्थायें खोलीं, कितना और कैसा साहित्य तैयार किया, कितने लोगों को वेद वाणी सुनाई, कितने गिरे हुओं को ऊपर उठाया, कितने बिछुड़े हुए भाइयों को गले लगाया, कितने भाई बहिनों की धर्म रक्षा की, आदि २ प्रश्नों का उत्तर आंकड़ों से सम्बद्ध है। अतएव इसका संकलन और सम्पादन ईयर-बुक के रूप में होना चाहिए। निस्सन्देह यह अभाव विशेष रूप से खटकने वाला है। इसके लिए जिला उपसभाओं, प्रदेशीय सभाओं और सार्वदेशिक सभा में पृथक् २ विभाग का होना नितान्त आवश्यक है। इस कार्य के सुचारु रूप से सम्पादित होने के लिये यह भी आवश्यक है कि समूचे आर्य जगत् का वर्ष एक साथ प्रारम्भ होकर एक साथ समाप्त हुआ करे। सार्वदेशिक सभा की १३ २-५५ की अन्तरङ्ग सभा ने प्रतिवर्ष आर्यजगत् के लिए वार्षिक साधारण अधिवेशन के द्वारा वार्षिक कार्यक्रम बनवाये जाने का निश्चय किया है। इस निश्चय के कार्यान्वित हो जाने पर कार्य में अधिक एकरूपता आयगी और शक्ति का अधिकाधिक केन्द्रीकरण और सदुपयोग होगा।

इस पवित्र अवसर पर प्रत्येक आर्य, आर्य सभासद और कार्यकर्ता को आत्म-निरीक्षण करके देखना चाहिए कि हमारे द्वारा आर्य समाज की शक्ति और कीर्ति बढ़ी है या नहीं। आर्य समाज की वेदी की पवित्रता सुरक्षित है या नहीं? आर्यसमाज की आन्तरिक शान्ति कायम है या नहीं?

आत्म-निरीक्षण करते समय हमें कई कसोटियां अपने सामने रखनी चाहियें। यदि हम आर्य सभासद हैं तो हमें देखना होगा कि हमारे आचरण से 'आर्य' शब्द का गौरव स्थिर रहता है या नहीं? तथा हम में पर्याप्त योग्यता अच्छाई है या नहीं। हमारे मत(वोट)की निष्पक्षता,पवित्रता और गम्भीरता बनी रहती है या नहीं

हम किसी दल में हैं तो समाज हित में दल हित से ऊपर उठते हैं या नहीं ? यदि हम अधिकारी हैं तो अपने कर्त्तव्यों को अधिकारों से आगे रखते हैं या नहीं ? अधिकार रखने की हम में योग्यता है या नहीं ? हमारे अधिकारों का आत्म संवर्द्धन में तो प्रयोग नहीं होता ? हम अपने अधिकार और अपनी आत्मा के प्रति सच्चे हैं या नहीं ? यदि हम वक्ता हैं तो आर्य समाज की वेदी पर बैठने की हममें पवित्रता है या नहीं, भले ही योग्यता कितनी ही क्यों न हो। हमारे भाषण को सुनकर लोग मौन मुद्रा में और अपने से असन्तुष्ट होकर घर जाते हैं या नहीं ? आर्यसमाज की शान्ति की सुरक्षा के लिए हम उसे पवित्र बना रहे हैं या नहीं ? यदि हम इन कसौटियों पर खरे सिद्ध होते हैं तो ठीक, अन्यथा अपने में यथेष्ट सुधार करना चाहिए।

आर्य समाज की वेदि की पवित्रता

इस प्रसंग में एक घटना का उल्लेख कर देना आवश्यक प्रतीत होता है। एक डिप्टी कलक्टर महोदय थे। वे पक्के शराबी और कबाबी थे। उनके पिता आर्यसमाज से कुछ प्रेम रखते थे, परन्तु डिप्टी कलक्टर महोदय का आर्य समाज की ओर जरा भी झुकाव न था। एक बार वे अपने किसी रिश्तेदार से मिलने एक ग्राम में गये हुए थे। निकटवर्ती आर्यसमाजियों ने उन्हीं दिनों अपने समाज का उत्सव रख लिया था। समाज के अधिकारियों ने, उन्हें अपने उत्सव की किसी बैठक का प्रधान निश्चित करके, उन्हें निमन्त्रण पत्र भेजा और उनकी स्वीकृति प्राप्ति करने के लिए उनका एक शिष्ट मण्डल उनसे मिलने गया। डिप्टी कलक्टर महोदय ने निमन्त्रण स्वीकार करने में अपनी असमर्थता बतलाई और हेतु यह दिया कि मैं शराबी और कबाबी हूं, मुझ जैसा पतित व्यक्ति उस वेदी पर बैठने के योग्य नहीं है। परन्तु आर्यसमाज के अधिकारियों का अनुरोध कायम रहा और अन्त में वे बड़ी कठिनता से राजी हो गये। वे नियत समय पर सभा स्थल में पहुंचे। पंडाल नरनारियों से भरा हुआ था। ज्यों ही उन्होंने मंच पर पैर रखा, त्यों ही विशेष करतल ध्वनि से उनका स्वागत किया गया। उन्होंने मंच पर खड़े होकर कहा—"बहनो और भाइयो, मुझे आपसे एक ही बात कहनी है और वह यह कि मैं शराबी, कबाबी और दुराचारी हूँ इस लिए इस मंच पर खड़ा होने का अधिकारी नहीं हूं। चूंकि मैं बलात् इस पर खींच लाया गया हूं इसलिए इसकी पवित्रता की रक्षा के लिए मैं आज से शराब, मांस और दुराचार का परित्याग करता हूँ। बस मुझे आज यही कहना है।" इतना कहकर वे मंच से उतर आये और अपने घर चले गये। यह परित्याग दिखावा न था अपितु आत्मा की ध्वनि थी। जब तक वे जिये आर्य समाज की प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष सेवा करते रहे।

ऋषि का चित्र संसद् में

आर्य जनता को यह जानकर हर्ष होगा कि भारत सरकार के संसद् कार्यालय ने उन महापुरुषों की सूची में आर्यसमाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती का नाम अंकित किया है जिनके चित्रों से संसद् भवन को अलंकृत करने का निश्चय किया गया है। पिछले दिनों समाचार पत्रों में प्रकाशित सूची में अन्य नामों के साथ महर्षि का नाम न देख कर आर्यजनता को आश्चर्य हुआ था। कतिपय आर्य महानुभावों ने सार्वदेशिक सभा को प्रेरणा की थी कि वह महर्षि के नाम को सूची में अंकित कराने का उपाय करे। इन महानुभावों को तो इस समाचार से बहुत ही अधिक प्रसन्नता होगी। वस्तुतः महर्षि के चित्र के न होने से संसद् भवन की सजावट अधूरी रहती। संसद् कार्यालय द्वारा समय रहते बहुत सम्भवतः अनजान में हुई भूल का सुधार कर लिया गया यह बड़े सन्तोष की बात है। महर्षि दयानन्द अमर हैं उन्हें अमर बनाने के लिये संसद् भवन आदि में उनके चित्रों की विशेष आवश्यकता नहीं है परन्तु उनके प्रति कृतज्ञता का तकाजा है कि उन्हें सूची में स्थान मिले।

गुरुकुल वृन्दावन का स्वर्ण जयन्ती महोत्सव

१८ से २२ फरवरी ५५ तक गुरुकुल वृन्दावन का स्वर्ण जयन्ती महोत्सव कुल ३ दिन में मनाया गया। उपस्थिति, समारोह, तथा इस दृष्टि से कि उत्सव में प्रान्त तथा बाहर के प्रमुख २ आर्य नेताओं, विद्वानों और पुराने स्नातकों ने पर्याप्त संख्या में भाग लिया उत्सव सफल रहा—लगभग २०००० की उपस्थिति थी। ५० हजार रुपया जयन्ती के कोष में आया। दीक्षान्त भाषण केन्द्रीय कृषि मंत्री श्री डा० पंजाब राव देशमुख का हुआ। राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, केन्द्रीय विधान सभा के अध्यक्ष श्री माव-लंकर जी, उत्तर प्रदेश राज्य के मुख्य मन्त्री श्री डा० सम्पूर्णानन्द जी तथा अन्य मन्त्री गणों के महोत्सव की सफ-लता विषयक सन्देश प्राप्त हुए। पुराने स्नातक लग-भग ५० की संख्या में उपस्थित हुए थे।

स्नातक मण्डल ने निश्चय किया है कि गुरुकुल को सरकारी रूप में विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त कराई जाय तदनुसार वे लोग २८ और २९ मार्च ५५ को अपनी एक विशेष बैठक बुला रहे हैं।

उत्तर प्रदेश राज्य ने वृन्दावन से गुरुकुल आने वाली सड़क के जीर्णोद्धार और उसे सीमेंट की बनाने के लिए २५०००) की सहायता स्वीकार की है।

उत्सव में भाग लेने वाले महानुभावों में श्री पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती, श्री पूज्य स्वामी आत्मानन्द जी, श्री पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी, श्री पं० हरिशंकर शर्मा, श्री माता लक्ष्मी देवी जी श्रीयुत पं. द्विजेन्द्रनाथ जी शास्त्री, श्री पं. हरिदत्त जी शास्त्री, श्री प्रो. धर्मेन्द्रनाथ जी शास्त्री, श्री पं. बृहस्पतिजी शास्त्री, श्री पं. प्रकाशवीर जी, शास्त्री श्री पं. वाचस्पति जी आदि आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

उत्सव की सफलता के लिए गुरुकुल प्रबन्ध समिति तथा उस के मुख्याधिष्ठाता श्रीयुत नरदेव जी स्नातक एम. पी. बधाई के पात्र हैं।

— रघुनाथ प्रसाद पाठक

लेखराम षट्कम्

१. अंकुरस्य प्ररोहाय बीजो भवति धूलिसात्।
धर्मक्षेत्राणि सिच्यन्ते वीराणां रक्तवारिणा॥

२. सामान्यो म्रियते प्राणी: स्मरन्मायां रुदन्भृशम्।
त्यजन्ति सुकृत: प्राणान्ध्यायन्त: प्रभुमात्मनि॥

३. वाचा लेखैश्च सतत न्धर्मं संसेव्य यत्नत:।
ययौ वीरगतिं श्रीमान् लेखराम: प्रभुं स्मरन्॥

४. मिथ्यावाद विमूढेन दस्युना प्रहितं छुरम्।
पुरो भूत्वा स जग्राह जयमालामिव स्वयम्॥

५. तेन प्राणबलिन्दत्वा प्राणितो धर्मभूरुह:।
स मृतस्तेन जीवाम: स गत स्तेन संस्थिता:॥

६. अस्मिञ्जीवनसंग्रामे म्रियन्ते कयरा नरा:।
वीरास्तु मरणम्प्राप्य जीवन्त्यमरतां गता:॥

इन्द्रो विद्यावाचस्पति:

प्रकृति

(गतांक से आगे)

(३)

लेखक—श्रीयुत पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय

अब यह प्रश्न हुआ कि मेरे अतिरिक्त मुझ में जो विचार उठते हैं उनमें से कुछ तो ऐसे हैं जिनका उठाने वाला मैं स्वयं हूँ। परन्तु बहुत से विचार ऐसे हैं जिनको सोचना मेरे अधिकार में नहीं, मैं उस प्रकार सोचने से मजबूर हूं। जैसे मैंने देखा कि कोई मुझे मार रहा है, या मुझे इतनी सर्दी लग रही है कि बुरा मालूम होता है। यह पिटने का विचार या किसी अशुभ बात का विचार मैं स्वयं ही क्यों उठाता। अवश्य ही कोई बाहर की चीज होनी चाहिये जो मुझ से दूर है और जिस पर मेरा स्वत्व नहीं, परन्तु इसको भी छोड़िये, क्योंकि कभी २ हमको धोखा भी हो जाता है। रस्सी को सांप समझने लगते हैं। सम्भव है कि बहुत से अशुभ विचारों का कारण हमारी निज की निर्बलता हो। परन्तु एक बात तो माननी ही पड़ेगी अर्थात् बिना कारण के कार्य नहीं हो सकता। यदि इतना मान लिया तो उसी गणित की शैली से यह प्रश्न उठता है कि मेरे मन में जो अनन्त ईश्वर की भावना है वह कैसे उत्पन्न हुई ?

डोकोर्ट कहता है कि मैं तो सान्त हूं, सान्त वस्तु से अनन्त सत्ता का भाव उत्पन्न नहीं हो सकता। इस लिये डिकोर्ट कहता है कि जहां विचार मात्र से मेरी अपनी सत्ता की सिद्धि होती है वहां *"अनन्तता के विचार"* से अनन्त ईश्वर की भी सिद्धि होती है। क्योंकि यह अनन्त ईश्वर ही है जो हमारे मन में अपनी अनन्त सत्ता का भाव उत्पन्न करता रहता है।

अब दो चेतन सिद्ध होगये। एक तो मैं और दूसरा मेरा ईश्वर। मेरी सत्ता इसलिये सिद्ध है कि मैं विचारता हूं। ईश्वर की सत्ता इसलिये सिद्ध है कि वह अनन्त सत्ता के विचार को मुझ में उत्पन्न करता है।

ईश्वर की अनन्तता के अन्तर्गत ईश्वर के अन्य गुण भी आजाते हैं क्योंकि सर्वज्ञ, कल्याणकारक आदि गुण किसी में हो ही नहीं सकते जब तक अनन्त न हो। छान्दोग्य उपनिषद् में कहा है :—

यो वै भूमा तत् सुखं नाल्पे सुखमस्ति। भूमैव सुखं भूमा त्वेव विजिज्ञासितव्य इति भूमानं भगवो विजिज्ञास इति: (छान्दोग्य ७।२३।१)

अर्थात् अनन्ता में ही सुख है। अल्प में सुख नहीं। इसलिये इस अनन्त की ही खोज करनी चाहिये।

जब ईश्वर को सब गुणों से युक्त तथा सबका उत्पादक मान लिया तो प्रश्न होता है कि मुझ तथा मेरे ईश्वर से इतर अन्य कोई वस्तु भी है या नहीं।

मुझे एक लाल वस्तु दिखाई पड़ रही है। यह *"लाली"* का भाव मेरे मन में है। परन्तु मैं अनुभव कर रहा हूं कि मेरे बाहर एक वस्तु है जिस में इसी लाली की प्रतिकृति के रूप में कोई गुण हैं, क्या यह लाल वस्तु के अस्तित्व का ज्ञान वास्तविक है या भ्रम। क्या ईश्वर मुझको धोखा दे रहा है ? कदापि नहीं, ईश्वर धोखेबाज नहीं हो सकता। अन्यथा वह अनन्त न होता। फिर क्या बिना वस्तु के ईश्वर ने मेरे मन में लाल वस्तु का भाव उत्पन्न कर दिया, यदि ऐसा है तो यह भी धोखा ही हुआ ? चीज हो न और मुझे प्रतीति हो। इसलिये मानना पड़ा कि वस्तुतः मुझसे इतर और ईश्वर से इतर कोई तीसरी चीज है जिसको प्रकृति कह सकते हैं।

यहां एक गौण प्रश्न उठता है। यदि ईश्वर हम को कभी धोखा नहीं देता तो बहुधा धोखा क्यों हो जाया करता है? डीकोर्ट इसका उत्तर यह देता है कि हमारे में जानने की शक्ति (cognition) अल्प है और निर्वाचन (faculty of election) की शक्ति में हम स्वतंत्र हैं। इसलिये इस अल्पशक्ति के प्रयोग में हम भूल कर बैठते हैं। यह तो बीच में एक बात उठ खड़ी हुई जिसकी ओर हमने संकेत कर दिया। मूल बात यह है कि डीकोर्ट ने चेतन और अचेतन, दोनों का ही अस्तित्व स्वीकार किया है।

यहां एक प्रश्न और उठता है जिसका हमारी आगे वाली मीमांसा से सम्बन्ध है। हम चेतन हैं, प्रकृति अचेतन है। फिर यह अचेतन सत्ता हमको कैसे प्रभावित कर सकती है? अर्थात हम अचेतन का ज्ञान प्राप्त ही कैसे करते हैं? चेतन चेतन पर प्रभाव डाल ले। अचेतन अचेतन पर। परन्तु अचेतन जो चेतन का सजातीय नहीं है चेतन पर कैसे प्रभाव डाले? यह प्रश्न है।

डीकोर्ट इसके लिये एक उपाय निकालता है। वह कहता है कि चेतन और अचेतन अर्थात् जीव और शरीर यह दो सापेक्षिक (relative substances) या गौण सत्तायें हैं। मुख्य या मौलिक (absolute) सत्ता ईश्वर है। यह दो गौण सत्तायें ईश्वर की ही बनाई हैं। वह समानान्तर रीति से (parallelly) दोनों में ही परिवर्तन उत्पन्न कर देता है। कल्पना कीजिये कि बादलों से जल बरस रहा है और मुझे ज्ञान हो रहा है कि जल बरस रहा है। यहां दो क्रियाएं हैं। एक तो जड़ और अचेतन जल, अचेतन बादलों से चलकर अचेतन आकाश में होता हुआ अचेतन पृथ्वी पर गिर रहा है। दूसरे मेरे मन में भी उसी की समानान्तर एक क्रिया हो रही है जो मुझे ज्ञान दे रही है अर्थात् मैं अनुभव कर रहा हूँ कि जल बादलों से चलकर पृथ्वी पर गिर रहा है। जड़ और अचेतन जल मुझ चेतन को ज्ञान देने में असमर्थ था। और मैं चेतन, अचेतन जल को चलाने में भी असमर्थ था। ईश्वर ने जहां जल को बादलों से चलकर पृथ्वी तक आने की गति प्रदान की वहां उसी ईश्वर ने मेरे मन में भी उसी के समान एक विचार उत्पन्न कर दिया जिसका नाम है वर्षा का ज्ञान। यदि कोई कहे कि वर्षा मेरे मन के बाहर कोई सत्ता नहीं रखती तो डीकोर्ट कहता है कि ईश्वर धोखेबाज सिद्ध होगा क्योंकि ईश्वर ने न केवल वर्षा का ज्ञान ही दिया किन्तु यह भी ज्ञान दिया कि वर्षा मन के बाहर हो रही है।

डीकोर्ट इससे आगे नहीं बढ़ता। वह इस बात की मीमांसा नहीं करता कि चेतन ईश्वर अचेतन प्रकृति को कैसे उत्पन्न कर देता है, या चेतन ईश्वर अचेतन प्रकृति पर कैसे प्रभाव डाल सकता है। क्योंकि जो प्रश्न ऊपर उठाया गया है वह तो ज्यों का त्यों ही रहा जाता है। प्रश्न यह था कि चेतन अचेतन दो विजातीय चीजें हैं। विजातीय चीजें एक दूसरे पर कैसे प्रभाव डालें। ईश्वर की सत्ता मानने से समाधान नहीं हुआ। ईश्वर को तो चेतन ही माना जायगा। ऐसा तो नहीं मान सकते कि ईश्वर चेतनता और अचेतनता के मेल से बना है। ऐसा मानने से तो बहुत से और प्रश्न उठ खड़े होंगे। जब ईश्वर चेतन है तो उस ने अपने से इतर, सर्वथा विजातीय अचेतन या जड़ प्रकृति उत्पन्न कैसे करदी और उस पर किस प्रकार प्रभाव डाल रहा है। यदि कहा जाय कि ईश्वर में ऐसी शक्ति है कि वह चेतन होता हुआ भी अचेतन को प्रभावित कर सकता है तो क्या इसी युक्ति को कुछ आगे नहीं बढ़ा सकते। क्या चेतन ईश्वर अपने बनाये हुये चेतन जीव को अपनी शक्ति में से कुछ अंश नहीं दे सकता कि वह जड़ प्रकृति में कोई परिवर्तन कर सके। अथवा जिस प्रकार चेतन ईश्वर की चेतनता इसी में है कि सर्वत्र जड़ जगत् की गति प्रदान करता रहे इसी प्रकार अल्प चेतन जीव की भी चेतनता इसी में समझी जाय कि वह सीमित अंश तक जड़ प्रकृति पर प्रभाव डाल सके। यदि ईश्वर जल को बादलों से बरसाने में समर्थ है तो मुझे भी इतनी शक्ति है कि मैं एक गिलास में से जल की बूंदों को पृथ्वी पर डाल सकूं। (क्रमशः)

अध्यात्म-धारा

सत्य की जय

श्री व्रजबिहारी जी (उड़ीसा)

यह उस समय की बात है जब हमारा देश शिक्षा, सभ्यता, संस्कृति के सब से ऊंचे शिखर पर पहुंचा हुआ था। देश का मुक्त वायुमंडल प्राचीन ऋषि महर्षियों के पवित्र मुखों से निकलती हुई वेद-वाणी से गूंज उठता था। ग्राम २ में, नगर २ में, घर २ में तथा आचार्यों के निवास स्थान गुरुकुलों में वेद विधि के द्वारा अनुष्ठित यागयज्ञ के सुगन्धमय पवित्र धूम के द्वारा आकाश मण्डल संजीवित हो उठता था। प्रचुर धन संपत्ति से हमारे देश के घर घर भरपूर थे। देश का धन भंडार अपर्याप्त खर्च के बावजूद भी सूना नहीं पड़ता था। अन्न के लिये, वस्त्रों के लिये किसी को भी मुंह से आतुर वचन निकालना नहीं पड़ता था। प्रत्येक बाग बगीचे वन जङ्गल फल फूलों से परिपूर्ण रहते थे। नदियां अपनी स्वाभाविक गति से वह चलती थीं। न उनमें वर्षा में बाढ़ आकर देश को हानि पहुंचाती थी। न गर्मियों में सूख कर पानी के अभाव के कारण दुःख ही पहुँचाती थीं। अर्थात् यागयज्ञ के द्वारा हमेशा मेघ-मंडल ऋषियों के अत्यन्ताधीन रहता था। हरएक ऋतुएं मंगलमय देश की कल्याणमयी कृपापूर्ण विधि के अनुसार देश को अपने अपने प्रकृतिगत अवदानों से कृतार्थ करती रहती थीं। ऐसे समय में जब कि देश में किसी प्रकार का अभाव अनाटन न था, क्या यह सम्भव हो सकता है कि देश वासियों में नैतिकता न हो? अनैतिकता का तो मूल कारण अभाव ही है और दूसरा कारण धर्म का नाश होना। जिसको भूख के समय खाना मिल जाता हो, वह खाने के लिये झूंठ क्यों बोले?—जिसको कपड़ों की कमी के समय कपड़े मिल जाते हों, तो वह कपड़ों के लिये क्यों चोरी करे?—जिसको बिना खर्च में या कम खर्च में समाजिक अन्याय संगत बाधा बन्धन के बिना ब्याह शादी करने की सुविधाएं मिल जाती हों, ऐसे स्त्री या पुरुष व्यभिचार क्यों करने लगे?—रोगव्याधि क्यों देश में फैलने पाये?—अपने जात पांत के कारण से नहीं, किन्तु अपनी योग्यता के कारण गुणों के कारण जिसको गुरु सम्मान मिल जाता हो, वह बहानेबाजी का सहारा लेकर अपने बड़प्पन दिखाने के लिये दूसरों को क्यों ठगने लगे? जिस देश में दोषी को दण्ड मिल जाता हो, निर्दोष को रक्षक मिल जाता हो, उस देश के लोग दूसरों से क्यों डरने लगें?

यही कारण है कि निर्भीक निडर होकर ब्रह्मचारी जाबाल सत्यकाम महर्षि गौतम गोत्रोत्पन्न ऋषि हरिद्रुमान के आत्मज हरिद्रुमत के कुल में ब्रह्मविद्या प्राप्त करने के लिये जाता है।

आधुनिक काल में जैसे स्कूल कालेजों में प्रविष्ट होने के समय छात्रों को अपने अपने नाम धाम के साथ साथ पिता आदि का नाम धाम भी लिखवाना पड़ता है, शायद प्राचीन काल में भी यह प्रथा रही हो। इसलिये गुरुकुल में जाने से पहले सत्य काम अपनी माता से पूछता है। "ब्रह्मचर्यं भवति, विवत्स्यामि। किंगोत्रन्वहमस्मीति।" भवति! यानी हे पूजनीय माता! ब्रह्मचर्य के लिये आचार्य कुल में मैं रहूंगा यानी ब्रह्मचर्य व्रत धारणपूर्वक मैं गुरुकुल में ब्रह्मविद्या प्राप्त करूंगा, मेरा गोत्र क्या है?

माता जबाला उस महान् प्राचीन भारतवर्ष की माता थीं। एक पाप को छिपाने के लिये झूठ कह कर दूसरा पाप करना वह नहीं जानती थीं। अतः उन्होंने साफ कह दिया।

नाऽहमेतद्वेद तात। यद्गोत्रस्त्वमसि। बह्वहं चरन्ती परिचारिणी यौवने त्वामलभे। साऽहमेतन्नवेद यद्गोत्रस्त्वमसि। जबाला तु नामाऽहमस्मि सत्यकामो नामत्वमसि। स सत्यकाम एव जाबाला ब्रुवीथा इति।"

हे तात! तू किस गोत्र का है मैं नहीं जानती। बहु परिचर्या करती हुई मैं परिचारिणी (सेवकी) तुझे यौवन में प्राप्त किया है। अतः मैं नहीं जानती कि तू किस गोत्र का है। किन्तु किसी के पूछने पर बता देना कि मैं जाबाला का पुत्र सत्यकाम हूं।"

भारत की इस प्राचीन नारीके उद्गार कितने महत्त्व पूर्ण है !! वह जानते हुए भी कि ये उद्गार अपने चरित्र के माथे पर कलंक का टीका लगा देगा, तथापि वह निसंकोच हो बोल उठी कि "मैने यौवन में तुझे प्राप्त किया है," जिस यौवन काल में अपनी सब प्रवृत्तियां तथा इन्द्रियां प्रबल और चंचल हो उठती हैं, लोक-लाज की परवाह नहीं करतीं—किसी प्रकार का बाधानिषद् नहीं मानतीं, उसी यौवन काल में तुझे जनी, सो फिर किस हालत में—बहु परिचर्या करती हुई यानी एक की नहीं अनेकों की परिचर्या करती हुई तुझे प्राप्त किया सत्य को इतने स्पष्टरूप से अपनी सन्तान के सामने नग्न करने वाली कोई स्त्री क्या आधुनिक काल में है ? वह थी प्राचीन भारत की एक माता 'जबाला', जिनके गुणों काअसर अपनी सन्तान के ऊपर पड़े बिना नहीं रह सकता। सत्यकामने अपने नाम के अनुसार ही काम किया।

पर्णकुटी के चारों ओर की भूमि समतल, स्वच्छ परिष्कृत है। कुटी के निकट ही कलकल शब्द करती हुई स्वच्छनीरा अखरस्रोता पयःस्विनी बहती है। फलफूलों से भरा हुआ वृक्ष मानों ऋषिकुमारों को अपनी अपनी भेंट देने के लिये आश्रम की चारों ओर खड़े हैं। नाना प्रकार के पक्षी गणों की मधुर ध्वनि से सारी वनस्थली मुखरित हो उठती हैं मृग, मयूर, मराल अन्तवासियों के हाथों से चारा खाने के लिये दौड़धूप लगा रहे हैं और मुनिबालकगण हाथों में पशुशावकों का भोज्य पदार्थ लिये अपनी ओर उनको मुखों की आवाजों से बुला रहे हैं। अभी अभी समाप्त किये हुए हवन की सुगन्ध से समस्त कुटीर के आकाश मण्डल महक उठते हैं। ऐसा लगता है कि मानो यज्ञ के समय ऋषिकुमारों के मुखों से निकले हुए ललित मधुर वेद मन्त्र ध्वनिविद्ध वृक्षलताओं के मध्य में छायासकुल बनकर नवागत अतिथियों की ओर मुस्कान भरी दृष्टि से झांक रहे हैं। ठीक ऐसे समय में हाथों में समिधा लिये, होठों में मुस्कान लिये, आंखों में विद्याभिलाष की आकांक्षा लिये कपोल में गम्भीरता की गरिमा लिये, कपोल में ब्रह्मचर्य की ज्योति लिये नग्नपद, मुक्तकेश, हास्यमुख सौम्यमूर्ति सत्य काम उपस्थित हुआ। कुटीर के प्रांगण के पास पहुंचते ही प्रभात सूर्य की पहली किरणें उसके मुंह पर पड़ने लगीं। आदित्यदेव ने मानो उसे यह कह कर आशीर्वाद दिया कि सत्यकाम। तू भय मतकर, निडर होकर अपनी इच्छा कुलपति के सामने प्रकट कर दे। मैं ही तेरे कुल का आदि पुरुष हूँ।

ब्रह्मचारी परिवेष्टित वकुल वृक्षों के नीचे बने मंडप में आसीन तेजोपुंज ऋषि हरिद्रुमत के सामने जोड़हस्त हो नतमस्तक हो सत्यकाम बोला: *"ब्रह्मचर्यं भगवति वत्स्याम्युपेयां भगवन्तमिति"* 'हे भगवान ! (भगवति) परम पूजनीय आपके समीप स्वाध्यायार्थ ब्रह्मचर्य को धारण करूंगा इस हेतु आपके समीप आया हूं (इति) यही आपसे प्रार्थना है।' ऋषि एक दृष्टि से इस सौम्य-मूर्ति बालक की ओर देखने लगे, इतने आकस्मिक रूप से ब्रह्मविद्या प्राप्त करने के लिये उनके पास इससे पूर्व तो कोई नहीं आया था !! "इसके मुख देखने मात्र से ही तो पता चल जाता है कि उसके मन में ब्रह्मविद्या प्राप्त करने की कितनी लगन है' कितनी श्रद्धा है, कितनी प्रबल आकांक्षा है ! ईश की अगर यही इच्छा है तो मैं इसे अवश्य ही इस परम कल्याणकारी गुप्त विद्या को इस अभिमुख बालक के सामने प्रकट करूंगा। परन्तु यह बालक ब्राह्मण है कि नहीं पता नहीं चलता।

क्या ब्राह्मण केवल वह हो सकता है जो ब्राह्मण कुल में जन्म लिया हो ? ब्राह्मण की योग्यता रखने वाला अन्य कोई भी क्या ब्राह्मण नहीं बन सकता ? जिस विद्या को प्राप्त करने में केवल ब्राह्मण ही अधिकारी है उसे क्या ब्राह्मण की योग्यता रखने वालों को देना पाप है ? अगर पाप है तो मैं नहीं मानता। फिर भी कुल की चिरप्रचलित प्रथा के अनुसार इससे गोत्र पूछ लेना संगत होगा।" इतने विचारविमर्ष के बाद ऋषि ने पूछा :—

"किं गोत्रो नु सोम्यासीतिः" सोम्य तेरा गोत्र क्या है ? "नाहमेतद्वेद भो यद्गोत्रोऽहमस्म्यपृच्छं मातरंऽसा मा प्रत्यब्रवीदः "बह्वहं चरन्ती परिचारिणी यौवने त्वामलभे साहमेतन्नवेद यद्गोत्रस्त्वमसि जबाला तु नामाऽहमस्मि सत्यकामो नामत्वमसीति सोऽहंऽ सत्यकामो जाबालोऽस्मि भो इति।"

"मैं भगवान ! मैं इसको नहीं जानता हूं। जिस गोत्र का मैं हूँ माता से मैंने पूछा था। उसने मुझसे कहा कि बहुत सेवा करती हुई सेवापरायणा मैंने यौवनावस्था में तुझ को प्राप्त किया सो मैं नहीं जानती हूं जिस गोत्र वाला तू है। परन्तु जबाला नाम वाली मैं हूं 'सत्यकाम नामा तू है।' हे भगवान ! सो मैं सत्यकाम जबाला हूँ।" बालक ने सद्यमुकुलित कमल के समान अपने मुख को प्रशांत बनाकर जोड़हस्त हो उत्तर दिया। ऋषि चकित रह गये। इसके पूर्व किसी ने तो सत्य के उस नग्न रूप को इतने स्पष्ट रूप से प्रकट नहीं किया था। सत्य को इतने स्पष्ट करने वाला बालक क्या अब्राह्मण हो सकता है ? जिसकी माता इतनी स्पष्टवादिनी हो इतनी अभिमानिनी हो उसकी सन्तान क्या शूद्र हो सकती है ? नहीं, नहीं यह कदापि नहीं हो सकता। मैं निश्चय इस बालक का उपनयन करूंगा।' ऋषि की आंखों से आसूं की धाराएं बहने लगीं। वे आनन्द में गद्गद् हो बद्धनेत्रमंडित अपनी विशाल प्रशस्त बाहुओं से बालक को आबद्ध कर बोल उठे. ... नैतद्ब्रह्मणो विवक्तुमर्हति। समिधंद्र सोम्याऽऽहरोप त्वानेष्येन सत्यादगा इति। इस विषय को अब्राह्मण प्रकाशित करने को समर्थ नहीं हो सकता ! अतः हे सोम्य होमसामग्री ले आओ तुमको उपनीत करूंगा, कारण सत्यस्वरूप धर्म से तुम पृथक नहीं हुए हो।

यहां विचार कर देखना है कि हमारे प्राचीन शास्त्रों में अब्राह्मण को ब्रह्मविद्या प्राप्त करना क्यों मना है ? जिसकी आत्मा कलुषित हो, जिसका मन चंचल हो इस विद्या को धारण करने के लिये जिसके मन में बल न हो, इस विद्या को प्राप्त करने के बाद जो इसका दुरुपयोग करने लगे ऐसे अब्राह्मण को क्या यह महान कल्याणकारी विद्या देना ठीक होगा ? मूर्ख वैद्य से रोगी की चिकित्सा करवाना क्या अच्छा होगा ? नपुंसक से अपनी लड़की का व्याह रचना क्या उचित होगा ? यही कारण है कि ऐसे लोगों को ब्रह्मविद्या नहीं दी जाती थी। परन्तु ब्राह्मण का जन्मगत सार्टीफिकेट न होने पर भी जिसमें अन्ततः उपर्युक्त अवगुण न हों तो क्या वह ब्राह्मण नहीं कहलाता ? और ऐसे लोगों को ब्रह्मविद्या देना क्या अन्याय होगा ? इस प्रश्न का उत्तर ऋषि हरिद्रुमत स्वयं देते है जब हम देखते हैं कि वे सत्यकाम का उपनयन संस्कार के उपरान्त उसे गुरुकुल के कामों में लगा देते हैं। उसकी शक्तिमत्ता और गुरुभक्ति की परीक्षा के लिये उसकी योग्यता की पहचान के लिये ऋषि ने गोष्ठ में से क्षीण और दुर्बल गौवों के मध्य से चारसौ गो निकाल कर सत्यकाम को चराने के लिये आदेश देते हैं।

सत्यकाम में आत्मविश्वास की कमी नहीं थी। जबाला जैसी माता की वह जो सन्तान ठहरी। उन गौओं को वन की ओर प्रस्थापित करता हुआ सत्यकाम दृढ़ कंठ में विनम्र हो कहता है......"*नासहस्रेणाऽवर्तेयेति*" सहस्र गौओं के बिना मैं लौट कर नहीं आऊंगा।

यानी शिष्य गुरुकुल की आर्थिक उन्नति में भी सहयोग करना चाहता है। आधुनिक काल की फीस (fees) की प्रथा का यह अन्यरूप ही है। यह था हमारे प्राचीन भारतवर्ष की गुरुशिष्य परम्परा का वास्तव स्वरूप।

छान्दोग्यपनिषद् चतुर्थ खंड- चतुर्थ प्रपाठक-प्रवाक १ से ९ तक।

अणु-आयुधों की होड़ पूर्ण विनाश की ओर दुर्भाग्यपूर्ण कदम

(ले०—श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य)

अमरीका एक विचित्र भ्रम से पीड़ित है। संयुक्त राज्य अमरीका की सरकार उस देश के अधिकांश लोगों में यह धारणा उत्पन्न करने में सफल हुई है कि सोवियत आणविक आयुध होने से अमरीका तथा दुनिया के लिए एक प्रकार की शांति सुनिश्चित हो चुकी है। अमरीकी लोग यह सोचने लगे हैं कि यद्यपि यह सर्वोत्तम शांति नहीं किन्तु सोवियत संघ तथा उसके घनी आबादी वाले एशियाई साथी देशों के महत्वाकांक्षापूर्ण षड्यंत्रों के विरुद्ध यह द्वितीय सर्वोत्तम शांति है। धारणा यह है कि कोई राष्ट्र ऐसी शक्ति के विरुद्ध जिसके पास बहुत से अणु आयुध हैं, गंभीरतापूर्वक विचार किये बिना युद्ध न छेड़ेगा क्योंकि यदि अभी कोई बड़े पैमाने पर लड़ाई हुई तो उसका महाविध्वंसकारी परिणाम निकलेगा। मैं स्पष्ट रूप से कहता हूं कि यह एक भ्रम के सिवा और कुछ नहीं।

युद्ध का कारण

अब, चाहे अणु-आयुध हों या न हों, कोई राष्ट्र बिना गम्भीर विचार के युद्ध नहीं छेड़ता। यह बिलकुल स्पष्ट हो गया है और प्रत्येक राष्ट्र ने पूर्णतः अनुभव किया है कि संघर्ष में लिप्त किसी भी दल का युद्ध से हित नहीं हो सकता। भलीभांति समझ-बूझ कर कोई युद्ध नहीं छेड़ता; लड़ाई का कारण तो वास्तविक अथवा काल्पनिक अन्याय या आक्रमण के कारण किसी राष्ट्र में उत्पन्न वह घृणा या रोष है जो कि काबू से बाहर हो जाता है अथवा ऐसा भय है जिसमें क्षति का कोई ध्यान नहीं रहता।

आणविक आयुधों द्वारा शान्ति रक्षा का सिद्धान्त कतिपय मान्यताओं पर आधारित है। यह मान लिया जाता है कि शत्रु बहुत दुष्ट है और वह आक्रमण करने तथा दुनिया पर हावी होने के लिए तुला हुआ है। साथ ही यह भी मान लिया जाता है कि शत्रु स्वार्थ से प्रेरित होगा अतएव वह ऐसी उत्तेजना उत्पन्न करेगा जिससे कि आणविक आयुधों से पूर्ण विनाश हो।

आणविक आयुधों की निवारक क्षमता तभी वास्तविक बनेगी जब कि यह स्पष्ट हो जाए कि अमरीका इन अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग तभी करेगा जब कि ऐसा करना आवश्यक हो। यदि ध्यानपूर्वक विचार करें तो आसानी से समझ में आ जायगा कि शत्रु का स्वार्थ ही उसे आणविक आयुधों का अविलम्ब, प्रभावपूर्ण तथा क्रूर प्रयोग से ही वह अपने को बचा सकता है। यहां तक कि यह गलत विश्वास भी कि एक पक्ष ने तैयारी कर ली है और वह एकाएक हमला करना चाहता है दूसरे पक्ष के लिए उत्तेजना का पर्याप्त कारण बन जाएगा और इस स्थिति में वह बचाव के लिए ब्रिटेन या अमरीका पर आक्रमण कर सकता है।

मानलें कि एक दुष्ट सरकार एक बड़े युद्ध के परिणामों का भली भांति अनुमान लगाती है और उसकी बुद्धि क्रोध या घृणा से कुंठित नहीं होती। इस स्थिति में वह आसानी से समझने लगेगी कि नये आयुद्ध का विध्वंसात्मक रूप ऐसा है कि यह इन्तजार करना खतरनाक होगा कि पहले दूसरा पक्ष उसका प्रयोग करे क्योंकि एक बार अगर उसका प्रयोग हुआ तो वह इस प्रकार होगा कि पीड़ित पक्ष के लिए प्रतिशोध के हेतु अपने सुरक्षित आणविक आयुध भंडार से काम लेने का अवसर ही न रहेगा। यह हालत बहुत कुछ एक बड़े शिकार के समान है। शिकारी सब से अधिक घातक तथा प्रभावकारी अस्त्र को काम में लाये बिना नहीं रहता। उसके लिए पहले इस बारे में निश्चिन्त

होना आवश्यक है कि घायल होने के बाद उस पर नहीं झपटेगा।

भ्रामक कल्पना

'न्यूयार्क टाइम्स' को मैंने जो पत्र लिखा था उस पर कुछ प्रसिद्ध अमरीकियों ने अपने विचार प्रकट करते हुए यह दलील दी है कि यद्यपि अणुआयुध बुरे हैं और इन्होंने युद्ध को अधिक खतरनाक बना दिया है किन्तु वे अप्रत्यक्ष रूप से शांति में योग दे रहे हैं। लेकिन मेरेपास दूसरी तस्वीर है। कुछ राष्ट्रतो अवश्य हिचकिचाएंगे। वे प्रारम्भ में ही इन अत्यन्त घातक अस्त्रों का प्रयोग नहीं करेंगे। उनकी इस हिचकिचाहट ने ही नैतिक क्षेत्र में उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाई है और केवल सैनिक स्थिति की अनुकूलता के कारण उसको नहीं त्यागा जा सकता। लेकिन दूसरों के बारे में क्या कहा जाए ? वे अवश्य ही हिचकिचाहट के खतरे को सोचेंगे और आयुधों का अत्यन्त घातक तथा परिणामप्रद प्रयोग करने और इस दिशा में पहल अपने हाथों में लेने के लिए कोई पर्याप्त कारण खोजेंगे।

इन नए अस्त्र-शस्त्रों की शक्ति क्षमता उनकी संख्या तथा उनके भार में निहित नहीं है। उसका अनुमान लगाते समय एक भिन्न गुणक का ध्यान रखना होगा और वह इन आयुधों के प्रयोग के बारे में किसी नैतिक भावना का अभाव है। यदि एक व्यक्ति के हाथों में, जो कि नैतिकता के कारण हिचकिचाता हो, बीस कारतूस हों और उसके शत्रु के पास जो कि हिचकिचाहट का नाम नहीं जानता और बिना प्रतीक्षा किए ठीक निशाना लगा सकता है, केवल दो चार ही कारतूस हों तो पहले व्यक्ति के बीस कारतूस कुछ काम नहीं दे सकते। इस प्रकार का तर्क बड़ा भद्दा मालूम देता है किन्तु व्यापक भ्रम तथा कुछ लोगों द्वारा उठाये गए कतिपय मुद्दों को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक हो गया है। कहने का मतलब यह है कि ये आणविक, आयुध निश्चित रूप से, उस पक्ष की शक्ति नहीं बढ़ाते जो कि वास्तव में शांति-प्रेमी है और जिसे नैतिकता का ध्यान है किन्तु दुष्ट पक्ष की शक्ति इससे बहुत बढ़ती है। शांति-प्रेमी पक्ष के पास इन आयुधों के होने का एकमात्र परिणाम यह निकलता है कि जो पक्ष नैतिकता में अधिक विश्वास नहीं करता उसे इन आयुधों को अपनाने के लिए एक कारण तथा एक बढ़ावा मिल जाते हैं। काश, अमरीका ने अणु बम का आविष्कार न किया होता, वास्तविक आविष्कार न किया होता, युद्ध में उसकी संहारक क्षमता को सिद्ध न किया होता और अणु-आयुधों के निर्माण की एक होड़ को शुरू न किया होता। यदि यह सब न होता तो दुनिया बहुत भिन्न होती। वास्तव में संख्या का नियम इन आयुधों की क्षमता पर लागू नहीं होता। उदजन (हाइड्रोजन) बम के निर्माण के बाद आयुधों की होड़ का कोई मतलब नहीं रह जाता। शक्ति आयुधों की संख्या तथा उनके भार की अपेक्षा इन्हें बिना किसी हिचक के काम में लाने पर अधिक निर्भर है।

भय का अटूट वातावरण

हाल में इस प्रकार का एक समाचार फैला कि ब्रिटेन स्थित एक अमरीकी हवाई डिवीजन को सोवियत संघ के विरुद्ध आणविक आक्रमण करने का अधिकार दे दिया गया है। ब्रिटेन को इस आरोप का खंडन करना पड़ा। जहां एक बार राष्ट्रों ने यह निश्चय कर लिया और उनकी जनता ने समर्थन कर दिया कि उनके शस्त्रागारों में इस प्रकार के संहारक अस्त्र-शस्त्र रहने चाहिएं वहां उपर्युक्त प्रकार के बल्कि उनसे भी अधिक उत्तेजक आरोप या वास्तविक सन्देह सामने आते रहेंगे। किसी भी समय एक जोरदार सन्देह के कारण उदजन बम के संहारक प्रयोग को केवल आत्मरक्षा के लिए न्यायोचित ठहराया जा सकता है। अथवा एक दूरगामी 'बौद्धिक युक्ति के अनुसार कोई एक आरोप लगाया जा सकता है चाहे उस पर विश्वास करने का कोई कारण हो या न हो। इस कार्य का उद्देश्य उदजन बम के प्रयोग के लिए अनुकूल स्थिति पैदा करना होगा ताकि एक ऐसे भयावह दुःस्वप्न का तो अन्त हो जिसका कि कोई अन्त नहीं जान पड़ता।

अब हमें प्रत्येक अधिकारी-सूत्र से ज्ञात है कि नए आयुधों के प्रयोग से कितनी व्यापक क्षति होगी। यह

(शेष पृष्ठ १७ पर)

* गोबर गुण-गाथा *

(श्री सुरेन्द्र बहादुर सक्सेना)

वास्तव में गोबर मानव-समाज के लिए प्रकृति का मूल्यवान उपहार है, विशेषकर आज इसका महत्व हमारे देश में और भी बढ़ गया है। हमारे देश में लाखों रुपए का अन्न अमरीका आदि विदेशों से आया था। यदि हमने अपने यहां के अनुपम खाद-कोष गोबर का ठीक से उपयोग किया होता तो यह अपार धन-राशि खर्च होने से बच जाती।

खाद का खजाना

खाद के लिए सबसे प्रधान और मूल्यवान वस्तु गोबर है। प्रत्येक प्रौढ़ गोबर देनेवाले पशु के गोबर का वार्षिक मूल्य लगभग १४) कूता गया है। पर बड़े खेद की बात है कि आज हम इस मूल्यवान वस्तु का उपयोग न करके इसे जलाकर नष्ट कर देते हैं और इस प्रकार ईंधन की आवश्यकता खाद से पूरी करते हैं। किसान अपने पशुओं के गोबर को जलाकर लगभग एक रुपए रोज की हानि उठाता है, क्योंकि जितना गोबर वह रोज जला डालता है उसका खाद के रूप में उपयोग करने से वह एक रुपए का अधिक अन्न उत्पन्न करता।

पशुओं को जो घास चारा दिया जाता है उसका ६६ प्रतिशत नाइट्रोजन, ७९ प्रतिशत फासफोरिक ऐसिड और ९९ प्रतिशत पोटाश गोबर में होता है। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि खुराक का केवल १७ प्रतिशत नाइट्रोजन, २१ प्रतिशत फासफोरिक ऐसिड और १० प्रतिशत पोटाश दूध में होता है, और शेष सब गोबर और मूत्र के रूप में हमें वापस मिल जाते हैं। यदि हम घास और चारे की खाद बनाकर लाभ उठाना चाहें तो उससे इतना सीधा लाभ कभी नहीं हो सकता। उसकी अपेक्षा गोबर और गोमूत्र के रूप में खाद के कहीं बढ़िया तत्व सहज ही प्राप्त हो जाते हैं। इन्हीं का हमें उपयोग करना चाहिए। वास्तव में प्रत्येक पशु बढ़िया खाद के लिए एक छोटा-सा जीता-जागता कारखाना है।

धूप, हवा और पानी से गोबर के बहुत से गुण नष्ट हो जाते हैं। अतः उसे ऐसे रूप में सुरक्षित रखना चाहिए जिससे अच्छी लाभदायक खाद तैयार हो सके। हमारे देश के किसान करते यह हैं कि घर या पशुओं के बाड़े के पास एक बड़ा-सा गड्ढा खोद देते हैं और उसी में रोज गोबर डालते जाते हैं। यह गड्ढा खुला रहता है जिससे धूप, हवा और वर्षा का पानी सब-कुछ उसके अन्दर पहुंचता रहता है और गोबर के बहुत-से गुण नष्ट हो जाते हैं। खास तौर से नाइट्रोजन की मात्रा उसमें बहुत कम हो जाती है, जिसकी हमारे देश की भूमि को विशेष आवश्यकता है। यदि गोबर को एक पक्के गढ़े में धूप, हवा और पानी से सुरक्षित रखकर उसका ठीक उपयोग किया जाए तो वह बहुत ही मूल्यवान सिद्ध होगा।

चिकित्सा में उपयोग

गोबर का उपयोग खाद के लिए ही नहीं, आरोग्य के लिए भी कर सकते हैं। आयुर्वेदिक दृष्टि से देखा जाए तो 'सुरभि' में सौरभ के साथ अनेक रासायनिक तत्व भी भरे पड़े हैं।

त्वचा के रोग—गाय के गोबर को सारे शरीर पर मल कर धूप में बैठने से खाज-खुजली आदि त्वचा-सम्बन्धी सब रोग नष्ट हो जाते हैं। एक बार यह प्रयोग करके अवश्य देखें।

फोड़ा, चोट आदि—यदि शरीर में कहीं कोई फोड़ा निकल आया हो तो उस पर गोबर की पुल्टिस बांधने से आश्चर्यजनक प्रभाव होता है। और भी किसी प्रकार की चोट हो तो वह गोबर बांधने से ठीक हो जाती है।

पागलपन—पागलपन में गोबर के रस को घी-तेल के साथ पीने से लाभ होता है।

अपस्मार—एक महात्मा का अनुभूत प्रयोग है कि गाय का गोबर दो तीन अन्य वस्तुओं से तैयार किए हुए पंचामृत के साथ सेवन करने से, मृगी, हिस्टीरिया आदि ज्ञानतन्तुओं के रोग दूर हो जाते हैं। इसका नुस्खा यह है -गाय का दूध २० तोला, गाय का दही १। तोला, गाय का घी १० माशा, शहद ४ माशा, गाय का मूत्र ५ तोला, गाय के गोबर का रस २॥ तोला। इन सब को कांच या मिट्टी के बरतन में घोलकर एकरस कर लें। स्नान करने के पश्चात् सूर्योदय के समय सूर्य की ओर मुंह करके परमात्मा की प्रार्थना करते हुए इस पंचामृत का नित्य पान किया करें। प्रयोग की अवधि ४० दिन से तीन मास तक है।

राजयक्ष्मा तथा हैजा—इटली के प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो० जी० ई० बीगेंड ने यह सिद्ध किया है कि ताजे गोबर से तपेदिक और मलेरिया के जन्तु मर जाते हैं। उनका अनुभव है कि प्राथमिक अवस्था के जन्तु तो गोबर की गन्ध से ही मर जाते हैं। गोबर के इन अलौकिक गुण के कारण इटली के अधिकांश स्वास्थ्य-गृहों में गोबर का उपयोग किया जाता है।

सतपुड़े के गोंड, भील आदिवासी गोबर का सब कामों में उपयोग करते हैं। अपस्मार, चक्कर, मस्तिष्क-विकार, मूर्छा आदि रोगों में वे गाय के दूध या तिल के तेल में गोबर घोलकर पिलाते हैं और इसी का लेप भी करते हैं। तेल में गोबर मिलाकर मालिश करने से मज्जा तन्तु नीरोग हो जाते हैं। वैद्य लोग क्षय रोगियों को गाय के बाड़े में सुलाने को कहते हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि जिस घर में गोबर होगा वहां छूत का रोग हो नहीं हो सकता। गोबर जलाने से रोगों के कीटाणु, मक्खी, मच्छर आदि नष्ट हो जाते हैं और वायु स्वच्छ हो जाती है।

(पृष्ठ १५ का शेष)

हानि ऐसी होगी कि उसकी पूर्ति नहीं हो सकती। जो देश आणविक आयुधों के प्रयोग का निश्चय करता है वह अपना मतलब हासिल करता है फिर चाहे विपक्षी के पास इन्हीं आयुधों का कितना ही बड़ा भंडार क्यों न हो। यदि मैं अपने शत्रु की चाय में संखिया मिला दूं तो इस बात से क्या हो सकता है कि मेरे शत्रु ने परिश्रम पूर्वक बहुत सा विष अपने आलमारी में जमा कर रखा था विजय उसकी है जो कि पहले अपराध करने का साहस करता है। शत्रु ने जितना बड़ा अपराध किया हो उसके अनुसार प्रतिशोध लेकर आत्मरक्षा का प्रश्न नहीं उठता।

अभी कुछ दिन हुए एन्यूरिन बेवन ने कहा था कि यदि एक महायुद्ध छिड़ गया तो ब्रिटेन केवल ३२ घंटों तक टिकेगा और वैज्ञानिक अपने इस निराशापूर्ण मन्तव्य को 'विस्तृत बातों के आधार पर सिद्ध कर सकते हैं।' दूसरों ने भी कहा है कि आणविक आक्रमणों के विरुद्ध रक्षात्मक साधनों के सब विचार असंभव कल्पनाएं हैं।

ऐसे कदम सराहनीय हैं जिनसे कि युद्ध का ही निरोध हो जाए। लेकिन यदि आणविक आयुद्ध विरोधी विशेष आन्दोलन की अपेक्षा युद्ध के ही निराकरण के आन्दोलन को प्रमुखता देने और नए आयुधों के सम्बन्ध में मानव समाज में भय को शांत होने देने का प्रयत्न किया जाए तो इस प्रयत्न में हम कितनी सफलता की आशा कर सकते हैं? इस आशा से कि बड़े मुद्दे पर हम सफल हो सकते हैं, अविलम्ब कर्तव्य को न भूल जाना चाहिए। राष्ट्रपति आइजनहोवर ने एक प्रश्न के सिलसिले में स्पष्ट स्वीकार किया है कि सैनिक मामलों में कोई बात इस क्षेत्र से बाहर नहीं समझी जानी चाहिए। यदि एक बात को कोई राष्ट्र "पुलिस कार्रवाई" समझता है तो दूसरा उसे 'सैनिक मामला' कह सकता है और इस प्रकार एक संहारकारी विस्फोट की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

* धर्म के स्तम्भ *

(१)

क्षमा

लेखक—रघुनाथ प्रसाद पाठक

चीन के एक सम्राट को जब यह सूचना मिली कि उसके शत्रुओं ने एक दूरस्थ प्रदेश में विद्रोह कर दिया है तो उसने अपने सैनिको को पास बुलाकर कहा। "मेरे साथ चलो मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि हम अपने शत्रुओं का नाश कर डालेंगे" यह कहकर वह उस प्रदेश को चल पड़ा। उसके पहुंचते ही विद्रोहियों ने उसकी अधीनता स्वीकार करली। सबको आशा थी कि सम्राट विद्रोहियों को कड़ा दण्ड देगा। परन्तु उनकी आशाओं के विरुद्ध सम्राट का विद्रोहियों के प्रति दयालुता और मानवता का व्यवहार देखकर सबको आश्चर्य हुआ। एक अफसर ने चिल्लाकर पूछा "राजन्! क्या आप अपनी प्रतिज्ञा को इस प्रकार पूरा करोगे, आपने अपने शत्रुओं का विनाश करने की प्रतिज्ञा की थी परन्तु आपने उन्हें क्षमा कर दिया।"

सम्राट ने उदार भाव में कहा 'निःसंदेह मैंने अपने वचन को पूरा कर दिया है। देखो, अब ये लोग मेरे शत्रु नहीं रहे। मैंने इन्हें अपना मित्र बना लिया है।"

वस्तुतः बुराई, भलाई के द्वारा ही जीती जाती है। क्षमा से उत्पन्न होने वाले आनन्द को क्षमा करने वाले ही जानते हैं। क्षमा करना विशाल हृदय का सूचक होता है। सच्ची वीरता लोगों के शरीर पर नहीं 'वरन् हृदय पर विजय प्राप्त करने में निहित होती है।

आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती को अनेक बार विष दिया गया। अपराधियों के पकड़ लिए जाने पर भी इन्होंने यह कह कर उन्हें मुक्त करा दिया कि मैं संसार के लोगों को कैद कराने नहीं अपितु मुक्त कराने के लिए आया हूँ। इन्होने अपने घातक पाचक जगन्नाथ को न केवल क्षमा ही करके प्रत्युत अपने पास से नैपाल भाग जाने के लिए उसे २००) भी देकर संसार के लोगों के हृदयों पर अपनी दिव्यता और महत्ता की वह अनुपम छाप छोड़ी जो कभी मिट नहीं सकती। निःसन्देह राग और द्वेष से ऊपर उठे हुए मानवता के पुजारी दिव्य पुरुषो के हृदय संसार के समान विशाल होते हैं किन्तु उनमें अपकार की स्मृति के लिए जगह नहीं होती। यदि वे अपकार को याद रखते भी हैं तो बदला लेने के लिए नहीं बल्कि क्षमा करने के लिए।

अमेरिका में भयंकर सशस्त्र गृह युद्ध हो रहा था। एक नवयुवक सैनिक को एक घायल सैनिक की देख भाल के लिए रात में ड्यूटी पर लगाया गया। निरन्तर दो रात पैदल चलने के कारण वह बहुत थक गया था। अतः उसे नींद आ गई। सेनापति ने अनुशासन भंग के अपराध में उसे मृत्यु दण्ड दे दिया। राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन को यह खबर मिली और वे उस नवयुवक को गोली से उड़ाए जाने के कुछ घंटे पूर्व वाशिंगटन से चलकर कैम्प में जा पहुँचे। पूरा मामला सुनने के पश्चात् उस सैनिक से मिले। उसके कन्धे पर हाथ रखकर बोले 'तुम्हें कल गोली से न उड़ाया जायगा। मैं तुम पर विश्वास करके तुम्हें पुनः अपनी टुकड़ी में भेज रहा हूं परन्तु तुम्हारे कारण वाशिंगटन से यहां आने में मुझे बड़ा कष्ट हुआ है। वाशिंगटन में मुझे बड़े आवश्यक कार्य करने थे। अब मैं यह जानना चाहता हूं कि तुम मेरा मार्ग व्यय बिल किस प्रकार अदा करोगे।'

सैनिक को कोई उत्तर न सूझ पड़ा। उसने कहा

'राष्ट्रपति महोदय, मेरे माता पिता नहीं हैं। मैं अपने मित्रों की सहायता से आपके बिल का धन अदा करूंगा।'

लिंकन ने कहा 'नहीं, तुम बिल का धन तुम्हारे मित्र अदा नहीं कर सकते। संसार में केवल एक ही व्यक्ति है जो इस बिल का धन दे सकता है और वह तुम हो। यदि आज से तुमने अपने कर्तव्य का पालन ठीक रीति से किया तो मेरे बिल की अदायगी हो जायगी।'

वह सैनिक इन शब्दों को भूल न सका। एक भयंकर युद्ध में विजय प्राप्त करने के उपरान्त मरने से पहले उसने अपने साथियों से कहा 'आप लोग राष्ट्रपति लिंकन से कहना कि मैंने उनके आदेश को कभी नहीं भुलाया।'

बुद्धिमान् व्यक्ति क्षमा करने में अनावश्यक विलंब नहीं करते क्योंकि वे क्षमा करने और समय का महत्व जानते होते हैं। समय पर क्षमा करने से मनुष्य अनावश्यक कष्ट से बच जाता और क्षमा का गौरव स्थिर रहता है।

वेस्पेशियन नामक रोम सम्राट बड़ा वीर और कुशल शासक था। उसने १० वर्ष तक राज्य किया और प्रजा को हर प्रकार से सुखी रखा। कुछ दुष्टों ने उसकी जान लेने का षडयन्त्र रचा जो पकड़ा गया। षडयन्त्रकारियों को मृत्यु दण्ड दिया गया। सम्राट् ने उन्हें क्षमा करके कहा 'यदि मेरे शत्रुओं को यह ज्ञात होता कि मैं इस उच्च पद पर रहते हुए कितना चिन्तित और व्याकुल रहता हूं तो वे मुझसे इतनी ईर्ष्या न करते कि मेरी जान लेने के लिए ही उतारू हो जाते।' इस सम्राट् की सज्जनता का ही यह फल था कि वह स्वाभाविक और गौरव पूर्ण मौत मरा अन्यथा अधिकांश रोमन सम्राट हत्यारों के छुरों से मारे गए।

क्षमा शीलता कायरता को लज्जित कर वीरता का परिचय दिया करती और मनुष्य को मानवीय गुणों से चमकाकर उस पुल को टूटने से बचाया करती है जिसके सहारे मनुष्य परमात्मा के पास पहुँचा करता है।

कहा जाता है कि घृणा घृणा को, क्रोध क्रोध को और ईर्ष्या ईर्ष्या को जन्म देती है। क्षमा शीलता के द्वारा इनकी भावनाएं और उपद्रव मिटकर मनुष्य की अधिकांश शक्तियों की बर्बादी रुक जाती है।—

मनुष्य अपने अपकारी से बदला न लेकर उसे क्षमा कर देने से अपने को अपकारी से ऊंचा उठा देता है। उदार मनुष्य अपने अपराधी के द्वारा क्षमा याचना किए जाने से पूर्व ही उसे क्षमा कर देते हैं क्योंकि क्षमा करना क्षमा मांगने की अपेक्षा अधिक सरल होता है। जिस जीवन को पग पग पर क्षमा किए जाने की आवश्यकता हो उसे स्वयं क्षमा करने का अभ्यास करना चाहिए। मनुष्य पूर्ण तो होता नहीं उससे भूल होती रहती है। एक बार जब एक सेना पति से यह पूछा गया कि 'तुम क्षमा करते हो या नहीं' उसने उत्तर दिया 'मैं कभी क्षमा नहीं करता' इस पर प्रश्नकर्ता ने कहा 'तब मैं आशा करता हूं कि तुम से कभी भूल नहीं होती' सेनापति लज्जित हो गया। जो लोग अधिक भूलें करते हैं वे ही प्रायः क्षमा करने में कंजूस होते हैं। जो व्यक्ति अपनी भूलों पर अपने को क्षमा नहीं करता वह दूसरों की भूलों को क्षमा करने में उदार होता है। मनुष्य को दूसरों को तो क्षमा ही करना चाहिए परन्तु अपने को कभी क्षमा न करना चाहिए। इस सुनहरी नियम के परिपालन से मनुष्य को दूसरों की क्षमा की बहुत कम आवश्यकता होती है। हम दूसरों की जिन बेहूदगियों को बर्दाश्त नहीं कर सकते अपनी उन्हीं बेहूदगियों को भी क्षमा न करना चाहिए।

न्यूटन ने कई महीनों के कठोर परिश्रम के बाद गणित का एक जटिल प्रश्न हल किया। उसका एक बड़ा प्रिय कुत्ता था। एक दिन न्यूटन की अनुपस्थिति में उस कुत्ते की असावधानता से मेज पर रक्खा हुआ लैम्प गिर जाने से उसके कागज जल गये जिनमें वह कागज भी था जिस पर न्यूटन ने वह प्रश्न हल किया था कुत्ते की इस करतूत पर न्यूटन को बड़ा क्रोध आया परन्तु उसने कुत्ते को मारने पीटने के बजाय यही कहा "तूने बड़ा अनर्थ किया। तुझे पता नहीं

कि मैंने इस प्रश्न के हल करने में कितना परिश्रम किया था।" न्यूटन ने क्रोध की इस उत्तेजना को सहकर हमारे सामने यह शिक्षा प्रस्तुत की कि क्रोध की उत्तेजना को सहन करना बड़ी समझदारी का और क्षमा करना बड़ी उदारता का काम होता है।

महाभारत की समाप्ति पर अश्वत्थामा ने द्रौपदी के पांच पुत्रों का जब वे सो रहे थे छल से नष्ट कर दिया था। द्रौपदी ने बदला लेने के लिये भीम और अर्जुन से मांग की कि वे अश्वत्थामा को जिंदा पकड़ कर उसके पास ले आवें, जिससे वह अपनी आंखों के सामने उसका वध देख सके। अश्वत्थामा पकड़ा जाकर द्रौपदी के सामने प्रस्तुत किया गया। अपने पुत्रों के हत्यारे को अपने सामने खड़ा देखकर द्रौपदी की क्रोधाग्नि प्रचण्ड हो गई। ज्यों ही भीम अर्जुन, अश्वथामा का वध करने के लिये तैयार हुए त्यों ही द्रौपदी के हृदय में अश्वत्थामा की मां के हृदय की वेदना की अनुभूति हुई जिसने द्रौपदीके हृदय में करुणा का संचार कर दिया। द्रौपदी नीचे गिरने के स्थान में अपराध से ऊपर उठ गई। अश्वत्थामा मुक्त कर दिया गया। उस समय द्रौपदी सीप के और और अश्वत्थामा जल के कीड़े के समान देख पड़े। कीड़ा ज्यों ही सीप को छेदता है त्यों ही सीप अपने हृदय के घाव को मोती से ढक देता है।

यदि मनुष्य से हृदय की मलिनता के कारण अपराध न हुआ हो तो उससे मेल मिलाप करने और हृदय की मलिनता के कारण अपराध होने पर उसे क्षमा करते रहने से मनुष्य अधिक सुखी और प्रसन्न रहता है। जब कोई हमारे प्रति कोई अपकार करने लग जाय तो हमें दयालुता का व्यवहार आरम्भ कर देना चाहिये। अपकार की प्रक्रिया को निष्क्रिय बनाने का यह उपाय परिणाम की दृष्टि से अमोघ सिद्ध होता है।

वे क्षुद्र और अहंकारी जन बड़े अभागे होते हैं जो क्रोध और बदले की भावना से पराभूत होकर क्षमा करने के दिव्यानन्द से वंचित रहते हैं।

क्षमा की भी सीमा होती है। यदि क्षमा का उद्देश्य विफल होता हो तो क्षमा करने से लाभ की अपेक्षा हानि अधिक होती और क्षमा करने वाला सहज ही आपत्तियों का शिकार हो जाता है। यदि पृथ्वीराज कई बार मुहम्मद गोरी को क्षमा करने की भूल न करते तो न तो कृतघ्न गोरी के हाथों उनके जीवन का दुःखद अन्त होता और न भारत को विदेशियों की विविध अभिशापों के साथ राजनैतिक दासता के दुर्दिन देखने पड़ते। अपराधी के दमन और अपराधी के अभीष्ट सुधार के लिए क्षमा की उपयोगिता से इन्कार नहीं किया जा सकता परन्तु यदि क्षमा के द्वारा दमन और सुधार असंभव हो जायं और बल प्रयोग वा दण्ड आवश्यक हो जाय तो उसका प्रयोग करने में आगा पीछा न देखा जाना चाहिए। यहां क्षमा का काम समाप्त हो जाता है। परन्तु अपराधी के पराभूत और निरुपाय हो जाने पर क्षमा का कार्य आरम्भ हो जाता है। इसी में मानवता का गौरव है। अपराध के लिए हृदय से निकले हुए सच्चे पश्चात्ताप का आदर और वह क्षमा द्वारा पुरस्कृत होना चाहिए।

अमेरिका के गृह युद्ध की समाप्ति पर दक्षिण राज्यों के उन लोगों को दण्डित करने का राष्ट्रपति लिंकन के मन्त्री मंडल में प्रश्न हुआ जो गृह युद्ध के लिए उत्तर दाता थे। मंत्री मण्डल के अधिकांश सदस्यों ने उन्हें मृत्यु दण्ड देने की मांग की। परन्तु राष्ट्रपति लिंकन इस मांग से सहमत न हुए। उन्होंने कहा 'इस युद्ध में काफी रक्तपात हो चुका है। काफी घृणा और विद्वेष व्याप्त हो चुके हैं। अब कटुता का अन्त हो जाना चाहिए।' लिंकन की इस दूरदर्शिता पूर्ण दृढ़ नीति के फल स्वरूप हिंसा का वातावरण कम हुआ। इसमें जो न्यूनता रही उसे क्षमा के पुजारी लिंकन ने अपने बलिदान से पूरा कर दिया। इसके विपरीत गत द्वितीय महा युद्ध के उपरांत तथा कथित युद्ध अपराधियों का सफाया करने का नूरम्बर्ग के अभियोग का नाटक रचा गया और इसमें उसी लिंकन के वंशजों का प्रमुख हाथ रहा जिसने गृह युद्ध के अपराधियों को क्षमा करके मानवता के गौरव और अमेरिका की प्रतिष्ठा की रक्षा की थी। वाशिंगटन

आत्म-निरीक्षण

(लेखक—श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज)

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती का ऋषि बोधोत्सव मनाते समय हमें उनके महान् व्यक्तित्व, कार्य और आर्य समाज की भावना को सामने रखकर यह देखना चाहिए कि हमने अपने जीवन को ऊंचा बनाने, उनके कार्य की पूर्ति और आर्य समाज की भावना को समझने और उसकी रक्षा के लिये क्या किया है? शिवरात्रि के व्रत के समय उन्हें सत्य की अनुभूति हुई थी। हमें भी सत्य की अनुभूति होती है। महर्षि ने सत्य की अनुभूति होने पर उसको क्रिया में लाने में विलम्ब न किया। हमें देखना चाहिये कि सत्य की अनुभूति होने पर हम उसको मानने, कहने और क्रिया में लाने के लिये क्या करते हैं? स्वामी जी महाराज का जीवन बिन्दु इसी व्रत के चहुं ओर घूमता रहा। हम अपने जीवन में इस बिंदु को चरितार्थ करने के लिये क्या प्रयत्न करते हैं? उन्होंने जीवन में सत्य की रक्षा के लिये भगीरथ तैयारी की थी। शारीरिक, मानसिक और आत्मिक तीनों प्रकार की। उन्होंने अपने शरीर और आत्मा दोनों को ब्रह्मचर्य, विद्या, तप और त्याग के द्वारा बलिष्ठ एवं चरित्र को ऊंचा बना कर सत्य की अनुभूति प्राप्त करने, निर्भीकता पूर्वक प्रकट करने और दृढ़ता पूर्वक उसे क्रिया में लाने की क्षमता प्राप्त की थी। इस क्षमता को लाने के लिये हमारा क्या यत्न रहा यह देखना आवश्यक है।

उनके जीवन का लक्ष्य था अविद्या-अन्धकार का विनाश और विद्या एवं प्रकाश का प्रसार। इसके लिये उन्होंने वेद प्रचार का आश्रय लेकर संसार को बुद्धिसंगत, सत्य एवं श्रद्धामय आस्तिक विचार-धारा प्रदान की। हम आर्य जन अपने सम्पर्क में आने वालों की विचार धारा को प्रकाशयुक्त और उत्तम बनाने के लिये क्या कुछ करते हैं, यह गम्भीरता पूर्वक विचारना चाहिये। आर्य समाज महर्षि दयानन्द का प्रतिनिधि है। उसकी मूल भावना वही है जो महर्षि की थी अर्थात संसार के लोगों को सत्यज्ञान के प्रकाश से आलोकित करके सत्य धर्म में उनकी निष्ठा उत्पन्न करना। वेद प्रचार के लिये हम व्याख्यानों, उपदेशों और पुस्तकों के द्वारा जो थोड़ा बहुत कर रहे हैं उनके प्रभाव को अपने आचरण द्वारा स्थिर रख रहे हैं या नहीं?

और लिंकन की सन्तानों को ठंडे हृदय से सोचना चाहिए कि उनके शक्ति के मद से, विद्वेष की आग से, अविश्वास के भय से, प्रतिशोध और खून की प्यास से, भय अशान्ति और हिंसा का वातावरण बनने और मानवता तथा अमेरिका का गौरव कम होने में कितना हाथ है।

हम विविध प्रकार के वस्त्रों, उपकरणों और आभूषणों से अपने को सजाते हैं। धन सम्पत्ति का दान करते हैं। बड़े २ यज्ञ रचाते हैं। कीर्ति के पीछे पागल रहते हैं। नाना प्रकार के कर्मकांडों में व्यस्त रहते हैं। इन सबका महत्व हो सकता है। परन्तु हम भूल जाते हैं कि क्षमा ही वास्तविक अलङ्कार होता है। क्षमा ही सच्चा दान, सत्य और यज्ञ होता है। क्षमा ही वास्तविक यश और धर्म का स्रोत माना जाता है। क्षमा के ही सहारे इस जगत् की स्थिति है। इस अन्तिम तथ्य को संसार के प्रत्येक प्राणी को विशेषतः उनको जो अपनी तथा संसार की शान्ति भङ्ग करने के कुत्सित व्यापार में व्यस्त है, हृदयङ्गम करना चाहिए। क्योंकि अशान्त व्यक्ति, अशान्त समाज और अशान्त जगत को क्षमा शीलता ही शान्ति और प्रकाश की ज्योति दिखाती है भले ही वह धुंधली और क्षीण ही देख पड़ती हो।

सम्पादक की डाक
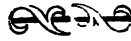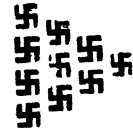
एक जानकार महाशय लिखते हैं–

क्रिश्चियन मिशनरियों ने अपनी विचारधारा का प्रचार व्यापक क्षेत्र में करके अधिकाधिक व्यक्तियों को अपने पक्ष में करने के लिये जो नई २ युक्तियां निकाली हैं उनमें पूना के बायबिल कारस्पांडेस स्कूल का प्रमुख स्थान है। इस स्कूल के संचालक विभिन्न पत्रों में विज्ञापन देकर लोगों का ध्यान अपने स्कूल की ओर आकर्षित करते हैं। पाठ्य क्रम पूरा हो जाने पर एक सुनहरा प्रमाणपत्र देने का आश्वासन दिया जाता है

पत्र प्राप्त होते ही इस स्कूल के संचालक प्रथम एवं द्वितीय पाठों के साथ ही एक सहायक पाठ भी भेजते हैं। इन पाठों के साथ ही एक प्रश्नावली भी रहती है जिसके प्रश्नों के उत्तर पाठकों को अध्ययन करके अंकित करना पड़ते है। प्रश्नों का चुनाव इस ढंग का होता है कि बिना ध्यान पूर्वक पाठों का मनन किये उत्तर नहीं लिखे जा सकते। यह प्रश्नावली स्कूल को भेजी जाती है जो संशोधन तथा रिमार्क्स के साथ वापस मिल जाती है। साथ ही अगले पाठ भी प्राप्त हो जाते हैं और विद्यार्थी का नाम रजिस्टर्ड कर लिया जाता है। इस प्रकार ३२ पाठ पूरे होने तक यह क्रम चलता रहता है।

यह निश्चित है कि पाठ्य क्रम पूरा होने तक विद्यार्थी की विचारधारा में बहुत कुछ परिवर्तन हो जाता होगा किन्तु वह धर्मच्युत हो जाने के भय से अपने भाव प्रकट नहीं कर पाता। इन पाठों में बाइबल के पदों की विस्तृत व्याख्या रहती है और बहुत से अंश अत्यत शिक्षाप्रद होते हैं। इनमें आलोचना का समावेश भी होता है और वह आलोचना हमारी संस्कृति के प्रधान अंग हमारे धर्म ग्रंथों और तिलक जैसे दार्शनिकों के सिद्धान्तों की। इनमें यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया जाता है कि विश्व में एक मात्र सच्चा धर्म–ईसा द्वारा प्रतिपादित ईसाई धर्म है और दुनिया की समस्त श्रेष्ठ पुस्तकों में बायबिल सर्वोपरि हैं। हिन्दू संस्कृति में पला हुआ विद्यार्थी इन पाठों में उलझ जाता है। वह किस मार्ग का अनुसरण करे यह प्रश्न उसे कचोटने लगता है। भांति भांति के विचार उसके मस्तिष्क को व्याकुल करने लगते हैं।

इन पाठों के सम्बन्ध में जो प्रश्न होते हैं और उनके उत्तर भेजने पड़ते हैं उनमें कुछ प्रश्न ऐसे भी होते हैं जो विद्यार्थी से व्यक्तिगत रूप से पूछे जाते हैं। इनसे मिशनरियों को अपने शिष्य की विचारधारा में कहां तक परिवर्तन हुआ है इसका पता चलता रहता है। अन्तिम कुछ पाठों में जिनमें "ईसाई धर्म में दीक्षा" या Baptism का सिद्धान्त होता है, प्रश्नों के अंत में यहां तक पूछा जाता है कि क्या वह भगवान ईसा के द्वारा चलाए हुए मार्ग का अनुसरण करने के लिये तैयार है?

इन पाठों का कोई शुल्क निर्धारित नहीं होत, हां यदि कोई स्वेच्छा से कुछ भेजता है तो वह ले लिया जाता है। इससे ज्ञात होता है कि विदेशी लोग अपने धर्मप्रचार को कितना महत्व देते हैं और कितना व्यय करते हैं। निःसन्देह यह सहायता भारत के ईसाई मिशनरियों को यहां से नहीं मिल सकती।

इस प्रकार अज्ञान अन्धकार में भटकते हुए सहस्रों भारतीयों को प्रकाश में लाने का कार्य केवल एक ही

(शेष पृष्ठ २१ पर

आर्य समाज की चिनगारियां

लेखक—श्री पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज

श्री गुरुप्रसाद जी

श्री गुरुप्रसाद जी रायकोट जिला लुधियाना के निवासी थे, इन्होंने आर्य समाज के संस्कार स्कूल से ग्रहण किये थे। यह और पं० गोपीराम भारद्वाज सहपाठी थे। ये दोनों ही आर्य समाज में काम करते रहे। इनकी शिक्षा मिडिल तक थी क्योंकि उस समय रायकोट के स्कूल में उर्दू मिडिल तक ही पढ़ाई होती थी। इसलिए उसे उत्तीर्ण करके इनकी पढ़ाई समाप्त हो गई। इनके चाचा डा० सलामतराय समर वाल बाहर से रायकोट में आगये। उन्होंने अपना चिकित्सालय खोला। यह उस समय उठती जवानी में थे और नौकरी की तलाश में थे। इनके लिये दो ही मार्ग थे। दुकान करें वा नौकरी करें। उसने इन्हें बुलाकर कहा आप मेरी दुकान पर कम्पाउन्डर का काम सीख लें और मेरे साथ ही काम करते रहें। इसमें आपको भी लाभ है और मुझे भी है। दोनों आदमी घर के दुकान पर होंगे। इन्होंने इसे स्वीकार कर लिया। इसलिये प्रथम कम्पाउन्डर रूप में पश्चात उसी औषधालय में डाक्टर रूप में इन्होंने आजीवन काम किया।

समाज सेवा

इनकी प्रकृति में सेवा भाव था आर्य समाज के सत्संगों में झाडू लगाना, दरियां बिछाना, सब काम की व्यवस्था करना रुचि पूर्वक किया करते थे। आर्यसमाज के उत्सवों में वे ही सेवा काम करते थे। उपदेशकों के लिए कुंए से पानी निकालना, उन्हें स्नान करवाना, उनके भोजन, रहने का प्रबन्ध करना उनके काम में सम्मिलित थे। उनके साथी पं० रामजीदास जी मिश्र राम दित्तामल आदि और सज्जन भी थे। समाज सेवा के अतिरिक्त शहर के कामों में भी भाग लेते थे और बिना बिरादरी आदि के भेदभाव के यथा शक्ति सहायता किया करते थे। इसी कारण शहर में उनका पर्याप्त प्रभाव था जिससे जहां आर्य समाज को लाभ पहुंचता था वहां अन्य कार्यों में भी इन्हें सहायता मिलती थी। उदाहरण के लिए मैं एक घटना लिखता हूँ—

जिस समय स्वर्गीय देशबन्धु गुप्ता को पंजाब ऐसेम्बली में जाने के लिए शहरी टिकट मिला तो लुधियाना भी रायकोट सहित उसी हल्के में आता था। दैवयोग से मैं एक दिन लुधियाना आया हुआ था। आर्य समाज मन्दिर में ठहरा हुआ था। स्व० देशबन्धु जी लुधियाना में अपना निर्वाचन का प्रचार करने के लिए गये। उन्होंने शहर में अपने निर्वाचन के लिये जनता से मिलना आरम्भ किया। इनकी प्रतियोगिता में श्रीमती लेखवती जी जैन थी। उनका भी पर्याप्त प्रभाव था और उससे पूर्व वह सदस्या भी रह चुकी थी। जिस समय लुधियाने का कार्य समाप्त हुआ तो स्व० मास्टर रामलाल जी के पास गए। उनसे कहा आप रायकोट मेरे साथ २ चलें ताकि हम वहां भी लोगों से मिलें। उन्होंने श्री गुप्ता जी से कहा आज श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी यहां आए हुए हैं। रायकोट आप उनको ले जायं। उसके पश्चात् वे मेरे पास आए और मुझे कहने लगे कि आप रायकोट चलें, तो मैंने पूछा 'क्या काम है?" उन्होंने उत्तर दिया आपको ज्ञात ही है कि मैं इस इलाके मे विधान सभा के लिये कांगरेस के टिकट पर खड़ा हुआ हूँ। इसलिए जनता से मिलने के लिये चलें। "मैंने कहा, "मैंने तो कभी निर्वाचन में काम ही नहीं किया इसलिए

आप मुझे क्यों ले जा रहे हैं।" इन्होंने उत्तर दिया मा० रामलाल जी ने बताया है कि रायकोट में आपके कहने से आसानी से काम हो जायगा। इसलिए मैं आपके पास आया हूं और मैं आपका आदमी हूं। "मैंने उत्तर दिया" आप मेरे आदमी हैं, इस संबन्ध से मैं कुछ करूं तो हो सकता है, किन्तु मैं निर्वाचन में पड़ना नहीं चाहता और मैं जनता के पास न जाऊंगा। इस पर इन्होंने कहा "आप चलें।" मैं उनके साथ गया और हम दोनों सीधे गुरु प्रसाद जी के पास पहुंचे। नमस्कारादि पश्चात उसने पूछा कि स्वामी जी कैसे आये? "क्योंकि आपके आने की कोई सूचना तो नहीं थी।" मैंने कहा 'यह श्री देशबन्धु गुप्ता हैं' और यह विधान सभा के लिये निर्वाचन लड़ रहे हैं। आप इनकी सहायता करें। "इन्होने मुझसे कहा" 'स्वामी जी' मैं तो इस बार यह सोच रहा था कि किसी भी पार्टी की सहायता न करके उदासीन ही रहूं। किन्तु आप यह कहते हैं कि मैं इनके साथ काम करूं।" मैंने इनको कहा "जब आगे करते रहे हैं, इस बार भी करें।" इन्होंने तथास्तु कह कर गुप्ता जी से कहा 'आओ फिर बाजार ही चलें।' गुप्ता जी ने कहा 'स्वामी जी को साथ ले चलें। इन्होंने उत्तर दिया। "वह यहां तक आगए यही बस।" वह इनको लेकर बाजार में घूम आये और हम वापस आने के लिये तैयार हो गए। शहर के बाहर तक साथ आए। जिस समय हम गाड़ी में बैठे इन्होंने मुझे कहा 'स्वामी जी देशबन्धु जी मेरे परिचित नहीं। इन को कह दें जिस समय मैं लिखूं उस समय रायकोट में व्याख्यान देने के लिये आ जायं। शेष बातें हम सम्भाल लेंगे। परिणाम अन्त में यह हुआ रायकोट से अधिक से अधिक वोट देशबन्धु जी को मिले और जब तक गुरु प्रसाद जी जीवित रहे देशबन्धु जी उनका आभार मानते रहें और दोनों की मित्रता दृढ़ होती रही।

सुधारक

गुरु प्रसाद जी के तीन कन्याएं और एक पुत्र था। उनकी बड़ी कन्या का नाम मेलो था। उसका विवाह पटियाला में हुआ। उसके उदर से एक कन्या ने जन्म लिया। उसके पश्चात् दुर्भाग्य से वह विधवा हो गई। कुछ समय के पश्चात् वे उसे अपने घर में ले आये। इनके पुत्र का नाम शान्तिप्रकाश था। उसका विवाह मालेर कोटला में किया। विवाह के कुछ मास पश्चात् इनके पुत्र स्वर्ग सिधार गए। जो घर कुछ समय पहले स्वर्गधाम था वह दुःखागार हो गया। इन्होंने मुझे पत्र लिखा! मैं गया। उनसे मिला। यह दिल भरकर रोये। मैं पास बैठा रहा, देखता रहा, मैंने बन्द करवाने का यत्न नहीं किया। मेरा भाव था इनका दिल हल्का होना ही चाहिए। उसके पश्चात इन्होंने अपनी दुःखावस्था का वर्णन किया। मैंने सुन कर कहा सम्मति कल को दूंगा। मैं इनके चौबारे में ठहरा था। दूसरे दिन आया। मैं भी सन्ध्यादि से निवृत हो चुका था। इन्होंने पूछा कहिए फिर क्या सम्मति है? मैंने उनको कहा मेलो के लिए लड़का देख कर पुनर्विवाह कर दो। इन्होंने प्रश्न किया आपकी यह निश्चित सम्मति है? मैंने हां! निश्चित यही है। इन्होंने कहा मैं स्वीकार करता हूँ किन्तु दो अड़चनें हैं। प्रथम तो मेरी धर्म पत्नी को मनवाओ दूसरे बिरादरी का झगड़ा होगा। उसमें क्या करना है। मैंने उत्तर दिया बिरादरी को भूल जाओ, पहली अड़चन अवश्य है। चलो मैं आप की पत्नी के पास चल कर बात करूं। हम दोनों घर गए जिस समय उससे बातें की वह यही कहे हमारे परिपाटी नहीं हैं। हमारे कभी पुनर्विवाह हुआ नहीं है मैं इसे कैसे मान लूं। बात चीत में मैंने उससे कहा तेरी दोनों लड़कियों की शादी हो जायंगी। वे अपने घर जायंगी। ये मर जायगी तू मर जायगी उस समय मेलो की क्या अवस्था होगी इसे सोच। उसके पास भी इसका कोई उत्तर न था। अन्त में उसने मुझे यही कहा स्वामी जी मेरा मन तो नहीं करता किन्तु यदि ये करें मैं रुकावट भी न डालूंगी।

इन्होंने एक लड़का देख कर कुछ समय के बाद उसका विवाह कर दिया। जिस समय हम इनके घर में बातें करके आये थे। मैंने इनको कहा "गुरुप्रसाद मेलो की बात तूने मानली।" तेरी पुत्र वधु कुछ मास ही विवाहिता रही है। यदि उसके माता पिता विवाह करना चाहें जो कोई रुकावट न डाले। उसने इसे भी

महिला-जगत्

जेठां बाई

इतिहास का एक विद्यार्थी

यूरोप में रोम के पोप की सार्वभौम सत्ता के दिन थे। प्रायः सभी यूरोपीय नरेश पोप का सम्मान करते, उन्हें कर देते और उनकी आज्ञाओं का पालन करते। ऐसा न करने पर भय रहता था कि पोप की सेना उन्हें पदच्युत कर देगी और जनता धर्म गुरु का साथ देगी। पोप ने राजाओं को आज्ञा दे रक्खी थी कि वे अपने शासित प्रदेश में ईसाई धर्म का प्रचार करें। इटली के धार्मिक गिरजाघरों में धर्म प्रचारक शिक्षित होते थे इन्हें रेवेरेंड बिशप आदि उपाधियां प्राप्त हुआ करती थी। ये धर्म प्रचारक यूरोपीय देशों से शासित विभिन्न देशों में जाकर अनेक अत्याचार करके इतर धर्मानुयायियों को ईसाई बनाते थे। इन्हें जेस्युइट कहा जाता था। जहां भी ये जाते थे वहां के अधिकारियों को इनकी हर प्रकार सहायता करनी पड़ती थी। ये अधिकारियों के भी अधिकारी माने जाते थे। इनके साथ अविवाहित धर्म प्रचारिकायें भी होती थीं और उन्हें नन्स कहते थे।

भारत में जहां कहीं भी पुर्तगीज शासन था, वहां इन ईसाई धर्म प्रचारक जेस्युइट तथा नन्स वर्ग ने स्थानीय पुर्तगीज शासकों की सहायता से देशी प्रजा पर जो अमानुषिक अत्याचार किये है वे रोमांच कर देने वाले हैं। अनेक पैशाचिक यन्त्रणाओं के द्वारा वे दूसरे धर्म के लोगों को ईसाई बनने को बाध्य किया करते थे। भारत में पुर्तगीज राज्य की राजधानी गोआ थी। इन धर्म प्रचारकों ने अपने अत्याचारों से वहां की अधिकांश जनता को ईसाई बना डाला। काठियावाड़ में भी पुर्तगाल का छोटा सा राज्य था। गवर्नर गोआ में रहता था। काठियावाड़ में उस समय दीवनगर प्रमुख बन्दरगाह एवं उद्योग का केन्द्र था। हाथी के दान्त, आबनूस, स्वर्णाभरण, अन्न, लोहे के हथियार तथा अनेक प्रकार के रंगीन कपड़े दीव से अरब तथा यूरोप के देशों को जाया करते थे।

दीव में मलमल पर सुन्दर बेलबूटों की रंगाई के अनेक कारखाने थे। यह काम यहां प्रमुखता से होता

स्वीकार कर लिया। दैवयोग कई मास के पश्चात् मैं समाज के उत्सव पर गया। मालेर कोटले के मन्त्री प० सोहनलाल मुझे मिलने के लिए आए। अवसर प्राप्ति पर उन्होंने कहा स्वामी जी गुरुप्रसाद जी के पुत्र वधु के माता पिता को प्रेरणा करके मैंने विवाह के लिए उद्यत कर दिया है। यदि आप गुरुप्रसाद जी को मनवा दें तो मेरा काम सरल हो जायगा। मैंने उसे पुराभीलाव बतलाकर कहा आप स्वयं न जायं पर किसी और को भेजें। गुरुप्रसाद जी स्वीकार कर लेंगे। सोहनलालजी ने मालेर कोटला आकर आदमी भेजकर गुरु प्रसाद जी से पुछवाया। उन्होंने स्वीकार किया और साथ ही कहा वह मेरी पुत्रियों के समान पुत्री है। मैंने जो विवाह समय वस्त्र आदि दिए हैं वे सब उसी को दिए जायं उन्हें मेरे पास लाने या लौटाने की आवश्यकता नहीं हैं। इसलिए इस सुधारक व्यक्ति ने उस समय बिरादरी गरूर सहते हुए अपनी विधवा कन्या और विधवा पुत्र वधू का विवाह करके वीरता का परिचय दिया। कितने आर्य समाजी हैं जो अबतक भी इन विषयों में भीरु बने हुए है ? उन्हें उनके जीवन से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

था। कच्छ के मांडवी राज्य के एक क्षत्रिय अपनी मातृभूमि छोड़कर यहां आ बसे थे। उन्होंने वस्त्र पर छपाई का कारखाना बना लिया था। उनका कारखाना नगर के प्रमुख कारखानों में था। अपनी पत्नी जेठी बाई के साथ वे स्वयं कारखानों की देखभाल किया करते थे।

दीव के पुर्तगीज़ अधिकारियों ने कानून बना दिया था कि विवाह के पूर्व यदि किसी बच्चे के माता पिता मर जायें तो वह सरकारी संरक्षण में ले लिया जायेगा। माता या पिता में से जो पीछे मरे उसके शरीर की अन्त्येष्टि क्रिया होते ही एक सूबेदार सैनिकों के साथ आता और बालकों को ले जाता। घर में दादी, बहिन, भाई आदि होने पर भी यह किया जाता। ऐसे बच्चों को ईसाई बना लिया जाता था। एक दिन जेठी बाई के कारखाने के एक आदमी का शरीरान्त हुआ। उसके लड़के की आयु ग्यारह वर्ष थी। जेठी बाई ने उसे विधर्मी होने से बचाने का निश्चय किया। उसी लड़के के वर्ण एवं अवस्था की एक लड़की उन्होंने ढूंढ निकाली। लड़की के पिता को जेठी बाई ने यह आश्वासन दिया कि बड़े होने तक लड़के के तथा उसकी स्त्री के पालन पोषण एवं शिक्षण का भार वे स्वयं उठायेंगी। ब्राह्मण बुलाये गये। लड़के के पिता का शव घर में पड़ा रहा और विवाह हो गया। शव के अग्नि संस्कार से लौटने पर सूबेदार आया। लड़के की शादी का समाचार पाकर उसे निराश होकर लौटना पड़ा। अब तो यह क्रम बन गया। जिस लड़के के माता पिता मरते उसके सम्बन्धी जेठी बाई के पास दौड़े आते। जेठी बाई पहले किसी प्रकार विवाह कराती बच्चे का और तब मृतक का शव श्मशान जाता। सब अधिकारी उनसे रुष्ट हो गये। नगर के लोगों में उनकी कीर्ति प्रख्यात हो गई।

इस प्रकार कितनों को बचाया जा सकता है। जेठी बाई निरन्तर इन अनाथ बच्चों की चिन्ता करती रहती थी। उन्होंने सुना था कि पुर्तगाल का शासन वहां की महारानी के हाथ में है। यह सोच कर कि नारी के हृदय में दया होगी, प्रार्थना पत्र भेजने का निश्चय किया। एक सुयोग्य पुर्तगीज बैरिस्टर को पर्याप्त पुरस्कार देकर उससे प्रार्थना पत्र लिखवाया। खूब सुन्दर ढाक की मलमल लेकर उस पर उन्होंने अपने हाथ से चारों ओर बेल बूटे छापे। मध्य में सुन्दर कमल बनाया। कमल के बीच की कर्णिका पर बड़े सुन्दर अक्षरों में प्रार्थना पत्र लिखा पुर्तगीज भाषा में। उस ओढ़नी को उन्होंने चन्दन की एक सुन्दर पेटी में सजा कर रखा। पेटी अनेक प्रकार के बेल बूटों से बहुत आकर्षक हो गयी थी।

प्रार्थना पत्र में जेठी बाई ने बाल अपहरण कानून का मार्मिक चित्र खींचा था। बच्चे को एक अपरिचित लोगों में बलात् ले जाने से कितना कष्ट होता है इसका वर्णन किया था। उन्होंने पूछा था कि कोई आपके पुत्र पुत्री को छीन कर बलात् ले जाये और अपने धर्म में दीक्षित करे तो आपको कैसा लगेगा? अन्त में प्रार्थना की कि नारी होने के कारण महारानी नारी हृदय की व्यथा को समझें और अन्याय को रोकें।

प्रार्थना पत्र लेकर पालकी नौका में जो उस समय के जलयान थे, दीव से गोआ जाने में चौदह दिन लगे। मार्ग में जलदस्युओं का भय था। अनेक संकट थे, परन्तु जेठी बाई पैर बढ़ा कर पीछे हटाना नहीं जानती थी। वे गोआ पहुंची। एक हाथ में जलती मशाल, एक में प्रार्थना पत्र की पेटी और मस्तक पर जलती अग्नि की सिगड़ी लेकर गवर्नर की कोठी के सामने पहुंच कर उन्होंने न्याय, न्याय की पुकार की। गवर्नर ने एक कुलीन महिला को इस विचित्र वेष में पुकारते देख पहरेदार से बुलवाया।

"आपके शासन में अन्धकार है। इसी से मैंने मशाल ले रक्खी है। हम आपकी प्रजा अन्याय से जल रही हैं। मैंने यह बताने को सिर पर जलती सिगड़ी रक्खी है।" जेठी बाई ने अपने विचित्र वेष का रहस्य बताया। उन्होंने प्रार्थना पत्र दिया। वायसराय तथा गवर्नर ने मिलकर प्रार्थना पर विचार किया। वे जेठी बाई के व्यक्तित्व से पूर्णतः

सत्य की टेक

एक खलासी का लड़का एक जहाज पर नौकरी करता था। उस जहाज के सभी खलासी शराब पीते थे। पर वह लड़का शराब न पीता था। एक दिन जहाज का कप्तान इससे बहुत खुश हुआ और इसको एक अच्छी किस्म की शराब पीने का दी पर लड़के ने बिल्कुल इन्कार कर दिया। कप्तान ने कहा 'क्या तू मेरी आज्ञा नहीं मानेगा? न मानेगा तो कैदखाने में डाल दूंगा। लड़के ने कहा 'मैं आपका हुक्म तोड़ना नहीं चाहता। परन्तु शराब के लिए मुझे ऐसा करना पड़ता है। इसके बाद कप्तान ने आँखें दिखाकर कहा 'यदि तू यह शराब का प्याला न पियेगा तो अभी २ तुझे बेड़ी डालदी जायगी और किनारे पर पहुँचकर हुकम अदूली का फैसला किया जायगा।' कप्तान के ये शब्द सुनकर वह लड़का रोता हुआ कहने लगा 'मैं आपका हुक्म तोड़ता हूँ। इसका कारण यह है कि मैंने अपनी मां को शराब न पीने का वचन दिया है। मेरे बाप शराब पीने की आदत से मर गए, इसलिए मेरी मां ने मुझ से शराब न पीने का प्रण कराया है।'

इस लड़के का यह उत्तर सुनकर कप्तान को आश्चर्य हुआ और वह बोला 'लड़के! तुम ठीक हो मैं तुम्हारी टेक देखकर बहुत ही खुश हूँ। सब लोग तुम्हारे जैसे हों। यह मैं चाहता हूँ। शराब जहर है, यह सब जानते हैं पर आदत नहीं छोड़ते। इसलिए अब मैं भी आज से शराब छोड़ता हूँ।' इतना कहकर इसके पास जितनी शराब की शीशियां थीं सब वहीं से इसने समुद्र में फेंक दीं।

प्रभावित हुये। कौंसिल बैठी और पत्र को पुर्तगाल भेजने का निश्चय हुआ। गवर्नर की अच्छी सिफारिश के साथ पत्र भेजा गया।

पत्र पुर्तगाल पहुंचा। पुर्तगीज महारानी ने पत्र देखा। इतनी सुन्दर कला इसने अब तक नहीं देखी थी। जेठी बाई की ओढनी पुर्तगाल में 'पानदे जेठी' के नाम से विख्यात हो गई। पुर्तगाल से ताम्रपत्र पर खुदी हुई निम्न आज्ञायें भारत में पहुंची महारानी की ओर से—

१—अनाथ बालकों को ईसाई बनाने का वर्तमान कानून तुरन्त बन्द किया जाये।

२—जेठी बाई मेरी पुत्री मानी जाये और उसके सम्मान में उसके घर के सम्मुख सप्ताह में एक बार सरकारी बाजा जाकर बजा करे।

३—जब कभी कोई सरकारी कर्मचारी जेठी बाई के या उसके घर के सम्मुख से निकले, अमुक दूरी तक टोपी उतार कर सलामी दे। दीव के गवर्नर भी इस आज्ञा का पालन करें।

बड़ी धूमधाम से वह ताम्रपत्र गोआ से दीव आया और आदर पूर्वक जेठी बाई को दिया गया। अनेक बार सरकारी अधिकारी, महाजनों से विवाद होने पर जेठी बाई को मध्यस्थ बना कर निपटारा कर लिया करते थे।

आर्य वीरदल आन्दोलन

उत्तर प्रदेशीय आर्य वीर दल सम्मेलन कानपुर—

ता० २८, २९, ३० जनवरी ५९ को कानपुर में उत्तर प्रदेश आर्य वीर दल सम्मेलन बड़ी ही धूमधाम एवं सफलता के साथ हुआ। लगातार वर्षा तथा खराब मौसम के होते हुये भी सम्मेलन की एक दो खेल प्रतियोगिता को छोड़कर शेष सभी पुरोगम पूर्णता को प्राप्त हुए। सम्मेलन का उद्घाटन आर्य जगत् के परम आदरणीय नेता तथा सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्रद्धेय श्री स्वा० ध्रुवानन्द जी ने किया। इस सम्मेलन की विशेषता यह थी कि नित्य आर्यवीरों को शारीरिक तथा बौद्धिक प्रतियोगितायें होती थीं और समस्त कार्यकर्ता मिलकर श्री प्रधान सेनापति जी की अध्यक्षता में दोपहर २ बजे से लेकर ३॥ बजे तक भावी कार्यक्रम पर विचार करते थे। इसके अतिरिक्त सम्मेलन में शुद्धि सम्मेलन, चरित्र निर्माण सम्मेलन, स्वास्थ्य रक्षा सम्मेलन, वैदिक राजनीति सम्मेलन तथा कवि सम्मेलन भी हुये जिनके अध्यक्ष क्रमशः श्री पू० स्वा० ध्रुवानन्द जी महाराज, श्री राजकुमार रणञ्जयसिंह जी, श्री-कृष्ण जी एम. ए., श्री प्रेम कुमार जी कोहिली तथा आल इण्डिया रेडियो लखनऊ के सुविख्यात कलाकार श्री चन्द्रभूषण जी त्रिवेदी 'रमई काका' थे।

सम्मेलन में बाहर से ७६ दलों के प्रतिनिधि पधारे थे। सम्मेलन की सफलता के लिये श्री लक्ष्मण कुमार जी शास्त्री सेनापति उ० प्र०, श्री कृष्ण जी कपूर, श्री ठा० रामसिंह जी, श्री वंशीलाल जी आदि महानुभाव बधाई के पात्र हैं।

बिजनौर मण्डल आर्य वीर दल सम्मेलन—

२७ जनवरी को अ० भा० आर्यवीर दल के प्रधान सेनापति की अध्यक्षता में बिजनौर माण्डलिक दल का सम्मेलन हुआ जिसमें मुख्यत: शारीरिक प्रतियोगितायें अर्थात कबड्डी, रस्सा कशी, दौड़ आदि की प्रतियोगितायें हुईं और विजेताओं को पुरस्कार दिये गये। रात्रि को सार्वजनिक सभा हुई जिसमें श्री प्र० सेनापति ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी का भाषण हुआ।

सीतापुर आर्य वीर दल सम्मेलन—

७ फरवरी को सीतापुर आर्य वीर दल सम्मेलन हुआ जिसमें कबड्डी, रस्सा, दौड़, वाद-विवाद, भाषण, कविता आदि की प्रतियोगितायें हुईं और विजेताओं को उपहार दिये गये, इसे सफल बनाने का श्रेय श्री रघुनाथ सिंह जी मण्डलपति को था।

बिहार आर्य वीर दल सम्मेलन—

बिहार आर्य वीर दल का बौद्धिक शिक्षण शिविर श्री पं० रामनारायण जी शास्त्री मन्त्री बिहार दल की अध्यक्षता में गुरुकुल बैद्यनाथ धाम में ता० १२ फरवरी से २१ फरवरी तक लगा। इसका विस्तृत विवरण अगले मास दिया जायगा।

लखनऊ आर्य वीर दल सम्मेलन—

६ फरवरी को दल के प्रधान सेनापति जी ने आर्य वीर दल लखनऊ का निरीक्षण किया। यहां दल द्वारा संचालित एक स्कूल है जिसमें बच्चों को शिक्षा के साथ २ चरित्र निर्माण की भी शिक्षा दी जाती है। सन्ध्या, हवन आदि के साथ २ सप्ताह में एक दिन धार्मिक प्रवचन भी होते हैं। हर्ष का बात है कि यहां दल में मुसलमानों के लड़के हैं और सभी गौरव के साथ अपने नाम के साथ आर्य लिखते और बोलते हैं।

गाजियाबाद आर्य वीर दल सम्मेलन—

नगरनायक श्री वेदप्रकाश जी सूचित करते हैं कि उनके दल की ओर से एक निःशुल्क पाठशाला प्रारम्भ करदी है जिसमें स्कूल तथा कालेज के कमजोर बच्चे अध्ययन करते हैं। इस स्कूल को दल द्वारा संचालित समय दान आन्दोलन के आधार पर प्रारम्भ किया

है अर्थात् कई शिक्षित व्यक्तियों ने नित्य एक घण्टा दल को दान स्वरूप दिया है जिसका दल ने इस रूप में सदुपयोग करना प्रारम्भ किया है। दल किसी डाक्टर अथवा वैद्य से भी समय दान लेने की चेष्टा में है; यदि ऐसा व्यक्ति मिल गया तो नगर की हरिजन बस्ती में शीघ्र एक निःशुल्क औषधालय भी खोल दिया जाएगा।

गुड़गांव आर्य वीर दल सम्मेलन—

१३ फरवरी को सोना में जिले के समस्त दलों का एक सम्मेलन श्री प्रधान सेनापति जी की अध्यक्षता में हुआ। सर्व प्रथम मोटर अड्डे से प्रधान सेनापति जी का जलूस निकाला गया, जो नगर में घूमकर आर्य-समाज मन्दिर में एक सार्व० सभा के रूप में परिवर्तित होगया। सभामें प्रधान सेनापतिजी का भाषण हुआ। तत्पश्चात् दल के कार्यकर्ताओं की बैठक हुई जिसमें मण्डलका चुनाव हुआ और प्रधान सेनापतिजी ने दल के वर्तमान स्वरूप तथा कार्यक्रम पर प्रकाश डाला। लगभग सभी आर्यसमाजों तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने दल को आर्थिक सहायता दी और भविष्य में मासिक आर्थिक सहायता देने का वचन दिया।

पवित्र होली मनाइये।

सार्वदेशिक आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति श्री ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी द्वारा समस्त आर्य वीर दलों को आदेश दिया गया है कि वह अपने नगर में होलिकोत्सव को बड़े ही आदर्श एवं पवित्र रूप से मनायें और अन्यों को भी प्रेरणा प्रदान करें।

इसके लिये होलिकोत्सव से एक सप्ताह पूर्व से नगर में मोहल्ला सभाओं द्वारा होली के पर्व के महत्व तथा उसके मनाने के प्रकार पर प्रकाश डालें और जनता को ऐसे असभ्य एवं निन्दनीय कार्यों के करने से वर्जित करें जो कि सभ्य तथा प्रगतिशील राष्ट्रों व नागरिकों के लिये अशोभनीय है।

होली के दिन नगर में सामूहिक यज्ञ कराये जायें और अगले दिन नगर में जलूस निकालें जिनमें अच्छे गाने गाये जायें और सबके माथे पर चन्दन लगाया जाय। दोपहर पश्चात् प्रीति भोज तथा कविता एवं सुन्दर और सुरुचिपूर्ण गाने गाये जायं।

(पृष्ठ २२ का शेष)

संस्था कर सकती है और वह है "आर्य समाज"। किंतु धनाभाव, लोगों की उपेक्षा आदि के कारण वह गरीब संस्था विदेशियों के इन विशाल संगठनों का विरोध करने में कृतकार्य नहीं हो पाती।

आजकल आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने रहे-सहे गौरव, हमारी अमूल्य संस्कृति एवं हिन्दुत्व की रक्षा के लिये जिसे निगल जाने के लिये अनेकों विधर्मी मुंह फैलाए हुए हैं, मिल जुल कर बचाने का प्रयत्न करें।

इस कार्य के लिये उसी प्रकार के साहित्य के प्रचार की आवश्यकता है जो किसी समय ख्वाजा हसन निजामी के कुचक्र का भंडा फोड़ करने के लिये निकाला गया था। किसी न किसी प्रकार देश के नवयुवकों को इस खतरे से सचेत करना ही होगा।

इस विषय में आवश्यक सामग्री एकत्र हो जाने पर हम अपने विचार पाठकों के सन्मुख रखने का यत्न करेंगे। —सम्पादक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा प्रदेशीय सभायें

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली की अन्तरंग सभा

दिनांक १३।२।५५ समय—१॥ बजे मध्यान्होतर

स्थान—श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली

उपस्थिति

(१) श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति (प्रधान)
(२) ,, स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज
(३) ,, कविराज हरनाम दास जी
(४) ,, पं० बुद्धदेवजी विद्यालंकार
(५) , ला० रामगोपाल जी
(६) ,, प्रो० रामसिंह जी
(७) ,, बा० कालीचरण जी आर्य
(८) ,, पं० भीमसेन जी विद्यालंकार
(९) ,, यशःपाल जी सिद्धान्तालंकार
(१०) ,, पं० वासुदेव जी शर्मा
(११) ,, बा० पूर्णचन्द्र जी ऐडवोकेट
(१२) ,, बाबू मुसद्दीलाल जी
(१३) ,, चौ० जयदेवसिंह जी ऐडवोकेट
(१४) ,, लाला बालमुकुन्द जी आहूजा
(१५) ,, लाला चरणदास जी पुरी ऐडवोकेट
(१६) ,, पं० नरदेव जी स्नातक

शोक प्रस्ताव

(१) यह सभा श्रीयुत बा० गङ्गाधर प्रसाद जी, श्री पं० शंकरदत्त जी शर्मा, श्री डा० श्याम स्वरूप जी श्री दीवान हरबिलास शारदा तथा श्री प्रिंसिपल राजेन्द्र कृष्णकुमार जी के असामयिक निधन पर हार्दिक दुःख प्रकट करती हुई उनके परिवारों के प्रति समवेदना का प्रकाश करती है।

(२) गताधिवेशन की कार्यवाही सम्पुष्ट हुई।

(३) विज्ञापन का विषय सं० २ सार्वदेशिक गोरक्षा समिति के सर्वाधिकारी श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज का रुग्ण होने के कारण उक्त पद से त्याग पत्र का विषय प्रस्तुत होकर श्री स्वामी जी महाराज के १५-११-५४, ३१-११-५४ और ३०-१२-५४ के पत्र पढ़े गये। निश्चय हुआ कि यह सभा स्वामी जी महाराज की प्रशंसनीय सेवाओं का आदर करती हुई बड़े खेद के साथ श्री स्वामी जी महाराज का त्याग पत्र स्वीकार करती है। आर्य महा सम्मेलन हैदराबाद के निश्चय नं० ३ में प्रदत्त और इस सभा की २६-६-५४ की बैठक में संपुष्ट अधिकार के अनुसार श्री स्वामी जी महाराज द्वारा निर्मित गोरक्षा समिति समाप्त समझी जाये।

यह भी निश्चय हुआ कि गोरक्षा आन्दोलन के कार्य संचालन के लिये निम्न लिखित उपसमिति नियुक्त की जाये :—

१. श्रीयुत स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती (प्रधान)
२. ,, लाला रामगोपाल जी शालवाले (संयोजक)
३. ,, बा० कालीचरण जी आर्य
४. ,, प्रो० रामसिंह जी एम. ए.
५. ,, पं० यशःपाल जी सिद्धान्तालंकार

यह भी निश्चय हुआ कि यह समिति अपने में ४ तक सदस्य सहयुक्त कर सकेगी।

(ख) यह सभा सर सीताराम कमेटी के निर्देशानुसार उत्तर प्रदेश में सम्पूर्णतः गोवध निषेध विषयक विधेयक बनाने की विधान सभा में की गई राज्यपाल की घोषणा का स्वागत करती और उत्तरप्रदेश राज्य सरकार को इस चिर प्रतीक्षित महत्वपूर्ण निश्चय के लिये बधाई देती है।

इस सभा को आशा है कि यह विधेयक शीघ्र ही बन कर क्रिया में आ जायेगा और राज्य तथा प्रजा दोनों के पारस्परिक सहयोग से इसका सम्यक् प्रचलन हो कर यह अपने उद्देश्य की पूर्ति में सफल होगा।

(४) विज्ञापन का विषय सं० ३ महर्षि दयानन्द सरस्वती के प्रामाणिक चित्र के निश्चय का विषय प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि सम्प्रति इस विषय में किसी कार्यवाही के करने की आवश्यकता नहीं है।

(५) विज्ञापन का विषय सं० ४ सभा के आगामी वार्षिक बृहदधिवेशन की तिथि नियत करने का विषय प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि १ मई १९५५ को वह अधिवेशन बुलाया जाये और इससे पूर्व ३० अप्रैल ५५ को अन्तरंग की बैठक रखी जाय। यह भी निश्चय हुआ कि भविष्य में दूसरा निश्चय होने तक सभा का वार्षिक अधिवेशन अप्रैल मास के अन्त और मई के प्रारम्भ के बीच में पड़ने वाले रविवार को हुआ करे।

यह भी निश्चय हुआ कि अधिवेशन से पूर्व आर्य समाज के भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में अन्तरंग की एक विशेष बैठक की जाया करे।

(६) विज्ञापन का विषय सं० ५ वार्षिक अधिवेशन की स्वीकृति के लिये वार्षिक रिपोर्ट का निरीक्षण करने तथा प्रकाशन की स्वीकृति देने के लिये उपसमिति की नियुक्ति का विषय प्रस्तुत होकर निम्नलिखित उपसमिति नियुक्त हुई।

१. सभाप्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती
२. कार्यकर्ता प्रधान श्रीयुत पं० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति
३. सभा मन्त्री कविराज हरनामदास जी

(७) विज्ञापन का विषय सं० ६ अन्तरंग के इस अधिवेशन के पश्चात् और आगामी साधारण सभा से पूर्व प्राप्त हुए प्रवेश फार्मों की स्वीकृति का सभा प्रधान को अधिकार देने का विषय प्रस्तुत होकर सभा प्रधान को उक्त अधिकार दिया गया। यह भी निश्चय हुआ कि इस बीच में नये समाजों के प्रवेश तथा आजीवन सदस्यों के फार्मों की स्वीकृति का भी सभा प्रधान को अधिकार दिया जाये।

(८) विज्ञापन का विषय सं० ८ सभा के पुस्तकालय, वाचनालय और पुस्तक भण्डार के लिये बलिदान भवन के नीचे की दोनों दूकानें किरायेदारों से खाली कराई जाने का विषय प्रस्तुत होकर खाली कराई जाने का निश्चय हुआ *।

(९) विज्ञापन का विषय सं० ९ इस सभा द्वारा स्वीकृत आर्यसमाज के उपनियमों के संशोधित प्रारूप (ड्राफ्ट) की धारा सं० ३ के निम्नांकित स्पष्टीकरण को अन्तरंग तथा साधारण सभा की स्वीकृति से अविलम्ब प्रचलित किये जाने का कार्यालय का सुझाव प्रस्तुत हुआ।

"आर्य समाज शब्द में स्त्री आर्य समाज सम्मिलित समझा जाये।"

सार्वदेशिक सभा की साधारण सभा के सदस्यों से प्राप्त हुई सम्मतियां पढ़ी गईं जिनका बहुपक्ष स्पष्टीकरण के पक्ष में था। पर्याप्त विचार के पश्चात् इस विषय पर सम्मति लिये जाने पर कि स्पष्टीकरण उपनियमों में रखा जाय या नहीं, ९ सम्मतियां पक्ष में और ३ विपक्ष में आने पर निश्चय हुआ कि स्पष्टीकरण को उपनियमों का भाग बनाया जाये। निश्चय हुआ कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को लिखा जाय कि वह इस विषय में अपना अन्तिम निश्चय करते हुए सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग के इस मत विभाजन का ध्यान रखे।

(१०) विज्ञापन का विषय सं० १० सार्वदेशिक सभा के अंग्रेजी नाम इन्टर नेशनल आर्यन लीग के स्थान में उपयुक्त नाम के निर्णय का विषय प्रस्तुत होकर अन्तरंग सदस्यों की लिखित सम्मति सहित कार्यालय का ७-१-५५ का नोट पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि सभा का नाम अंग्रेजी में भी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ही व्यवहृत हुआ करे।

(११) विज्ञापन का विषय सं० ११ कम्नड़ सत्यार्थप्रकाश की १०००) के मूल्य तक की प्रतियां

* स्वीकृत प्रस्ताव सभा के कानूनी परामर्श दाता के पास है।

सभा द्वारा क्रय करने की स्वीकृति का विषय प्रस्तुत होकर कार्यालय का १२-२ ५५ का नोट पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि १००० कन्नड़ सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशनार्थ दिये जायें जिसमें से २००) दिये जा चुके हैं और पुस्तक छपने पर इस १०००) के मूल्य की लागत मात्र मूल्य पर पुस्तकें क्रय की जायें।

(११) विज्ञापन का विषय सं० १२ श्रीयुत घनश्याम सिंह जी गुप्त को ईसाई प्रचार निरोध कार्य की सहायतार्थ श्री ब्रजलाल जी के लिये २५०) मासिक ३ मास तक देने की स्वीकृति का विषय प्रस्तुत होकर कार्यालय के १८-१२-५४ व २१-१२ ५४ के नोट श्रीयुत घनश्यामसिंहजी के २२-१२-५४ के पत्र सहित पढ़े गये। विचार के पश्चात् ६ विरुद्ध ४ के बहुमत से निश्चय हुआ कि २५० मासिक ३ मास तक दिया जाय। यह राशि किस मद से दीजाय क्योंकि सभा के पास इस निधि में धन नहीं है, यह प्रश्न उपस्थित होने पर दो प्रस्ताव प्रस्तुत किये गये:—

(१) ईसाई प्रचार निधि में अब तक जो अधिक व्यय हो चुका है अपील पर प्राप्त होने वाले धन से उसको तथा सभा द्वारा संचालित ईसाई प्रचार कार्य की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति के उपरान्त कोई राशि शेष बचे तो उससे २५०) मासिक की किस्तों में ७५०) दिये जायें।

(२) ७५०) वेद प्रचार फंड से दिया जाय।

दूसरा प्रस्ताव २ विरुद्ध ६ के बहुमत से गिर गया और पहला प्रस्ताव ३ विरुद्ध १ के बहुमत से पास हुआ।

(१३) विज्ञापन के विषय सं० १३, १४ प्रस्तुत होकर गाजियाबाद आर्यनगर तथा ईसाई प्रचार निरोध समितियों की रिपोर्ट प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि गाजियाबाद भूमि में गाजियाबाद नगर की ओर के छोटे टुकड़े में ईसाई प्रचार निरोध के कार्यार्थ सेवा केन्द्र बनाया जाय और आवश्यक भवनों के निर्माणार्थ गाजियाबाद भूमि निधि के अवशिष्ट धन में से १५०००) तक व्यय करने की स्वीकृति दी जाय तथा ईसाई प्रचार निरोध उपसमिति के मन्त्री को अधिकार दिया जाय कि वे भवन के नक्शे तैयार करके म्युनिसिपल कमेटी से पास करा लेवें। आगामी बजट में इस राशि की स्वीकृति हो जाने पर कार्यारम्भ किया जाय।

(१४) विज्ञापन का विषय सं० १५ रिलीफ कार्यार्थ आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार को १०००० सभा की जनरल रिलीफ फंड से दिये जाने का विषय प्रस्तुत होकर आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार का ३१-१२-५४ का पत्र पढ़ा गया। श्रीयुत पं० वासुदेव जी शर्मा ने रिलीफ कार्य की वर्तमान स्थिति बताई। प्रकट किया गया कि पूर्व दिये हुए ५०००) का ब्यौरे वार हिसाब अभी तक अप्राप्त है। निश्चय हुआ हिसाब प्राप्त हो जाने पर ५०००) और दिये जायें।

(१५) विज्ञापन का विषय सं० १६ आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य भारत के उन समाजों की सम्पत्ति जो अभी तक राजस्थान सभा के नाम रजिस्टर्ड चली आ रही है मध्य भारत सभा के नाम परिवर्तित कराने की कार्य शैली के निर्धारण का विषय प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि विषय को पूर्ण करके आगामी बैठक में प्रस्तुत किया जाय।

(१६) विशेष रूप से सभा प्रधान की आज्ञा से श्रीयुत पं० मदन मोहनजी विद्यासागर उपदेशक सभा के ग्रेड परिवर्तन का विषय प्रस्तुत होकर श्री मदन मोहन जी का २४-३-५४ का प्रार्थना पत्र कार्यालय के १२-२-५५ के नोट के साथ पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि उन्हें १२५—५—१५० के ग्रेड में लिया जाय और १-३ ५५ से वेतन वृद्धि की जाय।

(१७) विशेष रूप से सभा लेखक श्री निरंजन लाल गौतम को स्थिर करने का विषय प्रस्तुत होकर श्री निरंजनलाल जी का १५-१२-५१ का प्रार्थना पत्र कार्यालय के २१-१२-५४ के नोट के साथ पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि १६-१२-५४ से उन्हें ८४) ४-१२०) के ग्रेड में स्थिर किया जाय।

(१८) हीरालाल तथा भवानी सिंह चपरासियों के वेतन वृद्धि विषयक प्रार्थना पत्र प्रस्तुत होकर

* दक्षिण भारत प्रचार *

गत मास आवड़ी कांग्रेस के अधिवेशन के समय मद्रास में एक आर्य सम्मेलन करने की योजना मद्रास आर्य समाज ने बनाई थी तथा सार्वदेशिक सभा के आदेश पर एतदर्थ प्रयत्न करने में भी वहां पहुंचा। परन्तु स्थान की असुविधा आदि कुछ कारण ऐसे बने जिनमें कि आयोजित योजना सफल न हो सकी। परन्तु वहां के उत्साही समाज के कार्यकर्त्ताओं से विचार विमर्श के बाद मद्रास नगर में ही प्रदर्शनी में आर्य-साहित्य-प्रचार की व्यवस्था का प्रयत्न किया गया तथा यह भी निश्चय किया गया कि आगे से प्रदर्शनी में प्रति वर्ष आर्य्य-साहित्य-प्रचारार्थ एक निश्चित व स्थाई प्रयत्न किया जाय। आशा है आगे से इन सब की पूर्व ही कार्य कर्त्ताओं के उत्साहपूर्ण सहयोग से आयोजना कर आर्य समाज का वातावरण तैयार करने तथा जन सामान्य को वेद एवं वैदिक धर्म से परिचित कराने का हमारा प्रयत्न सफल हो सकेगा।

बंगलौर

बंगलौर नगर में १० जनवरी को आर्य समाज के सुप्रसिद्ध उत्साही कार्यकर्त्ता श्री नारायणराव पांडे की सुपुत्रियों का (दोनों ही गुरुकुल देहरादून की पढ़ी हुई हैं) शुभ विवाह वैदिक रीति से समारोह के

निश्चय हुआ कि सभा प्रधान दोनों की उचित वेतन वृद्धि कर देवें।

(११) विशेष रूप से निम्नलिखित मार्गेज लोन की राशियां प्राप्त करने का विषय प्रस्तुत हुआः—

लाला श्रीराम जी

६००००) असल राशि
१६०००) सूद ता० ३१-१-५२ तक

७६६००)

श्री चौ० कन्हैयालाल जी

२००००) असल राशि
८८८०) सूद ता० ३१-१-५२ तक
२८८८०)

यतः इन राशियों की प्राप्ति के लिए सभा कार्यालय द्वारा किये गये अब तक के सब प्रयत्न निष्फल सिद्ध हो चुके हैं अतः इन राशियों की प्राप्ति के लिए कानूनी कार्यवाही अविलम्ब प्रारम्भ कर दी जाय।*

मन्त्री कविराज हरनामदास

मध्य प्रदेश—

धमतरी (मध्य प्रदेश) निवासी श्रीयुत स्वामी अग्निदेव जी ने अपनी सम्पूर्ण चल अचल सम्पत्ति, जिसका मूल्य अनुमानतः १०००००) है, आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश को दान में देदी है जिसे सभा ने धन्यवाद सहित स्वीकार कर लिया है तथा श्री स्वामी जी को आजीवन उस सम्पत्ति की आय में से ७५) मासिक सहायता रूप देना निश्चित किया है।—

गुरुकुल कांगड़ी

हमें जनता को यह सूचित करते हुए हर्ष होता है कि देहली राज्य ने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की अलंकार उपाधि को बी०ए० के समकक्ष तथा अधिकारी परीक्षा को मैट्रिक के समकक्ष मान लिया है।

गुरुकुल का ५२ वां वार्षिकोत्सव ८ से ११ अप्रैल १९५२ तक बड़े समारोह से मनाया जावगा।

भारत के उपराष्ट्रपति तथा विख्यात शिक्षा विशेषज्ञ सर्वपल्ली डा० राधाकृष्णन् नव स्नातकों को दीक्षान्त भाषण देंगे।

---

* स्वीकृत प्रस्ताव सभा के कानूनी सलाहकार के पास है।

सम्पन्न हुआ। संस्कार गंभीर एवं शांत वातावरण में बड़ा प्रभावशाली रहा।

दक्षिण कनारा—

१ फरवरी से दक्षिण कनारा में प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया। मंगलौर में श्री स्वामी सदानन्द जी के अतुलनीय उत्साह एवं परिश्रम के फलस्वरूप अनाथाश्रम का रूप और भी बढ़ रहा है।

कारकल—

इस स्थान पर पहले आर्य समाज नियमित रूप से संचालित था तथा अब भी उसके बिखरे हुए श्रद्धामय फूल इधर उधर हैं। इन सब के सहयोग से पुनः उसी आर्य समाज को संचालित करने का आश्वासन श्री केशोराम चन्द्र शैर्या जी ने बड़े उत्साहमय एवं दृढ़ शब्दों में दिया। तथा प्रचार के समय में अपने व्यापार की भी चिन्ता न करके स्थान स्थान पर भाषणों एवं व्याख्यानों की योजना करने में जुटे रहे। फलस्वरूप गवर्नमेंट हाई स्कूल, शबरी आश्रम (यह हरिजन छात्रों के निवास, भोजन एवं अध्ययनादि की व्यवस्था के लिए बना हुआ प्रकृति के मध्य बड़ा सुन्दर आश्रम है,) सार्वजनिक सभा तथा संस्कृत कालेज में भाषण हुए। श्री शैर्या जी स्वयं भी बहुत अच्छे प्रभावशाली वक्ता हैं तथा उनके जीवन की छाप कारकल के लोगों पर विद्यमान है। आशा है निकट भविष्य में ही शीघ्रातिशीघ्र वहां निर्वाचन होकर मन्त्री व प्रधान आदि अधिकारियों की नियुक्ति होकर आर्य समाज का काम नियमित रूप में चालू हो जावगा।

हिरियडक—

श्री एच० के० अनन्तैया जी, (जो कि इस प्रदेश के प्रधान आर्य कार्यकर्त्ता हैं) के सहयोग से ४ मील दूर कोडिबेट्टा नामक ग्राम में सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया तथा मध्याह्न की कड़ी धूप में भी वे अपना व्यापार छोड़कर मेरे साथ पैदल वहां तक आए। सभा में ग्रामीण भाई बहुत बड़ी संख्या में सम्मिलित थे। सुना गया है कि उधर पूर्व ही से पर्याप्त प्रचार हो रहा है जो कि बड़ी लगन के साथ हिरियडक आर्य समाज के एक तुलू भाषा भाषी सदस्य कर रहे हैं। अगले दिन रविवार को एक सीमन्तोन्नयन संस्कार वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ जो बड़ा प्रभावशाली रहा। इधर इन संस्कारों व यज्ञों के द्वारा बड़ा प्रचार हो सकता है और इनके प्रति श्रद्धा रखने वाले बड़े श्रद्धालु जन हैं पर कठिनता यह है कि कोई स्थानीय पुरोहित नहीं है और दूसरे बुलाकर संस्कार कराने की शक्ति इन व्यक्तियों में नहीं है।

उडुपी—

हिरियडक और उडुपी दोनों ही स्थानों पर आर्य समाज गत वर्ष ही अगस्त मास पुनः स्थापित की गई थीं परन्तु दोनों ने जिस उत्साह से काम किया है वह उदाहरण बन सकता है। दोनों ही समाज के साप्ताहिक सत्सङ्ग नियमित होते हैं तथा पत्रिकाओं व पुस्तकों के द्वारा भी पर्याप्त प्रचार हो रहा है। उडुपी समाज के उत्साही कार्यकर्त्ताओं ने मासिक किराये पर दूसरी मञ्जिल पर एक बड़ा कमरा ले लिया है जिसमें उन्होंने अपने सहयोगियों के सहयोग से एक व्यायामशाला भी खोल दी है। एक हिन्दी विद्यालय चल रहा है। इसमें लगभग ६० छात्र व छात्रायें अध्ययनार्थ उपस्थित होती हैं। गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक श्री भक्तप्रिय जी वेदालङ्कार जो उडुपी के महात्मा गांधी मैमोरियल कालेज में हिन्दी विभाग में प्राध्यापक हैं इस काम को बड़ी ही सुन्दरता तथा त्यागभाव से चला रहे हैं। यहां पर भी दो भाषण हुए।

तीर्थ हल्ली—

मैसूर का यह एक बड़ा जिला है। तथा यहां आर्य समाज के कार्यकर्त्ता जिन्होंने पहले भी बहुत उत्साह से काम किया है और जो ईसाई मत से शुद्ध होकर आर्य समाज में आए हैं, श्री ज्ञानेन्द्रप्रभु जी तथा उनके पुत्र श्री वीरेन्द्रप्रभु जी बड़ा अच्छा स्थान बनाए हुए हैं।

सभी स्थानों पर श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी के आने पर कार्यक्रम रखने तथा सार्वजनिक सभा आदि करने का वचन मिला तथा आशा है, कि उनके आने

* विदेश प्रचार *

इंग्लैण्ड में प्रचार के अनुभव

दुनियां छोटी होती जा रही है। संस्कृतियां एक दूसरे के गले का हार बन रही हैं। पूर्व और पश्चिम सुनहले प्रभात और मधुर सन्ध्या की भांति एक दूसरे के पूरक हो गये हैं। धरती पर आज वह स्वर्णयुग उतर रहा है जब सभी अपने को गुणहीन और दूसरे को गुणवान कहने लगे हैं। पूर्व का अध्यात्म और पश्चिम का भौतिक विकास मिलाकर आज हम एक विश्वसंस्कृति के स्वागत के लिये तैयार हो रहे हैं। यह है मेरे पिछले सवा वर्ष के इंग्लैण्ड में निवास के अनुभवों का सार।

भारत और इंग्लैण्ड के गत शताब्दी के ऐतिहासिक सम्पर्क ने दोनों देशों को एक सांस्कृतिक सूत्र में बांध दिया है। परिणाम स्वरूप इंग्लैण्ड में जहां एक ओर प्राणिमात्र के प्रति भारत की अहिंसा के सिद्धान्त को अपनाकर दोनियों वेजिटेरियन सोसाइटियां कार्य कर रही हैं वहां दूसरी ओर मनुष्यों के प्रति अहिंसा को अपनाकर महात्मा गांधी के मार्ग का अनुसरण करने वाले अंग्रेजों की भी कमी नहीं है। इंग्लैण्ड के जिन नगरों में भी जाने का अवसर मुझे मिला वहां भारतीय कर्मसिद्धान्त और योगकला आदि पर उत्सुकतापूर्वक प्रश्न करने वालों की भीड़ को संभालना कठिन हो गया। बड़े २ सिद्धान्तों की बात जाने दीजिए, इंग्लैण्ड के छोटे २ गांवों में जाने पर श्रोताओं की भीड़ को सिर झुकाकर नमस्ते करना मात्र ही मेरे प्रति गहरे आकर्षण का कारण बना है। व्यक्ति की मौलिक

शिमोगा आदि जिलोंमें नई आर्य समाजें स्थापित करने में बड़ा सहयोग मिलेगा।

मैसूर—

१४ फरवरी से मैसूर आर्य समाज की ओर से दयानन्द सप्ताह के उपलक्ष्य में "राष्ट्र-कल्प-यज्ञ" नाम से एक बृहद् यज्ञ की आयोजना की गई है। नर नारी पर्याप्त संख्या में उपस्थित हो रहे हैं। आशा है यह यज्ञ आर्य समाज के लिए सफलता का वरदान सिद्ध होगा।

प्रकाशन-विभाग—

'व्यवहारभानु' व 'वैदिक विवाह पद्धति' छप गई है। प्रतिनिधि प्रकाशन समिति के इन दोनों प्रथम और द्वितीय पुष्पों की बड़ी मांग है। कर्नाटक प्रान्त के जिलों में शिक्षा-पटल में रखकर 'व्यवहारभानु' को स्कूलों में एक पाठ्य-पुस्तक के रूप में रखवाने के प्रयत्न हो रहे हैं। सफलता मिलेगी ऐसी आशा है।

कन्नड सत्यार्थप्रकाश के तीन फार्म छपकर तैयार हो गये हैं। आगे नियमित रूप में यह कार्य चल रहा है। सप्ताह में तीन फार्म छपकर देने का वादा प्रेस वालों ने किया है। क्योंकि बहुत जल्दी काम होने पर बहुत सी त्रुटि रह जाने की सम्भावना है अतः कर्नाटक देशीय आर्य जनता से प्रार्थना है कि वह धैर्य रखे तथा बाकी राशि शीघ्र ही भिजवा दें जिससे इसमें और अनावश्यक विलम्ब न हो।

समिति का विक्रय विभाग

समिति की ओर से हिन्दी, अंग्रेजी तथा कन्नड भाषीय आर्य ग्रन्थों व ट्रैक्टों के विक्रयार्थ एक पुस्तकालय मैसूर में ही बनाने का प्रयत्न चल रहा है। सार्वदेशिक सभा ने इसके लिए पुस्तकों व ट्रैक्टों के भेजने की स्वीकृति देदी है। अन्य आर्य संस्थाओं से भी प्रार्थना है कि वे भी अपने प्रकाशित ग्रन्थों व ट्रैक्टों को "आर्य समाज, मण्डी मोहल्ला मैसूर" के पते पर भिजवावें। इन पुस्तकों की मांग बहुत है। बेचकर जो भी राशि मिलेगी हम उन संस्थाओं को भिजवा देंगे।

सत्यपाल शर्मा स्नातक
दक्षिण भारत आर्य समाज संचालक

कूलता हो वहां पर वरदान है। कुछ लोगों को कहते सुना गया है कि अंग्रेज पुरातन का प्रेमी है। भारत की तरह ही यह बात अंगरेज जाति के लिये भी कुछ अंशों तक सत्य हो सकती है किन्तु साथ ही स्मरण रहे कि अंगरेज केवल अपने ही नहीं, दूसरों के पुरातन का प्रेमी भी है। मेरे अपने अंगरेज शिष्य और मित्र प्रातः उठकर भगवद्गीता और धम्मपद का पाठ करने, हाथ जोड़कर नमस्ते देने तथा उपनिषदों के प्रति भक्तिभाव रखने में भी उतने ही उत्साही हैं जितने कि बाइबिल पढ़ने और पवित्रक्रॉस के सामने सिर झुकाने में।

इंग्लैण्ड की इसी विशाल हृदयता का परिणाम है कि वहां रामकृष्ण मिशन, बौद्ध सोसाइटी, थियासाफिकल सोसाइटी। आर्यसमाज और हिन्दू एसोसिएशन जैसी संस्थाओं के अतिरिक्त कितने ही अन्य भारतीय प्रचारक सफलतापूर्वक कार्य कर रहे हैं। मैं वह क्षण कभी न भूलूंगा जब मैंने एक भाषण में बतलाया कि प्रत्येक भारतीय घर में गौ आदि पशुओं के लिये पृथक स्थान रखना और प्रातः उठकर अपने पारिवारिक सदस्यों की भांति पशुओं की सेवा करना भारतीय गृहस्थ का सांस्कृतिक कर्तव्य है, साथ ही बिना बुलाये मेहमान या अतिथि की सेवा भारतीय संस्कृति का एक अनिवार्य अंग है तो एक वृद्धा अंगरेज माता हाथ जोड़कर, गद्गद् हो रो पड़ी और बोली कि हम पश्चिम के लोगों को जो कुछ पूर्व से सीखना है वह मिल जाने पर धरती का हमारा भाग सचमुच स्वर्ग बन जायगा।

अपने प्रार्थना स्थानों, गिरजाघरों में दूसरे धर्मों के प्रतिनिधियों को बुलाकर उनके उपदेशों से अपनी ज्ञान पिपासा तृप्त करने की प्रवृत्ति को इंग्लैण्ड का सत्यप्रेम और साहस नहीं तो क्या कहा जाय? मेरा अनुभव है कि यहां के गिरजों में जब भारतीय संस्कृति पर भाषण होते हैं तो उपस्थिति सामान्य दिनों की अपेक्षा कहीं अधिक होती है। लन्दन में कोई सप्ताह ऐसा नहीं बीतता जब कि एक दो भाषण योगसिद्धान्त पर न होते हों। ऐसे भाषणों में प्रायः सारे भवन भरे रहते हैं। कई स्थानों पर मेरे श्रोताओं ने व्यक्ति के समाजीकरण की भारतीय आश्रम व्यवस्था के बारे में जानना चाहा है और सुझाव दिये हैं कि क्यों न इंग-लैण्ड में ही एक स्थायी आश्रम खोल दिया जाए? इंग्लैण्ड के विभिन्न नगरों में योगशिक्षण शिविर लगाने की मांग तो प्रायः आती ही रहती है।

भारतीय धर्म को सीधे तौर पर स्वीकार कर हवन यज्ञों में भाग लेने वालों के अतिरिक्त अनेक अन्य अंगरेज मित्रों में भी मैं एक वृत्ति बड़े वेग से बढ़ती हुई पाता हूं। वह है ईसाई धर्म और बाइबिल को, नए प्रतीत होने वाले भारतीय सिद्धान्तों के साथ समन्वित करने की प्रवृत्ति।

एक अंग्रेज की दृष्टि में आदि कालीन और मध्य-कालीन ईसाई सन्तों के वाक्यों में निश्चय ही वे सत्य स्पष्ट झलकते हैं जो उपनिषदों के, ऋषियों के उपदेशों में है। अंग्रेज यदि शंकर के प्रति श्रद्धा रखता है तो एकहार्ट का भी परित्याग नहीं करता। शाकाहार को अपनाता है तो उसके लिए बाईबिल का 'Thou shalt not kill' वाक्य प्रस्तुत करता है। और हां! वह अपने से पूछता है कि क्या सिनाई पर्वत से दिए गए ईसा के महान् उपदेश का वाक्य 'One reaps what he sows' तथा बाइबिल के एलि-जाह और सन्त जान की कहानी कर्म सिद्धान्त और पुनर्जन्म की पोषक नहीं है? इस प्रकार आज का अंग्रेज संस्कृति के अलग अलग भागों के माथे पर लगी हुई नाम सूची उतार कर सबको एक साथ विश्व-संस्कृति के रूप में स्वीकार करता है।

काश, कि समन्वय की यह वृत्ति इस धरती के हरेक भाग में रहने वाले मनुष्यों और धर्मावलम्बियों में आ जाए तो आज ही हमारा यह छोटा सा नक्षत्र उस वृद्धा माता के शब्दों में स्वर्ग बन जायगा। अंग्रेज के धर्म के अनुसार ईसा के वापिस लौटने या भारतीय धर्म के अनुसार सतयुग के आने में फिर कोई विलम्ब न होगा। —ब्र० उपबुध आर्य प्रचारक लंडन

गोरक्षा आन्दोलन

गुडगांवा के मेवों को बधाई

सार्वदेशिक गोरक्षा समिति के संयोजक

श्री ला० रामगोपाल जी का वक्तव्य

समाचार पत्रों से यह जानकर अत्यन्त हर्ष हुआ कि गुडगांवा जिले के लगभग ६००० मेव मुसलमानों ने नगीना में हुई अपनी एक सभा में गोवध बन्द करने का निश्चय किया है। इस निश्चय के लिये मेव लोग बधाई के पात्र हैं। आशा है कि ये भाई अपने निश्चय पर दृढ़ रहकर उसका ईमानदारी के साथ पालन करेंगे और अपने अन्य मुसलमान भाइयों के लिये उन्होंने जो अनुकरणीय उदाहरण पेश किया है उसके गौरव को नष्ट न होने देंगे। निश्चय ही यह पग हिन्दू मुस्लिम एकता की दिशा में ऐतिहासिक और महत्वपूर्ण है।

पंजाब राज्य सरकार का दावा था कि पंजाब प्रांत में सम्पूर्णतः गोवध बन्द है। मेवों की इस घोषणा से उसका दावा गलत सिद्ध होता है। हम पंजाब सरकार से बलपूर्वक मांग करते हैं कि वह अविलम्ब अपने गोवध निषेध सम्बन्धी अधूरे कानून के स्थान पर प्रभावशाली कानून बनाकर इस महत्वपूर्ण घोषणा को चरितार्थ करे अन्यथा इस घोषणा के भविष्य में भङ्ग हो जाने की आशंका बनी ही रहती है। अब यतः मेवों ने स्वयं गोवध बन्द करने की शपथ ली है अतः उसका मार्ग भी साफ है। आशा है पंजाब राज्य हिन्दू मुस्लिम एकता के इस महानतम् कार्य को सफल बनाने में कानून द्वारा अपना कर्तव्य पालन करेगी।

जिन मुस्लिम नेताओं के प्रयत्न और प्रेरणा से यह निश्चय हुआ है उन्हें तथा गुडगांवा के डिप्टी कमिश्नर महोदय को भी हम इस शुभ प्रयत्न के लिये बधाई देते हैं।

स्मरण रहे इसी सम्बन्ध में सार्वदेशिक सभा का एक शिष्टमंडल शीघ्र ही पंजाब के मुख्य मन्त्री से मिलने जा रहा है।

उत्तर प्रदेश सरकार के निर्णय का स्वागत

श्री पं० नरेन्द्र जी प्रधान आ० प्र० सभा हैद्राबाद

उत्तर प्रदेश की सरकार इस निर्णय पर धन्यवाद की पात्र है जिसने गो सम्वर्धन समिति के सुझावों को स्वीकार करके जनता की उचित मांग को पूरा किया है। गो संवर्धन समिति के सदस्यों में मुसलमान, सोशलिस्ट तथा ईसाई भी थे और इन सभी ने सर्वसम्मति द्वारा पूर्ण गो हत्या बन्द करने का सुझाव दिया था। मुसलमान सदस्यों में श्री नवाबसाहब छत्तारी जैसे सुयोग व्यक्ति भी सम्मिलित थे। इस आधार पर यह कहा जा सकता कि 'गो हत्या' की यह मांग हिन्दू मुसलमान तथा ईसाइयों की संयुक्त मांग है। उत्तर प्रदेश में मुसलमानों की संख्या हैदराबाद से भी अधिक है ऐसी स्थिति में हैदराबाद में विधेयक द्वारा गो हत्या रोकी जाय ताकि संविधान धारा ४८ को हैदराबाद में भी कार्यरूप दिया जाय।

एक वर्ष पूर्व मैंने इस सम्बन्ध में एक विधेयक निर्माण कर कांग्रेस विधान पार्टीके नेता श्री बी० राम कृष्णराव जी मुख्य मन्त्री की सेवा में भेजा था। परंतु दुःख है कि इतना लम्बा समय मिलने के बाद भी इस विधेयक पर विचार नहीं किया गया।

श्री जवाहरलाल जी नेहरू ने एक बार संसद में कहा था कि प्रांतीय सरकारें अपनी सुविधानुसार गो हत्या निषेध विधेयक बना सकती है। स्व० रफीअहमद किदवई भी गो हत्या निरोध के पक्ष में थे, और उन्होंने कहा था कि देश की बहु संख्यक जनता के विचारों तथा भावनाओं का आदर करते हुए गो हत्या पर पाबन्दी आवश्यक है। मुगल साम्राज्य काल में गो हत्या पर निरोध था और आज से तीस वर्ष पूर्व वर्तमान निजाम ने उल्लामादादीन मशायकीन इस्लाम से परामर्श प्राप्त करने के बाद रमजान के अवसर पर गोवध निषेध कर दी थी। भारतवर्ष एक कृषि प्रधान

ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन

मेरठ—

ईसाई मिशनरी अराष्ट्रीय निरोध समिति मेरठ, आर्यसमाज सदर, शहर, लाल कुर्ती, गाजियाबाद, हापुड़, बड़ौत आदि मेरठ जिले के समाजों के प्रतिनिधियों से निर्मित है। ६ जून ५४ से यह कार्य कर रही है।

८ मास में मेरठ जिले में १२४४, बुलन्दशहर में ५६०, मुजफ्फरनगर में ५५० और मध्यभारत में ६९० कुल ३१३४ ईसाइयों की शुद्धि हुई।

शुद्धिकार्य में स्वामी वेदानन्द सरस्वती का सबसे अधिक सहयोग रहा।

समिति की ओर से ईसाई मतान्धता, गोरे पादरियों की काली करतूत, क्राइस्ट वर्सेज क्रिश्चियनिटी, सन्त ईसामसीह व कुमारी मरियम आदि ६ ट्रैक्ट सहस्रों की संख्या में छपकर वितरित हुए। ६८१) की आय और ६२०) का व्यय हुआ।

उड़ीसा—

सुन्दरगढ़ (उत्कल) में श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी बड़ी लगन से ईसाई प्रचार निरोध का काम कर रहे हैं। इस समय तक १०१ शुद्धियां हो चुकी हैं। सार्वदेशिक सभा के व्यय पर वहां एक उपदेशक स्वामीजी की देखरेख में कार्य कर रहे हैं।

बिहार—

आर्यसमाज हजारी बाग के उत्सव के अवसर पर १७-२-५५को एक प्रतिष्ठित ईसाई परिवारकी शुद्धिहुई। परिवार में ३ व्यक्ति हैं। गृहपति नर हरिराव, गृहपत्नी श्रीमती बालकृष्णन् मां तथा पुत्र उमाकान्त राव।

देश है अतः केवल गो-बैल बछड़े ही नहीं अपितु समस्त दूध देने वाले पशुओं की हत्या बन्द होनी चाहिये और इसी उद्देश्य से संविधान में धारा ४८ सम्मिलित किया गया है।

इस पर भी इस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया।

मध्य प्रदेश सरकार ने गो हत्या निरोध को बहुत समय पूर्व ही विधेयक का रूप दे दिया है। बिहार प्रदेश सरकार भी इसी प्रकार के विधेयक को स्वीकार करने पर विचार कर रही है। भारत के सबसे बड़े प्रांत उत्तर प्रदेश सरकार ने गोहत्या निषेध का निर्णय कर लिया है। अतः ऐसी स्थिति में हैदराबाद सरकार को किसी से पीछे नहीं रहना चाहिये।

मैं आशा करता हूं कि हैदराबाद के मुख्य मन्त्री श्री बी० रामकृष्णराव जी तथा कांग्रेस विधान पार्टी के सदस्य समय के इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर ध्यान देंगे और १५ फरवरी ५५ से होने वाले विधान सभा के अधिवेशन में मेरे द्वारा प्रस्तुत विधेयक को पेश करने का अवसर प्रदान करेंगे ताकि जनता जनार्दन की इच्छा पूर्ति हो सके।

मुझे आशा है कि सोशलिस्ट पार्टी तथा विधान सभाई स्वतन्त्र सदस्य भी इस प्रकार के विधेयक का समर्थन करेंगे।

* वैदिक-धर्म प्रसार *

साधना शिविर

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के आयोजन पर आर्यसमाज कबाड़ी बाज़ार अम्बाला छावनी में १३ से २० जनवरी तक साधना शिविर लगा जिसमें प्रदेश के उपदेशकों ने भाग लिया। इसका उद्देश्य था प्रचार-कार्य में उपस्थित होने वाली बाधाओं के निराकरण प्रचार प्रसार के उपायों और साधनों पर एक जगह बैठकर विचार करना और अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक रहना। इस शिविर में पूज्य आनन्द स्वामी जी की अध्यक्षता में योग की शिक्षा का भी एक पुरोगम रखा गया था। प्रातः ६ से ७ तक प्रत्येक उपदेशक ध्यान में बैठता था। यह साधना भी सफल रही।

लखनऊ में ईसाई प्रचार निरोध सम्मेलन

गत १५ फरवरी को आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर-प्रदेश के तत्वावधान में लखनऊ नगर में एक बृहत् 'ईसाई प्रचार निरोध सम्मेलन हुआ जिसमें भारत सरकार से प्रबल मांग की गई कि वह ईसाई मिशनरियों के आपत्तिजनक प्रचार और हिन्दुओं के धर्म परिवर्तन को अवैध घोषित करे। विदेशी ईसाई मिशनरियों को भी प्रेरणा की गई कि वे अविलम्ब अपनी कुटिल नीति का परिवर्तन करें अथवा भारत छोड़कर चले जायं।

श्री कुंवर चान्दकरण जी शारदा वानप्रस्थाश्रम में दीक्षित

बसंत पंचमी के दिन श्री कुंवर चान्दकरण जी शारदा ने वानप्रस्थाश्रम की दीक्षा ली। उनका नाम चन्द्रानन्द वैदिक परिव्राजक रखा गया।

अकालियों के आर्यसमाज विरोधी भाषणों की निन्दा

आर्य समाज लछमणसर अमृतसर के साप्ताहिक अधिवेशन में रविवार ३०-१-५५ को सर्व सम्मति से शिरोमणि अकाली दलके जनरल अधिवेशनमें स्वीकृत प्रस्तावों के विरुद्ध प्रटैस्ट (विरोध) किया गया तथा भारत और पंजाब सरकार का ध्यान इनकी ओर आकर्षित कराया गया, जिनमें पंजाबी सूबों की निन्दनीय और साम्प्रदायिक मांग अत्यन्त धमकी भरे शब्दों में करते हुवे अकाली वक्ताओं ने आर्यसमाज के सम्बन्ध में असभ्य और अश्लील शब्दों का प्रयोग किया और दूसरे प्रस्ताव में ईसाई मिशनरियों की गद्दाराना सरगर्मियों की शठतापूर्ण हमायत की गयी अन्यत्र उन पर सरकारी तौर पर पाबन्दी लगाने की निन्दा करते हुवे अपनी दूषित वृत्ति का परिचय दिया। इस पर की गयी वक्तृताओं में भी हिन्दुओं एवं आर्यसमाज के विरुद्ध अकारण उत्तेजना जनक और विषैले शब्द प्रयुक्त किये गये।

आर्यसमाज की ओर से सरकार को इन शान्ति भंग करने वाली अकाली सरगर्मियों की ओर तुरन्त ध्यान देने की प्रेरणा की गयी तथा सिख जनता को पिछले इतिहास को दृष्टि में रखते हुए स्वार्थी नेताओं से सावधान रहने की अपील की गयी।

परम अध्यात्म तत्व परमात्मा के दर्शन—परमात्मा के संयम, सत्य, न्याय, दया, पवित्रता आदि आध्यात्मिक गुणों को धारण करके—उन जैसा आध्यात्मिक बनने से हो सकते हैं। —वेद वाणी

धर्म्मार्य सभा

सार्वदेशिक धर्म्मार्य सभा ने आर्य समाजों में अत्यन्त लोकप्रिय 'यज्ञ रूप प्रभो हमारे भाव उज्ज्वल कीजिए' नामक प्रार्थना भजन को संशोधित किया है। संशोधित भजन इस प्रकार है:—

* प्रभु-प्रार्थना *

पूजनीय प्रभो हमारे भाव उज्ज्वल कीजिए।
छोड़ देवें छल कपट को मानसिक बल दीजिए ॥१॥
वेद की बोलें ऋचाएं, सत्य को धारण करें।
हर्ष में हों मग्न सारे, शोक सागर से तरें ॥२॥
अश्व मेधादि रचायें, यज्ञ पर उपकार को।
धर्म्म मर्य्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को ॥३॥
नित्य श्रद्धा भक्ति से, यज्ञादि हम करते रहें।
रोग पीड़ित विश्व के, सन्ताप सब हरते रहें ॥४॥
कामना मिट जाय मन से, पाप अत्याचार की।
भावनाएं पूर्ण होवें, यज्ञ से नर नार की ॥५॥
लाभकारी हों हवन, हर जीवधारी के लिए।
वायु जल सर्वत्र हों शुभ, गन्ध को धारण किए ॥६॥
स्वार्थ-भाव मिटे हमारा, प्रेम-पथ विस्तार हो।
'इदन्न मम' का सार्थक, प्रत्येक में व्यवहार हो ॥७॥
हाथ जोड़ झुकाय मस्तक, बंदना हम कर रहे।
नाथ करुणा रूप करुणा, आपकी सब पर रहे ॥८॥

* चयनिका *

वीर इन्जीनियर श्रद्धानन्द

श्रीयुत प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय 'आर्य' में वीर इंजीनियर 'श्रद्धानन्द' शीर्षक लेख में महान और साधारण जनों में भेद बतलाते हुए लिखते हैं कि 'महान व्यक्ति जंगम और साधारण व्यक्ति स्थावर होते हैं। स्थावरत्व जीव शून्य का चिन्ह है। हां स्थावर वस्तुएं जब जंगमों के संसर्ग में आती हैं तो उन की जड़ता लुप्त होकर वे जंगम जैसा व्यवहार करने लगती हैं"

स्वामी श्रद्धानन्द जी महान् थे। वे स्थावर न थे। यही कारण था कि 'उन्होंने निर्जीव भारत में और विशेषकर चेतनलुप्त आर्यसमाज में वह फूक भरी कि आर्यसमाज आजकल भी जीवित जैसा दृष्टिगोचर होता है।'

पुरानी संस्थाओं की शिथिलता के अनेक कारण हो सकते हैं परन्तु एक मुख्य कारण यह है कि संसार अपने पूर्वजों के स्मरण दिन मनाता है परन्तु उनको स्थावर समझकर न कि जंगम। उनको जीवित मानकर उनसे प्रेरणा ग्रहण नहीं करता। उनका गुणगान करने से क्या लाभ जब तक उनके गुणों को जीवन में धारण करके न दिखाया जाय।

आर्यसमाज भी इस अंध गुणगान से शून्य नहीं है। इस विषय पर प्रकाश डालते हुए श्रीयुत उपाध्याय जी लिखते हैं :—

"हम आर्यसमाजी भी ऐसा ही करते हैं और शायद सैकड़ों वर्ष तक ऐसा ही करते आयेंगे। परन्तु इससे क्या हममें जंगमत्व बढ़ेगा या हम स्थावर होते जायेंगे।"

श्री पं० जी बड़े आदमियों और साधारण जनता के भेद को और अधिक सुस्पष्ट करते हुए बड़े आदमी की तुलना इंजीनियर से करते हैं जो अपनी बुद्धि और परिश्रम से, परिस्थिति की जांच करके झाड़-झंकाड़ से परिष्कृत करके साफ सड़क बनाता है और साधारण आदमी उस सड़क पर चलता है।

यदि सड़क टूट जाय तो वह (साधारण आदमी) उसे बना नहीं सकता। परिस्थिति बड़े आदमी के वश में होती है साधारण जन परिस्थिति के वश में होता है।

आर्यसमाज के प्रवर्त्तक तथा स्वामी श्रद्धानन्द सरीखे इंजीनियरों में यह विशेषता थी कि वे दिव्य दृष्टि पुरुष थे। वे नया मार्ग खोज सकते थे। शिक्षा का प्रश्न हो या नीति का। समाज का प्रश्न हो या शुद्धि का, राजनैतिक क्षेत्र हो या शुद्ध धार्मिक। आर्यसमाज में इस विशेषता का ह्रास होने का ही यह फल है कि—

"हम स्थावर होते जा रहे हैं। आर्य समाज की संस्थाएं, आर्यसमाज के अधिवेशन, आर्यसमाज के संस्कार, आर्यसमाज की प्रगति और सबसे अन्तिम आर्यसमाज के नेताओं की मनोवृत्ति इन सबसे स्थावरत्व टपकता है। यही विशेष कारण है कि आर्यसमाज को अपने परिश्रम के अनुसार प्रतिफल नहीं मिलता।"

हमारा राष्ट्र आज भी दुःखी क्यों ?

भारतवर्ष में अपना शासन स्थापित हुए ७ वर्ष हो गए हैं फिर भी साधारण जनता में स्वतन्त्रता का आनन्द और उसका प्रकाश अनुभव नहीं होता। अब भी वस्त्र, अन्न और मकान न सस्ते हैं और न सुलभ। जनता का जान माल पहले से अधिक अरक्षित है। देश में चोरियों, डकैतियों, हत्याओं और अन्य सामाजिक अपराधों की संख्या में वृद्धि हो रही है। सरकारी दफ्तरों में रिश्वत की मात्रा में कमी नहीं आई। इस-

का कारण है चरित्र की कमी। चरित्र की महत्ता और हमारे देश में इसकी कमी के कारणों पर प्रकाश डालते हुए श्रीयुत पं० इन्द्र विद्या वाचस्पति उपर्युक्त शीर्षक के लेख मे 'आर्य्य' में लिखते हैं :—

केवल शासन पद्धति के रूप पर प्रजा का सुख आश्रित नहीं है। प्रजा के सुखी होने के लिए यह भी आवश्यक है कि शासन करने वाला व्यक्ति या व्यक्ति समूह का मुख्य लक्ष्य लोकहित हो आत्महित न हो। वे शासन का उद्देश्य प्रजा की भलाई समझें अपनी भलाई नहीं। यह तभी सम्भव है जब शासकों का दृष्टिकोण विशुद्ध हो और उनका चरित्र सम्बन्धी सामान्य स्तर ऊंचा हो।

प्रजा के सुखी होने के लिए केवल शासकों के चरित्र स्तर का ऊंचा होना ही पर्याप्त नहीं, जनता के चरित्र का स्तर भी ऊंचा होना चाहिए। अच्छा और सुखदायी शासन अच्छे राष्ट्र में ही हो सकता है और अच्छा राष्ट्र वही कहला सकता है जिसमें शासक और शास्य दोनों चरित्रवान् हों।

राष्ट्रों के इतिहास में जिन्हें स्वर्ण युग या 'गोल्डन एज' कहा जाता है वह प्रायः एक सत्तात्मक शासकों के युग में हुए हैं। भारत में विक्रमादित्य का, रोम में आगस्टस सीजर का, इंग्लैंड में महारानी एलिजबेथ का शासन समृद्धि और चौमुखी उन्नति के लिए विख्यात है। उन समयों का इतिहास और साहित्य इस बात का साक्षी है कि उनमें प्रजा असाधारण रूप से सन्तुष्ट थी, भरपेट भोजन करती थी, सांस्कृतिक उन्नति के लिए अवकाश पाती थी और प्रायः सभी दिशाओं में आगे बढ़ने का यत्न करती थी।

यह ठीक है कि ऐसे एक सत्तात्मक राज्यों के अनेक दृष्टान्त भी हैं जिनमें प्रजा दुःखी थी और राज्य अत्याचारपूर्ण थे। परन्तु ऐसा वहीं पर हुआ जहां शासक या शासक के सहायक स्वार्थी, चरित्रहीन और अत्याचारी थे।

प्रजातंत्र राज्यों में शासक वर्ग तथा शास्यवर्ग के चरित्र हीन होने की दशा में प्रजातंत्र शासन न केवल एक सत्तात्मक शासनों के समान बुरे होते हैं वे उनसे कहीं बढ़कर दुःखदायी, क्रूर और अन्यायपूर्ण भी होते है। फ्रांस की राज्यक्रान्ति के वे वर्ष जिन्हें हम वस्तुतः वर्तमान यूरोप में गणतंत्र का श्रीगणेश कह सकते हैं जितने रक्तरंजित और क्रूरतापूर्ण हैं शायद ही इतिहास में कोई अन्य हों।

आज हमारे देश मे नेताओं के सामने जो समस्या उपस्थित है उसे हल करने का यत्न करते हुए यदि शासन पद्धति को ही सर्वोत्कृष्ट साधन और सब रोगों की दवा मान लेंगे तो हम धोखे में आजायेंगे। हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि केवल संविधान का शरीर राष्ट्रों का उद्धार नहीं कर सकता। उद्धार करने के लिए संविधान की आत्मा का जाग्रत होना आवश्यक है और यह आत्मा ही राष्ट्र का चरित्र है। स्वराज्य मिल जाने पर हमारे कष्ट समाप्त होने में नहीं आते और जहां सुनो वहीं शिकायतें सुनाई देती हैं। उसका मुख्य कारण यह है कि हम एक ऐसे प्रश्न को जो मुख्य रूप से मानसिक है, केवल भौतिक समझकर हल करना चाहते हैं।

दान-सूची

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

(२३-१२-५४ से २२-२-५५ तक)

दान आर्यसमाज स्थापना दिवस

१२) श्री विद्याभूषण जी वैद्य हिवरखेड़ रूपराव

१२) योग

१०३२॥- गत योग

१०४४॥-) सर्व योग

विविध दान

२५) श्री चन्द्रमणि मोतीलाल बड़ोदा

२००) ,, सेठ बिहारीलाल बलदेवा
चटी गली शोलापुर

२२५) योग

१७४३॥) गत योग

२२६८॥ सर्व योग

दान आर्य संस्कृति रक्षा निधि

५०) श्री शिवप्रसाद जी लोको एन आर कानपुर

१०१) ,, रणजीतसिंह जी शास्त्री, आर्य समाज
जयपुर

१५१) योग

३३५२।-) गत योग

३५०३ -) सर्व योग

दान शुद्धि प्रचार

२६) आ० समाज जमालपुर जि० मुंगेर

२५) ,, किंग्जवे कैम्प देहली

१०) श्री ज्ञानेन्द्रनाथ जी वैश्य फतेहपुर

२५) आ० समाज फलावदा

५) ... ...

१०) ,, टांडा अफजल जि० मुरादाबाद

१००) ,, बीकानेर

२५ श्री अजलाल जी C/o आर्यसमाज कैथल

१० आ० समाज ज्वालापुर सहारनपुर

५०) ,, टांडा जि० फैजाबाद

२८६) योग

७६) गत योग

३६२) सर्व योग

दान गोरक्षा आन्दोलन

५०) मा० पोहकरमल जी उपदेशक

७०० श्री स्वामी आनन्दभिक्षु जी

२५) आ० समाज फलावदा

१५) ,, गंज मुरादाबाद

११) ,, रहमतगंज पो० ममवानी
जि० रामपुर

५) आ० समाज सुल्तानपुर जि० नैनीताल

१५) ,, काशीपुर ,,

२४०) श्री स्वा० आनन्द भिक्षु जी

१००) ,, ,, ,,

४) ,, हनुमतराव पाटिल औराद

१०) ,, हनुमंतराव गायकवाड़ ,,

साहित्य-समीक्षा

नैतिक जीवन

(ले०—श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक)

प्रकाशक—सन्मार्ग प्रकाशन, लाजपतराय मार्केट, देहली

मूल्य २॥) पृष्ठ १५०

श्रीयुत पं० इन्द्र विद्या वाचस्पति की भूमिका

जिन ग्रन्थों में प्रमाणों और युक्तियों द्वारा सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जाता है वह मनुष्यों की बुद्धि को विशुद्ध करने के लिये बहुत आवश्यक हैं परन्तु इनसे हृदय की आध्यात्मिक पिपासा शान्त नहीं होती। स्वाध्याय के लिए ऐसी पुस्तकों की भी आवश्यकता है जो मनुष्य को सुबोध-भाषा में जीवनी प्रयोगी बातें बताकर उसकी उन्नति में सहायता दें। यह हर्ष की बात है कि वर्षों से आर्य लेखकों का ध्यान इस प्रकार के उपयोगी साहित्य के निर्माण की ओर गया है। श्री रघुनाथप्रसाद पाठक ने 'नैतिक जीवन' लिखकर स्वाध्याय का एक सरल साधन उपस्थित कर दिया है। मनुष्य के धार्मिक और नैतिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाले प्रायः सभी विषयों का सरल विवेचन किया गया है। पाठक जी का प्रयत्न प्रशंसनीय है।

नोट—यह पुस्तक सार्वदेशिक सभा के पुस्तक भंडार से भी मिल सकती हैं।

चुटकुले

- वैदिक संस्कृति जीवन को ऊंचा और समृद्धिशाली बनाने वाले तत्वों का उपदेश देती है।
- वैदिक संस्कृति मनुष्य को पवित्र, पुरुषार्थी, वीर और बलवान बनाती है।
- दूसरों का भला करने के लिए स्वयं भले बनो।

---

४०) ,, मा० पोहकरमल जी

७७॥) ,, स्वा० आनन्द भिक्षु जी

५) आ० समाज खानखाना जि० जालन्धर

४००) बृहद् सौराष्ट्र प्रादेशिक सभा भावनगर

५) आर्य समाज नगीना जि० गुड़गांव

५) ,, साकरस ,,

२७) श्री प्रो० रामसिंह जी एम० ए०

(सुपुत्र के विवाहोपलक्ष में)

२५) ,, राम स्वरूप जी उपदेशक

२४१॥=) श्री स्वा० आनन्दभिक्षु जी

५) आर्यसमाज गोण्डा

२२०६।=) योग

१४५०२।=) गत योग

१६७०८॥।) सर्व योग

दान दाताओं को धन्यवाद !

कविराज हरनामदास बी० ए०

सभा मन्त्री

Shri Chandra interviewed a foreign scholar.

Dr. Jacques de Marquette, M.A. Ph.D., D.Litt., Former Professor of Philosophy of California University. Vice-president of European Vegetarian Society and President of Human Family Association who is on tour of India Visited Delhi. The object of his tour was to make a comparative study of the various religions of the world and to write a book on them.

Shri. S. Chandra, Former Assistant Secretary of the International Aryan League had an interview lasting for more than three hours with Dr. Marquette. In the course of the long interview, Shri Chandra explained to Dr. Marquette at length why the Knowledge of Veda was essential to be revealed in the beginning of the creation for the guidance of the entire humanity for all ages, and that the Veda did not deal with the historical and geographical descriptions as some scholars thought; but it rather dealt with the eternal, universal and cosmopolitan truths, science and super-science and code of righteous life beginning from worldly prosperity leading to and ending in final beatitude (spiritual bliss).

Dr. Marquette asked Mr. Chandra that what reply he had to the claim of other religions that they also were revealed and contained eternal, universal and cosmopolitan truths and that all the religions possessed fundamental unity. Shri Chandra replied that as God was Omniscient and was the Creator and Ruler of the entire universe, His Laws for the guidance of the entire humanity ought to have been revealed only in the very beginning of every creation in a cycle order, which were unchangeable, unlike the laws formulated by human-beings which were liable to undergo a change from time to time according to the exigency of the time. Therefore, the Laws of God were never revealed from time to time as claimed by various other religions which were of very late origin. Quoting the entirely different fundamental principles of the various religions, Mr. Chandra further explained that it was wrong to say that there was fundamental unity underlying all religions. After the unbiased search of fundamental unity, all other religions, except the primordial one which could not be but Vedic Religion, will tumble down.

It is not essential that the Editors agree with Shri Chandra in toto.

Editor.

Mr. Chandra also explained that since the beginning of the creation till the time of Mahabharta period, i. e. till five thousand years back, only the Vedic Religion was prevalent all over the world. It was only after the decay of Vedic Religion that religions of Zoroastrianism, Judaism, Buddhism, Hinduism with all its excrescences (as it is prevalent), Christianity and Islam spread, one after the other, with different and conflicting fundamentals as their basis, creating disintegration in the name of religion in the one vast family of human society. It was in the last century that Maharshi Swami Dayanand Sarswati appeared and raised the clarion call of "Back to the Veda" with a view to re-ennoble and re unite the entire humanity, and to achieve this great and grand object, he founded the institution of Aryasamaj.

Dr. Marquette further desired to know the significance of the words- "Arya", "Hindu", "Bharat" and "Aryavarta". Shri Chandra explained to him that "Arya" meant son of God, noble, righteous, man of lofty character and progressive. The word "Arya" is abundantly found not only in the Vedic scriptures and ancient literature but also in Buddhist and Zoroastrian literature. The word "Hindu" is not indigenous and is nowhere traceable in ancient literature. It was a persian word bearing very obscene meanings. It was given by foreigners and adopted by our people on account of their foolishness and ignorance. Our people are still foolishly clinging to this non-sensical word. "Bharat" was only a historical name given to the country by king Dushyanta after the name of his young son "Bharat" on account of his chivalrously playing with the lions in the forest. "Aryavarta" meaning the land of the noble and righteous people was the name of this country ever since the creation of the universe.

Apprising Dr. Marquette about the work done by Maharshi Swami Dayanand Sarswati, Shri Chandra emphasized that all the present reforms that affected and marked the country's progress were first of all started by the Great Maharshi. He suggested Dr. Marquette to study particularly the writings of Romain Rolland and Yogi Aurobindo on Maharshi Dayanand, which he would present to him along with other Aryasamaj literature when both would meet again in the month of February.

Dr Marquette was also eager to know about the political and social conditions of India after the time of freedom. Shri Chandra also gave him a vivid description regarding those conditions.

Dr. Marquette felt very much impressed and benefitted by all these informations and expressed a keen desire to know more and more in the future about the Vedic Religion, Maharshi Swami Dayanand Saraswati and Aryasamaj.

A Sketchy Survey of the Five Great Yajnas of the Ancient Aryas.

By Prof. Vindhyavasini Prasad Anugami,
P. O. Bhusawar, Distt. Bh*aratpur. (Rajasthan State)*

Appreciation and hard work are the keynotes and keystones of all living beings upon this earth of ours. Non-thinking animals or brutes take interest only in palatable food. and always look to it for their appreciative gratification. Contrariwise, thinking animals or men called Manushya (i.e. the beings that think) turn mostly towards non-material food to satisfy their appreciative cravings. It may take the shape of indulging in book reading, earthly charities, teaching. rearing of children, their own, or those of the society and such others sources of appreciable activities. The brute's desires are usually egostic, centripetal, and thus unconcerned with society, while those of men, by nature, are destined to be mostly altruistic, or progressively altruistic.

Altruism, without society, or some one other than one's own self, and in the absence of a burning desire to be delighted in cheering others carries no sense, meaning or purpose. The more one is altruistic and more his psychological level is raised, and more or less, he becomes unmindful of the cares and worries of this world of living, being thus nearer to the supreme, and is thus cheered up by Him. Mahatma Gandhi, when he took to the memorable fast, for the cause of the untouchables, felt actually cheered up by the power unseen, and was the subject of surprise for the modern medical man.

This type of altruism is called Yajna by the Rishi's, one who practises yajna and one who makes others imbibe and be surcharged with the spirit of Yajna, and tries to make it a part of their being is called Yajaka. To be Yajman means also to appreciate and wholly admire the supreme, the highest appreciable existence and it is incombent on him to put Him in the relativity of human appreciation ast he supermost. The thinking citizens of a free nation, while enjoying their freedom, are ever ready to convert that freedom into self-obnegation for the symbol

of that liberty the King or the President and thus fulfil their appreciative mission of life. So is the relation of the individual man or woman in this cosmic world with "OM" as the symbol of the fullest admiration. To appreciate means also to work hard. and regulate one's activities in accordance with the wishes of the appreciable, "OM" being the best appreciable and loveable. Our love for HIM naturally demands the great sacrifice. material and non-material and thus the lover or the devotee fulfils his mission of love.

This love is to be canalised in the form of five great Yajnas or Panchmahayajnas, as they are termed by Manu the first law G ver of the world. They are Brahma Yajna, Devayajna, Pitriyajna, Bhutayajna, and Nriyajna, The daily performance of Brahma Yajna trains us to be in tune with the Infinite, and thus be of Him, and also enjoins us to recite and study His law and injunctions, i. e. the four Vedas, Rik, Yaju, Sama and Atharva, and be conversant with the legal acts of the sovereign Ruler of the universe. The well-known maxim 'Ignorance of law is no plea' makes the study of the Vedas, binding upon all men and women, aspiring to be uplifted and so the emphasis of the Rishis upon Swadhyaya or the study of the Vedas.

Catching this thread of injunctions of the Rishis of Yore, Dayanand envalued their importance as they deserved, dived deep into their mysticisus, intellectually and intutively and realised that the Vedas are in reality the moorings of life, and the eye openers of the glory, injunctions of God and His creation to man, and so fortified and equipped, he could declare at death-bed "Let Thy will be done".

The devotee of God is also duty bound to transmit the Vedic lore, thus acquired to the deserving aspirants. Thus complete the three ways of Brahma Yajna, i. e., the Sandhya, intutional communion with God, Vedadyayan (the study of Vedas) and Vedadhyapan (the teaching of Vedas).

The performance of Devayajna is nothing else than to tone up the atmospheric forces with the materials composed mainly of sugar, antiseptics, nutrients and the odorierous burnt suitably and with due rites, twice dailyin fire. Such a performance of Devayajna or Homayajna as it is popularly called, and the atmosphere thus toned up and purified with the efficacy of the burnt up four kinds of materials and surcharged with the sounds of Vedic

mantras chanted by the well-minded Yajman and Yajaka, reacts upon our mind, body and intellect, strengthens and refines them. The rains poured down from the clouds permeated with the gaseous particles of these burnt up ingredients, are also much superior in quality than the usual showers, and have much to do with the improved condition of the plants, their seeds and fruits, and thus to prove the right nourishing food to rightly build up our body, mind and intellect.

Now the importance of Pitriyajnas. All living beings, comprising us humans, are subject to hardships and prosperities, peace and unrest at times. Man as differentiated from the other species is peculiarly a social animal, and desires to deal and be dealt with, always as a member of the society, and not in an isolated manner. He ever desires to love and be loved, entertain and be entertained in a systematised way, and his weal and woe shared by the sobiety fabric, and specially by those who feel a near and dear kindship to him. All this is to be mainly performed for subjective interest and by the process of reciprocation.

Pitriyajna, i. e. the offering of our love and regard with due rites and sacrifices to the loved ones, serves beautifully this much needed purpose. While removing the angularities of our happ'ness and misery, it widens the responsibilities of the humanity at large individually and collectively and negatives the necessity of many such imposed laws in the cause of the welfare of the society as are enacted to-day now and then. So from the point of the subjective happiness arising there from, as also from its objective utility to the nation, it deserves our serious consideration, and demands implementing from the thougtful people atleast individual and collective interest.

The next in order of succession, to make us more selfless, and be allied with our supreme and overpowering Ruler is the Bhutayajna. It is simply the affording of food, in a systematic, loving and disciplined way to the living beings, who had a life of physical or moral degradation, and have reason to depend upon us for their part nourishment. This Yajna simplifies our heart, broadens our feelings, purifies our intellect, in as mnch as, it capacitates us to understand that self-interest and other's interest are inter-woven, intertwined, and can never be set apart, if a philosophic

view of it may be taken, and thus it removes all barriers, between man and man, and man and other members of this universe. In other words, it proves, that self-interest and other's interests are identical.

The fifth Yajna or the Nriyajna, or the entertainment of Nara (the super human) or the sannyasi, is the aliminating demand upon our love for the supreme. A Sannyasi is the purest symbol of "OM", the supreme Bliss, engaged in physical from, and is the ruler of rulers without portfolios. His surperising acumen, powerful intellect, and ultra-righteousness being usually overpowering in character, are the most valuable assets of a nation, or the humanity at large, in causing the corporate humen mechines to run intelligently, justly, adjustingly, cooperatively, and in a perfectly non rebellious, and non-exploiting spirit, This sannyasi, the renounced being, the nearest and dearest to Him, towers over all, and our entertaining duty to him is, consequentially, the greatest, the most self-offering and the most refined. Binova Bhave, the living saint, though not a Rishi. can be cited as an example, in a way, approaching the ideal.

This is the short delineation of the five Great Yajnas, based upon the original thoughts of the Vedas, crystallised by Manu, and recast by Rishi Dayanand in his aletrated book "Panchmahayajna vidhi". It will surely afford a glimpse of the initial vedic approach towards the attainment and fulfilment of the aspired bliss, the actual goal of life and the discharging of the most sublime, and the most willing-hearted duties of the cosmic man, as he is meant or desired to be, in actively feeling to keep his relations intact with God, the atmosphere, the kiths and kins the animated beings and the superhuman members of the society.

All the Concerns of life are dependent on the order of house holders. If this order did not exist, human views would not be propagated and Consequently the orders of Brahmacharya Yanprastha, and Sanyas could not be called into existence.

Dayanand

अपूर्व भेंट
वाल्मीकि रामायण
रामायण रू० १२)
सचित्र वाल्मीकि रामायण
संपादक—श्री पं० प्रेमचन्द शास्त्री (महाविद्यालय ज्वालापुर)
भूमिका लेखक—श्री पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय प्रयाग।
आर्य संस्कृति का प्रतिनिधित्व करने वाले वाल्मीकि रामायण का पाठ तथा कथा-वार्ता करने और बाल, वृद्ध, स्त्री, पुरुष, गृहस्थ, ब्रह्मचारी सबके लिये शिक्षाप्रद है। यह संस्करण धारावाही हिन्दी व मूल संस्कृत में होने से सबके लिए उपयोगी है। तीन रंगे व एक रंगे बड़े साइज के बारह चित्र बढ़िया कागज व छपाई तथा आकर्षक सुन्दर जिल्द सहित मूल्य १२) इस समय डाक खर्च सहित केवल ६) में मिलेगी। साथ में वेद प्रकाश मासिक पत्र १ वर्ष तक बिना मूल्य मिलेगी। कोई घर व समाज वंचित न रहें। शीघ्र मंगावें। पुस्तकें मिलने का पता—
गोविन्दराम हासानन्द
प्रकाशक व पुस्तक विक्रेता, नई सड़क, दिल्ली ६.

प्रोफेसर सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार लिखित अद्वितीय दो ग्रन्थ

धारावाही हिन्दी में सचित्र

[१] एकादशोपनिषत्

[मूल-सहित]

भूमिका ले०--श्री डा० राधाकृष्णन्, उप-राष्ट्रपति

पुस्तक की विशेषताएं

१—इसमें ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक, श्वेताश्वतर—इन ग्यारहों उपनिषदों को सुन्दर, सरल, धारावाही हिन्दी में इस प्रकार दिया गया है कि हरेक व्यक्ति आसानी से सब कुछ समझ जाय।

२—पुस्तक धारावाही हिन्दी में लिखी गई है इस लिए 'सत्यार्थप्रकाश' की तरह इसकी साप्ताहिक सत्संगो में कथा हो सकती है। हिन्दी साहित्य में पहली बार इस प्रकार का ग्रन्थ प्रकाशित हुआ।

३—इस ग्रन्थ में पचास के लगभग सुन्दर चित्र दिये हैं।

४—कोई विषय ऐसा नहीं है जिसे इसमें खूब खोल कर नहीं समझाया गया।

५—हिन्दी जानने वाले सिर्फ हिन्दी पढ़ते चले जायं, संस्कृत जानने वाले हिन्दी के साथ मूल संस्कृत की तुलना करते जायं—दोनों के लिये ग्रन्थ एक समान उपयोगी है।

६—सत्संगों के लिए, पुस्तकालयों के लिए, निजी संग्रह के लिए, इनाम देने के लिये, भेंट के लिए इससे बढ़कर दूसरा ग्रन्थ नहीं।

७—पृष्ठ संख्या डिमाई साईज के ६५० पृष्ठ हैं, बढ़िया कपड़े की जिल्द है, जिल्द पर चार रंगों का याज्ञवल्क्य और मैत्रेयी का आर्ट पेपर पर छपा चित्र है, चांदी के अक्षरों में पुस्तक का नाम छपा है, मोनो टाइप है, फिर भी दाम सिर्फ बारह रुपया है। पुस्तक की भूमिका डा० राधाकृष्णन् ने लिखी है, इसी से इसकी उपयोगिता स्पष्ट है। आज ही मंगाइये।

आर्य-संस्कृति पर सर्वोत्कृष्ट पुस्तक

[२] आर्य-संस्कृति के मूल-तत्व

कुछ सम्मतियों का सार

१—'आर्य' लिखता है—"आर्य-समाज के क्षेत्र में ठोस साहित्य की कमी कही जाती है। प्रो० सत्यव्रत जी का 'आर्य संस्कृति के मूल तत्व' एक ऐसा उच्च-कोटि का ग्रन्थ है जिसे आर्य-समाज का ठोस साहित्य कहा जा सकता है। इस ग्रन्थ के विषय में निस्संकोच कहा जा सकता है कि ज्यों-ज्यों समय बीतता जायगा त्यों-त्यों इसका स्थान आर्य समाज के साहित्य में बढ़ता जायगा।"

२—'दैनिक-हिन्दुस्तान' लिखता है—"हम तो यहां तक कहने का साहस रखते हैं कि भारत से बाहर जाने वाले सांस्कृतिक मिशन के प्रत्येक सदस्य को इस पुस्तक का अवलोकन अवश्य करना चाहिये। लेखक की विचार-शैली, प्रतिपादन शक्ति विषय-प्रवेश की सूक्ष्मता डा० राधाकृष्णन् से टक्कर लेती है।"

३—'नव-भारत टाइम्स' लिखता है—"लेखक ने आर्य-संस्कृति के अथाह समुद्र में बैठकर उसका मन्थन करके उसमें छिपे रत्नों को बाहर लाकर रख दिया है। भाषा इतनी परिमार्जित है कि पढ़ते ही बनती है। इस ग्रन्थ को अगर आर्य-संस्कृति का दर्शन-शास्त्र कहा जाय तो कोई अत्युक्ति न होगी। हिन्दी के संस्कृति-सम्बन्धी साहित्य में इस ग्रन्थ का स्थान अमर रहने वाला है।"

आर्यमित्र, सार्वदेशिक, आर्य-मार्तण्ड, विश्व-दर्शन, सरस्वती, आज, आदि सभी पत्रों ने इस पुस्तक को आर्य-संस्कृति पर सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ घोषित किया है। जो लोग "एकादशोपनिषत्" खरीदें उन्हें यह ग्रन्थ भी अवश्य लेना चाहिये, क्योंकि यह ग्रंथ उपनिषद् की गुत्थियों को एक दम सुलझा देता है।

पृष्ठ संख्या २७०, सजिल्द, दाम चार रुपया।

उक्त दोनों पुस्तकों के मिलने का पता—

विजयकृष्ण लखनपाल, विद्या-विहार, बलबीर ऐवेन्यू, देहरादून

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार

के

कतिपय उत्तम ग्रन्थ

भजन भास्कर मूल्य १।।।)

तृतीय संस्करण

यह संग्रह मथुरा शताब्दी के अवसर पर सभा द्वारा तय्यार कराके प्रकाशित कराया गया था। इस में प्रायः प्रत्येक अवसर पर गाए जाने योग्य उत्तम और सात्विक भजनों का संग्रह किया गया है।

संग्रहकर्त्ता श्री पं० हरिशंकर जी शर्मा कविरत्न भूतपूर्व सम्पादक 'आर्य मित्र' हैं।

स्त्रियों का वेदाध्ययन का अधिकार मूल्य १।)

लेखक—श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति

इस ग्रन्थ में उन आपत्तियों का वेदादि शास्त्रों के प्रमाणों के आधार पर खंडन किया गया है जो स्त्रियों के वेदाध्ययन के अधिकार के विरुद्ध उठाई जाती है।

आर्य पर्व्व पद्धति मूल्य १।)

तृतीय संस्करण

लेखक—श्री स्व० पं० भवानी प्रसाद जी

इस में आर्यसमाज के क्षेत्र में मनाए जाने वाले स्वीकृत पर्व्वों की विधि और प्रत्येक पर्व्व के परिचय रूप में निबन्ध दिए गए हैं।

दयानन्द-दिग्दर्शन

(लेखक—श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी)

दयानन्द के जीवन की ढाई सौ से ऊपर घटनाएं और कार्य वैयक्तिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, वेद प्रचार आदि १० प्रकरणों में क्रमबद्ध हैं। २४ भारतीय और पाश्चात्य नेताओं एवं विद्वानों की सम्मतियां हैं। दयानन्द क्या थे और क्या उनसे सीख सकते हैं यह जानने के लिये अनूठी पुस्तक है। छात्र, छात्राओं को पुरस्कार में देने योग्य है। कागज़ छपाई बहुत बढ़िया पृष्ठ संख्या ८४ मूल्य ।।।)

वेदान्त दर्शनम् मू० ३)

(श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी)

यम पितृ परिचय मूल्य २)

अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र ,, २)

वैदिक ज्योतिष शास्त्र ,, १।।)

(ले० पं० प्रियरत्न जी आर्ष)

स्वराज्य दर्शन मू० १)

(ले० पं० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित)

आर्य समाज के महाधन मू० २।।)

(ले० स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी)

दयानन्द सिद्धान्त भास्कर मू० २)

(ले० श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी)

राजधर्म मू० ।।)

(ले० महर्षि दयानन्द सरस्वती)

एशिया का वैनिस मू० ।।)

(ले० स्वामी सदानन्द जी)

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पटौदी हाउस, दरियागंज, दिल्ली ७ में छपकर श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक पब्लिशर द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ६ से प्रकाशित

॥ ओ३म् ॥

ऋग्वेद

यजुर्वेद

सार्वदेशिक

वर्ष ३०

मूल्य स्वदेश ५)
विदेश १० शिलिंग
एक प्रति ।।)

अङ्क २

वैशाख २०१२ वि०
अप्रैल १९५५

सम्पादक—
कविराज हरनामदास बी० ए०
सभा मन्त्री

सहायक सम्पादक—
श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषयानुक्रमणिका

❀ ओ३म् ❀

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष ३० } अप्रैल १९५५, वैसाख २०१२ वि०, दयानन्दाब्द १३० { अङ्क २

वैदिक प्रार्थना

ऊर्ध्वो नः पाह्यंहसो नि केतुना विश्वं समत्रिणं दह । कृधी न ऊर्ध्वाञ्चरथाय जीवसे विदा देवेषु नो दुवः ॥ ऋ० १।३।१०।१४ ॥

व्याख्यान – हे सर्वोपरि विराजमान परब्रह्म ! आप "ऊर्ध्व" सब से उत्कृष्ट हो, हमको कृपा से उत्कृष्ट गुणवाले करो तथा ऊर्ध्वदेश में हमारी रक्षा करो हे सर्वपापप्रणाशकेश्वर ! हमको "केतुना" विज्ञान अर्थात् विविध विद्यादान देके "अंहसः" अविद्यादि महापाप से "नि पाहि" (नितराम्पाहि) सदैव अलग रक्खो तथा "विश्वम्" इस सकल संसार का भी नित्य पालन करो, हे सत्यमित्र न्यायकारिन् ! जो कोई प्राणी "अत्रिणम्" हमसे शत्रुता करता है उसको और काम क्रोधादि शत्रुओं को आप "सन्दह" सम्यक् भस्मीभूत करो (अच्छे प्रकार जलाओ) "कृधी न ऊर्ध्वान्" हे कृपानिधे ! हम को विद्या, शौर्य, धैर्य, बल, पराक्रम, चातुर्य, विविधधन, ऐश्वर्य, विनय, साम्राज्य, सम्मति, सम्प्रीति, स्वदेशसुखसंपादनादि गुणों में सब नर-देहधारियों से अधिक उत्तम करो तथा "चरथाय, जीवसे" सब से अधिक आनन्द, भोग, सब देशों में अव्याहतगमन (इच्छानुकूल जाना आना) आरोग्य, देह शुद्ध मानस बल और विज्ञान इत्यादि के लिये हम को उत्तमता और अपनी पालनायुक्त करो "विदा" विद्यादि उत्तमोत्तम धन "देवेषु" विद्वानों के बीच में प्राप्त करो अर्थात् विद्वानों के मध्य में भी उत्तम प्रतिष्ठायुक्त सदैव हम को रक्खो ॥ (आर्याभिविनय से)

सम्पादकीय

स्वतंत्र भारत में आर्य समाज का मुख्य कार्य

राजा के राज्य में और प्रजा के राज्य में बड़ा भारी अन्तर है। राजा के राज्य में एक व्यक्ति की प्रधानता रहती है। राजा अच्छा हुआ तो राज्य की उन्नति होती और प्रजा सुखी रहती है। "राजा कालस्य कारणम्" इस वाक्य का यही अभिप्राय है। ऐसे एक सत्तात्मक राज्य में एक व्यक्ति के गुण और दोष देश को सुखी या दुखी बना सकते हैं। यदि शिवाजी स्वतन्त्र राज्य की स्थापना कर सकते है तो बाजीराव द्वितीय द्वारा उसका नाश भी हो सकता है।

जन तन्त्र राज्य की दशा इससे सर्वथा विपरीत है। इसमें प्रजा के चुने हुए प्रतिनिधि कानून बनाते हैं और जनता के लोग ही उसका संचालन करते हैं। यह स्पष्ट है कि वही जन तन्त्र राज्य सुरक्षित रह सकता है जिसके निर्माता अर्थात् साधारण निर्वाचक समझदार और चरित्रवान् हैं। यदि देश के साधारण निवासी समझदार नहीं तो वह बुरे आदमियों के धोखे में आकर, अयोग्य प्रतिनिधियों का चुनाव कर देंगे और यदि साधारण मतदाता चरित्रवान नहीं तो धनी लोग उन्हें अपना औजार बना कर अपना स्वार्थ सिद्ध कर लेंगे। परिणाम यह होगा कि चरित्र भ्रष्ट लोगों के हाथ में आया हुआ राज्य रेत की दीवार की तरह बैठ जायगा। कुछ लोग समझते हैं कि अपना शासन स्वयमेव अमर होता है। यह उनकी भूल है। जिस राज्य के चलाने वाले सचाई, निर्लोभता और निर्भयता आदि गुणों से शून्य हगे उसका संविधान चाहे कितना अच्छा हो वह देर तक नहीं चल सकता।

प्रश्न यह है कि जनता के चरित्र का निर्माण कौन करे और उसके आत्मा की सुध कौन ले? यूं तो कोई भी राज्य केवल कानून या दण्ड के बल से प्रजा को अच्छा नहीं बना सकता। वह रोग का थोड़ा बहुत इलाज कर सकता है परन्तु उसकी आने से पहले रोक थाम नहीं कर सकता। भारत ने तो फिर लौकिक राज्य को अपनाया है। उसे निश्चित रूप से राजनैतिक और आर्थिक मामलों को प्रधानता देनी पड़ती है। व्यक्तित्व से संबंध रखने वाले गहरे मामलों की उसे उपेक्षा ही करनी पड़ती है। ऐसी दशा में यह प्रश्न बहुत ही महत्वपूर्ण हो जाता है कि भारतवासियों के चरित्र निर्माण का कार्य कौन करे? जिन धार्मिक और सामाजिक बुराइयों को मिटाने के लिये महर्षि दयानन्द ने अपना जीवन समर्पित किया और आर्य समाज की भी स्थापना की उनके अभी शायद पत्ते ही झड़े हैं, शाखायें और तना अभी तक विद्यमान हैं। इन दोषों के कारण भारत वासियों की यह दशा हुई थी कि वह राज्य, धन, धर्म और आत्मसम्मान सभी कुछ खो बैठे थे। जो थोड़ा सा सुधार हुआ उसने क्रांति उत्पन्न कर दी। देश राजनीतिक पराधीनता की श्रृंखलाओं को तोड़ कर स्वतन्त्र हो गया। स्वतन्त्र होने का यह अभिप्राय नहीं कि वह दोष जिनके कारण हमने स्वाधीनता खोई थी, निर्मूल हो गये। वह अभी विद्यमान हैं। जब तक वह विद्यमान हैं तब तक महर्षि दयानन्द के उत्तराधिकारी आर्य समाज के लिए काम की कमी नहीं। व्यक्तियों और समाज के दोषों को दूर करना, ऊंचे और दृढ़ चरित्र का निर्माण करना आर्यसमाज का कर्तव्य था और अब भी है। वही मकान मजबूत होता है जिस में लगी हुई ईंटे और अन्य इमारती वस्तुएं मजबूत हों। राष्ट्र भी वही बलवान बन सकता है जिसके नागरिक सच्चे लोभरहित, निर्भय और कर्त्तव्य परायण हों। ऐसे मनुष्यों का निर्माण करना आर्यसमाज का काम है। आज नुमायश का युग है। सभी लोग जलूसों, जलसों, पताकाओं और नारों को बड़प्पन का चिन्ह समझकर उनके रौ में बहे जा रहे हैं। ऐसे कोलाहल में धैर्य पूर्वक जाति को सुधारने और उसके चरित्र को फौलाद बनाने का शुभ काम आर्य समाज ही कर

सकता है। यदि हम उसकी ओर ध्यान दें तो हमारे लिए काम ही काम हैं। परन्तु यदि हम उसके विपरीत कोलाहल में हिस्सेदार बनना ही पसन्द करें तो जैसे और कोलाहल कुछ समय के पीछे शांत हो जायेंगे वैसे ही हमें भी अपने मन्दिर के द्वार बन्द कर देने पड़ेंगे। मेरी तो आर्यजनों से यही प्रार्थना है कि वह अपनी पूरी शक्ति जाति के आध्यात्मिक जीवन की रक्षा, समाज सुधार और चरित्र निर्माण में लगा कर न केवल भारतीय राष्ट्र के अपितु मनुष्य जाति के भविष्य की रक्षा करने का श्रेय प्राप्त करें।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

आर्यसमाज का भावी कार्यक्रम

कई वर्षों से यह अनुभव किया जा रहा था कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर केवल वार्षिक चुनाव आदि प्रबन्ध संबंधी कार्य ही किये जाते हैं। आर्य समाज के सामने भविष्य का कोई कार्यक्रम नहीं रक्खा जाता। आर्य जगत् की इस शिकायत को उचित समझ कर सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा ने निश्चय किया है कि इस वर्ष सभा के अधिवेशन पर कार्यक्रम के सम्बन्ध में भी पूरा विचार किया जायेगा। निश्चय हुआ है कि कार्यक्रम की रूपरेखा पहले अन्तरंग सभा में बनाई जाये। अन्तरंग सभा तभी किसी ठीक निर्णयपर पहुँच सकती है यदि आर्यजगत् के लोकमत का भली प्रकार ज्ञान हो जाये। मैं सब आर्य संस्थाओं तथा आर्य जनों से यह निवेदन करता हूँ कि वह आर्यसमाज के भावी कार्यक्रम के सम्बंध में अपने अपने विचार लिखकर सभा कार्यालय को भेजें उनसे सभा को यह जानने में बहुत सहायता मिलेगी कि इस समय आर्य समाज के सामने सबसे आवश्यक समस्यायें कौन सी हैं?

सम्मति भेजने वाले सब महानुभाव इस बात का ध्यान रखें कि उनके पत्र आवश्यकता से अधिक लम्बे न हों। न भूमिका की आवश्यकता है, न उपसंहार की केवल सुझाव १५-४-५२ तक लिख भेजें जिससे उनका मत मालूम हो जाये और कार्यालय का समय व्यर्थ न जाये। —इन्द्र विद्यावाचस्पति

सम्पादकीय टिप्पणियाँ

शाकाहार की मांसाहार पर विजय

पिछले दिनों समाचार पत्रों में छपा था कि एक जर्मन स्विस अभियान पोषक खाद्यपदार्थों के परीक्षण के लिए धौलागिरि पर्वत पर चढ़ने के लिए युरोप से रवाना हो रहा है।

एवरेस्ट की विजय के समय श्रीयुत फ्रैंक वोस्स नामक अंग्रेज ने पोषक पदार्थों के सम्बन्ध में एक बड़ी महत्व पूर्ण बात बताई थी और वह यह कि २२००० फीट से ऊपर चढ़ते समय अभियान के लोगों के भोजन में प्रोटीन बढ़ाने वाले खाद्य पदार्थों में बहुत कमी करनी पड़ी थी क्योंकि इस ऊंचाई पर जहां आक्सीजन (प्राण वायु) बहुत कम होती है आक्सीजन के खर्च में कमी करना लाभदायक होता है।

मांस भक्षण से अधिक प्रोटीन उत्पन्न होती है। इसके खाने से शरीर में फुर्ती और चुस्ती अनुभव होती है और लोग भूल से इसे बल या शक्ति समझ बैठते हैं जबकि इसका चाय या काफी के समान उत्तेजनात्मक प्रभाव होता है जिससे मनुष्य की स्वाभाविक शक्ति में वृद्धि नहीं होती। प्रोटीन बढ़ाने वाले खाद्य पदार्थों का सेवन करने से मनुष्य को आक्सीजन की अधिक आवश्यकता होती है।

प्रोफ़ेसर आरनोल्ड हीम ने जो विशुद्ध शाकाहारी है, जिनकी आयु इस समय ७२ वर्ष की है और जिन्होंने संसार का सबसे अधिक भ्रमण किया है द्वितीय महासमरसे पूर्व हिमालय में भूतत्व विद्याविषयक अपनी खोजों के समय यह स्थापना की थी कि अत्यधिक ऊंचाई पर चढ़ने वालों को मांस और अंडों के स्थान में आलू और रोटी का अधिकाधिक सेवन करना आवश्यक होता है।

१९५४ की ग्रीष्म ऋतु में कुछ पर्वतारोहियों ने पोषक खाद्य पदार्थों के परीक्षण के लिए पेरू के एन्डेस नामक १७५०० फीट ऊंचे एक अज्ञात पर्वत शिखर पर विजय प्राप्त की थी। उन्होंने भी उपर्युक्त स्थापनाओं की पुष्टि की थी।

अभी कुछ महीने हुए एक जर्मन आस्ट्रियन अभियान हेराकाराकोरम पर्वत शिखर के अभियान से लौटा है। इस अभियान के यात्रियों को डाक्टरों की देख-रेख में निरामिष भोजन दिया गया था। उन्होंने भी इस बात की पुष्टि की है कि ऊंची पर्वत चोटियों पर मांसादि पदार्थों का सेवन महान हानिकारक होता है।

इन परीक्षणों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि शाकाहार से थकावट कम होती है और ऊंची पर्वत चोटियों के अभियानों में स्वास्थ्य बना रहता और उसकी रक्षा होती है। इसके अतिरिक्त पाचन शक्ति बढ़कर भूख बढ़ती और शक्ति के कोष में वृद्धि होती रहती है।

यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि उपर्युक्त जर्मन स्विस अभियान के यात्रियों को पूर्व से ही शाकाहार का पर्याप्त अभ्यास कराया गया है जिससे वे अभियान के प्रारम्भसे लेकर अन्त तक शाकाहार पर निर्भर रह सकें।

निश्चय ही इस अभियान के परीक्षणों के फल बड़े मनोरञ्जक और शिक्षा प्रद होंगे जिनकी बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा की जा रही।

महात्मा गोखले की स्मृति में

गत १९ फरवरी को भारत के सुप्रसिद्ध विद्वान् राजनीतिज्ञ महामना देश रत्न गोपाल कृष्ण गोखले की ४० वीं निधन जयन्ती मनाई गई है।

महात्मा गोखले भारतीय आकाश के कतिपय अत्यन्त प्रकाशमान् सितारों में से एक थे जिनकी प्रखर आभा से देश की तत्कालीन राजनीति प्रकाशित रह चुकी है।

गोखले के जीवन की शिक्षा क्या थी और उन्होंने हमारे लिए क्या वसीयत छोड़ी है? इन प्रश्नों का उत्तर उन शब्दों में निहित है जो जीवन के अन्तिम क्षणों में उन्होंने भारत सेवक समाज (सर्वेन्ट आफ इंडिया सोसाइटी) के उपस्थित सदस्यों को कहे थे:—

"मेरा जीवन चरित्र लिखने या मेरी प्रस्तर मूर्ति बनाने में अपना समय बर्बाद न करना अपितु भारत की सेवा में अपनी आत्मा को लगा देना। तभी तुम लोगों की गणना भारत के सच्चे सेवकों में हो सकेगी।"

महात्मा गोखले महात्मा गांधी की स्थापनाओं के अनुसार उनके राजनैतिक गुरु थे। क्या महात्मा गांधी के शिष्य स्थान २ पर गांधी जी के स्टैच्यू स्थापित करके स्वयं महात्मा जी की भावना का निरादर और उनकी उपर्युक्त स्थापना और मान्यता को अन्यथा सिद्ध करने का कारण तो नहीं बन रहे हैं? इस बात पर महात्मा जी के शिष्यों को गंभीरता से विचार करना चाहिए।

गोखले का जीवन धार्मिक था। वे जो कुछ करते थे बड़े भक्तिभाव से करते थे। एक बार उन्होंने कहा मुझ में रानाडे जैसी धार्मिक आस्था नहीं है यद्यपि मेरी इच्छा है कि मुझे वह आस्था प्राप्त हो जाय" इस पर भी उनमें बड़ा धर्म भाव था जो उनके कामों में प्रतिबिम्बित होता था। जिस व्यक्ति का जीवन त्यागमय हो जिसका स्वभाव सरल हो जो सच्चाई की साक्षात मूर्ति हो जिसमें मानवता ओत प्रोत हो जो किसी वस्तु को भी अपनी न बतलाता हो ऐसा व्यक्ति धार्मिक व्यक्ति ही होता है भले ही वह इस बात से भिज्ञ हो या न हो। गोखले इसी प्रकार के व्यक्ति थे। वे जिस काम में लगते थे उसी में तन्मय हो जाते थे।

उन्होंने कई वर्ष तक पूना के फर्ग्युसन कालेज में प्रोफेसर के पद पर कार्य किया और उनके कारण उक्त कालेज बहुत चमका। वैल्बी कमीशन के सामने दी हुई साक्षी ने उन्हें अखिल भारतीय सम्मान प्रदान किया था। उसी समय देश वासियों पर उनकी योग्यता का सिक्का बैठा था। कहा जाता है लार्ड कर्जन गोखले के अतिरिक्त अन्य किसी से न डरते थे।

म० गोखले सुप्रीम लेजिस्लेटिव पब्लिक सर्विस कमीशन आदि उच्च राजकीय पदों पर पहुँच चुके थे परन्तु उनके जीवन की महत्ता इन पदों पर आसीन हो जाने पर केन्द्रित न थी।

उनकी महत्ता अगाध देश प्रेम, साहस, सत्य, धर्म, विनम्रता, न्याय प्रियता, स्पष्ट वादिता और

निर्भरता पर आश्रित थी। देश के लिए बड़े से बड़ा त्याग भी उनके लिए नगण्य था। देश हित पर उन्होंने अपना जीवन न्यौछावर कर दिया था यदि यह कह दिया जाय तो इसमें अत्युक्ति न होगी। वे देश के लिए जिए और देश के लिये मरे।

देश के स्वस्थ सार्वजनिक जीवन का महर्षि दयानन्द सरस्वती और आर्य समाज ने जो सूत्र पात किया और उसे जो धार्मिक रूप प्रदान किया उसे राजनैतिक जीवन में अपनाने और उसे परिष्कृत रखने में महात्मा गोखले का बहुत बड़ा हाथ था और उनके राजनैतिक शिष्य महात्मा गांधी ने इस परम्परा को न केवल कायम ही रखा अपितु उसे बहुत चमकाया। देश की स्वतन्त्रता इसी परम्परा को कायम रखने और उसका अनुसरण करने से प्राप्त हुई है। देश की स्वतन्त्रता के लिए कभी कोई बड़ा खतरा पैदा होगा तो इसी परम्परा की उपेक्षा से पैदा होगा। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में इस परम्परा का संरक्षण तो हो रहा है और इसी के फल स्वरूप भारत का अन्तर्राष्ट्रीय मान बहुत बढ़ गया है परन्तु अन्तर्देशीय क्षेत्र में इस परम्परा की अवहेलना होने से एक बड़ा खतरा देख पड़ने लग गया है और समय रहते इससे सावधान न रहा गया तो इसके दुष्परिणामों की सहज ही कल्पना की जा सकती है।

आर्यसमाज और गोवध निषेध आन्दोलन

एक समाज के मन्त्री महोदय लिखते हैं :—

"आर्यसमाजों में बहुत से व्यक्ति ऐसे हैं जो कांग्रेस के भी मेम्बर हैं, गोवध निषेध कार्यक्रम में सक्रिय भाग लेना नहीं चाहते। क्या वे समाज के सदस्य रह सकते हैं?"

यदि आर्यसमाज का कोई सदस्य कांग्रेस का सदस्य होने के नाते गोवध निषेध आन्दोलन में सक्रिय भाग नहीं लेता तो उसका यह व्यवहार अत्यन्त अवांछनीय तो है परन्तु उसे आर्यसमाज की सदस्यता के अयोग्य नहीं ठहराता, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कोई आर्यसदस्य किसी भी राजनैतिक संगठन का सदस्य न होते हुए भी इस आन्दोलन में सक्रिय भाग न लेने पर सदस्यता के अयोग्य नहीं ठहराया जाता। परन्तु प्रत्येक आर्य और आर्यसमाज के सदस्य से गोरक्षा आन्दोलन में क्रियात्मक योग देने की आशा की जाती है। उनकी उदासीनता अशोभन तथा उसका प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष विरोध निन्दनीय समझे जा सकते हैं।

जाति की दृष्टि से आर्य कौन है?

गोरखपुर मे एक सज्जन पूछते हैं :—

"जाति की दृष्टि से 'आर्य' कौन है? क्या वह व्यक्ति जो आर्यसमाज का सदस्य नहीं है परन्तु 'हिंदू' है 'आर्य' माना जायगा? 'आर्य' और 'आर्यसमाजी' में क्या भेद है?"

जाति की दृष्टि से 'आर्य' मनुष्य हैं। जो व्यक्ति आर्यसमाज का सदस्य नहीं परन्तु 'हिन्दू' है वह गुण, कर्म की उत्कृष्टता की दृष्टि से 'आर्य' हो सकता है भले ही वह आर्यसमाज का सदस्य न हो। आर्यसमाज के संगठन से सम्बद्ध 'आर्य' को आर्यसमाजी कह देते हैं।

श्री स्वामी अभेदानन्द जी रोगग्रस्त

आर्य सत्याग्रह हैदराबाद के तीसरे सर्वाधिकारी श्री स्वामी अभेदानन्द जी महाराज की रुग्णावस्था का पटना से समाचार प्राप्त करके हमें अत्यन्त दुःख हुआ है। श्री स्वामी जी पर पक्षाघात का प्रभाव बताया जाता है।

विस्तृत समाचारों की प्रतीक्षा है। परमात्मा से प्रार्थना है कि स्वामी जी महाराज शीघ्र ही स्वस्थ होकर पूर्ववत् आर्यसमाज की सक्रिय सेवा में संलग्न होने में समर्थ हो जायँ।

श्री स्वामी स्वतंत्रानन्द जी की अवस्था

श्री स्वामी स्वतंत्रानन्द जी महाराज १४ मार्च को चिकित्सार्थ बम्बई गए थे। वहां की सुप्रसिद्ध टाटा इन्स्टीट्यूट में उनके शरीर का परीक्षण हुआ है। उन के रोग तथा शारीरिक अवस्था के बम्बई से जो समाचार प्राप्त हुए हैं वे चिंता में डालने वाले हैं। गत

फरवरी मास में जब वे अपने मठ दीनानगर में गए थे तब वे खतरे से बाहर समझे गए थे और आशा हो चली थी कि वे शीघ्र ही रोग से मुक्त होकर स्वस्थ हो जाएंगे। परन्तु जब वे दीनानगर से लौटकर पुनः देहली पधारे तो उनके रोग की दशा पुनः चिंता का कारण बन गई थी। श्री स्वामी ईशानन्द जी द्वारा निरन्तर उनकी सेवा परिचर्या होती रही है। श्री स्वामी जी महाराज की बम्बई में भी उन्हीं के द्वारा सेवा परिचर्या हो रही है। हम बम्बई से आशा-जनक समाचारों की कामना कर रहे हैं जिससे आर्यजगत् की चिन्ता कम हो। हमारी कामना पूरी हो यही परमपिता से विनीत अभ्यर्थना है।

श्री स्वामी जी जीवन पर्यन्त शारीरिक कष्ट और रोग से मुक्त रहे या उसके प्रति उपराम रहे हैं। इस रोग में भी जबकि पहली बार उन्हें शय्यागत देखा गया है उनकी वही उपरामता निरन्तर बनी हुई है; उनकी इस उपरामता से शेक्सपीयर की यह उक्ति उन पर भली भांति चरितार्थ होती है कि बीमारी कमजोर दिमाग के लिए ही उदासी का कारण होती है। बलवान आत्मा के लिए शारीरिक कष्ट या रोग बल प्राप्ति का साधन होता है। वह आत्मा लोगों से कहता है मुझसे यह मत पूछें कि मैं रोग से अच्छा हो रहा हूँ या नहीं वरन् यह पूछो कि मैं रोग पर विजय पाने के लिये बल प्राप्त कर रहा हूं या नहीं?

शाहपुराधीश का निधन

गत १२ मार्च को शाहपुराधीश श्री राजाधिराज उम्मेदसिंह जी का शाहपुरा में १ मास की बीमारी के पश्चात् ७६ वर्ष की आयु में देहावसान हो गया।

शाहपुरा के राजघराने में आर्यसमाज का प्रवेश स्व० उम्मेदसिंह जी के पिता राजाधिराज सर नाहरसिंह जी के काल में हुआ था जिन्होंने महर्षि का न केवल साक्षात्कार ही किया था अपितु शाहपुरा में महाराज को आमंत्रित करके उनके धर्मोपदेश एवं सत्संग से लाभ भी उठाया था।

श्री स्व० उम्मेदसिंह जी ने राजघराने की इस परम्परा को न केवल कायम ही रखा अपितु इसे खूब चमकाया भी। आपने अपने पुत्र श्री सुदर्शन देव जी तथा इन्द्रजीत देव जी की शिक्षा एवं दीक्षा पूर्ण वैदिक पद्धति पर आर्य विद्वानों के द्वारा सम्पन्न कराई। राजघराने तथा राज्य शासन में आर्यसमाज जिस संरक्षण का अधिकारी था वह संरक्षण उसे स्व० श्री उम्मेद सिंह जी से प्राप्त रहा और इस समय उनके सुपुत्र (वर्तमान राजाधिराज) श्री सुदर्शन देव जी तथा उनके परिवार से भी प्राप्त है।

श्री स्व० उम्मेदसिंह जी ने वैदिक साहित्य के प्रचार के लिए अपनी स्वर्गीय रानी श्रीमती सूर्यकुमारी जी के नाम पर २ लाख रुपया से 'सूर्यकुमारी निधि' स्थापित की जिसके ब्याज से समय २ पर गुरुकुल कांगड़ी व काशी नागरी प्रचारिणी सभा आदि को सहायता दी जाती रही है। अनेक स्थानों पर आर्य समाज मन्दिर बनवाए गए, असहाय छात्रों को छात्र-वृत्तियां, अनाथों व निर्धनों को सहायता दी जाती रही। राज्य के स्कूलों में आर्यसमाज की धर्मशिक्षा अनिवार्य रही। अस्पृश्यता निवारण पर विशेष ध्यान रखा जाता रहा।

स्वर्गीय महाराज वर्षों पर्यन्त परोपकारिणी सभा के प्रधान रहे। वे विद्या प्रेमी स्वाध्यायशील और ईश्वर भक्त थे। महर्षि के वेद भाष्य पर उन्हें बड़ी श्रद्धा थी। उसका स्वाध्याय बड़े मनोयोग पूर्वक करते थे। मरने से पूर्व आपने अपने उत्तराधिकारियों को आदेश दिया था कि उनके मृतक संस्कार में कोई अवैदिक कार्य न किया जाए।

वस्तुतः उनका निधन आर्यसमाज की एक बहुत बड़ी क्षति है। उनके निधन से श्री सुदर्शन देव जी महाराज पर एक बहुत बड़ा उत्तरदायित्व आ पड़ा है। विश्वास है वे अपने सुयोग्य पिता के चरणचिन्हों पर दृढ़तापूर्वक चलते हुए इस उत्तरदायित्व को खूबसूरती के साथ निबाहेंगे और राजघराने की विशद् परम्पराओं में अमित वृद्धि करेंगे।

दिवंगत आत्मा की सद्गति के लिए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हुए हम इस महान् वियोग में राजपरिवार के प्रति अपनी हार्दिक समवेदना प्रकट करते हैं।

नशाबंदी और पुलिस

सहयोगी नवभारत टाइम्स लिखता है—

उत्तरप्रदेश के ११ जिलों और वृन्दावन, ऋषिकेष तथा हरिद्वार इन तीनों तीर्थ स्थानों में नशाबन्दी की सफलता की राज्य की ओर से जांच की गयी। इन सभी स्थानों में 'नशाबन्दी' कानून लागू है। जो सूचनाएं इस जांच से प्राप्त हुई वे आंखें खोल देने वाली हैं। राज्य की आय में नशाबन्दी के कारण लगभग १॥ करोड़ रुपये की कमी हो गई है। यदि यह देखा जाय कि इस कानून के कारण कितनी नशाबन्दी हुई तो शायद उत्तर संतोषजनक नहीं मिलेगा।

तीन सौ पृष्ठ की उक्त सरकारी रिपोर्ट को सत्य मान लिया जाय, अन्यथा मानने का कोई कारण दिखाई नहीं देता, तो कम से कम यह जग जाहिर हो जाता है कि चोरी छिपे दारू खींचने और नशीली वस्तुओं का अवैध व्यापार चलाने के पचास प्रतिशत मामलों में पुलिस का हाथ रहता है। ऐसी स्थिति में पूर्ण नशाबन्दी होना सम्भव ही नहीं है।

रिपोर्ट में कहा गया है कि अवैध रूप से दारू खींचने और उसे बेचने के ४९ प्रतिशत मामलों में आबकारी विभाग के कर्मचारी शामिल रहते हैं। ध्यान रहे कि नशाबन्दी का काम यही विभाग देखता है और कानून का उल्लंघन करने वालों का चालान करने का काम भी यही करता है। ४९ प्रतिशत के बाद जो ५१ प्रतिशत मामले शेष रह जाते हैं उनमें स्थानीय नेता और प्रभावशाली व्यक्ति तथा अपराधियों के घर वाले उपेक्षा कर जाते हैं।

एक मनोरंजक बात यह भी प्रकट हुई कि जब जांच करने वालों ने लोगों से पूछा कि नशाबन्दी लागू होने के बाद नशा करने वालों की संख्या बढ़ी या घटी, तो ७९ प्रतिशत की राय तो घटने के पक्ष में रही किन्तु ११ प्रतिशत ने नशाबन्दी बढ़ जाने का मत प्रकट किया और १४ प्रतिशत ने कहा कि जितने पहले थे उतने ही अब है।

६७ प्रतिशत महाजनों का मत था कि नशे में कमी हुई है पर ३९ प्रतिशत ने इसके विपरीत राय प्रकट की। हां, स्त्रियों में सबने यही कहा कि भली प्रकार नशाबन्दी के कार्य को पुलिस अथवा आबकारी विभाग से कहीं अधिक वे सफल बना सकती है।

इस समस्त जांच से दो स्पष्ट परिणाम निकलते हैं। एक तो यह कि कानून तोड़ने वालों से जब पुलीस तथा विभाग वाले मिले हों तो प्रभाव उस कानून का होता है वह भी न होगा। दूसरे यह कि सरकारी खजाने को तो १॥ करोड़ रुपये का आय की हानि हो गयी पर जिस उद्देश्य के लिये इसे झेला जा रहा है उसकी पूर्ति नहीं हो पा रही।

सरकार बहुत से ऐसे कार्य जिन पर जनता जोर देती है और जिनसे उसकी धार्मिक भावना प्रकट होती है, कानून बनाकर रोकने पर यह आक्षेप करती है कि कानून बनाने से कुछ नहीं होगा पर दूसरी ओर जहां वास्तविक समझाने बुझाने की आवश्यकता है कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जाता।

चीनी के देवता

वियना का समाचार है कि एक सोवियत पत्रिका में छपे एक लेख में लेखक ने यह मत व्यक्त किया है कि लड़कों और लड़कियों के रूप में चाकलेट नहीं बनाये जाने चाहिये, क्योंकि जब बच्चे उनके हाथ पांव या अन्य भाग दांतों से काटते हैं, तब उन्हें मनुष्य का मांस खाने के लिये प्रोत्साहन मिलता है। लेख में यह भी कहा गया है कि चाकलेट के लड़के लड़कियां बनाना सुरुचि विरोधी कार्य है। सुनते हैं कि संसार के कुछ भागों में आज भी मनुष्य का मांस खाया जाता है। देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिये नरमुण्ड का शिकार तो अनेक प्रदेशों में होता है यदि मानव जाति को लगातार यह न बताया जाय कि मनुष्य का मांस खाना बुरा है उसे किसी प्रकार खाने की प्रेरणा मिलती रहे, तो धीरे धीरे कुप्रभाव पैदा हो सकता है। छोटे छोटे बच्चों का मस्तिष्क बहुत कोमल होता है। उस पर आसानी से किसी भी

घटना का प्रभाव पड़ जाता है। उक्त लेखक ने चाकलेट के लड़के लड़कियां बनाने में जो दोष दिखाया है, वह ध्यान देने योग्य है। हमारे देश में चीनी के शिव, विष्णु, गणेश आदि देवता बिकते हैं। यद्यपि मिठाई बनाने वालों का उद्देश्य इन देवताओं का अपमान करना न हो तथापि अपनी नासमझी से वे बच्चों के दिमाग पर अशोभनीय प्रभाव तो डालते ही हैं। लेख में बतायी गयी बात मामूली जंचती है, किसी भी राष्ट्र का चरित्र-निर्माण करने में ऐसी बातों का काफी महत्व होता है।

६ ईसाई मिशनरियों को दण्ड

जशपुर नगर का ११ मार्च का समाचार है कि जशपुर नगर के ईसाई पादरी फादर बुलकान्स और क्रिश्चियन रोमन कथैलिक मिशन के पांच ईसाई प्रचारकों को भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार अनेक जुर्मों में यहां के एक मजिस्ट्रेट श्री के० के० आर नायडू ने जुर्मानों की सजा दी।

घटना इस प्रकार है कि एक हिन्दू युवक एक ईसाई बाला से विवाह करना चाहता था इन ईसाई पादरी और प्रचारकों ने उसे बरगलाया और कहा कि ईसाई धर्म ग्रहण किए बिना यह विवाह असंभव है। अभियुक्तों की यह बात मानने के लिए न तो युवक तय्यार था और न युवती। इस पर फादर बुलकान्स के मातहत उक्त युवक को सप्ताह तक गिरजाघर में अनुचित रीति से बन्दी करके रखा गया। उसकी चोटी काट दी गई और ईसाई प्रतिज्ञा बोलने के लिए विवश किया गया। पुलीस को युवक की तलाश थी उसने उसे गिरजाघर से बरामद किया

यह घटना ईसाई मिशनरियों की आपत्ति जनक कार्यवाहियों की शृंखला की एक कड़ी है जिस पर ईसाई मिशन के अधिकारियों तथा सरकार को विशेष ध्यान देना चाहिये।

अन्ध परम्परा

पुरानी रियासतों में राजा के मरने पर प्रजा को प्रायः अनिवार्य रूप से शोक मनाना पड़ता था। शोक प्रदर्शन की यह निशानी मानी जाती थी कि लोग अपने सिर और दाढ़ी मूंछ के बाल उस्तरे से मुड़वाते थे। यदि कोई भूलेभटके ऐसा नहीं करता, तो उसको पकड़ कर जबर्दस्ती मूंड दिया जाता, उसकी गत बना दी जाती। शायद जेल की भी हवा खानी पड़ती। अब राजा-महाराजाओं का वह दबदबा नहीं रहा। उनके हाथ से राज्य सत्ता निकल चुकी है। इसलिए किसी को भी अनिवार्य रूप से शोक मनाने की जरूरत नहीं रही। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है नेपाल में वे पुराने कानून और पुरानी परिस्थितियां अभी भी किन्हीं अंशों में मौजूद हैं। नेपाल के प्रजाजनों को नेपाल महाराजाधिराज के निधन पर उन प्राचीन रूढ़ियों का पालन करना पड़ा।

एक और प्राचीन रूढ़ि का लाभ एक भारतीय महाराष्ट्रीय महाब्राह्मण को मिला है। नेपाल के स्वर्गीय नरेश के निधन के ११ वें दिन उनकी व्यक्तिगत सम्पत्ति इस महाब्राह्मण को दान कर दी गई, जिसका मूल्य दो लाख रुपया आंका जाता है। उसे दो हाथी, एक घोड़ा, नरेश की बहुमूल्य पोशाकें, सोने चांदी के बर्तन और नरेश के काम में आने वाली अन्य चीजें प्राप्त हुईं। इनमें से कुछ को वह नीलाम कर देगा। किन्तु उसकी मुश्किल यह है कि वह नेपाल में अधिक समय नहीं ठहर सकेगा। कारण उसका वहां ठहरना अशुभ माना जाता है। परम्परा के अनुसार लोगों की भीड़ ने उसपर पत्थर फेंके और गालियों की बौछार की, ताकि वह नेपाल से भाग जाए। निश्चय ही इन रूढ़ियों और अन्धविश्वासों का वर्तमान वैज्ञानिक युग की परिस्थितियों से मेल नहीं बैठ सकता। यह रूढ़ियां त्याज्य एवं हास्यास्पद हैं।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

* गायत्री मन्त्र की महिमा *

(सुरेशचन्द्र वेदालंकार एम० ए० एल० टी०, डी० बी० इण्टर कालेज, गोरखपुर)

गायत्री मंत्र को गुरु मंत्र तथा सावित्री मन्त्र भी कहा जाता है। गुरु मन्त्र इसे इसलिए कहते हैं कि जब ब्रह्मचारी का उपनयन संस्कार किया जाता है तब गुरु शिष्य को इस मन्त्र का सर्व प्रथम उपदेश करता है और उसे अपने कुल में प्रविष्ट करता है। सावित्री मन्त्र इसे इसलिए कहा जाता है क्यों कि इस मन्त्र का देवता सविता है। शत पथ ब्राह्मण में लिखा है।

"अथास्मै सावित्री मध्याह।
गायत्री मेव सावित्री मनुब्रूयात्।"

वैदिक साहित्य में इस मन्त्र की जितनी महिमा गाई गई उतनी और किसी की नहीं। यास्काचार्य ने गायत्री शब्द का अर्थ लिखा है कि गान करते हुये परमेश्वर के मुख से सबसे पूर्व गायत्री निकली इस लिए इसे हम सबसे श्रेष्ठ मान सकते हैं। (गायतो मुखाद् उदपतदिति) । गायत्री के बारे में धार्मिक जगत् में यह विचार धारा प्रचलित है कि जो व्यक्ति इसका गान करता है यह उसकी रक्षा करती है। 'गायन्त त्रायते इति गायत्री' गान करने वाले व्यक्ति की यह रक्षा करती है इसलिये इसे गायत्री कहते हैं।

हमारे गुरु आचार्य प्रवर श्री स्वामी जी महाराज गायत्री के श्रद्धालु उपासक थे। ग्वालियर के राजा साहब से एक बार उन्होंने कहा था कि भागवत सप्ताह की अपेक्षा गायत्री पुरश्चरण अधिक श्रेष्ठ है। जयपुर के सच्चिदानन्द हीरालाल रावल, घोडल सिंह आदिको गायत्री केजप की विधि भी सिखाई थी। मुलतान में उपदेश देते हुए स्वामी जी ने गायत्री मन्त्र का उच्चारण किया और कहा "यह मन्त्र सबसे उत्तम है। चारों वेदों का मूल यही गुरु मन्त्र है। आदि काल में सभी ऋषि मुनि इसी का जप किया करते थे।"

स्वामी सर्वदानन्द जी ने इस मंत्र की महिमा का प्रतिपादन करते हुए लिखा है "गायत्री मंत्र द्वारा प्रभु का पूजन सदा से आर्यों की रीति रही है। ऋषि दयानन्द ने भी उसी शैली का अनुकरण करके संध्या का विधान तथा वेदों का स्वाध्याय करना बताया है। ऐसा करने से अन्तःकरण की शुद्धि तथा बुद्धि निर्मल होकर मनुष्य का जीवन अपने तथा दूसरों के लिए हितकर हो जाता है। जितनी भी इस शुभ कर्म में श्रद्धा और विश्वास हो उतना ही अविद्या आदि क्लेशों का ह्रास होता है। जो जिज्ञासु गायत्री मन्त्र को प्रेम और नियम पूर्वक उच्चारण करते हैं उनके लिए यह संसार सागर में तरने की नाव और आत्म प्राप्ति की सड़क है।"

भारत के उप राष्ट्रपति श्री राधाकृष्णन् कहते हैं:—
"यदि हम इस सार्वभौमिक प्रार्थना गायत्री पर विचार करें तो हमें मालूम होगा कि यह हमें वास्तव में कितना ठोस लाभ देती है। गायत्री हम में फिर से जीवन का स्रोत उत्पन्न करने वाली आकुल प्रार्थना है।"

स्वामी रामतीर्थ गायत्री के विषय में लिखते हैं:—
'ईश्वर को प्राप्त करना सबसे बड़ा काम है गायत्री का अभिप्राय बुद्धि को काम रुचि से हटा कर प्रभु रुचि में लगा देना है। जिसकी बुद्धि पवित्र होगी वही प्रभु को प्राप्त कर सकेगा।'

स्वामी शिवानन्द जी लिखते हैं 'ब्राह्म मुहूर्त में गायत्री का जप (अर्थ सहित) करने से चित्त शुद्ध होता है हृदय में निर्मलता आती है, शरीर निरोग होता है स्वभाव में नम्रता आती है, बुद्धि सूक्ष्म होती है, स्मरण शक्ति का विकास होता है।"

स्वामी शंकराचार्य का कथन है "गायत्री की महिमा का वर्णन करना मनुष्य के सामर्थ्य से बाहर की बात है। बुद्धि का शुद्ध होना इतना बड़ा कार्य है जिसकी समता संसार के और किसी काम से नहीं हो सकती। आत्म प्राप्ति करने की दिव्य दृष्टि जिस शुद्ध बुद्धि से प्राप्त होती है उसकी प्रेरणा गायत्री द्वारा होती है। गायत्री आदि मंत्र हैं। इसका प्रादुर्भाव दुरितों को नष्ट करने और ऋत के अभिवर्धन के लिए हुआ है।"

स्वामी विवेकानन्द कहते हैं "राजा से वही वस्तु मांगी जानी चाहिए जो उसके गौरव के अनुकूल हो परमात्मा से मांगने योग्य वस्तु सद्बुद्धि है। जिस पर परमात्मा प्रसन्न होते हैं उसे सद्बुद्धि प्रदान करते हैं। सद्बुद्धि से सत् मार्ग पर प्रगति होती है और सत् कर्म से सब प्रकार के सुख मिलते हैं। जो सत् की ओर बढ़ रहा है उसे किसी प्रकार के सुख की कमी नहीं रहती। गायत्री सद्बुद्धि का मन्त्र है। इसलिए उसे मन्त्रों का मुकुट मणि कहा गया है।"

रामकृष्ण परमहंस कहते हैं "गायत्री मन्त्र छोटा है पर इससे बड़ी बड़ी सिद्धियां मिलती हैं।"

योगी अरविन्द ने बताया है कि गायत्री में ऐसी शक्ति निहित है जो महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकती है।" कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ टैगोर कहते हैं "भारत को जगाने वाला जो मन्त्र है वह इतना सरल है कि उसका उच्चारण एक श्वास में किया जा सकता है, वह है– गायत्री मन्त्र। महात्मा गांधी लिखते हैं "गायत्री मन्त्र का निरन्तर जप रोगियों को अच्छा करने और आत्माओं की उन्नति के लिये उपयोगी है। गायत्री स्थिर चित्त और शांत हृदय से किया हुआ जप आपत्तिकाल के संकटों को दूर करने का प्रभाव रखता है।"

तिलक और महामना मालवीय जी ने भी गायत्री मन्त्र के महत्व का प्रतिपादन किया है। तिलक जी इसे आत्मा के प्रकाश का साधन मानते हैं। मालवीय जी इससे बुद्धि की पवित्रता मानते है।

प्राचीन ऋषि मुनियों ने भी गायत्री मन्त्र के महत्व को स्वीकार किया है। व्यास जी महाराज कहते हैं "जिस प्रकार पुष्पों का सार शहद, दूध का सार घृत है उसी प्रकार समस्त वेदों का सार गायत्री है। गङ्गा का जल शरीरको पवित्र करता है गायत्री आत्मा को पवित्र करती है। जो गायत्री छोड़कर दूसरे साधनों से ब्रह्म को प्राप्त करने की आशा करता है वह पक्वान्न छोड़कर भिक्षा मांगने वाले के समान मूर्ख है।

काम्य सफलता तथा तप की वृद्धि के लिए गायत्री से श्रेष्ठ और कुछ नहीं है।"

चरक ऋषि लिखते हैं 'जो ब्रह्मचर्य पूर्वक गायत्री की उपासना करता है और आंवले के ताजे फलों का सेवन करता है वह दीर्घ जीवी होता है।'

वशिष्ठ ऋषि का मत है 'मन्द मति, कुमार्ग गामी, अस्थिर मति भी गायत्री के प्रभाव से उच्च पद को प्राप्त करते हैं। फिर सद्गति होना निश्चित है। जो पवित्रता और स्थिरता पूर्वक सावित्री की उपासना करते हैं वे आत्म लाभ करते हैं।"

भरद्वाज ऋषि का विचार है कि गायत्री से बुद्धि का विकास होता है और विकसित बुद्धि दुर्गुणों को दूर करती है।

याज्ञवल्क्य जी कहते हैं "गायत्री और समस्त वेदों को तराजू में तोला गया। एक ओर षडङ्गों समेत वेद और दूसरी ओर गायत्री को रक्खा गया। उसमें गायत्री ही श्रेष्ठ सिद्ध हुई वेदों का सार उपनिषद्, उपनिषदों का सार व्याहृतियों समेत गायत्री है।" (गायत्री की माता वेद है—सम्पादक)

मनु महाराज ने मनुस्मृति में लिखा है—

ओंकार पूर्विकास्तिस्रो महाव्याहृतयोऽव्ययाः।
त्रिपदा चैव सावित्र' विज्ञेय ब्रह्मणो मुखम् ॥

अर्थात्, ओंकार पूर्वक तीनों अव्यय महाव्याहृति (भूः, भुवः स्वः) और तीनों पद वाली गायत्री को वेद का मुख समझना चाहिए।

शंख ऋषि ने लिखा है—

"हस्तत्राय प्रदा पततां नरकार्णवे"

(शेष पृष्ठ ६५ पर)

प्रकृति

(गताक से आगे)

(४)

लेखक—श्रीयुत पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय

हम ऊपर कह चुके हैं कि डिकोर्ट इतनी दूर नहीं बढ़ता। उसका केवल तात्पर्य इतना ही है कि जड़ जगत् और चेतन जगत् को अलग अलग कर दे। डिकोर्ट के इस विचार से संसार को एक लाभ अवश्य हुआ। अर्थात् इस के दार्शनिक विचारों ने विज्ञान की बड़ी सहायता की। विज्ञान (science साइंस) चाहता ही यह था कि चेतन जगत् से छुटकारा मिल जाय। स्वतन्त्रता से जड़ और अचेतन वस्तुओं की मीमांसा करना और तत्सम्बन्धी व्यापक नियमों का अन्वेषण उसका ध्येय था। डिकोर्ट ने गणित शास्त्र से आरम्भ किया। गणित शास्त्र का प्रयोग समस्त विज्ञान का मूल है। जड़ जगत् में गति कहां से आई? इसका उत्तर डिकोर्ट देता है कि— ;

God originally created matter along with *motion* and *rest*, and now by his concourse alone preserves in the whole the same amount of motion that he then placed in it.

अर्थात् ईश्वर ने प्रथम ही प्रकृति को गति और स्थिति के साथ उत्पन्न किया और अब अपने संसर्ग द्वारा समस्त जगत् में उतनी गति को सुरक्षित रखता है जितनी उसने उसे पहले प्रदान की थी।

गेलीलियो, (Galileo) न्यूटन (Neuton) आदि वैज्ञानिकों ने इस सिद्धान्त को माना और इसी के सहारे भौतिकी (physics) ने आगे पग बढ़ाया। डिकोर्ट को यह पता नहीं था कि उसका सिद्धान्त किस प्रकार चेतन-शून्यत्व के लिये मार्ग साफ कर रहा है। वस्तुतः देखा जाय तो डिकोर्ट की फिलासफी में अचर-विजय के लिये कुछ न कुछ बीज अवश्य पाया जाता है। उसने हनरी मोर (Henry More) को पशुओं के विषय में जो पत्र लिखा था उसको दे देना यहां उपयुक्त होगा—

The greatest of all the prejudices we have retained from infancy is that of behaving that brutes think. The source of all error comes from having observed that many of the bodily members of brutes are not very different from our own in shape and movements, and from the belief that our mind is the principle of the motions which occur in us, that it imparts motion to the body, and is the cause of our thoughts. Assuming this, we find no defficulty in believing that there is in brutes a mind similar to our own; but having made the discovery, after thinking well upon it, that two different

principles of our movements are to be distinguished the one entirely mechanical and corporeal, which depends solely on the force of the animal spirits, and the configuration of the bodily parts, and which may be called corporeal soul, and the other incorporeal, that is to say, mind or soul, which you may define as a substance which thinks I have enquired with great care whether the motions of animals proceed from these two principles or from one alone. Now having clearly perceived that they can proceed from one only I have held it demonstrated that we are not able in any manner to prove that there is in the animal a soul which thinks. I am not at all disturbed in my opinion, by those doublings and cunning tricks of dogs and foxs, nor by all those things, which animals do, either from fear or to get something toeat, or just for sport. I engage explain all that very easily, merely by the conformation of the parts of the animals.

(Wo ed ted by Rogers in his History of Philosophy),

अर्थात् बालकपन से हम इस भ्रमात्मक सिद्धांत को मानते रहे हैं कि पशु भी विचार शक्ति रखते हैं। इस भ्रान्ति का कारण यह है कि पशुओं के शरीर के कतिपय अवयव हमारे शरीर के अवयवों से आकृति या गति में अधिक भेद नहीं रखते। साथ ही हमारा यह विश्वास भी इस भ्रांति का कारण है कि हमारा मन इन सब गतियों का मूल है जो हम में होती रहती हैं। यही शरीर को गति देता है। यही हमारे विचारों का कारण है। यदि हम यह कल्पना स्वीकार करलें तो आगे चलकर यह मानने में कोई कठिनाई नहीं होती कि पशुओं में भी हमारा जैसा मस्तिष्क है। परन्तु गूढ़ विचार के पश्चात् हमको पता लगा है कि इन दो गतियों के मूलों में भेद है। एक तो केवल यांत्रिक या अचेतन है और पाशविक आत्मा की शक्ति तथा शरीर के अवयवों की बनावट के आश्रित है और इस को प्राकृतिक या भौतिक आत्मा कह सकते हैं। दूसरी अभौतिक अर्थात् मन या जीव है जिसको विचारवान वस्तु कह सकते हैं। मैंने बहुत सावधानी से यह विचार किया है कि पशुओं की क्रियायें इन दोनों मूलों से उत्पन्न होती हैं या केवल एक से। अब मुझे ज्ञात हो गया कि यह केवल एक ही मूल से उत्पन्न हो सकती हैं तो मैंने यह सिद्धांत निश्चय कर लिया कि हम पशुओं में ऐसे जीव के अस्तित्व को सिद्ध नहीं कर सकते जो विचार शक्ति रखता हो। मेरे इस सिद्धान्त में कुत्तों या लोमड़ियों की चालाकियों से कुछ बाधा नहीं पड़ती, न पशुओं के अन्य कामों से जो वे भय से, भोजन की खोज, या मन बहलाव के लिये करते हैं। मैं इन सब की व्याख्या पशुओं के शरीरावयवों की बनावट से कर सकता हूँ। (रोजर्स ने इस पत्र को अपने दर्शन इतिहास में उद्धृत किया है)।

इस पत्र में चेतन की पराजय और अचेतन की विजय के लिये बहुत कुछ सामग्री है। यदि कुत्तों की चालाकियों, तथा उनकी स्वामी भक्ति आदि अनेक अद्भुत प्रगतियों की केवल शरीर के अंगों की बनावट के आधार पर व्याख्या हो सकती है तो कोई कारण नहीं कि डिकोर्ट के दार्शनिक विचारों की व्याख्या उसके शरीर की बनावट से न हो सके। भेद परिमाण का है कोटि का नहीं। यदि एक बंदर बिना विचार शील जीव की संज्ञा के केवल अपने भौतिक शरीर के आधार पर अनेक प्रकार की जीवन सम्बन्धी योजनाओं को कर सकता है तो मैं भी बिना विचारशील

जीव के सहारे पुस्तक लिखने का काम कर सकता हूं। एक विचारशील अभौतिक जीव और दूसरा विचार शून्य भौतिक पदार्थ इन दो के मानने की आवश्यकता क्या? यदि मन और शरीर दो इतने भिन्न भिन्न पदार्थ हैं जिन में मेल हो ही नहीं सकता तो क्या केवल एक के मानने से काम नहीं चल सकता।

A Paving-stone could crush a buttrefly. but how could it affect a wish? An emotion could change the current of our thoughts, but how could it alter the temperature of a room? If mind and matter were realy different, if they possessed no single attribute in common how were they to 'come to each other' at all?

(Matter, Life and Value by Joad 1-8)

पत्थर एक तितली को मार सकता है परन्तु इच्छा कैसे उत्पन्न कर सकता है? एक भाव हमारी विचार धारा को तो बदल सकता है परन्तु घर के ताप को कैसे बदल सकता है? यदि चेतन और अचेतन वस्तुतः भिन्न भिन्न हैं यदि इन में कोई एक समान गुण नहीं है तो इन दोनों का एक दूसरे के साथ संपर्क ही कैसे हुआ?

(क्रमशः)

(पृष्ठ ६२ का शेष)

अर्थात् जो अपने पापों के कारण दुर्गति और दुःख के समुद्र में पड़े हुए हैं उन्हें यह गायत्री अपने हाथ का सहारा देकर उठाती है।"

आगे शख ऋषि कहते हैं—

गायत्री वेद जननी गायत्री पाप नाशिनी
गायत्र्याः परमं नास्ति दिवि चेह च पावनम् ॥

गायत्री की माता वेद है, पापों का नाश करने वाली है गायत्री से बढ़कर द्युलोक और पृथ्वी लोक में और कुछ नहीं है।"

अत्रि स्मृति में अत्रि ऋषि कहते हैं—

'सावित्र्यास्तु परं नास्ति पावनं परमं स्मृतम्'

अर्थात् गायत्री से बढ़कर पवित्रता करने वाला दूसरा मन्त्र नहीं। गायत्री आत्मा का शोधन करती है उसके प्रताप से कठिन दोष और दुर्गुणों का परिमार्जन होता है। गायत्री के तत्व को समझ लेने वाले को संसार में कोई दुःख शेष नहीं रह जाता।"

विश्वामित्र जी का कथन है 'गायत्री के समान चारों वेदों में कोई मन्त्र नहीं। सम्पूर्ण वेद, यज्ञ, दान तप गायत्री मन्त्र की एक कला के समान भी नहीं है।"

अथर्व वेद में गायत्री को आयु, प्राण, शक्ति, कीर्ति, धन और ब्रह्म तेज प्रदान करने वाली कहा गया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतवर्ष में एवं वैदिक साहित्य में गायत्री का महत्व अत्यधिक माना गया है। ऐसा क्यों है, इसका कारण गायत्री मन्त्र का अर्थ और व्याख्या देखने पर हमें स्वयं स्पष्ट हो जायगा। हमारे आचार्य अभयदेव जी ने गुरुकुल में एक बार विद्यार्थियों को उपदेश देते हुए कहा था कि जब तुम्हारे मन में किसी तरह की वासना, दुर्भावना या कोई बुराई जागृत हो उस समय तुम्हें चाहिए कि तुम गायत्री मन्त्र का जाप किया करो। जीवन में यह क्रिया कितनी लाभदायक सिद्ध हुई है यह अनुभव से जानी जा सकती है। हम इसके बाद गायत्री मन्त्र की व्याख्या करेंगे।

एक अमेरिकन विद्वान द्वारा पुनर्जन्म के सिद्धान्त का समर्थन

लेखक—श्रीयुत माफरे यल रूडा

पुनर्जन्म का सिद्धान्त अब व्यापक रूप से स्वीकार होने लगा है। पश्चिम की अपेक्षा पूर्व में अधिक जहां हजारों के स्थान में लाखों व्यक्ति शाकाहारी हैं। अकेली यह बात इस तथ्य को सूचक है कि हम जो पदार्थ खाते हैं उनमें और जीवनोद्देश्य की भावना में घनिष्ठ सम्बन्ध है।

यदि पूर्वजन्म की सच्चाई में जरा सा भी तथ्य है—जो आध्यात्मिक विकास का एक मात्र साधन है—तो हमें यह सोचना चाहिए कि सृष्टि की व्यवस्था में बेजुबान जीवों और प्राणियों को जो हमारे भाई के समान हैं हमें किसी प्रकार की पीड़ा देने का अधिकार है या नहीं जब कि हम स्वयं दूसरों से पीड़ित नहीं होना चाहते होते।

पुनर्जन्म का सिद्धान्त यह है कि आत्मा भौतिक शरीरों में जैसा कि हमें इस समय प्राप्त है जन्म-जन्मान्तरों में अपना विकास करता है। जन्म और मृत्यु दरवाजे हैं जिनके द्वारा हम वाह्य क्रिया-कलाप के इस विशेष क्षेत्र में प्रवेश करते और इसे छोड़ते हैं। इस संसार में हमें जीवन के जो भिन्न भिन्न स्वरूप देख पड़ते हैं वे सब भौतिक जगत् में ज्ञान प्राप्ति और विभिन्न सबक सीखने के माध्यम हैं। आराम और नाना प्रकार के अनुभवों की प्राप्ति के उपरान्त हम पूर्व जन्म के संस्कारों के साथ बार २ जन्म लेते रहते हैं।

पुनर्जन्म के सिद्धान्त से अद्भुत बालकों के चमत्कारों का रहस्य सहज ही ज्ञात हो जाता है। बच्चे एक मात्र अपने माता पिता के रजवीर्य के सम्मिश्रण का ही फल नहीं होते यह बात भी सहज ही सुस्पष्ट हो जाती है। अपनी बुद्धि और प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर पुनर्जन्म के सिद्धान्त की व्याख्या को स्वीकार करना अधिक युक्ति युक्त है बजाय यह मानने के जैसा कि विज्ञान वेत्ता हमें विश्वास दिलाने की कोशिश करते हैं कि हम प्रकृति के खिलौने हैं और हमारे समस्त जीवन में रक्त और वीर्य का प्रमुत्व रहता है जब कि मरने पर आत्मा या जीवन शक्ति के निकल जाने पर ये सब तत्व काम करना छोड़ देते हैं। प्रश्न यह है कि ये तत्व काम करना क्यों छोड़ देते हैं?

वैज्ञानिकों का यह भी दावा है कि बच्चे माता पिता के गुणों और अवगुणों को लेकर जन्म लेते हैं यह प्रकृति के विशुद्ध भौतिक पहलू होते हैं। पुनर्जन्म के सिद्धान्त से वंश-परम्परा के इस विवादास्पद विषय पर भी बड़ा प्रकाश पड़ता है।

हम में माता पिताओं की कुछ अनुरूपता का होना संभव है क्योंकि वे इस जगत् के उपयोग के लिये हमारे माध्यम स्वरूप हैं परन्तु बच्चों में और उनके माता पिताओं में शारीरिक, मानसिक और आत्मिक समानता नहीं होती। परन्तु यदि माता पिता के तत्व बच्चों के एक मात्र निर्माता अंश होते हैं तो उनमें उपर्युक्त विभिन्नता क्यों? वैज्ञानिक लोग यह भी कहते हैं कि कुछ पीढ़ियों में उत्पत्ति सम्बन्धी कुछ परिवर्तन होने से रह सकते हैं परन्तु वे अचानक उभर भी आते हैं। इस स्थापना से पुनर्जन्म के पक्ष की पुष्टि ही होती है जो इस बात

---

* World Forum वर्ल्ड फोरम के सौजन्य से।

धर्म के स्तम्भ

(२)

ज्ञान

लेखक— रघुनाथ प्रसाद पाठक

जिससे ईश्वर से लेके पृथ्वी पर्य्यन्त पदार्थों का सत्य विज्ञान होकर उनसे यथा योग्य उपकार लेना होता है उसे विद्या कहते हैं। दयानन्द सरस्वती

ज्ञान का महत्व इसी में है कि वह हमें सत्कर्म में प्रेरित होने के योग्य बनाये। ज्ञान बल समझा जाता है। निःसन्देह ज्ञान से बल बढ़ता है परन्तु इस बल की उपयोगिता उसके प्रयोग पर निर्भर होती है। ज्ञान के बल का गलत प्रयोग होने से बड़ा अहित और विनाश होता है। घातक युद्ध—सामग्री के निर्माण में भौतिक ज्ञान का घोर दुरुपयोग इस बात का ज्वलन्त प्रमाण है। भौतिक विज्ञान से मनुष्य को भौतिक सुख और सुविधाओं की प्राप्ति हो सकती है परन्तु आत्मिक आनन्द की प्राप्ति नहीं हो सकती क्योंकि आत्मिक आनन्द भौतिक विज्ञान की सीमाओं से बाहर की वस्तु होती है। भौतिक विज्ञान तो हाथों से छुई और आंखों से देखी जाने वाली वस्तुओं की ही ऊहा पोह कर सकता है। आत्मिक आनन्द भीतर की वस्तु होती है। भौतिक विज्ञान के आधुनिक चमत्कारों और आविष्कारोंने प्रकाश तो प्रदान किया परन्तु गर्मी प्रदान न की। ज्ञान से बुद्धि की शुद्धि होती है और मानवता से अनुप्राणित धर्म मार्ग में प्रेरित बुद्धि के द्वारा ही ज्ञान विज्ञान का सदुपयोग सम्भव होता है। बुद्धि के अधर्म मार्ग में प्रेरित होने के कारण भौतिक विज्ञान के चमत्कार गर्मी प्रदान करने वाले सिद्ध नहीं होते। अपना, संसार का और परमात्मा का ठीक-

---

की शिक्षा देता है कि आत्माएं वहां जन्म लेती हैं जहां दृढ़ आकर्षण होता और आत्माओं को अपने कार्यों का ठीक ठीक फल मिलने की अवस्थाएं होती हैं।

बहुत से लोग यह कहते हैं कि बच्चे अपने माता पिता के रोग से पीड़ित होते हैं यह बात वैज्ञानिक परम्परा के पक्ष में प्रमाण नहीं है।

ये बातें प्रसंग वशात् कह दी गई हैं। यदि यह जगत् आत्म-सुधार का स्थल है तो हमें सब प्रकार के मनुष्यों और प्राणियों के प्रति अपने रुख पर विचार करना होगा।

यदि हम यह मानें कि यह जगत् गड़बड़ घुटाला है आकस्मिक चमत्कारों की शृंखला है जिसमें क्रिया और प्रतिक्रिया को शासन में रखने के लिए कोई नियम या व्यवस्था नहीं है और कार्य कारण भाव की कोई संगति नहीं है तो हमारे व्यवहार से कोई सरोकार नहीं है। इस अवस्था में न तो हमें भूत की चिन्ता होनी चाहिये न वर्तमान की न भविष्य की न सदाचार की और नाहीं हमें अपने आचरण की उत्तरदायिता लेने की आवश्यकता होनी चाहिये। यदि हम पशु बने रहें या पशुओं की तरह दूसरे प्राणियों की हत्या कर के उनका मांस खाते रहें या चीर फाड़ कर उनको पीड़ा पहुंचाते रहें तो इसमें आश्चर्य ही क्या ?

यदि इसके विपरीत, जीवन का कोई उच्च उद्देश्य है। जीवन में नियम और व्यवस्था दीख पड़ती है सृष्टि के चमत्कार कुदरत के नियमों के अधीन हैं, और धीरे धीरे आत्मिक उन्नति अनुभव होती है तो हमें यह अनुभव हो सकता है कि हमारे व्यवहार और प्रतिक्रिया का बड़ा महत्व है क्योंकि जो कुछ हम करते हैं उसका प्रभाव हमारे ही ऊपर नहीं वरन् अन्यों पर भी पड़ता है।

ठीक ज्ञान प्राप्त करके अपना जीवन सुखी और समृद्ध बनाना तथा संसार के योग क्षेम में बड़े से बड़ा योग देते हुये ज्ञान के पंखों के सहारे परमात्मा की ओर उड़ जाना मनुष्य का परम लक्ष्य होता है। निर्मल ज्ञान और उस ज्ञान के शुभ कर्मों में परिणत होने से ही लक्ष्य की सिद्धि होती है।

न्यूटन कहा करते थे कि मैं "ज्ञान के अथाह सागर के तट पर खड़ा हूँ। उसमें गोता लगाने पर मुझे कुछ सीप ही मिल पाते हैं। यह कथन न्यूटन जैसे महान् विद्वान् के अनुरूप ही था। ज्ञानवान् व्यक्ति विद्या विज्ञान की समुपलब्धि कर लेने पर उसी प्रकार विनम्र बन जाते हैं जिस प्रकार फलों के बोझ से वृक्ष झुक जाता है। ज्ञान की उपलब्धि के साथ-साथ मनुष्य को अपने अज्ञान का बोध होने लगता है। अज्ञान की यह अनुभूति ही ज्ञान प्राप्ति की दिशा में पहला पग होता है। मनुष्य विश्व की पहेली हल करने के लिये उत्पन्न नहीं होता अपितु अपने कर्त्तव्यों को जानकर अपनी अल्पज्ञता और सीमित ज्ञान की परिधि के भीतर रहते हुये उनके सम्यक् अनुष्ठान के लिये उत्पन्न होता है। कुछ लोगों की दृष्टि में ज्ञान का ध्येय कौतूहल की सन्तुष्टि कुछ की दृष्टि में कीर्ति की उपलब्धि कुछ की दृष्टि में वादविवाद के आनन्द की प्राप्ति और कुछ की दृष्टि में जीविका की सिद्धि होता है परन्तु सचाई इसके विपरीत है। ज्ञान का वास्तविक उद्देश्य मानव का सर्वतोमुखी विकास और मनुष्य को परमात्मा की सर्वोत्तम कृति बना रखना होता है।

जो व्यक्ति अपनी अल्पज्ञता को अनुभव करता और ज्ञान प्राप्ति में लज्जा अनुभव नहीं करता वही ज्ञान प्राप्ति में अत्यधिक सफल होता है। एक बार अमेरिका के एक अत्यन्त ज्ञानवान् व्यक्ति से जब यह पूछा गया कि उसे प्रत्येक वस्तु के विषय में इतना अधिक ज्ञान कहां से प्राप्त हुआ तो उसने उत्तर दिया कि निरन्तर अपने अज्ञान को अनुभव करने और शंकाओं के निवारण में भय, लज्जा या संकोच अनुभव न करने से मुझे इतना ज्ञान प्राप्त हुआ है।"

ज्ञान की प्राप्ति अत्यन्त कठिन साध्यकार्य होता है। शुद्ध जल की प्राप्ति के लिए बड़े परिश्रम से भूमि को गहरा खोदना पड़ता है परन्तु मीठे जल का स्रोत निकल आने पर ऊपर उठता और मन चाहा जल प्रदान करता है। एक राजा ने यूक्लिड से पूछा 'क्या आप ऐसा मार्ग बता सकते हैं जिससे बिना परिश्रम किए ज्यामिति सीखी जा सकती है।' यूक्लिड ने उत्तर दिया 'ज्यामिति सीखने के लिये कोई राज-मार्ग नहीं है।' अन्य वस्तुएं धन से क्रय की जा सकती हैं छल-बल से छीनी जा सकती हैं परन्तु ज्ञान न तो क्रय किया जा सकता है और न छीना जा सकता है। यह तो परिश्रम पूर्वक एकान्त में अध्ययन और सतत परिवेक्षण से ही उपलब्ध हो सकता है। विद्या-विज्ञान के साम्राज्य की यह विशेषता है कि उसकी सम्पदा के नष्ट होने का भय नहीं रहता। ज्ञान प्राप्ति में यह न देखना चाहिए कि वह किस स्रोत से प्राप्त होता है। जिस स्रोत से भी वह प्राप्त हो सके प्राप्त करना चाहिए चाहे वह मूर्ख से प्राप्त हो या विद्वान से धनवान से प्राप्त हो या निर्धन से, चेतन से प्राप्त हो या अचेतन से।

ज्ञान को स्मृति में रखना और उसे बुद्धिमत्ता में परिणत करना ये भिन्न बातें हैं। स्मृति में सुरक्षित ज्ञान पर मनुष्य का अधिकार होना या कायम रहना संभव नहीं होता। अनुभव में आने पर ही ज्ञान पर अधिकार प्राप्त होता है। दूसरों को सिखाने से भी ज्ञान की वृद्धि और उस पर अधिकार की प्राप्ति होती है। ज्ञान ही ऐसी वस्तु है जो खर्च करने पर बढ़ती है। ज्ञान को छुपाकर अथवा अपने तक रखने में इसका महत्व घट जाता है। जिस प्रकार मूल्यवान् मणि की कान्ति छुपाकर रखने से नष्ट हो जाती है उसी प्रकार ज्ञान को छिपाकर रखने से उसकी कांति जाती रहती है। ज्ञान दीपक से दूसरों के दीपक जल जायं तो इनमें हानि ही क्या है?

मानवीय परिश्रम और शक्ति की सीमा होती है। बुद्धिमत्ता इसी में है कि मनुष्य अपना परिश्रम, समय और शक्ति उस काम के सीखने में लगाए जिसके

अखिल भारतीय आकाशवाणी से वार्त्तालाप*

ऋषि दयानन्द

श्रीयुत पं० अलगूराय शास्त्री एम० एल० ए०

शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्यमा ।
शन्न इन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रम ॥
ओं शम् ।

महाशिव रात्रि का पुनीत पर्व न जाने कब से आर्य जाति इसे उत्साह से मनाती आ रही है।

रात्रिः शिवा काचन सन्निधत्ते ।
विलोचने जाग्रतमप्रमत्ते ।
समान धर्मा युवयोः
सकाशे सखा भविष्यत्यचिरेण कश्चित ॥

मानों लोग इस आशा से अपनी दोनों आंखें खोल कर पूरी रात जागते रहते हैं कि इन आंखों के लिए एक उन्हीं के वर्ग का तीसरा नेत्र खुलेगा और उसे देखकर वह ज्ञान चक्षु का उपहार प्राप्त कर लेंगे। आज इस समय में जिस लोकोत्तर महापुरुष के चारु चरित की गंगा के पावन जल की घूंटे आप की सेवा में समर्पित करने जा रहा हूँ उस पुरुष की दिव्य दृष्टि इसी पर्व पर खुली थी।

अब जो अलौकिक विभूति ऋषि दयानन्द सरस्वती के नाम से ख्यात है वह मूल शंकर १४ वर्षीय आयु के बालक इसी महापर्व में प्रबुद्ध हुए थे। ८ वर्ष की आयु में ही इन्हें धर्मनिष्ठ पिता श्री अम्बाशंकर जी ने यज्ञोपवीत देकर सत् शास्त्रों के अभ्यास में लगा दिया था। सुतीक्ष्ण बुद्धि के मूल शंकर मेधावी थे।

"यश्छन्दसामृषभो विश्वरूपः
स मे इन्द्रो मेधया स्पृणोतु"

लिए वह उपयुक्त हो। किसी व्यक्ति के जीवन का परिचय पाने के लिए केवल यह जानना आवश्यक नहीं है कि वह क्या करता है अपितु यह जानना भी आवश्यक है कि वह जान बूझकर किन कामों को नहीं करता।

विभाजन के फल स्वरूप जब मजहबी पागलपन भारत और पाकिस्तान को खून की होली खिला रहा था मुलतान में हत्यारों से बचने के लिए एक हिन्दू एक मुसलमान के घर में घुस गया। उस समय घर में उसकी मालकिन एक बुढ़िया विद्यमान् थी। बुढ़िया ने दयावश उस हिन्दू को घर में छुपा दिया और हत्यारों के आने पर कह दिया कि इस घर में कोई हिन्दू नहीं आया है। हत्यारों ने बुढ़िया के सिर पर कुरान रखकर कसम खिलाई। बुढ़िया ने कसम खाली २ ३ दिन के पश्चात् जब हत्यारों को बुढ़िया के झूठ बोलने का पता लगा तो वे आग बबूला होकर उसके पास गए और उस पर कुरान की तौहीन करने का आरोप लगाया। बुढ़िया ने कहा 'तुम मुझे कुरान में यह लिखा हुआ दिखाओ कि पनाह लेने वालों को मौत के घाट उतारा जाय। इन्सानियत भी कोई चीज है।" बुढ़िया की इस बात का उनसे कोई उत्तर न बन पड़ा और वे अपना सा मुंह लेकर चले गए।

इस घटना से स्पष्ट है कि दया विहीन धर्म मतान्धता होती है। इसी भांति सहज बुद्धि बिना ज्ञान मूर्खता, व्यवस्था बिना बर्बादी और मानवता बिना मृत्यु होती है। सहज बुद्धिमय ज्ञान बुद्धिमत्ता, व्यवस्थामय शक्ति, उदारतामय उपकार और धर्ममय गुण, जीवन और शान्ति होता है।—

कोरा पढ़ा लिखा मनुष्य उस समय तक बेकार होता है जबतक ज्ञान पाकर व्यावहारिक बुद्धिमत्ता में परिणत न हो जाय और जीवन के व्यापार में सहज बुद्धि द्वारा क्रियात्मक रूप ग्रहण न करले।

* ऋषि बोधोत्सव के दिन २०-२-५२ को प्रसारित (आल इंडिया रेडियो के सौजन्य से)

का वरदान पूर्व पुण्य से सिद्ध था। इन्द्र द्वारा इनकी मेधा पुनीत की हुई थी।

आयु जब १४ वर्षकी हो गयी तब सं० १९१८ की महाशिवरात्रि पर पिता ने शिव व्रत लेने का आग्रह किया। माता तो इस कठोर व्रत के लिए कोमल बच्चे को अनुपयुक्त ही समझती थी। माताएं अपने बच्चों को सदा बच्चा ही समझती हैं। राम जब वन से रावणआदि का वध कर अयोध्या आये तब कौशल्या ने उन्हें और लक्ष्मण को सहसा गोद में लेकर कहा:—

"वन जात लालन के भये नवजात मुख हा भौ, मिला कैसे लरें खर सों खरे जे डरत सुनि रव कोकिल"

भला मेरे ये कोमल बच्चे जिनके कमल के मुख बन आते कुम्हला गये थे और जो कोयल के कलरव को सुनकर भी डर जाते है कठोर खरदूषणादि से कैसे लड़े होंगे? जननी की कातरता ऐसी ही होती है। अस्तु।

पिता के आग्रह पर मूलशंकर ने १४ वर्ष की आयु में महाशिवरात्रि पर व्रत रखा। मूलशकर को कुतूहल था कि उनकी दोनों आंखें यदि खुली रहीं तो दिव्य देव शंकर की तीसरी आंखें खुलते वह देखेंगे और इसके फलस्वरूप उनके ज्ञान चक्षु खुलेंगे।

मध्य रात्रि तक पुजारी आदि खुराटे लेने लगे। पिता जी भी ऊंघने लगे। जगे थे मूलशंकर और देखा कि एक नन्हा चूहा शिव की प्रस्तर मूर्ति पर चढ़े चावल चाब रहा है। इतनी ही घटना थी। मूलशंकर ने सोचा:—

क्रोधं प्रभोसंहर संहरेति यावत्
गिर खेमरुतां चरान्त।
तावत्स वह्निर्भवने भजन्या,
भस्मावषेषं मदनं चकार॥

कि जिस शिव के सम्बन्ध में यह कहा है कि हे शंकर, अपना क्रोध निवारो, क्रोध निवारो, यह कातर पुकार आकाश में गूंज भी न पायी थी कि शंकर के नेत्र की अग्नि ने कामदेव को भस्म कर दिया। क्या वह शंकर यह पाषाण हो सकता है?

नहीं, वह शंकर यह पत्थर नहीं हो सकता। न तस्य प्रतिमा अस्ति, उस शंकर की प्रतिमा कहां। मन में ये तिरोहित संस्कार बीज रूप में गड गये और फैले हुये अज्ञान को दूर करने के लिये दिव्य ज्योति इसी में से मिली। इसी का फल है आज भारत का यह विकासोन्मुख सौभाग्य। यहां भारत में वही युग १८४६ तक दयानन्द के तपस्या और व्रत-शीलता, अध्ययन मनन और भ्रमण प्रचार लेखन का समय बनकर भारत की गूढ निद्राभंग कर रहा था।

बहन की मृत्यु, चाचा की मृत्यु १८३८ के पश्चात् ८ वर्षों के भीतर दो और ऐसी घटनाएं हुईं कि मूल-शंकर वैराग्य के वश में हो गये। घर छोड़कर उस रात भागे जब विवाह के बन्धन में डाला जाने वाला था।

पिता ने पकड़ा। उनके कपड़े क्रोध में फाड़ डाले। फिर बन्धन में लाना चाहा। यह फिर भागे और वही भागना था जब हमारे देश के दुर्भाग्य भागे और अब दयानन्द जागे कि देश जागा और मानवताकी मोहनिद्रा भागी। "यो जागारतंमृचः कामयन्ते" का वरदान सफल हुआ। जो जाग्रत है सब उसी को पूजते हैं।

बस नर्मदा के तट पर विचरण अलखनन्दा को पार करना, बदरी नारायण आदि महान तीर्थों में भ्रमण, करना, योगियों की खोज में निरत रहना, योग साधना स्वाध्याय और सत्संग में बन बन भटके। अन्त में मथुरा पहुँच कर दण्डी स्वामी विरजानन्द की कुटिया में ज्ञान के सूर्य से इस आत्मा की भेंट हुई। विरजानन्द के चरण छुए। दण्डीने अपने कोमल करों से मानों यह कहते इस काया का स्पर्श किया।

'अयं मे हस्तो भगवान् अयं मे भगवत्तरः।
अयं मे विश्वभेषजं अयं शिवाभि मर्शनः।
हस्ताभ्यां दशशाखाभ्यां जिह्वा वाचः पुरोगनी।
अनामयित्नुभ्यांहस्ताभ्यां ताभ्यां त्वामभि मृशामसि।'

कि हे वत्स, ये मेरे हाथ भगवान हैं। भगवान से भी पुनीत हैं। ये अपने स्पर्श से कल्याण करते हैं।

वह शिवाभिमर्शन है। मैं इन हाथों से, उनकी दसों उंगलियों से तेरा स्पर्श करता हूं और यह कहते स्पर्श करता हूं कि तेरा कल्याण हो।

सुकरात को प्लेटो, बुद्ध को आनन्द व्यास को जैमिनी, गौतम को व्यास और भट्ट को जैसे प्रभाकर मिले थे आज विरजानन्द को वैसे दयानन्द मिले हैं।

गुरु दक्षिणा में लोंग नहीं चाहिये। गुरू ने कहा, तब और इस अकिंचन के पास इस काया को छोड़ कर क्या है गुरुदेव का कातर शब्द दयानन्द के मुख से निकला। और उससे अधिक कातर स्वर में विरजानन्द बोले, 'बस यही काया चाहिये!' दयानन्द बोले, बस यही काया चाहिये। दयानन्द ने पैरों में मस्तक रखकर काया दे दी। सच्छास्त्रों का प्रचार कर वेदों का उद्धार कर। अन्धकार का गढ़ अपनी वाणी से गिरा दे। मैं काया से जर्जर हो जो नहीं कर पाता हूं वह इस लोह काय से कर लेगा। समावर्तन के ये शब्द ही दयानन्द के लिए जीवन भर पथ-प्रदीप रहे।

दयानन्द ने देश में अज्ञान और कुरीतियों को देखा। हरद्वार के कुम्भ पर पाखण्ड खण्डिनी ध्वजा इकले पहरा दी। कौन जानता था कि वह ध्वजा हर हृदय में विराजेगी।

"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है" यह दयानन्द ने देख लिया। इस सत्य पर वह सौराष्ट्र के ग्रेनाइट चट्टान की तरह दृढ़ है। कोई शक्ति उन्हें इस विश्वास से न हटा सकेगी। इस मान्यता में वह ऋषि परम्परा में एक उज्ज्वल ज्योति बन कर हमारे सामने आये। महर्षि जैमिनी का स्मरण हो जाता है। आम्नायस्य स्वतः प्रमान्यम् वेद स्वतः प्रमाण हैं। जो वेदानुकूल नहीं वह अमान्य अनर्थकारी है। जिस आग्रह से जेमिनी ने यह कहा उसी आग्रह से दयानन्द की दिव्य वाणी में यह स्वर एक बार ऐसे समय में गूंजा जब भारत पर घोर विज्ञान घटा छायी थी। भीतर से विविध अवैज्ञानिक अंधविश्वास पूर्ण मान्यताएं प्राचीनतम संस्कृति की नींव गिरा रही थी और बाहर से अनेक मतमतांतर इसकी ऊपरी छत उतार रहे थे।

दयानन्द की एक ही सिंह गर्जना ने सबको सतर्क कर दिया। अज्ञान के गढ़ गिरा दिये। भारतीय आत्मा को अन्तःमुख होकर अपने स्वरूप को देखने का मन्त्र मिला।

दयानन्द की क्रांति ने हमें अपने प्राचीनतम रूप का निखरा स्वरूप प्रदान किया। "यहि आशा अटके रहे अलि गुलाब के मूल, ऐहे बहुरि वसन्त ऋतु इन डारिन वे फूल।" हमारे सारे प्रयत्न राष्ट्र और जाति के उत्थान के निमित्त इसी आशा में हैं कि हमारे जातीय जीवन पर विदेशीय प्रहारों का जो अभिशाप है वह दूर हो तो हम अपने रूप में जगें, हमारे बाह्य अभिशाप भगें। भौंरा शीतकाल में सूखे गुलाब की जड़ से लिपटा रहता है कि फिर वसन्त आवेगा। हिम गलेगा और उस गुलाब की जड़ में कंछे फूटेंगे उन कंछों में गुलाब के वे ही दिव्य फूल खिलेंगे। इस भावना को रिवाइवलिज्म कह कर कोई कोसे अथवा चाहे जो कहे परन्तु दयानन्द की देन और वरदान यही है कि उन्होंने इस जाति को शाश्वत अमर सन्देश के आदि श्रोत का अमृत पान कराया जो ऋषियों का मानवता को वरदान रहा है। अर्वाचीन भारत के सुधारकों की कोटि में उनका नाम गिनना अज्ञान का द्योतक है। सूर, तुलसी, कबीर को दरबारी कवियों में नहीं गिना जा सकता। गिर सम होहिं कि कोटिक गुंजा। 'दयानन्द ऋषि परम्परा के निर्भ्रान्त द्रष्टा है।' वह केवल भाष्यकार आचार्य नहीं। उन्हें पाकर भारत ने एक बार पुनः सुने जाने वाले कोर्तिमान आत्मदर्शी ऋषियों की लड़ी की एक विभूति पाई थी।

वह निर्भीकता में अद्वितीय थे। कर्नल एडवर्ड ने कहा है—मैं राजाओं सेना नायकों से मिला। कोई छाती तान कर मुझसे हाथ न मिला सका। एक ही व्यक्ति ऐसा मुझे भारत में मिला जिसने अकड़ कर हाथ मिलाया था वह था पण्डित दयानन्द।'

कोपीन पहने दानापुर प्लेटफार्म पर महाराज घूम रहे थे। एक मेम तथा साहब कुछ दूरी पर घूम

रहे थे। स्टेशन मास्टर ने नंगे घूमने वाले पर आक्षेप करवाया। दयानन्द निर्भीकता से वहीं पर पहुंच गये। बो, मैं तो नंगा हूं। परन्तु आदम को खुदा ने कैसा बनाया था। शैतान न होता तो फिर आदम कैसे रहता। विनोद पूर्ण, तर्क पूर्ण बात सुन पादरी चकित हुये, पूछा आप क्या स्वामी दयानन्द हैं। दयानन्द की कीर्ति कौमुदी छिटक चुकी थी।

नन्हीं सी बच्ची को नमस्ते किया। भक्तों ने पूछा ये क्या। महाराज बोले यह मातृशक्ति है। माता के प्रति यह महान मान था। नारी की निन्दा प्रचलित थी। "द्वारं किमेकं नरकस्य नारी" गाया जाता था। वहां उसी वातावरण में दयानन्द का यह दिव्य दर्शन कैसा चमत्कारी है!

तब वायुयान नहीं बने थे। पुराणों का दयानन्द खण्डन करते थे। भागवत में कर्दम द्वारा वायुयान गमन की कथा है। रामायण में पुष्पक द्वारा राम की सेना का लंका से अयोध्या जाना वर्णित है। यह भी सब मिथ्या ही है ऐसा शास्त्रार्थों में विधर्मी उठाते थे। दयानन्द ने कहा वे मिथ्या नहीं वेदों में वायुयानों तथा अन्य यन्त्रों का विशद वर्णन है।

"उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवरथः सुपविः सुचक्रः
सुनाभि, प्रति तिष्ठोर्ध्वः"

का वचन और इसी प्रकार के अनेक वचनों की सत्यता को स्वीकार कर दयानन्द वेद में निष्ठा रखने के कारण वायु में उड़ने वाले उड़न खटोले की कहानी निराधार नहीं मानते थे।

ऐसे दिव्य दर्शी की महिमा कैसे गायी जानी सम्भव है।

सहृदयं सांमनस्यम विद्वेषं कृणोमिवः
अन्योअन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या।

परस्पर मानवता में प्रेम हो। एक हृदय, एक मन, अविद्वेष, एक दूसरे के प्रति ऐसे परस्पर बढ़े जैसे सद्य: उत्पन्न बछड़े के प्रति गौ। यही आदर्श दयानन्द ने दिया है। इसी के आधार पर १८७६ में देहली में सर्वधर्म सम्मेलन बुलाया था।

संकुचित हृदयता, कटुता उनमें नाम को नहीं।
राजन् मैं भाग कर आपके राज से बाहर जा सकता हूं। परमात्मा की आज्ञा से बाहर जीवन भर जाने का प्रयत्न कर भी नहीं सकता। उदयपुर महाराणा से स्वामी ने कहा था जब मूर्ति पूजा का खण्डन न कर महन्त पद स्वीकार करने की प्रार्थना महाराज ने की थी।

'आप अच्छा करते हैं जो मूर्तियों का खण्डन करते हैं।' लाहौर के एक मुस्लिम महानुभाव ने ऋषि से कहा। ऋषि वहीं ठहरे थे क्योंकि अन्यत्र स्थान न मिल पाया था। ऋषि ने कहा, हां, मैं चार अंगुल की मूर्ति का भी विरोध करता हूँ और साढ़े तीन हाथ की कब्रों का भी। यह परवाह न की कि आतिथ्यकार असन्तुष्ट होगा। रूठेगा। निन्दन्तु नीति निपुणा यदि वास्तुवन्ति का लक्ष्य सदा सामने रखते थे।

जिस महर्षि ने जीवन भर सत्य ज्ञान की ज्योति जगायी और मानव समाज की अन्धता मिटायी उसने अन्त में १८८३ में दीपावली के दिन अपनी आत्म ज्योति से भारत की दीपावली के घर घर दीपों में ज्योति जला दी। उस ज्योति की कला उसके पश्चात् लेखराम, गुरुदत्त, श्रद्धानन्द, लाजपतराय, विश्वेश्वरानन्द, गणपति शर्मा आदि महान् आत्माओं के रूप में लोक कल्याणकारी आर्य समाज द्वारा सेवा करती निकली। महात्मा गांधी के सुधार में जो तीव्रता है, उसका मूल दयानन्द की प्रेरणा में ही ओतप्रोत है। चाहे हरिजन उद्धार हो, चाहे नारी सुधार हो और चाहे स्वदेशीयता। गुरुकुल, कन्या विद्यालय, दयानन्द स्कूल कालेज, अनाथालय, वैदिक मुद्रणालय आदि आर्य समाज द्वारा संचालित ऋषि यश गा रहे हैं, मानवता को उठा रहे हैं।

पृष्ठात् पृथिव्या अहमन्तरिक्षमारुहम न्तरिक्षाद्-
दिवमारुहम्। दिवोनाकस्य पृष्ठात् स्वर्ज्योति रगामहम्

का वचन चरितार्थ हुआ। यह ज्योति पृथ्वी की पीठ से उठकर अन्तरिक्ष गयी। अन्तरिक्ष से द्यौलोक जैसे नाक लोक और और अन्त में वह स्वर्ज्योति में मिलकर ब्रह्म रूप हो गयी।

आज उसी पावन ज्योति सत्यार्थ प्रकाश के प्रसारक ऋषि दयानन्द की स्तुति करके हम सब शिवरात्रि में अपने तीसरे नेत्र ज्ञान को खोलें।

❀ ऋषिराज ! ❀

[रचयिताः—श्री रविवर्मा आर्य 'रवि' सिद्धान्त शास्त्री उज्जैन]

(१)

जलाकर निज जीवन के दीप, विश्व को देने शुभ्र प्रकाश।
हटाने जगती से तम-तोम, अविद्या-निशि का करने नाश॥

(२)

सुनाने जग को श्रुति-संदेश, जगाने भारत-भू का भाग्य।
हुए प्रगटित तुम हे ऋषिराज ! अमिट-छवि ले अनुपम वैराग्य॥

(३)

फूंक तुमने स्वराज्य का मंत्र, रखा निज देश जाति का मान।
सिखाया सुखमय 'राज्य-स्वतन्त्र'', दुखद परतन्त्र स्वर्ग-सम्मान॥

(४)

गुँजाए ऋषियों के गुण-गीत, किया घर-घर में आर्ष प्रचार।
चढ़ाया गौरव-गिरि पर देश, सिखाकर वैदिक-शिष्टाचार॥

(५)

स्वभाषा का करने उद्धार, रचे भाषा में ग्रन्थ अनेक।
विविध-सच्छास्त्र ज्ञान-सम्पन्न, जगत से हरने को अविवेक॥

(६)

बढ़ाया नारि-जाति का मान, किये विधवा के दु:ख निःशेष।
दलित दुखियों का कर परित्राण, जगत में चमके दिव्य दिनेश॥

(७)

धन्य, हे मातृभूमि तू धन्य; धन्य ! गौरवमय गुर्जर-प्रान्त।
वेद 'रवि' की ले अद्भुत दीप्ति, जहां जन्मे ऋषिवर निर्भ्रान्त॥

—'रवि'

* हमारा लक्ष्य *

(ले०—श्रीयुत प्र०धीरेन्द्र 'शील' शास्त्री, काव्य तीर्थ, साहित्य रत्न, लन्दन)

पिछले ५० वर्षों की वैज्ञानिक उन्नति और महायुद्धों ने हमें इतना समीप ला दिया है कि आज विश्व का कोई भी राष्ट्र अपनी सामाजिक व राजनैतिक समस्याएं अकेले ही नहीं सुलझा सकता। विश्व-भ्रातृत्व की भावनाओं से भरा शान्ति पूर्ण नया युग आ रहा है।

धर्म का महान् लक्ष्य भी यही है कि प्राणीमात्र को 'एकत्व' की भावना से बांध देना। यदि कोई भी मत व सम्प्रदाय ऐसा नहीं करता तो उसे कदापि 'धर्म' नहीं कहा जा सकता।

वर्तमान में भी राजनैतिक क्षितिज से साम्राज्यवाद तथा उपनिवेशवाद मिटते जा रहे हैं। इसी प्रकार धार्मिक व सामाजिक क्षेत्र में भी किसी प्रकार का 'साम्राज्यवाद' हम सहन नहीं कर सकते। यदि कोई संसार का बड़ा से बड़े शक्तिशाली सम्प्रदाय (ईसाई मत) भी विश्व के अन्य राष्ट्रों पर किन्हीं राष्ट्र विशेषों की सहायता से छा जाने का यत्न करता है, तो हम कहना चाहते हैं कि यह उसका मिथ्या स्वप्न मात्र होगा।

नये वैज्ञानिक विकास तथा भौतिकवादी शिक्षा के प्रचार से आधुनिक युग धर्म के प्रति बड़ी उपेक्षा से देखता है इस नई रुचि के लिये धार्मिक नेता भी उतने ही जिम्मेवार हैं जिन्होंने 'धर्म' की असत्य व्याख्यायें करके मानव को मानव से, राष्ट्रों को राष्ट्रों से लड़ाकर, धर्म के प्रति घृणा व उपेक्षा उत्पन्न कराने में योग दिया है।

अनेक बार विश्व धर्म सम्मेलनों के द्वारा, विभिन्न विश्व धर्मों को एक ही मंच पर, विश्व कल्याण की एक मात्र कामना के लिये एक साथ खड़ा करने के प्रयत्न किये जाते रहे हैं। किन्तु खेद है कि स्वार्थ-भावना, अज्ञानता तथा हठधर्मिता के कारण आज तक के ये सत् प्रयत्न सदैव असफल रहे हैं। आज वह समय आ चुका है जब विश्व शान्ति व बन्धुत्व की स्थापना के लिये सत्य धर्म का प्रचार अनिवार्य आवश्यकता के रूप में स्वीकार करना होगा।

२०वीं शताब्दी के इस वैज्ञानिक युग में लोगों की यह धारणा बन गई है कि धर्म विज्ञान व दर्शन भिन्न भिन्न कभी एक न होने वाली धाराएं हैं। दुर्भाग्य से यूरोप में ऐसे अनेक अवसर आ चुके हैं जब वैज्ञानिकों और दार्शनकों को तथाकथित धर्म विशेष के असत्य मन्तव्यों को स्वीकार न कर सकने के कारण जाति बहिष्कार और प्राण दण्डित भी किया गया। क्योंकि धर्म के व्याख्याताओं व आचार्यों ने सत्य गवेषणाओं को बलात् रोकने का यत्न किया अतएव सत्य के आराधकों को विज्ञान, दर्शन व धर्म को पृथक पृथक श्रेणियों में विभाजित करना पड़ा।

उस समय यूरोप में वैज्ञानिक तथा औद्योगिक क्रांति प्रारम्भ हो चुकी थी, नये सत्यान्वेषकों ने धर्म से असहमति प्रारम्भ कर दी थी। ऋषि दयानन्द सरस्वती ने हमें प्रकाश दिया। एक शाश्वत समाधान हमारी समस्याओं का—वैदिक ज्ञान। एक आस्तिक समाजवादी सुधार आन्दोलन प्रारम्भ हुआ—आर्य-समाज के नाम से सन् १८७५ ईसवी में।

वैदिक सिद्धान्तों के आधार पर धर्म दर्शन व विज्ञान का परस्पर कोई विरोध नहीं। जैसा कि हक्सले (पाश्चात्य प्रसिद्ध विचारक) का भी कथन है:-

---

लन्दन में आर्य समाज स्थापना के समय दिया हुआ भाषण

"सत्य विज्ञान व सत्य धर्म जुड़वा बहिनें हैं जिन्हें पृथक करने का अर्थ है दोनों की मृत्यु।"

निस्सन्देह इसका लक्ष्य है सत्यं, शिवं, सुन्दरं से इस सृष्टि को आप्लावित करना। इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिये, सृष्टि के आदि काल से सत्य साधक आत्मोत्सर्ग की वेदी पर चढ़ते आये हैं। उन्हीं सत्य उपासक ऋषियों व मुनियों का उत्तराधिकारी वैदिक धर्म के रूप में हमारे लिये प्राप्त हुआ है। वैदिक धर्म के रूप में विज्ञान व दर्शन धर्म के विशेष अंग है। उसके विरोधी नहीं।

किसी भी देश या जाति की वास्तविक महत्ता उसकी भौतिक सम्पत्ति अथवा सैन्य व आणविक शक्तियों से नहीं आंकी जा सकती। अपितु उसका गौरव विश्व शान्ति व कल्याण के लिये उसके शान्ति पूर्ण प्रयत्नों और उनकी नैतिक शक्ति से होता है।

वैदिक धर्म का क्षेत्र अन्य मतों की भांति संकुचित नहीं है। धर्म की परिभाषा "धार्यन्ते इति धर्मः" अतः आर्य समाज बिना किसी देश व जाति व रंग विशेष से सम्बन्धित होकर आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक आदि क्षेत्रों में प्रत्येक की स्वतन्त्रता, समता व उन्नति का यथोचित समर्थन करता है। जैसा कि छटे नियम में कहा है 'संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है।' हम विश्व के प्रत्येक क्षेत्र में शांतिपूर्ण विकास चाहते हैं और इसीलिये प्रत्येक राष्ट्रीय व सामाजिक स्वतंत्रता आंदोलन का बिना किसी भेदभाव के समर्थन करते हैं।

तथापि यदि हम सच्चे सत्य पन्थानुगामी बनना चाहते हैं तो हमें अपने मस्तिष्क को सदैव खुला रखना होगा। इसीलिये आर्य समाज के तीसरे नियम में "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है" ऐसा मान कर भी चौथे नियम में कहा गया है "सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।"

आर्य समाज, केवल आर्य समाज ही वैदिक धर्म के द्वारा संत्रस्त एवं पाशविक शक्तियों से पीड़ित इस विश्व का उद्धार कर सकता है। हम विश्व की एकता तथा बन्धुत्व में विश्वास करते हैं। अतः प्रत्येक शान्ति पूर्ण प्रयत्नों से, तटस्थ रह कर विश्व राज्य की स्थापना में योग देंगे।

हमारा लक्ष्य है, "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" सम्पूर्ण सृष्टि को आर्य बनायें किन्तु किसी पर शासन नहीं करना चाहते अतः भावना रखते हैं "मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे"—प्राणी मात्र के प्रति मित्र भाव रखें और सदा प्रार्थना की समाप्ति पर "ओं शांति ३" की कामना से सम्पूर्ण सृष्टि में चिर-शांति की याचना करते हैं।

तथापि हम अपने विचारों को किसी पर लादना नहीं चाहते। हम चाहते हैं ऋषियों के वैदिक संदेश को लोगों तक पहुँचा कर उन्हें खुले मस्तिष्क से सोचने का अवसर देना हमारे सिद्धांत अच्छे लगें तो हम कहेंगे, "आइये हमारे साथ और इन सत्य विचारों को विश्व में फैलाने का प्रयत्न कीजिये।"

धर्म! यदि वह सत्य ईश्वरीय धर्म है, तो उसे विश्व में फैलाने के लिये ऊंचे वेतन पाने वाले, प्रचारकों—मिशनरियों की बड़ी सेना की आवश्यकता नहीं है। बड़े बड़े साम्राज्यों की शाही आर्थिक सहायता की उसे आवश्यकता नहीं होनी चाहिये। इसी विश्वास के साथ हम बिना किसी राज्य व जाति विशेष की आर्थिक सहायता के सत्य वेद धर्म का संदेश लेकर यूरोप व लन्दन आये है।

आइये! हमारे साथ, हम मिलकर आर्य समाज के दस नियमों के आधार पर मानव कल्याण एवं विश्व शांति की ओर आगे बढ़ें। आज यही हमारा लक्ष्य है।

बंगाल आसाम आर्य सम्मेलन

अंति सन्तं न जहात्यन्ति सन्तं न पश्यति।
देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीयात॥

अथर्व-१०।८।३२

सज्जनो !

आपने मुझे इस सम्मेलन का अध्यक्ष बनाकर मेरी नहीं, उस वैदिक धर्म और आर्य समाज की प्रतिष्ठा की है, जिसका मैं एक सामान्य सा सेवक हूँ।

परमात्मा की कृपा से आज हमारा देश स्वतन्त्र है और हम स्वतन्त्र भारत में स्वच्छन्दता पूर्वक विचर रहे हैं। इस युग में स्वदेशीयता और स्वतन्त्रता की अग्नि सबसे प्रथम महर्षि दयानन्द के महान् ज्ञानागार और विशाल हृदय में प्रज्वलित हुई थी। उन्होंने ही सबसे पहले कहा था कि जननी जन्मभूमि भारत माता विदेशी शासन से जितनी शीघ्र मुक्त हो सके उतना ही अच्छा है। आधुनिक युग में स्वराज्य शब्द की झांकी सब से प्रथम हमें महर्षि के रचे सत्यार्थ-प्रकाश के पृष्ठों पर ही होती है। स्वराज्य का क्या स्वरूप होना चाहिये इसकी विशद व्याख्या भी ऋषि दयानन्द ने की है। श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज सचमुच स्वराज्य के सूत्रधार थे। उन्होंने बड़ी निर्भयता से बताया कि विदेशी शासन कितना ही श्रेष्ठ क्यों न हो परन्तु स्वराज्य या स्वशासन की समता नहीं कर सकता है।

महर्षि दयानन्द का प्रादुर्भाव ऐसे समय में हुआ जब देश में मिथ्या विश्वास की आंधी आई हुई थी और अन्ध परम्परा का घोर अन्धेरा छा रहा था। बुद्धिवाद या तर्क शैली की प्रतिष्ठा नष्ट हो चुकी थी और बाबा वाक्यम प्रमाणम का बोल बाला बढ़ रहा था। जड़ चेतन में कोई भेद न था। पशु पक्षी, वृक्ष, मनुष्य, पहाड़, नदी नाले और पाषाण परमात्मा के स्थान पर पूजे जाते थे। अपने कल्पित या मनगढन्त तैंतीस कोटि देवताओं से सन्तुष्ट न होकर हिन्दू समाज विधर्मियों की कब्रों को पूजने लगा था। मादकता और हिंसा ने धूम मचा रखी थी। निरपराध पशुओं पर निर्दयता पूर्ण प्रहार किये जाते थे। मांस भक्षण सभ्यता का चिन्ह मान लिया गया था। बाल विवाहों का प्रभूत प्रचार था। महिलाओं पर भयंकर अत्याचार किये जाते थे। अगणित अनाथ हिन्दू जाति की गोद से छिन कर ईसाई मुसलमानों की बपौती या विभूति बन रहे थे। विधवाओं के लिये हिन्दुओं में कोई स्थान न था उन्हें अवांछनीय स्थानों और स्थितियोंकी शरण या आश्रय लेकर अपना दुर्वह जीवन व्यतीत करना पड़ता था। गोवंश का भयंकर ह्रास देखकर आंखों से अश्रुधारा बह निकलती थी। यह था वह समय जब महर्षि दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ।

उस समय देश में सबसे बड़ा दोष अन्धानुसरण का आ गया था। उसे अपने यहां की सब विचार-धारायें विकृत और त्याज्य दिखाई देती थीं और पाश्चात्य प्रणाली के अनुकरण में आनन्द आता था। वेशभूषा भी बिल्कुल परिवर्तित हो चुकी थी। सर्वत्र विदेशीयता का ही प्रभाव परिलक्षित होता था। हिन्दी आर्य भाषा का स्थान अंग्रेजी और फारसी उर्दू ने ग्रहण कर लिया था। वेदवाणी संस्कृत का प्रचार नाम मात्र को ही शेष रह गया था। दो शब्दों में कहें तो कह सकते हैं कि उस समय भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का प्रायः मूलोच्छेदन हो चुका था। वह गत प्राण हो गई थी।

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती का अध्यक्षीय अभिभाषण ३-३-४९

ऐसे समय में महर्षि दयानन्द और उनके द्वारा संस्थापित आर्य समाज ने मृत्युन्मुख भारतीयता के निर्बल और निष्क्रिय शरीर में प्राणों का संचार कर उसकी पूर्णरूप से रक्षा की। बुद्धिवाद का प्रचार किया और सत्यासत्य का निर्णय करना सिखया कर्तव्याकर्तव्य निश्चित करने की बलवती प्रेरणा प्रदान की। भारतीय भावना जीवित जागृत कर शिक्षा संसार को क्रान्ति का सन्देश दिया। गौ, अनाथ, और विधवाओं की दयनीय दशा सुधारी। स्त्रियों के साथ विषम व्यवहार दूर कर उनके प्रति समता और न्याय-पूर्ण व्यवहार की भावना भरी। साथ ही आर्य भाषा हिन्दी के विस्तार के लिये भी सबल प्रयत्न किया। फलतः, भारतीय संस्कृति जाग उठी और आर्य सभ्यता का सुन्दर स्वरूप सामने आ गया।

महर्षि दयानन्द ने स्पष्ट कहा कि जो शिक्षा शारीरिक मानसिक और आत्मिक विकास में सहायक नहीं हो सकती उसे शिक्षा कहना, शिक्षा का उपहास करना है। इसी उद्देश्य से महर्षि ने गुरुकुलों की स्थापना पर जोर दिया और परमपावन आर्ष प्रणाली की समीचीनता सिद्ध की। देश में संस्थापित अनेक गुरुकुल और कितने ही दयानन्द महाविद्यालय (कालिज) इस भावना के भव्य प्रतीक हैं। इतना ही नहीं वेदों और वैदिक साहित्य के जीर्णोद्धार के लिये भी महर्षि दयानन्द और आर्य समाज ने बड़ा काम किया। आश्रम धर्म और वर्ण व्यवस्था का मर्म समझाया। जन्मगत जाति वाद का प्रतिवाद कर गुण, कर्मानुसार वर्ण निश्चित करने की विधि पर बल दिया। मानवता की पुनीत परिधि में अस्पृश्यता के विचार मात्र का भी तिरस्कार किया। मनुष्य मात्र को वेद पढ़ने का अधिकार दिया। स्त्री और शूद्र किसी के लिये भी वेद ज्ञान का द्वार बन्द न किया जाये इसकी निर्भय घोषणा की।

अभिप्राय यह है कि भारत को शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, साहित्यिक सांस्कृतिक आदि सभी उन्नतियां जिन साधनों और उपायों द्वारा सम्भव थीं उन सब का चिन्तन कर उन्हें क्रियान्वित करने पर आर्य समाज और महर्षि दयानन्द का प्रयत्न रहा। सौभाग्य से आज आर्य समाज के उपदेश सारे देश में फैल चुके हैं। प्रत्येक समाज और समुदाय अपनी वेदी से उन्हीं बातों की घोषणा कर रहा है। भले ही कोई आर्य समाज का उल्लेख न करे परन्तु मार्ग या पथ वही है जिसका निर्माण आज से प्रायः पौन शती पूर्व महर्षि दयानन्द कर चुके हैं। महर्षि मानवता के प्रेमी और विश्व बन्धुत्व के समर्थक थे। इसी लिये उन्होंने केवल भारतवर्ष नहीं, संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य बताया। जो कुछ कहा संसार और मानवमात्र को लक्ष्य करके कहा। मानव ही क्यों महर्षि ने तो पशु पक्षियों और जीव जन्तुओं पर भी अपनी करुणामयी पीयूष वर्षा की। प्राणी मात्र को दया का अधिकारी बताया। इससे अधिक विचारों की व्यापकता, उद्देश्य की महत्ता और उदारता की असीमता और क्या हो सकती है। सचमुच वसुधैव कुटुम्बकम् भावना मानवता का सार या स्रोत है। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं।

महर्षि दयानन्द का व्यक्तित्व और जीवन महान् था। वे देश और धर्म के लिये जिये और इन्हीं के लिये प्राण दिये। जिस समय स्वराज्य, स्वदेश या लोकतन्त्र की चर्चा करना भी अक्षम्य अपराध था, अन्धपरम्परा या मिथ्या विश्वासों का खण्डन कर बुद्धिवाद का वैदिकता का प्रचार पाप समझा जाता था उस समय महर्षि दयानन्द ने बड़ी निर्भयता से इन दोनों क्षेत्रों में सिंह गर्जना की। महर्षि पर अनेक प्रकार के प्रहार हुये, परन्तु सबको शांति पूर्वक सहते हुये वे अपने उद्दिष्ट पथ पर अटल एवं अचल रहे। यहां तक कि अपनी ध्रुव धर्म धारणा की वेदी पर उन्हें अपने अमूल्य प्राणों की बलि प्रदान करनी पड़ी। महर्षि के पश्चात् उनके द्वारा संस्थापित आर्य समाजने भी अपने प्राणोंका पण लगा कर धर्म तथा देश की अमूल्य सेवा की। भयंकर कष्ट सहे और अनेक बलिदान दिये परन्तु सुनिश्चित कर्तव्य मार्ग से बाल बराबर भी विचलित होना उचित न समझा। आर्य

समाज का इतिहास तप-त्याग और बलिदानों का इतिहास है, यह बात उसके कट्टर से कट्टर विरोधी को भी स्वीकार करनी पड़ेगी।

बन्धुओ, "मेरे कानों में प्रायः ये शब्द आते रहते हैं कि यतः आर्य समाज का कार्यक्रम सभी ने अपना लिया है अतएव अब आर्य समाज की आवश्यकता नहीं रही। परन्तु मैं इस विचार से सहमत नहीं हूं। मैं तो कहता हूँ और बलपूर्वक कहता हूं कि यदि कभी सबसे अधिक आर्य समाज की आवश्यता थी तो वह समय यही है। देश की प्रायः सभी सभा संस्थाओं पर राजनैतिक सफलता विफलता का भूत सवार है। चुनाव चक्र जोर से चलता रहता है उसी की हार जीत से सबका भाग्य बंधा हुआ है। परिणाम स्वरूप देश में भ्रष्टाचारिता और अनैतिकता बढ़ती आती है। रचनात्मक कार्यक्रम प्रायः अस्त सा हो रहा है। स्वराज्य होने पर भी सुराज्य की आवश्यकता बनी हुई है। सुराज्य के राजनैतिक कारणों पर यहां कुछ कहना मेरा उद्देश्य नहीं मैं तो उसके नैतिक आधार पर ही विचार करना चाहता हूँ मेरा विश्वास है कि जब तक देश में नैतिकता और धार्मिकता का प्रभाव या प्रचार न होगा तब तक जनता में सुख समृद्धि की स्थिति विकसित नहीं हो सकती। नैतिकता से मेरा अभिप्राय उन सिद्धान्तों या नियमों से है जो जीवन में भद्र भावना भर कर उसे पवित्र और पावन बनाते हैं। धार्मिकता आत्मा परमात्मा के मध्य वास्तविकता स्थापित कर जीवन को कल्याणमय क्रियायुक्त, पुण्यशील और परिष्कृत बनाती हुई इसे विश्व बन्धुत्व, स्नेह और सुख शान्ति की ओर ले जाती है। आज वास्तविक धर्म और नैतिकता के बिना भारत ही नहीं सारे संसार की जो अधोगति हो रही है वह किस से छिपी है सदाचार और चरित्रबल का ही नाम नैतिकता है। कुछ लोग सदाचार या चरित्र का बड़ा सीमित संकुचित अर्थ करते हैं। परन्तु वस्तुतः सदाचार तो विचार एवं आचार में समता या एकता होने का ही नाम है। किसी ने कहा भी है—

अनाचारस्तु मालिन्यम् अत्याचारस्तु हीनता
विचाराचार संयोगः सदाचारस्य लक्षणम्।

सदाचार के बिना कोई राष्ट्र या समुदाय उन्नति नहीं कर सकता। सफलता और समुन्नति का मूल मन्त्र सदाचार या चरित्र बल ही माना गया है। कवि कहता है—

जिसे प्राण प्यारा सदाचार होगा,
वही वीर संसार से पार होगा।
नहीं नाम का धर्मधारी तरेगा,
कहो काठ का केहरी क्या करेगा।

इसी प्रकार जो लोग धर्म का सीमित अर्थ करते हैं वे भी धर्म के साथ न्याय नहीं करते। धर्म विश्व के लिये है। मानव मात्र के लिये है। जिन सिद्धान्तों से अभ्युदय और निःश्रेयस की सिद्धि होती है उन्हीं का नाम धर्म है। अर्थात् जो साधन लौकिक एवं पारलौकिक सिद्धि में सहायक होते हैं उन्हीं को धर्म की संज्ञा दी गई है। समझ में नहीं आता, ऐसे व्यापक और विशाल धर्म को कुछ लोग क्यों साम्प्रदायिकता की सन्दूक में बन्द करने का असफल प्रयत्न करते रहते हैं? क्यों इसे संकीर्णता की रूढ़ियों में जकड़ना चाहते हैं? महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी दोनों महान पुरुष काठियावाड़ की भव्य भूमि के रत्न थे। दोनों ने ही इस देव भूमि को पराधीनता पाश से मुक्त कराने का पूर्ण प्रयत्न किया। एक महापुरुष ने स्वराज्य का सूत्रपात किया दूसरे ने उसकी प्राप्ति करके दिखादी। दोनों ईश्वर और धर्म के पूर्ण भक्त और अनन्य अनुयायी थे। वे एक क्षण के लिये भी धर्म या ईश्वर की अवहेलना अथवा उपेक्षा देखना न चाहते थे। महर्षि दयानन्द के ईश्वर और धर्म सम्बंधी विमल विचारों से ग्रन्थ के ग्रन्थ भरे पड़े हैं। महात्मा गांधी का कहना था कि मैं बिना भोजन के कई दिन रह सकता हूँ परन्तु प्रभु प्रार्थना के बिना एक क्षण भी बिताना मेरे लिये असम्भव है। उन्होंने स्पष्ट कहा है—

"मैं धर्म से भिन्न राजनीति की कल्पना नहीं

कर सकता। वास्तव में धर्म तो हमारे हर एक कार्य में व्यापक होना चाहिये। मेरे नजदीक धर्म विहीन राजनीति कोई चीज नहीं है। धर्म के मानी वहमों और गतानुगतिकत्व धर्म नहीं द्वेष करने वाला और लड़ने वाला धर्म नहीं बल्कि विश्वव्यापी सहिष्णुता का धर्म। नीतिशून्य राजनीति सर्वथा त्याज्य है।"

उपर्युक्त वाक्यों में महात्मा गांधी ने धर्म और नीति दोनों की उपयोगिता और महत्ता स्वीकार की है। जिस स्वराज्य सत्ता ने धर्म को धता बतादी है उसको राष्ट्रपिता गांधी जी के ये अनमोल वाक्य बड़े ध्यान पूर्वक पढ़ने चाहिये और उन पर अनुष्ठान या अमल भी करना चाहिये। सरकार ने अपने संविधान में न जाने धर्म को कोई स्थान क्यों नहीं दिया, परन्तु आर्य समाज को धर्म प्रचार अपने हाथ में लेना चाहिये। आज दुर्भाग्य से भ्रष्टाचार और अपराधों की उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है ज्यों ज्यों बड़े और बड़े कानून बनते जाते हैं, त्यों २ जुर्मों के भी नये तरीके निकलते जाते हैं। कारण स्पष्ट है। देश में धर्म और नैतिकता केप्रचार के लिये किसी प्रकार का उद्योग नहीं हो रहा। धर्म त्याज्य समझकर एक दम उपेक्षित कर दिया गया है। नैतिकता की पूर्ति कानूनों की कड़ाई से करने की ठान ली है। दोनों विचारधारायें निर्बल और निरर्थक हैं। भ्रष्टाचार अनाचार या दुराचार का अन्त करने के लिये धर्म और नैतिकता का आश्रय लिये बिना कदापि काम नहीं चल सकता। कानून द्वारा दसियों बार दण्डित होने पर भी अपराधी अपनी मलिन मनोवृत्ति नहीं त्यागता-हृदय परिवर्तन की ओर ध्यान नहीं देता। परन्तु यदि उसे धर्म या नैतिकता के आधार पर सत्य एवं सहानुभूति के वातावरण में सारी बातें समझाई जायें तो हृदय परिवर्तन हुये बिना न रहेगा और निश्चय ही अपराधी अपने कुकृत्य को त्याग देगा। पहले युग में ऐसे सैंकड़ों उदाहरण मिलते हैं। आज भी ऐसे हृदय परिवर्तित व्यक्ति मिलते सकते हैं। समझाने बुझाने से सब कुछ हुआ और हो सकता है। निराशा की कोई बात नहीं है। आपसे मेरी प्रार्थना है कि देश की समृद्धि और शान्ति के लिये सबसे प्रबल धार्मिकता और नैतिकता का प्रचार होना चाहिये इससे सबकी मनोवृत्ति बदलेगी और सत्य तथा सद्भाव का प्रचार होगा। जनता आनन्द मग्न होगी और भ्रष्टाचार तथा अपराध घटने से स्वराज्य सरकार का व्यवस्था कार्य भी बहुत हल्का हो जायेगा। यह काम आर्य समाज के करने का है अतएव उसे बड़े उत्साह से उसमें संलग्न हो जाना चाहिये।

भाइयो, धर्म और नैतकता केप्रचार की आवश्यकता की ओर आपका ध्यान आकृष्ट करने के अनन्तर जिन दो महत्वपूर्ण बातों की चर्चा कर देना मैं बहुत आवश्यक समझता हूं वे हैं गोरक्षा और ईसाइयों का धर्म प्रचार। गोरक्षा करने का अर्थ है अपनी रक्षा करना। जब से भारतीय संस्कृति है तब ही से गो की महत्ता और उपयोगिता है। इसका कारण यह है कि गो विविध रूप से राष्ट्र के लिये अत्यन्त हितकर सिद्ध हुई है। वह हिन्दू ईसाई मुसलमान इत्यादि किसी के साथ भेद भाव नहीं करती, सबको समानता से दूध, दही, घृत माखन देती है। उसे माता का पद देकर सर्वथा उचित ही किया गया है। जिस प्रकार माता अपना दूध पिलाकर हमारा पोषण करती है उसी प्रकार गोमाता भी। इतना ही नहीं गो के पुत्र हमें कृषि कार्य में सहायता देते, गाड़ियां खींचते तथा अन्य अनेक जनोपयोगी कार्य करते रहते हैं। गोमूत्र और गोबर तक से हमारा हित साधन होता है। ऐसी परम उपकारिणी गाय की रक्षा करना सचमुच अपने जीवन और शरीर की रक्षा करना ही है।

गोरक्षा, गीत गाने या भाषण देने से नहीं होगी। इसके लिये स्वराज्य सरकार और जनता को अपना कर्तव्य पालन करना होगा। सरकार का कर्तव्य है कि वह विधान द्वारा अविलम्ब गो हत्या बन्द कर दे। कहीं किसी रूप में भी गोवध न होने पाये। बूढ़ी टेढ़ी गायों के लिये गोशाला और गोसदन बनाये जायें। दुग्धशालायें स्थापित हों। यह काम सरकार को तुरन्त कर डालना चाहिये। उसके संविधान की धारा

४८ में भी गोरक्षा का स्पष्ट उल्लेख किया गया है। गोरक्षा के सम्बन्ध में विशेष रूप से विचार करने के लिये श्री सीताराम जी की अध्यक्षता में जो सरकारी कमेटी नियुक्त हुई थी, उसने भी एक स्वर से गोहत्या बन्द करने का सबल सुझाव दिया है फिर क्या कारण है जो सरकार ऐसे महत्वपूर्ण प्रश्न के सम्बन्ध में अपना कर्तव्य अविलम्ब पालन नहीं करती। गोरक्षा के प्रश्न को लेकर कोटि कोटि भारतवासी अपनी भावनायें स्पष्टरूप से प्रकट कर चुके तथा कर रहे हैं इन पर ध्यान न देना सरकार के लिये कभी उचित और शोभनीय नहीं कहा जा सकता। समझ में नहीं आता इस परमोपयोगी कार्य के लिये कानून बनाने में सरकार को क्या और क्यों संकोच है? हमें पूर्ण विश्वास है कि गोरक्षा सम्बन्धी जनता की पुकार और प्रेरणा पर शीघ्र ध्यान दिया जायेगा और गोहत्या विरोधक कानून बनाकर सरकार इस दिशा में अपना अविलम्ब कर्तव्य पालन करेगी तथा असन्तोष की अग्नि को अधिकाधिक प्रज्वलित न होने देगी।

महानुभावो, सरकार से कानून बनवाकर ही हमारा गोरक्षा सम्बन्धी प्रयत्न समाप्त नहीं हो जाता। हमारा भी कर्तव्य है कि हम भी अपने घर परिवार में एक से अधिक गौओं को पालें। मिल जुल कर दुग्ध शालायें खोलें, व्यापारिक आधार पर गोदुग्ध और उसके द्वारा बने पदार्थों का प्रचार करें। यह प्रतिज्ञा करें कि यथा सम्भव हम सदैव गो दुग्ध या उससे बने पदार्थों का ही सेवन करेंगे। वृद्ध होने पर जिस प्रकार हम अपने उपकारी माता पिता की सेवा सुश्रूषा करते हैं उसी प्रकार बूढ़ी गाय को भी पालते रहेंगे। किसी भी अवस्था में उसे घातक के हाथ न बेचेंगे और न "मरी बछिया बाम्हन के सिर" की कहावत को चरितार्थ होने देंगे। वस्तुतः अपना कर्तव्य पालन किये बिना केवल कानून बनवाने से गोरक्षा का प्रश्न पूरी तरह हल नहीं हो सकता। इस बात को भले प्रकार हृदयंगम कर लेना चाहिये। पूरी तरह समझ लेना चाहिये।

अगली और अन्तिम बात जिसकी ओर मैं ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ हिन्दू जाति की रक्षा की है। हिन्दुओं के अमानुषिक अत्याचार और विषाक्त विषम व्यवहार से लाखों करोड़ों भाई विधर्मियों के बाड़े में जा चुके हैं। इसका दोष विधर्मियों पर उतना नहीं जितना संकीर्ण हिन्दुवाद पर है जिसने स्वार्थ वश कभी यही नहीं सोचा कि उसके विषम व्यवहार और सामाजिक अत्याचार का कुपरिणाम कैसा भयावह होगा, छूत छात बिरादरी वाद और संकीर्णता हमें किस गहरे गढ़े में जा पटकेगी यदि हमें वस्तुतः अपने रत्नों को विधर्मियों की विभूति और अपने बैरी विरोधी बनने से बचाना है तो शीघ्र तिशीघ्र स्नेह समता और सहयोग की भावना लानी चाहिये। जो भाई हम से बिछुड़ गये हैं उन्हें प्रेमपूर्वक हाथ बढ़ा कर वापस बुलाना चाहिये और जो लोग बाहर जाना चाहते हैं उन्हें समझा बुझाकर सच्चे स्नेह और समानता के आधार पर रोकना चाहिये। यदि इसमें कुछ भी कमी की गई तो निश्चय ही परिणाम बड़ा भयंकर और दुःखदायी होगा।

धर्म प्रचार का सब को समान अधिकार है परंतु बहका फुसला या डरा धमका कर अपने अनुयायियों की संख्या बढ़ाना किसी के लिये उचित नहीं कहा जा सकता। देश में आजकल ईसाई मत प्रचारकों की बहुत बड़ी संख्या है। अमरीका आदि देशों ने लाखों रुपया व्यय कर अपना प्रचार जाल देश में फैला रखा है अमरीका का उद्देश्य धार्मिक नहीं बल्कि विशुद्ध राजनैतिक है। इसी दृष्टि से उसका सारा प्रचार कार्य हो रहा है। अंग्रेजी शासन में जितने ईसाई प्रचारक इस देश में थे उससे कई गुने चौगुने से भी अधिक मिशनरी लोग अब काम कर रहे हैं जिनका प्रचार से कभी कोई सम्बन्ध या सम्पर्क नहीं रहा। ईसाईयों के पास विपुल धनराशि है। वे उसी के बलबूते पर हिन्दुओं की निर्धनता से लाभ उठकर अपने मत प्रचार में पर्याप्त सफलता प्राप्त कर रहे हैं। इस ओर भारतीय सरकार को विशेष रूप से ध्यान देना

चाहिये। यदि ईसाइयों की संख्या इसी प्रकार धड़ाधड़ बढ़ती रही तो निश्चय ही पाकिस्तान की तरह ईसाईस्थान की भी विकट समस्या उठ खड़ी होगी और तब एक बड़ी भयंकर परिस्थिति सरकार के सामने आजायेगी।

सरकार का कर्तव्य है कि वह ईसाई धर्म प्रचारकों पर कड़ी दृष्टि रखे। यह देखे कि प्रलोभन पाश में आबद्ध कर तो निर्धन हिन्दू विधर्मी नहीं बनाये जा रहे जहां निर्धनता और बेकारी है वहां वह उनको दूर करने के सफल साधन क्रियात्मक साधन सोचे जिससे दुखित और निर्धन जनता अपने धर्म से च्युत न हो। इस दिशा में हिन्दुओं के कर्तव्य की ओर प्रसंग के आरम्भ में ही संकेत किया जा चुका है। प्रायः हिन्दू तीन कारणों से विधर्मी बनते हैं या बने हैं। १—बलपूर्वक, २—सामाजिक अत्याचार वश अथवा ३—धन के लोभ से। ईसाई धर्म सिद्धांतो की उच्चता या महत्ता से प्रभावित होकर मत परिवर्तन करने वालों की संख्या उंगलियों पर गिनी जा सकती है तलवार की धार से धर्मभ्रष्ट करने का युग अब नहीं रहा। वह यवन शासन के साथ समाप्त हो गया। परन्तु अर्थ प्रहार और विषम व्यवहार की अभद्र भावना अब भी बनी हुई है। पहली का उत्तरदायित्व हिन्दू लोगोंपर है यदि वे सदैव अपने भाइयों के साथ समता और सहयोग का व्यवहार करेंगे तो वे विधर्मियो की ओर फूटी आंख से भी न देखेंगे। इसी प्रकार यदि सरकार निर्धनों के लिये उत्तम व्यवस्था कर उनके पेट का प्रश्न हल कर देगी तो कौन है जो अपने बाप दादों का पुराना धर्म परित्याग कर विधर्मियों के बाड़े में बन्द होने जायेगा।

इतना ही नहीं, बन्धुओ, हमें भरत मिलाप का कार्य भी बड़ी संलग्नता और तत्परता से करते रहना चाहिये। अर्थात् जो भाई किसी कारणवश हम से बिछुड़ गये हैं उन्हें स्नेह सहित वापस लेते रहें और फिर उनके साथ किसी प्रकार का भेद भाव न करें। भरत मिलाप का अर्थ बाहरी टीपटाप नहीं बल्कि अपने बिछुड़े भाइयों के साथ सर्वात्मना हिल मिल जाना है। साथ ही जन्मगत बिरादरीवाद को बरबाद कर गुण कर्म स्वभाव के आधार पर वास्तविक वर्ण व्यवस्था स्थापित करना है।

ये सब कार्य तभी हो सकते हैं जब अज्ञान दूर करने के लिये सच्चे ब्राह्मण, अत्याचार तथा अन्याय मेंटने के लिये कर्मवीर क्षत्रिय और अभाव नष्ट करने के लिये वास्तविक वैश्य आगे आवें। गृहस्थ लोग पचास वर्ष की आयु के पश्चात् वानप्रस्थ और सन्यासी के रूप में निरीह निःस्वार्थ प्रचारक, शिक्षक आचार्य और उपदेशक बनें। वर्ण व्यवस्था और आश्रम धर्म की वास्तविकता ही सारे हितों की उत्पादिका हो सकती है। इन्हीं सब तथ्यों की ओर मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ।

बन्धुओ, क्षमा कीजिये, मैंने आपका बहुत समय लिया। यदि आपने मेरी विनीत विनती पर ध्यान देकर कर्तव्य पालन के क्षेत्र में कुछ भी प्रगति की तो निःसन्देह आप धर्म देश और समाज का अपार हित साधन करेंगे। वस्तुतः हमारा कल्याण हमारे हाथों में है। परम प्रभु परमात्मा की पुण्य प्रेरणा ही कल्याण की जननी है। परम प्रभु और हमें प्रदान करें जिससे हमारे हृदय साहस और सद्‌भावना से सम्पन्न हों। विमल बुद्धि या मंगलमयी मेधा आगे बढ़ायें और हमारा सुन्दर, सुपुष्ट तथा स्वस्थ शरीर कार्य साधन में सहायक हों। फिर कौन सी सफलता है जो हम से दूर रहेगी और कौन सा कार्य है जिसे हम सम्यक रीति से सम्पन्न न कर पायेंगे।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःख भाग्भवेत।

सिनेमा या सर्वनाश

श्रीयुत ओमप्रकाश जी पुरुषार्थी

यह सर्वमान्य तथ्य है कि वर्तमान युग में प्रचार एवं शिक्षा का सर्वोत्तम साधन "फिल्म कला" है। इस कला के आविष्कारक एडीसन महोदय के प्रति जितना आभार प्रकट किया जाय, उतना ही थोड़ा है। परन्तु संसार का यह नियम है कि जो वस्तु जितनी ही अधिक मूल्यवान व उपयोगी होती है वह दुरुपयोगी होने पर उतनी घातक एवं विनाशकारी बन जाती है। इसी आधार पर फिल्म कला जहां संसार के गूढ़ से गूढ़ रहस्यों अथवा विषयों को बड़े ही प्रिय मनोरंजन के रूप में साधारण से साधारण मनुष्य के मस्तिष्क एवं हृदय तक पहुँचाने की सामर्थ्य रखती है वहां वह पथ भ्रष्ट हो जाने पर राष्ट्र की बड़ी से बड़ी सम्मानित व कल्याणकारी मर्यादाओं, विश्वासों परम्पराओं तथा नैतिकता के अमूल्य सिद्धांतों को क्षण भर में नष्ट भ्रष्ट करने की भी शक्ति रखती हैं।

ऐसी स्थिति में जो व्यक्ति अथवा राष्ट्र इस महान क्रांतिकारी शस्त्र को केवल मनोरंजन का साधन समझ इसे बिना किसी नियन्त्रण के चलने देने के पक्षपाती हैं, वे वास्तव में बड़े ही अन्धकार में हैं और उनका यह अज्ञान राष्ट्र के लिये अति ही घातक सिद्ध हो रहा है। बड़े आश्चर्य की बात है कि लोग उन चाकू, छुरा, पिस्तौल, बन्दूक आदि अस्त्र शस्त्रों पर तो प्रतिबन्ध लगाने के पक्षपाती हैं कि जिनसे किसी व्यक्ति के केवल प्राणान्त हो जाने का ही भय है, परन्तु उस वस्तु पर प्रतिबंध लगाना नहीं चाहते कि जो एटमबम से भी अधिक विनाशकारी शक्ति रखती है और जिसके मारे हुए व्यक्ति पागल कुत्तों की भांति गलियों में सम्भ्रांत व्यक्तियों को काटते फिरते हैं और असभ्यतापूर्ण वातावरण की रचना कर नगर को नरक बनाने की चेष्टा करते रहते हैं। चोर डाकू तो रात्रि में केवल लोगों को आर्थिक हानि पहुँचाने की चेष्टा करते हैं, परन्तु ये फिल्मी गुण्डे दिन दहाड़े भले परिवारों की इज्जत पर डाका मारते हैं।

मुझे दुःख के साथ कहना पड़ता है कि भारत की बेलगाम फिल्म-कला आज भारतीय राष्ट्र की नैतिकता को समाप्त करने पर लगी हुई है। यहां कुछ अच्छी फिल्में भी बनती हैं, परन्तु उनकी संख्या नगण्य है। भारत की गन्दी फिल्मों के काले कारनामें यदि देखने व सुनने हों तो भले घरों के माता-पिता की मूक जबानों से पूछो कि जो लोक लाज के भय से अपने घर की बरबादी को अपने हृदयमें छिपाये बैठे हैं और रात्रि को नित्य अन्धेरे में मुंह छिपाकर घण्टों रोते हैं। बेचारे इसके अतिरिक्त करें भी क्या? किस प्रकार वे अपने ही मुंह अपने परिवार की एक मात्र आशा अपनी लड़की अथवा लड़के के पथ भ्रष्ट होकर घर से निकल जाने की बात दूसरों को सुना कर उल्टे अपनी खिल्ली उड़ायें।

मेरी दृष्टि में तो आज स्थिति ऐसी भयानक हो गई है कि यदि किसी परिवार के साथ आपकी शत्रुता हो जाय तो उससे लड़ने व मुकद्दमे बाजी के झंझट में पड़ने के स्थान पर उसके बच्चों को अपने पैसे से सिनेमा जाने का शौक डाल दो। बस फिर वह परिवार स्वतः ही नष्ट भ्रष्ट हो जायगा और दुनिया का कोई दोष ऐसा नहीं बचेगा कि जो उस परिवार में प्रविष्ट न कर जाय। उस परिवार का नैतिक पतन तो यहां तक हो जायगा कि उसमें एक कन्या अपने भाई, पिता, चाचा, आदि के पास एकांत में सुरक्षित नहीं समझी जा सकती।

उदाहरणार्थ अभी कुछ दिन पूर्व आर्य समाज दीवान हाल में देहली के परिवार की एक माता अपनी नवयुवती कन्या को लेकर आई और बतलाया कि वह

इस सम्बन्ध में अधिकाधिक उत्तम साहित्य के प्रचार की आवश्यकता है। वेदमूल्य वस्तु भंडार दीवान हाल देहली से "सिनेमा या सर्वनाश" ट्रैक्ट मंगवा कर खूब प्रचारित होना चाहिए। मूल्य ≈) —सम्पादक

घर से इसलिये भाग आई है कि लड़की का फिल्मी पिता अपनी पुत्री पर कुदृष्टि रखता है।

भारत ही नहीं अपितु भारत की गंदी फिल्मों के निर्माता अमरीका के हॉलीवुड द्वारा निर्मित गंदी फिल्मों से प्रेरणा प्राप्त करते हैं वहां की स्थिति भी दयनीय है। प्रमाण स्वरूप अमरीका में बढ़ते हुए दोषों की जांच करने के लिये एक कमीशन नियुक्त किया गया जिसने भिन्न-भिन्न जेलोंमें जाकर ११० दोषी बच्चों के साथ बातें कीं जिनका परिणाम निम्न प्रकार था—

(१) उनमें से ४६ प्रतिशत ने तो यह कहा कि फिल्मों के द्वारा उन्हें लूट चोरी आदि की प्रेरणा मिली।

(२) २८ प्रतिशत ने यह कहा कि लड़ाई झगड़ा करना उन्होंने फिल्मों से सीखा।

(३) २० प्रतिशत ने बतलाया कि फिल्मों ने उन्हें चोरी करना सिखलाया।

(४) २१ प्रतिशत ने बतलाया कि फिल्मों ने उन्हें सिखलाया कि पुलिस को किस प्रकार बेवकूफ बनाया जाय।

(५) १२ प्रतिशत ने स्वीकार किया कि गैंगस्टर फिल्मों ने ही उन्हें मक्कारी के साथ बच निकलने की विद्या सिखलाई।

(६) ४५ प्रतिशत ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि आसानी से रुपया अर्थात् बिना परिश्रम किये धन कैसे प्राप्त किया जाय यह उन्हें फिल्मों ने सिखलाया।

(७) २६ प्रतिशत ने कहा कि मार-धाड़ की फिल्मों के देखने से रात-दिन उनके मस्तिष्क में डाकू, जेब-कट तथा आवारा बनने की तीव्र इच्छा उत्पन्न हो गई।

(८) ६० प्रतिशत ने बतलाया कि लड़कियों के प्रति आकर्षण और उन्हें छेड़ने की भावना उन्हें फिल्मों से प्राप्त हुई।

इसी प्रकार की जांच इंगलैण्ड में भी की गई और उसके भी परिणाम लगभग इसी प्रकार के हैं।

अतुल जन-धन का अपव्यय

पाठकों को यह जान कर आश्चर्य होगा कि राष्ट्र विनाशक इन गंदी फिल्मों में देश का लगभग एक अरब रुपया लगा हुआ है। सरकार को ५॥ करोड़ प्रति वर्ष कर के रूप में आय होती है। सिनेमा घरों की कुल संख्या ३६५० है और फिल्म प्रेक्षकों की संख्या प्रतिदिन २,००,००,००० है। फिल्म-निर्माण में लगे लोगों की संख्या २१०७०, वितरण में ५०,००० और अन्य सम्बन्धित कार्यों में ८००० व्यक्ति लगे हुये हैं।

कारण क्या ?

गन्दी फिल्मों से देश का चारित्रिक ह्रास हो रहा है यह बात देश के आदरणीय राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र बाबू, श्रद्धेय राजगोपालाचार्य, श्री माननीय प्रधान मंत्री जवाहरलाल जी नेहरू आदि नेतागण समय समय पर स्वीकार करते रहते हैं, परन्तु समझ में नहीं आता फिर कौन सी ऐसी गुत्थी है जो इन फिल्मों का सुधार करने से उन्हें रोकती है। जब बड़ी बड़ी नदियों के बांध, नहरें, कारखाने आदि जैसे कठिन कार्यों के करने में उन्हें देर नहीं लगी तो फिर इस में तो सिर्फ उनका इशारा मात्र यथेष्ट है। परन्तु ऐसा क्यों किया जाता। क्या इसका यह अर्थ लगाया जाय कि हमारे नेता केवल हमें बहकाने के लिये समय-समय पर घोषणायें करते हैं और वास्तव में वे स्वयं इनफिल्मों की गंद को बुरा नहीं समझते हैं।

मैं तो अपनी सरकार से सविनय प्रार्थना करता हूं कि वह अविलम्ब देश के चारित्रिक ह्रास को रोकें अन्यथा चरित्रहीन नवयुवक-नवयुवतियों के द्वारा उनकी कोई भी योजना सफल न हो सकेगी। सरकार का कर्तव्य है कि वह इस कला का तुरन्त राष्ट्रीय करण करे या इस पर कड़ा प्रतिबन्ध लगाये और साथ ही बच्चों के हितार्थ अच्छी फिल्मों का निर्माण करे। स्कूल-कालेज की पढ़ाई के समय अर्थात दिन में फिल्मों का प्रदर्शन बन्द करावे और कामोत्पादक फिल्मों को बच्चे न देख सकें ऐसी व्यवस्था करें।

आर्य समाज की चिनगारियां

गो सेवक श्री पं० जगत नारायण जी

ले० श्री पं० रामनारायण जी मिश्र

काशी इन दिनों आर्य समाज का एक अच्छा कार्य क्षेत्र है। यहां चार पांच समाजें हैं। एक दयानन्द कालेज, वेद विद्यालय आर्य कन्या पाठशाला अनाथ नारी सदन और कई हरिजन विद्यालय हैं पर लोगों को मालूम नहीं कि पचास साठ वर्ष पहिले किन किन महानुभावों ने कष्ट सहकर यह क्षेत्र तैयार किया था। उनमें से एक श्री पं० जगतनारायण जी थे। वे पंजाब से संस्कृत पढ़ने काशी आये थे संकटा जी के मन्दिर में रहते थे। सं० १८८९-९१ में उन्होंने काशी के घाटों और सड़कों पर आर्य सिद्धान्तों का प्रचार करना शुरू किया। उनकी एक आंख नहीं थी इसलिये लोग उनकी हंसी उड़ाते थे पर वे कभी अपने कर्तव्य से विचलित न हुये। उन दिनों ईसाई पादरियों का बड़ा जोर था और इन पादरियों में कुछ विद्वान् और त्यागी भी काशी में आकर बस गये थे। सिगरा मोहल्ले में ईसाइयों की एक बस्ती थी जो अब टूट रही है इन पादरियों में डेविस नाम के एक अंग्रेज थे जो गणित के पंडित थे। वे अपनी जेब में पैसे रखा करते थे और सड़क पर जहां कहीं कोई अन्धा, लूला, मिल जाता उसको खैरात कर दिया करते थे। मैं क्वींस कालेज के स्कूल में पढ़ता था जो मेरे घर से दो मील से ऊपर था। रास्ते में तीन जगह पादरी प्रचार करते हुये मिला करते थे। पं० जगतनारायण वहां उनसे बहस करने लगते थे और कभी कभी एक या आधी फर्लांग हट कर स्वतन्त्र रूप से प्रचार करने लगते थे। घाटों पर वे गोरक्षा पर व्याख्यान दिया करते थे। जहां कहीं मेले लगते थे वहां भी वे पहुंच जाते थे। काशी में गाजी मियां की एक कब्र है इन दिनों वहां बड़ा मेला लगता था जिसमें मुसलमानों की अपेक्षा हिन्दू अधिक संख्या में जाया करते थे। पं० जगतनारायण ने गाजी मियां पर एक पुस्तिका छपवाई थी। वे उसे मेले में बांटते थे। आर्य समाज के सिद्धान्तों का प्रचार करने के कारण उनसे हिन्दू मुसलमान और ईसाई अप्रसन्न रहते थे और गोरक्षा का प्रचार करने के कारण उनसे गवर्नमेंट खुश नहीं रहती थी। उन्होंने एक छोटा सा प्रेस भी खोल रखा था जिसमें ईसू परीक्षा, मुहम्मद परीक्षा, गोविलाप, गोपुकार आदि पुस्तकें छपवाई थीं।

दशाश्वमेध घाट पर स्वर्गीय पं० जयशंकर जी के सहयोग से उन्होंने एक अनाथालय भी खोल रखा

माता पिताओं से

मैं देश के माता-पिताओं से सानुरोध कहता हूँ वह अपने बच्चों को राष्ट्र की धरोहर समझें और वह उन्हें किसी प्रकार इन गंदी फिल्मों द्वारा बिगाड़ने में सहायक न बनें अन्यथा राष्ट्र की हानि तो बाद को होगी पहिले उन्हीं का घर तबाह हो जायगा। जनता को चाहिये कि वह गंदी फिल्मों का बहिष्कार और अच्छी फिल्मों का स्वागत करें।

समाज सुधार संस्थाओं को चाहिये कि वह जनता को इस विनाश से बचाने की चेष्टा करें यदि सामर्थ्य हो तो अपनी फिल्म कम्पनी का निर्माण करें कि जहां राष्ट्रोत्थान के निमित्त भिन्न भिन्न दृष्टिकोणों से अच्छी अच्छी फिल्मों का निर्माण हो। इस प्रकार जनता, सरकार तथा सामाजिक संस्थाओं को अपने अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिये तभी इस फिल्मी विनाश से देश की रक्षा सम्भव है।

आर्य समाज के इतिहास की झलक

(फरवरी के अंक से आगे)

परोपकारिणी सभा अजमेर

प्रारम्भ से ही संचालन और अधिवेशनों में स्वीकृत निश्चयों को कार्यान्वित करने का भार श्री पं० मोहन लाल जी विष्णु लाल जी पंड्या पर रहा। श्री पंड्या जी स्वामी जी महाराज के संपर्क में सभा की स्थापना के बहुत समय पूर्व से रहते आये थे, स्वामी जी में आपकी अत्यन्त भक्ति थी। कानपुर में जब पं० हलधर ओझा के हुल्लड़ बाजों ने स्वामी जी पर आक्रमण करने की ठानी तो इसकी पूर्व सूचना स्वामी जी महाराज को श्री पंड्या जी ने ही दी थी। आप यथावश्यकता राजा बहादुर श्री मूलराज जी जी एम० ए० से परामर्श लेते थे। सभा का कार्यालय उदयपुर में रहा। सं० १८९४ के पश्चात पंड्या जी जब प्रताप गढ़ में दीवान होकर गये तब एक दो वर्ष के लिये दीवान हरविलास जी शारदा ने मंत्रित्व का कार्यभार लिया। तदनन्तर पुनः श्री मोहनलाल जी विष्णुलाल जी पंड्या ने यह भार सम्हाला। महाराणा श्री सज्जनसिंह जी मेवाड़ाधिपति के स्वर्गवास के उपरान्त, प्रयत्न किया गया कि महाराणा श्री फतेह सिंह जी सभा का सभापतित्व संभालें। तदुपरान्त अधिवेशन स० ६ ता० ७-६-१८९१ में निश्चित हुआ कि श्री उपसभापति जी राय मूलराज जी श्री मान कर्नल सर महाराज श्री प्रतापसिंह जी साहब बहादुर के० सी० एस० आई के पास जा कर उस पद को स्वी-

---

था जिसमें न मालूम कहां कहां से वे अनाथों को ले आया करते थे। यह अनाथालय अभी पांच दस ही बरस हुये टूट गया। उनके और पं० जयशंकर जी के मरने के बाद किसी आर्य समाज ने इसका संचालन नहीं किया। जब यह टूटा तब लक्ष्मी कुंड पर था।

यह बड़े मृदु भाषी थे इनको कभी किसी ने क्रोध में नहीं देखा। उन दिनों पं० नीलकंठ शास्त्री ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया था। पं० जगतनारायण जी ने उनसे शास्त्रार्थ किया था।

वे बड़े स्वावलम्बी थे। एक छोटी सी छोलदारी लेकर गांवों में चले जाते थे। कहीं पेड़ के नीचे रात काट कर दिन के समय वैदिक धर्म और गोरक्षा का प्रचार करते थे बिहार का सूबा बनारस के जिले से मिला हुआ है। प्रचार करते २ वे बिहार प्रांत के ग्रामों में भी पहुंच जाते थे।

स० १८९१ में बनारस में राम हल्ला हुआ था। उस समय शहर में वाटर वर्क्स की नींव डाली गई थी जिस घाट से पानी लिया गया था वहां रामचन्द्र जी का एक मन्दिर है जिसमें गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामायण लिखी थी। हिन्दुओं ने आन्दोलन किया कि मन्दिर की दीवार तोड़कर पानी न लिया जाये इस आन्दोलन ने बलवे का रूप धारण किया जिसमें शरीक होने का इन पर भी सन्देह किया गया था। गोरक्षा के प्रचार के कारण सरकार सदा इन पर संदेह की दृष्टि रखती थी। वे कुछ दिनों के लिये बम्बई चले गये थे और वहां भी उन्होंने छापाखाना खोला था।

काशी में रहते हुये ही उन्होंने गेरुआ वस्त्र धारण कर लिया था। मऊ (आजमगढ़) में गोहत्या के कारण एक बार बड़ा भयंकर बलवा हुआ था। उस सम्बन्ध में यह भी गिरफ्तार कर लिये गये थे तब से उनका पता नहीं लगा।

"यदि कोई आर्य सज्जन उनके बारेमें कुछ जानते हों तो कृपा कर लिखें जिससे उस समय के त्यागी और क्रान्तिकारी प्रचारक के जीवन पर अधिक प्रकाश पड़े।"

—सम्पादक

कार करावे। तदनन्तर अधिवेशन सं० ७ ता० २०-१२ ८३ को निश्चित किया गया कि एच० एच० राजाधिराज श्री नाहरसिंह जी वर्मा शाहपुराधीश सभा के सभापति नियत किये जावें जिसे श्री मानों ने स्वीकार किया।

सभा का कोष मेवाड़ राज्य की दुकान में रहता था और उस पर ॥) सैकड़ा ब्याज मिलता था।

भरत वाक्य है कि 'कीर्तिर्यस्यसजीवति' राजस्थानी लोकोक्ति है कि "कै नाव पूतड़ां कैनाव भीतड़ा कै नावं गीतड़" आर महान से लेकर साधारण जनता भवनों, स्तम्भों और आश्रमों के निर्माण से स्थायी कीर्ति और स्वकृतज्ञता की ओर प्रवृत्त होती जा रही है। इसी जगत् व्यापी परम्परा का पालन करते हुये स्वामी जी महाराज के स्वर्गवास के उपरांत प्रथम अधिवेशन परोपकारिणी सभा का हुआ और उसमें उपमन्त्री श्री मोहनलाल जी विष्णुलाल जी पंड्या ने अपना निम्नलिखित वक्तव्य दिया।

"१—आज मुझको आप सब महाशयों की सेवा में निवेदन करते शोक और हर्ष करते दोनों एक संग ही प्राप्त होते हैं जिन से शोक तो श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री १०८ श्री मद्दयानन्द सरस्वती जी महाराज राज के जरामय रहित शरीर का ६० वर्ष की अवस्था में ही संसार त्याग करने का है क्योंकि यह सभा स्वामी जी महाराज से सुशोभित होनी चाहिये थी। और हर्ष इस बात का है कि अब आप परोपकारिणी सभा के सभासद् श्री स्वामी जी के स्थानापन्न होकर उनके धन, वस्त्र और पुस्तकादि पदार्थों की व्यवस्था और वेद वेदांगादि के प्रचार का अच्छा प्रबन्ध स्वीकार पत्र के अनुसार करने को इस स्थान पर एकत्र हुए हैं।

२—हे महाशयो, आज हम लोग जिस कार्य के संपादन करने को यहां एकत्र हुये हैं उसके विषय में निवेदन करने के पहिले मैं आपको स्वामी जी के इतने शीघ्र परम पद प्राप्त होने का शोक मेरे शुद्ध अन्तःकरण से करता हूँ इसमें कुछ सन्देह नहीं कि स्वामी जी का नाम मात्र स्मरण करने से और श्रवण करने से आप सब लोग और अन्य आर्य सज्जन महाशयों का हृदय गदगद हो और सब एक मुख होकर यही कहेंगे कि स्वामी जी महाराज जैसे आप्त इस कलिकाल में होने दुर्घट और उनकी मृत्यु से भरतखंड को वह हानि पहुंची जो कही नहीं जा सकती। जिस समय स्वामी जी वेद और वेदांगादि शास्त्रों की पारंगता संस्कृत भाषा का मातृभाषावत धारा प्रवाह भाषण करना परम दृढ़ स्वदेश वत्सलता और जो दूसरे को उपदेश करना उसी प्रमाण आप भी आचरण करना आदि—आप्त गुण सम्पन्नता पर ध्यान जाता है उस समय हम सब लोगों का हृदय शोकाक्रान्त होकर इसके सिवाय और कुछ नहीं मुख से निकलता है कि हाय, ईश्वर की इच्छा सर्वोपरि बलवती है।

३—हे महाशयो, उक्त स्वामी जी महाराज का तो परम पद प्राप्त होना हो गया और जो सर्वसाधारण आर्यों का विचार जहां तक कि मैं अन्वेषण कर जान सका हूं तो यही है कि स्वामी जी वह एक देह तो अब सब के साक्षात्कार में नहीं है किन्तु परोपकारिणी सभा रूपी स्वामी जी के वैसे ही देह प्रत्यक्ष उपस्थित है अतएव जो जो स्वदेशोपकारक आशा सर्व साधारण आर्यों को स्वामी जी से थी वह सब अब परोपकारिणी सभा के मुख की ओर देखकर यही प्रतीक्षा कर रहे हैं कि उक्त सभा स्वामी जी के उद्देश्यों के पालनार्थ क्या व्यवस्था करती है? निदान अब हम सब लोग जहां तक विचार कर निश्चय करेंगे कि उक्त स्वामी जी के उपस्थित और भावी धन, वस्त्र और पुस्तकादि की क्या व्यवस्था करें तो यही सिद्ध होगा कि जो कुछ स्वीकार पत्र में लिखा है उसी का यथावत पालन करें और आर्य समाजादि से करावें। अब जो हम स्वीकार पत्र अपने हाथ लेकर देखते हैं और व्याख्या के साथ समझते हैं तो—

१—प्रथम उद्देश्य हम सब को यह पांच कर्त्तव्य कर्म आज्ञा करता है।

(क) वैदिक पुस्तकालय स्थापना करना।

(ख) वेद और वेदांगादि के प्रचार करने के लिये जो और जहां तक वेदभाष्यादि व्याख्या ग्रन्थ स्वामी जी अपनी विद्यमानता से रच गये हैं और उनका प्रकाश करना और जो शेष है उनकी व्याख्या स्वामी जी के सिद्धान्तानुसार उनके शिष्यादि अच्छे अच्छे विद्वानों से कराने का प्रबन्धादि करना।

(ग) वेद और वेदांगादि के पढ़ने पढ़ाने के लिये एक वैदिक पाठशाला नियत करें।

(घ) वेद और वेदांगादि के सुनने सुनाने के लिए एक व्याख्यान देने का आलय बनायें।

(ङ) वेद और वेदांगादि के छापने छपवाने के लिये स्वामी जी जो वैदिक यन्त्रालय स्थापना कर गये हैं इसका अच्छा प्रबन्ध करके इसको बनाये रखना।

२—दूसरा उद्देश्य हमको यह विदित करता है कि स्वामी जी के शिष्य स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती स्वा० ईश्वरानन्द सरस्वती जी ब्रह्मचारी रामानन्द जी आदि जो स्वामी जी के समय में उन की आज्ञानुसार सर्वत्र भ्रमण कर उपदेश करते थे उनको परोपकारिणी सभा अब वैसे ही स्वामी जी के सिद्धान्तानुसार उपदेश करने का यथा योग्य सदैव सहायता देवें और वे स्वामी जी के यावत सिद्धान्तानुसार उपदेश करते हैं कि नहीं इस पर भी यह सभा सदैव दृष्टि रख कर उनको उपदेशक मण्डली बढ़ाने का उद्योग करे।

३—तीसरा उद्देश्य यह आदेश करता है कि आर्य्यावर्तीय अनाथ और दीन मनुष्य जो सब प्रकार के वित्त हीन होने से अनाथ हो जाते हैं इसके संरक्षण पोषण और सुशिक्षता के लिये एक अनाथाश्रम निर्माण किया जावे।

४—इन तीनों उद्देश्यों को व्याख्या सहित विचार करने से ज्ञात होता है कि अब जो परोपकारिणी सभा अजमेर आदि किसी नगर में स्वामी जी के नाम से एक आश्रम ऐसा बनावे कि जिसमें उद्देशानुसार स्वदेशोपकारक इतनी शाखा स्थापन हो सके तब उक्त उद्देश्यों का पालन यथावत हो और उसी आश्रम में श्रीमत्स्वामी जी महाराज का शेष अस्थि भस्म जो अब तक अजमेर आर्य समाज में संरक्षित रखा है वह भी वहां सब योग्य समझे वैसे पधरा दिया जावे कि उक्त आश्रम में सब आर्यों को सर्वरीया प्रतीति हो —

१—वैदिक पुस्तकालय जिसमें स्वामी जी के पास की निकली पुस्तकें तथा जो कोई अब आगे धर्मार्थ भेंट करे अथवा जो वैदिक पुस्तकें यहां नहीं हैं वे परोपकारिणी सभा खरीद करे वे रखी जावें।

२—वेद और वेदांगादि शास्त्रों की व्याख्या करने का कार्यालय स्थापन हो कि जिस से दो चार पंडित नौकर होकर जो व्याख्या कि स्वामी जी कर गये हैं उनको शोध कर प्रकाश करे और जो शेष रह गई है उनको स्वामी जी की परिपाटी और सिद्धांतानुसार करें।

३—वैदिक पाठशाला स्थापन हो कि जिस में वेद और वेदांगादि शास्त्र स्वामी जी की प्रकाश की प्राचीन रीति से पढ़ाये जावें।

४—वैदिक व्याख्यानालय बनवाया जावे कि जिस से देशोपकारक वैदिक व्याख्यान विद्वान् लोग दिया करें।

५—वैदिक यन्त्रालय का स्थान बने कि जहां यन्त्रालय प्रयाग से उठ कर स्थापन हो जाये।

६—उपदेशक मंडली और अनाथों के लिये रहने के स्थान बनवाये जावें।

७—उपदेशक मंडली और अनाथों के भोजनाच्छादनादि के लिये सत्र स्थापन हो कि जिसमें वे धर्मार्थ भोजन करके देशोपकार करें।

८—इन स्थानों के अतिरिक्त उक्त आश्रम के हाथे में बाग तथा कूपादि भी बना दिए जायें।

९—सर्वकार्याध्यक्ष के पद का एक अध्यक्ष परोपकारिणी सभा की ओर से नियत होकर सभा की आज्ञा से आश्रम भर के सब कार्य का प्रबन्ध किया करे।

* ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन *

कथालिक महापुरोहित का कोप

जब से चीन स्वतन्त्र हुआ है और अमेरिका तथा यूरोप की जातियों का प्रभुत्व वहां से समाप्त हुआ है, श्रीयुत चाउ एन लाई के नेतृत्व में चीन की राष्ट्रीय सरकार विदेशी ईसाई मिशनरियों को तेजी के साथ वहां से निकाल रही है। अब चीन में केवल ७१ विदेशी पादरी शेष रह गये हैं और शेष सब विदा कर दिये गये हैं। विदेशों से चीन में ईसाईयत के प्रचार के लिये आने वाले धन पर पूरा प्रतिबन्ध लग चुका है और अब चीनी ईसाई राष्ट्रीय चर्च का निर्माण कर रहे हैं। जिसका किसी भी प्रकार का सम्बन्ध यूरोप व अमेरिका के मिशनों से न होगा।

महा पुरोहित ने चीन के इन ईसाइयों की कड़ी भर्त्सना की है जो इस राष्ट्रीय चर्च में सम्मिलित हो रहे हैं और उनको ईसाईयत का शत्रु घोषित किया है। महा पुरोहित इस बात को स्वीकार करते हैं कि प्रत्येक देश के ईसाइयों को अपने देश की भाषा, वेष आचार और परम्पराओं को मानना चाहिये, किन्तु किसी देश विशेष के ईसाई प्रचारकों को ईसा की शिक्षा की स्वतन्त्र व्याख्या करने का अधिकार नहीं है।

इस से पता चलता है कि चीन में बाईबिल की शिक्षाओं में कांट छांट और नवीन परिभाषायें की जा रही है। यदि ऐसा है तो हम चीन के ईसाइयों को साधुवाद कहते है। इस विचार स्वतन्त्रता, बुद्धिवाद और मानववाद के युग में बाईबिल की उन शिक्षाओं को जो बुद्धि तर्क और विज्ञान से शून्य है निराकरण अथवा उनका युक्तियुक्त संगतिकरण इस युग की पुकार है।

२—इसके अनन्तर यह वक्तव्य और विचारणीय है कि स्वीकार पत्र में लिखे तीनों उद्देश्यों को व्याख्या सहित समझने से जो परोपकारिणी सभा का कर्तव्य कर्म सिद्ध हुआ है वह जब पूरा धन हो तब यथावत पालन हो सकता है और धन की संख्या जो अब हम लोग देखते हैं तो जितनी आशा रखते थे उतना धन स्वामी जी के पास नहीं निकला अतएव मैं आप लोगों को इस विषय में विदित करता हूँ कि धन सम्बन्धी जैसा विचार अब हम लोगों के मन में उत्पन्न हुआ है वैसा ही स्वामी जी के स्वीकार पत्र लिखने पर हुआ था और इसी लिये उन्होंने राज मेवाड़ की राजकीय कोठी पर स्वामी दयानन्द सरस्वती स्थापित वैदिक निधि नाम से एक फण्ड स्थापन कर दिया था और उसको आप सब महाशय और आर्य समाजादि से धन सम्बन्धी सहायता लेकर यहां तक बढ़ाने का दृढ़ विचार था कि उनके परम पद प्राप्त होने पर परोपकारिणी सभा को कुछ श्रम न पड़े और और इस विषय का एक विज्ञापन भी उन्होंने अपनी विद्यमानता में लिखकर वैदिक यन्त्रालय में मुद्रित और प्रकाशित करने को भेजा था। वह और उसके सम्बन्धी पत्रादि वहां से प्राप्त हो सकते हैं। इसके सिवाय उस वैदिक निधि में स्वामी जी ने अपने पास का जो कुछ द्रव्य जो भिन्न २ स्थानों पर एकत्र करके जमा करना भी प्रारम्भ कर दया था उक्त निधि में आज ४१०) के अनुमान जमा होंगे परन्तु स्वामी जी महाराज अकस्मात परमपद प्राप्त होना हो गया इससे वैदिक निधि की जैसी वृद्धि होनी चाहिये थी नहीं हुई और यह बड़ा भार परोपकारिणी सभा और आर्य समाजों पर आ पड़ा।

(खेद है यह वक्तव्य इतना ही उपलब्ध है। है। आगे का अंश नहीं मिल सका)। —सम्पादक

भारत के ईसाईयों को भी विदेशी पूंजी और पादरियों को शीघ्र विदा कर अपने को भारतीय संस्कृति में ढालना होगा। भारतीय वेषभूषा खानपान रीति रिवाज और परम्पराओं को अपनाना होगा। साथ ही बाईबिल की शिक्षाओं को युक्ति तर्क और विज्ञान की कसौटी पर कसना होगा। मतान्धता और अन्ध विश्वास के आधार पर गौतम कपिल कणाद शंकर और दयानन्द की भूमि में ईसाईयत अब टिक नहीं सकती।

भारतीय करण और भारतीय ईसाई

इस शीर्षक से एक लेख बम्बई से प्रकाशित होने वाले कथा लिक अंग्रेजी साप्ताहिक 'एक्जामिनर' में अभी प्रकाशित हुआ था। इसी से सम्बन्ध रखते हुये पूजनीय फुलटन जे० ग्रीन ने अपने पत्र में लिखा है—

संसार के महान धर्मों के प्रवर्तक भारत तिब्बत और पशिया में ही उत्पन्न हुए हैं। किन्तु जब एशिया और अफ्रीका के निवासी अमेरिका और यूरोपियन पादरियों द्वारा और ईसाईयत की चर्चा सुनते हैं तो वह ईसा को पश्चिमी मत प्रवर्तक और ईसाईयत को यूरोप और अमेरिका की संस्कृति और सभ्यता का प्रचारक समझने लगते हैं।

इसलिये अब समय आ गया है कि यह भ्रान्ति दूर की जावे और एशिया और अफ्रीका में वहां की स्थापत्य कला के अनुरूप ईसाई मत के मंदिर बनाये जायें। मरियम आदि की मूर्तियों की वेष भूषा इन्हीं देशों के अनुरूप की जावे"

आगे श्रीयुत ग्रीन लिखते हैं कि पवित्र मरियम लार्डस में फ्रांसीसी के रूप में, फातमा में पुर्तगाली के रूप में और मैक्सीको में मैक्सीकन के रूप में प्रकट हुई है। इसी प्रकार भारत में भारतीय वेश भूषा में उन्होंने दर्शन दिये हैं। तो कोई कारण नहीं है कि इन देशों में पादरी भारतीय हों और भारतीय वेश भूषा को अपनाने वाले हों।

आगे आप लिखते हैं कि बलिदान के समय यसूमसीह के सब कपड़े उतार लिये गये थे। मानों विश्व मानव के रूप में मसीह को प्रकट किया गया हो। इसलिये यह आवश्यक है कि प्रत्येक देश में ईसाई मत के प्रचारक वहां की राष्ट्रीय वेशभूषा, सभ्यता संस्कृति, कला और विज्ञान को अपनायें।

हम श्रीयुत ग्रीन के इन विचारों का आदर करते हैं कि अमेरिका और यूरोपीय जातियां भारत से अपने प्रचारकों को स्वतः वापिस बुला लेंगी और भारतीय चर्च पूर्णतया भारतीय प्रचारकों को ही सौंप देंगी। साथ ही हम यह भी आशा करते हैं कि भारतीय ईसाईयत के प्रचारक भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा प्रादेशिक भाषाओं को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनायेंगे। भारतीय महा पुरुषों का सम्मान करना सीखेंगे। भारतीय रहन सहन और खान पान को अपने जीवन में घटायेंगे। और भारतीय मर्यादाओं का नाश न करके उनका संरक्षण करेंगे। इसी में भारत के ईसाईयों का कल्याण छिपा हुआ है।

शिवदयालु मेरठ

हजारी बाग (बिहार) जिले में ईसाइयों की* आपत्तिजनक प्रगति

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान मंत्री आचार्य पं० रामानन्द शास्त्री ने अधोलिखित वक्तव्य प्रकाशनार्थ प्रेस को भेजा है।

'परम पिता परमेश्वर की असीम अनुकम्पा से तथा राष्ट्र पिता महात्मा गांधी के उद्योग से आज हमारा महान् तथा पुरातन राष्ट्र भारत स्वतन्त्र हो गया है। हमारे देश की जनता द्वारा निर्वाचित सदस्यों से निर्मित संविधान इस समय देश में संचालित हो रहा है जिसमें एकता, बन्धुता तथा धर्म निरपेक्षता का आश्वासन सबों को दिया गया है। जात एवं मजहब की दृष्टि से न कोई बड़ा है न छोटा है, अपितु सबों को उन्नति करने की सुविधा है।

देश की आर्थिक स्थिति अंग्रेजी शासन के कारण

*१०-२-५१ को हजारी बाग प्रेस कान्फ्रेंस में दिया गया वक्तव्य

खराब हो गयी थी वह अब धीरे धीरे सुधर रहा है। दो पंच वर्षीय योजनाओं द्वारा देश का कायापरिवर्तन हो गया है। जनता का जीवन स्तर ऊंचा हो रहा है। सर्वत्र देश की स्थिति का विवेचन, विमर्श तर्कणा तथा नयी जागृति नूतन संतति में दृष्टिगत हो रही है। यह शुभ लक्षण है।

किसी भी देश का अपना इतिहास, अपनी परम्परा तथा अपना दर्शन तथा अपनी संस्कृति होती है। जिनसे प्रेरणा लेकर कोई देश एवं जाति आगे बढ़ती है। योगी अरविन्द ने कहा है कि:—

"भूतकाल की नींव पर भविष्य की इमारत खड़ी होती है।" भारत एक महान् देश है जिसने सारे संसार को ज्ञान विज्ञान की शिक्षा दी है। इसकी उपनिषद् तथा गीता आज भी संसार में अपनी आध्यात्मिकता की धारा प्रवाहित कर रहे हैं। अतः इसकी संस्कृति अक्षुण्ण तथा शांति दायिनी है। किसी भी देश की आत्मा 'संस्कृति' है। यह सत्य है कि आधुनिक वैज्ञानिक युग में हम विश्व से पीछे हैं, हमारे यहां यांत्रिक उन्नति नहीं हुई है तो भी यह कोई नहीं कह सकता है कि संस्कृति की दृष्टि से भी हम नीचे गिर रहे हैं। भूतकाल के मनुष्य हवाई जहाज पर न चलते हों, अथवा रेडियो, टेलीवीजन से वार्ता प्रसारित न करते हों किन्तु नहीं कहा जा सकता है कि वे लोग नैतिकता की दृष्टि से भी पीछे थे। इसलिये राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा कि हमें रामराज्य चाहिये, जो नैतिक है एवं आधुनिक यान्त्रिक युग से बहुत ऊंचा है।

लेकिन दुख के साथ कहना पड़ता है कि हमारी वर्तमान स्थिति से लाभ उठाने के लिये दो पाप ग्रह हमारी संस्कृति के क्षितिज पर दिखलाई पड़ रहे हैं। (१) रूस से अनुप्राणित साम्यवाद (२) साम्राज्य वाद से पोषित विदेशी ईसाई मिश्नरी। आज वे लोग हमारे भारत को पथभ्रष्ट करने को जितने उपाय हैं उन्हें काम में ला रहे हैं। इसे कौन भारतीय नहीं जानता है।

मुझे अभी हजारी बाग जिला के भ्रमण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। सांस्कृतिक दृष्टिकोण से यह जिला अभी बहुत पिछड़ा है। यहां पर रोमन कैथलिक मिशन ने अपना जाल बिछा दिया है। ये मिश्नरी अवैध विधियों से सम्पूर्ण तथा कथित आदिवासियों को अपने पंजे में फंसा लेना चाहते हैं। इन की नीति धर्म प्रचार के आड़ में विदेशी साम्राज्य को फैलाना तथा राज्य में फूट डालना है। मैं संस्कृति प्रेमी संस्थाओं का आह्वान करता हूं कि आवें देखें किस प्रकार वे रुपया मिठाई, लेमन, तथा आदि देकर निरीह मानव का धर्म भ्रष्ट कर रहे हैं। रोगियों को कहा जाता है कि अपना धर्म जब तक मानोगे तब तक चंगे नहीं हो सकते हो। कहीं कहीं सुरा तथा वारांगना द्वारा नवयुवकों को अपने जाल में फंसाने की चेष्टा करते हैं। हमारी आर्य प्रतिनिधि सभा का कार्यालय इनकी शिकायतों से भर गया है जो बलात् महान् देश को पथ च्युत करना चाहते हैं।

हम ईसाईयों के विरोधी नहीं सबों को धर्म प्रचार करने का सामान्य अधिकार है। हमें तो घृणा इस दुष्ट मनोवृत्ति तथा छद्म पूर्ण व्यवहार से है। जिसके द्वारा इस पवित्र देश को अपवित्र करना चाहते हैं। ऋषि दयानन्द के द्वारा जगाया गया भारत अब इस प्रकार के हथकंडों को सहन नहीं कर सकता है। हम राज्य सरकार से अनुरोध करते हैं कि आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्य कारिणी के अनुरोध पर अविलम्ब एक आयोग नियुक्त करें, जो इन ईसाइयों के अवैध प्रचार की जांच करें।

ज्योतिष्मतः पथो रक्ष धिया कृतान्।

चुने हुए मोती

अपनी पवित्र बुद्धि से बनाए हुए पूर्वजों के प्रशस्त ज्योतिर्मय सत्य मार्गों की रक्षा कीजिए।

उत्तिष्ठत संनह्यध्वं मित्रा देवजना यूयम्।

स्नेही दिव्यजन उठिए सन्नद्ध हो जाइए।

* गोरक्षा आन्दोलन *

सार्वदेशिक सभा के शिष्ट मण्डल की पंजाब के मुख्य मन्त्री से भेंट

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का एक शिष्ट मंडल पंजाब राज्य के मुख्य मन्त्री श्री माननीय भीमसेन सच्चर से ११ ३।५५ को ३ बजे मध्याह्नोत्तर उनके सैक्रेट्रियेट चण्डीगढ़ में मिला। इस शिष्ट मण्डल के सदस्यों के नाम निम्न प्रकार हैं:—

(१) श्री कविराज हरनाम दास जी—मन्त्री सभा

(२) श्री लाला रामगोपाल जी-उपमन्त्री सभा तथा संयोजक सार्वदेशिक गोरक्षा समिति

(३) श्री लाला हरशरणदास जी, सदस्य सार्वदेशिक सभा

(४) श्री ओ३म् प्रकाश जी त्यागी, प्रधान सेनापति सार्वदेशिक आर्य वीर दल

(५) श्री निरंजन लाल जी गौतम

माननीय मुख्य मंत्री की सेवा में शिष्ट मंडल की ओर से एक स्मृति पत्र उपस्थित किया गया जो इस प्रकार है :—

स्मृतिपत्र

"गो भारतीय संस्कृति की प्रतीक, हमारे आर्थिक ढांचे का आधार और अपने दुग्ध से हमारा पालन पोषण करने वाली माता के समान वन्द्य है।

भारत में अत्यन्त प्राचीन काल से गो महिमा की जो परम्परा चली आती है और जिसका प्रारम्भ वेदों से ही होता है वह इतनी प्रबल रही है कि अनेक विदेशी जातियों के आक्रमण और बाहर की अनेक संस्कृतियों के सम्पर्क भी उसे मिटाना तो एक ओर रहा निर्बल भी नहीं बना सके। प्राचीन आर्ष काल में वह जितनी प्रबल थी, पौराणिक काल में उसी प्रकार प्रबल रही। मध्यकाल के अनेक परिवर्तन भी उसे न हिला सके, यहां तक कि मुसलमानों के लगभग ८०० साल तक शासन काल में भी वह क्षीण न हुई। इसका सबसे बड़ा ऐतिहासिक प्रमाण यह है कि अकबर जैसे दूरदर्शी बादशाह ने अपने राज्य की स्थिरता के लिये देशभर में गोवध को बन्द करने का हुक्म देना आवश्यक समझा और उसके उत्तराधिकारी ने भी पिता का अनुकरण किया। यह सर्व सम्मत बात है कि बादशाह अकबर की गोवध निषेध सम्बन्धी आज्ञा का उसके राज्य की स्थिरता पर बहुत अनुकूल असर हुआ और जब उसके उत्तराधिकारियों ने अदूरदर्शिता से उस निषेधाज्ञा को रद्द कर दिया तब मुगल साम्राज्य का सिंहासन डांवाडोल हो गया।

अंग्रेजी राज्य काल में आहार, आर्थिक लाभ तथा हिन्दू मुसलमानों में फूट डाले रखने की प्रवृत्ति के कारण गोवध को बहुत अधिक प्रोत्साहन दिया।

अब से लगभग ७० वर्ष पहले आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने "गोकरुणानिधि" नाम की पुस्तक द्वारा देशवासियों का ध्यान गोरक्षा की ओर आकृष्ट किया था। उस पुस्तक में महर्षि ने यह सिद्ध किया था कि यदि गोवंश की रक्षा न की गई तो जाति सामाजिक और शारीरिक दृष्टि से क्रमशः क्षीण होते होते अन्त में नाश के समीप पहुंच जावेगी। उस पुस्तक में जहां उन्होंने गोरक्षा की ओर देशवासियों का ध्यान आकृष्ट किया था वहां राज्य द्वारा गोवध बन्द कराने के लिये भी उन्होंने विशेष प्रयत्न किया।

महर्षि के पीछे आर्य समाज भी उनकी दिखाई हुई पद्धति पर ही चलता रहा है। जब तक विदेशी राज्य था उससे मुक्त होना ही सबसे बड़ी समस्या थी। स्वराज्य होने पर यह अत्यन्त आवश्यक हो गया है कि देशवासियों की सुख समृद्धि और सर्वतोमुखी उन्नति के उपायों की ओर विशेष ध्यान दिया जावे। गोरक्षा उनमें अन्यतम उपाय है। देश के हाथ में राज्य सत्ता आते ही आर्य समाज को आशा थी कि अपनी जनतन्त्र सरकार भारत के माथे पर लगे गोवध

के गहरे कलंक को दूर कर भारत की सांस्कृतिक परम्परा को पुनः प्रतिष्ठित करेगी और देशवासियों में व्याप्त शोचनीय आर्थिक और स्वास्थ्य विषयक ह्रास को रोकेगी। परन्तु जब आशापूर्ण होते न देखी तो विवश होकर दो वर्ष हुये उसे गोरक्षा आन्दोलन प्रारम्भ करना पड़ा और केन्द्रीय सरकार से मांग की गई कि सम्पूर्णतः गोवध निषेध के लिये प्रभावशाली कानून बनाया जावे। केन्द्रीय सरकार ने यह विषय राज्यों का बताकर गोवध निषेध के लिये आवश्यक कानून बनाने का कार्य राज्य सरकारों पर छोड़ दिया।

प्रसन्नता है कि मध्य प्रदेश, मध्य भारत में यह कानून बन गया और उत्तर प्रदेश ने कानून बनाने की घोषणा करदी है तथा बिहार राज्य में विधान सभा में कानून पेश है। अन्य राज्य भी इस दिशा में आवश्यक कदम उठा रहे हैं।

खेद है कि पंजाब राज्य में प्रभावशाली कानून न होने से पंजाब के गुड़गांवा जिले की नूह और फ़रोज़पुर फ़िरका तहसीलों में गोवध बहुत हुआ और पंजाब राज्य का १८७१ का ऐक्ट ११ और १९।७।-१८१० का नोटीफिकेशन नं० ८११ इस गोवध को रोकने में प्रभावशाली सिद्ध न हुये जिसका कुछ विवरण आर्य समाज गोरक्षा समिति के सर्वाधिकारी श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज ने १८।७।५४ को आपकी सेवा में भेजा था और जिस पर आपने उचित विचार करने का आश्वासन दिया था। (देखें अपना ३।७।५४ का पत्र सं० ४७१२ सी०एम०पी)

१९।२।५९ को नगीना (गुड़गांवा) में हुई पंचायत में जिस में हजारों मेव मुसलमान मौजूद थे यह फ़ैसला हुआ कि आज से गोवध न किया जायेगा। पंचायत के इस फैसले ही से यह स्पष्ट हो गया है कि वहां गोवध होता था। बड़ी मात्रा में होता था और उपर्युक्त ऐक्ट या घोषणा के बावजूद होता था। नोटिफ़िकेशन की धारा ४ के सब क्लाज ३ के अनुसार गोवध को रोकने के लिये डिप्टी कमिश्नर ने कोई आज्ञा भी जारी नहीं की प्रतीत होती।

१८७१ का ऐक्ट ११ और १८१० का नोटिफ़िकेशन का परिपालन सख्ती से भी किया जावे तो उनके अनुसार गोवध सर्वथा बन्द नहीं होगा क्योंकि उनका उद्देश्य आंशिक प्रतिबन्ध लगाना है न कि सम्पूर्णतः गोवध बन्द करना।

मेवों की पंचायत का फ़ैसला प्रशंसनीय होते हुये भी वह कानूनी वस्तु नहीं है। वह किसी समय भी भंग हो सकता या किया जा सकता है।

अतः इस प्रकार की आशंकाओं की गुंजाइश न छोड़ने और राज्य भर में गोवध निषेध की वैधानिक सुरक्षा के लिये आवश्यक है कि विधान सभा द्वारा एक प्रभावशाली कानून बनाया जावे। आर्य समाज इसे अत्यावश्यक समझता है और इसकी श्रीमानों से बलपूर्वक मांग करता है। साथ ही इस समय इस मांग को पंजाब के हिन्दू मुस्लिम, सिख प्रायः सभी वर्गों का समर्थन प्राप्त है।

इस सम्बन्ध में यह भी स्पष्ट करना आवश्यक है कि गोवध निषेध की मांग में आर्य समाज का कोई भी राजनैतिक उद्देश्य निहित नहीं है। वह इस प्रश्न को राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति का साधन बनाने को भी निन्दनीय समझता है। आर्य समाज गोवध निषेध के प्रश्न को विशुद्ध धार्मिक सांस्कृतिक और आर्थिक दृष्टि से देश के लिये महत्वपूर्ण समझता है। यही आर्य समाज के आन्दोलन की भावना है।"

मुख्य मंत्री महोदय ने स्मृति पत्र को पढ़ कर कहा कि हमारे राज्य में गोवध निषेध कानून बना हुआ है और गुड़गांवा में मेवों ने जो पंचायत करके भविष्य में गो वध न करने का फैसला किया है उसे इस भावना से देखना चाहिए कि इस पंचायत ने राज्य की पालिसी (नीति) को बलवती बनाया है।

"इस पर शिष्ट मण्डल के प्रमुख प्रवक्ता श्री ओ३म् प्रकाश जी त्यागी ने मुख्य मन्त्री महोदय को बताया कि पंजाब राज्य के १८७१ के कानून में लाइसेंस द्वारा गोवध किये जाने की छूट के कारण यह कानून बेकार हो गया है और गुड़गांवा की नूह तथा फ़ीरोज़पुर फ़िरका की तहसीलों में खुले आम बहुत बड़ी संख्या में गोवध होता रहा है। मेवों की

साहित्य-समीक्षा

वेदान्त दर्शन

भाष्यकार:—स्वामी ब्रह्ममुनिः परिव्राजकः

पुस्तक प्राप्ति स्थान—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, बलिदान भवन देहली। मूल्य ३)

स्वामी ब्रह्म मुनि जी परिव्राजक आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध विद्वान् है जिनके पूर्वाश्रम में श्री प्रियरत्न आर्ष के नाम से अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र, वैदिक मंत्र विद्या, यम और पितर वैदिक ज्योतिष शास्त्र आदि ४० और संन्यासाश्रम में प्रवेश के पश्चात् ११ उत्तम ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। उन्हीं सुयोग्य स्वामी जी ने वेदांत दर्शन पर संस्कृत में यह उत्तम भाष्य किया है जो उनकी विद्वत्ता और मौलिक विचार शक्ति का परिचायक है। वेदान्त दर्शन पर संस्कृत में स्वामी शंकराचार्य जी, रामानुजाचार्य, स्वामी आनन्दतीर्थ (मध्वाचार्य) श्री वल्लभाचार्य, निम्बार्काचार्य, विज्ञानभिक्षु इत्यादि के अनेक भाष्य विद्यमान हैं किन्तु उन में अनेक स्थलों में वेदांत सूत्रों के अर्थ करते हुए साम्प्रदायिक विचारों को प्रधानता दी गई है यह निष्पक्ष विचारकों को स्पष्ट प्रतीत होता है। प्रायः सर्वत्र केवल उपनिषद्ों के वचन उद्धृत किये गये हैं और मूल वेदों का नाम मात्र निर्देश उन में पाया जाता है। स्वा ब्रह्म मुनि जी के इस भाष्य की विशेषता यह है कि उन्होने मूल वेदों की श्रुतियों का भी प्रायः सर्वत्र निर्देश करते हुए वैदिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। क्योंकि वेदांत का अर्थ ही विद्वानों के अनुसार वेद का अंत सिद्धांत है। इस दृष्टि से उन्होंने वेदांत दर्शन के भाष्य में ब्रह्म को जगत् का निमित्त कारण और प्रकृति को ब्रह्माधीन उपादान कारण और नित्य आत्मा की सत्ता का प्रतिपादन किया और ४८ सूत्रों पर श्री शंकराचार्य के भाष्य की अशुद्धता को सप्रमाण सिद्ध करने का यत्न किया है जो निष्पक्ष विद्वानों को ठीक ही प्रतीत होगा ऐसा मेरा विश्वास है। प्रथम अध्याय के तृतीय पाद के ३१ से ३८ सूत्रों के भाष्य में श्री शंकराचार्य ही नहीं रामानुज, आनन्द तीर्थ, वल्लभाचार्य, निम्बार्काचार्यादि सभी मध्यकालीन आचार्यों ने न केवल शूद्रों के वेदाधिकार का निषेध किया है बल्कि "अथहास्य शूद्रस्य वेदमुप शृण्वतस्त्रपुजतुभ्यां श्रोत्र परिपूरणम् उच्चारणे जिह्वाछेदः धारणे शरीर भेदः" इत्यादि वेद विरुद्ध अन्याय पूर्ण वचनों को प्रामाणिक मान कर उद्धृत किया है। श्री स्वामी ब्रह्म मुनि जी ने अपने भाष्य में जन्म से शूद्रों के वेदाधिकार को सप्रमाण सिद्ध करते हुए परमत का प्रबल निराकरण किया है। 'अशुद्धमिति चेन्न शब्दात्' इस ३।१।२५ के भाष्य में इन सब अन्य भाष्यकारों ने यज्ञों में पशु हिंसा का समर्थन किया है किन्तु श्री स्वामी ब्रह्म मुनि जी ने उनके मत का सप्रमाण निराकरण किया है। इस प्रकार यह भाष्य अत्यन्त मौलिकता और महत्वपूर्ण है और विद्वानों से निवेदन है कि इसे निष्पक्षपात भाव से देखें। हमें एक त्रुटि इसमें अखरती है स्वा० ब्रह्ममुनि जी ने सर्वत्र श्री शंकराचार्य के भाष्य की ही आलोचना की है अन्य आचार्यों की नहीं। इसमें कुछ पक्षपात सा प्रतीत होता है। उन्होंने प्रधान मल्ल निबर्हणन्याय से श्री शंकराचार्य के अगाढ़िख्यात दार्शनिक होने के कारण संभवतः ऐसा किया है तथापि हम आशा करते हैं कि पुस्तक के अगले संस्करण में वे अन्य भाष्यों के मुख्यांशों को भी इसी प्रकार युक्तियुक्त सप्रमाण आलोचना करेंगे। श्री स्वा० वेदानन्द जी ने अपने विद्वत्ता पूर्ण प्राक्कथन में अन्य आचार्यों के मतों का संक्षेप से निर्देश करते हुए उनकी त्रुटियों का कुछ संकेत किया है। सम्पूर्णतया यह भाष्य अत्युत्तम है और इसके द्वारा दार्शनिक साहित्य में अत्यन्त अभिनन्दनीय वृद्धि हुई है।

धर्मदेव वि० वा० विद्यामार्तण्ड
(मंत्री सार्वदेशिक धर्मार्य सभा)

* सम्पादक की डाक *

बधाई

(१)

हिन्दू महा सभा के एक स्तम्भ श्रीयुत महन्त दिग्विजय नाथ जी श्रीयुत कंवराज हरनाम दास जी सभा मंत्री को अपनी भांजी का रिश्ता ठा. धर्म्म सिंह जी के सुपुत्र के साथ कर देने के साहसिक पग उठाने पर साधुवाद देते हुए लिखते हैं:—

"मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई कि आपने अपनी भांजी सौ० शकुन्तला कुमारी का शुभ विवाह श्रीयुत ठा० धर्म सिंह जी सरहदी के सुपुत्र प्रिय राम सिंह से करने का जो निश्चय किया है वह अत्यन्त सराहनीय और अनुकरणीय है। आज हिन्दू समाज को आप जैसे आदर्श हिन्दुओं की आवश्यकता है तभी हमारा शुद्धि आन्दोलन वास्तव में सफल हो सकता है।"

(२)

श्री सत्यनारायण पचेरी वाला वाणिज्य कर विशेषज्ञ साहिब गंज (स. परगना) से लिखते हैं —

"यह जान कर असीम प्रसन्नता हुई कि आपने अपनी भांजी का विवाह श्रीयुत ठा. धर्म्म सिंह जी सरहदी के सुपुत्र के साथ निश्चय किया है। यह एक ऐसा कदम है जो आर्य समाज के तरुण रक्त को प्रेरणा के साथ साथ चुनौती है। समाज आपके इस पग के लिये चिर ऋणी रहेगा।

हमारी विदेश की चिट्ठी

एक भारतीय सज्जन वेरमोन्ट कैलीफोर्निया से लिखते हैं:—

'सार्वदेशिक सभा के कार्यालय से भेजी हुई पुस्तकें प्राप्त हुई। ये पुस्तकें योग्य व्यक्तियों को भेंट स्वरूप दी जावेगी।

अमेरिकन जनता आर्य समाज और वैदिक धर्म से सर्वथा अनभिज्ञ है। कुछ लोग पौराणिक हिन्दू धर्म और उसके रिवाजों यथा वृक्षों, नदियों, पहाड़ों, पशुओं, मूर्तियों की पूजा, अस्पृश्यता, बाल विवाह तथा पिछड़े हुए हिंदुओं में प्रचलित अवैदिक प्रथाओं से परिचित हैं।

अमेरिकन लोगों की धर्म में रुचि नहीं फिर भी यदि इन्हें वेद तथा वैदिक साहित्य देखने को और आर्य समाज के विद्वानों के व्याख्यान सुनने को मिले तो इनमें से बहुत से वैदिक धर्म की ओर आकृष्ट हो सकते हैं।

बड़े खेद की बात है कि यहां आर्य समाज के उपदेशक और संन्यासी काम करने के लिये नहीं हैं। पता नहीं सार्वदेशिक सभा पं गंगाप्रसाद जी उपाध्याय सरीखे आर्य विद्वानों को कुछ समय के लिये भेजने की व्यवस्था में है या नहीं।

यह (अमेरिका देश अपनी भौतिक समृद्धि की चोटी पर पहुँच चुका है। उनका जीवन का स्तर बहुत ऊंचा है और वे इस स्तर की रक्षार्थ कठोर परिश्रम करते हैं। यहां मोटर कार साधारण वस्तु है। प्रायः प्रत्येक काम गैस और बिजली की सहायता से किया जाता है मकान तक एक स्थान से दूसरे स्थान तक हटा दिये जाते हैं। मजदूरी बड़ी मंहगी है। सप्ताह ५ दिन का और श्रमजीवी लोगों के लिये ८ घण्टे का होता है कानून के अनुसार एक घंटे की मजदूरी ७१ सेंट होती है। अधिक दूसरे पत्र में लिखूंगा।

पंचायत के बाद भी सभा में प्राप्त विश्वस्त सूचनाओं से प्रकट होता है कि तहसील फीरोजपुर झिरका के टुंडेया, सुहेंगा, माहचोखा, बढ़ेड, मल्लावास आदि ग्रामों में बराबर गोवध होता है।

शिष्ट मण्डल की ओर से यह भी प्रकट किया गया कि यदि कोई व्यक्ति तीन वर्ष तक गोवध करता रहे तो १८७२ के कानून के आधार पर गोवध के लिये उसे कानूनन गोवध का लाइसेंस लेने की आवश्यकता नहीं रहती उसे इस कानून से स्वतः ही गोवध का लाइसेंस मिल जाता है। साथ ही मेवों की पंचायत का फैसला वैधानिक भी नहीं है। वर्तमान डिप्टी कमिश्नर के स्थान पर अन्य किसी डिप्टी कमिश्नर की इच्छा से कानून के अन्तर्गत लाइसेंस देकर गोवध की छूट दी जा सकती है।

१८७२ के कानून के उस भाग की ओर भी मुख्य मन्त्री का ध्यान आकर्षित किया गया कि यह कानून केवल टाउन एरिया तक ही सीमित है, ग्रामों में यह लागू ही नहीं होता।

शिष्ट मंडल की ओर से आगे बताया गया कि जनता की यह प्रबल धारणा है कि पंजाब राज्य के कानून में लाइसेंस द्वारा गोवध की छूट दिये जाने के कारण ही वहां गोवध होता है।

अब चूंकि पंजाब राज्य के आसपास के राज्यों में यथा काश्मीर, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, मध्य भारत, मध्य प्रदेश, में गोवध निषेध के कानून बन चुके हैं और उत्तर प्रदेश ने कानून बनाने की घोषणा करदी है तथा बिहार राज्य की विधान सभा में इसी प्रकार का कानून आ चुका है ऐसी अवस्था में हिन्दू जन मत प्रधान पंजाब राज्य में जहां इस समय मुसलमानों तथा सिखों का गोवध निषेध के सम्बन्ध में पूर्ण समर्थन भी प्राप्त है सरकार को कानून बनाकर गोवध बन्द कर देना चाहिये। ऐसा न होने से हिन्दुओं की भावनाओं को ठेस पहुंचती है और शनैः शनैः उनकी धार्मिक भावना मिट रही है। यह धार्मिक भावना की कमी कम्यूनिस्ट प्रचार में सहायक है।

आर्यसमाज सांस्कृतिक धार्मिक और आर्थिक दृष्टि से गोवध को देश के लिये हानिकारक समझता है। आर्य समाज यह भी चाहता है कि सरकार गोवध निषेध का पूर्ण कानून बना कर पूर्णरूप से यश की भागी बने।

शिष्ट मंडल की ओर से बताया गया कि गुड़गांवा जिले में जो गोवध होता है उसका मांस छिपा कर देहली भेजा जाता है और वहां के होटलों में इसका व्यवहार होता है। गोमांस सस्ता होने के कारण कई होटलों में चोरी से इसे दूसरे मांस के नाम पर भी खिलाया जाता है। यह हिन्दुओं की धार्मिक स्थिति और संस्कृति पर कुठाराघात है। इस स्थिति से जनता की इस धारणा को बल मिलता है कि पंजाब राज्य के पुराने गोवध निषेध कानून में जो कमियां हैं वे ही इस बुराई का कारण हैं।

माननीय मुख्य मंत्री महोदय ने शिष्ट मंडल के इस निवेदन को जो उन्हें शिष्ट मंडल की ओर से दिये गये स्मृति पत्र की व्याख्या में किया गया था, बहुत धैर्य और शान्ति के साथ सुना और निम्न प्रकार अपने विचार प्रकट किये:—

'प्रत्येक राज्य अधिकारी को आदेश जारी कर दिये गये हैं कि गोवध का कानून कड़ाई से लागू किया जाये। जो कानून शहर में लागू है वही गांवों पर भी लागू कर दिया गया है। अर्थात् अब कानून की दृष्टि में शहर और गांव दोनों में समान रूप से यह कानून लागू होगा। गुड़गांवा जिले के कुछ विशेष ग्रामों के लिये जहां गोवध विशेष रूप से होता था गोवध निषेध के लिये विशेष आदेश जारी किया गया है।

यदि किसी सरकारी अधिकारी ने सरकार के इस आदेश का पालन करने में शिथिलता दिखाई या इसका उल्लंघन किया तो उसे अलग कर दिया जायेगा।

सरकार की यह नीति है कि राज्य में गोवध न हो उसके लिये कोई लाइसेंस न दिया जावे और इस पर कड़ाई से अमल किया जाये।

माननीय मन्त्री महोदय ने शिष्ट मंडल को आश्वासन देते हुये कहा कि जिस स्थान पर तीन वर्ष तक गोवध होता रहा है उस स्थान पर कानूनन लाइसेंस द्वारा गोवध करने का जो अधिकार वधक को प्राप्त हो जाता है उसे तथा वर्तमान कानून में इसी प्रकार की अन्य त्रुटियों को सरकार शीघ्र दूर करके

इसे ऐसा दृढ़ बनावेगी कि फिर किसी भी अवस्था में गोवध संभव न होगा।

गवर्नमेंट की यह निश्चित पालिसी है कि राज्य में गोवध न हो अतः वर्तमान कानून में जो कमी है सरकार खुद ही इस कमी और ढील को दूर करने की सोच रही है।

राजस्थान से आने वाले पशुओं के आने पर भी सरकार ने रोक लगादी है। सन्तोष रखें हम देख रहे हैं कि जनमत को साथ लेकर कानून में आवश्यक संशोधन कर दिये जायें।

मैं इस दृष्टि से इस कानून को देख रहा हूं कि हमारी जो नीति है उसमें कोई कमी तो नहीं है। हम उसी कमी को दूर कर रहे हैं। इससे आप देखेंगे कि दो मास में ही कितना परिवर्तन आ जाता है।

माननीय मुख्य मन्त्री महोदय के उपरोक्त आश्वासन पर शिष्ट मंडल की ओर से पुनः निवेदन किया गया कि जब पंजाब राज्य सरकार यह चाहती है कि प्रांत में गोवध न हो और इसी हेतु लाइसेंस न देने के नये आदेश जारी किये गये हैं और वर्तमान कानून की कमियों और ढीलेपन को दूर किया जा रहा है तो फिर असेम्बली में गोवध निषेध का नया कानून उत्तर प्रदेश सरकार की तरह ही क्यों नहीं बना दिया जाता और वर्तमान कानून में लाइसेन्स के शब्द को ही क्यों नहीं हटा दिया जावे।

इस पर मुख्य मंत्री महोदय ने आश्वासन दिया कि एसेम्बली द्वारा बनाये गये कानून के दो भाग होते हैं [1] कानून [लॉ] और दूसरे रूल्स [नियम] सरकार द्वारा बनाये गये नियम जिन्हें सरकार प्रकाशित करती है उनका भी कानूनी महत्व होता है।

शिष्ट मंडल ने निवेदन किया कि वर्तमान कानून में दोषी को दण्ड नहीं के बराबर है और इससे गोवध रुकने की आशा नहीं अतः इस कानून में सुधार करते समय आप इसमें दण्ड की इतनी कड़ी व्यवस्था रखें कि किसी प्रकार का आर्थिक प्रलोभन किसी भी व्यक्ति को गोवध करने को प्रोत्साहित न कर सके।

अन्त में बड़े प्रेम और विश्वासपूर्ण वातावरण में यह पारस्परिक बातचीत समाप्त हुई तथा आर्य समाज की ओर से गोरक्षा सम्बन्धी सरकार के रचनात्मक कार्यों में पूर्ण सहयोग का शिष्ट मंडल ने विश्वास दिलाया।

सरकारी घोषणा

शिष्ट मंडल की भेंट के दूसरे दिन ही १२।३।५५ को पंजाब सरकार के माननीय मुख्य मन्त्री महोदय ने अपने आश्वासन के अनुसार सरकार की ओर से एक विज्ञप्ति समाचार पत्रों में प्रकाशित करदी है जिसमें बताया गया है कि पंजाब में गोवध निषेध कानून को और भी कड़ा करने के लिये राज्य सरकार वर्तमान कानून में संशोधन करने पर विचार कर रही है, यह बड़े हर्ष की बात है।

रामगोपाल शालवाले
उपमन्त्री सभा
संयोजक—सार्वदेशिक गोरक्षा समिति
श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली ६.

सार्वदेशिक गोरक्षा समिति

पं० रामस्वरूप जी उपदेशक का फरवरी ५५ का काम

(१) ग० जि० गुड़गांवा त० नूं फिरोजपुर झिरका के २१ ग्रामों में घूम कर गोरक्षा तथा आर्य सिद्धांतों का प्रचार किया २००० हजार मनुष्यों के सामने व्याख्यान दिया १२।२।५५ को नगीना में जो मेव भाइयों की पंचायत हुई उसके सब हालात सुनें और लिखे अर्थात् गौ कशी बन्द की गई उसका असर भी अच्छा हुआ अर्थात् दोहा-बिवां साकरस जमालगढ़ सींगार आदि ग्रामों में अब तक गौ कशी बन्द है टुंडेवा, सुहेंगा, बिठेड़, साचोला अलालबास आदि ग्रामों में अब भी १ से १० प्रति दिन प्रति ग्राम में गोवध होता है।

२१६ गौ कसाइयों से छीनी हुई गो रक्षकों के घरों में भेजी जिसमें श्रद्धेय मंत्री हरनामदास जी तथा रामगोपाल जी सार्वदेशिक सभा की अच्छी सहायता मिली।

रहा है। अब तक १२ फ़र्मे छप चुके हैं। १५ मार्च की अवधि तक कुल २१४५) रु० की आय हुई तथा २१०१)॥ रु० का व्यय हुआ। इसका पूर्ण विवरण सभा को दे दिया गया है। शेष प्राप्तव्य धन की बहुत प्रतीक्षा है आशा है सभी महानुभाव जल्दी ही भिजवा देंगे जिससे काम बिना रुके जल्दी ही पूर्ण हो सके।

व्यवहार भानु को कन्नड़ प्रांतीय स्कूलों में पाठ्य पुस्तक के रूप में रखवाने का प्रयत्न चल रहा है। आशा है परमात्मा की कृपा से कोई सुपरिणाम अवश्य होगा।

विवाहपद्धति—के लिये १२५) एक सौ पच्चीस रुपये की सहायता तथा १०० पुस्तकों का दान गुलबर्गा के श्री परशुराम जी गम्या ने अपने सुपुत्र के विवाहोपलक्ष्य में दिया। हम उनके अत्यन्त कृतज्ञ हैं। आशा है गोकरुणानिधि को भी कोई महानुभाव छपवाने के लिये इसी प्रकार की उदार सहायता से समिति को कृतार्थ करेंगे।

१. अन्य योजनायें—निकट भविष्य में आर्य समाज के कार्य को और भी अधिक बढ़ाने के लिये एक पत्रिका की आयोजना की जा रही है। बहुत से स्कूलों से उत्साहमय पत्र प्राप्त हो रहे हैं। इस पत्रिका में हिन्दी, कन्नड़, अंग्रेजी तीनों भाषाओं में उत्कृष्टतम लेख रखने का विचार है। इसका एक उपयोग जहां भारत के सभी भागों में आर्य सिद्धान्तों का प्रसार है वहां कन्नड़ भाषा में क्रमशः आर्य साहित्य का अनुवाद प्रकाशन भी है जिससे इस साहित्य के प्रकाशन में और भी प्रगति हो सके। साथ ही इसके द्वारा अहिंदी भाषियों को दक्षिण भारत की कोई एक भाषा सिखाने का सरलतम प्रयोग होगा। आशा है भारत की समस्त समाजें इसको अनुपम पत्रिका के रूप में प्रस्तुत करने में सहायता देंगी तथा अपने सत्परामर्शों से कृतार्थ करेंगी।

२. अन्तर्भाषार्य परिषद्—भाषा सिखाने की अखिल भारतीय समस्या को राष्ट्रहित की दृष्टि से सुलझाने के लिये इस परिषद की स्थापना तथा उसके द्वारा लिखित परीक्षा क्रम आदि की योजना बन रही है जो आशा है सभा की स्वीकृति मिल जाने तथा अवसर मिलते ही शीघ्र ही स्थापित कर दी जायगी।

३—मैसूर नगर में परीक्षणार्थ एक "आर्य परिवार प्रतियोगिता" की योजना की जा रही है। इसके अनुसार एक वर्ष तक कुछ आर्य सज्जन अपने परिवारों को आर्य बनाने की प्रतिज्ञा कर यत्न करेंगे तथा वर्ष के अन्त में युगादि से रामनवमी तक के दिनों में उनकी प्रतियोगिता होगी जो सज्जन अपने परिवार आर्य बनायेंगे तथा जो श्रेष्ठतम आर्य परिवार होगा उसको पुरस्कार आदि दिया जायेगा।

इसकी विस्तृत योजना बना रहा हूँ तथा इस नगर में सफल होने पर और स्थानों पर भी बड़े रूप में करने का विचार किया जावेगा।

सत्यपाल शर्मा स्नातक
द. भा. आर्य समाज संचालक
(सार्वदेशिक सभा देहली)

चुने हुए मोती

—सत्कर्म धूल में भी फलते फूलते हैं।

—दुखियों के दुःख को देखकर दया उत्पन्न होना मानवीय और दुःख को दूर करना दैवीय होता है।

—सत्य जीवन का प्रकाश और परमात्मा का स्वरूप होता है!

—भला बनने के लिए दूसरों के साथ भलाई करो।

महिला-जगत्

साध्वी रानी एलिजाबेथ

इतिहास का एक विद्यार्थी

साध्वी रानी एलिजाबेथ का जन्म सन् १२०७ ई० में हंगरी के राजा एंड्रू के घर में हुआ था। इस राजवंश में बहुत से धार्मिक पुरुष हो चुके थे। इसी परम्परा के प्रभाव से एलिजाबेथ के माता पिता भी उच्च भावापन्न एवं धर्म परायण थे। इसी कारण इन लोगों ने अपनी प्रिय पुत्री के मन में भी धार्मिक भाव जागरित करना आरम्भ कर दिया। बचपन से ही एलिजाबेथ को धार्मिक चर्चा बड़ी प्रिय लगती थी।

एलिजाबेथ के सौन्दर्य और धार्मिक भावनाओं की प्रशंसा सुनकर सेक्सनी के प्रतापी और धार्मिक राजा हारमैन ने हंगरी की राजकुमारी एलिजाबेथ को पुत्र वधु बनाने का विचार किया और अंत में उनके पुत्र राजकुमार लुई से एलिजाबेथ का विवाह होना निश्चित हो गया। उस समय के राजपरिवार के नियमानुसार वाग्दान हो जाने पर पांच वर्ष की अवस्था में ही एलिजाबेथ को अपनी ससुराल आना पड़ा। उसके सास ससुर उसे अत्यन्त प्यार के साथ रखने लगे।

कुछ ही दिनों में एलिजाबेथ की मां किसी षड्यन्त्रकारी के हाथों अपने पति की रक्षा करती हुई परलोक सिधारी। यह समाचार पाकर एलिजाबेथ घबरा गई उसने उसी दिन निश्चय किया कि इस निश्वर जगत् में मैं केवल ईश्वर को ही सबसे अधिक प्यार करूंगी और तभी से वह भगवान की ओर द्रुतगति से बढ़ने लगी। कभी कभी वह श्मशान में चली जाती और कब्रों में सोये लोगों की स्मृति से एक दिन मेरी भी यही दशा होगी सोचकर सत्कर्मों की प्रेरणा के लिये भगवान से प्रार्थना करने लगती।

एलिजाबेथ शैशव से ही अपने ऊपर प्रभुकृपा का अनुभव कर रही थी। इसके श्वशुर हारमैन इसे बहुत प्यार करते थे, परन्तु कुछ काल में वे भी काल के गाल में चले गये। अब इसकी देख रेख का सारा दायित्व सास सोफिया पर पड़ा। सोफिया अत्यन्त विलासिनी प्रकृति की थी। उसे एलिजाबेथ की हर समय की धार्मिक चर्चा प्रिय नहीं लगती थी। वह एलिजाबेथ को बहुमूल्य रत्नालंकार विभूषित सौन्दर्यमयी तितली के रूप में देखना चाहती थी पर एलिजाबेथ का यह अच्छा नहीं लगता था। इसके पति विदेश में शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। इस कारण इसे सोफिया के बर्ताव से बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा। वह घबराकर बार बार भगवान से प्रार्थना करने लगी।

सोफिया की विशेष आज्ञा से एक दिन एलिजाबेथ सुन्दर आभूषण पहन कर उपासना गृह में आ रही थी। जाते समय अचानक उसकी दृष्टि मृत्यु के लिये तैयार क्रूसविद्ध ईसामसीह के चित्र पर पड़ी। उसे देखते ही वह अपना मुकुट उतार कर सिर झुकाकर प्रार्थना करने लगी।

"मुकुट का भार संभाला नहीं जाता क्या? जो सिर खोल कर निर्लज्ज बनी बैठी है" नंगे सिर के बिखरे बाल देखकर अत्यन्त रोष से सोफिया ने कहा—

* दक्षिण भारत प्रचार *

मैसूर में शिवरात्रि पर्व

फरवरी मास की १४ ता०से २० ता० तक मैसूर नगर आर्य समाज की ओर से दयानन्द सप्ताह बड़े समारोह पूर्वक मनाया गया। प्रतिदिन प्रातः व सायं "राष्ट्र कल्प-यज्ञ" का आयोजन था तथा यज्ञ के पश्चात् प्रातः वेद कथा तथा सायं भाषणों का कार्य क्रम रखा गया। श्री पं० विश्वमित्रजी, पुरोहित आर्य समाज के निरीक्षण में सब कार्य सफल हुआ। श्री पं० सुधाकर जी तथा मैंने इस यज्ञ में "राष्ट्र कल्प" मंत्रों की व्याख्या की तथा भाषण दिये। सातों दिन बड़ा अच्छा कार्य क्रम चला। आर्य समाज मैसूर के कार्य क्रम में इतनी बड़ी उपस्थिति आशातीत एवं अभूतपूर्व थी। कई व्यक्ति जो यजमान बने वे अपने को बड़ा धन्य मानते हुए कहने लगे कि "हमने ऐसा यज्ञ कभी नहीं देखा। मेरा परम सौभाग्य है जो मैं इस यज्ञ का यजमान बना।" अन्तिम दिन यज्ञ की पूर्णाहुति हुई तथा रात्रि में श्री वी० जी० दास जी की अध्यक्षता में श्रद्धांजलि समारोह सम्पन्न हुआ। उपस्थिति बहुत ही अच्छी थी। कन्नड़ व हिंदी में भाषण कविताएं तथा भजन हुए। इस यज्ञ का जो प्रभाव हुआ उसको इसी परिमाण से जाना जा सकता है कि मैसूर के कई अन्य महानुभावों ने अपने घरों पर पर्व पर यज्ञ करने के लिये निमन्त्रण दिया तथा गुणा बाई छत्रम् में यज्ञार्थ जो वेदी बनाई गई उसको पक्की बनाने का छत्र की स्वामिनी ने संकल्प किया। इसी यज्ञ के फलस्वरूप एक स्त्री समाज की स्थापना निकट भविष्य में ही होने जा रही है। इस प्रकार यह समारोह आशातीत सफल रहा। तथा हमें एक विचार भी मिला कि 'दक्षिण भारत में आर्य समाज के सिद्धांतों के प्रचार के लिये यज्ञ एक अनुपम साधन है।" इसी दृष्टि से और भी बड़े पैमाने पर आगामी पर्व में यज्ञ करके आर्य सिद्धांतों के प्रचार करने का विचार है।

इस समारोह के अनन्तर मलाबार व केरल प्रांतीय समाजों को व्यवस्थादि के लिये तथा आर्य समाजों के प्रचारार्थ २६ ता० को मैसूर से निकला।

कालिकट—यह मलाबार प्रदेश में अच्छा बड़ा जिला है तथा प्रादेशिक सभा पञ्जाब की ओर से श्री पं० बुद्धसिंह जी कार्य कर रहे हैं। समाज का अपना भवन भी है तथा आर्य समाज की ओर से एक हिन्दी विद्यालय भी चल रहा है। यहां कदा शुद्धि आदि का काम भी चलता है। साप्ताहिक सत्संग में हिन्दी विद्यालय के विद्यार्थी भी सम्मिलित होते हैं तथा बड़े अच्छे रूप में भजन आदि गाते हैं। श्री पं० जी की धर्म पत्नि भी इस काम को प्रगति देने में संलग्न हैं। वस्तुतः वहां के विद्यालय की व्यवस्थादि को देख कर यह अनुभव हुआ कि "यदि भारत वर्ष की सभी आर्य समाजें यह नियम बना दें अथवा सभा ही यह नियम बना दे कि आर्य समाजों की ओर से खुले हुए सभी विद्यालयों तथा कालेज के विद्यार्थियों का प्रति रविवार समाज के सत्संग में आना होगा" तो बहुत ही सुचारु रूपेण तथा सरलतया आर्य समाज का प्रचार हो सकता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि ईसाई मिशनरियों ने अपने मत के प्रचारार्थ इसी विधि को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया हुआ है।

पोनान्नी—मलाबार में मुसलमान पर्याप्त संख्या में हैं तथा यह ताल्लुका मुसलमानों का "दक्षिण भारत का मक्का है।" दक्षिण भारत में जो भी हिन्दू मुसलमान बनाये जाते हैं वे सब यहीं पर बनाये जाते हैं। यहां कालीकट के कार्य कर्ता श्री पं० बुद्धसिंह जी के प्रयत्न से एक समाज का अपना दुमंजिला भवन बन गया है जिसका परिणाम इस कस्बे के एक उच्च पदाधिकारी के शब्दों में यह है।" पहले यहां प्रतिदिन १० हिन्दू मुसलमान बनाये जाते थे परन्तु

आर्य समाज के बनने के बाद अब नहीं बना पाते।" पर अभी यहां के हिन्दुओं में भय का संस्कार है। इस समाजमें एक निस्पृह स्वामीजी काम कर रहे हैं। इस प्रकार यह समाज भी यदा कदा शुद्धि आदि के काम में हाथ डालता हुआ सन्तरी बन कर बैठा हुआ है। यहां पर भी मेरा अंग्रेजी में भाषण हुआ था।

चंगन्नूर—यह केरल प्रांत का एक कस्बा है। यह प्रान्त बहुत दिन पूर्व से प्रचारकों का अड्डा रहा है। जब आर्य प्रचारकों ने प्रयत्न करके एक केरल आर्य सभा का संगठन किया। किराये के मकान में यह सभा अपना कार्यालय बनाये हुए हैं। इस सभा की ओर से "स्वामी दयानन्द हिन्दी कालेज" के नाम से एक हिन्दी विद्यालय भी अच्छे रूप में चल रहा है। केरल आर्य सभा को और भी विकसित करने तथा प्रान्तीय स्तर पर व्यवस्थित करने के विषय में सदस्यों से वार्तालाप हुआ तथा एक आर्य प्रचारक की स्थाई नियुक्ति के सम्बन्ध में भी समिति बुलाकर निर्णय कराया। यदि कोई उत्तर भारतीय यहां आकर इस स्थान को सम्हाल लें तो काम बड़ा अच्छा हो सकता है। सभा से प्रार्थना की गई है कि प्रचारक की व्यवस्था के लिये शीघ्र ही निर्णय करने की कृपा करें। आशा है कि इसकी व्यवस्था हो जायगी। यहां भीएक भाषण हुआ।

परिक्काला—यह एक इसी चंगन्नूर तालुके का गांव है। इसमें भी समाज का एक छोटा सा कुटीर है। इसमें प्रति सप्ताह सत्संग नियम पूर्वक चलता है। श्री गोविन्द आर्य इसका भार उठाये हुए हैं। यहां दो नामकरण संस्कार तथा एक अन्न प्राशन संस्कार कराया तथा भाषण भी तमिल भाषा में हुआ।

पेन्निकरा—में पहले एक समाज थी। परन्तु किसी कार्य कर्त्ता के न आने से यह बंद हो गई थी।

इस बार फिर स्थापना करके तथा कार्य कर्त्ता तथा स्थानादि की व्यवस्था कर आया। सभी युवक सदस्य हैं तथा इसी गांव के एकमात्र व्यक्ति केरल आर्य सभा में उप प्रधान हैं अतः आशा है काम चल जायगा। यहां आर्य सिद्धांतों पर लगभग ३ घंटे तक शङ्का समाधानादि चलता रहा। अन्त में विशेष यत्न करके समाज की स्थापना की घोषणा हुई। इसी प्रकार एक दो स्थानों से और निमन्त्रण मिले हैं। आशा है श्री राज गुरु जी के आगमनावसर पर इन की व्यवस्था हो जायगी।

त्रिवेन्द्रम—में श्री पं० वेदबन्धु जी दयानन्द साल्वेशन मिशन की ओर से कार्य कर रहे हैं। हम दोनों में घंटों तक केरल की समस्याओं तथा आर्य समाज प्रसार के विषय में विचार विमर्श हुआ अन्ततः उन्होंने प्रादेशिक सभा को लिख कर दोनों सभाओं के मिलकर इस प्रान्त में योजना बनाने के विषय में कुछ निर्णय करवाने का आश्वासन दिया। यदि दोनों सभायें मिलकर इस प्रांत में एक योजना बना कर व्यवस्था करने का निर्णय कर लें तो वस्तुतः बहुत बड़ी समस्या हल हो सकती है। इस प्रांत में निर्धन व्यक्तियों की संख्या अधिक है अतः अब कम्यूनिज्म भी उसी जोर से बढ़ने लगा है जिस जोर से पहले ईसाईयत बढ़ी थी। (शायद यह अच्छा ही है कि बढ़ी हुई ईसाईयत को अब कम्यूनिज्म निगल रहा है) परन्तु समाज के लिये दोनों ही अनृत हैं अतः समय रहते परिस्थितियों व संघर्षों की इस उथल-पुथल में हमें भी थोड़ा जम कर काम करना होगा और मुझे विश्वास है कि इस विषय में शीघ्र कोई निर्णय आर्य समाज के लिये बड़ा ही लाभकारी सिद्ध होगा। इसके लिये एक कार्य शील प्रचारक की स्थाई नियुक्ति इस प्रांत में बड़ी आवश्यक है जो मलयालम में प्रचार भी कर सके तथा समाजों की स्थापना व संगठन भी। इसके लिए प्रयत्न चल रहे हैं आशा है उनका शीघ्र ही कोई परिणाम निकलेगा।

प्रतिनिधि प्रकाशन समिति

सत्यार्थप्रकाश—का प्रकाशन सुचारु रूपेण हो

काँटों का मुकुट ईसा के मस्तक पर देखकर भी अपने ऊपर स्वर्ण मुकुट धारण करना इन का अपमान करना है, मां। एलिज़ाबेथ ने विनय से उत्तर दिया।

"तुम्हारी यही दशा रही तो तुम मेरे भाई की धर्मपत्नी नहीं बन सकोगी तुम्हारी जैसी स्त्रियाँ यहाँ दासी बनने योग्य हैं"—एलिज़ाबेथ की ननद एग्नेस ने कहा। उसे भी एलिज़ाबेथ का यह ढंग बहुत बुरा लगा।

पर एलिज़ाबेथ ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह प्रभु प्रार्थना से विरत नहीं हो सकी।

राजकुमार लुई शिक्षा प्राप्त करके वापस आये। वे धीर, वीर उदार थे। उन्हें उनकी मां और बहिन ने एलिज़ाबेथ के विरोध में उभाड़ना चाहा, पर उनके ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वे एलिज़ाबेथ से बड़े प्रेम से मिले। सन् १२२० ई०में वार्टबर्ग महल के गिरजे में धूमधाम से दोनों का विवाह हो गया।

एलिज़ाबेथ को धार्मिक पति का पूर्ण प्रेम प्राप्त था। अब वह खुले हृदय भगवद्भजन करती थी। दीन, अनाथों की सेवा वह खुल कर करती। प्रतिदिन बारह कोढ़ियों के पैर धोकर वह उपासना गृह में प्रवेश करती। उसने अपने महल के पास ही कुष्ठ के रोगियों के लिये चिकित्सालय निर्माण कराया। इससे बहुत से अनाश्रितों को आश्रय मिला। एलिज़ाबेथ स्वयं कोढ़ियों की सेवा अपने हाथों करती। रोगी उसे अपनी मां बहन के बराबर समझते। एक बच्चों का भी अस्पताल उसने खुलवाया था। रोगी बच्चों को अपने ही शिशु की भांति वह प्यार करती। बच्चे उसे देखते ही मा मा चिल्ला उठते। सहस्रों नौकरों के रहने पर भी अपने पद का ध्यान न करके वह गरीबों की झोंपड़ियों में जाती और गरीबों का दुःख सुनती तथा उसे निवारण करने का पूर्ण प्रयत्न करती अपने हाथों भोजन बनाकर वह गरीबों के लिये भेजा करती।

सन् १२२३ ई० में एलिज़ाबेथ को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। सर्वत्र आनन्द छा गया। एलिज़ाबेथ ने हाथ जोड़ कर कहा "भगवन् तुम्हारी दी हुई वस्तु तुम्हें ही अर्पण करती हूँ। तुम इसे अपना बनाकर आशीर्वाद दो।"

राजा बाहर चले गये थे। कुछ दिनों के बाद उनके वापस आने पर लोगों ने एलिज़ाबेथ के विरुद्ध धन का अपव्यय करने की शिकायत की पर इस समाचार से लुई को प्रसन्नता ही हुई। "भगवान् का धन भगवान के काम में व्यय करने से कभी नहीं घटता" लुई ने उत्तर दिया। चुगली करने वाले बगलें झांकने लगे।

सन् १२२७ ई० में यूरोप के अनेक ईसाई नरेशों ने विधर्मियों के हाथों से अपने पवित्र तीर्थ जेरूसलम को छुड़ाने के लिये युद्ध करने का निश्चय किया। उसमें राजा लुई भी गये। पर रास्ते में ही ज्वराक्रान्त हो उन्होंने अपना शरीर त्याग दिया। पति के परलोक गमन का समाचार पाकर छिन्नलतिका की भांति एलिज़ाबेथ गिर पड़ी और मूर्छित हो गई।

लुई के भाई हेनरी तथा अन्य कर्मचारियों ने प्राचीन वैरवश विधवा एलिज़ाबेथ पर राज्य कोष के नष्ट करने का दोषारोपण किया। हेनरी स्वयं राजा बन बैठा और उसने बड़ी निष्ठुरता से एलिज़ाबेथ को राज्य से निकल जाने की आज्ञा सुनादी। उसने राज्य में यह भी घोषित कर दिया कि एलिज़ाबेथ को आश्रय देने वाला व्यक्ति राजद्रोही माना जायेगा।

एलिज़ाबेथ महारानी से भिखारिन बनी, पर उसके मन में तनिक भी व्यथा नहीं थी। वह साध्वी भलीभांति समझ रही थी कि ममता का बन्धन तोड़ने के लिये करुणामय स्वामी ने मुझ पर करुणा की है। उसने छोटे से बच्चे को गोद में लिया और दो छोटे बच्चों को साथ लेकर राजपथ से नंगे पांव चल पड़ी। साथ में उसकी दासी भी थी।

दीनों की एकमात्र आश्रयदायिनी रानी भाग्य फेर से कङ्गाल बनकर चल रही थी—प्रजा यह दृश्य देखकर आंसू बहा रही थी पर राज्यभय से किसी ने उसे आश्रय नहीं दिया। उस दिन एक शूकर के निवास में एलिज़ाबेथ ने रात काटी।

एलिज़ाबेथ के मामा को यह समाचार मिला तो वे ढूंढकर उसे अपने पास ले गये। एलिज़ाबेथ वहां रहकर भगवान का भजन और दरिद्रों की सेवा करने लगी।

हेनरी की प्रजा उसके कुकृत्यों से घबरा गई थी। कुछ तेजस्वी युवकों ने जाकर हेनरी से कहा—आपके अधम कृत्यों से प्रजा ऊब गई है। तपस्विनी एलिज़ाबेथ के साथ पशुता का व्यवहार किसी को सह्य नहीं है। आप सम्मान पूर्वक उन्हें लौटा लावें पश्चाताप करें। अन्यथा समस्त देशवासी आपको धिक्कारेंगे। आपका कल्याण नहीं होगा।"

"मैंने बुरी सलाह पाकर ऐसा किया था, मुझे अपने कर्तव्य पर घृणा हो रही है।" कहता हुआ हेनरी उठ खड़ा हुआ। वह वहां से सीधे एलिज़ाबेथ के मामा के घर गया। एलिज़ाबेथ को देखते ही हेनरी उसके चरणों पर गिर पड़ा और क्षमा की प्रार्थना करने लगा।

साध्वी एलिज़ाबेथ के आंसू बह चले। तुम्हारा दोष नहीं है। भाई यह तो सब भगवान की इच्छा थी उसने कहा भगवद्भक्तों के मन में शत्रु के लिये भी भलाई की भावना होती है।

अत्यन्त हठ के कारण अनिच्छापूर्वक एलिज़ाबेथ पुनः चली आई पर नगर का कोलाहलपूर्ण वातावरण उसे प्रिय नहीं था। उसने मारबर्ग शहर के एक निर्जन मनोरम स्थान में अपने रहने का प्रबन्ध करा लिया। उसके बच्चे भी इससे अलग रह रहे थे। इस कारण वह निर्विघ्न रात दिन भगवद् भजन एवं दीनों की सेवा में ही अपना समय व्यतीत करती थी। उसका वेश भिखारिनों का था।

एलिज़ाबेथ का समाचार सुनकर उसके पिता का राजदूत काऊंट वेनी उसे देखने आया। वह एलिज़ाबेथ को साधारण सी पोशाक में सूत कातते देखकर आकुल हो गया। "तुम्हारी ऐसी स्थिति कैसे हुई?" दूत ने पूछा। 'मेरे प्रभु इसी भेष में मुझसे मिल सकेंगे। उन्हें पाने के लिये अब थोड़ा ही मार्ग तै करना है।" एलिज़ाबेथ ने हंसते हुये जवाब दिया। दूत निराश होकर लौट गया।

१९ नवम्बर सन् १२३१ ई० की रात्रि में जाड़ा जोरों से पड़ रहा था। नीलाकाश स्वच्छ था। तारे चमक रहे थे। उस समय एलिज़ाबेथ ने अपने कमरे से लोगों को हटा दिया तथा भगवान का ध्यान करती हुई वह अपने प्रियतम के पास चली गई।

एलिज़ाबेथ की रथी के पीछे सहस्रों अनाथ क्रन्दन करते गये थे। उनका आधार मिट गया था।

चुने हुए फूल
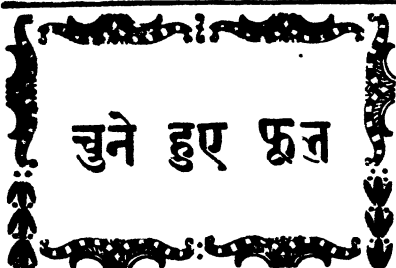
१—राज्य-व्यवस्था का ध्येय व्यक्ति और समाज का विकास और उनकी रक्षा होता है।

२—राज्य की सुरक्षा धर्म्म और सदाचार से सुरक्षित रहती है।

३—धर्म्म से शासन को शक्ति मिलती, कानून में बल आता और दोनों का सम्यक् संचालन होता है।

❀ ओ३म् ❀

आर्यसमाज के प्रमुख मन्तव्य

१—वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है जो ईश्वर ने सृष्टि के आदि में मनुष्यों के ज्ञानार्थ प्रदान किया।

२—वेदों को पढ़ने का अधिकार सबको (स्त्रियों और शूद्रों को भी) है।

३—ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, न्यायकारी, अजन्मा, अनन्त, सर्वव्यापक, अनादि सृष्टिकर्ता आदि गुणयुक्त तथा मनुष्य मात्र का उपास्य देव है। एक मात्र उसी को उपासना करनी चाहिये।

४—ईश्वर निराकार है। उसकी मूर्ति नहीं हो सकती। ईश्वर के स्थान में जड़ प्रकृति, पत्थर तथा धातु आदि की ज्ञान रहित मूर्तियों की पूजा बेसमझी की बात है।

५—जीव ब्रह्म से भिन्न है। अद्वैतवादी साधुओं का 'अहं ब्रह्मास्मि' (मैं ब्रह्म हूं) कहना भोली भाली जनता को धोखा देना है। 'जगत् मिथ्या' कहना भी असत्य है।

६—जलों में तीर्थ मानना धर्म के विरुद्ध है। विद्वान् पुरुष और वेद शास्त्र तीर्थ हैं। गंगा यमुना आदि तीर्थों पर स्नान, सत्यनारायण की कथा, तोबा आदि करना कर्मों के फल से नहीं छुड़ा सकते। अच्छे कर्मों से सुख और बुरे कर्मों से दुःख मिलता है।

७—सूर्य तथा चन्द्र ग्रहण प्राकृतिक हैं, यह सभी पढ़े लिखे जानते हैं। इन्हें राहु केतु से ग्रसा जाना, और उस समय कुरुक्षेत्र आदि तीर्थों पर जाकर स्नान करने में पुण्य मानना अज्ञानता और अंध विश्वास की पराकाष्ठा है।

८—ईश्वर कभी किसी मनुष्य, सूअर, कच्छ, मच्छ आदि की देह धारण करके अवतार नहीं लेता।

९—ईश्वर कर्मों का फलदाता है।

१०—कर्मों का फल अवश्य मिलता है। कोई पीर, पैगम्बर आदि कर्मफल के भोग से नहीं बचा सकते।

११ स्वर्ग नरक कोई विशेष स्थान नहीं हैं। सुख का नाम स्वर्ग और दुःख का नाम नरक है, और वे इसी संसार में तथा इसी शरीर में भोगे जाते हैं। दरिद्रता, रोग, परिवार आदि में कलह, मुकद्दमा, बेरोजगारी, सन्तान आदि की मृत्यु, ये नरक हैं। सुख सम्पत्ति, सम्मान, ऐश्वर्य, धर्म परायणता आदि ये स्वर्ग हैं।

१२—पुण्य, दान, स्वाध्याय, सत्संग, सदाचार, अहिंसा, यम नियम का पालन मनुष्य को देव पद प्राप्त कराते हैं।

१३—जीवित माता पिता की सेवा करना ही श्राद्ध है। मृत पितरों के नाम पर श्राद्ध करना वेद विरुद्ध और निरर्थक है। यह समझना कि ब्राह्मण को खिलाया पदार्थ मृत माता पिता आदि को जा पहुँचेगा, या उनकी आत्मा को सतोष होगा, अज्ञानता और अन्ध विश्वास की चरम सीमा है।

१४—माता, पिता और आचार्य तीन गुरु होते हैं।

१५—वर्ण व्यवस्था गुण, कर्म, स्वभाव से है। विद्या विहीन ब्राह्मण शूद्र हो जाता है। जन्म से न कोई ब्राह्मण होता है न शूद्र।

१६—पशुओं के बलिदान से ईश्वर सन्तुष्ट नहीं होता। धर्म या यज्ञ के नाम पर पशु हिंसा घोर पाप है। इन्द्रियों का दमन, अग्निहोत्रादि का अनुष्ठान और विद्वानों का सत्संग यज्ञ कहलाता है।

१७—किसी व्यक्ति विशेष या नवग्रहों के प्रभाव से किसी विशेष अच्छे या बुरे फल की प्राप्ति नहीं होती।

(शेष पृष्ठ १०७ पर)

संस्था समाचार

वेद विद्यालय अरनियां (बुलन्दशहर) के विषय में—

माघ मास २०११ के "सार्वदेशिक" पत्र में "वेद-विद्यालय अरनियां बुलन्द शहर" के विषय में आ० प्र० सभा बम्बई के मंत्री जी ने लिखा है कि—

"इस संस्था का आर्यसमाज के संगठन में कोई स्थान नहीं है" इस विषय में निवेदन है कि इस संस्था का आर्यसमाज के संगठन में उतना ही स्थान है जितना महाविद्यालय ज्वालापुर गुरुकुल बदायूं, सिकन्द्राबाद, विरालसी, पोठोहार, रावल, झेलम, मटिण्डू, झज्जर, भैंसवाल, बटेसर, एटा, घरौण्डा, चितौड़ आदि गुरुकुलों, हाथरस, कनखल, जालन्धर, खानपुर, बड़ौदा आदि कन्या गुरुकुलों प्रायः सारे आर्य स्कूलों और आर्य कालिजों का था और है।

स्वर्गीय श्री स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज ने पांच गुरुकुल खोले, स्व० पं० भोजदत्त जी आर्य-मुसाफिर का 'मुसाफिर विद्यालय' आगरा, स्वर्गीय केवलानन्द जी का विद्यालय, स्व० स्वामी सर्वदानन्द जी का साधु आश्रम, स्वामी ब्रह्मानन्द जी, स्वामी स्वात्मानन्द जी, स्वामी व्रतानन्द जी आदि के गुरुकुल, श्री स्वामी वेदानन्द जी, पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु, पं० शंकरदेव जी आदि के विद्यालय किसी भी प्रतिनिधि सभा के अधीन नहीं हैं पर आर्यसमाज की सभी सेवा कर रहे हैं और सभी संस्थाएं दान पर चलती हैं।

वेद विद्यालय अरनियां बुलन्द शहर में इतना विशेष है कि—

(क) अन्य संस्थाएं संस्कृत या अंग्रेजी प्रधान रूप से पढ़ाती हैं पर यह संस्था केवल आर्य सिद्धान्त पढ़ाती है।

(ख) अन्य संस्थाओं में पौराणिक आदि भी पढ़ सकते हैं इस संस्था में केवल आर्यसमाजी कट्टर सिद्धांती ही और उपदेशक बनने वाले ही पढ़ सकते हैं।

(ग) यह संस्था सबसे अधिक निर्धन है फिर भी विद्यार्थियों को भोजन, वस्त्र, पुस्तकें और शिक्षा मुफ्त देती है उनसे एक पैसा भी नहीं लेती।

इस विद्यालय ने आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर-प्रदेश, पंजाब, राजस्थान प्रादेशिक सभा जालन्धर और सार्वदेशिक सभा से भी प्रार्थना की है कि सभा अपने अधीन करले अब भी पत्र व्यवहार चल रहा है अन्य संस्थाएं यह प्रार्थना भी नहीं करतीं सर्वथा स्वतन्त्र रहती हैं।

श्री मन्त्री जी आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई को किसी व्यक्ति विशेष ने भ्रम में डालकर ऐसा लिखवा दिया और *उसका कारण केवल व्यक्तिगत द्वेष* है। वेद विद्यालय अरनियां बुलन्द शहर आर्यसमाज के संगठन का परम भक्त है और उसी का एक छोटा-सा अंग है।

निवेदक

अमरसिंह आर्य पथिक

आचार्य वेद विद्यालय अरनियां

बुलन्दशहर

* वैदिक धर्म प्रसार *

ऋषि दयानन्द के ग्रंथों की प्रदर्शनी

देहली तथा नई देहली के समस्त आर्य समाजों की ओर से आर्य केन्द्रीय सभा के तत्वावधान में २० फरवरी को ऋषि बोधोत्सव के उपलक्ष में शानदार ऋषि मेला लगा जिसमें इस बार ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों की प्रदर्शनी का आयोजन भी किया गया था। प्रदर्शनी में ऋषि दयानन्द के समस्त प्रकाशित ग्रंथ तथा उनके उपलब्ध अनुवाद भी रखे गये थे तथा संक्षिप्त इतिहास भी सुन्दर शब्दों में आकर्षक आकार प्रकार में लिख कर प्रत्येक ग्रंथ के साथ रखा हुआ था जिसको दर्शकों ने बहुत सराहा। बहुत से दर्शकों को पहली बार ही पता लगा कि सत्यार्थ प्रकाश का अनुवाद १६ भाषाओं में हो चुका है तथा उसका अनुवाद फ्रेंच, जर्मन तथा नैपाली भाषाओं में भी है। ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका का अंग्रेजी अनुवाद भी अनेक दर्शकों ने पहली बार ही देखा।

सार्वदेशिक सभा के पुस्तकालय के भी जिसे सभा अलभ्य एवं मूल्यवान ग्रंथों का संग्रहालय बनाने में लगी हुई है अनेक राष्ट्रीय महत्वपूर्ण ग्रंथों को प्रदर्शनी में रखा था। प्रदर्शनी के संयोजक श्री पं० चन्द्रभानु जी सिद्धांत भूषण पुरोहित आर्य समाज, हनुमान रोड, नई देहली थे।

इस आयोजन के लिये आर्य केन्द्रीय सभा तथा इसे सफल बनाने के लिये श्रीसिद्धान्त भूषण जी बधाई के पात्र हैं। —सम्पादक

हरियाना प्रांतीय आर्य महासम्मेलन

१८ से २१ मार्च तक रोहतक में उपर्युक्त महासम्मेलन हुआ जिसके मनोनीत प्रधान श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज अस्वस्थता के कारण न पधार सके और इस कार्य का संचालन श्री पूज्य स्वामी आत्मानन्द जी ने सफलता पूर्वक किया सम्मेलन में भाग लेने वाले महानुभावों में श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ श्रीयुत पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार, श्री पं० यशपाल जी सिद्धांतालंकार, श्री पं० लोकनाथ जी, श्री पं० शांतिप्रकाश जी, श्री रघुवीर सिंह जी शास्त्री, श्री जगदेव जी सिद्धांती, श्री आचार्य भगवानदेव जी, श्री ओ३म्प्रकाशजी पुरुषार्थी, श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री और श्री डा० हरदेव सहाय जी, के नाम उल्लेखनीय है। २१ को श्रीमती विद्यावती जी विशारदा के सभानेतृत्व में महिला सम्मेलन हुआ।

हरयाना के प्रसिद्ध वयोवृद्ध भजनोपदेशक पं० बस्तीराम जी को जिनकी आयु इस समय १०० से ऊपर है और जिनका हरयाना में आर्य समाज की ज्योति प्रज्वलित करने में बहुत बड़ा हाथ रहा है सम्मेलन की ओर से १ पगड़ी भेंट की गई।

उपस्थिति प्रतिदिन लगभग २० हजार तक रहती थी। जलूस बड़ा विशाल था। जलूस की बग्घी में श्री स्वामी आत्मानन्द जी श्री स्वामी वेदानन्द जी तथा श्री पं० बस्तीराम जी थे।

'इस आयोजन को सफल बनाने में श्रीयुत चौ०माडू सिंह जी एम० एल० ए० ऐडवोकेट, श्री चौ० भरत-सिंह मंत्री आ० स० रोहतक आदि आर्य सज्जनों ने कोई प्रयत्न उठा न रखा था। सम्मेलन में कई प्रस्ताव पास हुए। ये प्रस्ताव आगामी अंक में प्रकाशित किए जायेंगे। ——सम्पादक

साधना शिविर

वैदिक साधना आश्रम यमुना नगर का वार्षिक साधन शिविर २१ चैत्र से ४ वैशाख तदनुसार १२ अप्रैल से १७ अप्रैल तक लग रहा है। इस शुभ

अवसर पर वैशाखी के दिन सरगंधे के प्रसिद्ध आर्य महाशय ताराचन्द जी वानप्रस्थ आश्रम में दीक्षित होंगे और इसी शुभ अवसर पर १८ अप्रैल रविवार को आर्य समाज के प्रसिद्ध उपदेशक श्री पण्डित गंगादत्त जी वानप्रस्थी संन्यास आश्रम में दीक्षित होंगे। इन दोनों महानुभावों के इस आश्रम परिवर्तन का वृतांत पढ़कर आर्य पुरुष प्रसन्न होंगे। ऐसे सुयोग्य कर्मठ महानुभाव कार्यकर्ताओं की आर्य समाज को अत्यन्त आवश्यकता है।

मुस्लिम विश्वविद्यालय में दयानन्द बोधोत्सव !

मुस्लिम यूनीवर्सिटी के रसूल होस्टल में ऋषि आश्रम की स्थापना किये हुए लगभग १॥ वर्ष हो चुका है। तभी से वहां के ८० वर्ष के जीवन इतिहास में प्रथम बार हवन यज्ञ आरम्भ किया गया। यह यज्ञ साप्ताहिक होता है जिस में सब विद्यार्थी मिल कर निराकार सर्वव्यापक और सर्व शक्तिमान प्रभु की उपासना करते हैं और उन से बल बुद्धि और विद्या की कामना करते हैं।

समय समय पर धार्मिक तथा राष्ट्रीय उत्सव मना कर स्वतन्त्र तर्क और सार्वभौमिक वैदिक विचारों का प्रसार करते हैं। हमारी यूनिवर्सिटी में धर्म निर्पेक्ष राज्य की विशेष झलक दिखाई देती है।

१. 'ईश्वर एक है उसी की उपासना करो।'

२. 'ईश्वर पर विश्वास करो और सत्य मार्ग पर चलो।'

३. 'एकता ही जीवन है।'

४. 'आराम हराम है'--'नेहरू'

५. 'सादा जीवन उच्च विचार'

दीवार पर टंगे हुए उपरोक्त ऋषि आश्रम रसूल होस्टल के नारे हैं।

इस आश्रम के सामने की बंजर भूमि में फूलों के भांति भांति के पौदे लगा कर एक सुहावने ऋषि गार्डन की स्थापना की गई है (जिस की सराहना के प्रमाण सार्टीफिकेटस हैं) इस वाटिका में मालिश व्यायाम आसन इत्यादि कर के विद्यार्थीगण नैतिकता तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों का पालन करते हैं।

साप्ताहिक यज्ञ में घृत और हवन सामग्री हम सब बारी बारी से लाते हैं। गीता पाठ, सत्यार्थप्रकाश का पाठ तथा 'वेद प्रकाश' विशेषांक की वाल्मीकी रामायण का पाठ भी साप्ताहिक ही होता है। विद्यार्थी वैदिक विचारधारा के अनुकूल तथा समाज में आई कुरीतियों के विषयों पर वादविवाद और भाषण करके तदनुकूल आचरण करने में अग्रसर हैं।

अभी १८ फरवरी को हमने रसूल जमाल होस्टल का वार्षिकोत्सव मनाया गया जिसमें हमारे प्रोवाइस-चांसलर श्री नूरुल्लाह साहेब तथा कादरीय प्रवोस्ट श्री बशीर साहेब विशेष रूप से निमन्त्रित थे। उन्होंने होस्टल की कार्य कुशलता को देखकर हमारे वार्डन साहब श्री भद्र गुप्त वार्ष्णेय जी को सम्बोधित करते हुए कहा 'I appreciate the t am spirit and the best discipline of your hostel, which is really best amongst other hostels of our Mu-lim Universi'y."

इस उत्सव पर चलचित्र कैमरा द्वारा फिल्म भी ली गई जिस में ऋषि आश्रम में यज्ञ करते हुए विद्यार्थियों की फिल्म को विशेष रुचि से लिया गया।

इस प्रकार के सार्वभौमिक कार्यों से आनन्द प्रेम और मानवता की भावना ने इस यूनिवर्सिटी में अपना घर कर लिया है।

अभी २० फरवरी ५५, को जगद् गुरु महर्षि दयानन्द मानवता और सत्यता के अटल पुजारी के बोध दिवस को उत्साह पूर्वक मनाया। वास्तविक शिव पर प्रकाश डाला गया और साथ ही साथ अखण्ड बाल ब्रह्मचारी के जीवन पर भी। जिससे विद्यार्थियों को उत्तेजना और उत्साह मिला।

"Speak together walk together and follow the common goal for the acquisition of Knowledge" हमारा आदर्श

बन चुका है और बने भी क्यों न जब हमारे आश्रम की प्रार्थना है।

है प्रभु तुम शक्तिशाली हो बनाते सृष्टि को वेद सब......"

ऋषि पाल सिंह M.A. LL B.(Final)

१. संस्थापक "ऋषि आश्रम"।
२. अंतरंग सदस्य यू० पी० आर्य कुमार परिषद्।
३. " " आर्य कुमार सभा झांसी।
४. वाइस प्रेजीडेंट मुस्लिम यूनीवर्सिटी यूथ कांग्रेस।
५ प्राक्टोरियल मान टर मुस्लिम यूनीवर्सिटी।
६. रायल Royal)मैस मैनेजर।

सौराष्ट्र मे वैदिक धर्म प्रचार

मुंबई प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा के उपदेशक वैद्यराज मोहनलाल शर्मा सौराष्ट्र के अमरेली प्रदेश के ग्राम्य विभाग आर्य समाज का प्रचार कार्य कर रहे हैं।

अंतिम दो मास में श्री शर्मा जी ने १०५ व्यक्तियों का चाय का व्यसन तथा ४७ व्यक्तियों का बीड़ी सिगरेट का व्यसन छुड़वाया। २मांस भोजी क्षत्रियों का मांसाहार छुड़वाया, तीन यज्ञोपवीत संस्कार किये और ५ सत्यार्थ प्रकाश विक्रय किये।

दिनांक १८-३-५५ से श्री शर्मा जी बृहद् सौराष्ट्र आर्य सम्मेलन के प्रचारार्थ सौराष्ट्र के सोरठ एवं हालार विभाग में परिभ्रमण करेंगे।

मध्य प्रांत में शुद्धि आंदोलन

श्रीयुत स्वामी दिव्यानन्द जी सरस्वती अधिष्ठाता शुद्धि विभाग आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश द्वारा मार्च मास में निम्न प्रकार शुद्धियां हुई।

लपदवा	७
रायपुर	१
रसर्री (जिला रायपुर)	३२
सिरको (,, ,,)	१

शुद्ध किए हुए व्यक्तियों ने बतलाया कि वे कुछ वर्षों पूर्व लालच देकर ईसाई बना लिये गये थे।

(पृष्ठ १०२ का शेष)

१८—बिना किसी स्वार्थ के संसार का उपकार करना, सदाचरण, प्रभु भक्ति आर्यसमाज के मूलमंत्र हैं।

१९—आपत् धर्म के रूप में विधवाओं का विवाह हो सकता है। कुकर्म, अधर्म और अपवाद से बचने का सरल मार्ग युवा विधवा का पुनर्विवाह कर देना है।

२०—शूद्रों या अन्य जातीय स्त्री पुरुषों के पकाये हुए भोजन का सेवन करने से धर्म भ्रष्ट नहीं होता। स्वास्थ्य विनाशक अभक्ष्य पदार्थों के खाने और हिंसा, अधर्म अन्याय से प्राप्त हुये अन्न से धर्म भ्रष्ट होता है।

२१—आर्यसमाज कोई अलग सम्प्रदाय नहीं। आर्य का अर्थ श्रेष्ठ। आर्यसमाज श्रेष्ठ स्त्री-पुरुषों का संगठन है।

२२—वेद हमारा धर्म है, आर्य हमारा नाम। ओ३म् हमारा पूज्य है, सत्य अरु सेवा काम॥

मिलने का पता:—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली।

धर्मार्थ वितरण करने वाले इसे १।) प्रतिसैंकड़ा की दर से प्राप्त कर सकते हैं।

कविराज हरनामदास, बी० ए०
सभा मन्त्री

Call a spade a spade.

(By S. Chandra)

Socialistic pattern of society :-

While elucidating the Avadi resolution on the socialistic pattern of society at the Congress Parliamentary Party meeting held recently, Pandit Nehru remarked that it had been passed in all earnestness, faith and sincerity, and not for catching votes. The resolution was, however, not a sudden jump but a natural development of the economic policy of the Congress. He further said that under Gandhiji's leadership, the Congress had always kept socialism as its goal before it and that the Karachi Congress Session had also passed a resolution to that effect.

Addressing a joint meeting of the two Houses of Parliament at the start of the budget session, Dr. Rajendra Prasad, the President of India at the end of his speech expected members of Parliament to advance the country to its cherished goal of a welfare State and a society conforming to the socialistic pattern.

Now the question is, what is "Socialism" and can our these leaders with their present mentality and the ways and methods they have adopted in their every day lives fulfil it? "Socialism" is a scheme for regenerating society by a more equal distribution of property, and especially by substituting the principle of association. When and if such a pattern of society was decided long ago at the Karachi Congress Session and was also near and dear to Gandhiji, what had

To our Readers.

In the last number of 'Sarvadeshik', there appeared the report of an interview of Shri S. Chandra with Dr. Marquette of France, with our remarks that we did not agree in toto. We had remarked so only for the assertion that 'Bharat Varsha' was named after 'Bharat', the son of Shakuntla and Dushyanta, and for nothing else. This assertion is considered disputable by some. Therefore, we would like to invite the valuable opinions of other scholars on the subject.

Editors.

delayed our these leaders in giving it a practical shape, more especially since after India had attained freedom more than seven years ago; whereas China under the leadership of Mao Tse Tung amazingly succeeded in solving not only all the five essential problems of life-food, cloth, housing, health and education—within a short period of two years, but also eradicated the great evils of corruption, nepotism and prostitution from their country, having more population and area than those of India. Mao Tse Tung had taken China in a muce more all round degenerated and pitiable condition from Chiang Kei Shek than the condition in which our Congress leaders had taken India from the Britishers. Mao Tse Tung and his colleagues did not believe in passing theoretical resolutions, but they rather believed in promptly carving out their ideology and determination in a practical shape, unlike our leaders who take great delight through press and platform and in making tall talks. Any kind of revolution with an accelerated speed can only be brought about by such leadere who have already imbued the underlying principles of that revolution in their own lives, talk less and act more with courage and a resolute mind.

Our these very leaders who now talk about "Socialism", were also daily talking, before freedom, about the high ideals of sacrifice, plain-living, high ethical principles, social equality and selfless service. As soon as they got themselves seated on the governmental high pedestals, they began to consider themselves as "Heaven–born gods" or "Super human–beings". They had completely cut off themselves from the general society, on whose strength they had reached to their present positions. They had forgotten all those high ideals of life which they had previously preached. They now lead a luxurious life like Nawabs and behave with common people with great arrogance. Unless there is a complete change in the daily life of these leaders, mere high-sounding phrases like "passing the resolution in all earnestness, faith and sincerity", used by Pandit Nehru will not at all cut the ice and bring the country near to socialism. Let the diseased "physician first heal thyself" and then think of treating other patients.

(From "The Nation")

सार्वदेशिक पत्र

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश १० शिलिङ्ग। अर्द्ध वार्षिक ३) स्वदेश, ६ शिलिङ्ग विदेश।

२. एक प्रति का मूल्य ।।) स्वदेश, ।।=) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क वा नमूने की प्रति का मूल्य ।।=) स्वदेश, ।।। विदेश।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये। चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा। पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने वा ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न देने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है कि उनकी इच्छा वी० द्वारा चन्दा देने की है।

४. सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख को प्रकाशित होता है। किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय में अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा। डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं। अतः समस्त ग्राहक को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये।

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
५. पूरा पृष्ठ	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा "	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई "	६)	१५)	२०)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	२५)	३०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

६. सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

—व्यवस्थापक

'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(१) यमपितृ परिचय (पं० प्रियरत्न आर्ष) २)
(२) ऋग्वेद में देवृकामा ,, -)
(३) वेद में असित शब्द पर एक दृष्टि ,, -)
(४) आर्य डाइरेक्टरी (सार्व० सभा) १।)
(५) सार्वदेशिक सभा का सत्ताईस वर्षीय कार्य विवरण ,, अ० २)
(६) स्त्रियों का वेदाध्ययन अधिकार (पं० धर्मदेव जी वि० वा०) १।)
(७) आर्यसमाज के महाधन (स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी) २॥)
(८) आर्यपर्व पद्धति (श्री पं० भवानीप्रसाद जी) १।)
(९) श्री नारायण स्वामी जी की सं० जीवनी (पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) -)
(१०) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण (पं० इन्द्र जी) ।=)
(११) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या (अनुवादक पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) ।)
(१२) आर्य मन्दिर चित्र (सार्व० सभा) ।)
(१३) वैदिक ज्योतिष शास्त्र (पं० प्रियरत्न जी आर्ष) १॥)
(१४) वैदिक राष्ट्रीयता (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।)
(१५) आर्यसमाज के नियमोपनियम (सार्व सभा) -)॥
(१६) हमारी राष्ट्रभाषा (पं० धर्मदेव जी वि० वा०) ।-)
(१७) स्वराज्य दर्शन (पं० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित) स० १)
(१८) राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती) ॥)
(१९) योग रहस्य (श्री नारायण स्वामी जी) १।)
(२०) विद्यार्थी जीवन रहस्य ,, ॥=)
(२१) प्राणायाम विधि ,, ≡)
(२२) उपनिषदें:— ,,

ईश	केन	कठ	प्रश्न
।=)	॥)	॥)	।=)
मुण्डक	माण्डूक्य	ऐतरेय	तैत्तिरीय
।≡)	।)	।)	१)

(२३) बृहदारण्यकोपनिषद् ४)
(२४) आर्यजीवन गृहस्थधर्म (पं० रघुनाथप्रसाद पाठक) ॥=)
(२५) कथामाला ,, ॥)
(२६) सन्तति निग्रह ,, १।)
(२७) नया संसार ,, ≡)
(२८) आर्य शब्द का महत्व ,, -)॥
(२९) मांसाहार घोर पाप और स्वास्थ्य विनाशक -)
(३०) वैदिक संस्कृति (पं० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय) २॥
(३१) इजहारे हकीकत उर्दू (ला० ज्ञानचन्द जी आर्य) ॥=)
(३२) वर्ण व्यवस्था का वैदिक स्वरूप ,, १॥
(३३) धर्म और उसकी आवश्यकता ,, १॥)
(३४) भूमिका प्रकाश (पं० द्विजेन्द्रनाथ जी शास्त्री) १॥)
(३५) एशिया का वैनिस (स्वा० सदानन्द जी) ॥।)
(३६) वेदों में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां (पं० प्रियरत्न जी आर्ष) १)
(३७) सिंधी सत्यार्थ प्रकाश २)
(३८) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता -)
(३९) ,, ,, और उस की रक्षा में -)
(४०) ,, ,, आन्दोलन का इतिहास ।=)
(४१) शांकर भाष्यालोचन (पं० गंगाप्रसाद जी उ०) ५)
(४२) जीवात्मा ,, ४)
(४३) वैदिक मणिमाला ,, ॥=)
(४४) आस्तिकवाद ,, ३)
(४५) सर्व दर्शन संग्रह ,, १)
(४६) मनुस्मृति ,, ५)
(४७) आर्य स्मृति ,, १॥)
(४८) आर्योदयकाव्यम् पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध, १॥), १॥)
(४९) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौतम) ॥=)
(५०) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर (श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी) २।) रिया० १॥)
(५१) भजन भास्कर (संग्रहकर्त्ता श्री प० हरिशंकर जी शर्मा) १॥)
(५२) सनातनधर्म व आर्यसमाज (प० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय) ।=)
(५३) मुक्ति से पुनरावृत्ति ,, ,, ।=)
(५४) वैदिक ईश वन्दना (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।=)॥
(५५) वैदिक योगामृत ,, ॥=)
(५६) कर्त्तव्य दर्पण सजिल्द (श्री नारायण स्वामी) ।॥)
(५७) आर्यवीरदल शिक्षणशिविर (ओंप्रकाश पुरुषार्थी) ।=)
(५८) ,, ,, ,, लेखमाला ,, १।)
(५९) ,, ,, गीताञ्जलि (श्री रुद्रदेव शास्त्री) ।=)
(६०) ,, ,, भूमिका ≡)
(६१) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी २।)
(६२) कम्युनिज्म (पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय) २)
(६३) जीवन चक्र ,, ,, ५)
मुर्दे को क्यों जलाना चाहिए -)

मिलने का पता :—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, बलिदान भवन, देहली ६।

स्वाध्याय योग्य साहित्य

(१) श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की पूर्वीय अफ्रीका तथा मौरीशस यात्रा २।)

(२) वेद की इयत्ता (ले० श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी) १।।)

(३) आर्ष योग प्रदीपिका (स्वा० ब्रह्ममुनिजी) २।।)

(४) दयानन्द दिग्दर्शन ,, ।।।)

(५) बौद्ध मत और वैदिक धर्म (पं० धर्मदेवजी) १।।)

(६) भक्ति कुसुमांजलि ,, ।।)

(७) वैदिक गीता (स्वा० आत्मानन्द जी) ३)

(८) धर्म का आदि स्रोत (पं० गंगाप्रसाद जी एम. ए.) २)

(९) भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक (ले०—श्री राजेन्द्र जी) ।।)

(१०) वेदान्त दर्शनम् (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ३)

(११) संस्कार महत्व (पं० मदनमोहन विद्यासागर जी) ।।।)

(१२) जनकल्याण का मूल मन्त्र ,, ।।)

(१३) वेदों की अन्त: साक्षी का महत्व ,, ।।=)

(१४) आर्य घोष ,, ।।

(१५) आर्य स्तोत्र ,, ।।

(१६) स्वाध्याय संग्रह (स्वा० वेदानन्दजी) २)

(१७) स्वाध्याय संदोह ,, ४)

English Publications of Sarvadeshik Sabha.

1. Agnihotra (Bound) (Dr. Satya Prakash D. Sc.) 2/8/-
2. Kenopanishat (Translation by Pt. Ganga Prasad ji, M. A.) -/4/-
3. Kathopanishad (By Pt. Ganga Prasad M A. Rtd. Chief Judge) 1/4/-
4. The Principles & Bye-laws of the Aryasamaj -/1/6
5. Aryasamaj & International Aryan League (By Pt. Ganga Prasad ji Upadhyaya M. A.) -/1/-
6. Voice of Arya Varta (T. L. Vasvani) -/2/-
7. Truth & Vedas (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/6/-
8. Truth Bed Rocks of Aryan Culture (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/8/-
9. Vedic Culture (Pt. Ganga Prasad Upadhyaya M. A) 3/8/
10. Aryasamaj & Theosophical Society Shiam Sunber Lal -/3/-
10. Wisdom of the Rishis (Gurudatta M. A.) 4/-/-
11. The Life of the Spirit (Gurudatta M. A.) 2/-/
12. A Case of Satyarth Prakash in Sind (S. Chandra) 1/8/
13. In Defence of Satyarth Prakash (Prof. Sudhakar M. A.) -/2/
14. We and our Critics -/1/6
15. Universaiity of Satyarth Prakash /1/
16. Tributes to Rishi Dayanand & Satyarth Prakash (Pt. Dharma Deva ji Vidyavachaspati) -/8/
17. Landmarks of Swami Dayanand (Pt. Ganga Prasadji Upadhyaya M. A.) 1/-/
18. Political Science
    Royal Editinn 2/8/-
    Ordinary Edition -/8/-
19. Elementary Teachings of Hindusim ,, -/8/-
    (Pt. Ganga Prasad Upadhyaya M.A)
20. Life after Death ,, 1/4/-

Can be had from:—**SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA, DELHI 6**

भारत में गोहत्या अवश्य बन्द करनी पड़ेगी।

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

यजुर्वेद

वर्ष ३०

मूल्य स्वदेश ५)

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ॥)

अंक ३

ज्येष्ठ २०१२

मई १९५५

महर्षि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज

सम्पादक—

सभा मन्त्री

सहायक सम्पादक—

श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषयानुक्रमणिका

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष ३० } मई १९५५, ज्येष्ठ २०१२ वि०, दयानन्दाब्द १३० { अङ्क ३

वैदिक प्रार्थना

त्वमस्य पारे रजसो व्योमनः स्वभूत्योजा अवसे धृषन्मनः।
चकृषे भूमिं प्रतिमानमोजसोऽपः स्वः परिभूरेष्या दिवम् ॥

ऋ० १।४।१४।१२॥

व्याख्यान—हे परमैश्वर्य्यवन् परात्मन्! आकाश लोक के पार में तथा भीतर अपने ऐश्वर्य और बल से विराजमान होके दुष्टों के मन को धर्षण तिरस्कार करते हुए सब जगत् तथा विशेष हम लोगों के "अवसे" सम्यक् रक्षण के लिये 'त्वम्" आप सावधान हो रहे हो, इस से हम निर्भय हो के आनन्द कर रहे हैं किञ्च 'दिवम्" परमाकाश "भूमिम्" भूमि तथा 'स्व" सुखविशेष मध्यस्थ लोक इन सबों को अपने सामर्थ्य से ही रच के यथावत् धारण कर रहे हो "परिभूः एषि" सब पर वर्त्तमान और सब को प्राप्त हो रहे हो "आदिवम्" द्योतनात्मक सूर्यादि लोक "आपः" अन्तरिक्षलोक और जल इन सब के प्रतिमान (परिमाण) कर्त्ता आप ही हो तथा आप अपरिमेय हो, कृपा करके हमको अपना तथा सृष्टि का विज्ञान दीजिये॥ (आर्याभिविनय से)

आर्य-समाज का कार्य-क्रम

आर्यजगत् की चिरकाल से यह मांग रही है कि वर्ष के आरम्भ में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा सामयिक कार्य-क्रम रक्खा करे ताकि आर्यजनों को और आर्य समाजों को यह पता रहे कि इन्हें वर्ष भर में क्या काम करना है और किस पद्धति पर चलना है। यों तो सार्वदेशिक सभा समय और आवश्यकता के अनुसार सदा ही आर्य जनों का मार्ग प्रदर्शन करती रही है परन्तु वर्षभर में जो नई परिस्थितियां उत्पन्न हो उन पर दृष्टिपात करके आवश्यक परिवर्तनों के साथ | कार्य-क्रम का वर्ष के आरम्भ में प्रकाशित करना अत्यन्त उपयोगी और आवश्यक समझा जा रहा था। हर्ष की बात है कि इस वर्ष वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर सभा ने एक विस्तृत कार्य क्रम स्वीकार करके आर्य जनता के सामने रख दिया है। आशा है आर्य-जगत् उससे पूरा लाभ उठायेगा।

आर्य-समाज का उद्देश्य वेदोक्त धर्म का सक्रिय प्रचार करना है। इस कारण उसका पूरा कार्य-क्रम तो बहुत विस्तृत है। मनुष्य जाति की प्रवृत्तियों का जितना विस्तार है, आर्य समाज के कार्यक्षेत्र का भी उतना ही बड़ा विस्तार है। सार्वदेशिक सभा का कार्य क्रम सम्बन्धी प्रस्ताव सार्वदेशिक सभा के इसी अंक में अन्यत्र दिया गया है। यह स्पष्ट है कि इस प्रस्ताव में आर्य समाज के समूचे कार्य-क्रम को दोहराना न सम्भव था और न आवश्यक।

इस प्रस्ताव में वर्तमान परिस्थिति को दृष्टि में रखते हुए कुछ आवश्यक समस्याओं और इतिकर्तव्यताओं की ओर आर्य-जनों का ध्यान खेंचना अभिप्रेत था वह उद्देश्य पूरा हो गया है।

प्रस्ताव के चार भाग हैं। पहले भाग में आर्य समाज की आन्तरिक स्थिति को सुधारने के उपाए बतलाये गये हैं। यह ध्यान में रखना चाहिए कि कार्य-क्रम का यह भाग सब से अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि इसकी पूर्ति के बिना कार्य क्रम का अन्य कोई भी भाग पूरा नहीं किया जा सकता। यदि हम मनुष्य मात्र को आर्य बनाना चाहते हैं तो पहले हमें स्वयं आर्य बनना होगा। यदि हम यह चाहते हैं कि अन्य संस्थाओं या शासन के अंगों के दोषों को दूर करें तो पहले अपनी संस्था के संगठन को निर्दोष और पवित्र बनाना होगा। प्रस्ताव के पहले भाग का यही उद्देश्य है। प्रस्ताव के पहले भाग के विचार सागर को यदि हम गागर में बन्द करना चाहें तो कह सकते हैं कि पहला प्रस्ताव आर्य-जनों से और आर्य समाजों से यह मांग करता है कि वह जिन सिद्धान्तों पर विश्वास रखने का दावा करते हैं उनका प्रयोग अपने जीवनों पर भी करें।

प्रस्ताव का दूसरा भाग हमारा ध्यान उन समस्याओं की ओर खींचता है जिनका हल करना आर्य जाति की सुरक्षा के लिये आवश्यक है। गोरक्षा धर्म प्रचार, चरित्र निर्माण तथा शिक्षा के आदर्शों का परिपालन जाति के कल्याण के लिए अनिवार्य है। प्रस्ताव के दूसरे भाग में इन आवश्यक प्रश्नों के सम्बन्ध में आर्य समाज का मन्तव्य और कर्तव्य स्पष्ट किया गया है।

तीसरा भाग विशेषरूप से सार्वदेशिक सभा और प्रादेशिक सभाओं से सम्बन्ध रखता है।

अपने विचारों का प्रचार करने के लिये लेख और वाणी द्वारा प्रचार की गति को कैसे तीव्र किया जाय और उनकी शुद्धता की रक्षा के लिये कौनसे साधन काम में लाये जायं इन प्रश्नों के उत्तर तीसरे भाग में दिये गये हैं।

चौथे भाग में विशेष रूप से आर्यसमाज का ध्यान विदेश प्रचार की ओर खींचा गया है। इस

प्रकार यह प्रस्ताव अपने आप में बहुत कुछ पूर्ण है। परन्तु मैं यह नहीं समझता कि वह बिल्कुल पर्याप्त है। प्रस्ताव के अन्त में यह आदेश दिया गया है कि यह कार्य क्रम भ्रमण पत्रिका द्वारा आर्य समाजों को प्रेषित किया जाय। ऐसा अनुभव होता है कि भ्रमण पत्रिकाओं के साथ प्रस्ताव के कई अंशों के स्पष्टीकरण और उनके व्यावहारिक प्रयोग के उपायों के विस्तृत विवरण के भेजने की भी आवश्यकता होगी। यत्न किया जायगा कि प्रस्ताव और स्पष्टीकरण यथासंभव शीघ्र सब जगह प्रचारित कर दिये जांये। यदि किन्हीं विषयों पर किसी प्रकार सन्देह हों तो उनका निवारण सार्वदेशिक सभाको पत्र लिख कर किया जा सकता है। यह सब सुझाव तो उनके लिये हैं जिन्हें प्रस्ताव के समझने या उसके व्यवहार में लाने में किसी कठिनाई का सामना आये। सामान्य रूप से प्रस्ताव के सब अंश सवथा स्पष्ट हैं। आर्यजगत् को प्रस्ताव के अनुसार कार्य आरम्भ कर देने में विलम्ब नहीं करना चाहिये। मुझे विश्वास है कि विलम्ब होगा भी नहीं।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

सम्पादकीय टिप्पणियां

श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी

श्री पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज का निधन वस्तुतः आर्य समाज की एक महान् क्षति है जिस की पूर्ति होनी असम्भव है। उनकी मृत्यु से ऐसा लगता है मानो हमारे सिर पर से एक बड़ा साया उठ गया है। वे अपनी निस्वार्थ और मूल्यवान सेवाओं से आर्य समाज के इतिहास में उज्ज्वल अध्याय जोड़ रहे थे। हैदराबाद के धर्मयुद्ध में उनका योग अनुपम था। एक समय में हजारों सत्याग्रहियों के कैम्पों का प्रबन्ध करना, उन्हें शान्त रखना, उनका सत्याग्रह में जाने के लिए उपयुक्त चुनाव करना, सत्याग्रह की नीति को प्रभावित रखना सरल कार्य न था। निरन्तर आर्य जनों को सत्याग्रह में भेजते रहने और स्वयं जेल के बाहर बने रहने से उनका मन खिन्न हो चला था। उनके मन में अनेक बार सत्याग्रह करके जेल जाने की इच्छा प्रबल हुई, परन्तु वे विवश थे। सत्याग्रह के सर्वाधिकारी श्री पूज्य स्व० महात्मा नारायणस्वामी जी महाराज ने जेल जाने से पूर्व श्री स्वामी जी महाराज को विशेष प्रेरणा की थी कि वे जेल से बाहर रह कर उनके विश्वस्ततम उत्तराधिकारी के रूप में सत्याग्रह का संचालन करें। बच्चों को स्वयं जेल में भेजने वाले उस वृद्ध महानुभाव को ग्लानि रह २ कर सताती थी, परन्तु वे धर्म, कर्त्तव्य और अनुशासन के पाश में बन्धे हुए उस व्याकुल पक्षी के समान विवश थे जो बलात् पिंजड़े में बन्द कर दिया गया हो।

लोहारू के मुस्लिम राज्य में आर्य समाज के अधिकारों की रक्षा का प्रश्न उठने पर स्वामी जी महाराज ने सब से आगे अपने को किया। मुस्लिम गुण्डों के डण्डों के प्रहार हंसते २ सहन किये। मुंह से उफ् तक न की। होठों पर स्वाभाविक मुस्कान थी। शरीर से खून बह रहा था, परन्तु उनके चहरे पर शान्ति थी। स्वामी जी का त्याग, अहिंसा भावना और शान्ति रंग लानी ही थी। स्वयं नवाब ने अपने लोगों के दुष्कृतों के लिए क्षमा याचना की और लोहारू में उनके हाथों से आर्य समाज की स्थापना कराई।

भीषण अवसरों पर आर्य समाज की दृष्टि स्वामी जी महाराज पर जाया करती थी। गत वर्ष गोरक्षा आन्दोलन को किनारे लगाने का जब प्रश्न सामने आया तो सब की दृष्टि इन पर गई। आर्य महा सम्मेलन हैदराबाद के अवसर पर आर्य जगत् ने एक स्वर से गोरक्षा आंदोलन का भार इनके कन्धों पर रखकर इसके नेतृत्व के प्रति निष्ठा का परिचय दिया और निश्चिन्तता का अनुभव किया। इस कार्य का संचालन अपने हाथ में लेने के कुछ समय पश्चात् ही

दुर्भाग्य से स्वामी जी शय्यागत् हो गए और वे पुनः उठ न सके। किसे ज्ञात था कि गोरक्षा आंदोलन का नेतृत्व अन्तिम नेतृत्व सिद्ध होगा।

स्वामी जी का जीवन सादा और त्यागमय था। उनके बलिष्ठ शरीर में बलिष्ठ आत्मा निवास करता था। वे जिस काम में हाथ डालते थे उसकी सफलता प्रायः निश्चित हो जाया करती थी क्योंकि उनके साथ उनका ऊंचा व्यक्तित्व, दृढ़ निश्चय, कार्य कुशलता, कर्मठता, व्यावहारिक बुद्धि, शिष्टता और सुप्रकृति जुड़ जाते थे।

स्वामी जी को विद्वानों, संन्यासियों, प्रबन्धकों और नेताओं सभी में उच्च स्थान प्राप्त था। उनकी विद्वत्ता विनम्रता से संन्यास त्याग और तबियत की लापरवाही से, प्रबन्ध पटुता अनुशासन एवं मानव स्वभाव की कमजोरियों के प्रति उचित उपेक्षा तथा सामंजस्य भावना से और नेतृत्व जन साधारण के साथ निरभिमानता पूर्वक रहने से ओत प्रोत रहता था। जीवन की सादगी इतनी बढ़ी चढ़ी थी कि खाने को मिला तो चिन्ता न की, न मिला तो शिकायत न की। शयन के लिए तख्त मिल गया तो उस पर लेट गए न मिला तो जमीन पर सो रहे। यात्रा के लिए मार्ग व्यय मिल गया तो सवारी से यात्रा कर ली न मिला तो मांगा नहीं और पैदल चल दिए। आर्य समाज में उन जैसे त्यागी और चरित्रवान् व्यक्ति बहुत कम देखने को मिलते हैं। किसी का चरित्र ऊंचा है तो त्याग की कमी है। किसी का त्याग ऊंचा है तो चरित्र की कमजोरियां हैं। ये दोनों गुण जिन व्यक्तियों में एक साथ पाए जाए जाते हैं उनमें निस्सन्देह स्वामी जी का विशेष स्थान था।

दयानन्द उपदेशक विद्यालय लाहौर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के साथ स्वामी जी का वर्षों पर्य्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध रहा जहां उन्होंने क्रमशः आचार्य, वेद प्रचार संचालक, उपप्रधान और श्री महात्मा नारायण स्वामी जी के दाहिने हाथ रह कर कार्यकर्त्ता प्रधान के रूप में समाज की उत्तम सेवा की और सार्वदेशिक सभा को दृढ़ और उन्नत करने में स्मरणीय योग दिया।

स्वामी जी बड़े स्वाध्याय शील थे। पुस्तक को हाथ में लेकर उसे आद्योपान्त पढ़ कर रखते थे। सिक्ख धर्म और इतिहास का उन्हें बड़ा चढ़ा ज्ञान था। गृह्यसूत्रों में उनकी अच्छी गति थी। उन्होंने अनेक पुस्तकें लिखीं। 'आर्यसमाज की चिनगारियां शीर्षक से वे' 'आर्य सेवकों' के वर्णन लिखते रहते थे। आर्य समाज के प्रारम्भ से लेकर अब तक के धर्मवीरों की जीवनी का संग्रह करना, सुसम्पादित रूप में उन्हें प्रकाशित कराना उनके अनथक परिश्रम का ही फल था जो सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रकाशित 'आर्य समाज के महा धन' पुस्तक के रूप में मूर्त रूप प्राप्त कर चुका है।

स्वामी जी ने देश और विदेश की अत्यधिक प्रचार यात्रायें की थीं। वे दो बार मौरीशस हो आये थे। ईस्ट अफरीका और दक्षिण अफ्रीका भी गए थे। स्वामी जी के भक्तों, मित्रों और प्रशंसकों का दायरा बड़ा विशाल था। आज उनके सभी भक्त, मित्र और प्रशंसक उनके निधन से दुःखी हैं और व्यापक रूप से उनके प्रति श्रद्धांजलि प्रस्तुत की जा रही है। स्वामी जी महाराज के प्रति अपनी विनीत श्रद्धांजलि प्रस्तुत करते हुए हम उनकी आत्मा की सद् गति के लिए परमपिता से प्रार्थना करते हैं।

दीना नगर में दयानन्द मठ स्थापित करके उन्हों ने उसे ही अपने जीवन का अन्तिम आश्रय स्थान और अपनी सेवाओं एवं प्रगतियों का केन्द्रस्थल बनाया था। आशा है इस मठ के वर्तमान संचालक इस मठ की प्रगतियों को अधिकाधिक प्रशस्त और विस्तृत करते रहेंगे।

परोपकारिणी सभा के ध्यान के लिए

गत मार्च मास में एक अत्यन्त अलभ्य हस्तलेख

वाशिंगटन (अमेरिका) के एक बैंक की तिजोरी से निकाला जाकर राष्ट्रपति आइजनहावर को दिखलाए जाने के लिए 'व्हाइट हाउस' लेजाया गया। राष्ट्रपति द्वारा देखे जाने के बाद वह हस्तलेख कांग्रेस के पुस्तकालय में लाया गया जहां २ मास तक सार्वजनिक प्रदर्शन के लिए रखा जायगा। बैंक को तिजोरी से लेकर पुस्तकालय तक हस्तलेख की यात्रा निर्विघ्न समाप्त हुई। दो मास तक हस्तलेख की बड़े ध्यान से चौकसी की जायगी फिर भी उसके ६० दिन के जीवन का ७५ लाख रुपये का बीमा कराया गया है। हस्तलेख वस्तुतःअमूल्य है और यह बाइबिल के नए टेस्टामेंट का १६०० वर्ष पुराना हस्तलेख है। अफवाह है कि मास्को की लेनिन लाइब्रेरी इस हस्तलेख को क्रय करने के लिए ७५ लाख रुपया खर्च करने के लिए उत्सुक है यद्यपि सोवियत राज्य के संस्थापक लेनिन 'धर्म' को जनता की अफीम कहा करते थे।

बम्बई के 'फ्री प्रेस जनरल बुलेटिन के २८-३-५५ अंक की उपर्युक्त कतरन भेजते हुए बम्बई के एक प्रतिष्ठित आर्य सज्जन लिखते हैं :—

"कृपा करके इसको पढ़िए और जरा इस बात पर विचार कीजिए कि हम लोगों ने महर्षि की चीजों से कैसा व्यवहार किया है? क्या अब भी परोपकारिणी सभा की अवस्था ठीक करने का कुछ यत्न हो सकता है या नहीं?"

परोपकारिणी सभा के अधिकारियों को उपर्युक्त पंक्तियों पर गंभीरता पूर्वक विचार करना चाहिए।

'वैदिक यन्त्रालय' महीनों से बन्द पड़ा है, यह स्थिति चिन्तनीय है।

यन्त्रालय के अधिकारियों को इस स्थिति का शीघ्र से शीघ्र अन्त करके आर्य जगत् की बेचैनी को दूर करना चाहिए। साथ ही महर्षि की अवशिष्ट वस्तुओं की एक सूची तय्यार कराई जाकर आर्य जगत् की सूचना के लिए प्रकाशित होनी चाहिए।

मुस्लिम बहुपत्नी वाद

पाकिस्तान के प्रधान मन्त्री श्रीयुत मुहम्मदअली ने एक पत्नी के रहते हुए हाल ही में दूसरी स्त्री से शादी करली है। पाकिस्तानी महिला संस्थाएं उनके इस कार्य की निन्दा कर रहीं हैं। उनका कहना है कि पाकिस्तान के प्रधान मन्त्री ने ऊंचे पद पर आसीन होकर निन्दनीय कार्य किया है और दूसरों के सामने बुरा उदाहरण प्रस्तुत किया है।

कहा जाता है कि मुस्लिम शरीयत मुसलमानों को एक साथ चार बीवियां रखने की इजाजत देती है किन्तु कराची की नौ प्रमुख महिला सामाजिक कार्यकत्रियों का तो कहना है कि एक बीबी की मौजूदगी में दूसरी औरत के साथ शादी करना कुरान के आदेशों की खुली अवहेलना है।

पाकिस्तानी महिलाओं के इस विरोध के समाधान के रूप में यह दलील दी जाती है कि बहुपत्नी प्रथा आर्थिक दृष्टि से उपयोगी ही नहीं अपितु लाभदायक है। घर की आर्थिक स्थिति ठीक रखने में एक से अधिक पत्नियों का योग मूल्यवान होता है क्योंकि जिन धन्धों में एक पुरुष और एक पत्नी का शारीरिक श्रम अपर्याप्त होता है उनमें अधिक पत्नियों के श्रम से उस कमी की पूर्ति होती रहती है। परन्तु युगधर्म और आचार शास्त्र की दृष्टि से यह तर्क थोथा और त्याज्य है। जब सूद खोरी का आश्रय लेते हुए शरीयत के आदेशों की पर्वाह नहीं की जाती तब बहुपत्नीवाद के लिए शरीयत का आश्रय लेना परले दरजे की स्वार्थ परता नहीं तो और क्या है?

क्योंकि मुस्लिम शरीयत के आदेशानुसार सूद लेना वर्जित है। मुस्लिम महिलाओं का उपर्युक्त विरोध न्यायोचित और युगधर्म के अनुरूप है मुस्लिम पुरुष समाज अधिक काल तक इसकी उपेक्षा नहीं कर सकता।

यदि स्वार्थवश उपेक्षा करेगा तो यह उपेक्षा

निश्चय ही मुस्लिम समाज की स्थिरता के लिए कम से कम समानता के इस युग में घातक सिद्ध होगी।

उद्जन बमों के विस्फोट में प्रलय के बीज

प्रमुख फ्रांसीसी वैज्ञानिक और नोबुल पुरस्कार विजेता प्रिन्स लुई द ब्रोग ली ने कहा कि उद्जन बम पर प्रयोग जारी रखना अत्यन्त भयंकर होगा। क्योंकि दुनिया के मानवी, पाशविक और वानस्पतिक जीवन के लिये संकट-स्तर पहले ही आ पहुंचा है।

एक पत्रिका में लिखते हुए उन्होंने उद्जन बम विस्फोटों के निम्न दीर्घकालीन प्रभाव गिनाए, जो उनके मन से दूर नहीं किए जा सकते—

१. रासायनिक उद्जन बम के विस्फोटों से पैदा हुई नाइट्रिक गैस वायुमण्डल में फैल जाएगी। वह मेंह के पानी के तेजाबीपन को सोख कर घटा देगी जिनसे सम्भवतः पौधों के विकास और उनकी उत्पादक शक्ति बिल्कुल विश्रृंखलित हो जाएगी।

२. जलवायु सम्बन्धी : विस्फोट के कारण सूर्य-किरणों के आंशिक हस्तक्षेप के फलस्वरूप मूसलाधार वर्षाएं होंगी जिससे तापमान और वाष्पीकरण में परिवर्तन होकर वायु-प्रणाली ही बदल सकती है।

३. रेडियो सक्रियता : असंख्य छोटे-छोटे रेडियो-सक्रिय कण बिखर गए हैं जिनसे तीव्र प्रभावकारी गामा किरणें निकलती हैं जो कुछ दिन से कुछ वर्षों तक अपना प्रभाव डालती हैं।

४. मानव : भावी मानव जाति पर उद्जन बम के विस्फोटों के प्रभाव बिना जरा भी अतिरंजना के घोषित किए जा सकते हैं। उन्होंने कहा कि अमेरिका में जांच करने से पता चला है कि वहां सद्य प्रसूत शिशुओं की मृत्यु संख्या तथा विकृत शिशुओं की जन्म संख्या बहुत बढ़ गई है।

मानवता का अभिशाप

भारत में वेश्या वृत्ति के निराकरण के उपायों पर विचार करती हुई श्रीमती रामेश्वरी नेहरू लिखती हैं—

१—इस सम्बन्ध में सबसे ज्यादा प्रचार की जरूरत है। वेश्यावृत्ति के विस्तृत दूषित परिणामों से समाज को हानि पहुंचती है इसको दिखाने के लिए पुस्तकें, समाचार पत्रों में लेख, लोकगीत, ड्रामा, कहानियां, छोटी-छोटी सस्ती पुस्तक बहुत बड़ी संख्या में तैयार होनी चाहिए जिससे समाज की सोई हुई आत्मा जागृत हो और सभी इस बुराई को सहन करना एक पाप मान कर उसको दूर करने में सहयोग दें।

२—स्त्रियों और पुरुषों के लिये आचरण का माप दण्ड एक समान माना जावे और पुरुषों के लिये भी शुद्ध आचरण का पालन उतना ही जरूरी समझा जाये जितना स्त्रियों के लिये।

३—देश में फैली हुई गरीबी बेरोजगारी को दूर किया जाय।

४—इस कुकर्म की रोकथाम के लिये सख्त कानून बनाये जावें और इनका पालन भी सख्ती से किया जाय। अपराधियों को विशेष करके उन लोगों को जो इस कुकर्म के जरिये पैसा कमाते हैं अर्थात् दलालों आदि को बहुत कड़ी सजायें दी जावें।

५—जिन लड़कियों से जबरदस्ती यह पेशा कराया जाता है और जो इसको छोड़ कर साधारण गृहस्थ जीवन बिताना चाहती है उनको वेश्यालयों से निकाल कर आश्रमों में रखा जावे। उनकी पढ़ाई और ट्रेनिंग का बन्दोबस्त किया जावे और उन्हें फिर से बसाने की पूरी-पूरी कोशिश हो।

सरकार और जनता मिलकर इस काम को करे और वेश्यावृत्ति को प्रोत्साहन देने वालों का सामाजिक बहिष्कार हो। कुछ अर्सा हुआ संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन ने वेश्यावृत्ति को दूर करने के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव पास किया था जिस पर भारत ने हस्ताक्षर

किए थे। इसलिए एक प्रकार से हमारी सरकार इस बुराई को दूर करने के लिए वचनबद्ध है। अब समय आ गया है कि सरकार और जनता मिल कर इस कर्तव्य को पूरा करने का सक्रिय कदम उठावें।

देश की स्वतन्त्रता तब ही पूर्ण होगी जब देश में रहने वाले सभी लोग अत्याचार से छुटकारा पावें जब तक ये छोटी बच्चियां पुरुषों की वासना का और दुष्टों के लालच की शिकार बनी रहेंगी, तब तक पूर्ण रूप से देश आजाद नहीं कहा जा सकता। इस बयान में मैंने केवल मोटी मोटी बातें कहीं हैं। उम्मीद है दूसरे लोग इस समस्या के अलग अलग पहलुओं पर विस्तार से रोशनी डालेंगे जिससे मैं आशा करती हूं कि इस काम के लिये हमको पूरा सहयोग मिलेगा।

वर्तमान शिक्षा-प्रणाली

स्वतन्त्र भारत में शिक्षा-प्रणाली का भी प्रश्न महत्व रखता है। उसके सुधार की ओर जितना ध्यान आकर्षित होना चाहिए उतना होता प्रतीत नहीं होता। शिक्षा काल ही निर्माण काल होता है और देश का भविष्य उसके बालकों के शिक्षण पर बहुत कुछ निर्भर रहता है। शिक्षण पद्धति में विद्योपार्जन अथवा ज्ञान प्राप्ति के साथ २ चरित्र निर्माण पर विशेष ध्यान होना चाहिए। चरित्र निर्माण की ओर जितना ध्यान दिया जाता है उसे प्रायः नहीं के बराबर कह सकते हैं। यह आम शिकायत है कि चरित्रहीनता बढ़ती जा रही है। हमारे चरित्र प्रतिदिन गिरते जा रहे हैं। चलचित्रों का (सिनेमा का) दौर दौरा इसमें घृत का काम करता है। सह-शिक्षण भी हमारे देश की स्थिति और वातावरण के अनुकूल नहीं। उसका भी यथा सम्भव वर्जन होना चाहिए, विशेष कर कुमार अवस्था में।

धर्मनिरपेक्षता (जिसे संप्रदाय निरपेक्षता कहना अधिक उपयुक्त होगा) प्रायः धर्महीनता का पर्य्याय होता जा रहा है यह शोचनीय स्थिति है। शाश्वत मानव धर्म पर से भी आस्था दिन प्रतिदिन घटती जा रही है। उसे भी हमारे विद्यार्थियों के मस्तिष्क में भरने का यत्न नहीं किया जाता। भगवान मनु ने उसका लक्षण जगत प्रसिद्ध अपने निम्न वचन से कहा है:—

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ॥

गुरु और शिष्य का जो पारस्परिक सम्बन्ध होना चाहिए उसका तो सर्वथा लोप है। इनका आपस में संपर्क भी कम होता जा रहा है।

"मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् देवो भव" की तो बात भी न रही। इस विषय में जितना ही कहा जावे कम है। इधर हमारे विचारकों और राष्ट्रनेताओं को ध्यान देना चाहिए इतना कह कर इस प्रसंग को मैं छोड़ता हूँ। —रघुनाथ प्रसाद पाठक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली के
वार्षिक साधारण अधिवेशन के अवसरपर दिनांक १-५-५५ को दिया हुआ वक्तव्य

कृतज्ञता प्रकाशन

आज से प्रायः पचास वर्ष पूर्व मुझे अपने पुर-परिवार से पृथक होकर, वीतराग पूज्य श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज की चरण शरण में उपस्थित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। यह उस समय की बात है, जब पहिले पहल, मथुरा में, श्री विरजानन्द साधु आश्रम की स्थापना हुई थी। कुछ दिनों पश्चात् यही आश्रम मथुरा से 'अलीगढ़ जिले में' हरदुआगंज के समीप काली नदी-कूल पर, वर्तमान वाटिका में, परिवर्तित किया गया और अपने अन्य सतीर्थों के साथ मैं भी नवीन आश्रम में आगया।

पूज्य स्वामी जी महाराज का असीम अनुग्रह और विपुल वात्सल्य, हम सब पर, सदैव जीवन-विभूति बनकर बरसता रहा। आश्रम से मैं अध्ययन के लिये मुलतान, ऋषिकेश, जयपुर, काशी आदि भेजा गया। कुछ अक्षर सीख कर पुनः आश्रम में आया। उस समय मथुरा में, श्रीमद्दयानन्द जन्म शताब्दी का पुण्य पर्व था। ऐसे परम पावन अवसर पर, मैंने पारिवारिक जीवन से निर्लेप रह कर, सर्वथा निःस्वार्थ भाव से समाज सेवा का व्रत लिया।

परम पिता परमात्मा का अटल आश्रय, अपने आराध्य आचार्य श्री स्वामी जी महाराज का अमोघ आशीर्वाद और उत्साह पूर्ण एवम् आशान्वित तरुण हृदय लेकर मैं समाज सेवा के सुविस्तीर्ण क्षेत्र में अवतरित हुआ। उस समय स्वल्प अनुभव और यत्किंचित् ज्ञान ही मेरी साधना सामग्री थी। वैदिक धर्म विस्तार और आर्य सिद्धांत-प्रचार मेरे लघु जीवन का महान् लक्ष्य बना। देश के छोटे बड़े प्रायः सभी आर्य समाजों में जाकर मैंने वेदों की कल्याणी वाणी और महर्षि दयानन्द का शुभ संदेश सुनाना प्रारम्भ किया। शाहपुरा, कालाकांकर, देवास, बिजुआ, झालावाड़, उदयपुर आदि राज परिवारों से वैदिक संदेश-वाहक या आर्य धर्म प्रचारक के रूप में सम्पर्क तथा सान्निध्य स्थापित किया। १९२३ ई० के महान् शुद्धि आंदोलन में, अमर शहीद श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के आदेशानुसार, सर्वात्मना भाग लिया स्वदेश प्रेम से प्रेरित और प्रभावित होकर कारागार यात्रा की। हैदराबाद के संस्मरणीय शांति-पूर्ण सत्याग्रह में एक सर्वाधिकारी की हैसियत से, जेल जाने और जन सेवा करने का अलभ्य अवसर प्राप्त किया। पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज के संकेत पर, सिंध प्रान्तीय 'सत्यार्थ प्रकाश' विरोधी-आन्दोलन की दमन चेष्टा में, अपने अगण्य जीवन की आहुति देने के लिये आगे बढ़ा।

आर्य जनता के अनुग्रहपूर्ण आग्रह और स्नेह-सिक्त अनुरोधवश मुझे उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की सेवायें लगातार वर्षों, प्रधान के रूप में करनी पड़ी। इन सभाओं की सेवा करने में मुझे कुछ सफलता प्राप्त हुई या नहीं इसे मैं नहीं जानता परन्तु इतना अवश्य कह सकता हूँ कि मैंने जो कुछ किया, वह बड़ी कर्त्तव्य-निष्ठा, दृढ़ता, संलग्नता और निःस्वार्थ एवम् निष्पक्ष भावना से किया। सम्भव है कर्त्तव्य पालन की कठोरतावश, मेरे किसी प्रयत्न या व्यवहार से, किन्हीं महानुभावों को कुछ असंतोष या दुःख हुआ हो। ऐसे सब महानुभावों से, बड़ी विनम्रता पूर्वक, क्षमायाचना करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। साथ ही मैं उन समस्त व्यक्तियों का हृदय से कृतज्ञ हूं जिन्होंने मेरे कर्त्तव्य-पालन में सहयोग और साहाय्य प्रदान कर मुझे कृतार्थ किया।

गत ७ नवम्बर को मैं सन्यास आश्रम में प्रवेश करचुका हूँ। इसीलिये मैंने ७ नवम्बर को ही सभा के प्रधान पद से त्याग पत्र दे दिया किंतु सभा की अन्तरंग ने आगामी निर्वाचन तक और प्रधान बने रहने का आदेश दिया। साथ ही कार्य संचालन के लिये श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति को कार्यकर्त्ता प्रधान नियुक्त कर दिया।

मेरा संकल्प है कि सम्प्रति आर्य समाज के प्रबन्ध सम्बन्धी कार्यों से सर्वथा विरक्त होकर केवल प्रचार-कार्य में ही संलग्न रहूँ।

(स्वामी) ध्रुवानन्द सरस्वती

धर्म के मार्ग पर चलो

(लेखक—श्री स्वामी शिवानन्द जी)

रामायण की सर्वोच्च शिक्षा यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपना जीवन श्रेष्ठ और उत्तम बनाना चाहिए। धार्मिकता जीवन की आध्यात्मिक ज्योति होती है। जीवन में धार्मिकता धारण करने से मनुष्य में छुपी दिव्यता का प्रादुर्भाव होता है। महात्मा राम ने अपने जीवन से यह बताया कि धर्म्म पथ का अनुसरण किस प्रकार किया जाता है। मानव जाति को उनके पद चिन्हों और उनके आदर्शों पर चलना चाहिए ऐसा करने से संसार में शान्ति और कल्याण की गंगा बह सकती है।

धर्म परायण व्यक्ति ही सच्चे अर्थ में सुखी होते हैं। कर्त्तव्य को समझने और उसे पूरा करने की इच्छा रखने वाले व्यक्तियों का ही जीवन सफल होता है। नैतिक सिद्धान्तों और आध्यात्मिक आदर्शों की सर्वोपरिता में अटूट और निश्चित श्रद्धा धारण करके उन आदर्शों के अनुसार अपना दिन प्रतिदिन का कार्य्य करने से व्यक्तित्व के विकास का शक्तिशाली साधन उपलब्ध हो जाता है।

यही जीवन का उद्देश्य है और यही आत्म साक्षात्कार का उपाय है।

हमें वही काम करना चाहिए जिससे पारस्परिक मेल, शान्ति और सद्भाव में वृद्धि हो। जो कार्य्य व्यापक दृष्टि से अच्छा, न्याय्य और उचित हो और जिससे उत्तम परिणाम निकलते हों, वही करना चाहिए। जिस काम से बुरे परिणाम निकलें उससे बचना चाहिए। यही वास्तविक माप दंड है। इसी से मनुष्य शुभ और अशुभ का निश्चय कर सकता है।

मनुष्य को कभी भी सत्पथ से विचलित न होना चाहिए और न धर्म का आचरण करने में प्रमाद ही करना चाहिए। भौतिक कारण आध्यात्मिक विशेषताओं के ऊपर हावी न होने देना चाहिए। वैयक्तिक स्वार्थ सार्वजनिक हित में बाधक न बने, इस बात का पूरा २ यत्न होना चाहिए। हमारा व्यवहार स्वार्थ भावना से शासित न होना चाहिए। बुद्धि और बुद्धिमत्ता के निर्णयों पर इन्द्रियों को मनमानी न करने देनी चाहिए।

दूसरों के हित का पहले और अपने हित का अन्त में विचार करो। पहले अपने आचरण और व्यवहार पर दृष्टि डालो, और अपने दिल को टटोलो और देखो तुम्हारे विचार तुम्हारी बात और तुम्हारे कर्म धर्ममय हैं या नहीं। अपने शरीर मस्तिष्क और इन्द्रियों पर नियंत्रण रखो। उपयोगी अध्यात्म ज्ञान से अपने को प्रकाशित करो और धीरे धीरे बुरी भावनाओं, बुरे वचनों और बुरी आदतों को छोड़ो और शुभ विचारों और शुभ आदतों को ग्रहण करो।

जिन बातों से दूसरों में प्रतिकूल प्रतिक्रिया उत्पन्न हो उनसे बचो और जिन से अपने मन में और दूसरों के मन में सुरक्षा की भावना उत्पन्न होती हो उसे दृढ़ करो परन्तु अच्छा बनने और करने की बात पर अभिमान मत करो। इसमें कोई विशेषता नहीं है। इसकी तो तुम से आशा ही की जाती है। यह तुम्हारा कर्त्तव्य है।

आने वाले दिन को अच्छा बनाओ और इसके लिए आज सोचो और अच्छा करो। अपने मन, और मस्तिष्क के परदे खुले रखो परन्तु उसी को स्वीकार करो जो उचित, सत्य और स्मरण रखने योग्य हो प्रति दिन कम से कम एक अच्छा काम अवश्य होना चाहिए यह तुम्हारा मूल मंत्र होना चाहिए।

जिस चीज को तुम दूसरों में नापसन्द करते हो। पहले उसका अपने में सुधार करने पर ध्यान दो। दूसरों में जो बात अच्छी हो उसे ग्रहण करो और बाकी की उपेक्षा करदो। तुम्हारा अपना सुख तुमपर ही निर्भर करता है। परिस्थितियों की शिकायत मत करो। प्रत्येक वस्तु का अच्छे से अच्छा उपयोग करो। मनुष्य को यह न देखना चाहिए कि मैं क्या हूं वरन् यह देखना चाहिए कि मुझे क्या होना चाहिए ?

भारतीय संस्कृति

[वैदिक उदात्त भावनाएं]

(१)

[लेखक—श्री डा० मंगल देव शास्त्री एम० ए० पी एच० डी०]

भारतीय संस्कृति के विकास में वैदिक धारा का निर्विवाद रूप से अत्यधिक महत्त्व है। वैदिक धारा का उद्गम वेदों से है। इसलिए वेदों की महिमा का गान संस्कृत वाङमय में अनेक प्रकार से किया गया है।

ऐसा होने पर भी, यह बड़े आश्चर्य की बात है कि इधर सहस्रों नहीं, तो सैकड़ों वर्षों से मानवीय जीवन के लिए उपयोगी प्रेरणाओं या आदर्शों की दृष्टि से, वेदों का कोई महत्त्व है या हो सकता है, इसका स्पष्ट प्रतिपादन हमारे ग्रन्थों में प्रायः नहीं मिलता।

इसका मुख्य कारण, जैसा कि हम किसी अगले लेख में स्पष्ट करेंगे, उस जीवित वातावरण के, जिसमें वेदों का प्रकाश हुआ था, नष्ट हो जाने पर, शनैः शनैः अर्थ-हीन यान्त्रिक कर्मकाण्ड की दृष्टि के प्रसार के कारण 'अनर्थका हि मंत्राः १ (अर्थात् वैदिक मन्त्रों का कोई अर्थ नहीं होता, वे यज्ञ में पढ़ने मात्र से फलदेते हैं) इस अपसिद्धान्त का प्रचार ही हो सकता है।

उत्तर-कालीन भारतीय दृष्टि : यद्यपि 'निरुक्त' जैसेग्रन्थों में, अर्थ-ज्ञान पूर्वकही वेदोंको पढ़ना चाहिए, इस बात पर बड़ा बल दिया गया है२, तो भी उत्तर-कालीन वैदिक परम्परा में वैदिक मंत्रों के विषय में इधर चिरकाल से,

(१) "मन्त्राश्च कर्मकरणाः" (आश्वलायन श्रौत सूत्र १।१।२१),

(अर्थात्, मन्त्रों का मुख्य उपयोग यही है कि वे कर्मकांड में प्रयुक्त होते हैं),

तथा (२ "अनर्थका हि मन्त्राः" (निरुक्त १।१२ इसी दृष्टि ३ का बोलबाला रहा है।

इसीलिए निरुक्त-कार यास्क के अनन्तर जो भी वेदभाष्य-कार हुए हैं उनमें से प्रायः सभी ने याज्ञिक दृष्टि के आधार पर ही अपनी-अपनी व्याख्यायें लिखी हैं।

पूर्वमीमांसा ने "आम्नायस्य क्रियार्थत्वात्" (१।२।१) इस सूत्र में स्पष्टतया यह स्वीकार किया है कि वेदों की उपयोगिता केवल कर्मकांड की दृष्टि से है।

महा-भाष्यकार-पतञ्जलि ने 'पस्पशाह्निक' में व्याकरणशास्त्र के अठारह प्रयोजन दिखलाये हैं। उनमें से अधिक का संबन्ध वैदिक कर्मकांड से ही है।

वेद के षडंग प्रसिद्ध हैं। उनमें से 'कल्प' को

---

१. देखिए 'निरुक्त' १।१५। २. देखिए 'स्थाणुरयं भारहारः किलाभूदधीत्य वेदं न विजानाति योऽर्थम्। योऽर्थज्ञ इत्सकलं भद्रमश्नुते नाकमेति ज्ञानविधूतपाप्मा ॥ यद्गृहीतमविज्ञातं निगदेनैव शब्द्यते। अनग्नाविव शुष्कैधो न तज्ज्वलति कर्हिचित् ॥ (निरुक्त १।१८)। ३. इस दृष्टि की विशेष व्याख्या हम किसी अगले लेख में करेंगे।

वेदों का 'हाथ' माना गया है१। श्रौत तथा गृह्य कर्मों के प्रतिपादक 'कल्प' का स्पष्टतया वैदिक कर्मकांड से ही सम्बन्ध है।

वेदों के उत्तरकालीन भाष्यों से जहां कहीं वेद के प्रतिपाद्य विषय का और उसकी उपयोगिता का विचार किया गया है, वहां यही सिद्धांत निर्धारित किया गया है कि वेद का वेदत्व इसी बात में है कि उसके द्वारा हमें प्रधानतया उस वैदिक कर्मकांड का बोधहोता है, जिसको हम प्रत्यक्ष याअनुमान द्वारा नहीं जान सकते२।

मनुस्मृति में तो स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि यज्ञ की सिद्धि के लिए ही ऋग्वेदादि की प्रवृत्ति हुई थी३।

ऊपर के प्रमाणों से स्पष्ट है कि चिरकाल से हमारे देश में, भारतीय जीवन के लिए प्रेरणाओं या आदर्शों की दृष्टि से वेदों का कोई महत्व हो सकता है इसका प्रायः विचार ही नहीं किया गया।

पाश्चात्य दृष्टि: वर्तमान युग में पाश्चात्य विद्वानों का ध्यान वैदिक साहित्य की ओर गया। वैदिक वाङ्मय के अध्ययन के इतिहास में यह एक अनोखी घटना थी। इससे सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि वेदों के अध्ययन को सार्वभौम महत्व प्राप्त हो गया। पाश्चात्य विद्वानों ने वैदिक साहित्य के विषय में जो कार्य किया है वह कितना उपयोगी और महान है, यह वैदिक विद्वानों से छिपा नहीं। उसके लिए वे हमारे भूरि-भूरि प्रशंसा के पात्र हैं। परन्तु ऐसा होने पर भी वेदों के अध्ययन के विषय में हमारी और पाश्चात्य विद्वानों की दृष्टियों और उद्देश्यों में इतना मौलिक अन्तर है कि दोनों को तुलना के लिए आवश्यक एक समान धरातल पर ही नहीं रखा जा सकता।

पाश्चात्य विद्वानों की दृष्टि और उद्देश्य उस वैज्ञानिक के समान है जो रसायन शाला में दुग्ध जैसे उपयोगी पदार्थों का केवल परीक्षणार्थ विश्लेषण कर डालता है, या एक मृत शरीर की चीरफाड़ करता है, या खुदाई से प्राप्त पुरातत्त्व सम्बन्धी एक शिला-लेख को पढ़ने की चेष्टा करता है। वैज्ञानिक के लिए उन पदार्थों का अपने-अपने रूप में कोई मूल्य नहीं होता।

भारतीय दृष्टि और उद्देश्य ठीक इसके विपरीत है। हम वेदों को कोरी उत्सुकता का विषय न समझ कर, ताजे दूध, जीवित मनुष्य या एक मान्य पुस्तक की भांति, इनको, न केवल भारतीय समाज, अपितु मानव समाज के लिए एक पथ-प्रदर्शक अजर-अमर साहित्य समझते हैं। इसीलिए जहां पाश्चात्य विद्वानों ने वेदों को भारतीय संस्कृति की जीवित परम्परा से पृथक् करके प्रायेण तुलनात्मक भाषा शास्त्र, पुराण-विज्ञान (mythology), मत विज्ञान आदि की दृष्टि से ही इनका अध्ययन किया है, वहां हम जीवन के लिए प्रेरणाओं और आदर्शों की दृष्टि से ही वेदों का अध्ययन करना चाहते हैं।

हमारी दृष्टि: यह स्पष्ट है कि वेदों के विषय में उपर्युक्त दोनों, उत्तर-कालीन भारतीय तथा पाश्चात्य दृष्टियों से हमें इस प्रतिपादन में कोई विशेष सहायता नहीं मिल सकती। हमारा लक्ष्य तो यही है कि हम भारतीय संस्कृति की प्रगति की दृष्टि से वैदिक धारा के प्रारम्भिक युग में उसके स्वरूप को, उसके परिस्पन्दन को, तथा जातीय जीवन के लिए उसकी प्रेरणाओं और आदर्शों को समझ सकें।

हम यहां वेदमन्त्रों के ही शब्दों में उन उदात्त भावनाओं और महान् आदर्शों का दिग्दर्शन कराना चाहते हैं, जिनसे वेदों के मन्त्र ओत-प्रोत हैं। हमारे

१. देखिए—"छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते।" (पाणिनीय शिक्षा ४१)।
२. देखिए—"प्रत्यक्षेणानुमित्या वा यस्तूपायो न बुध्यते। एवं विदन्ति वेदेन तस्माद् वेदस्य वेदता॥ .. अतः कर्माणि वेदस्य विषयः। तदवबोधः प्रयोजनम्।" (सायणाचार्यकृत काण्व-संहिता-भाष्य की उपक्रमणिका), ३. देखिए—"अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्। दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यजुःसामलक्षणम्॥" (मनुस्मृति १।२३)।

मत में इसी रूप में वेद भारतीय संस्कृति की शाश्वत निधि है और मानवजाति के लिए सार्वभौम तथा सार्वकालिक संदेश के वाहक हैं।

नीचे हम क्रमशः इन्हीं उदात्त भावनाओं और महान् आदर्शों को वेद मन्त्रों के आधार पर संक्षेप में दिखाते हैं—

ऋत और सत्य की भावना : वैदिक उदात्त भावनाओं का मौलिक आधार ऋत और सत्य के सिद्धान्त हैं। जिस प्रकार वैदिक देवता-वाद का लक्ष्य एक-सूत्रीय परमात्मा-(या अध्यात्म-) तत्व की अनुभूति है, इसी प्रकार ऋत और सत्य के सिद्धान्त का अभिप्राय सारे विश्व-प्रपञ्च में व्याप्त उसके नैतिक आधार से है। इस आधार के दो सिरे या रूप हैं। बाह्य जगत् की सारी प्रक्रिया विभिन्न प्राकृतिक नियमों के आधीन चल रही है। परन्तु इन सारे नियमों में परस्पर-विरोध न होकर एकरूपता या ऐक्य विद्यमान है। इसी प्रकार मनुष्य के जीवन के प्रेरक जो भी नैतिक आदर्श हैं, उन सबका आधार सत्य है। अपने वास्तविक स्वरूप के प्रति सच्चा रहना, यही वास्तविक धर्म है१। परन्तु वैदिक आदर्श, इससे भी आगे बढ़कर ऋत और सत्य को एक ही मौलिक तथ्य के दो रूप मानता है, इसके अनुसार मनुष्य का कल्याण प्राकृतिक नियमों और आत्मिक नियमों में परस्पर अभिन्नता को समझते हुए उसके साथ अपनी एकरूपता के अनुभव में ही है।

यही ऋत और सत्य की भावना है। पुष्प में सुगन्ध के समान, अथवा दुग्ध में मक्खन के समानवेद में सर्वत्र यह भावना व्याप्त है२। स्पष्ट शब्दों में भी ऋत और सत्य की महिमा का हृदयाकर्षक वर्णन वेदों में अनेक स्थलों पर पाया जाता है। उदाहरणार्थ

ऋतस्य हि शुरुधः सन्ति पूर्वीर्
ऋतस्य धीतिर्वृजिनानि हन्ति।
ऋतस्य श्लोको बधिरा ततर्द
कर्णा बुधानः शुचमान आयोः॥
ऋतस्य दृह्ळा धरुणानि सन्ति
पुरूणि चन्द्रा वपुषे वपूंषि।
ऋतेन दीर्घमिषणन्त पृक्ष
ऋतेन गाव ऋतमा विवेशुः

(ऋग्वेद ४।२३।८९)।

अर्थात्—

ऋत३ अनेक प्रकार की सुख-शान्ति का स्रोत है,
ऋत की भावना पापों को विनष्ट करती है।
मनुष्य को उद्बोधन और प्रकाश देने वाली
ऋतु की कीर्त्ति बहिरे कानों में भी पहुंच चुकी है।
ऋत की जड़ें सुदृढ़ हैं,
विश्व के नाना रमणीय पदार्थों में ऋत
मूर्तिमान् हो रहा है।
ऋत के आधार पर ही अन्नादि खाद्य पदार्थों
की कामना की जाती है,
ऋत के कारण ही सूर्य-रश्मियां जल
में प्रविष्ट हो उसको ऊपर ले जाती हैं॥

इसी प्रकार सत्य के विषय में भी गहरी और तीव्र आस्था वैदिक साहित्य में सर्वत्र पाई जाती है। जैसे,

दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत् सत्यानृते प्रजापतिः।
अश्रद्धामनृतेऽदधाच्छ्रद्धां सत्ये प्रजापतिः॥

(यजुर्वेद १९।७७)।

१. देखिए—"वस्तुतोऽवस्तुतश्चापि स्वरूपं दृश्यते द्विधा। पदार्थानां, तयोर्मध्ये प्रायेण महदन्तरम्॥ आपाततस्तु यद्रूपं पदार्थस्पर्शि नैव तत्। वस्तुतो वर्तमानं तत्पदार्थानां स्वभावजम्॥ (लेखक कीनवीन पुस्तक 'रश्मिमाला' ५।२४।१-२)। २. देखिए-ऋतंच सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।" (ऋ० १०।१९०।१)। ऋतेन मित्रावरुणा वृतावृधावृतस्पृशा।" (ऋ० १।२।८) "ऋतेन ऋतंनियतमीडे" (ऋ० ४।३।९)। ऋतस्य तन्तुर्विततः" (ऋ० ९।७३।९)। "ऋतेनादित्यास्तिष्ठन्ति" (ऋ० १०।८५।१)। "सा मा सत्योक्तिः परिपातु विश्वतः" (ऋ० १०।३७।२)। "इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि" (यजुर्वेद १।५) 'सत्यं वदन् सत्यकर्मन्" (ऋ० ९।११३ ४)। सत्यमुग्रस्य बृहतः" (ऋ० ९।११३।५)। ३. ऋत अर्थात् प्राकृतिक नियम अथवा उनकी समष्टि।

अर्थात्—सृष्टिकर्ता परमेश्वर ने सत्य और असत्य के रूपों को देखकर पृथक २ कर दिया है। इनमें से श्रद्धा की पात्रता सत्य में ही है, और अश्रद्धा की अनृत या असत्य में।

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते॥

(यजुर्वेद १६।३०)।

अर्थात्—व्रताचरण से ही मनुष्यको दीक्षा अर्थात् उन्नत जीवन की योग्यताप्राप्तहोती है। दीक्षासे दक्षिणा अथवा प्रयत्न की सफलता प्राप्त होती है। दक्षिणा से अपने जीवन के आदर्शों में श्रद्धा, और श्रद्धा से सत्य की प्राप्ति होती है।

वाचः सत्यमशीय (यजु० ३६।३)।

अर्थात्—मैं अपनी वाणी में सत्य को प्राप्त करूं।

देवा देवैरवन्तु मा।...सत्येन सत्यम्....

(यजु० २०।११-१२)।

अर्थात—समस्त दैवी शक्तियां मेरी रक्षा करें और मुझे सत्य में तत्पर रहने की शक्ति प्रदान करें।

सत्यं च मे श्रद्धा च मे...यज्ञेन कल्पताम्।

(यजु० १८।५)।

अर्थात्—यज्ञ द्वारा मैं सत्य और श्रद्धा को प्राप्त करूं!

ऋत और सत्य की उपर्युक्त भावना ही वास्तव में अन्य वैदिक उदात्त भावनाओं की जननी है। इस सारे विश्व प्रपञ्च का संचालन शाश्वत नैतिक आधार पर हो रहा है, ऐसी धारणा मनुष्य में स्वभावतः समुज्ज्वल आशावाद, भद्र भावना और आत्म-विश्वास को उत्पन्न किये बिना नहीं रह सकती।

आशावाद की भावना: भारतीय विचार धारा में चिरकाल से 'संसार असार है,' 'जीवन क्षण-भंगुर और मिथ्या है', इस प्रकार की निराशावादी भावनाओं का साम्राज्य रहा है। हमारी जाति के जीवन को शक्ति हीन, उत्साह-हीन और आदर्श-हीन बनाने में निराशावाद का बहुत बड़ा हाथ रहा है, यह यह कौन नहीं जानता?

मनुष्य के जीवन को सबसे अधिक नीचे गिराने वाली भावना निराशावाद की भावना है। निराशावाद से अभिभूत मनुष्य जीवन की किसी समस्या को सुलझाने में असमर्थ होता है। इसीलिए इसका बड़ा भारी महत्व है कि वैदिक धर्माचरण का संपूर्ण आधार ही आशावाद पर है। इसका अभिप्राय यही है कि मनुष्य को अपने जीवन में पूर्ण आस्था रखते हुए उत्तरोत्तर उन्नति का ही लक्ष्य रखना चाहिए और उत्साहपूर्वक समस्त विघ्न बाधाओं पर विजय प्राप्त करने का यत्न करना चाहिए।

वैदिक साहित्य आशावाद की ओजपूर्ण, उत्साह-मय तथा उल्लासमय भावना से ओत-प्रोत है। जैसे,

कृधी न ऊर्ध्वाञ्चरथाय जीवसे (ऋ० १.३६।१४)।

अर्थात्—भगवन्! जीवन यात्रा में हमें समुन्नत कीजिए।

विश्वदानीं सुमनसः स्याम
पश्येम नु सूर्यमुच्चरन्तम्। (ऋ० ६।५२।५)

अर्थात्—हम सदा प्रसन्न-चित्त रहते हुये उदीय-मान सूर्य को देखें।

अदीनाः स्याम शरदः शतं
भूयश्च शरदः शतात् (यजु० ३६।२४)

अर्थात्—हम सौ वर्ष तक और उससे भी अधिक काल तक दैन्य-भाव से अपने को दूर रखें।

मदेम शतहिमाःसुवीराः (अथर्व २०।६३ ३)

अर्थात, हमारी सन्तानें वीर हों और हम अपने पूर्ण जीवन को प्रसन्नतापूर्वक ही व्यतीत करें।

निम्नलिखित मन्त्र में एक उत्साहमय ओजपूर्ण जीवन का सुन्दर चित्र दिया गया है—

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि,
वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि,
बलमसि बलं मयि धेहि,
ओजोऽस्योजो मयि धेहि,
मन्युरसि मन्युं मयि धेहि,
सहोऽसि सहो मयि धेहि॥ (यजु० १६।६)।

(शेष पृष्ठ १३२ पर देखें)

(गतांग से आगे)

(४)

(लेखक—श्रीयुत पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय)

It seemed a simple solution of the difficulty to deny the difference. Mind was an epiphenomenon upon the body; it was matter become conscious of itself, a film of highly alternated matter surrounding the brain like the halo round the head of a Saint, the function of which was to mirror and register the events that occured in the brain. Between body and mind so concerned the fact of inter-action offered no difficulty; there was between them a continuous causal relationship and it operated from the body and the mind. If the function of mind was confined to registering bodily events, it could not, it was clear, register what was not there, it followed that there could be no mental event without a preceding cerebral event. Mind then was part of the body; it was subject to the same caural laws as those which governed the body, and its activities were determined and conditioned by the activities of the body.

(Ibid)

इसका सुगम समाधान यह सूझा कि भेद-भाव न माना जाय। विचार शरीर की ही एक अनुगति का नाम है। जड़ पदार्थ का स्वयं ही अपने को जान लेना चेतनता है। जैसे चित्रों में सन्त-महात्माओं के सिरों के चारों ओर एक हाला बना देते हैं इसी प्रकार मस्तिष्क के चारों ओर अति सूक्ष्म प्राकृतिक हाला है जो मस्तिष्क के भीतर होने वाली घटनाओं को प्रदर्शित तथा अंकित किया करता है। इस प्रकार के मस्तिष्क और शरीर में प्रतिक्रिया मानने में कोई आपत्ति नहीं। उनमें कारण कार्य्य का नैरन्तर्य है, जो शरीर से मस्तिष्क तक जाता है। यदि मन का यही काम है कि शारीरिक गतियों को अंकित किया करे तो स्पष्ट है कि जो घटना है ही नहीं उसको अंकित कैसे किया जायगा? इससे सिद्ध है कि प्रत्येक मानसिक प्रगति से पहले मस्तिष्क में प्रगति होती है इस प्रकार मन शरीर का ही एक अवयव है। यह उन्हीं कारण-कार्य्य सम्बन्धी नियमों के आधीन है जिसके शरीर। इस की प्रगतियों का मूल कारण शारीरिक प्रगतियां हैं"

इस प्रकार जिसको हम चेतन कहते हैं वह भी एक प्रकार से जड़ का ही रूपान्तर सिद्ध होता है। जीव कोई अलग पदार्थ नहीं रहता। ईश्वर के लिये तो

कोई प्रश्न ही नहीं है, प्रसिद्ध वैज्ञानिक टिंडल (Tyndall) ने १८७४ ई० में "ब्रिटिश वैज्ञानिक उन्नति समिति (The British association for the advancement of Science) का प्रधान पद ग्रहण करते हुए एक वक्तृता दी थी जिस में यह भविष्य वाणी की गई थी कि "आरम्भिक जीवन कोष्ठ के परमाणुओं से लेकर ब्रिटिश समिति की कार्य्यवाही तक" (from the atoms of the primaeval nebula to the proceedings of the British association for Advancement of Science) सभी प्रगतियों की व्याख्या केवल जड़ प्रकृति से ही हो सकेगी।

टिंडल महोदय का तात्पर्य यह है कि जब विज्ञान पूर्ण उन्नति करलेगा तो हम न केवल जड़ भौतिक पदार्थों की ही किन्तु सभ्य जातियों के कृत्यों की व्याख्या भी केवल प्राकृतिक नियमों के आधार पर कर सकेंगे।

यह भविष्य वाणी कहां तक पूरी हुई यह हम आगे बतायेंगे। यहां हमारा तात्पर्य केवल यह बताने का है कि अचर ने चेतन पर कहां तक विजय पा ली। अब तक चेतन के अस्तित्व का प्रमाण इसी बात से मिलता था कि सभ्य जातियों की विद्या सम्बन्धी प्रगतियां बिना चेतन के नहीं हो सकतीं। टिंडल की विद्या, उनकी वक्तृता, उनकी सायंस की योग्यता इस बात का प्रमाण है कि टिंडल महोदय या उनका मस्तिष्क केवल जड़ भूतों का समुदाय नहीं है, यदि इसके विपरीत टिंडल या उनके सहकारी वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया कि बिना किसी चेतन की सहायता के भौतिक मस्तिष्क सब प्रकार की विद्याओं का कारण हो सकता है तो यह मानने की क्या आवश्यकता रही कि टिंडल या अन्य वैज्ञानिकों के शरीर में एक विशेषतया विकसित चेतन जीवात्मा है। जिस प्रकार डीकार्ट कुत्तों की चालाकी देखकर कुत्तों में जीव मानने के लिए बाधित नहीं इसी प्रकार टिंडल भी अपनी विद्या के आधार पर अपनी चेतन सत्ता स्वीकार करने के लिये बाधित नहीं हैं। जिस प्रकार भौतिक जड़ तथा सर्वथा अचेतन तत्वों के मिलने से कुत्ते का शरीर, कुत्ते का मस्तिष्क और कुत्ते की स्वामि भक्ति तथा बुद्धिमत्ता आदि सभी उत्पन्न हो सकते हैं इसी प्रकार उन्हीं भौतिक तथा जड़ तत्वों के मिलने से वह मस्तिष्क भी बन सकते हैं जिनके द्वारा ब्रिटिश वैज्ञानिक समिति का कार्य संचालन हो रहा है। इस के लिये अलग चेतन सत्ताओं की आवश्यकता ही क्या है।

जीवन अथवा चेतन—कार्यों के सम्बन्ध में दो मुख्य मौलिक शास्त्र हैं बायोलोजी (biology) या जीवन शास्त्र तथा साईकोलोजी (psychology) या मनो विज्ञान। भौतिकी, रसायन आदि का संबंध तो जड़ जगत से हैं। इतिहास, भूगोल, समाज शास्त्र आदि सब जीवन-शास्त्र तथा मनोविज्ञान का ही विकसित रूप हैं। अत. यदि इन्हीं दो भौतिक शास्त्रों का आधार चेतन शून्य जड़ पदार्थों पर हो सकता है तो चेतन तत्व की कोई आवश्यकता रहती ही नहीं।

जीवन-शास्त्र की एक जटिल मीमांसा जाति-भेद-कारण (Origin of variations in the species) है। इसका सम्बन्ध विकासवाद से है। हम पहले सूक्ष्मतया विकासवाद का सिद्धान्त वर्णन करें जिससे आगे की बात समझने में सुगमता हो।

हम संसार में भिन्न २ प्राणियों को देखते हैं। मनुष्य हैं, बन्दर हैं, हाथी हैं, घोड़े हैं पक्षी हैं, कीट हैं, पतंग हैं. यह सब सहस्रों जातियों तथा उपजातियों में विभक्त हैं। पहले यह माना जाता था कि ईश्वर ने यह चौरासी लाख या कुछ कम बढ़ योनियां अलग अलग बनाई हैं। पहले ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में प्रत्येक योनि (जाति) का एक जोड़ा बनाया उसी जोड़े की सन्तान आज तक चली आती हैं। कुत्ते का बिल्ली से और मनुष्य का बन्दर से कोई सम्बन्ध नहीं। यदि आकृति या स्वभाव में कुछ समानता भी है तो उसका यही कारण है कि ईश्वर ने उनको इस प्रकार बनाया। उनमें कोई रक्त का सम्बन्ध नहीं है।

विकासवादियों ने सिद्ध किया कि ऐसा नहीं है। जितनी योनियां आजकल पाई जाती हैं या जो लुप्त हो चुकी हैं उन सब के आदि मां-बाप कोई एक ही थे जिनसे कालान्तर में देश काल, वायु जल तथा परिस्थिति के अनुसार भेद होते होते इतनी योनियां बन गईं।

उपराष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन का दीक्षान्त भाषणसार

गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी में

हमें यह विश्वास नहीं कर लेना चाहिये कि किसी विषय की जानकारी किसी दूसरे को देना ही शिक्षा है। यदि आप अपनी मानसिक और आध्यात्मिक शक्ति का भी विकास नहीं करेंगे तो आप केवल पशु बन पायेंगे, जीवन के स्वामी नहीं।

मानव स्वभाव के दूसरे पहलू को उन्नत नहीं किया जाएगा तो विज्ञान की प्रगति मानवता के लिए विनाशक ही सिद्ध होगी सहायक नहीं। अणुशक्ति का स्रोत मनुष्य को ज्ञात हो गया है, वह उसे मानवता, सौन्दर्य व जीवन के लिये प्रयोग में लाता है अथवा मानव जीवन नष्ट करने के लिए, यह बात अणुशक्ति पर नहीं बल्कि उसका उपयोग करने वाले मनुष्य पर निर्भर है। दुनिया छोटी होती जा रही है इसलिये हमारे दिल बड़े होने चाहिये।

गुरुकुल की प्रशंसा

यह उन इनी-गिनी शिक्षा संस्थाओं में से है जिन्होंने अन्धकार पूर्ण समय में ज्ञान का दीपक प्रज्वलित रखा। अन्यत्र शिक्षा के क्षेत्र में जिन सिद्धांतों पर अमल हो रहा है उन्हें पहले इसी गुरुकुल में चलाया गया।

भारत में छात्रों पर अपना मत थोपा नहीं जाता बल्कि उनसे कहा जाता है कि वह सत्य को स्वयं परख कर अपने अनुकूल सन्मार्ग चुन लें। हमें व्यक्ति की प्रतिष्ठा कायम रखनी चाहिए क्योंकि समाज में व्यक्ति का एक महत्वपूर्ण स्थान है।

कालेजों में छात्रों की संख्या आवश्यकता से अधिक है इसलिये वहां अनुशासन नहीं रह सकता और अध्यापक-शिक्षार्थी बीच निकट सम्बन्ध नहीं बन पाता। जब अध्यापकों को सम्मान मिलना बन्द हो जाता है, जब अधिकारियों की आज्ञा नहीं मानी जाती तब देश का पतन आरम्भ हो जाता है। परन्तु यदि अध्यापक का सम्मान होता है तो उसे छात्रों से घनिष्ट और निकटतम सम्बन्ध बनाना चाहिये।

छात्रों को कलियों के समान समझना चाहिये फूलों के रूप में विकसित होने जा रहे हैं। 'मार-मार कर हकीम बनाने' की प्रथा ठीक नहीं।
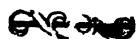
(पृष्ठ १२६ का शेष)

अर्थात्—

मेरे आदर्श देव !

आप तेज-स्वरूप हैं। मुझसे तेज को धारण कीजिए।

आप वीर्य रूप हैं, मुझे वीर्यवान् कीजिए !

आप बल-रूप हैं, मुझे बलवान बनाइए !

आप ओज-स्वरूप हैं, मुझे ओजस्वी बनाइए !

आप मन्यु [1]-रूप हैं, मुझमें मन्यु को धारण कीजिए !

आप सहस[2]-स्वरूप हैं, मुझे सहवान् कीजिए !

---

१. मन्यु = अनौचित्य को देख कर होने वाला क्रोध। २. सहस् = विरोधी पर विजय पाने में समर्थ शक्ति और बल।

संसार को एटम बम नहीं, मनुष्य चाहिये।

(श्री ओ३म्प्रकाश जी पुरुषार्थी)

ज्वालामुखी पहाड़ की भांति आज संसार अन्दर ही अन्दर विद्वेष, घृणा और क्रोधाग्नि से धधक रहा है। कब, कहां और किस क्षण यह ज्वाला फट पड़े और देखते २ समस्त मानव जाति को अपने गर्भ में समाले यह प्रश्न वर्तमान् समय के राजनीतिज्ञों का ही नहीं अपितु सर्वसाधारण व्यक्ति तक का प्रश्न बन गया है। इसे फटने से रोकने के निमित्त सर्वत्र सम्मेलनों का बोल बाला है; परन्तु प्रयत्नों के उपरान्त भी आशा की एक रेखा तक कहीं दिखलाई नहीं पड़ रही है। मर्ज बढ़ता गया ज्यों २ दवा की वाली कहावत चरितार्थ हो रही है।

अधिकांश और मुख्यतः भोगवादी लोगों का विश्वास है कि यदि विज्ञान की सहायता से यथेष्ट मात्रा में भोग सामिग्री प्राप्त करली जाय तो संसार से अशान्ति दूर हो जाय; परन्तु ऐसे लोग कभी यह विचारने का कष्ट नहीं करते कि यदि भोग सामग्री की यथेष्टता ही शान्ति का एक मात्र उपाय है तो फिर इस आधार पर अमेरिका, रूस और यौरुप में सब से अधिक शान्ति होनी चाहिये; जहां कि भोग सामग्री सब से अधिक प्रचुर मात्रा में है। अकेले अमेरिका में अनाज की इतनी अधिक मात्रा है कि कभी कभी वहां खड़ी फसलें इसलिये जला दी जाती हैं कि कहीं अनाज का भाव न गिर जाय। मकानों की यह अवस्था है कि अकेले न्यूयार्क में एक २ मकान १०४ मंजिल तक हैं जिस में १८००० व्यक्ति निवास करते हैं। परन्तु दुःख के साथ कहना पड़ता है वे वैज्ञानिक आविष्कार तथा भोग सामग्री के केन्द्र ही आज अशांति के केन्द्र बने हुये हैं और एशिया के वह देश जहां गरीबी अपना ताण्डव नृत्य कर रही है वह अपेक्षाकृत शान्त हैं।

घबड़ाहट की इस अवस्था में भोगवादियों ने शांति की प्राप्ति के निमित्त एक नया भ्रान्तिपूर्ण व विनाशकारी मार्ग ढूंढा है और वह है "एटम व हाइड्रोजन बम"; परन्तु जब से इस शक्ति का सहारा लिया गया है तब से और भी अशान्ति व युद्ध की सम्भावना बढ़ गई है। इसके अतिरिक्त शांति की खोज में सैंकड़ों नये इज्मों और झगड़ों की उत्पत्ति नित्य नये रूप में हो रही है; परन्तु सभी एक नयी पार्टी को जन्म देकर इस विद्वेषाग्नि को बढ़ावा ही दे रहे हैं।

वैज्ञानिक आविष्कार तथा भोग-सामग्री दोनों निर्जीव वस्तुयें हैं। इनका सदुपयोग जहां संसार को स्वर्ग बनाने की सामर्थ्य रखता है वहां इनका दुरुपयोग संसार को नरक बनाने की भी शक्ति रखता है। अतः शांति-अशान्ति की स्थापना इनकी अपेक्षा इनके 'प्रयोग कर्ता' पर अधिक निर्भर करती है। परन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि वर्तमान् समय 'मनुष्य' की, कि जिस पर इनका सदुपयोग और दुरुपयोग निर्भर है सर्वथा उपेक्षा की जा रही है। परिणाम स्वरूप स्थिति इस अवस्था को पहुँच गई है कि जिस प्रकार एक अबोध बच्चे के हाथ में हजामत बनाने का ब्लेड आ जाय और जिस प्रकार वह उस ब्लेड से लाभ न उठाकर अपने ही अङ्गों को काटता है ठीक उसी प्रकार आज का भौतिकवाद विज्ञान के द्वारा अपना ही विनाश करने पर तुल बैठा है। भूतपूर्व गवर्नर जनरल श्री राजगोपालाचार्य ने ठीक ही अपने वक्तव्य में कहा है कि जिस प्रकार किसी बन्दर के हाथ में जलती हुई मसाल आ जाय और वह उसे लेकर नगर के छप्परों पर कूदता फिरे उसी प्रकार आज मानव देहधारी बन्दरों के हाथ में एटम बम आ गया है कि जिसका वह दुरुपयोग कर रहे हैं।

सारांश में भोगवादी विचार धारा के परिणाम-स्वरूप भौतिक जगत की उन्नति तो चरम सीमा को पहुँच गई और उन्नति के सर्वोत्तम साधन भी मानव को प्राप्त हो गये; परन्तु इस उन्नति के साथ साथ मानवता की कब्र खुदती गई और परिणाम स्वरूप मानव, दानव बन गया और उसके हाथ में आ गये ये वैज्ञानिक साधन। इसका जो परिणाम हो सकता है वही हो रहा है और वही आगे भी होगा। ऐसी स्थिति में तो जितनी ही वैज्ञानिक उन्नति होगी और भोग-सामग्री बढ़ेगी उतनी ही लूट-खसोट, बाजार प्राप्ति के लिये संघर्ष और राष्ट्रों के मध्य आर्थिक तथा राजनैतिक प्रतियोगिता बढ़ेगी और शोषण, अन्याय, द्वेष, युद्ध तथा विनाश इसके परिणाम होंगे।

अतः संसार की सर्व प्रथम आवश्यकता एटम बम या ऐटमिक शक्ति नहीं अपितु इसका सदुपयोग करने वाले मनुष्य तथा आत्मिक शक्ति की आवश्यकता है। आज संसार को ऐसे मनुष्यों की आवश्यकता है कि जो भौगोलिक, धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक संकीर्ण साम्प्रदायिकता के बन्धनों से मुक्त हो और संसार के प्राणी-मात्र को एक ईश्वर पिता और पृथ्वी माता की सन्तान समझ एक परिवार के रूप में देखे। उसकी दृष्टि में मनुष्य का मूल्य उसकी आत्मिक शक्ति में हो पैसे में नहीं। उसके सन्मुख मनुष्यों की दो ही श्रेणियां हों अर्थात् भले और बुरे अथवा आर्य-अनार्य और इस अच्छे बुरे की पहिचान हो उनके अच्छे और बुरे कर्म।

आज प्राणी मात्र के कल्याणार्थ ऐसे मनुष्यों की आवश्यकता है कि जो—

(१) सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्यागने में सर्वदा उद्यत हो।

(२) जो सब कार्य धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को करने वाले हों।

(३ जो संसार का उपकार करना अपना परम धर्म समझें।

(४) जो सब से प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार तथा यथायोग्य व्यवहार करें।

(५) जो अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहकर सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझें।

(६) जो स्वहितकारी कार्यों में अपने को स्वतंत्र तथा सर्वहितकारी कार्यों में अपने को परतंत्र समझें—

संक्षेप में, आज संसार में एटमिक शक्ति के निर्माण करने वाले कारखानों के साथ २ इसके प्रयोग-कर्ता मनुष्य के निर्माण करने वाली फैक्ट्रियों की नितान्त आवश्यकता है और संसार को एटम बम नहीं अपितु इस एटमिक शक्ति का सदुपयोग करने वाले मनुष्यों की आवश्यकता है। यदि कुछ समय के लिये वैज्ञानिक उन्नति न भी हो और मनुष्य का ठीक ठीक निर्माण करने पर संसार के राष्ट्र बल दे दें तो इन्हीं वर्तमान वैज्ञानिक साधनों के द्वारा ससार को स्वर्ग बनाया जा सकता है।

अतः संसार के प्रत्येक माता-पिता संस्था एवं राष्ट्र का यह परम धर्म अथवा युग धर्म हो जाता है कि वह अपनी योजनाओं में मनुष्य निर्माण को सर्व प्रमुख स्थान दें।

चुने हुए मोती

समस्त ज्ञान का उद्देश्य शुभ कर्म्म होना चाहिए।

जो ज्ञान मनुष्य को बुद्धिमान बनाने में असमर्थ होता है

वह उसे अहंकारी और निर्दयी बना देता है।

हिरोशिमा और नागासाकी पर अणुबम क्यों गिराए गए ?

(श्री राजगोपालाचार्य द्वारा विश्लेषण)

श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य ने हाल में ही 'यंग मैन्स क्रिश्चियन एसोसिएशन' की मद्रास शाखा के सम्मुख जब भाषण दिया था तो श्री चर्चिल के 'युद्धकालीन संस्मरण' से उद्धरण देते हुए उन्होंने बताया था कि अमरीका द्वारा हिरोशिमा और नागासाकी पर अणुबम गिराने का उद्देश्य जापान से आत्मसमर्पण कराना नहीं था जो कि पहले से ही आत्मसमर्पण करने को तैयार हो गया था। राजाजी के मत की पुष्टि और भी स्पष्ट रूप से राष्ट्रपति रूजवेल्ट और राष्ट्रपति ट्रूमन के सैनिक कार्यालय अध्यक्ष नौसैनिक एडमिरल विलियम की अक्तूबर १९४९ में प्रकाशित पुस्तक 'आइ वाज देअर' से होती है जिसकी भूमिका राष्ट्रपति ट्रूमन द्वारा लिखी हुई थी।

राजाजी ने उपर्युक्त पुस्तक के पृष्ठ ४४१ और ४४२ का इस प्रकार उद्धरण दिया है : "मेरे विचार में हिरोशिमा और नागासाकी पर इस बर्बरतापूर्ण हथियार के उपयोग से जापान के विरुद्ध हमारी लड़ाई में कोई ठोस मदद नहीं मिली। जापान तो पहले ही हार गया था और प्रभावशाली समुद्री नाकेबन्दी तथा प्रचलित हथियारों से सफलतापूर्वक बमवर्षा के फलस्वरूप वह आत्मसमर्पण करने को तैयार था। मेरी तो प्रतिक्रिया यह है कि वैज्ञानिक तथा दूसरे लोग इस परीक्षण को करना चाहते थे क्योंकि इस योजना पर अपार धन व्यय हो चुका था। ट्रूमन को यह मालूम था और इस मामले से सम्बद्ध दूसरे व्यक्तियों को भी। फिर भी राष्ट्रपति ने जापान के दो नगरों पर इस बम के उपयोग करने का निश्चय किया। इस नए हथियार के लिए 'बम' शब्द का प्रयोग गलत है। यह कोई विस्फोटक नहीं है। यह तो एक जहरीली चीज है जो स्वविकसित विस्फोटक शक्ति की अपेक्षा अपनी रेडियमधर्मी प्रतिक्रिया से अधिक लोगों को मारती है।"

अमरीकी सैनिक एडमिरल विलीयम डी. लीही ने अपनी पुस्तक में आगे लिखा है : "भविष्य में अणु युद्ध की घातक सम्भावनाएं भयानक हैं। मेरी अपनी भावना तो यह है कि इसका सर्वप्रथम प्रयोग करके हमने अन्धकार युगों के बर्बर लोगों में प्रचलित नैतिक स्तर को अपना लिया है। मुझे इस तरीके से युद्ध करना नहीं सिखाया गया और स्त्रियों तथा बच्चों का संहार करके युद्ध नहीं जीते जा सकते। यह हथियार सब से पहले हमारे हाथ में आया और हमने ही सब से पहले उसका उपयोग किया। यह निश्चय-सा ही दीखता है कि सम्भावित शत्रु भविष्य में इसका विकास कर लेंगे और हो सकता है कि कभी अणुबमों का प्रयोग हमारे ही विरुद्ध किया जाय। यही कारण है कि एक पेशेवर सैनिक के रूप में जिसने आधी शताब्दी तक अपनी सरकार की सेवा की है, मैं युद्ध की अपनी इस कहानी के अन्त पर पहुंचता हूं तो भविष्य के प्रति मन आशंका से भर जाता है। युद्ध में अणुबमों का प्रयोग करने से हम असैनिकों के प्रति क्रूरता में चंगेजखां के युग में पहुंच जाएंगे। यह तो एक राज्य द्वारा दूसरे राज्य का एक प्रकार का कत्ले आम और बलात्कार होगा जबकि अन्धकार युग में यह चीज व्यक्तिगत लालच और बर्बरता का परिणाम होती थी।

(शेष पृष्ठ १३७ पर)

एशिया में ईसाइयत क्यो असफल रही

(ले०—श्री पं० शिवदयालु जी मेरठ)

विगत ४ शताब्दियों में यूरोप तथा अमेरिका के ईसाइयों ने सैंकड़ों अरब रुपया एशिया को ईसाई बनाने पर व्यय किया। लाखों मिशनरियों ने अपने घर-बार छोड़ छोड़ कर एशिया के विभिन्न क्षेत्रों में दीर्घ काल तक डेरे डाले और तन्मयता के साथ प्रचार कार्य किया। लाखों मन बाइबिल एशिया की विभिन्न भाषाओं में अनुवाद कर बांटी तथा समय २ पर सैनिक शक्ति का भी प्रयोग करने में संकोच नहीं किया किन्तु फिर भी एशिया में ईसाइयत सफल न हो सकी।

भारत, चीन, जापान, बर्मा, स्याम, कम्बोज, लङ्का, हिन्द चीन, तिब्बत, आदि में पूरी २ शक्ति लगाकर हिन्दू-बौद्धों को ईसाई बनाने में तथा मुसलिम देशों के मुसलमानों को यीशुमसीह की गोद में बैठाने में कोई कसर उठा नहीं रखी गई किन्तु कहीं भी सफलता उपलब्ध नहीं हो सकी।

चीन जहां ईसाइयों का सब से अधिक प्रयास था वहां बात की बात में स्वतन्त्रता होते ही ईसाइयत जो कुछ थोड़ी बहुत फैली थी विदा होने लगी। भारत में भी चीन का इतिहास दोहराए जाने वाला है। अन्य बौद्ध देशों में ईसाइयत के विरुद्ध घृणा का सचार बढ़ता जा रहा है। जिस दिन एशिया पूर्ण रूपेण स्वतन्त्र हो जावेगा और स्वसस्कृति को आधार बनाकर खड़ा होगा ईसाईयत नाम मात्र ही शेष रह जावेगी और वह भी पूर्ण परिवर्तित रूप में।

यह सत्य है कि एशिया में ईसाइयत यूरोप तथा अमेरीका की साम्राज्य शाही के बल पर पिछले दिनों पनपी है और अब उसकी प्रतिक्रिया होना स्वभाविक है जबकि एशिया जाग रहा है और उसका पुनरुत्थान हो रहा है किन्तु फिर भी अनेकों ऐसे मिशनरी एशिया में आये जो त्यागवृत्ति को धारण कर प्रचार कार्य में लगे रहे और उन्हों ने अपने जीवन मिशन के कार्य में लगाए तोभी हम देख रहे हैं कि ईसाइयत एशिया के ऊपर प्रभाव न जमा सकी और अब जा रही है और तेजी के साथ एशिया से विदा हो रही है।

रोम का महान् पोप चिल्ला चिल्ला कर कह रहा है कि ईसाई मिशनरियों को एशिया के देशों की सभ्यता संस्कृति, भाषा एवं आचार को आधार बना कर ईसाइयत का प्रचार करना चाहिये और सम्भवतः उस ही का यह प्रभाव है कि अब प्रयाग के ईसाई गुरुकुल ने अपने पुरोहित स्नातकों के नाम अङ्ग्रेजी न रख कर श्रद्धानन्द प्रभु, धीरानन्द, ज्ञान प्रकाश आदि रखे हैं और सम्भव है विदेशी मिशनरी शीघ्र ही हिन्दू बौद्ध भिक्षुकों तथा भिक्षुणियों का बाना धारण करने लगें तथा भारतीय पर्वों को भी मनाने लगें। गिरजा घरों में दीवाली मनाने लगे और रामकृष्ण को राष्ट्रीय महापुरुष भी घोषित कर उनकी जयन्तियां भी मनाने लगे। राष्ट्रीयता के नाते हम ईसाई मिशनरियों को ऐसा करने पर साधुवाद कहेंगे किन्तु मूल प्रश्न का इसमे समाधान नहीं हो जाता कि एशिया में ईसाइयत क्यों असफल हुई और क्यों विदा हो रही है?

जिस समय तक ईसाई यशुमसीह पर ईमान लाने से ही मुक्ति मिल सकेगी और ईमान न लाने वालों को दोजख की आग में धकेल दिया जावे या चाहे वह कैसे भी शुभ कर्म करें यह मतान्धता समाप्त नहीं की जाती और संसार के सर्व साधु, सन्त, महात्माओं ऋषि-मुनियों पर आस्था रखने और उनके उपदेशों को तर्क एवं ज्ञान के प्रकाश में हृदयङ्गम करने तथा आचार धर्म को जीवन में प्रधानता देने के

एशिया के ईसाई न अपना सेंगे उनकी इस मानवता एवं बुद्धिवाद के पत्र में युग सुनने वाला नहीं।

यीशुमसीह के कल्पित बलिदान को लिख कर सबसे महान् बलिदान बखानना और मर कर जिन्दा हो कल्पित स्वर्ग में जाना अब इस मान्यता को कोई बुद्धिमान मानव सुनने तक को तैय्यार नहीं। भारत तो बलिदानों की खान है। भारत का इतिहास विश्व भर में बलिदान के नाते सर्वोच्च है। चित्तौड़ का जौहर जिसमें १४००० वीरांगनाएं जिन्दा प्रसन्न वदन चिता में जलकर भस्म हुई इस बलिदान के सामने मसीह का बलिदान तो पासंग भी नहीं।

जिस दिन मसीह को फांसी लगने वाली थी उस की पहली रात को वह रोता चीखता और चिल्लाता रहा और सलीब पर भी चीखने से बाज न आया। उससे सहस्रों गुणा श्रेष्ठ तो बन्दा वैरागी, जोरावर फत्ता, भगतसिंह, श्रद्धानन्द और धर्मवीर पं० लेखराम आदि के बलिदान हैं।

फिर यीशुमसीह को तो फांसी लगी भी पूरी नहीं वह तो एक षड्यन्त्र के मातहत जिन्दा सलीब पर से उतार लिया गया।

आज दिन ईसाई कुमारी मरियम के ईश्वरीय गर्भ धारण करने को चाहे भी जितना रूपक बनाने का प्रयत्न करें कोई आचार धर्म का उपासक उस कार्य को महत्व देने वाला नहीं।

संक्षेप में कथन यह है कि आज इस प्रकाश के युग में जब तक ईसाई विद्वान् बाइबिल में से तर्क शून्य, विज्ञान विरुद्ध, मानवता विरुद्ध बातों को निकाल न देंगे वंशावलियों की गाथा को उस से पृथक् न करेंगे तथा मौजजे (miracles) को विज्ञान सम्मत सिद्ध न करेंगे और बाइबिल में जो अस्पष्ट कूट (riddles and parables) हैं उन का युक्तियुक्त अर्थ न लगायेंगे तथा कल्पित स्वर्ग व नरक के ढकोसलों को त्याग कर ईश्वर की सर्वव्यापकता एवं सर्वज्ञता को स्वीकार न करेंगे और जीव के अमरत्व एवं मानव रूप में उसके कर्म स्वातन्त्र्य को न मानेंगे और ईसामसीह द्वारा प्रचारित ऋत एवं सत्य का जो सब धर्मों में किसी न किसी रूप में पाया जाता है, प्रचार करना ही अपने जीवन का ध्येय न बनावेंगे ईसाइयत कम से कम इस गोतम, कपिल, कणाद, शंकर एवं दयानन्द की भूमि में टिक नहीं सकती और ना ही एशिया के भूखण्डों में जो बुद्ध कनफ्यूस अब्दुलबहा आदि सन्तों से प्रमाणित है टिक सकती है।

(पृष्ठ १२९ का शेष)

असभ्य युद्ध प्रणाली के ये नए एवं भयंकर हथियार आधुनिक बर्बरता के प्रतीक हैं जो एक ईसाई के लिए अशोभनीय है।

राजाजी की टिप्पणी

"उपर्युक्त उद्धरण देने के बाद राजाजी ने लिखा है : खेद है कि गत महायुद्ध से सम्बद्ध एक अमरीकी एडमिरल के १९४९ में लिखे गए उपर्युक्त शब्द बिल्कुल सच निकले और फिर भी बड़े राष्ट्र कुछ सीखने से इन्कार करते हैं। जो कुछ हो चुका है उस से जो एकमात्र सही नतीजा निकाला जा सकता है वे उस पर पहुंचने से बराबर इंकार करते हैं बल्कि उससे उलटा नतीजा ही निकालते हैं। बुराई की भी कैसी जबर्दस्त शक्ति है और भाग्य का कैसा दुर्निवार चक्र है! मैंने कुछ दिन पहले अपने भाषण में जब हिरोशिमा और नागासाकी पर अणुबम गिराने के कारणों के बारे में अपने विचार व्यक्त किए थे तो मुझे अपने मत की पुष्टि के लिए अमरीकी सैनिक कार्यालय अध्यक्ष के इन विचारों का पता तक न था।

गौ के प्रति 'बारह निर्दयताएँ'

भारतवर्ष में गो जाति के साथ अनेकों प्रकार से निर्दयता का व्यवहार हो रहा है। इनमें ये बारह मुख्य हैं :—

१ लोभवश कसाई के हाथ गाय बेचना। यह बड़ा ही नीच कर्म है और इसमें निर्दयता भरी है।

२ गायों के अंग पर अंग जोड़कर उन्हें अधिक अंग वाली बनाकर लोगों को ठगना और गायों को कष्ट देना।

कुछ नीच प्रकृति के स्वार्थी लोग बड़े २ शहरों में तीर्थों में, मेलों के अवसर पर ऐसी गाय या बैल को लिये फिरते हैं, जिनके पुट्ठे पर या कमर पर पांचवा पैर लटका करता है, या जीभ की शक्ल की कोई चीज होती है। ये लोग मुसलमान होते हैं और हिन्दू साधुओं के वेष में घूमा करते हैं। गाय को खूब सजा कर रखते हैं और घंटी बजा बजाकर भोले भाले नर-नारियों को 'पांच पैर की गोमाता की पूजा कीजिये, 'महादेव जी के मन्दिर के नन्दियों के दर्शन कीजिये,' आदि कह कहकर ठगते हैं। गाय या बैल जब छोटी उम्र के होते हैं तभी किसी मरे जानवर की या दूसरे जानवर को मारकर उसकी टांग या अन्य कोई अंग काट लेते हैं, और उसे उस गाय या बैल के शरीर पर केश काट कर सी देते हैं। कुछ दिनों में मांस बढ़ जाता है और नये केश जम जाते हैं, तब वह दिखाई नहीं दीखती। जिस पशु की टांग काट कर मारते हैं, उसको तो महान् कष्ट होता ही है, पर जिसके शरीर पर नया अंग जोड़कर सीते हैं उसको भी कम कष्ट नहीं होता। पर बेचारे मूक पशु किससे कहें ? ये लोग वस्तुतः पेशेवर ठग होते हैं और होते हैं बड़े ही निर्दयी। इन लोगों को पैसा देना बड़ी भूल है।

३. बछड़े बछियों को उनके पोषण के लायक उचित मात्रा में दूध न देना।

४. गाड़ियों में इतना बोझ लादना कि बैल चल ही न सकें। फिर ऊपर से उनको बुरी तरह से मारना यह दर्दनाक नजारा शहरों की बड़ी २ सड़कों पर आप नित्य ही देख सकते हैं।

५. बैलों को हांकते समय उन्हें बुरी तरह मारना। किसी किसी प्रान्त में तो इतनी निर्दयता होती है कि रथ या गाड़ी के बैलों को जिस डंडे से हांकते हैं, उसकी अगली नोक पर तीखी धार वाली लोहे की नुकीली आरी लगी होती है, जिसकी चोट से उनके खून बहने लगता है। मर्मस्थल पर चोट लग जाती है तो पशु मर भी जाते हैं।

६. तीर्थों में पण्डे लोग पौष, माघ के भयानक जाड़ों में भी छोटी छोटी नाताकत गरीब बछियों को जल में खड़ी रखते हैं, और यात्री लोगों को उनकी पूंछ पकड़ा कर कुछ पैसे लेकर गोदान का संकल्प करा देते हैं। न यात्रियों के पास गौ होती है और न गो दान ! पण्डे पैसों के लालच से ऐसा निर्दय कांड करते हैं, बछड़ी घंटों तक सरदी से काँपती हुई जल में खड़ी रहती है। अबोध यात्री वैतरणी तरने के धोखे इस निर्दय कार्य में सहायता करते हैं।

७. गायों को कसाइयों के हाथ बिकवाने के लिये दलाली करना। गाय, बैल, बछड़े आदि को कसाई खाने पहुंचाने के लिये बहुत से दलाल होते हैं। आज कल तो इनकी संख्या बहुत बढ़ गई है। इनमें मुसलमान तो होते ही हैं, निम्न जाति के हिन्दू भी लोभवश ऐसा घृणित काम करने में नहीं हिचकते। ये लोग तरह तरह से गायों का नाश करवाते हैं— कस्टम वालों से पुलिस से तथा चरवाहों से मिलकर पशुओं की चोरी करवाते हैं। 'बड़े ही धर्मनिष्ट जमींदार के घर पशु जायेंगे' ऐसा विश्वास दिलाकर तथा पैसों का अधिक लालच देकर मालिकों से अथवा गोशालाओं से पशुओं को खरीद लेते हैं। इस के

साहित्य-समीक्षा

सफल जीवन

(हिन्दी मासिक)

सम्पादक—श्री दीनानाथ सिद्धान्तालंकार
कुमारी कमला गोयल
श्री अरविन्द मालवीय

वार्षिक चन्दा ७)

६४ बेयर्ड रोड पो० बा नं० ३१६
नई दिल्ली।

हिन्दी भाषा में 'माडर्न रिव्यू' या 'इंडियन रिव्यू' के समान ज्ञान वर्द्धक, सुरुचिपूर्ण विविध विषयों की सामग्री से परिपूर्ण मासिक पत्र का प्रायः अभाव रहा है। इस दिशा में वर्तमान में 'सफल जीवन' का प्रथम प्रयास है। इसमें प्रतिमास संस्कृति, अर्थशास्त्र, वाणिज्य, उद्योग, शिक्षा, राजनीति, विज्ञान, खेल, समाज सुधार, साहित्य, कविता, कला सामान्य ज्ञान आदि २ प्रायः सभी प्रचलित विषयों पर चुनी हुई, स्त्री पुरुष, आबाल वृद्ध सभी के उपयोग और रुचि की पठनीय सामग्री उपलब्ध होती है। पत्र के सम्पादन में पग २ पर सम्पादक मंडल की योग्यता और परिश्रम शीलता प्रति लक्षित होती हैं।

रघुनाथप्रसाद पाठक

अतिरिक्त ये लोग चमड़े के व्यापारियों से ऊंचे दाम पर निश्चित समय के अन्दर निश्चित संख्या में गौओं का चमड़ा देने का कंट्राक्ट करके उनसे पेशगी रुपये ले लेते हैं। फिर कसाई और चमारों से मिलवा कर उनके द्वारा घासों या चारे दाने में जहर मिलवा कर चुपचाप मौके से गौओं को खिला देते हैं। या इन जहरीली चीजों को ऐसी जगह बिखेर देते हैं, जहां गौएं चरती हैं। गौओं के शरीर पर कोई घाव होता है तो उसमें विष लगा देते हैं। चरवाहों से मिलकर छुरी, तेज भाले आदि में जहर लगाकर गायों के शरीर में चुभो देते हैं। ऐसी चीजें खिला देते हैं जिन से पशुओं में छूत की बीमारी फैल जाती है छूत की बीमारी से मरे हुए पशुओं की अंतड़ी मांस आदि को गायों के चरने के स्थान में डाल देते हैं। इस प्रकार कई तरह से गायों का नाश करते हैं। इसी से पुलिस विभाग में यह शिक्षा दी जाया करती है कि जहां गौओं में छूत की बीमारी फैली हो या गौएं अधिक संख्या में मर रही हों, वहां देखना चाहिये कि आस पास में कौन लोग ठहरे हुये हैं। ये लोग तरह तरह के वेषों में रहा करते हैं. ये बड़े ही क्रूर हृदय और घोर स्वार्थी लोग होते हैं। गो-वंश नाश के कारणों में इनका अस्तित्व भी एक प्रधान कारण है।

८. गाय को भर पेट चारा दाना खाने को न देना इस पर बहुत लेख छपे हैं।

९. हल में कमजोर या बे मेल बैलों को जोत कर उन पर डंडे चलाना। शास्त्रों में तो दो बैलों से हल जोतना ही पाप बतलाया गया है, फिर यदि वे कमजोर या बे मेल हों और ऊपर से मारे जाते हों, तब तो ऐसा करने वाले प्रत्यक्ष ही निर्दयता का भयानक पाप करते हैं।

१०. कुछ भी व्यवस्था किये बिना बछड़े को दागकर असहाय छोड़ देना, और ऐसे वृषोत्सर्ग से स्वर्ग-प्राप्ति की कामना करना।

११. अपनी और परायी गायों को बुरी तरह से मारना। परायी गाय के खेत के पास आते ही किसान और सरकारी काजीहाउसों में सरकारी सुव्यवस्था से भूखों मरती हुई गायों को वहां के रक्षक जिस निर्दयता से मारते हैं उसे देखा नहीं जाता।

१२. निकम्मी और कमजोर गौ का दान करना निकम्मी गौ जिसको दान की जाती है, वह उसे जो कुछ मिलते हैं उन्हीं पर बेच देता है। और निकम्मी होने के कारण वह किसी रूप में कसाई के हाथ में पहुँच जाती है। कई जगह तो लोग गोशालाओं को रुपये दो रुपये देकर भाड़े पर गौ ले आते हैं और दान का तमाशा पूरा हो जाता है। (संकलित)

कर्म्म मीमांसा

(लेखक—श्री आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री कन्या गुरुकुल पोर बंदर)

मूल्य २) रुपये

मैंने श्री० आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री कृत "कर्ममीमांसा" नामक पुस्तक को अतीव गंभीर भावना से पढ़ा है। आचार्य जी की यह कृति अपने स्वर्गीय प्रिय पुत्र मेधातिथि जी के स्मारक रूप में है। आचार्य जी सामवेद भाष्यकार तथा अन्यान्य सैद्धान्तिक ग्रन्थों के भी निर्माता हैं। आपने उक्त "कर्ममीमांसा" पुस्तक को द्वादश भागों में विभक्त किया है और उन भागों को "सोपान" का नाम दिया है। प्रथम सोपान में विषय-पीठिका लिखी है। उसमें जड़ प्रकृति के परिवर्तित रूपों को चेतनाश्रित सिद्ध करके अनीश्वर वादियों के प्रकृति प्रवर्त्तक कुतर्कों का सैद्धान्तिक और सर्व संमत तर्कों से रोचक निराकरण किया है जिनके पठन और मनन से अग्रिम सोपानों के अध्ययन की अभिरुचि उत्पन्न हो जाती है और वह आत्मजिज्ञासुओं को विवश कर देती है कि वे अवशिष्ट सोपानों को पढ़ें। ज्यों २ जिज्ञासु अग्रिम सोपानों पर चढ़ता जाता है त्यों २ उसे और ऊपर चढ़ने की भावना बाध्य करती जाती है कि वह अन्तिम सोपान पर चढ़ कर पार पहुंचे। अध्यात्मविषय अत्यन्त गहन वस्तु है सही पर उसे आचार्य जी ने व्यवहार्य उदाहरणों तथा सर्वग्राह्य सरल तर्कों से आकर्षक तथा रोचक बना दिया है जिससे उक्त पुस्तक आत्मजिज्ञासुवों के अतिरिक्त सर्व साधारण धर्माभिलाषियों के लिए भी उपयोगी बन गया है। यह पुस्तक पाश्चात्य आत्मवादियों तथा अनात्मवादियों को भी सोपान का काम दे सकता है। जैसे सोपान हमें निचाई से ऊंचाई की ओर पहुँचाता है या जैसे हम प्रति पद पर सोपान द्वारा निचाई से दूर और ऊंचाई के निकट पहुँचते जाते हैं वैसे ही यह पुस्तक हमें उत्तरोत्तर सोपानों के द्वारा प्राकृतिक बन्धनों से दूर और आत्मसाक्षात्कार के निकट पहुँचाने में समर्थ है। मैं समझता हूं कि यह पुस्तक सर्व साधारण को अध्यात्मोन्नति के पथ पर ले आने में सोपान का कार्य देगा ऐसी मेरी धारणा है। जैसे वर्ष का द्वादशवां मास चैत्र सर्व प्रकार के अन्नों को पका कर प्राणी मात्र के हर्षोल्लास का कारण बनता है ठीक उसी प्रकार "कर्ममीमांसा" का द्वादशवां सोपान जिसमें "कर्म और मानव के अन्तिम उद्देश्य की पूर्त्ति" का वर्णन किया गया है मानव को अन्तिम लक्ष्य को प्राप्ति कराने में सहायक हो सकता है। "नरत्वंदुर्लभंलोके" इस वाक्य में वर्णित दुर्लभ नरत्व ही परम दुर्लभ अमरत्व को प्राप्त कर पाता है। परन्तु उसका मूल ज्ञानोत्पादक कर्म ही है। यह सिद्ध करते हुवे अन्तिम द्वादशवें सोपान को समाप्त किया गया है जो तर्कानुमोदित सर्वतन्त्र सिद्धांत है। अन्ततो गत्वा मैं यह स्पष्ट कर देना अपना कर्त्तव्य समझता हूं कि यह पुस्तक वस्तुतः कर्म के मीमांसन का वास्तविक स्वरूप है और उपयोगी है। मैं अध्यात्मवादियों तथा अनाध्यात्मवादियों को इस पुस्तक के पढ़ने की प्रेरणा करता हूं। अनाध्यात्मवादियों को इसलिये कि उन्हें इसके अध्ययन से आत्मबोध होगा और अध्यात्मवादियों को इसलिए कि वे कार्मिक परिचर्याओं की वास्तविकता का ज्ञान प्राप्त करके अपने अन्तिम लक्ष्य की ओर अग्रसर होंगे इत्यादि। आचार्य जी ने विषयानुरूप इस पुस्तक का नाम चुना है और नामानुरूप वाक्य विन्यास किया है। प्रयोजन यह कि यह पुस्तक सर्व प्रकार से उपयोगी है इसे पढ़ कर लाभ उठाना

(शेष पृष्ठ १९३ पर देखें)

आर्य समाज के इतिहास की प्रगति

आर्य समाज गनकेरिज फैक्टरी क्वार्टर्स जबलपुर मध्यप्रदेश व विदर्भ

स्थापना—१ वैसाख १९६५ वि० तदनुसार आर्य सम्वत्सर १९७२९४९००८

सन् १९०४ ई० में जब गनकैरिज फैक्टरी फतेहगढ़ (उत्तर प्रदेश) एवं कुलाबा बाम्बे से जबलपुर लाई गई तो बहुत से सज्जन जो उक्त फैक्टरियों में काम करते थे जबलपुर आये उनमें से बम्बई से आने वाले सज्जनों में श्री महाशय शंकरलाल जी, महाशय लेखराज जी शर्मा, श्री कालीचरण जी शर्मा महाशय लक्षमण प्रसाद जी मिश्र, महाशय देवी प्रसादजी महाशय हरीराम जी थे। फतेहगढ़ से आने वाले सज्जनों में महाशय बलदेव प्रसाद जी वर्मा महाशय परशादी लालजी झा, म० पुत्तूलाल जी झा, म० बबू राम जी झा, आदि थे। ये सब लोग उत्तर भारत के थे और आर्य विचार के थे। इन लोगों ने सन् १९०६ में आर्य समाजी सज्जनों में संगठन किया और सन् १९०८ ई० तदनुसार १ वैसाख १९६५ वि० को आर्य समाज गनकैरिज फैक्टरी क्वार्टर्स जबलपुर की स्थापना की। आर्य समाज के साप्ताहिक अधिवेशन के लिये फैक्टरी की ओर से नई लाइन में क्वार्टर्स फ्री दे दिया गया था जहां अधिवेशन हुआ करता था और मुसलमान धर्मावलम्बियों के लिये भी एक क्वार्टर नमाज के लिये दिया गया था क्योंकि उस समय जी० सी० एफ० स्टेट में कोई मन्दिर अथवा मसजिद नहीं थी। सन् १९१९ में जी० सी० एफ० स्टेट में एक आर्य पुत्री पाठशाला खोली गई जो कि सन् १९३१ तक चलती रही। इसके पश्चात् धनाभाव के कारण बन्द कर दी गई। सन् १९२४ में पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी का जबलपुर आना हुआ तो उनके व्याख्यान का प्रबन्ध जी० सी० एफ० स्टेट में श्री किन्दर की बगिया के निकट किया गया। जी० सी० एफ० स्टेट के अंग्रेज अफसर से आज्ञा प्राप्त कर ली गई परन्तु जैसे ही व्याख्यान प्रारम्भ होने वाला था वैसे ही उक्त अफसर मि० ए० सैमसन कमिश्नरी आये और अपने आज्ञा पत्र को रद्द करके व्याख्यान बन्द करा दिया। उन्होंने कुछ मुसलमान लोगों के शिकायत करने पर ऐसा किया था। आर्य समाजी भाइयों ने उसी समय टेबल कुर्सी बिस्तरे आदि जी० सी० फैक्टरी स्टेट के बाहिर म्यूनीसिपल एरिया पूर्वी घमापुर में लेजाकर लाला बांकेलालजी खत्री के मकान के सामने व्याख्यान का प्रबन्ध किया और स्वामी जी का बहुत जोरदार भाषण हुआ। मि० ए० सैमसन भी व्याख्यान सुनने आये। स्वामी जी ने अपने व्याख्यान में अंग्रेज जाति को खूब फटकारा जिस पर कमिश्नरी साहब खेद प्रगट करते हुये चले गये। उन्होंने लोगों से कहा कि मैं तो समझता था कि यह गेरुआ कपड़े पहिनने वाला एक मामूली अन्य भिकमंगे साधुओं के समान होगा परन्तु ये साधू बड़ा विद्वान है क्योंकि उक्त अफसर से और स्वामी जी से अंग्रेजी में देर तक वार्तालाप हुआ था। इसके पश्चात् जहां पर व्याख्यान हुआ था वह मकान आर्य समाज के प्रधान महाशय लक्षमण प्रसाद जी मिश्र के नाम से श्री महाशय बांकेलाल जी खत्री से २००) दो सौ रुपया में ता० २८ नवम्बर सन् १९२४ ई० को खरीद लिया गया और ३ अप्रैल सन् १९२६ ई० यह समाज आर्य

प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ में प्रविष्ट हुआ तथा दो फरवरी सन् १९३२ ई० को मन्दिर की रजिस्ट्री आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ के नाम करा दी गई। सन् १९३५ में मन्दिर के पीछे की भूमि खरीद कर आर्य समाज मन्दिर का पुनरुद्धार (पुनः निर्माण) किया गया।

ओ३म् ब्रह्मणो द्वितीय प्रहरार्द्धे बाराह कल्पे मन्वन्तरे वैवस्वते अष्टाविंशति तमे कलियुगे कलि प्रथम चरणे सं० १९९२ विक्रमे १८५७ शाके मार्ग शीर्ष मासे शुक्ल पक्षे १३ याम् तिथौ रविवासरे विदर्भ प्रदेशयोः आर्यप्रतिनिधि सभायाम् प्रधान पद्मलांकुर्वता दुर्ग निवासिना बी० एस० सी० एल० एल०बी०एमएल०ए० आदि उपाधि विभूषितेन श्री घनश्यामसिंह गुप्ते कृतः शिलान्यास :

सृष्टि सम्वत १९७२९४९०३५ सौर्य सम्वत २३ मार्ग शीर्ष ११० दयानन्दाब्द तदनुसार ८ दिसम्बर १९३५ ई० को श्री घनश्यामसिंह जी प्रधान आर्यप्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश के कर कमलों द्वारा मन्दिर का शिलान्यास हुआ। फोटू भी ली गई और सन् १९३६ में मन्दिर के नीचे का भाग बनवाकर जिसमें दो दुकानें तथा दो दो कोठे थे दुकानें किराये पर दे दी गईं। आर्य समाजके अधिवेशन के लिये ऊपरी भाग पर एक बड़ा वरंडा काम चलाऊ बना दिया गया जहां अधिवेशन हुआ करता है। सन् १९५० में कुछ जमीन मन्दिर के पीछे की खरीदकर दो क्वाटर बनवा दिये गये और उन्हें किराये पर दे दिया गया प्रत्येक क्वाटर में दो कोठे एक बड़ा आंगन टट्टी तथा नहानी आदि हैं मन्दिर का ऊपरी भाग बनने को अभी बकाया है आशा की जाती है कि निकट भविष्य में बनेगा।

हैदराबाद सत्याग्रह

आर्य समाज गन केरिज फैक्टरी क्वार्टस जबलपुर की ओर से धन इकट्ठा करके सार्वदेशिक सभा को भेजा गया तथा समय समय पर आने वाले सत्याग्रहियों का स्वागत किया गया जिस पर सामयिक फैक्टरी के अंग्रेज सुपरिटेन्डेन्ट मि० नेल्सन ने एतराज किया और आर्य समाज के प्रधान श्री ई० स० सिंह जी को बुलाकर कहा कि तुम सरकारी कर्मचारी होकर राजनैतिक मामलों में भाग लेते हो। उन्होंने बड़े गर्व के साथ उत्तर दिया कि हैदराबाद सत्याग्रह राजनैतिक आन्दोलन नहीं है। हमारा आन्दोलन भारत सरकार के विरुद्ध नहीं है। हमारा धार्मिक आन्दोलन हैदराबाद रियासत के विरुद्ध है जहां हमें अपने धार्मिक कार्य करने की भी स्वतन्त्रता नहीं है ब्रिटिश भारत में कहीं भी धार्मिक कार्यों पर ऐसी रोक नहीं है जैसी कि हैदराबाद में है। इस समाज के तीन सभासद १—श्री मुकुट बिहारीलाल जी सुपुत्र श्री नन्दलाल जी झा २—श्री साधुराम जी सुपुत्र बिन्द्रावन जी ३—सीताराम जी सत्याग्रह में गये और जब सत्याग्रह समाप्त हुआ तो तीनों सज्जन अपनी अपनी जगहों पर ले लिये गये परन्तु कुछ मुसलमान लोगों के शिकायत करने पर फैक्टरी की नौकरी से पृथक् कर दिये गये जिस पर आर्य समाज जबलपुर की ओर से एक डेपुटेशन सुप्रिन्टेन्डेन्ट साहिब से मिलने के लिये प्रार्थना पत्र भेजा गया परंतु सुप्रिन्टेन्डेन्ट महोदय ने मिलने से इनकार कर दिया और कहा कि हमारे स्टेट में कोई आर्य समाजी नहीं है जिस पर सन् १९४१ की जन गणना में आर्य समाज जी० सी० फेक्टरी क्वाटर्स की ओर से आर्य लिखाने के लिये विज्ञापनों द्वारा जनता से अपील की गई और हजारों की तादाद में आर्य लिखे गये।

सन् १९२५ ई० मथुरा में जन्म शताब्दी के अवसर पर इस समाज के महाशय ईश्वरी प्रसाद जी गये थे और सन् १९३४ में अजमेर में अर्द्ध शताब्दी के अवसर पर भी सम्मिलित हुये थे। आप आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ की ओर से सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के सदस्य भी रहे हैं और आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश के उपप्रधान उपमंत्री एवं भूसम्पत्ति विभाग के अधिष्ठाता भी रहे हैं।

(शेष पृष्ठ १४३ पर देखें)

सार्वदेशिक सभा के भूतपूर्व मन्त्री का विनम्र वक्तव्य

३ वर्ष की सेवा के पश्चात् मैं १ मई ५५ को सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री पद से विमुक्त हो गया हूं। श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज ने १९५२ में इस सेवा के लिए पसन्द कर लिया चाहे मुझ में कोई विशेष गुण न था। श्री स्वामी जी महाराज की मुझ पर सदा कृपा दृष्टि रही। वे मेरे सूर्य थे और मैं उनका समुद्र जल। उन्होंने मुझे बहुत ऊंचा उठाकर हिमालय की चोटी पर बिठलाया और आर्य समाज के क्षेत्र का अपनी सामर्थ्यानुसार सिंचन करता रहा। जो कुछ सेवायें मैं कर पाया हूँ उसकी गणना न करके केवल इतना लिखता हूँ कि यह सब आर्य जगत् के सामने है। जो मैं नहीं कर पाया हूं उसके लिए परिस्थितियों पर भार न डालकर अपना उत्तरदायित्व स्वीकार करता हूँ। अब भी मेरे लिए यदा कदा जो सेवा लगाई जायगी मैं उससे मुंह न मोड़ूंगा और सेवक का भाव बनाए रखूंगा।

कविराज हरनामदास बी. ए.

(पृष्ठ १४२ का शेष)

आर्य समाज के इतिहास की प्रगति

और आप इस समाज के वयोवृद्ध कर्मठ उत्साही पुराने सदस्य हैं और वर्षों आपने वैदिक धर्म की सेवा की है।

पदाधिकारियों के नाम

सन् १९०८ से लेकर सन् १९३० तक के अधिकारियों का विवरण अप्राप्त है।

	प्रधान	मन्त्री
१९३१-३२	परशादीलाल झा	दुलारेलाल झा
१९३३	शंकरलाल मिश्र	श्रीराम शर्मा
१९३४	परशादीलाल जी	श्रीराम शर्मा
१९३५	बिहारीलाल सेठी	बाबूराम झा
१९३७	बिहारीलाल सेठी	श्रीराम शर्मा
१९३८	ई० स० सिंह जी	बलदेवसिंह जी सैनी
१९३९	ई० स० सिंह जी	श्रीराम शर्मा
१९४१-४२	दीनानाथ जी आनन्द	बाबूराम झा
१९४३-४४	दीनानाथ जी आनन्द	बाबूराम झा
१९४५	श्री भगवान दत्त शर्मा	छकौड़ीलाल वर्मा
१९४६	श्री भगवान दत्त शर्मा	छकौड़ीलाल वर्मा
१९४७	श्रीराम शर्मा	बलदेवसिंह सैनी
१९४८	,,	,,
१९४९	,,	,,
१९५०	श्री बलदेवसिंह जी सैनी	गुरबख्शलालजी
१९५१	,, राम सहाय शर्मा	बाबूराम झा
१९५२	,, बाबूराम झा	मणिसिंह चन्देल
१९५३	,, बाबूराम झा	मिट्ठूलाल झा
१९५४	,, ई० स० सिंह जी	कश्मीरीलाल गुप्त

(सोहनलाल)
मन्त्री की अनुपस्थिति में)

(पृष्ठ १४० का शेष)

कर्म मीमांसा

चाहिये॥ मुझे इस पुस्तक में यह बात अवश्य खटकी कि आचार्य वैद्यनाथ जी जैसे तत्वज्ञ व्यक्ति ने भाषा के वैयाकरणों के मतानुकूल सर्वत्र "आत्मा" और "पुस्तक" शब्द का स्त्रीलिंग में प्रयोग किया है। संस्कृत साहित्यानुसार "आत्मा" पुल्लिंग वाचक है और पुस्तक तृतीया विभक्ति से पुल्लिङ्ग सदृश है इसलिये इनका प्रयोग पुरुष वाचक होना चाहिये मेरा ऐसा परामर्श है। उदाहरणार्थ ३५ पृष्ट पर "इसी उद्देश्य से आत्मा इस दृश्य के देखने में प्रवृत्त होती है" तथा "दृश्य को देखती हुई आत्मा" इत्यादि। संभव हो सकता है कि उक्त त्रुटियां मुद्रकों की भूल का परिणाम हों। —लोकनाथ तर्क शिरोमणि

सार्वदेशिक सभा

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का वार्षिक अधिवेशन १-५-५५ को देहली में हुआ

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का वार्षिक साधारण अधिवेशन १ मई १९५५ को श्रीयुत स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती के प्रधानत्व में श्रद्धानन्द बलिदान भवन देहली में हुआ। भारत के सभी प्रदेशों के प्रमुख २७० आर्य नेताओं और विद्वानों ने प्रतिनिधि सदस्य के रूप में भाग लिया जिनमें श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति, श्री नरदेव जी स्नातक, एम. पी. श्रीयुत पं० रामचन्द्र जी देहलवी, श्रीयुत विजय शंकर जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई, श्रीयुत मिहिरचन्द्र जी, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल आसाम, श्रीयुत डा० महावीर सिंह जी, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यभारत, श्रीयुत शिवशंकर जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यभारत, तथा भूतपूर्व मुन्तज़िम जागीरदारान ग्वालियर राज्य सदस्य पब्लिक सर्विस कमीशन ग्वालियर राज्य, श्रीयुत प्रो० इन्द्रदेव सिंह जी एम० एस सी०, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश, श्रीयुत नरेन्द्र जी एम. एल. ए., प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद राज्य श्रीयुत भगवती प्रसाद जी—मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान, श्रीयुत पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट-प्रधान तथा श्रीयुत कालीचरण जी मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश, श्रीयुत चरणदास जी ऐडवोकेट, उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, श्रीयुत यशःपाल जी सिद्धान्तालंकार अधिष्ठाता वेद प्रचार विभाग आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, श्रीयुत डा० डी० राम जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार तथा प्रिन्सिपल मैडिकल कालेज पटना, श्रीयुत वासुदेव जी उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार, श्रीयुत आचार्य रामानन्द जी—मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार, श्रीयुत पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार, श्री युत भीमसेन जी विद्यालंकार श्रीयुत प्रकाशवीर जी शास्त्री, श्रीमती माता लक्ष्मी देवी जी आचार्या कन्या गुरुकुल हाथरस, श्रीयुत आचार्य भगवानदेव जी, श्रीयुत प्रो० महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री, प्रिन्सिपल डी० ए० वी० कालेज, लखनऊ आदि २ के नाम उल्लेखनीय हैं।

दर्शक के रूप में श्रीयुत माननीय विनायक राव जी विद्यालंकार बार एट ला, वित्त-मन्त्री हैदराबाद राज्य भी कुछ समय के लिये उपस्थित रहे।

आगामी वर्ष के लिये पदाधिकारियों के निर्वाचन के समय सभा के प्रधान श्रीयुत स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज ने अपने इस ध्रुव निश्चय की घोषणा की कि संन्यास आश्रम में दीक्षित होने के कारण प्रबन्ध सम्बन्धी उत्तरदायित्वों से पृथक् होकर ही समाज की सेवा करेंगे। नवम्बर ५४ से इस समय तक अन्तरंग के विशेष अनुरोध पर ही वे इस चुनाव तक सभा के प्रधान बने रहे यद्यपि दायित्व श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति पर कार्यकर्ता प्रधान के रूप में रहा।

श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति आगामी वर्ष के लिये प्रधान निर्वाचित हुये। अन्य पदाधिकारियों के नाम इस प्रकार हैं:-

उपप्रधान—१-श्रीयुत डा० डी० राम जी, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार

२- ,, घनश्यामसिंह जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश

(शेष पृष्ठ १४६ पर)

आर्य समाज का भावी कार्यक्रम

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली की साधारण सभा दिनांक १-५-५५ द्वारा निर्धारित तथा प्रसारित आर्य समाज का भावी कार्यक्रम

(१) आन्तरिक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा समस्त प्रदेशीय प्रतिनिधि सभाओं व उनसे सम्बन्धित आर्य समाजों का ध्यान निम्न लिखित बातों की ओर आकर्षित करती है और आदेश देती है कि अपनी भावी कार्यप्रणाली में उनका ध्यान रखें।

१—वेदी की पवित्रता आवश्यक है अतः आर्य समाज की वेदी से मुख्यतः महर्षि दयानन्द के सिद्धांतों का ही प्रचार हो अन्य किसी संस्था का नहीं।

ख—आर्य समाज की वेदी से सिद्धांत विरोधी बात न कही जाये और सुयोग्य उपदेशकों को ही वेदी पर बैठने की प्रमुखता दी जाये।

ग—आर्य समाज मन्दिर में वा आर्य समाज की किसी शिक्षा संस्था या इमारत में नाटक आदि खेल तमाशे कदापि न करने दिये जायें।

२—आर्य समाज की वेदी से सत्संगों और सार्वजनिक सभाओं में प्रबन्ध सम्बन्धी आलोचनायें न की जायें। प्रबन्ध सम्बन्धी त्रुटियों पर विचार आवश्यक हो तो त्रुटियां अन्तरंग सभा के सम्मुख प्रस्तुत की जाया करें।

३—साप्ताहिक सत्संगों को रोचक बनाने के लिये पूर्व से निश्चित कार्यक्रम के अनुसार कार्य किया जावे।

४—प्रचार की सफलता के लिये आवश्यक है कि आर्य समाज का प्रत्येक सदस्य अपने परिवार में आर्य धार्मिक क्रियाओं को प्रचलित करें और इस प्रयोजन के लिये परिवार सहित साप्ताहिक सत्संगों में सम्मिलित हुआ करें।

५—जन्म की जातपात को समाप्त करने के लिये आर्य समाज की वेदी से तीव्र आन्दोलन किया जाये।

(ख) अपना व अपने सन्तान का गुण कर्मानुसार विवाह करने वाले आर्य सदस्यों का प्रत्येक समाज में नियमित लेखा रखा जाये।

(ग) आर्य समाज के अधिकारियों की योग्यता का एक आधार वैदिक वर्ण व्यवस्था का क्रियात्मक किया जाना भी माना जाया करे।

(२) जन सम्पर्क

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा समस्त प्रदेशीय प्रतिनिधि सभाओं व उनसे सम्बन्धित आर्य संस्थाओं का ध्यान निम्नलिखित आवश्यक कार्यक्रम की ओर आकर्षित करती है :-

१-गोरक्षा का आन्दोलन तीव्रगति से प्रचलित रखा जाये और गोपालन का क्रियात्मक प्रचार किया जाये।

२-ईसाइयों के अराष्ट्रीय तथा वैदिक संस्कृति विरोधी प्रचार से भारतीय जनों की रक्षार्थ क्रियात्मक उपाय प्रयोग में लाये जायें।

३—शुद्धि आन्दोलन को तीव्र किया जाये।

४—चरित्र निर्माण सम्बन्धी आन्दोलन अधिक तीव्रता से संचालित किया जाये जिससे देश में से भ्रष्टाचार व अन्य बुराइयां दूर हो सकें और स्वराज्य प्राप्ति के साथ साथ सुराज भी हो सके। इस आंदोलन को सफल बनाने के लिये आर्य सभासदों व

आर्य कार्यकर्त्ताओं को इस कार्य पर विशेष बल देना चाहिये और आर्य समाजों से यह भी अनुरोध है कि आर्य सभासदों की सूची बनाते समय सदाचार सम्बन्धी नियमों पर विशेष ध्यान रखें।

५—विद्यार्थियों में अनुशासन की भावना उत्पन्न करने पर बल दिया जाये।

६—सह शिक्षा (बालक बालिकाओं का साथ २ शिक्षा प्राप्त करना) ऋषि दयानन्द द्वारा प्रदर्शित वैदिक मर्यादाओं की विरोधी है अतः सह शिक्षा आर्य संस्थाओं में प्रचलित न की जाये। आर्य पुरुषों से अनुरोध है कि वे बालकों को सह शिक्षा वाले विद्यालयों में प्रविष्ट न करें।

७—आर्य शिक्षा संस्थाओं में जो आर्यत्व का अभाव देख पड़ता है उसे दूर करके उन्हें वास्तविक आर्य संस्थाओं का रूप दिया जाये।

८—आर्य समाज की शिक्षा संस्थाओं तथा गुरुकुलों, महाविद्यालयों, स्कूलों और कालेजों आदि में पाठ्यक्रम, परीक्षाशैली आदि की दृष्टि से एकरूपता लाने के लिये पग उठाया जाये और इस कार्य की एक विशेष योजना तैयार की जाये।

(३) प्रचार विधि

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा प्रदेशीय सभाओं का ध्यान वैदिक धर्म प्रचार की निम्न बातों की ओर आकर्षित किया जाता है :—

(१) साहित्य निर्माण तथा प्रकाशन

१—वेदों की शिक्षा को अधिक सरल प्रभावोत्पादक और मनोवैज्ञानिक रूप देने वाले वैदिक साहित्य का प्रकाशन किया जाये।

२—आर्य सिद्धान्तों की पुष्टि में तुलनात्मक दृष्टि से ग्रन्थ तैयार कराये जायें।

वैदिक अनुसंधान विभाग की स्थापना की जावे।

(२) प्रचारकों द्वारा प्रचार

१—प्रचारकों को नियुक्त करते समय उनके सिद्धान्त ज्ञान और व्यक्तिगत चरित्र पर विशेष ध्यान रखा जाये।

२—प्रचारकों का ध्यान आकर्षित किया जाये कि वे वेदी से वैदिक सिद्धान्तों के विरुद्ध प्रचार न करें।

३—उत्सवों की रूपरेखा इस प्रकार की बनाई जाये कि उनका रूप भीड़ भड़क्कों और मेलों का न रह कर गम्भीर प्रचार का हो।

४—आर्य समाज के सन्देश को ग्राम्य जनता तक पहुंचाने के लिये ग्राम प्रचार की ओर विशेष ध्यान दिया जाये।

५—ग्रामों में वैदिक धर्म प्रचार के लिये नियमित योजनानुसार कार्य प्रारम्भ कर दिया जाये।

(३) सम्मेलनों द्वारा

सार्वदेशिक सभा की ओर से वैदिक संस्कृति सम्मेलन किया जाये जिसमें ऋषि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित वैदिक संस्कृति के स्वरूप का निरूपण किया जाये और वर्तमान काल में अनेक विद्वानों द्वारा आर्य समाज सिद्धान्त विरोधी वैदिक साहित्य की व्याख्याओं का निराकरण करने की व्यवस्था की जाये।

(४) विदेश प्रचार

विदेश प्रचार का कार्य नियमित रूप से हाथ में लिया जाकर आगे बढ़ाया जाये।

१—निश्चय हुआ कि यह कार्यक्रम भ्रमण पत्रिका द्वारा आर्य समाजों को प्रेषित किया जाये।

२—प्रदेशीय सभाओं, आर्य समाजों और उपदेशकों को प्रेरणा की जाये कि इस कार्यक्रम को विशेषरूप से क्रियान्वित करें और इसकी प्रगति का नियमित विवरण प्रदेशीय व सार्वदेशिक सभाओं के कार्यालयों में रखा जाये।

* दक्षिण भारत प्रचार *

गदग में प्रभावपूर्ण कार्यक्रम

त्रिवेन्द्रम में अपना आयोजित कार्य-क्रम करने के पश्चात् गदग एवं गुलबर्गा से शुभ विवाह सम्पन्न कराने का आवश्यक स्नेहमय निमन्त्रण प्राप्त करके मैं सीधा मदुरा, कोयम्बटूर, मेट्टुपाल्यम् तथा ऊटी होते हुए १२ ता० को मैसूर पहुँचा और १३ ता० के साप्ताहिक सत्सङ्ग में भाषणादि करके तथा अन्य आवश्यक कार्य निबटा कर १४ को गदग के लिये रवाना हो गया। १५ को जब मैं वहां पहुँचा तो पता लगा १६ को गुलबर्गा से बारात आने वाली है। १६ ता० की मध्यान्ह गुलबर्गा से बारात आई। इसमें सभी आर्य विचारों के व्यक्ति थे और वस्तुतः विवाह सम्पन्न करना तो अपने लिये गौण विषय था आर्य-समाज का वातावरण बनाकर आर्य-समाज की स्थापना के लिये उपजाऊ भूमि बनाना मुख्य था। श्री पं० दत्तात्रेय जी वकील, श्री तुकाराम जी प्रधान आर्य-समाज तथा अन्य भी उत्साही सज्जन आए हुए थे। लड़के के पिता स्वयं आर्य विचारों के थे परन्तु परिस्थितियों से विवश होकर वैदिक रीति से विवाह होने की बात निश्चय नहीं कर पाए थे। अब उसका निश्चय करना तथा उसके लिए मनाना पण्डितों के कन्धों पर डाला गया। हमने भी सभी तरह से ठोक पीट कर देखा पर गढ़ टूटता नजर न आया। कन्या पक्षीय पण्डितों की दोनों हाथ लड्डू लेने की चाह थी। जब यह सब देखा तो हमने वैदिक विधि के महत्त्व प्रदर्शनार्थ अन्य आयोजन किए। प्रातः उठ कर प्रभात फेरी होने लगी। विवाह क्या था कोई जलसा करने आये थे। वरपक्ष के निवास पर यज्ञ व भाषण हुआ। कन्या पक्ष के भी लोग कुछ थे। रास्ता खुलता दिखाई दिया। पर बाधक-शक्ति और भी कठोर हो उठी। पुनः प्रभात फेरी, यज्ञ व भाषण का कार्य-क्रम अगले दिन भी रखा गया। इतने में इतना निश्चय हो गया कि विधि पौराणिक पण्डित करादें अर्थ मैं करदूंगा। दो बार यह क्रम चला कि अन्त में जाकर गुलबर्गा वाले जो हवनकुण्ड सामग्री तथा समिधा आदि लाए थे उनका भी क्रम आ पहुंचा और वैदिक विधि से पूर्ण यज्ञ व व्याख्या आदि सम्पन्न हो गई। गढ़ टूट चुका था। उसी दिन सायं कन्या पक्षीय व्यक्तियों ने अपने मन्दिर में मेरा भाषण रखा। "वेद और वैश्यधर्म" पर भाषण हुआ। काफी जनता थी। प्रभाव भी अच्छा रहा। बाधक शक्ति स्वयं प्रशस्ति लेकर प्रस्तुत हो गई। अगले दिन प्रातः फिर वही प्रभातफेरी हुई और वहीं वैदिक विधि से गृहप्रवेश कराकर विवाह की व्याख्या की गई। इस प्रकार जो वातावरण बनाना चाहते थे बन गया। अब वे व्यक्ति हमारे प्रचारार्थ सभी सुविधायें देने को उद्यत हैं।

हम सब का इतना प्रभाव रहा कि एक दानी महाशय ने अपील करने पर "गोकरुणानिधि" के कन्नड़ अनुवाद के प्रकाशन के लिये धन की सहायता करने का वचन दिया। तथा अन्य व्यक्तियों ने आर्योद्देश्यरत्न माला, वैदिक सन्ध्या हवन आदि पुस्तकों के प्रकाशनार्थ कागज आदि की सहायता देने का वचन दिया।

२३ ता० को प्रतिनिधि-प्रकाशन समिति की अन्तरङ्ग का अधिवेशन हुआ जिसमें १५ मार्च तक पूर्ण आय-व्यय-विवरण स्वीकृत हुआ। तदन्तर कुछ धन संग्रह भी किया गया।

मैसूर में आर्य-स्त्री समाज की स्थापना

आर्य-समाज मैसूर के पुरोहित श्री० पं० विश्व मित्र जी के प्रयत्नों से २५ ता० को आर्य-समाज स्थापना दिवस के शुभ अवसर पर सायं "गुणबाई

ब्रूत्र" में बद्ध होकर आर्य स्त्री समाज की स्थापना हुई। लगभग १२ सदस्याओं ने आवेदनपत्र भरा। अभी निर्वाचनादि नहीं किया गया क्योंकि इनको श्रद्धा है परन्तु सिद्धांत का ज्ञान नहीं। अतः कुछ दिन तक स्वयं काम कराकर सिद्धान्तों का ज्ञान हो जाने पर उन्हीं पर समस्त कार्यभार छोड़ने का विचार है। अभी तक तीन सत्सङ्ग हो चुके हैं। प्रति शुक्रवार को सायं यह सत्संग होता है। एक आर्य हिन्दी कन्या पाठशाला भी उसमें प्रारम्भ हो गई है। १४ के लगभग विद्यार्थी हैं।

मिलहल्ली—मैसूर जिले का यह एक ग्राम है। इसमें एक नामकरण संस्कार व भाषण का आयोजन हुआ। पुनरपि यज्ञ व भाषणार्थ निमन्त्रण प्राप्त हुआ है।

कनकपुरा—यह एक ताल्लुका है। मैसूर आर्य-समाज के भूतपूर्व उत्साही कार्यकर्त्ता श्री० धर्मराज जी यहां पर रहते हैं। यहां भी एक आर्य-समाज की स्थापना करने की योजना है।

प्रतिनिधि प्रकाशन समिति

(कन्नड़ भाषा)

सत्यार्थप्रकाशः—२५ फार्म अब तक छप चुके हैं। अर्थात् पुस्तक का लगभग पूर्वार्द्ध समाप्त हो गया। हमने पहले ही समस्त दानी महानुभावों से प्रार्थना की थी कि वचन का धन शीघ्र ही भिजवादें। परन्तु दौर्भाग्यवश उसमें विलम्ब होने के कारण अनावश्यक ही एक आघात सहना पड़ रहा है। कागज के दाम बढ़ गये हैं अत: पता नहीं कितने का अनावश्यक व्यय करना होगा। जैसी प्रभु की इच्छा।

व्यवहारभानु—कुल १००० प्रति छपी थीं। इनमें अब समिति के विक्रय विभाग में कुल २०० प्रतियां अवशिष्ट हैं। स्कूलों में पाठविधि में रखवाने का प्रयत्न चल रहा है।

वैदिक विवाह पद्धति—कुल १००० प्रति छपी थीं अब समिति के विक्रय विभाग में केवल ३० प्रति अवशिष्ट हैं। जिनको यह पुस्तक लेनी हो वे सीधे "प्रधान, आर्य-समाज गुलबर्गा" को लिखकर मंगाने की कृपा करें।

इनके अतिरिक्त गोकरुणानिधि, आर्योद्देश्यरत्न-माला तथा वैदिक यज्ञ पद्धति का अनुवाद भी प्रकाशित होने जा रहा है। आशा है इसी मास में प्रारम्भ हो जायेगा। वैदिक यज्ञ पद्धति कन्नडलिपि में मोटे अक्षरों में स्पष्ट लिखी होगी तथा इसमें सन्ध्या, दैनिक अग्निहोत्र, स्वस्तिवाचन, शान्ति प्रकरण सामान्य प्रकरण, आर्य पर्व पद्धति तथा हिन्दी व कन्नड के चुने हुए भजन होंगे। मूल्य बहुत ही कम रखने का विचार है। इसके प्रकाशनार्थ श्री नारायण लचमैया गम्पाजी ने कागज की तथा श्री रामशरण जी आहूजा व श्री मरिमधा जी ने धन की सहायता दी है उन सब को अतिशय धन्यवाद देते हैं। गोकरुणानिधि के प्रकाशनार्थ स्व० श्री वीरयअप्पाजी मुदगल ने १५०) एकसौ पचास रुपयों की सहायता दी है। हम उनके भी बहुत कृतज्ञ हैं।

इसी प्रकार अन्य भी बहुत सी पुस्तकों का अनुवाद व प्रकाशन होने जा रहा है। आशा है आर्य सज्जनों के हाथों से बोई हुई यह बेल बहुत जल्दी बढ़ेगी।

समिति का विक्रय विभाग खुल गया है। श्री पं० विश्वमित्र जी इसके अध्यक्ष हैं। पुस्तकों की सूची शीघ्र ही प्रकाशित की जावेगी।

सत्यपाल शर्मा स्नातक
दक्षिण भारत आर्यसमाज आर्गेनाईज़र
आर्य-समाज, मैसूर

* चयनिका *

नेहरू-टण्डन पत्र-व्यवहार

'भारतीय पशु परिरक्षण विधेयक १९५२' पर लोकसभा में विवाद हुआ और कांग्रेस दल द्वारा सचेतक जारी कर देने पर प्रस्ताव अस्वीकार हो गया। सचेतक जारी करने के सम्बन्ध में कांग्रेस के वयोवृद्ध नेता और संसद सदस्य श्री पुरुषोत्तमदास टंडन ने एक पत्र प्रधान मंत्री को लिखा जिसका उत्तर प्रधान मंत्री ने दिया। दोनों ही पत्र प्रकाशित कर दिये गये हैं। इन पत्रों को पढ़ जाने पर दो प्रमुख विचार सामने आते हैं। एक तो यह कि सचेतक का औचित्य स्वयं प्रधान मंत्री भी सिद्ध न कर सके। दूसरा यह कि प्रधानमंत्री कहने को तो गोवध बन्द करने के पक्ष में हैं, पर करने में कुछ और दिखायी देता है।

साधारण नियम यह है कि किसी विशेष विषय पर दल में विचार-विमर्श करके ही उसे दल का प्रश्न घोषित किया जाता है, उसके बाद ही सचेतक निकाला जाता है। पशु वध विरोध जैसे महत्वपूर्ण विषय को कभी कांग्रेस दल का प्रश्न घोषित नहीं किया गया। मतदान के दिन यदि सचेतक जारी न किया गया होता और प्रधानमंत्री ने त्याग-पत्र देने तक की धमकी न दी होती तो संभवतः वह प्रस्ताव अस्वीकृत न होता। यह स्पष्ट हो जाता है कि हवा का रुख पहचान कर ही जल्दी में सचेतक जारी किया गया था।

फिर यह कैसी विडम्बना है कि एक ओर तो कांग्रेस दल के ही एक सदस्य को प्रस्ताव रखने की अनुमति दे दी जाय और दूसरी ओर उसके विरुद्ध मत देने के लिये कांग्रेस सदस्यों को सचेतक जारी किया जाय! इससे तो भ्रम और अनिश्चितता ही प्रकट होती है। श्री टंडन ने संसदीय परम्परा का आदर करने के उद्देश्य से अपने पत्र में लिखा है कि वह प्रधानमंत्री के गोहत्या सम्बन्धी प्रकट किये गये विचारों के सर्वथा विरुद्ध हैं और सचेतक का उल्लंघन करके प्रस्ताव के पक्ष में मतदान करने के बाद वह दल से तो त्याग-पत्र दे ही रहे हैं भविष्य में लोकसभा से भी त्याग-पत्र देने का उनका विचार है।

किन्तु प्रधानमंत्री कदाचित इसके लिये तैयार नहीं। उन्होंने अपने उत्तर में लिखा है कि 'कांग्रेस दल अथवा लोकसभा से त्याग-पत्र देने का कोई अवसर नहीं है। ऐसा होने पर उन्हें अवश्य ही खेद होगा।' इस प्रकार इस घटना से सचेतक जारी करने के अनौचित्य पर ही प्रकाश पड़ता है।

रहा प्रश्न प्रधानमंत्री के गोवध-बन्दी के पक्ष में होने का सो उन्होंने लिखा है कि 'समस्त भारत के लिये यह अधिनियम लागू करने में कई कई तरह की कठिनाइयां उपस्थित हो सकती हैं।' अटार्नी-जनरल ने इस विषय को राज्यों का विषय बतलाया था, यदि इसे ठीक मान लिया जाय तो उत्तरप्रदेश राज्य द्वारा गोवध पर रोक सम्बन्धी विधेयक को प्रधानमंत्री उस दिन लोकसभा में भूल न कहते। ऐसा कहके उन्होंने अन्य राज्यों को उस दिशा में पग उठाने से रोक दिया है। यदि प्रधान मंत्री सचमुच गोरक्षा के पक्ष में होते तो अब तक चाहे केन्द्र द्वारा चाहे राज्यों द्वारा वह कानून बन चुका होता। नवभारत

अस्पृश्यता का अन्त

लोकसभा ने अस्पृश्यता सम्बन्धी अपराधों को रोकने के लिए एक विधेयक पारित कर दिया है। इस विधेयक पर दोनों सदनों की संयुक्त प्रवर समिति विचार कर चुकी है और कुछ अन्शों में उसे कुछ और कड़ा बना दिया है। भारतीय संविधान ने अस्पृश्यता का किसी भी रूप में आचरण निषिद्ध ठहराया है और यह विधेयक संविधान के इसी

निर्देश को प्रभावशाली रूप में कार्यान्वित करने के लिए पेश किया गया था। ऐसे केन्द्रीय कानून की बड़े समय से आवश्यकता अनुभव की जा रही थी, जो अस्पृश्यता सम्बन्धी अपराधों पर सारे देश में समान रूप से लागू हो सके। अवश्य ही इस कानून के बनने में काफी से अधिक समय लग गया है, किन्तु लोकतन्त्री प्रणाली की प्रारम्भिक घाटियों को पार करने पर आशा की जा सकती थी कि इस कानून को शीघ्र ही देश की कानून पोथियों में स्थान मिल जायेगा।

इस विधेयक में अस्पृश्यता सम्बन्धी अपराधों के लिये छ महीने तक कैद अथवा पांच-सौ रुपया जुर्माना या दोनों प्रकार की सजा की व्यवस्था की गई है। यदि एक ही आदमी बार-बार अस्पृश्यता सम्बन्धी अपराध करेगा तो उसे और भी कड़ा दंड दिया जा सकेगा। जैसा कि गृह मंत्री श्री पन्त ने कहा, इस विधेयक का न केवल सदन के भीतर बल्कि उसके बाहर भी स्वागत किया जायेगा। प्रवर समिति ने मूल विधेयक में यह परिवर्तन कर दिया है कि अभियुक्त ही न्यायालय के सामने अपने को निर्दोष सिद्ध करेगा। सामान्य प्रणाली यह है आरोप सिद्ध करने का दायित्व वादी पर होता है और प्रतिवादी को केवल अपना बचाव करना पड़ता है। प्रस्तुत विधेयक में यह व्यवस्था बदल दी गई है और ऐसा जानबूझ कर किया गया है। अस्पृश्यता के सम्बन्ध में देश के लोकमत में इस बीच काफी परिवर्तन हो चुका है और इसका प्रमाण इसके सिवा और कुछ नहीं हो सकता कि लोकसभा के जितने भी सदस्य इस विधेयक पर भाषण देने के लिए खड़े हुए उनमें एक अपवाद को छोड़कर सब ने उसका समर्थन ही किया। जिस सदस्य ने इसका विरोध किया, वह भी इस के लिए तैयार थे कि किसी भी हरिजन को राष्ट्रपति बनाया जा सकता है। उन्हें केवल हरिजनों के मंदिर प्रवेश पर आपत्ति थी। किन्तु इस प्रकार के व्यक्ति बीते हुए युग के अवशेष हैं और जल्दी ही उनका नाम शेष हो जायेगा। इस विधेयक की एक विशेषता यह है कि उसकी धाराएं केवल हिन्दुओं पर ही नहीं, बल्कि सब धर्मों के मानने वालों पर लागू होंगी। किसी भी जाति और धर्म का व्यक्ति अस्पृश्यता का आचरण करने पर इस कानून द्वारा दण्डित किया जा सकेगा।

पिछले २०-३० वर्षों में अस्पृश्यता के विरुद्ध एक आम वातावरण बन चुका है। प्रारंभ में आर्यसमाज ने और बाद में महात्मा गांधी ने अस्पृश्यता के विरोध में एक शक्तिशाली आन्दोलन चलाया, जिसके फलस्वरूप देश में एक जबर्दस्त विचार क्रांति हुई और आज कोई भी अस्पृश्यता को धर्म का अंग नहीं समझता। अस्पृश्यता हिन्दू धर्म के मौलिक सिद्धांतों के विरुद्ध है और उसका किसी भी रूप में आचरण गांधीजी के शब्दों में हिन्दूधर्म पर कलंक है। अस्पृश्यता की भावना शहरों में तो करीब-करीब नष्ट हो चुकी है, किन्तु देहातों में जहां नये युग का प्रकाश अभी पूरी तरह नहीं फैला है, यह अन्ध विश्वास और रूढ़िजनित सामाजिक बुराई अभी भी जीवित है। इसके उदाहरण समय-समय पर मिलते रहते हैं। हाल ही में राजस्थान के एक शिक्षित हरिजन भाई ने हमारा ध्यान दो घटनाओं की ओर खींचा है। यह घटनाएं जयपुर डिवीजन के मनोहरपुर गांव की हैं। इस गांव में चार-पांच साल से पंचमुखी हनुमान जी का मेला भरने लगा था। हनुमानजी के मंदिर में हरिजन भी बिना किसी रोकटोक के जा सकते थे। किंतु इस बार एक हरिजन को ऐसा नहीं करने दिया गया और मंदिर से धक्के देकर बाहर निकाल दिया गया। इसी प्रकार मनोहरपुर गांव के नाइयों ने हरिजनों की हजामत बनाने से इन्कार कर दिया है। अस्पृश्यता के इस प्रचलन को समूल रूप से समाप्त करने के लिए ही यह कानून बनाया जा रहा है। उसका अमल नीचे के अधिकारियों द्वारा ही होगा। नीचे के स्तर पर अस्पृश्यता की भावना अभी जड़मूल से नष्ट नहीं हुई है। इसलिए जहां यह आवश्यक होगा कि कानून पर कड़ाई से अमल किया जाए, वहां लोगों के हृदय-

परिवर्तन का प्रयत्न भी जारी रहना चाहिए। अस्पृश्यता की बुराई स्वयं हरिजन जातियों में भी मौजूद है। लोकसभा की बहस में कुछ सदस्यों ने हरिजनों और सवर्णों में शादी-विवाह के सम्बन्ध जारी करने का सुझाव दिया था, किंतु अभी वह व्यवहार में नहीं आ सकता। जातपांत के भेद हिन्दू समाज में काफी गहरे हैं और इन भेदों के मिटने में अभी समय लगेगा। एक भंगी का काम ही ऐसा है कि जिसके कारण लोग इनके प्रति अस्पृश्यता का व्यवहार करने लगते हैं। जबतक ऐसी व्यवस्था न होगी कि भंगी का काम स्वच्छतापूर्वक किया जा सके, तबतक अस्पृश्यता को बिलकुल मिटाया नहीं जा सकेगा। जब हम चाहते हैं कि दक्षिण अफ्रीका और दूसरे देशों में भारतीयों के साथ समानता का व्यवहार किया जाय, तो हम अपने घर में अपने ही जैसे मनुष्यों के साथ कैसे भेदभाव का व्यवहार कर सकते हैं? संविधान ने देश के सब नागरिकों को समान अधिकार दिए हैं और समानता तथा भाईचारे पर हमारा लोकतंत्र आधारित है। इसको सफल बनाने के लिए अस्पृश्यता का समूल अन्त होना ही चाहिए। हिन्दुस्तान

(पृष्ठ १४६ का शेष)

३- ,, नरेन्द्र जी-प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद राज्य।

मन्त्री-श्रीयुत कालीचरण जी आर्य

उपमंत्री- ,, रामगोपाल जी शालवाले

कोषाध्यक्ष-श्रीयुत बालमुकुन्द जी

पुस्तकाध्यक्ष- ,, नरदेव जी स्नातक एम० पी०

उपरोक्त आठ अधिकारियों के अतिरिक्त १७ अन्तरंग सदस्य चुने गये जिनके नाम इस प्रकार हैं :-

१-श्रीयुत वासुदेव जी (बिहार)

१- ,, रामनारायण जी शास्त्री (बिहार)

३- ,, विजय शंकर जी (बम्बई)

४- ,, भगवती प्रसाद जी (राजस्थान)

५- ,, चरणदास जी ऐडवोकेट (पंजाब)

६- ,, यशःपाल जी सिद्धान्तालंकार (पंजाब)

७- ,, डा० महावीर सिंह जी (मध्य भारत)

८- ,, पूर्णचन्द्र जी ऐडवोकेट (उत्तर प्रदेश)

९- ,, जयदेवसिंह जी ऐडवोकेट (उत्तर प्रदेश)

१०- ,, मिहिरचन्द जी (बंगाल)

११- ,, प्रो० इन्द्रदेव सिंह जी (मध्य प्रदेश)

१२- ,, जियालाल जी (आर्य समाजों के प्रतिनिधि)

१३- ,, प्रो० रामसिंह जी आजीवन सदस्यों के प्रतिनिधि)

१४- ,, स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज

१५- ,, माता लक्ष्मी देवी जी

१६- ,, भीमसेन जी विद्यालंकार

१७- ,, शिवशंकर जी

इनके अतिरिक्त श्री नारायण दास जी कपूर आडीटर नियुक्त हुये।

आगामी वर्ष के लिये १ लाख १० हजार रुपये के व्यय का बजट स्वीकार हुआ।

आर्य समाज के प्रचार की प्रगति बढ़ाने के निमित्त आर्य जगत् के लिये एक विशेष कार्यक्रम भी तैयार किया गया है जो समाजों में शीघ्र ही प्रचारित किया जायेगा।

रघुनाथ प्रसाद पाठक

कार्यालयाध्यक्ष

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली ६

हमारी साहित्य सेवा

दीपमाला सम्वत् २००६ को हमने साहित्य-सेवा का व्रत लिया था। तब से अब तक हमने निम्न ४८ छोटी बड़ी पुस्तकों का प्रकाशन किया है। एक-एक पुस्तक के कई भाग वा कई प्रकार की है, उन सहित संख्या ५६ है। जिन पुस्तकों के आगे यह लिखा है कि "छपेगी" उनकी संख्या पृथक् है। उन में से हमारे द्वारा प्रकाशित संस्करणों के ४ के तीसरे और ८ के दूसरे संस्करण तक निकल चुके हैं। इस प्रकार पुस्तकों के भागों सहित अब तक १,६७,४०० पुस्तकों का प्रकाशन हो चुका है। पुस्तकों के नाम के आगे कोष्ठ में दी गई संख्या उनके हमारे द्वारा प्रकाशित संस्करण की संख्या है तथा कोष्ठक से बाहर की संख्या यह प्रकट करती है कि हमारे द्वारा उक्त पुस्तक कितनी छप चुकी है।

हम यह सेवा आप महानुभावों के सहयोग से ही कर सके हैं। आशा है आगे भी यह सहयोग पूर्ववत् प्राप्त होता रहेगा।

[सूची]

१—ब्रह्मचर्यामृत—
- साधारण संस्करण (२) १५,००० =)॥
- बाल संस्करण (१) १००० ।=)

२—आदर्श ब्रह्मचारी (३) १०,००० ।)

३—कन्या और ब्रह्मचर्य (२) ६००० ≡)

४—ब्रह्मचर्य के साधन—
- भाग १—२ (१) २००० ।-)
- भाग ३ (१) ३००० ≡)
- भाग ४ (१) ५००० १)
- भाग ५ (१) २००० ।=)
- भाग ६ छपेगी
- भाग ७ छपेगी
- भाग ८ छपेगी
- भाग ९ (१) १००० ॥=)
- भाग १० छपेगी
- भाग ११ छपेगी

५—ब्रह्मचर्य शतकम् (१) १००० ॥=)

६—व्यायाम का महत्व (३) ११००० ≡)

७—आसनों के व्यायाम (१) २००० ॥)

८—सदाचार पंजिका (१) १००० ॥)

९—स्वप्नदोष की चिकित्सा (३) ६००० =)॥

१०—पापों की जड़ शराब—
- साधारण संस्करण (२) ६००० =)॥
- बाल संस्करण (१) १००० ।-)

११—तम्बाकू का नशा—
- साधारण संस्करण (२) ६००० =)॥
- बाल संस्करण (१) १००० ।=)

१२—हित की बातें (१) ४००० -)॥

१३—बाल विवाह से हानियां (१) ३००० समाप्त

१४—बिच्छू-विष चिकित्सा (१) २००० =)

१५—चकबन्दी कानून (१) २००० ॥)

१७—संस्कृतांकुर (१) २००० १।)

१८—श्रुति सुधा (१) २००० ≡)

१९—श्रुति शुक्ति शती (१) २२०० ≡)

२०—हम संस्कृत क्यों पढ़ें (१) २२०० ।=)

२१—संस्कृत वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय (१) २००० ॥)

२२—स्वामी आत्मानन्द की संक्षिप्त जीवनी (१) १००० -)

२३—महर्षि दयानन्द का कार्य (१) ४००० -)

२४—स्वा० दयानन्द और म० गांधी (१) २००० २)

२५—दयानन्द और गौरक्षा (१) १०,००० -)॥

२६—स्वा० विरजानन्द जीवन (१) २००० १॥)

२७—स्वामी श्रद्धानन्द (१) १०००)॥

२८—आर्य समाज की आवश्यकता (छोटी) (१) १००० -)

२९—आर्य समाज की आवश्यकता (बड़ी) (१) २००० ।)

३०—आर्य समाज के नियमोपनियम (१) १००० =)

३१—वैदिक सन्ध्या पद्धति (२) ६००० -)

३२—वैदिक सन्ध्या हवन पद्धति (१) २००० ≡)

३३—वैदिक सत्संग पद्धति (१) २००० ।=)

३४ कर्तव्य दर्पण (१) १००० ॥=)

३५—पंचमहायज्ञविधि ॐ (१) १०,००० ≡)

३६—वैदिक गीता (१) २००० २)

३७—पंजाब की भाषा व लिपि (१) ३००० -)

३८—दृष्टान्त मंजरी (१) २१०० २)

३९—आर्य कुमार गीतांजलि—
- भाग १ (२) ४००० ≡)
- भाग २ (१) २००० ≡)

४०—क्या हम आर्य हैं ? (१) १००० -)

(पृष्ठ १११ का शेष)

४१—नेत्ररक्षा (३) ६००० ≋)

४२—रामराज्य कैसे हो ? (२) ४५०० ≋)

४३—आर्य सिद्धांत दीप (१ २००० १।)

४४—वैदिक धर्म परिचय❀ (१) २२०० ।।=)

४५—मनोविज्ञान तथा शिव संकल्प (१) २००० ।।)

४६—आर्योद्देश्य रत्नमाला (२) ६००० –)

४७—विदेशों में एक साल (१) २००० २।)

४८—छात्रोपयोगी विचारमाला❀ (१) २२०० ।।=)

४९—काश्मीर यात्रा छपेगी

(❀ प्रेस में)

वैदिक साहित्य सदन

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(१) यमपितृ परिचय (पं० प्रियरत्न आर्ष २)
(२) ऋग्वेद में देवृकामा ,, -)
(३) वेद में असित् शब्द पर एक दृष्टि ,, -)।
(४) आर्य डाइरेक्टरी (सार्व० सभा) १।)
(५) सार्वदेशिक सभा का
सत्ताईस वर्षीय कार्य विवरण ,, अ० २)
(६) स्त्रियों का वेदाध्ययन अधिकार
(पं० धर्मदेव जी वि० वा०) १।)
(७) आर्यसमाज के महाधन
(स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी) २॥)
(८) आर्यपर्वपद्धति (श्री पं० भवानीप्रसादजी) १।)
(९) श्री नारायण स्वामी जी को सं० जीवनी
(पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) -)
(१०) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण (पं० इन्द्रजी) ।=)
(११) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या
(अनुवादक पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) ।)
(१२) आर्य मन्दिर चित्र (सार्व० सभा) ।)
(१३) वैदिक ज्योतिष शास्त्र (पं० प्रियरत्नजी आर्ष) १॥)
(१४) वैदिक राष्ट्रीयता (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।)
(१५) आर्य समाज के नियमोपनियम (सार्व सभा) -)॥
(१६) हमारी राष्ट्रभाषा (पं० धर्मदेवजी वि० वा०) ।-)
(१७) स्वराज्य दर्शन (पं० लक्ष्मीदत्तजी दीक्षित) स० १)
(१८) राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती) ॥)
(१९) योग रहस्य (श्री नारायण स्वामी जी) १।)
(२०) विद्यार्थी जीवन रहस्य ,, ॥=)
(२१) प्राणायाम विधि ,, =)
(२२) उपनिषदें:— ,,

ईश	केन	कठ	प्रश्न
।=)	॥)	॥)	।=)
मुण्डक	माण्डूक्य	ऐतरेय	तैत्तिरीय
।=)	।)	।)	१)

(२३) बृहदारण्यकोपनिषद् ४)
(२४) आर्यजीवनगृहस्थधर्म (पं० रघुनाथप्रसादपाठक) ॥=)
(२५) कथामाला ,, ॥।)
(२६) सन्तति निग्रह ,, १।)
(२७) नया संसार ,, =)
(२८) आर्य शब्द का महत्व ,, -)॥
(२९) मांसाहार घोर पाप और स्वास्थ्य विनाशक -)
(३०) मुर्दे को क्यों जलाना चाहिए -)
(३१) इजहारे हकीकत उर्दू
(ला० ज्ञानचन्द जी आर्य) ॥=)
(३२) वर्ण व्यवस्था का वैदिक स्वरूप ,, १॥)
(३३) धर्म और उसकी आवश्यकता ,, १॥)
(३४) भूमिका प्रकाश (पं० द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री) १)
(३५) एशिया का वैनिस (स्वा० सदानन्द जी) ॥।)
(३६) वेदों में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां
(पं० प्रियरत्न जी आर्ष) १)
(३७) सिंधी सत्यार्थ प्रकाश २)
(३८) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता -)
(३९) ,, ,, और उस की रक्षा में -)
(४०) ,, ,, आन्दोलन का इतिहास ।=)
(४१) शांकर भाष्यालोचन (पं० गंगाप्रसादजी उ०) ५)
(४२) जीवात्मा ,, ४)
(४३) वैदिक मणिमाला ,, ॥=)
(४४) आस्तिकवाद ,, ३)
(४५) सर्व दर्शन संग्रह ,, १)
(४६) मनुस्मृति ,, ५)
(४७) आर्य स्मृति ,, १॥)
(४८) आर्योदयकाव्यम् पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध, १।), १॥)
(४९) हमारे घर (श्री निरंजनलाल जी गौतम) ॥=)
(५०) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर
(श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी) २।) रिया० १॥)
(५१) भजन भास्कर (संग्रहकर्त्ता
श्री पं० हरिशंकरजी शर्मा १॥)
(५२) सनातनधर्म व आर्यसमाज
(पं० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय) ।=)
(५३) मुक्ति से पुनरावृत्ति ,, ,, ।=)
(५४) वैदिक ईश वन्दना (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।=)॥
(५५) वैदिक योगामृत ,, ॥=)
(५६) कर्त्तव्य दर्पण सजिल्द (श्री नारायण स्वामी) ।॥)
(५७) आर्यवीरदल शिक्षणशिविर (ओंप्रकाशपुरुषार्थी) ।=)
(५८) ,, ,, ,, लेखमाला ,, १॥)
(५९) ,, ,, गीतांजलि (श्री रुद्रदेव शास्त्री) ।=)
(६०) ,, ,, भूमिका =)
(६१) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी २।)
(६२) कम्युनिज्म (पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय) २)
(६३) जीवन चक्र ,, ,, ५)

मिलने का पता:—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, बलिदान भवन, देहली ६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली ७ में छपकर
श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक पब्लिशर द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ६ से प्रकाशित

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

ऋग्वेद

यजुर्वेद

वर्ष ३०

मूल्य स्वदेश ५)

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ॥)

अंक ४

आषाढ २०१२

जून १९५५

महर्षि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज

सम्पादक—

सभा मन्त्री

सहायक सम्पादक—

श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषयानुक्रमणिका

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष ३० } जून १९५५, आषाढ़ २०१२ वि०, दयानन्दाब्द १३० { अङ्क ४

वैदिक प्रार्थना

विश्वकर्मा विमना आद्विहाया धाता विधाता परमोत सन्दृक्।
तेषामिष्टानि समिषा मदन्ति यत्रा सप्तऽऋषीन् पर एकमाहुः ॥

य० १७। ६॥

व्याख्यान—सर्वज्ञ सर्वरचक ईश्वर विश्वकर्मा (विविधजगदुत्पादक) है, तथा "विमना" विविध (अनन्त) विज्ञानवाला है, तथा "आद्विहाया" सर्वव्यापक और आकाशवत् निर्विकार, अक्षोभ्य सर्वाधिकरण है। वही सब जगत् का "धाता" धारणकर्त्ता है 'विधाता" विविध विचित्र जगत् का उत्पादक है। तथा "परम. उत" सर्वोत्कृष्ट है। "सन्दृक्" यथावत् सब के पाप और पुण्यों को देखने वाला है। जो मनुष्य उसी ईश्वर की भक्ति उसी में विश्वास और उसी का सत्कार (पूजा) करते हैं, उसको छोड़ के अन्य किसी को लेशमात्र भी नहीं मानते, उन पुरुषों को ही सब इष्ट सुख मिलते हैं औरों को नहीं। वह ईश्वर अपने भक्तों को सुख में ही रखता है और वे भक्त सम्यक् स्वेच्छापूर्वक "मदन्ति" परमानन्द में ही रहते हैं। दुःख को नहीं प्राप्त होते। वह परमात्मा एक अद्वितीय है। जिस परमात्मा के सामर्थ्य में सप्त अर्थात् पंच प्राण, सूत्रात्मा और धनञ्जय ये सब प्रलयविषयक कारणभूत ही रहते हैं, वही जगत् की उत्पत्ति स्थिति और प्रलय में निर्विकार आनन्द-स्वरूप रहता है। उसी की उपासना करने से हम सदा सुख में रह सकते हैं॥

सम्पादकीय

आर्य धर्म का विशाल रूप

जब एक आर्य समाजी अपनी विशाल महत्वाकांक्षा का वर्णन करना चाहता है तब वह "कृण्वन्तो विश्वमार्यम" वेद के इस पद को उद्धृत करता है। उसकी आकांक्षा है कि वह मनुष्य मात्र को आर्य बनावे।

हमारे देश का नाम आर्यावर्त्त है यह नाम उस समय से चला आता है जब न संसार भिन्न भिन्न मतमतान्तरों के संघर्षों से कलुषित हुआ था और न जाति को वर्तमान वर्गभेद ने निर्बल किया था। यह देश धर्म में विश्वास रखने वाले सच्चरित्र लोगों का देश समझा जाता था। इस कारण इसका नाम आर्यावर्त्त या आर्यदेश था।

वेद में आर्य शब्द अनेक स्थानों पर आया है। यदि हम उस शब्द के तात्पर्य को समझना चाहें तो हमें उन दो शब्दों पर ध्यान देना चाहिये जो आर्य शब्द के विरोधी हैं। वे शब्द हैं दास और दस्यु। दास का अभिप्राय है गुलाम और दस्यु का अभिप्राय है अत्याचारी। आर्य वह है जिसके मन, बुद्धि और शरीर दासता की बेड़ियों में जकड़े हुए नहीं हैं और जो अपने स्वार्थ के लिये दूसरों के अधिकारों को नहीं छीनता, उन्हें दुःख नहीं देता और किसी पर अत्याचार नहीं करता। वैदिक वाङ्मय से लेकर वर्तमान काल तक के भारतीय साहित्य में आर्य शब्द का प्रयोग इन्हीं अर्थों में हुआ है।

महर्षि दयानन्द ने आर्याभिविनय में स्थान २ पर आर्यों के चक्रवर्ती राज्य के लिये ईश्वर से प्रार्थना की है। कुछ लोग आक्षेप करते हैं कि महर्षि ने इन प्रार्थनाओं द्वारा साम्राज्यवाद का प्रचार किया है। यह आलोचकों की भ्रांति है। महर्षि ने ईश्वर से यह प्रार्थना की है कि पृथ्वी पर सब जगह उन लोगों का शासन हो जो श्रेष्ठ हैं, जो न स्वयं दास या दस्यु हैं और न दूसरों को दास या दस्यु बनाना चाहते हैं। महर्षि ने आर्य समाज की स्थापना इस उद्देश्य से की कि वेदोक्त आर्यधर्म के मानने वाले नर नारी एकत्र होकर मनुष्यमात्र को आर्यधर्म का संदेश सुनायें और आर्य बनायें।

जब इस विचार पद्धति का अनुसरण करते हुए हम आर्य धर्म तथा आर्यजाति की सीमाओं की रेखा बांधने लगते हैं तब एक बार तो हमारी दृष्टि बहुत ही संकुचित हो जाती है। यदि हम देखें कि हमारे घर का कोई व्यक्ति, निकट सम्बन्धी या पड़ोसी आर्यत्व के गुणों से शून्य है और अनार्य विचार रखता है तो हम उसे आर्यों की परिधि में नहीं ले सकेंगे। इस प्रकार दायरा बहुत संकुचित होता प्रतीत होगा परन्तु यदि हम रूढ़ियों के कारण बंधी हुई सीमाओं को पार करके विस्तृत जगत् पर दृष्टि डालें तो हम अनुभव करेंगे कि हमारा दायरा बहुत विस्तृत है। हम पृथ्वी के दूर से दूर प्रदेश में भी आर्यत्व के चिन्ह पा सकेंगे।

छोटा जन्तु छोटे घोंसले में रहना पसन्द करता है और बड़ा जन्तु बड़े निवास स्थान में रह कर सुखी होता है। उपनिषदों में कहा है "भूमावै बलम्"।

विशालता में बल है। हम अपनी सीमाओं को जितना छोटा करते जायेंगे, हमारे विचारों का क्षेत्र भी उतना ही संकुचित होता जायगा।

आर्यत्व कहां है और कहां नहीं है? कहां अधिक है और कहां कम है? इन प्रश्नों का ठीक उत्तर पाने के लिये हमें एक नई पद्धति पर विचार करना होगा। हम प्रायः जिस शैली पर सोचते हैं उसमें भिन्नता पर अधिक बल दिया जाता है। यदि हम से किसी के नब्बे मन्तव्य मिलते हैं और दस नहीं मिलते तो हम अपनी सारी शक्ति यह सिद्ध करने में लगा देते हैं कि वह हम से सब बातों में भिन्न है—हमारा शत प्रतिशत विरोधी है। विचार की एक दूसरी शैली भी है। वह यह कि हम समानताओं की सूची पर अधिक ध्यान दें और प्रयत्न करें कि शेष १० फीसदी

असमानतायें भी कम होती जायं इस प्रक्रिया से जहां हमारा दृष्टिकोण विस्तृत होता जायगा वहां साथ ही सांसारिक दायरा भी बढ़ता जायगा।

दृष्टांत के तौर पर मैं बुद्ध-मत को लेता हूं। महात्मा बुद्ध ने अपने समय में किसी नये मत अथवा संप्रदाय की स्थापना नहीं की। वह महान् सुधारक थे। समाज में उन्होंने जो दोष देखे उनके निवारण का प्रयत्न किया। उन्होंने मनुष्यों को उपदेश दिया कि अपने जीवन को शुद्ध और पापहीन बनाने से ही मनुष्य सुखी हो सकता है। केवल क्रियाकलाप से अथवा वादविवाद से नहीं। उनके सदुपदेशों के ये नमूने हैं:—

"अक्रोध से क्रोध को जीते"

"असाधु को साधुता से जीते"

"कृपण को दान से जीते" और

"झूठ बोलने वाले को सत्य से जीते"

"बहुत भाषण करने से पंडित नहीं होता"

"जो सदा दूसरों का कुशल चिन्तन करता है, जो किसी का शत्रु नहीं और जो निर्भय है वही पंडित है।" (धम्मपद)

ऐसे क्रियात्मक उपदेश थे जिन्हें सुनकर उस समय की जनता प्रभावित हो गई और उन्होंने बौद्ध सिद्धांत को स्वीकार कर लिया। कुछ लोग कहते हैं कि महात्मा बुद्ध नास्तिक थे। यह विचार भी भ्रान्त है। जातक ग्रन्थों में तथा धम्मपद आदि सिद्धान्त ग्रन्थों में किसी स्थान पर भी ईश्वर या वेद का खण्डन नहीं किया गया। यह अवश्य है कि उन्होंने लोगों के हृदयों पर यह अंकित करने का प्रयत्न किया कि मनुष्य का अपना जीवन उसके केवल, ऊंचे मन्तव्यों अथवा रूढ़ियों से बहुत ऊंचा है। बौद्ध सिद्धान्त का भवन जिन चार स्तम्भों पर खड़ा है वह 'आर्यसत्य चतुष्टय' कहलाता है। धर्म चक्र प्रवर्तन सूत्र में इस चतुष्टय की विस्तृत व्याख्या की गई है। वह चारों आर्य सत्य निम्नलिखित हैं।

(१) संसार में दुःख है।

(२) दुःख का कारण तृष्णा।

(३) दुःख से छूटने के लिये तृष्णा से मुक्त होना आवश्यक है। शरीर को कष्ट देने मात्र से दुःख दूर नहीं हो सकते।

(४) दुःख से छूटने का जो मार्ग है उसके आठ अंग हैं।

(१) सम्यक् दृष्टि (२) सम्यक् संकल्प (३) सम्यक् वचन (४) सम्यक् कर्म (५) सम्यक् आजीविका (६) सम्यक् व्यायाम (७) सम्यक् स्मृति (८) और सम्यक् समाधि

महात्मा बुद्ध का पुनर्जन्म पर विश्वास था और वह कर्म सिद्धान्त को सबसे मुख्य स्थान देते थे। विचार कर देखिये कि इनमें से कौनसी ऐसी बात थी जो आर्यत्व की विरोधिनी हो।

समय आया कि महात्मा बुद्ध के शिष्यों ने अपनी निर्बलताओं तथा परिस्थितियों से बाधित हो कर बहुत से ऐसे मन्तव्य और क्रिया-कलाप बीच में जोड़ दिये जिन्होंने महात्मा बुद्ध के धर्मचक्र प्रवर्तन को मत विशेष का रूप दे दिया। आज यदि भूमंडल पर बौद्ध सिद्धांत के मानने वाले लोगों की संख्या अन्य सबसे अधिक है तो उसका कारण महात्मा बुद्ध के बतलाये हुये जीवन सम्बन्धी व्यावहारिक सिद्धांत हैं। वह व्यावहारिक सिद्धांत जिनका संक्षिप्त नाम 'आर्य सत्य चतुष्टय' है संसार को भारत की देन है। जैसे अन्य सब मतवादियों में अनेक ऐसी रूढ़ियें और परम्परायें प्रचलित हो गई हैं जिन्होंने उनके असली रूप को छिपा दिया है वैसे ही बुद्धमत के अनुयायियों में भी हुआ है। इसका यह भी अभिप्राय नहीं कि हम संसार के बौद्ध व्यक्तियों या देशों से अपने उस नाते को भुलादें जो आर्य सत्यों पर विश्वास रखने के कारण उनमें और हममें हैं। हमारा यत्न यह होना चाहिये कि हम सब समानताओं पर अधिक से अधिक बल देते हुए प्रचार और परामर्श द्वारा भिन्नताओं को मिटाने का प्रयत्न निरन्तर करते रहें।

मेरा आर्यजनों से यह निवेदन है कि वह अपने

दृष्टि कोण को विशाल बनाने का यत्न करेंगे यदि विशाल दृष्टि से देखेंगे तो अनुभव होने लगेगा कि हम आर्य लोग संसार में केवल मुट्ठीभर ही नहीं हैं। हमारा विस्तार भूमंडल व्यापी हो सकता है यदि हम 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' की मौलिक भावना को समझ कर चलें।

जो सज्जन इस विषय का अधिक अध्ययन करना चाहें वह पं० गंगाप्रसाद एम.ए. लिखित 'धर्मों का आदिस्रोत वेद' नाम की पुस्तक में बौद्ध धर्म संबंधी अध्याय का अनुशीलन करें।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

सम्पादकीय टिप्पणियां

कार्यक्रम की पूर्ति की ओर पहला कदम

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने आर्य समाज के लिये जो भावी कार्यक्रम निश्चित किया है उसके तीन अंग हैं। सब से पहला अंग आन्तरिक सुधार का है। वह वस्तुतः अगले दोनों अंगों का आधार है। जब तक हमारी आन्तरिक दशा सन्तोषजनक नहीं होती तब तक अन्य किसी प्रकार के कार्यक्रम की पूर्ति सम्भव नहीं है। आन्तरिक कार्यक्रम के भी दो अंग हैं, एक व्यक्तिगत और दूसरा सामाजिक। जैसे अन्य सब सुधारणाओं का आधार आंतरिक सुधार है वैसे ही आंतरिक सुधारों में व्यक्तिगत जीवन की उन्नति सामाजिक उन्नति का आधार समझना चाहिये। यूं तो सारा कार्यक्रम आर्य जगत् के सामने रख दिया गया है कि वह उसे क्रियान्वित करें परन्तु यह बात स्पष्ट है कि जब तक किसी योजना को सोच समझकर विधिपूर्वक प्रयोग में न लाया जाय तब तक उसकी पूर्ती की आशा बहुत कम होती है। यदि हम चाहते हैं कि हम वस्तुतः प्रस्तुत भावी कार्यक्रम को सफल बनायें तो आवश्यक होगा कि हम उसमें प्रस्तुत की गई सुधारणाओं का ऐसा क्रम बांधें कि एक के पीछे दूसरी सुगमता से आती और सफल होती जाय। इस उद्देश्य से मैं आर्य-जगत् के सामने यह सुझाव रखना चाहता हूँ कि वह तत्काल कार्यक्रम के पहले अङ्ग को कार्यान्वित करना आरम्भ कर दे।

आन्तरिक कार्यक्रम के दो भाग हैं। एक व्यक्ति से सम्बन्ध रखता है दूसरा समाज से। इस वक्तव्य को पढ़ते समय यदि पाठक भावी कार्यक्रम संबंधी प्रस्ताव को अपने सामने रख लेंगे तो वह मेरे अभिप्राय को आसानी से समझ सकेंगे। व्यक्ति से सम्बंध रखने वाली धारायें यद्यपि कार्यक्रम के पहले अंग के अन्त में दी गई हैं तो भी व्यवहार में उन्हें पहले रखना चाहिये। चौथी धारा में आर्यसमाज के प्रत्येक सदस्य से यह आशा रक्खी गई है कि वह अपने परिवार में आर्य समाज के सिद्धान्तों को प्रविष्ट करें। यह बहुत व्यापक आदेश है। इस आदेश को क्रियात्मक रूप देने के लिये प्रत्येक आर्य को निम्नलिखित नियमों के पालन की प्रतिज्ञा करनी चाहिये।

(१) वह नित्यकर्मों के अतिरिक्त प्रतिदिन न्यून से न्यून आधा घण्टा धार्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय और उन पर मनन करेगा।

(२) आर्य परिवार के सब जनों को मिलकर यह प्रण करना चाहिये कि हम मन, वाणी और कर्म से सत्य का पालन करेंगे। और तीसरी प्रतिज्ञा यह करनी चाहिये कि जन्मगत जात पांत को समाप्त करने के लिये न केवल शाब्दिक आन्दोलन करेंगे अपितु खान-पान और विवाह आदि सम्बन्धों में जातिगत बन्धनों का सक्रिय विरोध करेंगे।

प्रारम्भ के लिये प्रत्येक आर्य इन तीन प्रतिज्ञाओं को करे और उनका पालन करें। ये कार्यक्रम के प्रथम अंग के पालन की ओर उनका पहला कदम होगा।

आन्तरिक कार्यक्रम का मुख्य भाग आर्यसमाजों के करने का है। आर्य समाज को अपनी वेदी की पवित्रता और धार्मिक भावना की रक्षा के लिये जिन नियमों का पालन करना आवश्यक है उनका निर्देश पहली तीन धाराओं में किया गया है। प्रत्येक आर्य समाज को अपनी अंतरंग सभा का अधिवेशन करके उसमें इन तीन नियमों को कार्यान्वित करने का निश्चय करना चाहिये और तुरन्त उनके अनुसार

कार्य करना आरम्भ कर देना चाहिये। इसमें अपवाद होना अभीष्ट नहीं।

इस समय बहुत से आर्यसमाजों में पारस्परिक झगड़े हैं' यदि कार्यक्रम में दिये गये नियमों का पालन किया जाय तो वह झगड़े आसानी से समाप्त हो सकते हैं। यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम कार्य क्रम के दूसरे और तीसरे अंगों की पूर्ति आरम्भ करें उससे पहले आर्य समाजों और आर्यजनों के आपसी झगड़े समाप्त कर दिये जांय। इसे कार्यक्रम का एक अनिवार्य अंग समझना चाहिये।

सब आर्य समाजों को यह संकल्प कर लेना चाहिये कि इस तिमाही में आपसी झगड़ों को समूल उखाड़कर फेंक देगें।

> श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी के वेदान्त दर्शन के संस्कृत भाष्य पर उत्तर प्रदेश राज्य ने २५०) का पुरस्कार दिया है। श्री स्वामी जी को बधाई।
>
> —सम्पादक

मैंने आर्य जनों और आर्य समाजों के सामने कार्य क्रम की पूर्ति के लिये तुरन्त काम में आने वाली इतिकर्तव्यता बतला दी है। कार्य क्रम के अन्य अंगों की योजनायें तैयार करके कार्यक्षेत्र में लाई जांय उससे पहले यह अत्यन्त आवश्यक है कि कार्य क्रम के प्रथम अंग को यथासंभव पूर्णता तक पहुँचा दिया जाय। —इन्द्र विद्या वाचस्पति

आर्यसमाज की सदस्यता

आर्यसमाज लण्डन के संस्थापकों के सामने एक जटिल समस्या समुपस्थित हुई है और वह यह कि मांसाहारी अंग्रेजों को जो आर्यसमाज के सदस्य बनना चाहते हैं सदस्य बनने पर मांसाहार की छूट दी जा सकती है या नहीं क्योंकि उपनियमों में वर्णित सदाचार की व्याख्यानुसार मांसाहारी व्यक्ति न तो समाज का सदस्य बन सकता है और न रह सकता है। इसके अतिरिक्त उक्त समाज में अधिक से अधिक अंग्रेजों को प्रविष्ट करना आवश्यक है। मांसाहार की छूट देने का अर्थ है बुराई से समझौता करना और आदर्श से गिरना जो सहन नहीं हो सकता। आर्य समाज की शक्ति संख्या बल की अपेक्षा गुणों पर अधिक आश्रित है क्योंकि यह धार्मिक संस्था है और इसका मूलभूत पवित्र, धार्मिक स्वरूप, अक्षुण्ण बना रहने देना ही अनिवार्य और कल्याण कारक है। आर्यसमाज का सदस्य बनने और रहने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को सदाचार की व्याख्या को अंगीकार और प्रमाणित करना आवश्यक है जिस में मांसाहार वर्जित है। आर्यसमाज की सदस्यता का गौरव आचारिक पवित्रता में है और वह अपने सदस्यों और प्रेमियों से आचार-शुद्धता के लिए बड़े से बड़े त्याग की आशा रखता वा रख सकता है।

तम्बाकू, भांग, अफीम, चरस तथा शराब आदि मादक द्रव्य और मांसादि अभक्ष्य पदार्थों के व्यापारीजन की भी आर्य समाज की सदस्यता संदिग्ध है। ऐसे व्यक्ति कम से कम आर्य समाज के अधिकारी बनने के अयोग्य हैं। इसके अतिरिक्त मनुष्य पूजा में विश्वास और वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था में अविश्वास रखने वाले व्यक्ति भी आर्यसमाज के सदस्य नहीं रह सकते।

यह विषय धर्मार्य सभा की व्यवस्था के योग्य है।

प्रशंसनीय प्रथा

श्री ब्रजराज प्रकाश मुंसिफ आजमगढ़ के न्यायालय में श्री भवानी प्रसाद वकील मंत्री संस्कृत प्रसार-समिति ने १३-५-५५ को पं० कृष्ण माधव लाल साहित्याचार्य के विरुद्ध एक दावा दायर किया है जो संस्कृत भाषा में लिखित है। इसका हिन्दी अनुवाद भी साथ नत्थी किया गया है। दावा नियम पूर्वक स्वीकृत हो गया है और प्रतिवादी के लिखित कथन के लिए १ सितम्बर की तारीख नियत हुई है। न्यायालयों में इस प्रकार की प्रथा का डाला जाना अत्यन्त स्वागत योग्य है। वर्तमान व्यवस्था में यह प्रथा चल

सकेगी इसमें सन्देह है परन्तु इसका येन केन उत्साह पूर्वक जारी रखना आवश्यक है।

जन-जातियों के विनाश का मुख्य कारण

अफ्रीका, आस्ट्रेलिया आदि २ देशों की जन-जातियों के विनाश के कारण के लिए उपनिवेशवादियों के घोर अत्याचार और उनकी शोषण एवं दोहन की नीति जिम्मेवार मानी जाती है। परन्तु 'एयंन पाथ' नामक सुप्रसिद्ध पत्र में प्रकाशित श्रीयुत एन. कोर्ट नामक एक यूरोपियन के लेख से इस धारणा का खंडन होता है। वे लिखते हैं :—

'निम्नतम वर्गों के द्रुत विनाश का कारण स्त्रियों में असाधारण रीति से व्याप्त बन्ध्यापन है जिसका सूत्रपात उस समय से हुआ जबकि पहली बार यूरोपियन लोगों का उनके साथ संसर्ग हुआ। यह मानना गलत है कि निम्न वर्गों के विनाश का कारण अनिवार्य रूप से उपनिवेश वादियों द्वारा उन पर हुए अत्याचार हैं। शराब और भोजन के परिवर्तन का इस विनाश में बहुत बड़ा हाथ है।"

श्री विदेह जी का वेद भाष्य

सार्वदेशिक सभा की ३०-४-५५ की अन्तरंग सभा में उपर्युक्त विषय पर जो निश्चय किया है वह इस प्रकार है :—

'विशेष रूप से सभा प्रधान की आज्ञा से प्रस्तुत होकर श्री विद्यानन्द जी विदेह द्वारा वेद-भाष्य के प्रकाशन के लिए एक लाख रुपये की अपील प्रकाशित हुई है। निश्चय हुआ कि सार्वदेशिक सभा इस वेदभाष्य को प्रमाणित नहीं मानती। अतः आर्य समाजें एवं आर्य नर-नारी इस सम्बन्ध में सचेत रहें और इसके लिए कोई आर्थिक सहायता न दी जाय। यही निर्देश उनके द्वारा छपी हुई अन्य पुस्तकों के सम्बन्ध में माना जाये। यह निश्चय अपने में स्वयं स्पष्ट है।

आर्य समाज की समस्याएं और गुरुडम

फीरोजाबाद के एक आर्य सज्जन पूछते हैं—

"क्या आर्यसमाज में वह तत्व प्रवेश कर सकता है जो घोर गुरुडम का पक्षपाती है जैसे R.S.S का सदस्य और क्या कम्यूनिस्ट विचार-धारा का व्यक्ति भी आर्यसमाजी हो सकता है ?"

आर्यसमाज की सदस्यता सबके लिए खुली है। जो व्यक्ति आर्यसमाज के उद्देश्यों और मन्तव्यों को जैसा कि इसके नियमों में वर्णित है और जिनकी व्याख्या वेदों के आधार पर महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों में की गई है, मानकर आर्यसमाज में प्रविष्ट हो और तदनुकूल आचरण करना स्वीकार करे वह आर्य समाज का सदस्य हो सकता है। मनुष्य पूजा में विश्वास रखने वाला व्यक्ति आर्य समाज में नहीं रह सकता और न वह रह सकता है जो वैदिक आश्रम-व्यवस्था में विश्वास न रखता हो।

नागरी प्रचारिणी पत्रिका वर्ष ५९ अंक १ सं० २०११ पृष्ठ ८८ पर यह सूचना छपी है कि उत्तर प्रदेश राज्य ने नागरी प्रचारिणी सभा काशी को हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास तैयार करने के लिये ५० हजार रुपया देने का निश्चय किया है। उक्त इतिहास के १७ भागों में से आठवें भाग में हिन्दी साहित्य का अभ्युत्थान के अन्तर्गत हरिश्चन्द्र काल (१९००—१९५० वि०) रखा जायेगा। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से भी पूर्व महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश आदि अपने समस्त महान् ग्रन्थ हिन्दी में लिख कर हिन्दी गद्य को अपनाया तथा सम्पुष्ट किया था अतः हरिश्चन्द्र काल से पहले दयानन्द काल का भी उक्त इतिहास में निर्देश होना चाहिये।

हिन्दी के लब्ध प्रतिष्ठित लेखकों और इतिहास-कारों ने इस सत्य को अपने लेखों में स्वीकार करके अब तक चली आई एक भूल का संशोधन किया है। उदाहरण के लिये श्री आचार्य चतुरसेन शास्त्री कृत "हिन्दी साहित्य का इतिहास" का मध्य बिन्दु-दयानन्द सरस्वती काल उल्लेखनीय है। यह इतिहास पंजाब की हिन्दी परीक्षाओं में पाठ्य पुस्तक रूप में पढ़ाया जाता रहा है।

विश्वास है इस मांग के औचित्य को नागरी प्रचारिणी सभा अनुभव करके स्वीकार करेगी।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

परोपकारिणी सभा

श्रीयुत प० भगवान स्वरूप न्यायभूषण (अजमेर) लिखते हैं :—

"आर्य जगत् में ऐसे श्रद्धालु भक्तों की संख्या पर्याप्त है कि जो महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज के उपयोग में आई हुई वस्तुओं के दर्शन करने और अत्यधिक श्रद्धालु उन वस्तुओं के सम्मुख मत्था टेकने को लालायित हैं। यत्र तत्र आर्य समारोहों में ऐसी कतिपय वस्तुओं का प्रदर्शन भी किया जाता रहा है।

ऐसी भावुक जनता की सेवा में यह निवेदन है कि महर्षि इस प्रकार की भावुकता से जड़ पूजा की सम्भावना समझते थे। महर्षि के देहावसान के उपरांत, महर्षि की सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा के २८-१२-१८८१ ई० के द्वितीय अधिवेशन में जिसमें तत्कालीन आर्यसमाजों के प्रतिनिधि स्वरूप लाहौर, बम्बई, पूना, आगरा, लखनऊ, बरेली, जबलपुर, प्रयाग, अजमेर, जयपुर, शाहपुरा आदि बीस आर्यसमाजों के प्रतिष्ठित सभासद् थे। सम्भवतया इसी आशंका के कारण स्वामी जी के वस्त्र, बरतन, काष्ठ की वस्तुएं और परचूण जो सभा के पास थे मेरठ आर्यसमाज को भेज दिये जाने का निश्चय हुआ, जिससे कि मेरठ आर्यसमाज उक्त वस्तुओं की विक्रिति कर जो विशेष न्योछावर देकर खरीदना चाहें उन्हें दे-दे और इसके उपरान्त जो वस्तु बच रहे उनको स्वामी जी के शिष्टाचारी को बिना मूल्य भी दे-दे। सभा के तत्कालीन हिसाब में इस मध्ये २१५) जमा हुए।

इससे स्पष्ट है कि परोपकारिणी सभा के पास ऋषि के उपयोग में आई हुई अधिकतर वस्तुएं हैं ही नहीं, साथ ही ऋषि का मन्तव्य इस प्रकार की जड़ पूजा प्रचलित करने का था। अतः अन्यत्र प्रचलित ऐसे आडम्बरों से विचलित हो *"अन्नेनैव मीय मानाय-थान्वा"* की नीति का पालन कर जो श्रद्धालु आर्यजन अपनी श्रद्धा का इस प्रकार प्रदर्शन कर जड़ पूजा को प्रोत्साहन देते हैं उन्हें अपनी भावुकता पर विवेक-पूर्ण संयम रखना ही शोभनीय है।

यहां तक तो परोपकारिणी सम्बन्धी एक तथ्य पर प्रकाश डाला गया है, क्योंकि मई सन् ५१ के सार्वदेशिक में परोपकारिणी को अंकित कर इस सम्बन्ध में एक टिप्पणी निकली है। सार्वदेशिक की टिप्पणी में जिस पुरानी पुस्तक को लेकर उपरोक्त टिप्पणी चढ़ाई गई है उससे प्रतीत होता है कि महापुरुषों के ज्ञान भण्डार में हस्तलिखित पुस्तकों में और उनके दूसरे पार्थिव अवशेषों में सम्पादक जी ने भी कोई भेद नहीं किया। यह उचित प्रतीत नहीं होता। ज्ञान भण्डार का सम्बन्ध आत्मा से है जो अमर होने के नाते सदैव रक्षणीय है। परन्तु यह बात दूसरे नाशवान भौतिक पदार्थों पर ठीक नहीं उतर सकती।

हमारी सभ्यता, संस्कृति और वैदिक मर्यादा हमारे प्राणरहित शरीर का भी भला इसी में समझती है कि वह शीघ्र से शीघ्र पंच तत्वों में मिला दी जावे। देह से अधिक किसी व्यक्ति का किसी अन्य पदार्थ से क्या सम्बन्ध हो सकता है? परन्तु जब देह को भी केवल भस्म करके ही नहीं प्रत्युत ऋषि के आदेशानुसार अस्थि अवशेष तक को खेत में छितरा देने का विधान किया गया है तब अन्य पार्थिव अवशेषों की जड़ पूजा करना कहां तक युक्ति, धर्म और संस्कृति संगत ठहर सकता है यह विद्वानों के विचारने की बात है।

वास्तविक स्थिति यह है कि मोहर्रम आदि की अवैदिक विचार धाराएं संसार की अपनी विचार

धारा से प्रवाहित किए जा रही हैं, यही कारण है कि आर्य गण भी किसी जागती ज्योति के उपासक होते हुए मरहूमों के मोहर्रम मनाने के महन्त बनते चले जा रहे हैं। कहां तो हमारे उत्सवों का यह प्रभाव था कि मुसलमानों के मोहर्रम भी आमोद प्रमोद के उत्सव में परिणत हो गये और कहां यह दशा कि आज हम भौतिक अवशेषों का प्रदर्शन कर जड़ पूजा करने और सर्द आहें भर बारह मासी मोहर्रम मनाने की सीमा पर आगए।

स्वर्ग वासी मास्टर आत्माराम जी ने ऋषि चरित्र पर दृष्टि डालते हुए आर्य धर्मेन्द्र जीवन में लिखा है कि "ऋषि दयानन्द का स्मारक आर्य समाज है अतएव भला इसी में है कि इस पर हार चढ़ाकर हार का प्रसाद न लो। इस को फलता फूलता हुआ बनाओ और इसका जीता जागता प्रसाद ग्रहण करो"।

——

हमने मई ५५ के अङ्क में परोपकारिणी सभा को प्रेरणा की थी कि वह ऋषि की अवशिष्ट वस्तुओं की सूची जो उसके पास है तय्यार कराके शीघ्र प्रकाशित करादे। आर्य महासम्मेलन हैदराबाद ने भी एक प्रस्ताव के द्वारा इसी प्रकार की मांग की थी। सूची के प्रकाशित होने का जड़ पूजा के साथ क्या सम्बन्ध है इसका निर्णय हम अपने पाठकों पर छोड़ते हैं।

— सम्पादक

शिक्षा का वास्तविक ध्येय

सार्वदेशिक के गतांक में गुरुकुल कांगड़ी के ५५ वें वार्षिकोत्सव पर दिए गए भारत के उप राष्ट्रपति सर्व पल्ली श्रीयुत राधाकृष्णन के दीक्षान्त भाषण का सार प्रकाशित हुआ था। पाठकों के लाभार्थ उक्त भाषण का अविकल हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया जाता है।

— संपादक

श्रीयुत कुलपति जी तथा मित्रो !

सब से प्रथम मैं गुरुकुल की ओर से दिए स्नेह और सौहार्दपूर्ण अभिनन्दन-पत्र के लिए आप का कृतज्ञतापूर्वक धन्यवाद करता हूँ।

तत्वज्ञानी लोग लौकिक कार्यों में भी अपना योग प्रदान करें—यह परम्परा हमारे देश के लिए नवीन नहीं है। इतिहास के अरुणोदय से ही हमारे देश में यह व्यवहार चला आया है। विदेह जनक और श्रीकृष्णचन्द्र की जीवनचर्या इस परम्परा के ज्वलन्त प्रमाण हैं।

यहाँ आकर मैं बड़ा आनन्द अनुभव कर रहा हूं। इस गुरुकुल की यह मेरी दूसरी यात्रा है। स्वाधीनता प्राप्त होने से पूर्व मैं सन् १९४२ में यहाँ आ चुका हूं।

जिन दिनों गुरुकुल की स्थापना हुई थी, उस समय देश में चहुंओर अन्धकार छाया हुआ था। यह गुरुकुल देश के उन गिने चुने शिक्षा प्रतिष्ठानों में से एक था, जिन्होंने इस शिक्षण-संस्कृति की यज्ञाग्नि को प्रबुद्ध और सतेज रखा था। आज यह ज्योति और अधिक दीप्तिमान् है। हम यह तो नहीं कह सकते कि इस ज्योति ने इस देश के समस्त क्षेत्रों से अन्धकार को दूर भगा दिया है परन्तु इतना अवश्य हुआ है कि हम जन-समाज के मनों और हृदयों को आलोकित करने का यह शुभ कार्य अपने हाथ में लेने में समर्थ हुए हैं। शिक्षातत्व के वे अनेक सिद्धान्त, जो आज अनेक शिक्षणालयों द्वारा स्वीकार किए जा रहे हैं, सबसे पहले इस गुरुकुल द्वारा प्रवर्तित किए गए थे।

आपने इसे एक आश्रमिक विश्वविद्यालय बनाया है। आपने छात्रों के संख्यातिरेक को नापसन्द किया है। आप इस देश की पुरातन संस्कृति से प्रेरणा प्राप्त करने में विश्वास रखते हैं। आपने मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम स्वीकार किया हुआ है। इन समस्त सिद्धान्तों को आज के शिक्षातत्वज्ञ स्वीकार करना चाहते हैं।

कालेजों पर यह आक्षेप किया जाता है क्योंकि वहां छात्र इतनी अधिक संख्या में एकत्र हो जाते हैं, जिनकी वे कालेज समुचित व्यवस्था नहीं कर पाते। परिणाम यह होता है कि वहाँ अनुशासन-हीनता आती है और गुरु तथा शिष्य के बीच में निकट सम्पर्क की भावना पुष्ट नहीं हो पाती।

यहूदी धर्म ग्रन्थों में एक प्रसिद्ध वचन है—'जेरुशलम का विनाश हो गया, क्योंकि वहां पर शिक्षकों का सम्मान नहीं होता था।' यह कोई नवीन बात नहीं है। प्राचीन समय से हम इस सचाई को बराबर सुनते आ रहे हैं। जब शिक्षकों का सम्मान नहीं होता और गुरुजनों की शिक्षाएँ श्रद्धापूर्वक नहीं सुनी जातीं, तो समझ लेना चाहिए कि देश का पतन समीप है। यदि गुरुजन अपना सम्मान चाहें तो उन्हें शिष्यों के निकट सम्पर्क में आना चाहिए। उन्हें छात्रों के साथ सौहार्द स्थापित करना चाहिए। गुरुशिष्य का यह सौहार्द और सान्निध्य सार्वजनिक प्रवचन करने

मात्र से नहीं हो सकता। सौहार्द और सम्मान की भावना के लिए गुरुशिष्य का निकट सम्पर्क होना चाहिए।

यहाँ गुरुकुल में छात्रों का भीड़भड़क्का नहीं है। यहाँ आप लोग संख्या वृद्धि के लोभ से अभिभूत नहीं हैं। यहाँ अन्तेवासियों की संख्या मर्यादित है। मुझे ज्ञात हुआ है कि आपके यहाँ ४०० अन्तेवासी हैं। आपने उनको आदर्श जीवन जीने की अनुकूलता प्रदान की है। आपके छात्रों को अपनी मातृभूमि के वातावरण को तथा उस की संस्कृति को हृदयङ्गम करने का पूरा अवसर मिलता है।

प्रश्न उठता है—गुरु और शिष्य के बीच में कैसा सम्बन्ध होना चाहिए? इस विषय में ऊँचे मनीषी-जनों के विचार हैं कि शिष्य को अपना विकास स्वयं साधने दीजिए। उसे स्वयं ही अपने व्यक्तित्व का निर्माण करने दीजिए। इस विषय में अन्य विचारक, व्यक्ति के मानसिक निर्माण के लिए समष्टिवादी (समप्रवादी=टोटेलिटेरियन पद्धति को अपनाने का आग्रह रखते हैं। वे कहते हैं कि जिस प्रकार अपने हस्तकौशल से हम एक मृत्तिकापिण्ड को वांछित रूप प्रदान कर सकते हैं, उसी प्रकार व्यक्ति का निर्माण भी किया जा सकता है। परन्तु हमारे देश की परम्परा इस विषय में उस से भिन्न है। हम व्यक्ति का सम्मान करते हैं। हम व्यक्ति के गौरव को समझते हैं। श्री कृष्णचन्द्र जी गीता में अर्जुन के प्रति अच्छी से अच्छी शिक्षा देने के पश्चात् भी कहते हैं—यथेच्छसि तथा कुरु—अपनी इच्छा के अनुकूल कार्य करो। वे अपने विचारों को अर्जुन के मन पर थोपने का प्रयत्न नहीं करते। वे कहते हैं—मुझे सत्य की जैसी प्रतीति हुई है, वैसी तुम्हारे समक्ष प्रस्तुत करदी। परन्तु मेरा काम यह नहीं कि मैं अपने दृष्टिबिन्दु को तुम पर थोप डालूँ। अपनी अन्तरात्मा की सहायता से सत्य को तुम्हें स्वयं खोज निकालना चाहिए। उसके बाद अपनी ही न्यायबुद्धि से तुमने यह निश्चय करना है कि तुम्हारे लिए ठीक मार्ग कौन सा हो सकता है?" हमारे देश ने इसी परम्परा को अक्षुण्ण रखा है कि व्यक्ति का सम्मान करो। किसी भी विषय पर जो कुछ भी श्रेष्ठतम विचार किया गया है, उसे व्यक्ति के समक्ष प्रस्तुत कर दो और उस पर निर्णय करने का सम्पूर्ण अधिकार उसी को सौंप दो। अभिप्राय यह है कि व्यक्तित्व की पवित्रता और प्रतिष्ठा का आदर किया जाता रहा है। गुरु और शिष्य के व्यवहार का अनुशासन करने वाली पद्धति यही होनी चाहिए। गुरुजनों को इस प्रकार कदापि नहीं सोचना चाहिए कि इन समस्त व्यक्तियों के मनों में अपने विचार हथौड़े से कूट कर ठूँस दिए जाँय।

शिष्यों के प्रति इस भावना से दृष्टिपात करना चाहिए कि ये आत्मा-रूपी कोमल कलिकाएँ कुसुमों के रूप में विकसित होने के लिए प्रयत्न-शील हैं। गुरुजनों का सही मनोभाव इसी प्रकार का होना चाहिए।

रूस इङ्गलैंड, अमेरिका, यूनान, और रोम आदि विभिन्न देशों ने शिक्षा के ध्येय के विषय में विभिन्न विचार स्वीकार किए हैं। हम भारतीयों का शिक्षा के स्वरूप के विषय में एक सर्वथा नवीन दृष्टिकोण रहा है। भारतीय मनीषियों ने बताया है कि शिक्षा मानवात्मा की स्वाधीनता के लिए होनी चाहिए—'साविद्या या विमुक्तये।'

शिक्षा का प्रयोजन यही होना चाहिए कि वह मनुष्य की आत्मा में इस प्रकार का सामर्थ्य उत्पन्न कर दे कि उसको नया जीवन—द्वितीय जन्म—द्वितीयलोक (स्वाधीनता और आध्यात्मिकता का लोक) प्राप्त हो जाय।

तद् द्वितीयं जन्म,
माता सावित्री,
पिता आचार्यः।

यद्यपि हम सब का ही जन्म प्राकृतिक परिस्थितियों से सम्भूत तथा भौतिक आवश्यकताओं से भरे हुए संसार में हुआ करता है, तथापि आवश्

को हम भौतिक शक्तियों की प्रतिक्रियामात्र नहीं समझ लेना चाहिए। इसकी एक अपनी ही प्रकृति है। हमारे यहाँ कुछ ऐसे विचारक हैं जो यह कहते हैं कि आध्यात्मिक स्वाधीनता के लोक में मानवीय भावनाओं की उपेक्षा होती है, जो कि मानवीय जीवन का इहलौकिक पहलू है। परन्तु उनका यह कथन ठीक नहीं।

जब प्रश्न पूछा गया कि अमृत क्या है तो ऋषि द्वारा उत्तर दिया गया—

प्राणानां आरामः।
मनसः आनन्दः।
शान्ति समृद्धिः॥

अर्थात—(शरीर) के विश्राम, मन के आनन्द और आत्मा की शान्ति-परमशांति- में अमृत समाया हुआ है। मनुष्य तीन तत्वों से बना है—शरीर, मन, और आत्मा। मानवीय प्रकृति के इन तीन तत्वों को विकसित और समृद्ध बनाने वाली शिक्षा को ही हम सर्वाङ्गीण शिक्षा कह सकते हैं।

हमें यह नहीं समझना चाहिए कि विद्या के आदान प्रदान और दाक्षिण्य के हस्तान्तरण का नाम ही शिक्षा है। उनकी बड़ी आवश्यकता है। इस में भी कोई सन्देह नहीं कि प्रत्येत व्यक्ति को इस योग्य होना चाहिए कि वह अपनी जानकारी और कार्य पटुता से अपना योगक्षेम (आजीविका) चला सके। कहा भी है—'अर्थकरी विद्या'। परन्तु यही सब कुछ नहीं। यदि आप वैज्ञानिक दृष्टि से निपुण हो जाते हैं, यदि आप अपनी आत्मा के अन्य पहलुओं को विकसित नहीं करते, और यदि आप यह नहीं मानते कि विद्या और प्रज्ञा के अतिरिक्त भी कोई उदात्त तत्व आपके जीवन में विद्यमान है तो आप अपने जीवन के स्वामी होने के बजाय केवल राक्षस बन जायँगे। किसी ने ठीक ही कहा है—

राक्षसो विपरीतत्वे—
राक्षसो भवति ध्रुवम्।

अर्थात यदि हम अपने जीवन के आध्यात्मिक पार्श्व की उपेक्षा करेंगे तो अवश्य ही हम राक्षस (दानव) बन जायँगे।

अतः यदि हम वर्तमान जगत् की विपदाओं और यन्त्रणाओं से बचना चाहें तो हमें केवल विज्ञान की प्रगति आवश्यक नहीं है, अपितु साहित्य, कला, विद्याविनोद, और प्रज्ञा प्रगति में उन्नति करनी होगी। जब तक हम मानवीय प्रकृति के इस पहलू को विकसित और समुन्नत नहीं करते, विज्ञान की ये त्रासदायक उपलब्धियाँ मानवता के लिए विनाश-कारिणी सिद्ध होंगी, किसी भी प्रकार सहायक नहीं बनेंगी। यह सब कुछ उन व्यक्तियों पर निर्भर है जिन्होंने इन वैज्ञानिक आविष्कारों को अपना वशवर्ती बनाया हुआ है। हम आग से क्या करें, यह अग्नि की प्रकृति के ऊपर निर्भर नहीं है अपितु आग का प्रयोग करने वाले व्यक्ति के स्वभाव पर आश्रित है। आग से आप अपनी अंगीठी गरम कर सकते हैं, अपना भोजन पका सकते हैं तथा उसे आप अपने पड़ौसी के मकान को जलाने में भी प्रयुक्त कर सकते हैं। इसी प्रकार अणुबम्ब एक यन्त्र है। वह आजकल मनुष्य के हाथ में पकड़ा दिया गया है। क्या हम उस का उपयोग मानवता, सौन्दर्य और जीवन के प्रकर्ष के लिए कर रहे हैं या विनाश के लिए? मानव-जीवन अणुशक्ति पर आश्रित नहीं है, अपितु उन व्यक्तियों की प्रकृति पर अवलम्बित है जिन्होंने इस शक्ति का पता लगाया है। स्थान की दृष्टि से जगत् सिकुड़ता जा रहा है। ज्यों ज्यों वह छोटा होता जाता है, त्यों-त्यों हमारे हृदय विशाल होने चाहिएँ।

अभी आप को उपदेश देते हुए श्री आचार्य जी ने एक ही वस्तु के आन्तरिक और बाह्य पार्श्व का निर्देश किया है। इस तत्व के अन्तर्वर्ती भाग को 'सत्य' कहते हैं। वही तत्व जब व्यवहार में मूर्तस्वरूप धारण करता है तब वह धर्म कहाता है।

सत्यान्न प्रमदितव्यम्।
धर्मान्न प्रमदितव्यम्।
कुशलान्न प्रमदितव्यम्॥

धर्म वही है जो मानवता को एकत्र करता है। अधर्म मानवता को विभक्त करता है। धर्म वह है, जो समाज को धारण किए रखता है—एक सूत्र में पिरोए रखता है। अधर्म हमें विश्रृङ्खल (विकीर्ण) कर देता है। धर्म हमारा अवलंबन है। अधर्म से हमारा पतन होता है। धर्म के नाम पर हम ने अपने देश में इस प्रकार के अनेक आचरण स्वीकार किए हुए हैं जो वस्तुतः अधर्म हैं। सब प्रकार के जाति-पांति के प्रभेद तथा वे समस्त आचरण जिन के द्वारा हम ने अबला नारियों और निम्न श्रेणी के लोगों का दमन और शोषण किया हुआ है, हमारे विनाश का कारण सिद्ध हुए हैं।

यज्ञ के नाम पर वृक्ष-वनस्पतियों को काट कर, पशुओं की हत्या कर, उन का रक्त बहा कर, यदि हम स्वर्ग जा सकते हैं तो बताइए, नरक में किस मार्ग से जाएँ ?

वृक्षाँश्छित्वा पशून् हत्वा
कृत्वा रुधिर-कर्दमम् ।
यद्येवं गम्यते स्वर्गः
नरकः केन गम्यते ॥

सदा स्मरण रखिए, सच्चे धर्म के महान् समर्थक सदा सुधारक वृत्ति के लोग (प्रोटेस्टेन्ट मनोभाव के व्यक्ति) ही रहे हैं। धर्म के क्षेत्र में वे महान् सुधारक निहित स्वार्थों के विरुद्ध सदा आवाज उठाते रहे हैं। महर्षि दयानन्द और स्वामी श्रद्धानन्द जैसे महाप्राण पुरुषों ने हमारे देश की प्रामाणिक परम्पराओं का प्रतिनिधित्व किया है। वे अन्धविश्वासों के विरुद्ध सदा जूझते रहे हैं।

हमारी यह मातृभूमि सदा से महान् रही है। आपको उपदेश करते हुए आपके आचार्य जी ने अभी बताया है कि हमारे ऋषि मुनियों ने इस पवित्र भूमि को अपने ज्ञान के आलोक से आलोकित किया है। उन्हीं के योगदान से यह देश गौरवशाली बना है। इस देश की संस्कृति की सुदीर्घ परम्पराएँ इस कारण अक्षुण्ण नहीं रही हैं कि हम लोग अशुद्ध रूप में उनको दुहराते रहे हैं। उसका प्रधान कारण यह है कि हम परिवर्तन के लिए सदा सन्नद्ध रहे हैं। अपने आचार-व्यवहारों और क्रिया-कलापों को अपने आधारभूत विचारों के अनुसार परिवर्तित करने के लिए हम सदा तैयार रहते आए हैं। जब जब सच्चे आदर्शों और विकृत आचारों के बीच विसंवाद (विरोध) आता था, तब-तब वे विचारक अशुद्ध आचरणों को छोड़कर जाति को पुनः धर्म के सच्चे पथ पर प्रवर्तित करते रहे हैं।

आज मानव निर्माणमूलक कार्यों की उदात्त उपलब्धियों के लिए अभीप्सा कर रहा है। उस के लिए मेरी समझ में ध्यान (एकाग्रता) की, चित्त को केन्द्रित करने की बड़ी आवश्यकता है। इस संसार में जो मनुष्य तुच्छ विषयों के प्रति अपनी शक्तियों का अपव्यय करते रहे हैं, वे जीवन में किसी महान् सिद्धि को नहीं प्राप्त कर सके हैं।

आज इस विश्वविद्यालय से विदा होने वाले नवयुवकों का यह कर्तव्य है कि वे समस्त जीवन में स्वाध्याय और प्रवचन को अपना व्रत रखें—आपके आचार्य जी ने भी आपको यही उपदेश दिया है—स्वाध्याय प्रवचनाभ्यां न प्रमादितव्यम्।

आजकल हमें इस प्रकार के बहुत छात्र दिखाई देते हैं जो किसी एक पुस्तक को पूरी तरह—आद्योपान्त पढ़ते हों। अपने शिक्षकों से पूछ कर वे नोट्स लिख लेते हैं। परीक्षा के दिनों में उनको उत्तर-पत्रों पर उगल देते हैं और उसके बाद उन पाठों को वे सदा के लिए भुला देते हैं। इतिहासज्ञ गिब्बन ने कहा है—'भारत की समृद्धि मिलने पर भी मैं अध्ययन के आनन्द को नहीं छोड़ सकता।' प्रत्येक विश्वविद्यालय को चाहिए कि वह अपने तरुणों के मन में इस भावना को बद्धमूल करे।

प्रिय नवयुवको, आपने इस शिक्षा-निकेतन में भारतीय-संस्कृति की भावना को हृदयङ्गम किया है। मैं आशा करता हूं कि आप उसके प्रभाव और तेज पर विश्वास रखेंगे। स्मरण रखिए, सत्य के साथ उस संस्कृति की एक-रूपता है। इसी के द्वारा आप जनता

यह कैसा समाजवाद है ?

(लेखकः—आचार्य श्रीनरदेवशास्त्री, वेदतीर्थ)

जबसे आवडी कांग्रेस के महाधिवेशन में समाजवाद की गूंज हुई है, तभी से सर्वत्र उसी की प्रतिध्वनि सुनायी दे रही है। इस समाजवाद का यही अर्थ है कि उत्पादन और उत्पादन के साधनों पर जनता का नियन्त्रण हो और उसका बंटवारा न्यायानुकूल हो। वैसे देखा जाय तो यह बात आकर्षक है और जहां तक सिद्धान्त की बात है कोई ऐसी आपत्तिजनक बात भी नहीं प्रतीत होती।

क्या जनता का नियन्त्रण हो सकता है ? वर्तमान स्थिति में तो यह सम्भव प्रतीत नहीं हो रहा है। जनता के नियन्त्रण का कभी यह अर्थ तो हो ही नहीं सकता कि सरकार का नियन्त्रण हो। कोई यह कहे कि जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि ही तो विधानसभाओं, विधान परिषदों, संसद् तथा राज्यपरिषद् में जाते हैं और उन्हीं की तो सरकार बनती है, तब सरकार के नियन्त्रण को ही जनता का नियन्त्रण क्यों न मान लिया जाय ?

पूना के श्री गाडगिल महोदय का कथन है कि 'सत्ता और सम्पदा इन दोनों का समीकरण करके यह समझना चाहिये कि सत्ता और सम्पदा एक सी ही हैं—जहां-जहां सम्पदा है वहीं-वहीं तो सत्ता होती है अथवा बढ़ती है। इसलिये कोई भी ऐसा और इतना सम्पत्तिशाली नहीं होना चाहिये जो सम्पदा के जोर पर समाज की प्रगति को रोक सके। और सम्पदा विशिष्ट अथवा नियत मर्यादा को पार करने लगे तो वह सम्पदा सरकार में जमा करा दी जानी चाहिये। यदि ऐसा न हुआ, तो सरकार धूल में मिल जायगी। जनता अब जाग्रत् हो गयी है। इसलिये सम्पदा की कोई मर्यादा नियत होनी अत्यन्त आवश्यक है। ऐसा हुआ तो जनता में नया वातावरण उत्पन्न हो जायगा, उसमें प्रेरणात्मक शक्ति का संचार होगा। इन्श्योरेन्स कम्पनियों, बैंकों तथा उद्योग-धंधों को राष्ट्र की सम्पत्ति (राष्ट्रीयप्रकरण) बनाकर उससे जनता का कल्याण हो सकेगा। आजकल मैनेजिंग एजन्सी के कमीशन के नाम से पन्द्रह करोड़ रुपये जाते हैं. इस केन्द्रीयकरण को क्यों न बन्द किया जाय। यदि सचमुच इस ढंग की समाज-रचना करनी है तो—१—नियन्त्रण, २—कार्यक्षम शासकढंग, ३—जनता का सहकार्य—इन तीनों की आवश्यकता है। इसी बात का ध्यान रखकर अर्थसंकल्प (बजट) बनाना चाहिये। यदि आप क्रान्ति नहीं चाहते तो संविधान का क्रान्तिकारक प्रयोग कीजिये; तभी हमारा समाजवाद का ध्येय साध्य होगा।'

सरकार के अथवा उन-उन प्रदेशों के अर्थसंकल्पों (बजटों) को देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि उनमें उस प्रकार के समाजवादी संकल्पों की गन्ध तक नहीं

के हृदयों और मनों पर विजय प्राप्त कर सकेंगे। मैं आप से यह भी कह देना चाहता हूं कि वह भारतीय संस्कृति, अपने अन्दर अद्भुत शक्ति रखती है।

आपको उस संस्कृति का उत्तराधिकारी बनना चाहिए। उसके लिए आपको अभिमान करना चाहिए; आप इस संस्कृति के महत्व को अपने हृदयों में स्थापित करें और उस की वृद्धि करें। यदि आप ऐसा करेंगे तो आप केवल अपने देश की ही नहीं अपितु सारे विश्व की कुछ सेवा कर सकेंगे। मैं आशा करता हूं कि आपने इस विद्या मन्दिर में जो शिक्षा पाई है, वह आपकी आकांक्षाओं को सफल बनाने में सहायक होगी। अनुवादक-शंकरदेव विद्यालंकार

है। हां, उनके कल्याणकारी राज्यके-से संकल्प हैं। पहले के और इन बजटों में कुछ भी तो भेद प्रतीत नहीं हो रहा है। इसलिये केवल कोरे समाजवाद अथवा ऊपरी-ऊपरी सुहावने दीखनेवाले समाजवाद के नारे से भयभीत होकर विचलित होने की आवश्यकता नहीं। समानता का राग सुन्दर लगता है पर यह कोई नहीं सोच रहा है कि कैसी समानता, किस विषय में समानता अपेक्षित है। फिर यह बात हमारी समझ में नहीं आ रही है कि नये ढंग का समाजवाद क्या 'कल्याणकारी राज्य' से अच्छा रहेगा। यह बात भी हमारी समझ में नहीं आ रही है कि सत्ता और सम्पदा को हम सम-समान कैसे और क्यों मान लें। सत्ता और सम्पदा दोनों समान नहीं हो सकते। सत्ता-वाला व्यक्ति सत्ता के जोर पर दूसरों की सम्पदा को हथिया सकता है, किंतु सम्पदा वालों का सत्ता पर अवश्य अधिकार हो जायगा अथवा हो सकता है, यह बात किसी तर्क से सुसंगत नहीं बैठती। फिर यदि सम्पदा का अर्थ केवल धन से है तो और बात है। सम्पदा तो कई प्रकार की होती है। बल सम्पदा धन-सम्पदा से सदा बड़ी रहती है, बल-सम्पदावाला बल-सम्पदा के बल पर धन-सम्पदा वाले का धन छीन सकता है, झपट सकता है। ज्ञान-सम्पदा वाले का निराला ही बल रहता है और बल-सम्पदा वाला अकेला सौ-सहस्र ज्ञान सम्पदा वालों पर अधिकार कर सकता है। कहा भी है उपनिषद् में—

"शतं ज्ञानिनामेको बली कम्पयते।"

अकेला बली सौ ज्ञानियों को कंपा सकता है।

संसार के अनेक देशों की क्रान्तियों पर दृष्टि डालने से यह बात स्पष्ट हो जाती है। संसार में जहां-जहां सैनिक (मिलिटरी) क्रान्ति हुई, वहां के ज्ञानी-मानी देखते ही रह गये और कुछ-का-कुछ हो गया। बल-सम्पदा के सम्मुख अर्थ-सम्पदा हेय है। यह सत्य है कि बल-सम्पदा वालों को भी अर्थ-सम्पदा चाहिये, पर उनके पास वह सम्पदा न हो तो वे उस पर बल-पूर्वक अधिकार कर सकते हैं।

फिर यह कहना कि कोई भी ऐसा सम्पदाशाली न हो जो जनता की प्रगति में बाधा डाल सके और सम्पदा की कोई मर्यादा रहनी चाहिये और सम्पदा मर्यादा के बाहर जाने लगे तो उसको सरकार के सुपुर्द कर देनी चाहिये—इत्यादि कथन का क्या अर्थ है?

सरकार के पास बल सम्पदा तो रहती ही है और उसी के पास अर्थ-सम्पदा चली जाय तो वह क्या अनर्थ नहीं कर सकती? सभी सम्पदाओं को सरकार के पास केन्द्रित करने से उसको लक्ष्मीमद नहीं चढ़ सकेगा और वह अनर्थ नहीं कर सकेगी, यह बात तो नहीं है।

सुख तो इसी में है कि सम्पदाओं का विकेन्द्री-करण हो, सब समुदाय परस्पर सहयोग से रहें।

श्री जवाहरलाल जी नेहरू कहते हैं कि हम रूस का अनुकरण नहीं करेंगे। हम चीन का भी अनुकरण नहीं करना चाहते। हम अमरीका के ढंग का भी समाजवाद नहीं चाहते।

फिर क्या चाहते हैं?

यह चाहते हैं कि भारत की सभ्यता और संस्कृति तथा वातावरण के अनुरूप जो समाजवाद ठीक उतरे, उसी को अपनावें अर्थात् भारत में, अपने देश में पाश्चात्य ढंग के समाजवाद को देश, काल, पात्र और परिस्थिति के अनुरूप ढालना चाहते हैं।

यह भी एक गोल बात हुई

असली बात यह है कि भारतीय शासन के सूत्र धार स्वयं अपने मन में निश्चित नहीं हैं कि कैसा समाजवाद चलाया जाय। भारत की पवित्र भूमि पर यदि कोई समाजवाद पनप सकता है तो वह हमारे ऋषि-मुनि-महर्षियों द्वारा वैदिक काल में प्रचलित समाजवाद ही प्रचलित हो सकता है और उसी समाज-वाद द्वारा भारत तथा संसार सुखी हो सकता है। चाहे कोई व्यक्ति हो, समाज हो, समुदाय हो, वह सब काम नहीं कर सकता, यदि करने का प्रयत्न करेगा तो सफल नहीं हो सकता। भारतीय समाजवाद स्वभाव-

शास्त्र पर निर्भर है और स्वभाव निर्भर है प्रकृतिगत तीन गुणों पर—सत्व, रज, तम इन तीनों गुणों पर—जिसकी सत्ता व्यक्ति, समाज तथा समुदाय को विवश करती रहती है।

पर प्रश्न यह है कि क्या वर्तमान समय में उक्त प्रकार की समाजवादी व्यवस्था चल सकती है? वैदिक पद्धति के स्वराज्य के अभाव में उस प्रकार का भारतीय समाजवाद कैसे चल सकेगा? इसीलिये विवश होकर हमारे नेताओं ने स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् पाश्चात्य ढंग का संविधान बनाया, उसको जनता के प्रतिनिधियों द्वारा स्वीकार कराया, तदनुसार मतदान-प्रणाली चलायी, तद्द्वारा प्रतिनिधि चुनवाये, राज्य-शासन चलाया और वर्तमान प्रचलित धर्म अथवा धर्माभासों द्वारा बाधा न पड़े, इसलिये राज्यप्रणाली को धर्मनिरपेक्ष घोषित किया। अब इस नवीन पद्धति के राज्य को आठ वर्ष होते हैं—अनुभव से यही कहना पड़ता है कि—

नवे तस्मिन् महीपाले सर्वं नवमिवाभवत् ॥
(कालिदास)

इस नयी पद्धति में सब नया-ही नया देखियेगा—देखने के लिये तैयार रहियेगा। धर्मशून्य राजनीति और राजनीतिशून्य धर्म अथवा विज्ञानशून्य धर्म अथवा धर्मशून्य विज्ञान—ये सब भय देने वाले हैं, भय दे रहे हैं। धर्मशून्य राज्यपद्धति के कारण संसार में सदाचार, उच्च नैतिक गुणों और तत्वों का नाश ही होता जा रहा है। धर्मशून्य विज्ञान के कारण संसार में 'मात्स्यन्याय' प्रचलित हो रहा है। जैसे एक बड़ी मछली छोटी मछली को निगल जाती है और उन दोनों को उनसे बड़ी मछली हड़प जाती है, वही दशा संसार के छोटे-बड़े राष्ट्रों की हो रही है। सभी अशान्ति फैलाने में कारण बन रहे हैं और सभी शान्ति की बातें करते रहते हैं। संसार में इस गति-विधि से शांति, सुख समृद्धि नहीं होने वाली है। जिसके पास सम्पदा है वह भी दुःखी, जिसके पास नहीं है वह भी दुखी। स्वतन्त्र राष्ट्र भी बेचैन, पराधीन अथवा दबे हुए राष्ट्र भी बेचैन। कोई सुख-समाधान से अपना काम नहीं कर रहा है।

फिर क्या हो?

हो क्या? और हो भी क्या सकता है, जब कि जिस (भारत) के पास इन दुःखों की ओषधि है; वह स्वयं उस रामबाण ओषधि का सेवन नहीं कर रहा है तथा और लोग भी उस ओषधि का सेवन करना नहीं चाहते, तब यही कहना पड़ता है कि संसार को अभी अनेक दुःख देखने हैं और देखने पड़ेंगे। इस समय संसार सुख की खोज में तो है; शान्ति की खोज में तो है पर वह दुःख के मार्ग में चल पड़ा है। जैसे भूकम्प के धक्के लगते रहते हैं, इसी प्रकार संसार को क्रान्तियों और उत्क्रान्तियों के धक्के लग रहे हैं। प्रत्येक राष्ट्र रोगी है और प्रत्येक ही वैद्यराज है। कौन किसकी सुनता है? सुनेगा, सुनेगा, पर अभी देर है।

फलं कतकवृक्षस्य यद्यप्यम्बुनिवारकम्।
न नामग्रहणादेव तस्य वारि प्रसीदति ॥

निर्मली के बीज में गदले जल को शुद्ध करने की शक्ति है, पर कोई बुद्धिमान् केवल निर्मली के बीज का नाम लेता रहे, नाम रटता रहे और उसका यथारीति प्रयोग न करे तथा उसका प्रयोग करना न जाने तो उससे कभी भी कोई भी लाभ होने वाला नहीं है। संसार के उपकार को परम धर्म माननेवालों की, 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' की वही दशा हो रही है। कोरे नाम की रट है, कोरे नाम की धुन है। कोरे शब्द हैं, कोरे नारे हैं, कोरे महानाद हैं, कोरे घोष अथवा उद्घोष हैं—पर उनमें क्या सार्थकता है।

सब अपने गुणकर्म स्वभावानुरूप कर्म करें और उन कर्म समुच्चयों को एक २ जाति एक २ समुदाय-परम्परा द्वारा आगे भी चलाते रहें और ऊपर राजदण्ड जागता रहे, जिससे सब अपने-अपने कर्म समुच्चयों का यथार्थ-रूप में पालन करते रहें; फिर देखिये कैसा सुन्दर, व्यावहारिक, स्वाभाविक सबको सुखप्रद, शान्तिप्रद समाजवाद उत्पन्न होता है। भारतीय स्वाभाविक त्यागमय भावनाप्रधान समाजवाद ही संसार को सुख-

* अन्तर्दृष्टि *

[एक आत्मदर्शी]

बाह्य रूप देखने और पहिचानने में तो पशु भी कुशल होते हैं, पर भीतर देखने की शक्ति उस बुद्धि में होती है जो मानव को मिली है। आप किसी भी व्यक्ति या वस्तु के—जो कुछ भी जगत दृश्य दीखता है उसके—बाहर ही देखकर अपने आपको ज्ञाता न मानिये; 'सब कुछ' के भीतर देखिये। संसार में अनेक वस्तु ऐसी हैं जो बाहर से देखने में सुन्दर और मनोहर प्रतीत होती हैं, पर भीतर देखने में अति घृणित और असुन्दर और घृणित दीखती हैं पर उनका भीतरी रूप सुन्दर और पवित्र तथा सर्वोपयोगी होता है। एक वेश्या के बाह्य सौन्दर्य को देखते हुए भीतरी प्रकृति को न देखकर तथा एक पतिव्रता सती-साध्वी नारी की वेषभूषा में वेश्या की अपेक्षा असुन्दर रूप देखकर मानव कितना धोखा खा सकता है? ऊपर की आकृति बाहरी नेत्रों से दीखती है; भीतर की प्रकृति अथवा स्वभाव को विवेकी बुद्धि देख पाती है। इन्द्रिय दृष्टि से तो पशु पक्षी, कीट-पतंग आदि भी देखते हुए विषय रस का आस्वादन करते हैं, पर जिन प्राणियों में इन्द्रियों के पीछे विवेकवती दृष्टि खुली है, वे ही यथार्थ में मानव हैं, ठीक ठीक देखना जानते हैं। बाह्य दृष्टिसे भोग और अन्तर्दृष्टिसे योग का मार्ग दीखता है। बाहर से देखने में अनुकूल या प्रतिकूल क्रिया का दर्शन होता है; भीतर देखने में क्रिया के पीछे भाव और भाव में हितकर या अहित उद्देश्य का अनुभव होता है। किसी भी प्रकार के सुख तथा दुःख को बाहर से ही न देखकर भीतर देखिये। बाहर से जिस वियोग दुःख का कारण किसी प्रिय का सम्बन्ध-विच्छेद दीखता है, भीतर से उसका कारण मोह मिलता है। बाहर से जिस हानि के दुःख का कारण धन सम्पत्ति का खो जाना प्रतीत होता है, भीतर से उसका कारण केवल लोभ ही मिलता है। बाहर से जिस अपमान के दुःख का कारण अपने अधिकार पर आघात करने वाला व्यक्ति दीखता है; भीतर से उसका कारण प्रबल अहंकार या अभिमान ही मिलता है।

बाहर से देखने में एक व्यक्ति मान, माया और भोगों से घिरा हुआ सुखी दीखता है, पर उसी को

शान्ति का धाम बनाने की शक्ति रखता है। अध्यात्म-शून्य कोरे भौतिकवाद की आधारशिला पर खड़ा किया हुआ, ऊपर से भव्य दिखलायी पड़ने वाला किन्तु भीतर से खोखला समाजवाद भारतीय वातावरण में पनप ही नहीं सकता। या तो भारत अपनी आध्यात्मिकता को तिलाञ्जलि देकर पाश्चात्यों का अनुसरण करके उन-जैसा बन जाय अथवा अपनी आध्यात्मिकता की रक्षा करके संसार का मार्गदर्शक बने। भारत यदि पाश्चात्यों का अन्धानुकरण कर उनका शिष्य बनता है तो भारत का भारतत्व गया—वह मानो मर गया। भारत ना तो पाश्चात्यों का शिष्य बनकर अपनी सत्ता, महत्ता अथवा गुरुता खो बैठे, अथवा पुनः गुरु बनकर संसार का मार्गदर्शक बने। ये दो ही मार्ग हैं। बीच का कोई मार्ग नहीं है। देखें, जो भारत अब तक सहस्रों वर्षों तक किसी प्रकार अपना अस्तित्व सुरक्षित रख सका, वह आगे क्या करता है, कैसे करता है, इस ओर संसार का ध्यान लग रहा है।

भीतर से देखने पर पता चलता है कि उसके सारे सुखों का अन्त दुःखों में होने जा रहा है। बाहर से एक व्यक्ति सुख-भोगों से विरक्त होकर दुःख सहता हुआ दीखता है, पर भीतर से देखने पर पता चलता है कि वह सुख-दुःख के बन्धन से मुक्त होकर नित्य सत्य-आनन्द की ओर गतिशील है। बाहर से एक व्यक्ति दूसरों की सम्पत्ति लूटते हुए, छल कपट से दूसरों को धोखा देकर ठगते हुए धन, धान्य और परिवार से फलता-फूलता सुखी दीख पड़ता है, पर भीतर की ओर दृष्टि करने से पता चलता है कि कभी बहुत ही कठिन श्रम से दुःख सहकर उसने किसी की सेवा की है, असह्य तप से दूसरों को आराम देकर मजदूरी करते हुए जीवन बिताया है और अब संचित पुण्यफल का अनुचित ढंग से-अमर्यादित विधि से भोग करते हुए आगे के लिये और अधिक पुण्य-सम्पादन करने की अपेक्षा पाप बढ़ा रहा है - जिसका परिणाम दुःख भोग है; इसके विपरीत जो धर्मकर्तव्य का ध्यान रखकर बाहर से दुखी दीखता है, दूसरों से सताये जाने पर भी विचलित नहीं होता है, उसकी भीतरी स्थिति पर विचार करने से यह बात समझ में आती है कि उसके पूर्वकृत अशुभ कर्मों का अन्त हो रहा है और वह बहुत उच्च स्थान प्राप्त करने जा रहा है।

जब कभी हमारे दुःखों के कारण बाहर से व्यक्ति, प्रारब्ध कर्म अथवा भगवान् दीखते हैं तभी भीतर देखने पर उन (दुःखों) के कारण अपने बनाये हुए दोष प्रतीत होते हैं। चाहे वे मोह हों या लोभ अथवा अभिमान हों। भीतर से इन दोषों को देख लेने पर हम उनके त्याग में स्वतन्त्र हैं, यह दूसरी बात है कि सुखासक्ति ऐसा न करने दे। बाहर से अति सुन्दर दीखने वाली देह भीतर से अस्थि, मांस, मज्जा, रुधिर, कफ आदि का भाण्ड-पात्र प्रतीत होता है। बाहर से अति सुखदायी प्रतीत होने वाले विषय-भोग भीतर से अति दुःखदायी तथा शक्ति का ह्रास और अन्त में विनाश करने वाले सिद्ध होते हैं। बाहर से अति भयानक प्रतीत होने वाले मृत्यु तथा दुःख भीतर से मुक्ति और आनन्द की ओर प्रेरित करने वाले होते हैं। बाहर देखने से जहां अनन्त जीवों का विस्तार दृष्टिगत होता है, वहीं भीतर से एक सच्चिदानन्द तत्त्व द्वारा सब का विस्तार अनुभूत होता है। शब्द के भीतर अर्थ, अर्थ के भीतर भाव, भाव के भीतर रहस्य तथा उद्देश्य और लक्ष्य और लक्ष्य के भीतर नित्य सत्य को देखने वाला ही सत्यदर्शी है।

बाहर विश्व दीखता है, भीतर विश्वाधार का दर्शन होता है। बाहर सुख दुःख का द्वन्द्व दीखता है; भीतर अखण्ड-द्वन्द्वातीत आनन्द का बोध होता है। बाहर विनाशी देह दीखती है, भीतर अविनाशी आत्मा का साक्षात्कार होता है। बाहर से देखनेवालो! भीतर देखिये।

चुने हुये फूल

आशा धैर्य्य को मार देती है, क्रोध शोभा को और कंजूसी यश को समाप्त कर देती है।

धर्म्म नित्य है, सुख दुःख अनित्य हैं। जीव नित्य है, किन्तु इसका साधन शरीरादि अनित्य हैं अनित्य को छोड़कर नित्य में प्रतिष्ठित होना चाहिए।

* धर्म के स्तम्भ *

(२)

(लेखक :— रघुनाथ प्रसाद पाठक)

धैर्य

किसी पुरुष ने शेर का एक बच्चा पाला हुआ था। एक दिन जब वह पुरुष कुर्सी पर बैठा हुआ पढ़ रहा था वह बच्चा उसके पैर को चाटने लगा। चाटते २ रक्त निकल आने पर शेर के बच्चे को रक्त का आनन्द आया और वह पैर को अधिक जकड़ कर चाटने लगा। उस पुरुष को कष्ट अनुभव हुआ और जब उसने पैर को हटाने की कोशिश की तो वह आंखें बदल कर गुर्राने लगा। वह पुरुष जब २ पैर को हटाने का यत्न करता तब २ शेर का बच्चा गुर्राता और पैर को अपने जबड़ों में कस कर पकड़ लेता था। उस पुरुष पर शीघ्र ही शेर के बच्चे का मनोभाव स्पष्ट हो गया। उसने अपने पैर का हटाना बन्द करके संकेत से अपने पुत्र को बुलाया क्योंकि आवाज देकर बुलाने का वह शेर का बच्चा अपनी गुर्राहट के द्वारा वर्जन करता था। पुत्र ने चुपचाप आकर कौशल से बन्दूक चला कर शेर के बच्चे को समाप्त किया और अपने पिता के प्राणों की रक्षा की।

विपत्ति के समय अपने ऊपर अधिकार रखना बुराइयों और खतरों से उचित साधनों द्वारा लोहा लेना धैर्य कहलाता है। यह स्वतः एक विशेष गुण होता और अन्य अनेक गुणों का प्रकाशक होता है।

धैर्य की सर्वोपरिता

धैर्य के दस प्रधान लक्षणों में धैर्य की सर्व प्रथम गणना की गई है। इसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य विकारों और विपत्तियों की आंधियों में अडिग रह कर अपने विवेक को हाथ से न जाने दे। विपत्तियों और भोगों में विवेक और संयमयुक्त रहने में मनुष्य को समर्थ बनाने के कारण धैर्य आत्मा को मर्यादा में रखने वाला महान गुण माना जाता है। इस भाव का विदुर नीति में बड़ा उत्तम स्पष्टीकरण किया गया है—

आत्मा नदी भारत पुण्य तीर्था
सत्योदका धृति कूला दयो मिः।
तस्यं स्नातः पूयते पुण्य कर्मा
पुण्यो ह्यात्मा नित्यम लोभ एव॥

काम क्रोध ग्राहवतो पंचेन्द्रिय जलांनदीम्।
नवं धृति मयीं कृत्वा जन्म दुर्गाणि सन्तर॥

हे भारत! आत्मा पवित्र तीर्थों वाली नदी है, सत्य उसका उद्गम है, धैर्य उसके किनारे हैं। दया लहरें हैं। उसमें स्नान करके पुण्य कर्मा पवित्र हो जाता है क्योंकि पवित्र आत्मा नित्य लोभ रहित होता है। काम क्रोध रूप ग्रहों (मगरमच्छ आदि) पांच इन्द्रियों रूपी जल वाली नदी को धैर्य रूप नौका बना कर जन्म संकटों को तर जा।

धैर्य कमजोर का सहारा होता है

नेपोलियन के वर्चस्व के ह्रास का मुख्य कारण रूस पर आक्रमण माना जाता है। उसकी विश्व-विजय की महत्वाकांक्षा ने उसे अधीर बनाकर रूस पर आक्रमण करने के हानि लाभ का ठीक २ अन्दाजा लगाने की उसकी क्षमता नष्ट कर दी थी। रूस पर आक्रमण हुआ। नेपोलियन वहां से न केवल विफल मनोरथ ही होकर लौटा अपितु वहां उसके जन धन की अपार हानि हुई। यह हानि उसके साहस और सैनिक वर्चस्व के लिए बड़ा प्रबल धक्का सिद्ध हुई जिसके आघात से वह फिर संभल न सका और पराजय पर पराजय प्राप्त करता हुआ अन्त में अंग्रेजों का बन्दी बन कर बीमार पड़ा और मर गया। द्वितीय महासमर के आरम्भ में हिटलर के आक्रमण का सामना करने की इंगलैंड की जरा भी तैयारी न थी।

यदि उस समय हिटलर इंगलैंड पर विधिवत आक्रमण कर देता तो इंगलैंड का अवश्य पतन हो जाता परन्तु अंग्रेजों के होश हवास बने हुए थे। उन्होंने इस राष्ट्रीय आपत्ति के समय अनुकरणीय धैर्य से काम लिया और अपनी तैयारी में निरत रहे। इसी का यह परिणाम था कि हिटलर अंग्रेजों की कमजोरी को न जान सका और इंगलैंड की रक्षा हो गई। इन दोनों घटनाओं से सहज ही यह परिणाम निकाला जा सकता है कि धैर्य कमजोर का सहारा और अधीरता बलवान की कमजोरी होती है।

धैर्य प्रमाद और आलस्य नहीं

धैर्य का अभिप्राय उपेक्षा आलस्य और निठल्लापन नहीं अपितु विपत्ति के निवारण और शक्ति के सम्पादन के लिए घोर परिश्रम करना और प्रतीक्षा करते हुए सजग, सचेत, क्रियाशील और विवेकपूर्ण बना रहना होता है। जो लोग इस प्रकार का आचरण करते हुए प्रतीक्षा करना जानते होते हैं, सफलता, हर्ष और आनन्द उनके चरणों पर लोटते हैं उतावले लोगों को सफलता के बहुत कम दर्शन हुआ करते हैं। वे प्रायः काम को बिगाड़ बैठते हैं जिसके फल स्वरूप उन्हें निराशा और दुःख होता है। यदि किसी व्यक्ति को सफलता, मानसिक शांति और बल का सम्पादन करना अभीष्ट हो तो उसे परिश्रम के साथ २ त्याग और धैर्य के गुणों को जीवन में धारण करना चाहिए।

धैर्य ही आत्मा का बल है

धैर्य से आत्मा में बल आता है, स्वभाव में मधुरता आती है, क्रोध और ईर्षा का विनाश एवं अहंकार का दमन होता है, जीभ और हाथ काबू में रहते और प्रलोभनों का निराकरण होता है।

अधीरता महान् व्यक्तित्व का दुर्बल स्थल

पिछले दिनों भारत के प्रधान मन्त्री श्रीयुत पं० जवाहरलाल नेहरू ने एक अभिनन्दन पत्र के उत्तर में जिसमें उनके अनेक गुणों के साथ २ धैर्य का बखान किया गया था कहा था कि मुझ में धैर्य के गुण का अभाव है। उनकी यह स्वीकारोक्ति उन जैसे महान् व्यक्ति के अनुरूप ही थी। परन्तु धैर्य के गुण से रहित महान से महान् व्यक्तित्व में कमजोर स्थल होता है जो किसी भी क्षण उसके विनाश का कारण बन जाता है। धैर्य से परिपूर्ण कमजोर व्यक्तित्व में अजेय शक्ति का तत्व होता है जिसकी भयंकरता से लोगों को प्रायः बहुत सावधान रहना पड़ता है।

धीर व्यक्ति की पहचान

अमेरिका में गृह युद्ध जोरों के साथ चल रहा था। उत्तर राष्ट्रों की सेनायें जगह २ दक्षिण राष्ट्रों की सेनाओं के हाथों परास्त हो रही थी। उत्तर राष्ट्रों की प्रजा अपनी भयंकर हार और जनधन के अपरिमित विनाश से त्रस्त होकर उस सब के लिए राष्ट्रपति इब्राहम लिंकन को जिम्मेवार ठहरा रही और खुले आम उनको अपमानित करके अपने रोष और निराशा को व्यक्त कर रही थी। समाचार-पत्र इब्राहम की नीति को घातक बताकर उसका घोर विरोध और गृह युद्ध बन्द करने की मांग कर रहे थे। उस समय लिंकन की अवस्था बड़ी दयनीय थी। न उन्हें दिन को चैन था और न रात को शान्ति। न भोजन मिल पाता और न आराम। कहा जाता है उस समय उन की अनेक रातें बिना सोये चिन्ता में व्यतीत हो जाती थीं। परन्तु वे अपने निश्चय पर दृढ़ थे। जो पग उठाया गया था वह पीछे नहीं हट सकता था। उन्होंने पर्याप्त प्रतीक्षा करने और हर सम्भव उपाय से युद्ध को टालने का यत्न करने के उपरान्त ही अनिच्छा पूर्वक कर्त्तव्य से प्रेरित होकर युद्ध का आश्रय लिया था। इस विरोध के बवंडरमें उनकी सदाशयता, आत्म-बल और धैर्य की परीक्षा हो रही थी। विरोध, अपमान, अपवाद और निराशा के प्रबल झोंकों के लिए वे सुदृढ़ चट्टान बन गये थे जो उन पर टकरा कर पीछे लौट जाते थे। वे अपनी दृढ़ता से प्रतिकूल परिस्थितियों के ऊपर उठे रहे और अन्त में युद्ध में विजयी रहे।

दिन प्रतिदिन के व्यवहार में धैर्य का परिचय

लिंकन ने जीवन की छोटी २ वस्तुओं में धैर्य

रखना और दिन प्रतिदिन के जीवन के परीक्षणों और विषमताओं को शान्ति से चुपचाप सहन करना सीखा था। इसीलिए अप्रत्याशित आपत्तियों में उनकी शक्ति बनी रहती थी और वे बड़ी से बड़ी मुसीबत का सामना करने के लिए तैयार रहते थे। जीवन के प्रतिदिन के आचरण से उपार्जित इसी शक्ति ने गृह युद्ध के इन भयंकर क्षणों में उनका मार्ग-प्रशस्त किया और और अन्धकार में प्रकाश के दर्शन कराये थे।

कष्ट उठाने वाले व्यक्ति समाज को चमकाते हैं

जब मनुष्य पर दुर्भाग्य आंखें निकाल रहा हो, समाज के लोग उसके विरुद्ध हों, जब भोग आत्मा को पतित करने के सामान एकत्र कर रहे हों, जब मनुष्य की आंखों के सामने अंधेरा छाया हो और जब वह दुःख के सागर में बह रहा हो तब धैर्य की नाव ही उसे पार लगाती है। वह प्रत्येक स्थिति में सन्तुष्ट रहता, दुःख और विपत्ति का स्वागत करता और अपने परिश्रम, धैर्य और बुद्धिमत्ता से उसके सुधार और विपत्ति के परिहार की चेष्टा करता है। समाज को चमकाने वाले वे ही व्यक्ति होते हैं जो कष्ट उठाते हुए भी धैर्य की परीक्षा में उत्तीर्ण होकर विनम्र, शान्त, सहिष्णु, सन्तोषी, कर्मठ और श्रेष्ठ बने रहते हैं।

परमात्मा मनुष्य के धैर्य और आंसुओं की मांग करता है

महाराज हरिश्चन्द्र श्मशान में चाण्डाल की चाकरी बजाते थे। उनकी पत्नी रानी शैव्या एक ब्राह्मण के यहां दासी का कार्य करती थी। वह अपने एकमात्र पुत्र रोहितास के शव को बिना कफन से ढके जलाने के लिए श्मशान में जाती है। महाराज हरिश्चन्द्र रानी से कर मांगते हैं, रानी अपनी असमर्थता प्रकट करती है। महाराज के हृदय में कर्त्तव्य, मोह और धैर्य के बीच युद्ध छिड़ जाता है। अन्त में कर्त्तव्य विजयी होता है। रानी के धैर्य का बांध टूट जाता है और वह फूट २ कर रोने लग जाती और अपनी एक मात्र साड़ी को फाड़ कर, कर देने के लिए उद्यत हो जाती है। उसी समय रात दिन में बदल जाती है। वस्तुतः मनुष्य के जीवन में ऐसे अवसर आते हैं जब परम पिता परमात्मा अपने बच्चों से शान्ति, धैर्य और आंसुओं के अतिरिक्त और कोई मांग नहीं करते।

सुख दुःख के रूप में आते हैं

आर्य समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती गृहत्याग के पश्चात् और गुरु विरजानन्द के चरणों में बैठने से पूर्व हिमालय पर्वत पर भ्रमण कर रहे थे। एक दिन जब वे दिन भर के थके भूखे 'अलखनन्दा' नदी को पार करने लगे तो बर्फ के टुकड़ों की मार से लोहू लुहान हो गए। भूख मिटाने के लिए उन्होंने बर्फ के टुकड़े खाने शुरू किए। उस समय असाह्य शारीरिक और मानसिक कष्ट के कारण उन्हें अपना जीवन भार स्वरूप जान पड़ा और उन्होंने उस का वहीं अन्त कर देने का विचार किया। कुछ क्षण तक वे सोचते रहे और अन्त में यह सोच कर रुक गये कि जिस उद्देश्य से हमने घर छोड़ा है उसे पूरा किए बिना जीवन का अन्त कर देना ठीक नहीं है। उस समय उन्हें अपने वे कष्ट कल्याण स्वरूप जान पड़े। प्रायः हमारा वास्तविक हित कष्ट हानि और निराशाओं का रूप लिए होता है परन्तु धैर्य रखने पर ही हमें उसका वास्तविक स्वरूप ज्ञात हो पाता है।

उपसंहार

सफलता उसी को मिलती है जो चुपचाप प्रतीक्षा करता और काम में लगा रहता है। धैर्य पूर्वक अपने कर्त्तव्य कार्य को पूरा करना परमात्मा की इच्छा को पूरा करने के समान होता है। धैर्य से शून्य व्यक्ति गरीब शक्तिहीन और अल्पायु होते हैं। धैर्य और संयम से ही मनुष्य बुद्धिमान् और बलवान् बनता है। कष्ट को सहन करने का अभ्यास डालने से मनुष्य उसे अच्छी तरह सहन कर लेता है। शांत और धैर्यवान् पुरुष उन प्रसादों को प्राप्त करते हैं जिन्हें चिड़चिड़े और उतावले स्वभाव वाले उपेक्षा करके नष्ट कर देते हैं। अपने दुर्भाग्य पर विजय प्राप्त करने का सरल उपाय धैर्य का आचरण है। धैर्य कड़वा होता है, परन्तु उसका फल मीठा होता है। जो व्यक्ति धैर्य पूर्वक धीरे २ चलते हैं उनके लिए कोई मार्ग लम्बा और बीहड़ नहीं होता, और जो व्यक्ति धीरे धीरे सम्मान प्राप्ति के लिए तैयारी करते हैं उनके लिए कोई सम्मान अलभ्य नहीं होता।

भारतीय संस्कृति

वैदिक उदात्त भावनाएं

[लेखक—श्री डा० मंगल देव जी शास्त्री पी० एच० डी०]

जीवन के विषय में जैसी उत्कृष्ट आस्था वेद-मन्त्रों में पायी जाती है, वैसी संसार के किसी भी अन्य साहित्य में नहीं मिलेगी। उदाहरणार्थ नीचे के 'जीवन-संगीतक' को ही देखिए—

जीवेम शरदः शतम्।
बुध्येम शरदः शतम्।
रोहेम शरदः शतम्।
पूषेम शरदः शतम्।
भवेम शरदः शतम्।
भूषेम शरदः शतम्।

भूयसी शरदः शतात्॥ (अथर्व० १९।६७।२-८)

अर्थात, हम सौ और सौ से भी अधिक वर्षों तक जीवन-यात्रा करें, अपने ज्ञान को बराबर बढ़ाते रहें, उत्तरोत्तर उत्कृष्ट उन्नति को प्राप्त करते रहें, पुष्टि और दृढ़ता को प्राप्त करते रहें, आनन्दमय जीवन व्यतीत करते रहें, और समृद्धि, ऐश्वर्य तथा गुणों से अपने को भूषित करते रहें।

मनुष्य-जीवन में एक नवीन स्फूर्ति, नवीन विद्युत् का संचार करने वाले ऐसे ही अमृतमय प्राण-संजीवन वचनों से वैदिक साहित्य भरा पड़ा है।

वैदिक साहित्य की उपयुक्त आशावाद की भावना का वर्णन हम अपने शब्दों में इस प्रकार कर सकते हैं—

आशा सर्वोत्तमं ज्योतिः।
निराशायाः समं पापं मानवस्य न विद्यते।
तां समूलं समुत्साय ह्याशावादपरो भव॥१॥
मानवस्योन्नतिः सर्वा साफल्यं जीवनस्य च।
चारितार्थ्यं तथा सृष्टेराशावादे प्रतिष्ठितम्॥२॥
आशा सर्वोत्तमं ज्योतिर्निराशा परमं तमः।
तस्माद् गमय तज्ज्योतिस्तमसो मामिति श्रुतिः।३॥
आस्तिक्यमात्मविश्वासः कारुण्यं सत्यनिष्ठता।
उत्तरोत्तरमुत्कर्षो नूनमाशावतामिह॥४॥
निराशावादिनो मन्दा निष्ठुराः संशयालवः।
अन्धे तमसि मग्नास्ते श्रुतावात्महनो मताः॥५॥

(रश्मिमाला १।१)

अर्थात्, मनुष्य के लिए निराशा के समान दूसरा पाप नहीं है। इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह पाप-रूपिणी निराशा को समूल हटा कर आशावादी बने॥१॥ मनुष्य की सारी उन्नति, जीवन की सफलता और सृष्टि की चरितार्थता आशावाद में ही प्रतिष्ठित हैं॥२॥ आशा सबसे उत्कृष्ट प्रकाश है। निराशा घोर अन्धकार है। इसीलिए श्रुति में कहा गया है—"तमसो मा ज्योतिर्गमय" (बृहदारण्यकोपनिषद् १।३।२८) अर्थात्, भगवन्! मुझे अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलिए॥३॥

जीवन में आदर्श भावना, आत्म-विश्वास, कारुण्य, सत्य-परायणता और उत्तरोत्तर समुन्नति, ये बातें आशावादियों में ही पायी जाती हैं॥४॥

परन्तु निराशावादी लोग स्वभाव से ही उदात्त भावनाओं से विहीन निष्ठुर (=असंवेदन शील) और संशयालु होते हैं। वेद में ऐसे ही लोगों को प्रेरणा-विहीन अज्ञानान्धकार में निमग्न, तथा आत्म-विस्मृति

रूप आत्म-हत्या करने वाला कहा गया है[1]।

पवित्रता की भावनाः—सामान्य रूप से मनुष्यों की प्रवृत्ति बहिर्मुख हुआ करती है। सामान्य मनुष्य बाह्य लौकिक पदार्थों की प्राप्ति में ही अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेता है। व्यावहारिक जीवन को छोड़ कर, यज्ञ, दान, जप आदि के धर्माचरण में भी उसका लक्ष्य प्रायः लोक या परलोक में सुख के उपभोग की सामग्री की प्राप्ति ही हुआ करता है।

ऐसा होने पर भी, मानव के विकास में एक स्थिति ऐसी आती है जब कि वह अपने जीवन की सफलता का मूल्यांकन लौकिक पदार्थों या ऐश्वर्य की प्राप्ति में उतना नहीं करता, जितना कि अपने भावों की पवित्रता और चरित्र की दृढ़ता में करता है। इसके लिए अन्तःसमीक्षण या आत्म-परीक्षण की आवश्यकता होती है। इसकी योग्यता विरले लोगों में ही होती है[2]। पर यह मानी हुई बात है कि "आत्म-परीक्षणं हि नाम मनुष्यस्य प्रथमं समुन्नतेर्मूलम्" (प्रबन्ध-प्रकाश, भाग २, पृ० ६१), अर्थात्, आत्म परीक्षण ही मनुष्य की वास्तविक उन्नति का मूल है।

भगवद्गीता का बड़ा भारी महत्त्व इसी बात में है कि वह मनुष्य के प्रत्येक कर्तव्य-कर्म का परीक्षण भावात्मिक भित्ति के आधार पर ही करती है। उसके अनुसार हमारे प्रत्येक धार्मिक या नैतिक कर्म का महत्त्व हमारे भावों की पवित्रता पर ही निर्भर है। गीता के अनुसार मनुष्य के लिए भाव संशुद्धि का अद्वितीय मौलिक महत्त्व है।[3]

उपर्युक्त दृष्टि से यह अत्यन्त महत्त्व की बात है कि वैदिक मंत्रों की एक प्रधान विशेषता 'पवित्रता की तीव्र भावना' है। पाप (या पाप्मन्) का नाशन, दुरित का क्षय, सच्चरित्रता की प्राप्ति, अथवा पवित्र संकल्पों आदि की प्रार्थना के रूप में पवित्रता की तीव्र भावना शतशः वैदिक मंत्रों में पायी जाती है।

उदाहरणार्थ,

पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः।
पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा॥
(यजु० १९।३९)

अर्थात्, हे सर्वव्यापक देव, आप मुझको पवित्र कीजिए, और ऐसा अनुग्रह कीजिए जिससे समस्त देव-जन मेरे विचार और कर्म तथा सब अन्य पदार्थ भी मेरी पवित्रता की भावना में मेरे सहायक हो सकें।

...देव सवितः....मां पुनीहि विश्वतः। (यजु० १९।४३)

अर्थात्, हे सवितृ-देव! मुझे सब प्रकार से पवित्र कीजिए।

पवमानः पुनातु मा क्रत्वे दक्षाय जीवसे।
अथो अरिष्टतातये॥ (अथर्व० ६।१९।२)

अर्थात्, हे पवित्रता-संपादक देव! मुझे बुद्धि, शक्ति, जीवन और निरापद् आत्म-रक्षा के लिए पवित्र कीजिए।

इसी प्रकार चरित्र की शुद्धता की भावना अनेकत्र वेद-मन्त्रों में पायी जाती हैं। उदाहरणार्थ,

परि माग्ने दुश्चरिताद् बाधस्वा मा सुचरिते भज।
(यजु० ४।२८)

अर्थात्, हे प्रकाश-स्वरूप देव! मुझे दुश्चरित से बचा कर सुचरित में स्थापित कीजिए।

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।
यद्भद्रं तन्न आ सुव॥ (यजु० ३०।३)

१. देखिये—"असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः। तांस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः॥" (यजु० ४०।३)। अर्थात्, आत्मत्व या आत्मचेतना की विस्मृति-रूप आत्महत्या (=जीवन में आदर्श-भावना का अभाव) किसी भी प्रकार की प्रेरणा से विहीन अज्ञानान्धकार में गिरा कर सर्वनाश का हेतु होती है। २. देखिए—"पराञ्चि खानि व्यतृणत्स्वयंभूस्तस्मात् पराङ् पश्यति नान्तरात्मन्। कश्चिद् धीरः प्रत्य गात्मानमैक्षदावृत्त चक्षुरमृतत्वमिच्छन्॥" (कठ उपनिषद् २।१।१)।

३. देखिए—"भावसंशुद्धिरित्येतत् तपो मानसमुच्यते" (गीता १७।१६)।

अर्थात्, हे देव सवितः! आप हमारे पापाचरण को हम से दूर कीजिए और जो कल्याण हो उसे हमें प्राप्त कराइए।

इसी प्रकार भाव संशुद्धि या संकल्पों की पवित्रता की प्रार्थना भी अनेकानेक मन्त्रों में पायी जाती है। उदाहरणार्थ,

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्
नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु। (यजु० ३४।६)

अर्थात् निपुण सारथि जैसे रास द्वारा घोड़ों को चलने के लिए बराबर प्रेरित करता और नियन्त्रित भी करता है, वैसे ही मनुष्यों को कार्यों में प्रवृत्त करने वाला और नियन्त्रण में रखने वाला, हृदय में विशेष रूप से प्रतिष्ठित, जरा से रहित और अत्यन्त गतिशील जो मेरा मन है वह शुभ और शान्त-संकल्प वाला हो।

इसी प्रकार, पाप-मोचन, पाप-नाशन, अथवा निष्पाप-भावना की गम्भीर ध्वनि शतशः वैदिक मन्त्रों में प्रतिध्वनित हो रही है। भिन्न भिन्न देवता या देवताओं को संशोधित करके "स नो मुञ्चत्वंहसः", 'तौ नो मुञ्चतमंहसः", "ते नो मुञ्चन्त्वंहसः", (अर्थात्, वह, वे दोनों, अथवा वे हमको पाप से मुक्त करें) इस प्रकार की विनम्र प्रार्थना अथर्ववेद के (४। २३-२६) सूक्तों में तथा अन्य वैदिक मन्त्रों में बराबर पायी जाती है। नीचे हम इसी विषय की एक सुन्दर "वैदिक गीतिका" को देकर इस विषय को समाप्त करते हैं।

अप नः शोशुचदघम्।

अप नः शोशुचदघमग्ने शुशुग्ध्या रयिम्।
अप नः शोशुचदघम् ॥१॥
सुक्षेत्रिया सुगातुया वसूया च यजामहे।
अप नः शोशुचदघम् ॥२॥
प्र यद्भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकासश्च सूरयः।
अप नः शोशुचदघम् ॥३॥
प्र यत्ते अग्ने! सूरयो जायेमहि प्र ते वयम्।
अप नः शोशुचदघम् ॥४॥
प्र यदग्नेः सहस्वतो विश्वतो यन्ति भानवः।
अप नः शोशुचदघम् ॥५॥
त्वं हि विश्वतोमुख! विश्वतः परिभूरसि।
अप नः शोशुचदघम् ॥६॥
द्विषो नो विश्वतोमुखाति नावेव पारय।
अप नः शोशुचदघम् ॥७॥
स नः सिन्धुमिव नावयाति पर्षा स्वस्तये।
अप नः शोशुचदघम् ॥८॥ (ऋ० १।१७)

अर्थात्, भगवन! हमारे पाप को भस्म कर दीजिये!

१. प्रकाशस्वरूप देव! हमारे पाप को भस्म कर हमारी सद्गुण सम्पत्ति को प्रकाशित कीजिए। हम बार-बार प्रार्थना करते हैं कि हमारे पाप को भस्म कर दीजिए।

२. उन्नति के लिए समुचित क्षेत्र, जीवन-यात्रा के लिए सन्मार्ग और विविध ऐश्वर्यों की प्राप्ति की कामना से हम आपकी उपासना करते हैं। आप हमारे पाप को भस्म कर दीजिए।

३. भगवन्! आप हमारे पाप को भस्म कर दीजिये, जिससे कि मैं और साथ ही हमारे तत्वदर्शी विद्वान् भी विशेषतः सुख और कल्याण के भाजन बन सकें।

४. प्रकाश स्वरूप देव! आप हमारे पाप को भस्म कर दीजिये, जिससे कि हम आपके गुणों का गान करते हुए जीवन में उत्तरोत्तर समुन्नति को प्राप्त कर सकें।

५. भगवन्! आप विघ्न-बाधाओं को दूर करने वाले हैं। आपके प्रकाश की किरणें सर्वत्र फैल रही हैं। आप हमारे पाप को भस्म कर दीजिए।

६. हे समस्त विश्व के द्रष्टः! आप ही सब ओर से हमारे रक्षक हैं। हमारे पाप को भस्म कर दीजिए।

७. हे विश्वसाक्षिन्! जैसे नाव से नदी को पार करते हैं, इसी प्रकार आप हमें विघ्न-बाधाओं और विरोधियों से पार कर विजय प्रदान कीजिये। आप हमारे पाप को भस्म कर दीजिए।

८. उपर्युक्त महिमाशाली भगवन्! नाव से जैसे नदी को पार किया जाता है इसी प्रकार आप हमें

कल्याण-प्राप्ति के लिए वर्तमान परिस्थिति से ऊपर उठने की क्षमता प्रदान कीजिये। आप हमारे पाप को भस्म कर दीजिये।

पवित्रता या पाप-विनाशन की भावना का यह प्रवाह वास्तव में वैदिक-धारा की एक अद्वितीय विशेषता है।

पवित्रता की भावना तथा अपने को निष्पाप करने की उत्कट कामना से परिप्लुत ऐसे ही सैंकड़ों वेद-मन्त्र वास्तव में वैदिक धारा की शाश्वत निधि हैं। नैतिक दुर्बलताओं से अभिभूत, मोह-ग्रस्त मनुष्य के लिए वे मार्ग-प्रदर्शक तथा प्राणप्रद सूर्य-प्रकाश के समान हैं।

भद्र-भावना : वैदिक मन्त्रों की एक दूसरी अनोखी विशेषता उनकी भद्र-भावना है।

मनुष्य स्वभाव से सुख के लोभ और दुःख के भय से किसी काम में प्रवृत्त या उससे निवृत्त होता है। परन्तु वास्तविक कर्तव्य या धर्म की भावना में सुख-दुःख की भावना का कोई स्थान नहीं होता। इसमें तो सुख और दुःख के ध्यान को बिल्कुल छोड़ कर (सुख-दुःखे समे कृत्वा) विशुद्ध कर्तव्य-बुद्धि से ही काम करना होता है। वास्तविक भद्र भावना या कल्याण-भावना यही है।

यह कल्याण-भावना भोगैश्वर्य-प्रसक्त, इन्द्रिय-लोलुप, या समयानुकूल अपना काम निकालने वाले आदर्शहीन व्यक्तियों की वस्तु नहीं है। इसके स्वरूप को तो वही समझ सकता है, जिसका यह विश्वास है कि उसका सत्य बोलना, संयत जीवन, आपत्तियों के आने पर भी अपने कर्तव्य से मुंह न मोड़ना, उसके स्वभाव, उसके व्यक्तित्व के अन्तस्तम स्वरूप की आवश्यकता है। जैसे एक पुष्प का सौन्दर्य और सुगन्ध, किसी बहिरंग कारण से न होकर, उसके स्वरूप का अङ्ग है; ऐसे ही एक कल्याण मार्ग के पथिक का निरपेक्ष या अनासक्त होकर कर्तव्य पालन करना उसके स्वरूप का अङ्ग है; उसके जीवन का सार्थक्य, जीवन की पूर्णाङ्गता ही इसमें है। गीता की सात्विक भक्ति और निष्काम कर्म के मूल में यही आशामय, श्रद्धामय कल्याण भावना निहित है।

आशावाद-मूलक गीता की कल्याण भावना और वैदिक भद्र-भावना हमारे मत में, दोनों एक ही पदार्थ हैं। दोनों के मूल में आशावाद है, और दोनों का लक्ष्य मनुष्य को सतत कर्तव्यशील बनाना है।

मानव को परमोच्च देव-पद पर बिठाने वाली यह भद्र-भावना वैदिक प्रार्थनाओं में प्रायः देखने में आती है। जैसे—

यद् भद्रं तन्न आ सुव (यजु० ३०।३)

अर्थात्, भगवन् ! जो भद्र या कल्याण है, उसे हमें प्राप्त कराइए।

भद्रं जीवन्तो जरणामशीमहि (ऋ० १०।३७।६)

अर्थात्, भद्र या कल्याण मार्ग पर चलते हुए हम पूर्ण जीवन को प्राप्त करें।

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा
भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः (यजु० २५।२१)

अर्थात्, हे यजनीय देवगण, हम कानों से भद्र को ही सुनें और आंखों से भद्र को देखें।

भद्रं नो अपि वातय मनः (ऋ० १०।२०।१)

अर्थात्, भगवन् ! प्रेरणा कीजिये कि हमारा मन भद्र-मार्ग का ही अनुसरण करे।

भद्रं-भद्रं न आ भर (ऋ० ८।९३।२८)

अर्थात्, भगवन् ! हमें बराबर भद्र की प्राप्ति कराइए।

आनो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽ-
दब्धासो अपरीतास उद्भिदः। (यजु०२५।१४)

अर्थात्, हमको ऐसे भद्र अथवा कल्याणकारी संकल्प सब प्रकार से प्राप्त हों जो अविचल हों, जिन को साधारण मनुष्य नहीं समझते और जो हमें उत्त-रोत्तर उन्नति की ओर ले जाने वाले हों।

इत्यादि वैदिक प्रार्थनाएं भद्र-भावना की ही उदाहरण हैं।

आत्म-विश्वास की भावना : वैदिक स्तोता के स्वरूप को दिखलाते हुए हमने पहले ('कल्पना', जनवरी १९५४, पृ० ८) कहा है, "वह जीवन की वास्तविक परिस्थिति को खूब समझता है; पर उससे घबराता नहीं है। उसकी हार्दिक इच्छा यही रहती

है कि वह उसका वीरतापूर्वक सामना करे। वह संसार में परिस्थितियों का स्वामी, न कि दास होकर जीवन व्यतीत करना चाहता है।"

ऋत और सत्य की भावना और आशावाद की भावना का स्वाभाविक परिणाम आत्म-सम्मान या आत्म-विश्वास की भावना के रूप में होता है। इस सारे विश्व-प्रपञ्च का संचालन शाश्वत नैतिक आधार पर हो रहा है, और साथ ही मनुष्य के सामने उसकी अनन्त उन्नति का मार्ग निर्बाध खुला हुआ है, ऐसी धारणा मनुष्य में स्वभावतः आत्म-विश्वास की भावना को उत्पन्न किये बिना नहीं रह सकती।

यह आत्म-विश्वास की भावना स्पष्टतः अनेकानेक वैदिक मंत्रों में ही नहीं, सूक्तों में भी, पायी जाती है। जैसे—

अहमस्मि सहमान उत्तरो नाम भूम्याम्।
अभीषाडस्मि विश्वाषाडाशामाशां विषासहिः॥
(अथर्व० १२।१।५४)

अर्थात्, मैं[1] स्वभावतः विजयशील हूं। पृथ्वी पर मेरा उत्कृष्ट पद है। मैं विरोधी शक्तियों को परास्त कर, समस्त विघ्न-बाधाओं को दबाकर प्रत्येक दिशा में सफलता को पाने वाला हूं।

अहमस्मि सपत्नहा इन्द्र इवारिष्टो अक्षतः।
अधः सपत्ना मे पदोरिमे सर्वे अभिष्ठिताः॥

अर्थात्, मैं शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाला हूं। इन्द्र के समान मुझे कोई न तो मार सकता है, न पीड़ित कर सकता है। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि मानो मेरे समस्त शत्रु यहां मेरे पैरों तले पड़े हुए हैं[2]!

मह्यं नमन्तां प्रदिशश्चतस्रः (ऋ० १०।१२८।१)

अर्थात्, मेरे लिए सब दिशाएं झुक जायें। अर्थात्, प्रत्येक दिशा में मुझे सफलता प्राप्त हो।

अहमिन्द्रो न पराजिग्ये (ऋ० १०।४८।५)

अर्थात्, मैं इन्द्र हूँ, मेरा पराजय नहीं हो सकता।

यद्वा विश्वस्य भूतस्या--
हमस्मि यशस्तमः (अथर्व० ६।५८।३)

अर्थात्, जगत् के समस्त पदार्थों में से सबसे अधिक यश वाला हूँ अर्थात् मनुष्य का स्थान जगत के समस्त पदार्थों से ऊंचा है[3]।

अदीनाः स्याम शरदः शतम्।
भूयश्च शरदः शतात्।

अर्थात् हम सौ वर्ष तक और उससे भी अधिक काल तक दैन्य से दूर रहें।

मा भेः, मा संविक्थाः (यजु० १।२३)

अर्थात्, तू न तो भयशील हो, न उद्विग्नता को प्राप्त हो।

"यथा द्यौश्च पृथिवी च न बिभीतो न रिष्यतः।
एवा मे प्राण मा बिभेः॥
यथा सूर्यश्च चन्द्रश्च न बिभीतो न रिष्यतः।
एवा मे प्राण मा बिभेः॥" (अथर्व० २।१५।१, ३)

अर्थात्, जैसे द्युलोक और पृथिवी अपने-अपने कर्तव्य के पालन में न तो डरते हैं, न कोई उनको हानि पहुँचा सकता है, इसी प्रकार हे मेरे प्राण! तू भी भय को न प्राप्त हो।

जैसे सूर्य और चन्द्रमा न तो भय को प्राप्त होते हैं, न कोई उनको हानि पहुँचा सकता है, इसी प्रकार हे मेरे प्राण! तू भी भय को न प्राप्त हो।

इसी प्रकार आत्म-विश्वास अथवा आत्म-संमान की भावना के परिचायक और परिपोषक शतशः मंत्र और सूक्त वैदिक संहिताओं में पाये जाते हैं। निःसन्देह वे सब वैदिक धारा की एक महान् विशेषता है।

वैदिक उदात्त भावनाओं को संक्षेप रूप में ही हमने ऊपर दिखाया है। इनकी विशेष छन्दो-बद्ध (संस्कृत तथा हिन्दी अनुवाद) व्याख्या के लिए पाठक-गण हमारे 'रश्मिमाला' अथवा 'जीवन-संदेश-गीताञ्जलि' नामक नवीन ग्रन्थ को देख सकते हैं।

---

१. ऐसे सब मन्त्रों में "मैं" से अभिप्राय मानवमात्र का है। २. तु० "इन्द्रोऽहमिन्द्रकर्माहम् अरातीनां वधोऽस्म्यहम्। तेषां बाधास्तिरस्कृत्य पदं मूर्ध्नि दधाम्यहम्॥" (रश्मिमाला ३।६।१) ३. इस्लाम की परम्परा में भी मनुष्य को 'अशरफ-उल मख़लूकात' (=सब प्राणियों में श्रेष्ठ) कहा गया है।

रुद्र का वैदिक-स्वरूप

(१)

(लेखक—श्री शिवपूजन सिंह 'पथिक' विद्यावाचस्पति, साहित्यालङ्कार, कानपुर)

'रुद्र' का वर्णन वेद के अनेक स्थलों में आया है। यजुर्वेद का १६वां अध्याय सम्पूर्ण रुद्राध्याय के नाम से प्रसिद्ध है। ऋग्वेद के प्रथम मण्डल का ११४ वां सूक्त, द्वितीय मण्डल का ३३वां सूक्त, सप्तम मण्डल का ४६वें सूक्त में "रुद्र" का वर्णन है। अथर्ववेद काण्ड ११ के द्वितीय सूक्त में "रुद्र" का वर्णन पाया जाता है। इनके अतिरिक्त लगभग पचास बार रुद्र का नाम आया है। वेदों में आए हुए रुद्र शब्द का वास्तविक रहस्य क्या है? इसी का परिशीलन यहां है।

पौराणिक पण्डित रुद्र का अर्थ केवल परमात्मा ही करते हैं,❀ पर यह उचित नहीं है। रुद्र के अनेकों अर्थ होते हैं।

पाश्चात्य विद्वानों ने रुद्र के अनेकों अर्थ किये हैं।[1]

डा० वेबर रुद्र को तूफान का देवता मानते हैं।[2]

डा० आदेर के विचार में मृतात्माओं के प्रधान व्यक्ति को देवत्व का रूप प्रदान कर रुद्र मान लिया गया है।[3]

डा० हिलेब्रान्त की सम्मति में ये ग्रीष्मकाल के देवता हैं तथा किसी विशिष्ट नक्षत्र से भी इनका सम्बन्ध है।[4]

डा० *ओल्डेनवर्ग* रुद्र का सम्बन्ध पर्वत तथा जंगल के साथ स्थापित करना श्रेयस्कर मानते हैं।[5]

श्री जान डासन साहब लिखते हैं—"He is the howling terrible god, the god of storms, the father of the Rudras or Maruts, and is sometimes identified with the god of fire."[6]

अर्थात्—वह (रुद्र) गर्जना करने वाला भयानक देव है, जो प्रचण्ड वायु का देव है और जो रुद्रों अथवा मरुतों का पिता है। कभी-कभी इसका सम्बन्ध अग्नि देव के साथ जोड़ा जाता है।

श्री म० आर्थरआंटोनी मकडोनेल साहब लिखते हैं—"This god occupies a subordinate position in the Rig Veda being celebrated in only three entire hymns, in part of another, and in one conjointly with Some. His hand, his arms, and his limbs are

---

❀ देखो पं० ज्वाला प्रसाद मिश्र विद्यावारिधि का "मिश्र-भाष्य"

१. देखो डा० ए० बी० कीथ का Religion and Philosophy of Vedas. pp 146-147.

२. धर्म और दर्शन-प्रथम संस्करण, पृष्ठ १८।

३. वही, पृष्ठ १८।

४. वही, पृष्ठ १८।

५. वही, पृ० १८।

६. Hindu Classical Dictionary—pp. 269.

mentioned. He has beautiful lips and wears braided hair."[७]

अर्थात् वह देव (रुद्र) ऋग्वेद में नीचे पद का देव है क्योंकि समस्त ऋग्वेद में इसके लिए केवल तीन ही सूक्त हैं और सोम से जुड़े हुये हैं। इनके हाथ, बाहू और होठों का वर्णन है। इनका ओष्ठ सुन्दर है और जटाजूट धारी हैं।

सर मानियर विलियम साहब लिखते हैं—

Rudra, roarer, the god of tempests and father and ruler of Rudras and Maruts."[८]

अर्थात् गरजने वाला रुद्र प्रचण्ड वायु का देव है और रुद्रों व मरुतों का पिता और शासक है।

पाश्चात्य विद्वानों के ये अटकलपच्चू सिद्धांत हैं।

आचार्य सायण का मत—

श्री सायणाचार्य का भाष्य विशेषतया याज्ञिक पद्धति के अनुसार है। आप अपने ऋग्वेद-भाष्य में रुद्र शब्द के निम्नांकित अर्थ करते हैं—

रुद्रस्य कालात्मकस्य परमेश्वरस्य ॥

ऋ० ६।२८।७ ॥

कालरूपी परमेश्वर रुद्र है।

रुद्रं रुत् स्तुतिः तया गन्तव्यं। स्तुत्यं इत्यर्थः।

ऋ० ८।७२।३ ॥

रुद्र का अर्थ स्तुति है। स्तुति के लिए जो योग्य है वह रुद्र है।

रुद्राय क्रूराय अग्नये ॥ ऋ० १।२७।१० ॥

रुद्र का अर्थ क्रूर अग्नि है।

रुत् दुःखं तद्धेतुभूतं पापं वा। तस्य द्रावयितारौ रुद्रौ। संग्रामे भयंकरं शब्दयन्तौ वा ॥

ऋ० १। १५८। १ ॥

रुत् का अर्थ दुःख अथवा पाप। उसका नाश करने वाला रुद्र होता है। अथवा युद्ध में भयंकर शब्द करने वाले वीर रुद्र होते हैं।

रुद्राणां······प्राणरूपेण वर्तमानानां मरुतां। यद्वा। रोदयितॄणां प्राणानां। प्राणा हि शरीरान्निर्गताः सन्तो बंधुजनान् रोदयन्ति ॥

ऋ० १। १०१। ७ ॥

रुद्र प्राणरूप वायु है। अथवा, प्राणों को इस लिए रुद्र कहते हैं कि वे जब शरीर से पृथक् होते हैं, उस समय सम्बन्धियों को रुलाते हैं।

रुद्राणां रोदनकारिणां शूरभटानां वर्तनिर्मार्गो घाटीरूपो ययोस्तौ रुद्रवर्तनी ॥ऋ० १। ३। ३ ॥

शूरवीरों को रुद्र कहते हैं, इसलिए कि वे शत्रुओं को रुलाते हैं। इसलिये चढ़ाई करने के मार्ग को 'रुद्र-वर्तनिः' कहते हैं। और जो शत्रु पर चढ़ाई करते हैं, उनको 'रुद्र-वर्तनी' कहते हैं।

रुद्रवर्तनी रोदनशीलमार्गौ स्तूयमानमार्गौ वा ॥

ऋ० ८। २२। १४ ॥

रोदनशील मार्ग अथवा स्तुतियुक्तमार्ग का अवलम्बन करने वालों को भी रुद्र-वर्तनी कहते हैं।

रोरूयमाणौ द्रवन्तौ (रुद्रौ) ॥ ऋ० २।४१।७ ॥

जो गरजते हुए पिघल जाते हैं, उनको भी रुद्र कहते हैं।

रोदयन्ति शत्रूनिति रुद्राः ॥ ऋ० ३। ३२। ३ ॥

शत्रुओं को रुलाने वाले रुद्र होते हैं।

रुद्रौ संग्रामे रुदन्तौ ॥ ऋ० ८। २६। ५ ॥

युद्ध में रोने वाले भी रुद्र कहलाते हैं।

रुद्रेषु स्तोत्रकारिषु ॥ ऋ० १०।६४ ८ ॥

स्तुति करने वालों को रुद्र कहते हैं।

---

७. A Vedic Reader—pp. 56.

८. Sanskrit-English Dictionary.

हे रुद्र ! ज्वरादि रोगस्य प्रेषणेन संहर्तर्देव ॥

ऋ० १० । १६६ । १ ॥

ज्वर आदि रोगों को भेज कर प्राणियों का संहार करता है, इसलिए संहारकर्त्ता का नाम रुद्र है।

रुद्रियं सुखं ॥ ऋ० २ । ११ । ३ ॥

सुख देने वाला भी रुद्र कहलाता है।

रुद्रियं रुद्रसम्बन्धि भेषजं ॥ ऋ० १।४३।२॥

औषध का नाम भी रुद्रिय होता है क्योंकि चिकित्सक वैद्य को रुद्र कहते हैं।

रुत् स्तुतिः तया द्रवणीयो ॥ ऋ० २।७३।८ ॥

रुत् का अर्थ स्तुति है, उससे जो दयार्द्र होता है उसको भी रुद्र कहते हैं।

आप अपने "अथर्ववेदभाष्य" में रुद्र का अर्थ निम्नांकित प्रकार से करते हैं :—

रोदयति सर्वं अंतकाले इति रुद्रः संहर्ता देवः ॥

अथर्व० १ । १९ । ३ ॥

सबको अन्तकाल में रुलाता है, इसलिए संहारकर्त्ता ईश्वर को रुद्र कहते हैं ॥

रौति शब्दायते तारकं ब्रह्म उपदिशतीति रुद्रः ॥

अथर्व० २ । २७ । ६ ॥

ब्रह्म का उपदेश करता है, इसलिए उपदेशक को रुद्र कहते हैं।

तस्मै जगत्स्रष्ट्रे सर्वं जगदनुप्रविष्टाय रुद्राय ॥

अथर्व० ७ । ९२ । १ ॥

जगत् उत्पन्न करने वाला और उसमें व्यापक ईश्वर ही रुद्र है।

रुत् दुःखं दुःखहेतुर्वा तस्य द्रावको देवो रुद्रः परमेश्वरः ॥ अथर्व० ११ । २ । ३ ॥

दुःख और दुःख का कारण दूर करने वाला परमात्मा ही रुद्र है।

सर्वं प्राणिनो मामनिष्ट्वा विनश्यन्ति इति स्वयं रौति रुद्रः ॥ अथर्व० १८ । १ । ४० ॥

सब प्राणीमात्र मेरी पूजा न करते हुए ही, दुःख भोग कर, नष्ट होते हैं। यह देखकर देव रोता है, इसलिए उसको रुद्र कहते हैं।

स्वसेवकानां दुःखस्य द्रावकत्वं (रुद्रस्य) ॥

अथर्व० १८ । १ । ४० ॥

अपने सेवकों के दुःख को दूर करता है, इसलिए ईश्वर को रुद्र कहते हैं।

महानुभावं रुद्रं ॥ अथर्व० १८ । १ । ४० ॥

महानुभाव को रुद्र कहते हैं।

रुद्रस्य हिंसकस्य देवस्य ॥ अथर्व० ६।२८।३॥

हिंसा (सर्वनाशक) देव का नाम रुद्र है।

रुद्रस्य ज्वराभिमानिदेवस्य हेतिः आयुधं ॥

अथर्व० ४ । २१ । ७ ॥

ज्वर को भेजने वाला रुद्र देव है उसका ज्वर ही आयुध होता है।

रुद्रः रोदयिता शूलाभिमानी देवः ॥

अथर्व० ६ । ६० । १ ॥

शूल (दर्द) के कारण को रुद्र कहते हैं।

रोदयति उपतापेन अश्रूणि मोचयति इति रुद्रो ज्वराभिमानी देवः ॥ अथर्व० ६ । २० । २ ॥

ज्वर चढ़ा कर, आंखों में अश्रुओं को लाकर रुलाने वाला देव रुद्र कहा जाता है।

रोदयति शत्रूनिति रुद्रः ॥ अथर्व० ७ ९२।१ ॥

शत्रुओं को रुलाने वाले को रुद्र कहते हैं।

रुद्रा रोदकाः ॥ अथर्व० ११।६।१० ॥

रोने और रुलाने वाले रुद्र होते हैं।

रुद्राः रोदयितारः अन्तरिक्षस्थानीया देवाः ॥

अथर्व० १९ । ११ । ४ ॥

रुलाने वाले, अन्तरिक्ष में रहने वाले, रुद्रदेव होते हैं।

रुद्रः पशूनां अभिमन्ता पीडाकरो देवः ॥

अथर्व० ६ । १४१ । १ ॥

पशुओं का अभिमानी देव जो पीड़ा करता है, उसका नाम रुद्र है। (क्रमशः)

सूर्य और चन्द्र ग्रहण

(लेखक—सुवर्णसिंह आर्य सिद्धान्तमनीषी नगौला, अलीगढ़)

सम्प्रति पुराणों में ग्रहण का कारण बहुत ही अद्भुत लिखा है। यथाः—जिस समय विष्णुभगवान् मोहनी का रूप धारण कर अमृत बांट रहे थे, वहाँ राहु नामक एक राक्षस देवता का रूप धारण कर आ बैठा। जब विष्णुभगवान् ने अमृत बांटा वह उसी समय पी गया। सूर्य और चन्द्रमा ने उसकी चुगली खाई कि यह राक्षस है। विष्णुभगवान् ने क्रोध में आकर चक्र से राहु का सिर काट डाला, परन्तु वह मरा नहीं क्योंकि वह अमृत पी चुका था इसी कारण सूर्य और चन्द्रमा को जहां पाता है ग्रस लेता है, लेकिन वे उसी गर्दन के छिद्र में होकर निकल जाते हैं। यह पुराणों के अनुकूल ग्रहण का संक्षिप्त वृत्तान्त है। इस कारण भ्रम में पड़ कर बहुसंख्यक जन साम्प्रतिक कृत्रिम तीर्थों में मारे २ भटकते फिरते हैं। कुरुक्षेत्रादि तीर्थों में कई कई लाख मनुष्य एकत्रित हो जाते हैं, गत ग्रहण अवसर पर पांच लाख स्त्री-पुरुषों की भीड़ बतलाई जाती है। अज्ञान और अनभिज्ञता के कारण अपनी अर्द्धाङ्गिनियों को भी ग्रहण के अवसर पर दान कर आते हैं। इस बेसमझी का भी कोई ठिकाना है!

वेदों और ज्योतिष के ग्रन्थों में ग्रहण का असली कारण स्पष्ट लिखा है:-जिस प्रकार पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है, उसी प्रकार चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करता है। इनमें से सूर्य बड़ा भारी प्रकाश-पिण्ड है; जिसके गोले का व्यास ८६२७८० मील है। पृथ्वी और चन्द्रमा में प्रकाश नहीं है, ये सूर्य के प्रकाश से ही प्रकाशित होते हैं। पृथ्वी के गोले का व्यास ७९२६ मील है। चन्द्रमा के गोले का व्यास २१६२ मील है। पृथ्वी सूर्यकी परिक्रमा ३६५ दिन ६ घण्टे के लगभग में करती है, और पृथ्वी की परिक्रमा चन्द्रमा २७ दिन ७ घन्टे ४३ मिनट में करता है; इन दोनों की गतियों के कारण चन्द्रमा सूर्य के पास २९ दिन १२ घन्टे ४४ मिनट में पहुँचता है इसी समय को चन्द्रमास कहते हैं। जिस दिन सूर्य और चन्द्रमा एक दिशा में होते हैं, उसको अमावस्या कहते हैं जिस दिन सूर्य और पृथ्वी के बीच में चन्द्रमा रहता है इससे १४ दिन १८ घन्टे पश्चात् चन्द्रमा सूर्य के विपरीत दिशा में पहुँच जाता है अर्थात् पृथ्वी बीच में हो जाती है, चन्द्रमा एक ओर हो जाता और सूर्य दूसरी ओर। इस दिन को पूर्णमासी कहते हैं। इस दिन चन्द्रमा पूरा गोल दीख पड़ता है, क्योंकि चन्द्रमा का आधा भाग सूर्य के सम्मुख होता है; वही पृथ्वी निवासियों के सामने भी होता है। इस दिन सूर्य पश्चिम में अस्त होता है तब चन्द्रमा पूर्व में उदय होता रहता है। इसलिए यह सहज ही जाना जा सकता है कि चन्द्रमा और सूर्य एक दूसरे के विरुद्ध दिशा में हैं। अमावस्या के दिन चन्द्रमा सूर्य्य की ही दिशा में रहता है; इसलिए वह सूर्य्य के प्रायः साथ ही साथ उदय और अस्त होता है। हम लोगों को नहीं दीख पड़ता। इस लिये एक दिन आगे पीछे भी चन्द्रमा अदृश्य रहता है; शुक्लपक्ष में चन्द्रमा की कलाएं जिस क्रम से बढ़ती हैं; कृष्ण पक्ष में उसी क्रम से घटती भी हैं घूमते हुये जब सूर्य्य और पृथ्वी तथा चन्द्रमा तीनों एक साथ आ जाते हैं तब ग्रहण पड़ता है। चन्द्रग्रहण का कारण समझने के लिए यह जानना आवश्यक है; पूर्व भी इस पर प्रकाश पड़ चुका है कि (पृथ्वी के समान) चन्द्रमा (भी) सूर्य्य से प्रकाशित होता है। यथाः—

'दिवि सोमो अधिश्रितः' अथर्व का० १४ अ० १।म०१।

चन्द्रलोक सूर्य से आश्रित होकर प्रकाशित होता है। और भी आगे देखियेः-

गलमघस्थस्येन्दोर्भाभिभीनोः सितं भवत्यर्धम् ।
स्वच्छाययान्यदसितं कुम्भस्येवातपस्थस्य ॥१॥

सलिलमये शशि निखेदीधितयो मूर्छितास्तमोनैशम् ।
चय मन्ति दर्पणादर विहिताडवमन्दिरस्थाना ॥२॥

धूप में रक्खे हुए घड़े के समान चन्द्रमा का आधाभाग सूर्य की किरणों से प्रकाशित होता है और दूसरा आधा अपनी छाया से अन्धकार में रहता है। सूर्य की किरणें चन्द्रमा पर (जिसके बहुत से भाग में जल है) पड़कर प्रतिबिम्बित हो लौट जाती हैं और रात्रि के अन्धकार को नाश कर देती हैं। जैसे धूप में रक्खे हुये दर्पण पर सूर्य की किरणें पड़कर मन्दिर के भीतर चली जाती हैं। ऐसा ही सि० शि० में लिखा है:—

चन्द्रलोक का सूर्य की ओर वाला भाग उसकी किरणों के सम्पर्क से प्रकाशित होकर चमकता है। दूसरी ओर वाला भाग धूप में रक्खे हुए घड़े के सदृश अपनी मूर्ति की छाया से अन्धकार में रहता है। इसलिये जब सूर्य और चन्द्रमा के बीच में पृथ्वी आ जाती है तो सूर्य का प्रकाश चन्द्रमा में आने से रुक जाता है अर्थात् चन्द्रमा में अन्धकार आने लगता है। जितने भाग में अन्धकार आ जाता है, उतना भाग कटता सा दिखाई देता है, जिसको चन्द्रग्रहण कहते हैं। ज्यों २ पृथ्वी और सूर्य की सीध से निकलता जाता है, उसमें सूर्य की किरणें पहुंचने लगती हैं; इसी को उग्रहण या मोक्ष कहते हैं। इसके विरुद्ध, जब पृथ्वी और सूर्य के बीच में चन्द्रमा आ जाता है तब सूर्य चन्द्रमा की ओट में आने लगता है, और जितना भाग चन्द्रमा की ओट में आ जाता है उतना भाग कटता सा दिखाई देता है, इसीको सूर्य ग्रहण कहते हैं। जब पूरा सूर्य ग्रहण पड़ता है तब पृथ्वी पर प्रकाश कम हो जाता है। यह चन्द्र और सूर्य ग्रहण का कारण ज्योतिष के ग्रन्थों में लिखा है। और भी आगे दृष्टि डालिए:—

छादयन्ति शशि सूर्यं शशिन च महतीभूच्छाया (आर्य भट्ट) सूर्य ग्रहण में—

चन्द्रमा सूर्य को ढक लेता है और चन्द्र ग्रहण में पृथ्वी की छाया चन्द्रमा को ढक लेती है। सूर्य सिद्धान्त यही बता रहा है:—

छाद कोभास्करस्येन्द्र रधस्थोघनवद्भवेते ।
भूच्छायाप्राङ्मुखश्चन्द्रो विशन्त्यस्यभवेहसौ ॥

॥ सूर्य सिद्धान्त ॥

सूर्य ग्रहण में चन्द्रमा बादल के सदृश सूर्य को ढांप लेता है, और चन्द्र ग्रहण में चन्द्रमा पूर्व की ओर जाता हुआ पृथ्वी की छाया में आजाता है। आगे भी—

पूर्वी विमुखोगच्छत कुच्छायान्त पविः शशिवि-
शतितेन प्रा कप्रग्रहणं पश्चात् मोक्षोऽस्यनिस्सरतः ॥

सि० शि० गोलाध्याये ॥

जब चन्द्रमा पूर्व की ओर जाता हुआ भूमि की छाया में चला जाता है, तब ग्रहण पड़ता है। जब छाया से निकल जाता है तब मोक्ष हो जाता है। ग्रह लाघव में भी कहा है कि—'छादयत्यर्क विन्दु-र्विधभूमिभाः ॥'

चन्द्र ग्रहण में भूमि की छाया चन्द्रमा को और सूर्यग्रहण में चन्द्रमा सूर्य को ढक लेता है। कवि शिरोमणि कालीदास भी अपनी सम्मति देते हैं—

छायापिभूः शशिनोमल्तोतरो पिताशु । छिमतः प्रजामिपि ॥ रघुवंशे स० १४ श्लो० ४० ॥

चन्द्रग्रहण में पृथ्वी की छाया चन्द्रमा पर पड़ती है, परन्तु लोग उस को शुद्ध चन्द्रमा में एक कलङ्क बतलाते हैं। ग्रहण के विषय में एक और विशेष बात विचारणीय है। वह इस प्रकार है कि ग्रहण होते समय सूर्य अथवा चन्द्रमा का वृत्ताकार भाग ही क्यों कटता है? अर्थात् ग्रसित होता है। यदि पुराणों के

मूर्ति पूजा का खण्डन

आर्य कन्या पाठशाला भारत नगर, गाजियाबाद की सन्तोष कुमारी और सुरेश कुमारी छात्राओं के द्वारा ३-४-५५ के साप्ताहिक अधिवेशन में गाई गई कविता। —संपादक

मन्दिर में पड़ी मूर्ति कुछ खा न सकेगी।
पूछो जो कोई बात तो बतला न सकेगी॥

जो बात करोगे तो वह खामोश रहेगी।
उठ कर जो चले जाओगे तो कुछ न कहेगी॥

जड़ वस्तु है वह वहाँ से जा न सकेगी।
न भूख लगेगी उसे न प्यास लगेगी॥

न सोयेगी वह रात को न दिन को जगेगी।
रोयेगी कभी वह न कभी गा ही सकेगी॥

रख दोगे अगर खाने को फल फूल मिठाई।
आ जायेगा चूहा तो वह कर देगा सफाई॥

मक्खी को भी मुहँ पर से वह उड़ा न सकेगी।
सत पुरुषों की संगत करो मन शुद्ध बनाओ॥

नन्द लाल अगर ज्ञान की गंगा में नहाओ।
मैल पापों की फिर मन पै कभी आ न सकेगी॥
मन्दिर में पड़ी मूर्ति कुछ खा न सकेगी॥

अनुसार राहु द्वारा ग्रहण माना जावे तो गोल नहीं कटना चाहिये। क्योंकि जब कोई किसी पर शस्त्र प्रहार करता है तो वह नाप तोलकर अथवा परिकाल से नहीं काटता प्रत्युत यथावसर प्रहार करता है। यहां ज्योतिष ही प्रमाण है, सूर्यादि ग्रह गोल है, इसलिये गोल पर गोलका प्रकाश या छाया गोल ही पड़ती है, तथा गोल के बीच में आ जाने से गोल ही भाग छिपता है।

ग्रहण के विषय में सैकड़ों प्रमाण सद्ग्रन्थों में भरे पड़े हैं कि-

चन्द्र और सूर्य ग्रहण पृथ्वी और चन्द्रमा की छाया से गतियों (चालों के अनुसार) के साथ पड़ता है। कल्पित बातें प्रकाश के समय में कदापि नहीं ठहर सकती। केवल वेद का एक प्रमाण और देकर लेख को समाप्त किया जाता है। यथा :—

मेवैसूर्यं स्वभान्तुस्तमसा विध्यमहासुराः।
अन्तस्य चन्द्राविदन्तसभा अन्वेअशकुवत॥

॥ ऋग्वेद स्वारवत्यापम ॥

स्वास्थ्य सुधा

जल को स्वच्छ रखने के नियम

(श्री—एबेल वोलमैन)

मनुष्य बिना कपड़े और मकान के जीवित रह सकता है। भोजन के बिना भी वह कुछ दिन जी सकता है पर जल के बिना उसका कुछ समय से अधिक जीना सम्भव नहीं है। इसी कारण आदि काल से ही मनुष्य नदियों, चश्मों, कुओं, या दूसरे जलाशयों के आसपास ही रहता आया है।

आयुर्वेद में

आज बहुत से देशों में लोगों को गंदे या कीटाणुयुक्त, रासायनिक दृष्टि से दोषपूर्ण और किसी भी तरह अस्वाद और दुर्गन्धित जल को इस्तेमाल करने के लिए मजबूर नहीं होना पड़ता। पर इसका श्रेय उन असंख्य अज्ञात मनीषियों को है जो पिछले ४००० वर्षों में इस दिशा में कुछ न कुछ काम करते रहे और जिनके कार्य पर आज के विज्ञान ने भी अपनी मुहर लगा दी है। ईसा के लगभग २००० वर्ष पूर्व आयुर्वेद के एक संस्कृत ग्रन्थ में निम्न आशय का श्लोक मिलता है।

"पानी को तांबे के पात्र में रखना चाहिए जहां प्रकाश मिलता रहे, और कोयले में से छानना अच्छा रहता है।"

ये शब्द आज २०वीं सदी के किसी इन्जीनियर के से प्रतीत होते हैं। लगभग उसी काल के एक दूसरे ग्रन्थ में निम्न उद्धरण मिलता है।

"उबालने या धूप में गर्म करने या गर्म लोहे से बुझाने से गंदा पानी शुद्ध हो जाता है। रेत और कंकड़ में से छानने और ठंढा करने से भी पानी शुद्ध हो जाता है।"

प्राचीन काल से लेकर लगभग ७वीं सदी तक मिश्र, अरब, ईरान आदि देशों के साहित्य में तथा बाइबिल में भी पानी को साफ करने की विधियों का उल्लेख मिलता है। ऐसी ही कई विधियों को थोड़ा हेरफेर करके आगे चलकर १८वीं और १९वीं शताब्दी में वैज्ञानिकों ने भी अपनाया। श्री एम. एन. बेकर ने अपनी पुस्तक दी क्वेस्ट फार प्योर वाटर (शुद्ध जल की तलाश) में, जो बहुत महत्वपूर्ण रचना मानी जाती है, १७ सदी के सर फ्रांसिस बेकन (इंगलैंड) जोहान रुडोल्फ ग्लावर (जर्मनी) तक एंटोनिओ पोरजियो (इटली) तथा वेनिस के कई इंजीनियरों के परीक्षणों और प्रयत्नों का उल्लेख किया है। १८ वीं शताब्दी तक फ्रांस में पानी छानने का ज्ञान लगभग ४०० वर्ष पुराना हो चुका था लेकिन तब तक भी इसका उपयोग निजी खर्च के लिए या किन्हीं छोटे मोटे उद्योगों में ही होता था।

क्लोरीन मिलाने का प्रयोग

इंगलैंड, स्काटलैंड अमरीका में १९ 'वीं और २० वीं सदी में सफाई की ओर विशेष ध्यान दिया गया और पानी के छानने तथा उसमें क्लोरीन मिलाने के बड़े-बड़े यंत्र बनाए गए।

इस क्षेत्र में अनेकों व्यक्तियों ने काम किया है और सबके नाम गिनाना संभव नहीं। कुछेक के नाम यहां दिए जाते हैं। १७९१ में इंगलैंड के जेम्स पीकाक ने अपने "फिल्टर" (पानी छानने का यन्त्र) को पेटेंट कराया जो बहुत असाधारण चीज थी। इसके बाद १८८१ तक कई वैज्ञानिकों ने या तो सुविधाजनक फिल्टर तैयार किए या पानी के हानि-

(शेष पृष्ठ १९५ पर देखें)

* चयनिका *

तलाक

"तलाक बहुत बड़ा अभिशाप है जिसने पाश्चात्य समाज की जीवन शक्ति को चूस लिया है। इसने पाश्चात्य समाज की स्थिरता को बर्बाद कर दिया है जहां पारिवारिक जीवन और गार्हस्थ सुख का लोप हो चुका है।

अमेरिका के पतियों को अपनी पत्नियों के लिए टेलीविज़न, फरकोट, मोटर कार और पृथक् शयनागार आदि की व्यवस्था करनी होती है वह केवल इसलिए कि वह दिन भरके परिश्रम के बाद घर पर बना हुआ गर्म खाना खा सके। जब कभी पत्नी नाराज हो जाती है तो वह पति की पसन्द का खाना नहीं बनाती। यदि क्रोध अधिक बढ़ा हुआ होता है तो खाना जला दिया जाता है। रोटी बासी और सब्जी ठंडी दे दी जाती है। जब पतिदेव उस खाने की आलोचना करने लग जाता है तो पत्नी तलाक दे देती है।

इसका फल यह हुआ कि गत ३० या ४० वर्षों में पाश्चात्य समाज में मनोवैज्ञानिक ह्रास बहुत अधिक हुआ है।

आस्ट्रेलिया में परेशान करने वाली पत्नियों से मुक्ति पाने के लिए पतिदेवों को पत्नियों के प्रति निर्दयता को रोकने वाली सोसाइटियों में शरण लेनी पड़ती है। हिन्दू के लिए ऐसी स्थिति न केवल अपमान जनक ही अपितु अचिन्त्य है।

अमेरिका में प्रत्येक ४ में से १ विवाह भंग हो जाता है जबकि ब्रिटेन में प्रत्येक १० मिनिट में एक के औसत से विवाह विच्छेद होते रहते हैं। इस दुर्दशा के कारण पश्चिम के सुधारक विवाह प्रणाली में परिवर्तन करने के उपायों पर विचार करने लगे हैं क्योंकि विवाह-बन्धन की यह ढिलाई समाज के सीराजे को नष्ट कर रही है।

नवीनता के उन अन्धे भक्तों पर दया आती है जिन्होंने आर्यों की विवाह प्रणाली में 'तलाक' का सूत्रपात किया है जिसकी सर्वत्र प्रशंसा होती रही है, जो स्वस्थ समाज की स्थिरता के लिए एवं कामुकता और दुराचार की रोक थाम के लिए विशुद्ध तथा अभेद्य संस्था मानी जाती रही है। लार्ड समर ने प्रीवी कौंसिल के एक केस में अपना निर्णय देते हुए कहा था :—

"कम से कम पारिवारिक अधिकारों से सम्बद्ध प्राचीन संस्कृति के कानूनों और नियमों में अनिश्चित फेरफार नहीं होने चाहिएं। यह बात अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

—'पीपिल'

वर्ग पहेलियां

केन्द्रीय सरकार ने समाचार-पत्रों में प्रकाशित होने वाली इनामी वर्ग पहेलियों के नियंत्रण के लिए जो विधेयक तय्यार कर राज्य सरकारों के विचार जानने के लिए प्रसारित किया है, वह स्वागत योग्य होने पर भी विचारणीय है। सरकार वर्ग पहेलियों के लिए एक मास में अधिकतम पुरस्कार की राशि १,०००) और वर्ष भर में अधिकतम १० ०००) रु० निर्धारित करना चाहती है। विधेयक के अनुसार इससे अधिक की पुरस्कार राशि वितीर्ण करने के लिए समाचार पत्रों को विशेष लाइसेंस लेना होगा और वे भी वर्ष भर में १,०७,००० रु. से अधिक राशि नहीं बांट सकेंगे। पुरस्कार की अधिकतम सीमा निर्धारित कर देने से वर्ग पहेलियों के पीछे मरुमरीचिका की भांति भागने की समाज में जो प्रलोभनमयी दुष्प्रवृत्ति छागई है उस पर कुछ अंकुश अवश्य लगेगा, किन्तु रातों रात कुबेर का खजाना पा जाने की मनुष्य की स्वाभाविक अभिलाषा से लाभ उठाने वालों के मार्ग एकदम बन्द नहीं होंगे। वे इस कानून के बीच में कहीं न कहीं सेंध लगाकर लोगों की जेबों तक पहुँच ही जाएंगे।

सरकार यह कदम यह मानकर उठा रही है कि

जिस ढंग से इन वर्ग पहेलियों का इस समय संचालन हो रहा है, वह जुए से किसी अंश में कम नहीं है। किन्तु साथ ही वह यह भी स्वीकार करती है कि इन से बौद्धिक मनोरंजन होता है और इसी लिए उसने इन पर पूर्णतः प्रतिबन्ध लगाना उचित नहीं समझा। गहराई से देखने पर प्रतीत होगा कि इन पहेलियों में बुद्धि की अपेक्षा जूए का तत्व ही अधिक है और यों, क्या बुद्धि की आवश्यकता जूए में नहीं होती? शकुनि और दुर्योधन ने क्या युधिष्ठिर को केवल अपनी बुद्धि और चतुराई के जोर से ही नहीं हराया था? किन्तु वर्ग पहेलियों के जूए में अपनी बुद्धि पर भरोसा करते हैं उनके आयोजक और पहेलियां भरने वाले सिर्फ भाग्य पर भरोसा करके चलते हैं। किन्तु जिसका भाग्य फंस जाता है, वह यह स्वीकार करने के लिए तय्यार नहीं होता कि उसने सिर्फ तुक्का मारा है, तीर नहीं। यही कारण है कि वर्ग पहेलियों के आयोजकों को बहुतों की जेब से निकाली गई राशि में से थोड़ी-सी किसी एक या थोड़े-से व्यक्तियों की जेब में डालकर उनसे ईमानदारी और बौद्धिक मनोरंजन का सर्टिफिकेट प्राप्त करने में बहुत अधिक कठिनाई नहीं होती और क्योंकि वर्ग पहेलियां भरने की बीमारी में केवल गरीब और निम्न वर्ग के लोग ही नहीं, उच्च वर्ग के लोग भी मुब्तिला हैं, इसलिए यदि भाग्य से यह सर्टिफिकेट किसी ऐसे व्यक्ति से प्राप्त हो जाए जिसकी समाज में ऊंची स्थिति हो तो वह और भी अधिक प्रामाणिक हो जाता है। उदाहरण के लिए बम्बई उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश ने एक मुकद्दमे की सुनवाई में ऐसा ही एक प्रमाणपत्र दे डाला था, और यह स्वाभाविक भी था, क्योंकि उनसे यह स्वीकार करने की आशा नहीं की जा सकती कि उन्होंने अपनी बुद्धि और प्रतिभा से वह इनाम नहीं जीता। किन्तु सरकार को यह नहीं भूलना चाहिए कि ऐसे लोगों की संख्या बिलकुल नगण्य और उपेक्षणीय नहीं जो इस मायामृग का पीछा कर रातों-रात धनी बन जाने की धुन में अपनी पसीने की कमाई को वर्ग-पहेलियों के इन सभ्य जुआरियों की भेंट कर देते हैं।

जो लोग बौद्धिक मनोरंजन की दुहाई देकर पर-द्रव्यापहारिता का यह व्यवसाय जारी रखने की हिमायत करते हैं, उन्हें एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि जब इच्छानुसार चाहे जितनी संख्या में पूर्तियां भेजने की छूट रहती है, और इनाम का प्रलोभन कायम रखते हुए इस पर अंकुश लगाना सम्भव भी नहीं है, तब तक बौद्धिक मनोरंजन या बुद्धि का विकास एक मिथ्या भुलावा मात्र ही रहेगा, वास्तविक तत्व जूआ और आनन-फानन में धनी बनने की आकांक्षा ही रहेंगे, क्योंकि किसी स्थान के लिए जितने भी अधिक वैकल्पिक अक्षर सम्भव होंगे, वे सभी या उनमें से अधिकतम भर कर भेजने की प्रवृत्ति बनी रहेगी। इसके अलावा स्वयं इन पहेलियों में अधिकतम पूर्तियां भेजने वालों के लिए विशेष इनामों की घोषणा भी रहती है, जिसका परिणाम यह होता है कि लोग अधिक गुड़ डालकर अधिक मिठास पाने की आशा में अपनी कमाई का एक बड़ा भाग इस व्यसन में गंवा देते हैं और अन्त में निराशा के सिवाय उन्हें कुछ हाथ नहीं आता।

कुछ समाचार पत्रों में अब भी विशुद्ध बौद्धिक मनोरंजन के लिए वर्ग पहेलियां प्रकाशित होती हैं, उनमें कोई पुरस्कार का प्रलोभन नहीं होता। यदि सरकार को बौद्धिक मनोरंजन की इतनी अधिक चिंता है तो वह इनामी पहेलियां बन्द कर समाचार पत्रों की भांति केवल मनोरंजनार्थ पहेलियां प्रकाशित करने की अनुमति दे सकती है। यदि इनाम देने की छूट देना अभीष्ट ही हो तो अधिक से अधिक पुस्तकों आदि के इनाम की अनुमति दी जानी चाहिए। उनसे बुद्धि की खुराक जुटाने का लक्ष्य अधिक अच्छी तरह पूरा हो सकता है। प्रेस कमीशन ने इस प्रश्न पर जो सिफारिशें की हैं, उनकी भी मूल भावना यही है। कम से कम दिमागी तफरीह और दिमागी [illegible] का भेद स्पष्ट रूप से दृष्टि में रखा जाना चाहिए, तभी सरकार का यह कानून सफल हो सकता है।

—हिन्दुस्तान

महिला-जगत्

आदर्श माता

(इतिहास का एक विद्यार्थी)

कलकत्ता हाईकोर्ट के न्यायाधीश एवं कलकत्ता विश्वविद्यालय के सर्व प्रथम वाइस चांसलर सर गुरुदास बन्द्योपाध्याय प्रसिद्ध मातृ भक्त थे। एक बार वे हाईकोर्ट में कोई मुकद्दमा सुन रहे थे। सहसा उनकी दृष्टि द्वार की ओर गई। एक मैली कुचैली बुढ़िया को चपरासी भीतर आने से रोक रहा था। सब ने आश्चर्य से देखा कि जस्टिस गुरुदास ने मुकद्दमा वहीं रोक दिया। प्रथा के अनुसार पीछे के मार्ग से न जाकर वे सामने के मार्ग से उतरे और शीघ्रता से जाकर उस बुढ़िया के पैरों में दण्डवत् पड़ गए। बुढ़िया उनके घर पर कभी धाय रही थी, दूर देहात से आई थी और भोलेपन के कारण अपने गुरुदास को देखने कोर्ट पहुँच गई थी। दोनों के नेत्रों से अश्रुधार बह रही थी। आदर पूर्वक बुढ़िया को जस्टिस गुरुदास घर ले गए। पूछने पर उन्होंने सब को बताया ये मेरी माता हैं। इन्होंने मुझे दूध पिलाया है।

यह मातृ भक्ति सर गुरुदास में आयी कहां से? यह उनकी जननी का प्रभाव था। बचपन में ही उनके पिता का देहान्त हो गया था। माता ने ही उनका लालन पालन और शिक्षण किया।

माता स्वर्ण मणि देवी की आर्थिक स्थिति ऐसी न थी कि वे फीस देकर पुत्र को पढ़ा सके। विवश होकर उन्होंने पहले गुरुदास को अपने भाई के घर पढ़ने को भेजा। परन्तु मामा के घर स्नेह के कारण लड़का बिगड़ न जाय, इस आशंका से शीघ्र ही उन्होंने उसे बुला लिया और कलकत्ता के एक स्कूल में उन्हें भरती कर दिया। अपने प्रतिभा के कारण वे सदा कक्षा में प्रथम आते रहे। उन्हें जो पुरस्कार एवं छात्रवृत्ति मिलती थी उसी से उनकी शिक्षा का व्यय चल जाता था।

पुत्र का कोई भी दोष माता को सह्य न था। लोभ से उन्हें आन्तरिक घृणा थी। ब्राह्मण होने के कारण गुरुदास जी को लोगों के निमंत्रण मिलते थे भोजन करने के लिए किन्तु माता उन्हें ऐसा नहीं करने देती थी। उन्हें भय था कि निमंत्रणों में जाने से बालक का विकास कुंठित हो जायगा।

गुरुदास जी पहले वकालत करने बहरामपुर गए। वहां उन्हें अच्छी आय होने लगी। माता को घर से दूर वहां जाकर नित्यकर्म में असुविधा होने लगी। अर्थ लोभ उनके लिए हेय था। माता का आदेश पाकर गुरुदास जी कलकत्ता चले आए और हाई कोर्ट में वकालत करने लगे। उन्हें कलकत्ता में भी अच्छी आय होने लगी। वकील से जज हो गए। अपने छोटे से मकान को छोड़कर चौरंगी में बड़ा मकान लेकर रहने का उन्होंने विचार किया। माता ने भर्त्सना की—'छोटा हो या बड़ा अपना मकान तो अपना ही है। अपनी झोंपड़ी दूसरे के महल से हजार गुना श्रेष्ठ है। स्वयं अच्छा आचरण करके त्याग और धर्म की दूसरों को शिक्षा दो।" यही इस देवी के जीवन का मूल मंत्र था। वाणी, कार्य, व्यवहार सब में उनकी एकता देख पड़ती थी। वे जो कहती थीं, वही सोचती थीं और तदनुरूप ही कार्य करती थीं। उनके समीप अपना करके कोई पदार्थ न था। गरीबों को सब कुछ देकर ही उन्हें शान्ति होती थी।

वाल-जगत्

एक कैदी बालक की दयालुता

एक जवान बालक को किसी अपराध में कैद की सजा हो गई थी। एक बार अवसर पाकर वह जेल से भाग निकला। बड़ी भूख लगी थी, इसलिए पास के गांव में उसने एक झोंपड़ी में जाकर कुछ खाने को मांगा। झोंपड़ी में एक अत्यन्त गरीब किसान परिवार रहता था। किसान ने कहा—'भैय्या' हम लोगों के पास कुछ भी नहीं है, जो हम तुमको दें। इस साल तो हम लगान भी नहीं चुका सके हैं। इससे मालूम होता है, दो ही चार दिन में यह जरा सी जमीन और झोंपड़ी भी कुर्क हो जायगी। फिर क्या होगा, भगवान ही जाने?' किसान की हालत सुनकर बालक अपनी भूल को भूल गया और उसे बड़ी दया आयी। उसने कहा—"देखो, मैं अभी जेल से भाग कर आया हूं, तुम मुझे पकड़ कर पुलीस को सौंपदो तो तुम्हें ५०) इनाम मिल जायगा। बताओ तो, तुम्हें लगान के कितने रुपये देने हैं।" किसान ने कहा 'भैय्या' चालीस रुपए हैं परन्तु तुम्हें मैं कैसे पकड़वा दूं।" लड़के ने कहा "बस! चालीस रुपये हैं तब तो काम हो गया, जल्दी करो।"

किसान ने बहुत मना किया। परन्तु लड़के के हठ से किसान को उसकी बात माननी पड़ी। वह उसके दोनों हाथों में रस्सी बांध कर थाने में दे आया किसान को ५०) मिल गए। बालक पर जेल से भागने के अभियोग में मुकद्दमा चला। प्रमाण के लिए गवाह के रूप में किसान को बुलाया गया। "कैदी को तुमने कैसे पकड़ा?" हाकिम के यह पूछने पर किसान ने सारी घटना अक्षरशः सुना दी। सुन कर सब को बड़ा आश्चर्य हुआ और लोगों ने इकट्ठे करके किसान को ५०) और दे दिए। हाकिम को बालक की दयालुता पर बड़ी प्रसन्नता हुई। पहले के अपराध का पता लगाया गया तो मालूम हुआ कि बहुत ही साधारण अपराध पर सजा हो गई थी। हाकिम की सिफारिश पर सरकार ने बालक को बिलकुल छोड़ दिया और उसकी बड़ी ख्याति हुई। (संकलित)

चुने हुये मोती

— भूत प्रेत की वा दूसरी डराने वाली कहानियां बच्चों को सुनाने से बड़ी हानि होती है।

— बच्चों को गहना न पहनाओ।

— बच्चों की देख भाल का दायित्व नौकरों पर मत छोड़ो।

— छोटे बच्चों को पैसा मत दो।

साहित्य–समीक्षा

जीवन चक्र

(लेखक—श्रीयुत पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय)

प्रकाशक-कला प्रेस प्रयाग मूल्य ४)

'मैंने श्री पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय द्वारा लिखित 'जीवन चक्र' नामक पुस्तक आद्योपान्त पढ़ी। श्री पंडित जी आर्य-जगत् के माने हुए सुप्रसिद्ध दार्शनिक और सुलझे हुए विद्वान् हैं। आप धार्मिक विद्वान् हैं और हिन्दी साहित्य में भी आपका अनुपम स्थान है।

इस पुस्तक में अपने जीवन चक्र का वर्णन करते हुए श्री पंडित जी ने अत्यन्त योग्यता से आर्य समाज की आज तक की गति-विधि का अत्यन्त रोचक और शुद्ध वर्णन किया है, जो कि आर्य समाज का इतिहास लिखने वालों के लिए एक अच्छी सामग्री है।

भाग्य २ और समय २ चिल्ला कर अपने जीवन को असफल ही बिता देने वालों के लिए भाग्य और समय अपने पुरुषार्थ से कैसे अनुकूल बनाया जाता है, बताने वाली यह पुस्तक आत्म कथा साहित्य में अनुपम पुस्तक के रूप में चिर स्थायी रहेगी।

सर्वत्र पुस्तकालयों में यह पुस्तक रक्खी जानी चाहिए। प्रत्येक आर्य समाज और आर्य संस्थाओं को इस पुस्तक की एक-एक प्रति अवश्य रखनी चाहिए।"

नरेन्द्र

प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, हैदराबाद

(पृष्ठ ११० का शेष)

कारक कीड़ों को नष्ट करने आदि की विधियों का अन्वेषण किया।

अमरीका में १८८० से ११००. तक इस दिशा में कई लोगों ने काम किया। जेम्स पी, कर्कउड, विलियम रिपले निकोल आदि के नाम स्मरणीय हैं। मेजर सी. आर. डारनल ने १११० में और जार्ज आरंस्टीन ने ११२२ में पानी में क्लोरीन मिलाने के बारे में महत्वपूर्ण आविष्कार किए। फ्रांस और कनाडा तथा अन्य कई देशों में भी इसी तरह का काम हुआ है। इन समृद्ध देशों के अलावा दूसरे देशों में भी महत्वपूर्ण कार्य हुआ यद्यपि आर्थिक कठिनाइयों के कारण उनका सुपरिणाम सामने नहीं आ सका है।

जल की औद्योगिक उपयोगिता

जल जीवन का आधार तथा एक अनिवार्य पेय पदार्थ ही नहीं, किन्तु औद्योगिक कार्यों के लिए भी आवश्यक है। दूसरे शब्दों में यह कहना चाहिए कि वह एक आवश्यक कच्चा माल है। शायद उसके इतने अधिक सस्ते और सुलभ होने के कारण हम उसकी उपयोगिता का मूल्यांकन नहीं कर पाते। यदि हम कुछ ध्यान से विचार करें तो मालूम होगा कि जल के उपलब्ध न होने से कितने ही उद्योग रुक सकते हैं।

उदाहरणार्थ, एक टन सूखा सीमेंट तैयार करने के लिए ७५० गैलन पानी की आवश्यकता है और एक गैलन पेट्रोल तैयार करने के लिए १० गैलन पानी चाहिए। स्मरण रहे कि एक पौंड अथवा आधा सेर कागज तैयार करने के लिए २४ गैलन, एक पौंड ऊनी वस्त्र के निर्माण के लिए ७० गैलन तथा उच्च कोटि का एक टन इस्पात तैयार करने के लिए ६५००० गैलन शुद्ध जल की आवश्यकता है।

आर्य समाज के इतिहास की प्रगति

परोपकारिणी सभा, अजमेर

(अप्रैल के अङ्क से आगे)

इसमें तत्कालीन भारतवासियों में सर्वाग्रणी, राजनीति विशारद, समाज सुधारक, अंध श्रधाश्रित, रूढि विध्वंसक, वरिष्ठ न्यायालय के न्यायाधीश आने वाली पीढ़ी के अग्रणी नेताओं के राजनीतिक गुरु महामान्य महादेवगोविन्द रानाडे महोदय ने प्रस्ताव किया कि दयानन्द आश्रम का निर्माण किया जावे जिसमें पुस्तकालय, अंग्रेजी वैदिक पाठशाला, विक्रयार्थ पुस्तकों का भंडार, अनाथाश्रम, अद्भुत वस्तु संग्रहालय, यन्त्रालय और व्याख्यान ग्रह हों।

इस प्रस्ताव का समर्थन महामहोपाध्याय कविराज श्यामल दास जी ने जो सभा में अपने प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व के साथ साथ महाराणा श्री मेवाड़ाधिपति का प्रतिनिधित्व करते थे किया। प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार हुआ और सभा में उपस्थित केवल १६-१७ सदस्यों में से अनेकों ने स्वयं अथवा जिनकी ओर से वे प्रतिनिधि थे उनकी ओर से चौबीस हजार रुपये के लगभग चन्दा लिखवा दिया। प्रतिज्ञात चन्दे की सर्वप्रथम छपी सूची से ज्ञात होता है कि इस सूची में १८ हजार रुपये से कुछ अधिक की राशियां छपवाकर वह सूची समस्त आर्य समाजों और आर्य पत्रों के पास वृद्धि के लिए भेजी गई थी। इस सब उद्योग और उत्साह स्वरूप जो धन एकत्रित हुआ उसका उल्लेख आगे किया जावेगा।

दयानन्द आश्रम निर्माण का निश्चय हो जाने के उपरान्त यह आश्रम कहां बने, इस पर दूसरे अधिवेशन में विचार हुआ। राजा श्री जयकृष्ण दास जी ने प्रस्ताव रखा कि दयानन्द आश्रम कहीं पृथक् बनने के स्थान में आगरा कालिज के शामिल बनाया जावे। रायमूलराजजी ने सबकी सम्मति से वे सब शर्तें विदित कीं कि जिन पर परोपकारिणी सभा कालेज को अपने हाथ में ले सके। इस पर भले प्रकार विवाद होकर निश्चय हुआ कि गवर्नमेंट उन शर्तों पर उक्त कालेज को सर्वाधिकार सहित परोपकारिणी सभा को सम्भालने नहीं देवेगी। अतः अधिवेशन में उपस्थित समस्त आर्य समाजों के प्रतिनिधि और परोपकारिणी सभा की ओर से यही निश्चय रहा कि श्रीमद्दयानन्द आश्रम के लिए जितना धन एकत्र होगा तदनुसार पृथक् ही बनाया जावे।

फिरोजपुर अनाथालय के मन्त्री जी ने २१-१२-८७ को सुझाव भेजा कि दयानन्द आश्रम के अनाथालय सम्बन्धी योजना पृथक् न रख कर फिरोजपुर अनाथालय को पुष्ट करें। निश्चय यही रहा कि आश्रम का कोई अंग भंग न किया जावे।

अन्त में सर्व सम्मति से यही निश्चय रहा कि आश्रम अजमेर में ही बनाया जावे। यह उल्लेखयोग्य है कि इस निश्चय के समय परोपकारिणी सभा के सदस्यों में एक भी अजमेर निवासी नहीं था और इस स्थान-निर्णय का मुख्य हेतु स्वामी जी महाराज का अजमेर में स्वर्गवास होना ही है।

आश्रम निर्माण के हेतु स्वामी जी के परम भक्त राजाधिराज नाहरसिंह जी वर्मा शाहपुराधीश ने अपना बगीचा जो स्वामी का बाग अथवा ऋषि उद्यान करके प्रसिद्ध है और जिसका मूल्य उन दिनों के अन्दाजे के अनुसार १२ हजार रुपये उदयपुरी था,

समर्पण किया। सुझाव रखा गया कि आश्रम के समस्त अंगों के निर्माण के लिये यह बगीचा अपर्याप्त है इसलिये राजाधिराज इस बगीचे का मूल्य नकद प्रदान करा दें जिससे अन्यत्र भूमि खरीदी जा सके।

राजाधिराज को यह स्वीकार नहीं था अतः राजाधिराज की बगीचे की भेंट स्वीकार की गई और सर्वप्रथम दयानन्द आश्रम की नींव इसी बगीचे में स्थापित की गई और आश्रम के कतिपय अङ्गों के निमित्त कैसर गंज अजमेर के गोल चक्कर की परिधि में भूमि प्राप्त करने का कार्य राव साहब श्री बहादुर सिंह जी मसूदा अजमेर आर्य समाज के प्रधान डा० पद्मचन्द जी और आर्य समाज अजमेर की अन्तरंग सभा के आधीन हुआ।

सभा का तीसरा अधिवेशन जो पौष शुक्ल १३ और १४ संवत १९४४ तारीख २८ और २९-१२ १८८७ को हुआ। वह सभा के इतिहास में महत्व का स्थान रखता है इस अधिवेशन में सभा के सदस्यों के अतिरिक्त भारतवर्ष की आर्य समाजों में से जिनकी संख्या का अनुमान उस समय १७४ था ४९ आर्य समाजों के लगभग प्रतिनिधि बाहर से पधारे। पंजाब से लाहौर, फिरोजपुर, तरनतारन और मुलतान के प्रतिनिधि थे जिनमें मुनिवर गुरुदत्त जी विद्यार्थी, महात्मा हंसराज जी, लाला जीवन दास जी, लाला लाजपत राय जी, आर्य पथिक लेखराम जी आदि थे। सब से अधिक प्रतिनिधि वर्तमान के उत्तर प्रदेश की आर्य समाजों से आये थे। राजस्थान की जयपुर, रामगढ़, मसूदा आदि आर्य समाजों के प्रतिनिधि थे। अजमेर आर्य समाज का तो प्रायः प्रत्येक सभासद और अन्य अनेकों सज्जन इस अधिवेशन में उपस्थित थे।

इस अधिवेशन का आकर्षण अन्य कार्यों के अतिरिक्त आश्रम की आधारशिला स्थापित किया जाना था जिसकी सूचना निम्नोद्धृत मांगलिक विज्ञप्ति द्वारा पूर्व ही दे दी गई थी।

मांगलिक विज्ञापन

"विदित हो कि श्रीमती परोपकारिणी सभा ने अपने प्रथम और द्वितीय अधिवेशन में सर्वानुमति से यह बात तो निश्चित कर ही दी थी कि अजमेर में श्रीमद्दयानन्द आश्रम बनाया जावे परन्तु यह स्पष्ट रीति से निश्चय नहीं हुआ था कि वह कहां और किस प्रकार बनाया जावे। इस विषय में कई बार सब सदस्यों की सम्मति ली गई किन्तु वह भी पांच प्रकार की हुई। अतएव यह अत्युत्तम समझा गया कि उन सबको श्रीयुत उप सभापति जी की सम्मति सहित श्रीमान् १०८ श्री संरक्षक—सभापति जी महोदय की सेवा में निरधारार्थ प्रवेश करके अन्तिम निश्चय करा लिया जावे, कि जिससे वह सबको मान्य हो। बड़े हर्ष की बात है कि श्रीमान् १०८ श्री संरक्षक—सभापति जी महोदय ने सब सम्मतियों में से दोहन और संग्रहीत करके नीचे लिखे प्रमाण अन्तिम निश्चय किया है कि जिसकी यह सूचना सब के ज्ञातार्थ, पालनार्थ और प्रयोग में लाने के लिये प्रकाशित की जाती है।

२—श्रीमद्दयानन्द आश्रम शाहपुरे के श्रीयुत राजाधिराज श्री नाहर सिंह जी वर्मा महाशय के भेंट किये हुए बगीचे में बनाया जावे। उसमें इतने कार्य किये जावें कि—

(क) स्वामी जी महाराज की अस्थि—भस्म यथायोग्य रीति से पधरा कर उस पर कुछ थोड़ा सा सुन्दर कर्म ठाया जैसा कि उचित हो करा दिया जावे।

(ख) उसमें विद्यार्थी तथा संन्यासियों के रहने के लिये स्थान बनवा दिये जावें।

(ग) उसमें उपदेशक लोगों के प्राचीन रीति से वेद वेदांगादि पढ़ने के लिये पाठशाला बन जावें।

(घ) अनाथ बालकों के पालन पोषण के लिए अनाथालय बनाया जावे और वह सब मुख्य आश्रम कहलावे।

३—जो कि शाहपुरे का बगीचा अजमेर नगर से कुछ दूर है अतएव केसर गंज में (जहां आर्य समाज अजमेर का स्थान है और मसौदे राव साहब की हवेली है) गोल चक्कर के चारों तरफ जो जमीन के टुकड़े बिकाऊ हैं वे सब तुरन्त मोल ले लिये जावें उनके तुरन्त खरीदने के लिये मसौदे ठाकुर साहब के नाम मन्त्री आज ही पत्र लिख देवें और रुपया जो वे मंगावें उसको हुंडी भी मन्त्री मेवाड़ राज्य की दुकान से लेकर तुरन्त उनके पास भिजवा देवें । इस भूमि में (क) स्वामी जी के नाम से वर्तमान समय की प्रथाओं के अनुसार बालकों के पढ़ने के लिये पाठशाला (ख) यन्त्रालय (ग) पुस्तकों की बिक्री का स्थान (घ) पुस्तकालय (ङ) व्याख्यानालय (च) आर्य चिकित्सालय बनाया जावे और यह स्थान उक्त श्री मद्दयानन्दाश्रम की नगर की शाखा के नाम से प्रसिद्ध हो ।

४—उक्त आश्रम और उसकी शाखा की नींव इसी वर्ष जब श्रीमती परोपकारिणी सभा तारीख २८ तथा २९ दिसम्बर सन् १८८७ ई० को एकत्र हो तब आनन्द मंगल से रख दी जावे । नींव जिन भद्र पुरुष के हाथ से रखवाई जावेगी उनका नाम दो सप्ताह पहले विज्ञापन पत्र द्वारा प्रकाशित कर दिया जावेगा ।

५—उक्त आश्रम सम्बन्धी उक्त सब कार्य सम्पादन करने और कराने के लिये एक भद्र पुरुष पश्चिमोत्तर देश की प्रतिनिधि सभा से दो तीन महीने के लिये अवश्य मांग कर मसौदे ठाकुर साहब के पास तुरन्त भेज दिया जावे कि राव साहब को विशेष श्रम न पड़े और उक्त पुरुष की तनख्वाह जो प्रतिनिधि सभा कहेगी तो वहां से दे दी जावेगी और आर्य समाज अजमेर को भी लिख दिया जावे कि वह भी ठाकुर साहब की सेवा में तनमन से उपस्थित रहे ।

६—जितना चन्दा मेवाड़ राज्य की दुकान पर वसूल होकर जमा हो वह आश्रम के खर्च के लिये मंजूर हो और जो वसूल होना बाकी है वह प्रदाता महाशय सब अपने अपने साथ लेते आवें अथवा प्रथम से ही मन्त्री के पास भेज देवें । क्योंकि अब चन्दे के विषय में बिलकुल देर नहीं होनी चाहिये । इसके अतिरिक्त समस्त प्रतिनिधि सभाओं को यह भी सर्वरीत्या उचित है कि अब आश्रम के सहायतार्थ शीघ्र चन्दा एकत्र करने में तन मन और धन से पूर्ण पुरुषार्थ करें । इस वर्ष में मुख्य आश्रम और उसकी शाखाओं में २५ हजार रुपये खर्च के लिये साबित किये जाते हैं ।

७—आर्य समाज अजमेर और उक्त भद्र पुरुष जितने स्थान की कालम १ तथा २ में बनने तजवीज हुये हैं उनके नकशे और लागत के तखमीने शीघ्र तैयार कराकर और मसौदे ठाकुर साहब को दिखा कर मन्त्री के पास तुरन्त भेज देवें ।

८—श्रीमती परोपकारिणी सभा के सब सभासद (समस्त प्रतिनिधि सभा और समस्त आर्य समाजें श्रीमद्दयानन्द परोपकारिणी के आश्रम की नींव रखने के उत्सव में प्रसन्नता पूर्वक पधारें ।

श्रीमान् श्री १०८ श्री संरक्षक सभापति महोदय के आज्ञानुसार

ह० मोहन लाल विष्णुलाल पंड्या
राजस्थान उदयपुर मन्त्री
ता० १३-१०-१८८७ श्रीमती परोपकारिणी सभा

गोरक्षा आन्दोलन
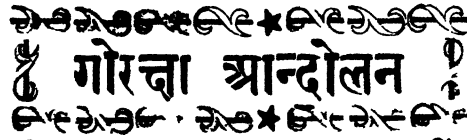
गोहत्या निषेध की मांग साम्प्रदायिक नहीं राष्ट्रीय है

(लेखक—लाला हरदेव सहाय)

श्रीमती मीरा बहिन ने २० अप्रैल १९५९ के हिन्दुस्तान टाइम्स के लेख में गोहत्या निषेध आन्दोलन तथा सेठ गोविन्ददासजी के विधेयक को साम्प्रदायिक बतलाया। यह ठीक नहीं। श्री मीरा बहिन का गोवंश की वर्तमान बुरी दशा का हिन्दुओं को ही जिम्मेवार बतलाना असत्य और निराधार तो है ही, मीरा बहिन ने हिन्दुओं के साथ अन्याय और देश की कुसेवा भी की है। मीरा बहिन के मतानुसार मुसलमानों के लिये गोहत्या करना अनिवार्य होता तो जैसा कि प्रसिद्ध राष्ट्रवादी पं० सुन्दर लाल जी ने "भारत में अंग्रेजी राज्य" प्रसिद्ध पुस्तक के पृष्ठ १८४७ पर लिखा है मुगल बादशाह गोहत्यारे को गोली से मार देने या हाथ काट देने की सजा देने का नियम न बनाते। महात्मा गांधी जी के अध्यात्मिक उत्तराधिकारी सन्त विनोबा ने २१ अगस्त १९५१ को "हरिजन सेवक" में लिखा है, मैं मुसलमान और ईसाइयों की तरफ से उनका प्रतिनिधि बनकर कहता हूँ कि उन दोनों धर्मों में ऐसी कोई बात नहीं है कि गाय का बलिदान हो इसलिये मैं कहता हूं कि हमारे सैक्यूलर स्टेट में भी गोरक्षा होनी चाहिये, श्री विनोबा जी ने इसी लेख द्वारा बैल को सम्मिलित करके बिहार राज्य में कानून द्वारा गो हत्या बन्द करने का सुझाव दिया तथा श्रीविनोबा जी ने अपने ९ दिसम्बर १९५३ के पत्र द्वारा सेठ गोविन्ददास जी के गोहत्या निषेध बिल का समर्थन किया। श्री विनोबा जी सितम्बर १९५१ के अपने "सर्वोदय" पत्र में लिखते हैं, "गोहत्या जारी रही तो हिन्दुस्तान में बगावत होगी, गोहत्या बन्दी हिन्दुस्तान के लोगों का मैंडेट है।" यदि सेठ गोविन्द दास जी का गोरक्षा विधेयक साम्प्रदायिक होता तो श्री विनोबा जी इस का समर्थन न करते। विधान की धारा ४८ तथा केन्द्रीय सरकार की विशेषज्ञ समिति१९४७:४८ Cattle preservation & development committee तथा उत्तर प्रदेश सरकार की गोसम्वर्धन जांच समिति (जिसमें तीन मुसलमान और ईसाई भी शामिल थे) के सम्पूर्ण गोहत्या निषेध की सिफारिश करने पर भी गोहत्या निषेध के प्रश्न को साम्प्रदायिक बतलाना निराधार और हिन्दू मुसलमानों में वैमनस्य पैदा करने की शरारत है

श्री गांधी जी ने लिखा है:

"नवजीवन" २९जनवरी १९२९: "हिन्दुस्तान में हिन्दुओं के साथ रहकर गोवध करना हिन्दुओं के खून करने के बराबर है"। मेरे नजदीक गोवध और मनुष्य वध दोनों एक ही चीज हैं। मैं मुसलमानों के लिए जहां तक हो सकेगा दुख सहन करने को तैयार हुआ उसका कारण स्वराज्य मिलने की छोटी बात तो थी ही, साथ ही गाय बचाने की बड़ी बात भी उसमें थी।"

"नवजीवन २० अप्रैल १९२४ "गौ रक्षा के साथ हिन्दू मुसलमान की एकता का निकट सम्बन्ध है। यह कहना भी अनुचित है कि गांधी जी कानून के पक्ष में नहीं थे। १२ फरवरी१९४० को गांधी जी की उपस्थिति में उनकी सम्मति से गोपुरी वर्धा में जो सम्मेलन हुआ उसमें सब प्रकार के गाय, बैल बछड़े के वध को अनिष्ट मानते हुये उपयोगी और

होनहार पशुओं की हत्या कानूनन बन्द करने का प्रस्ताव हुआ। यह ठीक है कि इस प्रस्ताव में कानून द्वारा सम्पूर्ण गोहत्या निषेध नही आता पर जैसा कि १७जुलाई १९२७ के नवजीवन पत्र में गांधी जी लिखते हैं "बाजार में बिकने आने वाली तमाम गायें ज्यादा से ज्यादा कीमत देकर राज्य खरीद ले। तमाम लंगड़े, लूले और रोगी पशुओं की रक्षा राज्य को ही करनी चाहिये"। इसका स्पष्ट अर्थ है कि गांधी जी एक भी गौ की हत्या नही चाहते थे। सन् १९२१ की गोपाष्टमी को दिल्ली के पाटोदी हाउस की सभा में महात्मा गांधी जी की उपस्थिति में गोहत्या के प्रश्न पर अंग्रेजी राज्य से असहयोग करने का प्रस्ताव हुआ। श्री काका कालेलकर ने "बापू की झांकियां" पुस्तक के पृष्ठ९८ पर लिखा है कि सन् १९२६ में मद्रास में हिन्दू मुसलिम समझौता होने लगा तब महात्मा गांधी जी ने श्री देसाई से कहा मसविदे में मुसलमानों को गोवध करने की आम इजाजत दी गई है यह मुझे कैसे बरदाश्त होगा हम उन्हें गोहत्या करने से जबरदस्ती नही रोक सकते उन्हें समझा सकते हैं। मैं तो स्वराज्य के लिये भी गो रक्षा का आदर्श नही छोड़ सकता। समझौता मुझे मान्य नहीं, नतीजा चाहे जो कुछ भी हो किन्तु मैं बेचारी गायों को इस तरह नही छोड़ सकता"।

स्वामी आनन्दजी गांधी जी के निकटस्थ कार्यकर्ता और नवजीवन के सम्पादक रहे हैं उन की बाबत गांधी जी की गोसेवा संघ की विचार धारा पुस्तक के पृष्ठ ११ पर लिखा है, "श्री गांधीजी ने स्वामी आनन्द को गोसेवा कार्य के लिये वर्धा बुलाया। सन् १९४२ का आन्दोलन आया, स्वामी जी ने यह महसूस करके कि हमारा वर्षों का नसल सुधार का काम यह विदेशी सरकार गायों को कत्ल करके मिनटों में बर्बाद कर देती है। इसलिये सर्व प्रथम इस का हटाना ही गो सेवा है। इसलिए वे इस विचार से आन्दोलन में भाग लेने के लिये बम्बई वापिस चले गये। इस से स्पष्ट होता है कि कतल को बन्द करवाना गोसेवा के रचनात्मक कार्य से अधिक आवश्यक है।

जैसा कि मीरा बहिन ने भी स्वीकार किया है उपयोगी पशुओं को कतल से बचाने के लिए कोई ठोस कानून नहीं। मेरा सात साल का अनुभव है और ईमानदार सरकारी विशेषज्ञ भी मानते हैं कि जब तक गोहत्या सम्पूर्णतया बन्द नहीं होगी तबतक उपयोगी पशुओं का कतल भी बन्द न होगा। क्योंकि कसाई को अच्छे पशु के कतल से अधिक लाभ होता है। व्यवहारिक दृष्टि से जब तक सम्पूर्ण गोहत्या बंद न होगी तब तक न ही उपयोगी पशुओं का वध बन्द होगा और न ही नसल सुधार गोसम्वर्धन से विशेष लाभ पहुँचेगा। यदि गांधीजी के सन्मुख यही परिस्थिति उपस्थित होती तो जिस प्रकार गांधीजी सन १९१८ तक सरकार के सहायक रह कर १९२१ में विरोधी बन गये देश के बटवारे के घोर विरोधी बन कर भी पाकिस्तान स्वीकार किया, उसी प्रकार गांधीजी भी विनोबा जी की तरह कानून द्वारा सम्पूर्ण गोहत्या निषेध का समर्थन करते।

रचनात्मक कार्यों के लिये चारा और सांड दो मुख्य साधन हैं। यह दोनों बहुत कुछ सरकार पर ही निर्भर हैं। पर सरकार चारे के साधनों को उन्नत नहीं नष्ट कर रही है। सरकार द्वारा सांड तैयार करने का भी कोई ठोस काम नहीं। गोवंश को निकम्मा बना नष्ट करने वाले वनस्पति घी, मूंगफली के दूध दही, ट्रेक्टर और रासायनिक खाद को भी सरकार द्वारा अनुचित प्रोत्साहन दिया जा रहा है। अंग्रेजी राज्य की तो गोधन पर कुदृष्टि थी ही, आज की सरकार भी नष्ट करने पर तुली हुई है। गोरक्षा का कार्य राष्ट्रीय है, हिन्दू मुसलमानों का नहीं। यह ठीक है कि कुछ हिन्दू गाय को ठीक नहीं रखते, पर सरकार द्वारा प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से गोवंश का ह्रास एवं विनाश होने पर भी इस बुरी अवस्था में भी आज जो गोवंश बचा हुआ है उस का श्रेयः हिन्दुओं को ही है।

श्रीमती मीरा बहिन ने सरकार का लाखों रुपया रुड़की और ऋषिकेश के पशुलोक में गोसेवा के रचनात्मक काम के नाम से खर्च किया पर गोहत्या बंद न होने के कारण वह पूर्णतः असफल रही और

* ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन *

पाकिस्तान के हिन्दुओं को ईसाई बनाने की योजना

बम्बई से प्रकाशित होने वाला साप्ताहिक अंग्रेजी एक्जामिनर अपने ९ मार्च सन् ५५ के अंक में लिखता है कि १९५१ की जन संख्या के अनुसार पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान में कैथोलिक ईसाइयों की जन संख्या २ लाख २८ हजार है और कुल ईसाइयों की संख्या अनुमानतः ४ लाख होगी। अर्थात् पाकिस्तान में ईसाई जन संख्या ½ प्रतिशत है जबकि भारत में इनकी जन-संख्या २ प्रतिशत से भी अधिक है।

पाकिस्तान में इस समय २३७ विदेशी मिशनरी कार्य कर रहे हैं जबकि भारत में विदेशी मिशनरी-संख्या ५ हजार से अधिक है। फादर तोबियस बस्तियासेन लिखते हैं कि सिद्धान्तः मुसलमानों को भी हमें ईसाई बनाने का अधिकार है किन्तु व्यवहार में इस समय पाकिस्तान में हमारे मिशन का कार्य अल्प संख्यक वर्ग तक ही सीमित है। यह अल्प संख्यक वर्ग पाकिस्तान में हिन्दुओं से भिन्न और दूसरा नहीं है। पूर्वी तथा पश्चिमी पाकिस्तान में लगभग एक करोड़ हिन्दुओं की आबादी है। सिन्ध में निवास करने वाले हिन्दू प्रायः सब दलित वर्ग के हैं। सवर्ण हिन्दू सिंध से विभाजन के समय भारत चले आये हैं और अवर्ण हिन्दू मुसलमान और ईसाइयों के रहम पर टिके हुये हैं। इनमें से एक अच्छी संख्या में मुसलमान बन चुके हैं और हजारों पाकिस्तान के हरिजन हिन्दू ईसाई बनाये जा रहे हैं। विदेशी ईसाई मिशनरियों की यह योजना है कि सिंध के अवर्ण हिन्दुओं को जितना शीघ्र हो सके ईसाई बना लिया जावे। इन अवर्ण हिन्दुओं में हिन्दू धर्म का प्रचार करने वाले सम्प्रति कुछ तान्त्रिक साधू तथा पात्रा लोग हैं जो अपनी स्वार्थ भावना के कारण वहां टिके हुवे हैं।

भारत सरकार को पाकिस्तान में निवास करने वाले हिन्दुओं के स्वाभिमान, संस्कृति और धर्म की रक्षा के लिये प्रयत्नशील होना चाहिये। साथ ही आर्य समाज तथा अन्य हिन्दू धर्म प्रचारक संस्थाओं को अपने योग्य कार्यकर्ता सिंध व बंगाल में भेजने चाहियें जो वहां के हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं की रक्षा और धर्म में दृढ़ता उत्पन्न करने का कार्य कर सकें। यदि इस ओर तुरन्त ध्यान न दिया गया तो जैसे एशिया के विभिन्न देशों के हिन्दू भारतीय धर्म प्रचारकों, साधु व संन्यासियों के अभाव के कारण हिन्दू धर्म से पृथक हो गये और अहिंदू सम्प्रदायों की गोद में चले गये वैसे ही पाकिस्तान निवासी हिंदुओं की भी दशा होनी सम्भव है। सिंध के हिंदुओं में तो कार्य करने के लिए शीघ्र से शीघ्र प्रयत्न किया जाना चाहिये।

शिवदयालु मेरठ

यह दोनों फार्म उन्हें बन्द करने पड़े तथा जिन विदेशी नसल की गायों के अनुभव इस देश में बार बार असफल हो चुके हैं उन्हीं को फिर काशमीर में आकर पिष्टपेषण कर रही हैं। मीरा बहिन ने यह लेख लिखकर हिन्दू, मुसलमान और गाय तीनों के साथ अन्याय किया है।

मेरा मीरा बहिन से आठ साल का परिचय है। मैंने उनको गोसेवा के काम के आरम्भ और अन्त को देखा है। जिस प्रकार मीरा बहिन ने रूड़की, [illegible] और सरवाल के कार्यों को अपने विचारों में परिवर्तन करके आरम्भ और अन्त किया उसी प्रकार श्री मीरा बहिन सब तथ्यों को सन्मुख रखते हुए ठंडे हृदय से विचार करेंगी तो इस नतीजे पर पहुंचेगी कि जब तक गोहत्या सम्पूर्णतया बन्द नही होती तब तक न ही उपयोगी पशु कतल से बचेंगे और न नसल सुधार ही होगा न दूध घी का उत्पादन बढ़ेगा। उन्होंने गोरक्षा के पुनीत कार्य को साम्प्रदायिक बतलाने, गोहत्यारों को प्रोत्साहन देने तथा हिन्दू मुसलिम वैमनस्य जाग्रत करने के लिये जो दुष्कार्य किया उसके लिये प्रायश्चित करना चाहिये।

* हमारी शिक्षा संस्थाएं *

दयानन्द उपदेशक विद्यालय हैदराबाद

इसकी स्थापना हैदराबाद के प्रसिद्ध आर्य व्यापारी श्रीमान् सेठ कोत्तरू सीतय्या जी, श्री पंडित बंसीलाल व्यासजी के सत्प्रयत्नों से १९ अगस्त १९५४ को श्रावणीपर्व के समय पर हुई। इसका उद्घाटन दक्षिण भारत के सुप्रसिद्ध आर्य विद्वान् श्री पंडित गोपदेव जी दार्शनिक के करकमलों द्वारा हुआ था।

इस विद्यालय की स्थापना का उद्देश्य 'ब्रह्मा-मनु जैमिनि—दयानन्द पर्यन्त' ऋषि मुनियों के बताये ईश्वरोक्त वेदधर्म के प्रचारक तय्यार करना है जोकि ऋषि दयानन्द के बताये आप्त अर्थात् धार्मिक चरित्र-वान् विद्वान् परोपकारी सत्याचरणी हों।

विद्यालय के मन्त्री श्री वीरभद्र जी जो एक अत्यन्त उत्साही आर्य व्यापारी हैं, की देखरेख में विद्यालय अपने इस उद्देश्य की पूर्ति में निरन्तर अग्रसर हो रहा है।

विद्यालय का सौभाग्य है कि इसकी स्थापना के प्रारम्भ से ही सार्वदेशिक सभा के सुयोग्य अनुभवी आर्य प्रचारक श्री मदन मोहन विद्यासागर की सलाह और सहायता से पूरा पूरा लाभ उठाता रहा है। नियमावलि पाठ्यक्रम आदि के बनाने में उनका अधिक सहयोग रहा है। इस समय वे ही विद्यालय के आचार्य पद पर कार्य कर रहे हैं।

प्रारम्भ में विद्यालय तीन विद्यार्थियों से शुरु हुआ। इस समय विद्यालय में ७ विद्यार्थी हैं। २ आन्ध्र भाषाभाषी, ३ मराठी भाषाभाषी और २ वनचर भाषाभाषी। सभी विद्यार्थी स्वस्थ हैं। विद्यालय में अभी दस विद्यार्थी ही प्रविष्ट होंगे। शेष में से २ विद्यार्थी मौरीशस से आये विद्यार्थियों में से और एक निम्न वर्गों में लिये जाने का विचार है।

विद्यालय में प्रवेश से पूर्व विद्यार्थियों की शिक्षा दिक्षा का स्तर सामान्य था। इन ६ मासों के अल्प समय में ही उनकी शिक्षा दीक्षा में बहुत अधिक उन्नति हो गई है।

१. संस्कृत और संस्कृत व्याकरण का प्रारम्भिक अभ्यास।

२. हिंदी भाषा में लिखने और भाषण करने का अच्छा अभ्यास।

३. मातृभाषा में भाषण का अभ्यास हो गया है।

४. दयानन्द शतक (दीवान चन्द शर्मा)
आर्य सिद्धान्तदीप (मदनमोहन विद्यासागर)
धर्म सुधासार (गंगाप्रसाद उपाध्याय)

इन पुस्तकों के आधार पर आर्यसिद्धान्तों का प्रारम्भिक परिचय कराया गया है।

५, बाल सत्यार्थप्रकाश सम्पूर्ण
शिष्टाचार (हरिश्चन्द्र) सम्पूर्ण

६. सत्यार्थ प्रकाश (१म, २य, ३य समु०)
सरल ढंग से
व्यवहार भानु
पंचमहायज्ञविधि (संस्कृत भाग छोड़ कर)
गोकरुणानिधि
आर्याभिविनय (उत्तरार्ध) सरल पाठ

७. सन्ध्या, अग्निहोत्र का सार्थक ज्ञान
यज्ञ पद्धति का संक्षिप्त ज्ञान
स्वस्तिवाचन शान्तिप्रकरण का सरल पाठ

८. ऋषि जीवन का संक्षिप्त परिचय

९. इस विद्यालय को सफलता पूर्वक चलाने में जो सलाह और सहयोग प्रारम्भ से श्री पं० नरेन्द्र जी प्रधान आ. प्र. नि. सभा हैदराबाद का रहा है, और

जिस प्रकार वे इसकी उन्नति के लिए दिलचस्पी ले रहे हैं, विद्यालय उनका आभारी है।

अन्त में सार्वदेशिक सभा को इस विद्यालय को चलाने के लिये जो अपने उपदेशक को देकर हमारे उत्साह को बढ़ाया है, उसके लिये विद्यालय की प्रबंध समिति आभार मानती है। हमें आशा है कि आगे भी सार्वदेशिक सभा हमें सब प्रकार से ऐसे ही सहयोग व सलाह देती रहेगी।

मन्त्री

गुरुकुल सोनगढ़

तारीख ३१-३-५५ से लेकर ता. ५-४ ५५ तक गुरुकुल सोनगढ़ का रजत महोत्सव बड़े धूमधाम से मनाया गया। इसकी शोभा में अभिवृद्धि करने के लिये निम्न महानुभाव उपस्थित थे। दानवीर सेठ श्री नानजी भाई कालीदास महता, आर्य धर्म प्रेमी राजा साहब सेठ श्री नारायणलाल जी पित्ती, श्री मेरुभा गढवी लोक साहित्यकार, श्री पं० कल्याणचन्द्र जी महाराज सचालक श्री चारित्र्य विजय रत्नाश्रम, श्री दुलेराय काराणी लेखक 'दयानन्द बावनी, श्री पंडित वैद्यनाथ जी रिसर्च स्कालर आर्य कन्या विद्यालय पोर बन्दर, श्री पंडित आनन्दप्रिय जी, पोर बन्दर और बड़ौदा आर्य कन्या महा विद्यालय की ब्रह्मचारिणियां एवं स्नातिकाएं पुराणे छात्र। इनके अतिरिक्त ध्रांगध्रा जामनगर, भावनगर, पोरबन्दर, टंकारा, जेतपुर और जोरावरनगर के आर्य महानुभाव पधारे हुए थे।

तीन दिन तक श्री ब्रह्मपारायण महायज्ञ होता रहा जिसमें यजुर्वेद के समग्र मंत्रों से आहुतियां दी गई। यज्ञ के ब्रह्मा का स्थान श्री पंडित वैद्यनाथ जी ने अलंकृत किया था। यज्ञ दो समय प्रातः और मध्यान्होत्तर हुआ करता था। यजमान का स्थान दानवीर सेठ श्री नानजीभाई ने सपत्निक स्वीकारा था। यज्ञ के बाद दोनों समय श्री पंडित वैद्यनाथ जी की 'वेद-कथा हुआ करती थी जिसका प्रभाव जनता पर बहुत अच्छा रहा।

इस शुभ अवसर पर एक सुन्दर 'कला प्रदर्शन' भी भरा गया था। दोपहर को हमेशा बाली सम्मेलन, आर्य सम्मेलन तथा पुराणे छात्र सम्मेलन मनाये गये थे। शाम को हमेशा व्यायाम, हरिफाई और व्यायाम के भिन्न भिन्न प्रयोग बतलाये गये थे। रात्रि को हमेशा पोरबन्दर आर्य कन्या महाविद्यालय की बहिनों बड़ौदा आर्य कन्या महाविद्यालय की बहिनों और सोनगढ़ के ब्रह्मचारियों के नाट्य प्रयोग एवं मनोरंजन कार्य हुए थे।

सोनगढ़ के प्रजाजन और इर्दगिर्द के गांवों के प्रजाजनों ने दोनों पधारे हुए श्रेष्ठी महानुभावों को अभिनन्दन पत्र समर्पण किये थे।

गुरुकुल कांगड़ी

गुरुकुल कांगड़ी की वेदाऽलंकार और विद्याऽलंकार की उपाधियों को दिल्ली विश्व विद्यालय ने अपनी बी. ए. की उपाधि के समकक्ष स्वीकार कर लिया है। अतः इन उपाधियों से अलंकृत व्यक्ति दिल्ली विश्व विद्यालय की फिलासफी, संस्कृत-साहित्य और हिन्दी साहित्य की एम. ए. की परीक्षाओं में बैठ सकते हैं।

* विचार-विमर्श *

आर्य प्रचारकों की एक गम्भीर परेशानी

लगभग ६ वर्ष पूर्व आर्य समाज दीवान हाल देहली के प्रधान श्री मास्टर केदार नाथ जी ने मुझे शाहदरा में आर्य संन्यासी स्वामी महानन्द जी को देखने के लिये कहा ! मैं तुरन्त ही उनके साथ आर्य-समाज शाहदरा जो देहली से ४ मील है, पहुँचा। वहां स्वामी जी को अकेले ही एक कमरे में अतीव चिन्ताजनक तथा दयनीय दशा में देखकर मुझे अत्यन्त खेद हुआ। उनकी सेवा शुश्रूषा से मैं प्रभावित न हुआ। क्या जो भी आर्य संन्यास लेंगे उन सबका रुग्णावस्था में आर्य समाजों द्वारा इसी तरह देखभाल होगा ? इस प्रकार के अनेक प्रश्न मेरे हृदय में आने लगे। स्मरण रहे कि उपरोक्त सन्यासी महात्मा की जब यथायोग्य चिकित्सा व सेवा शाहदरा में न हुई तो उनके पुत्र उन्हें वहां से अपने घर ले गये जहां कुछ समय के बाद उनका देहान्त हो गया।

दूसरा इसी प्रकार का उदाहरण मैंने आज से लगभग चार वर्ष पूर्व देखा। जब श्री स्वामी केवलानन्द जी झटपट ही इस संसार से विदा होने को बाध्य हो गये। वह सीताराम बाजार आर्य समाज में उन दिनों कथा कर रहे थे। जान पड़ता है कि उन दिनों उन्हें कुछ सिर दर्द रहता था पर अधिकारियों के आग्रह से न कि स्वेच्छा से, वह कथा करते रहे। परिणाम यह हुआ कि एक दिन दिमाग में रक्त की एक नाली फट गई और वह अचेत हो गये। अस्पताल पहुँचाये गये पर बच न सके।

तीसरी घटना के लिए आप श्री महात्मा नारायण स्वामी जी के अन्तिम दिनों का स्मरण करें। उन्हें कैन्सर का रोग था। आर्य समाज की ओर से कोई विशेष प्रबन्ध न हो सकने के कारण वह अपने एक भक्त के घर रहने को बाध्य हुए थे और उन्हीं के यहां ही उनकी मृत्यु हुई थी।*

चौथी मृत्यु इसी प्रकार स्वर्गीय श्री स्वामी स्वसम्भ्रानन्द जी महाराज की अभी-अभी हुई है। बीमार पड़ने पर वह थोड़ा बहुत काम भी करते रहे। अन्तिम दिनों में स्वर्गीय लाला नारायणदत्त जी की कोठी पर रहे। उनकी देखभाल वहां काफी अच्छी थी।

इसी प्रकार वैदिक धर्म के कई विद्वान मेरे पास प्रायः आते रहते हैं। उनकी शिकायत रहती है कि १. उनका आर्यसमाज में मान नहीं, आर्यसमाज उन्हें ऊंची दृष्टि से नहीं देखता इत्यादि २. कि उनके स्वयं व परिवार के सगे सम्बन्धियों के अस्वस्थ होने पर उनकी चिकित्सा व विश्राम के लिये कोई विशेष प्रबन्ध व स्थान नहीं है। थोड़े से वेतन में से उन्हें बड़ी राशि अपने बच्चों की चिकित्सार्थ व्यय करनी पड़ती है। यह सत्य है कि आर्य समाज विशेष २ अवसरों पर धन से इन भाइयों की सहायता करता रहता है परन्तु वह पर्याप्त व यथार्थ सिद्ध नहीं हुई।

मैंने वैयक्तिक रूप से अपने कई आर्य भाइयों से परामर्श किया है और वह मुझ से सहमत हैं कि भारत में कम से कम एक विश्राम आश्रम तो इन साधु सन्यासी विद्वानजनों व उनके परिवार वालों के लिए अवश्य होना चाहिये जहां शारीरिक दुःख निवारण के लिये यह लोग स्थान प्राप्त कर सकें। वहां उनके खाने पीने; दवाई, वस्त्र सेवा इत्यादि के लिये सब समाज की ओर से ही प्रबन्ध हो ताकि उनकी आत्माएं सुख अनुभव कर, समाज की उन्नति के लिये सदा यत्नशील व प्रभु के सम्मुख प्रार्थी रहें।

आजकल कोई साधु सन्यासी कहीं पड़ा है व कोई किसी समाज मन्दिर में पदाधिकारियों की कटु बातें सुनकर भी अपने दुःख के दिन काट रहा है। मन्त्रीजी महाराज कहते हैं 'अब आपको इतने दिन हो गये अब अपना इन्तजाम करो' और वह बिचारे अपनी बेबसी

---

* श्री स्वामी जी महाराज की चिकित्सा तथा सेवा शुश्रूषा का लाहौर और देहली में समुचित प्रबन्ध होगया था परन्तु वे स्वयं बरेली श्री डा० श्याम स्वरूप जी के आग्रह पर गए थे वहां उनकी सेवा में किसी प्रकार की त्रुटि नहीं रही। —सम्पादक

* दक्षिण भारत प्रचार *

बहुत दिनों से मैसूर राज्य के सांस्कृतिक विभाग की ओर से अवसर प्राप्त कर वेदों के आधार पर प्राचीन वैदिक संस्कृति का परिचय सामान्य जनता को देने तथा वैदिक धर्म-प्रचार की आयोजना थी तथा तदर्थ प्रयत्न चल रहे थे। इस बार मैसूर राज्य परिषद् के अध्यक्ष श्री के० टी० भाष्यम् जी के अमूल्य सहयोग से यह काम पर्याप्त आगे बढ़ाया जा सका तथा आशा है इसमें शीघ्र ही सफलता मिलेगी। यदि सरकार की ओर से किए जाने वाले इस सांस्कृतिक प्रचार में आर्यसमाज को क्षेत्र मिल गया तो प्राचीन वैदिक संस्कृति के राज्य में प्रचार करने में बहुत सरलता हो जायगी।

इस मास मुख्यतः बल्लारी, पेनुकोण्डा, तथा मडकसिरा का दौरा किया।

बल्लारी—यह मैसूर राज्य में अभी-अभी आन्ध्र प्रान्त के पृथक्करण के पश्चात् मिलाया हुआ जिला है। सर्व प्रथम मैसूर राज्य के सभी जिलों के मुख्य कार्यालय जिन स्थानों पर हैं वहां समाज स्थापना करने की मेरी योजना है अतः यहां भी आना आवश्यक था तथा मुझे अपने कार्य में आशातीत सफलता मिली। लगभग आठ सदस्य मुझे ऐसे मिले जो आर्यसमाज से बहुत ही प्रेम रखने वाले हैं। उन्होंने पूर्ण सहयोग देने का आश्वासन दिया। आगरा-निवासी श्री शंकरनारायण जी जिनकी एक कन्या कन्या गुरुकुल सासनी तथा एक पुत्र गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन में पढ़ रहे हैं स्वभावतः आर्यसमाज के बड़े प्रेमी हैं तथा उनके ही प्रधान सहयोग से वहां कार्य प्रारम्भ करने का निश्चय है जिसके लिए उन्होंने स्वीकृति भी दी है। उस जिले का भाग्य अभी अनिश्चित होने तथा आन्ध्र तथा कर्नाटक प्रेमियों के राजनीति में ही अधिक संलग्न तथा इन कार्यों के प्रति अभी उदासीन होने से आर्यसमाज की विधिवत् स्थापना तो न हो सकी परन्तु आशा है निकट भविष्य में ही शीघ्र ही उसकी स्थिति के निश्चय होते ही हम आर्यसमाज की स्थापना कर देंगे। इसी प्रकार शिमोगो तथा तुमकुर जिलों में भी इस वर्ष अवश्य ही समाजों की स्थापना कर देनी है।

पेनुकोण्डा—यह आन्ध्र प्रान्त में अनन्तपुर जिले का एक ताल्लुका है। बल्लारी से बंगलौर आते हुए मार्ग में यहां उतर कर प्रचार करने की योजना थी। तदनुसार यहां संस्कृत भाषा में तीन व्याख्यान हुए तथा शंका समाधान के अतिरिक्त उपनिषद् पाठ तथा अन्य सत्संग का कार्यक्रम भी रखा गया। इस स्थान के श्री प्रह्लाद राव जी एडवोकेट बड़े प्रसिद्ध

का वर्णन करते व अपने भाग्य को कोसते हुए प्रभु से क्या कहते होंगे, यह आप ही विचारिये। विद्वान पण्डित प्रचारक तो कई बार यह कहते सुने जाते हैं कि उन्होंने आर्यसमाज के प्रचारक बनकर महा भूल की और अब वे अपने बच्चों को कदापि इस काम में न डालेंगे।

अधिक न कहता हुआ मैं तो यही सुझाव रखना चाहता हूं कि 'आर्य अनाथालय पाटौदी हाउस देहली' में शीघ्रातिशीघ्र हम एक विश्राम आश्रम व चिकित्सालय खोल दें। वहां पर बड़े २ डाक्टरों व वैद्यों की निःशुल्क सेवायें सदा प्राप्त हो सका करेंगी और किसी विद्वान्, प्रचारकादि को यह चिन्ता न रहेगी कि रोगी होने की दशा में उसका व उसके परिवार का क्या बनेगा? इस प्रकार उनकी चिन्ताओं का एक महान कारण ही समूल नष्ट हो जायेगा।

—डाक्टर नन्द लाल बजाज
कटिया महल निकट जामा-
मस्जिद देहली ६

वकील हैं तथा आर्यसमाज की स्थापना व वैदिक धर्म प्रचार के प्रयत्न में उन्होंने पूर्ण सहयोग देने का आश्वासन दिया।

मैसूर में विद्वत्समिति की योजना

मैसूर नगर में संस्कृत पाठशाला में वेद विषय पर जब से संस्कृत में भाषण हुआ तभी से उस पाठशाला के विद्यार्थियों तथा गुरुओं की इच्छा थी कि कोई समिति स्थायी रूप में बनाई जाय जिसमें इन विषयों पर विचार-विमर्श हुआ करे तथा कोई क्रियात्मक-निर्णय आदि किया जा सके। तदनुसार पाठशाला के आचार्य श्री आराध्य जी से वार्तालाप किया तथा "वेदार्थानुशीलनार्थ" पाठशाला के मीमांसा विभाग, व्याकरण विभाग, निरुक्त विभाग तथा वेद विभाग के प्राध्यापकों, श्री आचार्य जी तथा मुझे मिलाकर एक "विद्वत्समिति" की स्थापना की योजना की गई। आशा है इसकी नियमित स्थापना ग्रीष्मावकाश की समाप्ति के पश्चात् ही हो जायगी। यदि यह योजना पूर्ण हुई तो इससे दो तीन उद्देश्य पूर्ण होंगे।

१. दक्षिण भारतीय ब्राह्मणों के मध्य में प्रविष्ट होकर वैदिक धर्म प्रचार का काम होगा जो सफल होने पर आर्यसमाज के प्रचार में बड़ा सहायक सिद्ध होगा।

२. सभी पाश्चात्य तथा पौराणिक विद्वानों के भाष्यों की आलोचना करके श्रीमद्दयानन्द भाष्य के आधार पर वेदार्थ का निर्णय करके उसको प्रकाशन का रूप दिया जावेगा।

३. इस समिति के सफल सिद्ध होने पर प्रयत्न करके मैसूर विश्वविद्यालय के अनुसन्धान विभाग के रूप में परिवर्तित किया जा सकेगा।

अभी इसकी नियमावली आदि बन रही है तथा आचार्य जी ने इसमें पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया है। यदि कोई आर्य विद्वान् निस्वार्थ रूप में यहां आकर इस महान् कार्य में हाथ बँटाने की कृपा करेंगे तो यह काम अति शीघ्र तथा मैत्रत्वपूर्ण हो सकेगा?

आचार्य मेधाव्रत जी का आगमन

मद्रास, रामेश्वरम्, मदुरा तथा उटकमण्डल आदि होते हुए श्री मेधाव्रत जी आचार्य कविरत्न (दयानन्द-दिग्विजय संस्कृत महाकाव्य के अमर लेखक) यहां पधारे हुए हैं। उनके दो तीन भाषण नगर में कराए गए बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा। यहाँ २ जून तक रहने का उनका संकल्प है। तब तक संस्कृत पाठशाला तथा अन्य बहुत से स्थानों पर भी भाषणादि रखने की योजना है। यदि इसी प्रकार आर्य विद्वान् सहयोग देते रहेंगे तो बड़ी सफलता मिलेगी इसमें कोई सन्देह नहीं। मैं श्री आचार्य जी का बहुत कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने प्रार्थना स्वीकार कर अपने अमूल्य भाषणों से दक्षिण भारत को कृतार्थ किया।

प्रतिनिधि प्रकाशन समिति

सत्यार्थप्रकाश का मुद्रण पञ्चालार्य प्रेस में सुचारु रूपेण चल रहा है। अभी तक ३५ फार्म छप चुके हैं। केवल २० फार्म के लगभग और छपने हैं जो आशा है एक या डेढ़ मास के अन्दर छप जायेंगे। जिन महानुभावों ने वादे का रुपया अभी तक नहीं भेजा उनसे प्रार्थना है कि कृपया शीघ्र ही भिजवाकर कृतार्थ करें।

सत्यार्थप्रकाश के मुद्रित फार्म समुल्लास की समाप्ति पर देहली, मद्रास, हुबली, गुलबर्गा तथा बम्बई फोर्ट समाज को भेजे जाते हैं जिनको न मिलें वे सूचना देकर कृतार्थ करें तथा सूचना प्राप्त करने की अभिलाषा वाले सज्जन इन समाजों से अथवा समिति से पूछ सकते हैं।

हा! कपूर जी

श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के आकस्मिक स्वर्गवास से पहुँची हुई चोट अभी पुरी भी नहीं कि हम लोगों को एक बहुत बड़े धक्के का सामना करना पड़ा है। अभी ४ मई की रात्रि को दो बजे दक्षिण भारत में एकमात्र उत्साही लगनशील आर्य कार्यकर्ता, उदार, दानी, कर्मठ तथा समाजसेवी रंग-

* वैदिक धर्म प्रसार *

आर्य समाज स्थापना

१५-४-५५ को रामानुज गंज (मध्यभारत) में आर्य समाज की स्थापना हुई। इसी अवसर पर श्री जोरावर सिंह जी, उनकी पत्नी श्रीमती प्रभावती देवी जी तथा श्री आर्यबन्धु जी के प्रचार का अच्छा प्रभाव पड़ा। महिला सम्मेलन भी हुआ जिसमें हुए भाषणों से प्रभावित होकर स्थानीय कन्या विद्यालय की ईसाई अध्यापिका ने वैदिक धर्म में दीक्षित होने की जिज्ञासा प्रकट की परन्तु उन्हें पूर्णतया सोच विचार का अवसर दिया गया।

शिक्षण शिविर

१ जून से १० जून तक गढ़वा (बिहार) आर्य समाज में वैदिक धर्म प्रचारकों का एक शिक्षण शिविर खोला जा रहा है। प्रार्थना पत्र आर्य समाज गढ़वा के पते पर पहुँच जाने चाहिएँ। शिक्षा निःशुल्क दी जायगी और शिक्षणार्थियों के रहने और भोजन का प्रबन्ध भी निःशुल्क होगा। शिक्षा कार्य आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार के प्रधान मंत्री आचार्य रामानन्द जी शास्त्री तथा अन्य २ उपदेशकों के द्वारा होगा। शिक्षा प्राप्त उपदेशकों को ईसाई बहुल क्षेत्र में आर्य समाज के प्रचारक लगाए जाने की सम्भावना है। शिक्षा सम्बन्धी योग्यता कम से कम मैट्रिक होनी चाहिए।

कन्या विद्यालय की स्थापना

आर्य समाज मंडी धनौरा (मुरादाबाद) के भूतपूर्व प्रधान श्रीयुत म० बिन्दालाल जी आर्य के ५०००) के दान तथा दूकानों के मासिक किराए के दान से उनकी धर्म पत्नी श्रीमती जावित्री देवी के नाम पर समाज के अधीन 'आर्य कन्या विद्यालय' की स्थापना हुई।

हिवरखेड़ (आकोला) में प्रचार

आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश के उपदेशक मंडल के द्वारा ३ दिन तक हिवरखेड़ रूप राव में ईसाई प्रचार विरोधी सफल प्रचार हुआ हिवरखेड़ के आर्य दानवीर सदस्य श्री जयदेव जी किशन जी की ओर से आर्य प्रति० सभा मध्यप्रदेश के ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन के लिए १७५) लाउड स्पीकर क्रय करने के लिए दान में दिया गया।

लौर निवासी धनपति श्री हरनामदास जी कपूर का स्वर्गवास हो गया। इनको दक्षिण भारतीय प्रतिनिधि सभा के प्रधान बनाने का विचार चल रहा था तथा इन्हीं के अमूल्य सहयोग से प्रतिनिधि प्रकाशन समिति का (जिसने अभी तक काफी पुस्तकों का प्रकाशन किया है व कर रही है) पौधा लगा तथा वे संयोजक थे। सायं को बड़े हंस कर बातें करते रहे तथा सबसे मिले जुले। अकस्मात् उनके हृदय पर लकवे का तीसरा और अन्तिम आक्रमण हो गया। प्रत्यक्षदर्शियों का कथन है कि उन्हें घर अथवा संपत्ति आदि की कोई चिन्ता नहीं थी। अपनी पुत्री से गायत्री मन्त्र सुनते रहे और उन्हीं को सुनते सुनते आंखें मूंद लीं। इतना साहस, उत्साह, धैर्य, उदारता श्रद्धा, स्नेह से सम्पन्न व्यक्ति सम्भवतः इस वर्ग में मिलना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। इनका वियोग दक्षिण भारत के लिये एक असहनीय धक्का है और वह भी तब, जब कि उनके नेतृत्व एवं सफल हाथों की छाया में बढ़कर दक्षिण भारत में समाज संगठन करने की हमारी योजना थी। परमात्मा बल दे कि शोक सन्तप्त आर्य परिवार इस धक्के को सहने में समर्थ हो सके। परमात्मा दिवङ्गत आत्मा को सद्गति प्रदान करे यही एकमात्र प्रार्थना है।

सत्यपाल शर्मा स्नातक
दक्षिण-भारत
आर्यसमाज आर्गेनाईजर
सार्वदेशिक सभा, देहली

आर्य समाज बैंकॉक

आर्य समाज बैंकोक (स्याम) का १५ वां वार्षिकोत्सव गत माह में बड़ी धूमधाम से मनाया गया। ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन को सफल बनाने के लिए क्रियात्मक सहायता देने का निश्चय किया गया।

आर्य समाज सिंगापुर

२५-३-५५ को स्थापना दिवस बड़े समारोह से मनाया गया। चैनिस महिला को शुद्ध करके उसको परिवार सहित आर्य धर्म में लिया गया। यहां समाज का भवन अपना बना लिया गया है।

दयानन्द वेद प्रचार मंडल खेड़ा खुर्द (देहली) राज्य

सम्वत् २०१२ से २०१४ विक्रमी तक नासिक और उज्जैन में दो कुम्भ महामेले होने वाले हैं अतः मंडल ने ५० हजार ट्रैक्ट छपवाकर वा खरीद कर बांटने का निश्चय किया है। मंडल अब तक ३६ हजार ट्रैक्ट और पुस्तक बांट चुका है। विरजानन्द वैदिक संस्थान खेड़ा खुर्द में भवन निर्माण तथा नल लगवाने के लिए ८०५) मंडल की ओर से श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ जी को भेंट किया गया।

शुद्धि

८-५-५५ को छोटा सिरपुर तहसील खंडवा जिला निमाड़ में आर्य समाज खंडवा के तत्वावधान में २७ ईसाई परिवारों की जिनकी संख्या १०४ थी शुद्धि की गई।

आर्य समाज भोलेपुर (फतहगढ़) के तत्वावधान में विशाल जन समूह की उपस्थिति में सन् १९३१ में ईसाई हुए संस्कृतज्ञ प्रोफेसर श्री जयदत्त शर्मा का शुद्धि संस्कारमय उनकी पत्नी, सुरेन्द्र, सन्तोष, सुशीला तथा शान्ति ४ पुत्र और पुत्रियों के साथ श्री राघवेन्द्र शास्त्री व आत्माराम जी पुरोहित द्वारा सम्पन्न हुआ। सार्वदेशिक सभा की ओर से भेजे हुए श्री पं० धर्मसिंह जी का प्रभावशाली व्याख्यान हुआ।

आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के प्रयत्नों के फल स्वरूप जनवरी व फरवरी ५५ में निम्न प्रकार शुद्धियां हुईं :—

१ गुलबर्गा	१ मुसलमान
२ सोमाजी गुड्डा	१ ,,
३ सिंगार (महबूबनगर)	५ ईसाई
४ वरन्ना पल्ली ,,	६४ ,,
५ सुलतान बाजार हैदराबाद	२६ यवन ईसाई

निःशुल्क औषधालय

आर्य वीरदल की ओर से डालीगंज लखनऊ में एक निःशुल्क औषधालय १२ मई से प्रारम्भ किया गया है।

बुंदेल खंड ईसाई निरोध सम्मेलन

१६ से १८ मई तक झांसी में 'बुंदेल खंडीय ईसाई निरोध सम्मेलन' बड़े समारोह से मनाया गया। सम्मेलन का उद्घाटन आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान श्री बाबू पूर्णचन्द जी ऐडवोकेट द्वारा हुआ। प्रथम दिन की कार्यवाही श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती दूसरे दिन की श्रीयुत बा० पूर्णचन्द्र जी तथा तीसरे दिन की सार्व० सभा के मन्त्री श्रीयुत बा० कालीचरण जी आर्य के सभापतित्व में सम्पन्न हुई। अन्य नेताओं का विशाल जलूस भी निकाला गया। श्रीयुत पं० रामचन्द्र जी देहलवी श्री ठा० अमरसिंह जी तथा पं० शान्तिप्रकाश जी भी पधारे हुए थे।

घिराय गोरक्षा सम्मेलन

गत १२-५-५५ को श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती की अध्यक्षता में हिसार जिलान्तर्गत ग्राम घिराय में एक विराट गोरक्षा सम्मेलन हुआ जिसमें आस पास के ग्राम के लगभग २००० आर्य नर नारियों ने भाग लिया। श्री स्वामी जी ग्राम के निकटवर्ती रेलवे स्टेशन से जो ६ मील के लगभग था पैदल चल कर गांव में गए। सम्मेलन के संयोजकों ने नोटों से बनी माला स्वामी जी के स्वागत में अर्पण की जिसकी राशि सार्वदेशिक सभा को दे दी गई।

स्वाध्याय योग्य उत्तम साहित्य

स्व० श्री महात्मा नारायण स्वामी जी कृत कतिपय ग्रन्थ

(१) कर्त्तव्य-दर्पण

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज प्रणीत ४०० पृष्ठ, सचित्र और सजिल्द मूल्य प्रचारार्थ केवल ।॥) पच्चीस लेने पर ॥≥) अत्यंत उपयोगी पुस्तक। अभी अभी नवीन संस्करण प्रकाशित किया है। भारी संख्या में मंगा कर प्रचार करें।

(२) योग रहस्य

इस पुस्तक में अनेक रहस्यों को उद्घाटित करते हुए उन विधियों को भी बतलाया गया है जिनसे कोई आदमी जिसे रुचि हो—योग के अभ्यासों को कर सकता है।

पंचम संस्करण मूल्य १)

(३) विद्यार्थी जीवन रहस्य

विद्यार्थियों के लिए, उनके मार्ग का सच्चा पथप्रदर्शक उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर शृङ्खलाबद्ध प्रकाश डालने वाले उपदेश

पंचम संस्करण मूल्य ॥=)

(४) आत्म कथा

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी क स्वलिखित जीवन चरित्र मूल्य २।)

(५) उपनिषद् रहस्य

ईश, (नवीन संस्करण) केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, बृहदारण्यकोपनिषद् की बहुत सुन्दर खोज-पूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्याएं। मूल्य क्रमशः—

।=), ।।), ।।), ।=); ≡), ।) ।, १) ४),

(६) प्राणायाम विधि

इस लघु पुस्तक मे ऐसी मोटी और स्थूल बातें अंकित हैं जिनके समझने और जिनके अनुकूल कार्य करने से प्राणायाम की विधियों से अनभिज्ञ किसी भी पुरुष को कठिनता न हो और उन में इन क्रियाओं के करने की रुचि भी पैदा हो जाए।

चतुर्थ संस्करण मूल्य ≡)

मिलने का पता—**सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा**
श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली ६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली ७ में छपकर
श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक पब्लिशर द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ६ से प्रकाशित

ऋग्वेद

यजुर्वेद

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

वर्ष ३०

मूल्य स्वदेश ५)

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ।=)

अंक ५

श्रावण २०१२

जौलाई १९५५

स्व० राजाधिराज श्री उमेदसिंह जी शाहपुरा राज

सम्पादक—

सभा मन्त्री

सहायक सम्पादक—

श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषयानुक्रमणिका

❀ ओ३म् ❀

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष ३० } जौलाई १९५५, श्रावण २०१२ वि०, दयानन्दाब्द १३१ { अङ्क ५

वैदिक प्रार्थना

ऋजुनीती नो वरुणो मित्रो नयतु विद्वान् ।
अर्यमा देवैः सजोषाः ॥ ऋ० १।६।१७।१॥

व्याख्या—हे महाराजाधिराज परमेश्वर! आप हमको "ऋजु०" सरल (शुद्ध) कोमलत्वादिगुणविशिष्ट चक्रवर्ती राजाओं की नीति को "नयतु" कृपादृष्टि से प्राप्त करो, आप "वरुणः" सर्वोत्कृष्ट होने से वरुण हो, सो हमको वरराज्य, वरविद्या वरनीति देओ तथा सबके मित्र शत्रुतारहित हो हमको भी आप मित्रगुणयुक्त न्यायाधीश कीजिये तथा आप सर्वोत्कृष्ट विद्वान् हो हमको भी सत्यविद्या से युक्त सुनीति दे के साम्राज्याधिकारी सद्य कीजिये तथा आप "अर्यमा" (यमराज) प्रियाप्रिय को छोड़के न्याय में वर्त्तमान हो सब संसार के जीवों के पाप और पुण्यों की यथायोग्य व्यवस्था करने वाले हो सो हमको भी आप तादृश करें जिससे "देवैः सजोषाः" आपकी कृपा से विद्वानों वा दिव्यगुणों के साथ उत्तमप्रीति-युक्त आप में रमण और आपका सेवन करने वाले हों, हे कृपासिन्धो भगवान्! हम पर सहायता करो जिससे सुनीतियुक्त हो के हमारा स्वराज्य अत्यन्त बढ़े ॥

(आर्याभिविनय से)

सम्पादकीय

अस्पृश्यता निवारण के सम्बन्ध में आर्यसमाज का दृष्टिकोण

अस्पृश्यता निवारण के सम्बन्ध में आर्यसमाज का जो दृष्टिकोण है वह दो मूल सिद्धान्तों के आधार पर बना हुआ है। पहला सिद्धान्त यह है कि मनुष्यमात्र परमात्मा की सन्तान है इस कारण जन्म से सब समान हैं। [शृण्वन्तो विश्वे अमृतस्य पुत्राः] इस श्रुति में सब मनुष्यों को अमृतके पुत्र कहा है। जब सब मनुष्य ईश्वर की दृष्टि में समान रूप से प्रिय हों तो उनमें जन्म से ही ऊंच नीच का भेद मान लेना न्याय संगत नहीं।

इस विषय में जो दूसरा सिद्धान्त आर्यसमाज का मार्ग प्रदर्शक है वह यह है कि वर्णों का विभाग गुण कर्मानुसार होना चाहिये जन्मानुसार नहीं यही वैदिक सिद्धान्त है जिसकी पुष्टि हमारे धर्म के प्राचीन शास्त्रों में की गई है। इतिहास और शास्त्र दोनों इस मत को पुष्ट करते हैं कि मनुष्य को समाज में वही पद मिलना चाहिये जिसके योग्य उसके गुण और कर्म हों। आर्यजाति में जितने बड़े बड़े सामाजिक दोष उत्पन्न हुए उनका मूल कारण यह था कि हमने कर्मों को गौण स्थान देकर जन्म को मुख्य स्थान दे दिया जिसका परिणाम यह हुआ कि ऊंची कहलाने वाली जातियों में कर्मों द्वारा ऊंचे बनने की प्रेरणा न रही और नीच कहलाने वाली जातियों के सिर "जन्म से जाति" इस भारी पत्थर के नीचे आकर दब गये। उनकी उन्नति रुक गई। इस परिस्थिति के जो बुरे परिणाम हुये उनका सामूहिक परिणाम था राजनीतिक दासता। जो सामाजिक दासता का ही रूपान्तर था।

आर्य समाज ने प्रारम्भ से ही अस्पृश्यता निवारण के कार्य को अपने हाथ में लिया। उसने अस्पृश्य कहलाने वाली जातियों को समानाधिकार देने के लिये जिस पद्धति से काम लिया वह बहुत ही सरल थी। उसने उन लोगों के माथे पर से अछूतपन का लेबल उतार कर फैंक दिया और अन्य वर्णों की भांति गायत्री और यज्ञोपवीत का अधिकारी बना कर उनके माथों पर आर्य का लेबल लगा दिया। इस सरल पद्धति से स्पृश्या स्पृश्य का भेद नष्ट होने लगा। अछूत कहलाने वाले लोग भी यह अनुभव करने लगे कि वह यदि शुद्ध जीवन व्यतीत करें और शास्त्रों का अध्ययन करके मन को परिष्कृत कर लें तो वह समाज में ऊंचे सम्मान के योग्य पद को प्राप्त कर सकते हैं।

यह सन्तोष पूर्वक कहा जा सकता है कि आर्य समाज को इस कार्य में पर्याप्त सफलता मिली। बहुत सी न्यूनतायें रहीं परन्तु वह किसी सिद्धान्त अथवा कार्य प्रणाली में कमी के कारण नहीं अपितु सदियों से जमे हुये छुआछूत के कुसंस्कारों के कारण थी। गत ५० वर्षों में इन कुसंस्कारों का जोर काफी घट गया है। एक वर्ग को दूसरे वर्ग से दूर करने वाली बहुत सी दीवारें टूट चुकी हैं। यदि आर्य समाज अपने मन्तव्यों के अनुसार मनुष्यमात्र को समस्त मानवीय अधिकार समान रूप से देने के शुभ कार्य को जारी रक्खे तो सफलता में कोई सन्देह नहीं, क्यों कि उसका मन्तव्य सत्य पर आश्रित है और समय भी उसके साथ है।

गत सौ वर्षों में अस्पृश्यता के निवारण के लिये अन्य भी कई योजनायें बनाई गईं। सनातन धर्म के प्रगतिशील नेताओं ने रूढ़ि और उन्नति के बीच में एक नया रास्ता निकालने के लिये अछूतों को [ओ३म् नमः शिवाय] आदि मन्त्रों की दीक्षा देने की विधि निकाली। वह विधि सफल नहीं हुई क्यों कि अब सदियों के दबाये हुए दलित वर्ग मनुष्यता के समान अधिकार चाहते हैं। केवल अधिकारों के किसी पुतले से सन्तुष्ट नहीं हो सकते।

अस्पृश्यता को नष्ट करने की एक पद्धति हरिजन आन्दोलन के नाम से प्रचलित हुई। यह पद्धति राज-

नीति के कंधों पर चढ़कर आई। इस कारण जहां वह शीघ्र ही देश भर में फैल गई और शक्तिसम्पन्न भी हो गई। परन्तु यह कहना ठीक न होगा कि इसने अस्पृश्यता की समस्या को हल कर दिया है। वह समस्या अभी समस्या ही बनी हुई है, भेद इतना ही हुआ है कि जहां अब तक वह केवल धार्मिक और सामाजिक समस्या थी वहां अब उसमें एक राजनीतिक उलझन भी पैदा हो गई है।

हरिजन आन्दोलन का सबसे बड़ा दोष तो यह है कि इसने एक पिछड़े हुये वर्ग को जाति का अभिन्न हिस्सा न बनाकर एक अलग वर्ग और दल रूप में स्थिर कर दिया पहले वह सवर्णों से जितने दूर थे अब हरिजनों नाम के दायरे में आकर वह अन्य वर्गों से और भी अधिक दूर हो गये हैं। 'हरिजन' इस नाम ने उनकी भिन्नता को बढ़ाया है घटाया नहीं। हमारी हरिजन आन्दोलन से सबसे बड़ी शिकायत यह है कि उसने वैधानिक दृष्टि से ऐसा पांचवा वर्ण उत्पन्न कर दिया है जो आसानी से पिघलने वाला नहीं है।

भारत के वर्तमान संविधान में अनुसूचित जातियों को विशेष राजनैतिक सुविधायें दी गई हैं, किसी विशिष्ट श्रेणी को विशेष राजनैतिक अधिकार देने से राष्ट्र में भेद की भावना बढ़ती है घटती नहीं। अंग्रेजी सरकार ने और उनके प्रत्युत्तर में कांग्रेस ने मुसलमानों को विशेष राजनीतिक अधिकार दिये तो इसका परिणाम पाकिस्तान के रूप में प्रकट हुआ। अंग्रेजी सरकार ने ही सिक्खों को एक अलग राजनैतिक श्रेणी मान कर विशेष राजनीतिक अधिकारों का अधिकारी बनाया। आज मास्टर तारासिंह के नेतृत्व में सिक्ख प्रान्त का जो आन्दोलन खड़ा किया गया है वह उसी भेदनीति का परिणाम है। आप किसी वर्ग को विशेष राजनैतिक अधिकार देकर जाति का अभिन्न हिस्सा नहीं बना सकते आज बीसों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र कहलाने वाली उपजातियां अनुसूचित जातियों में अपना नाम लिखाकर अस्पृश्य कहलाने की धुन में हैं। इसका कारण स्पष्ट है। हमारे संविधान के निर्माताओं ने विशेष अधिकार देकर एक नई समस्या खड़ी करदी है जिसको हल करने के लिये भविष्य में देश के नेताओं को न जाने कितनी मुसीबतें उठानी पड़ेगीं।

इस विवेचन से स्पष्ट है कि अस्पृश्यता के कलंक का निवारण करने के लिये सबसे अधिक उपयुक्त और सरलशैली वही है जिसका प्रतिपादन महर्षि दयानन्द ने किया और जिसे आर्य समाज मानता आया है। यह सत्य है कि संविधान की विशेषाधिकार देने की नीति के कारण अस्पृश्य कहलाने वाले भाइयों में समानाधिकार प्राप्त करने की भावना मंद पड़ गई है क्यों कि इन्हें अधिक अधिकार मिलने की आशायें दिलादी गई हैं। परन्तु हमारा विश्वास है कि यह भावना चिरस्थायी नहीं रहेगी। दस वर्ष पूरे हो जाने पर दलित जातियों का प्रश्न फिर एक बार उग्रता से राष्ट्र के सामने आयेगा और तब लोग यह अनुभव करगे कि अस्पृश्यता निवारण की वही शैली सरल होने के साथ साथ स्थिररूप से उपयोगी भी थी जिसे आर्यसमाज ने अपनाया था।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

आर्यसमाज की व्याख्यान वेदी की सुरक्षा

आर्य समाज जहाँ एक ओर आर्य जनों के सत्संग और सम्मिलित प्रार्थना का स्थान है वहाँ साथ ही वह वैदिक धर्म के प्रचार का साधन भी है। आर्य समाज से सम्बन्ध रखने वाले सब उपकरणों का वही उपयोग उचित समझा जा सकता है जो इन दो उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किया जाय। आर्यसमाज में जो दैनिक या साप्ताहिक सत्संग किये जाते हैं उनके प्रार्थना, यज्ञ और सदुपदेश आदि अंग हैं। प्रचार के लिये आर्यसमाज मन्दिर में तथा उसके बाहर भी व्याख्यान वेदी तैयार की जाती है जिस पर से व्याख्यानों द्वारा धर्मोपदेश के साथ २ वैदिक सिद्धान्तों की व्याख्या और प्रचार का कार्य सम्पन्न होता है। आर्यसमाज ने समूह रूप से जिन समाज तथा शिक्षा सुधार सम्बन्धी जिन कार्यों का बीड़ा उठाया हुआ है हमारी व्याख्यान वेदी उनके समर्थन

और प्रचार में भी काम में आती है। यह सब आर्य समाज की व्याख्यान वेदी के उचित उपयोग हैं।

यदि हम आर्य समाज को अपना धर्म स्थान मानते हैं और अपनी व्याख्यान वेदी को वैदिक धर्म और आर्य समाज के कार्यों के प्रचार का साधन बनाना चाहते हैं तो हमें उनकी सुरक्षा के लिये कुछ सीमायें बांधनी पड़ेंगी और कुछ नियम बनाने पड़ेंगे। मान लीजिये कि हमने समाज के साप्ताहिक सत्संग में नियत कार्यक्रम के अतिरिक्त प्रचलित राजनीति अथवा चुनाव आदि की चर्चा को अवसर दे दिया तो जहां हमने उसके शान्त और पवित्र वातावरण को दूषित कर दिया वहां विरोधियों को यह कहने का अवसर भी दे दिया कि समाज मन्दिर धर्मस्थान नहीं हैं अपितु यह सोसायटियों के दफ्तर हैं। इसी प्रकार यदि आर्य समाज की व्याख्यान वेदी पर से ऐसे विषयों पर व्याख्यान या वादविवाद होने दिये जाँय जिनका आर्य समाज के निश्चित कार्यक्रम से कोई सम्बन्ध नहीं है तो इसमें सन्देह नहीं कि हमारी व्याख्यान वेदी का गौरव सर्वथा नष्ट हो जायगा। यदि हवा का हरेक झोंका आर्यसमाज की व्याख्यान वेदी के रंग को पलट दे, यदि राष्ट्रीयता का जोर हो तो चरखे पर व्याख्यान होने लगें और यदि देश में साम्प्रदायिकता प्रबल हो जाय तो रक्त से सने हुए संगीत होने लगें तो संसार की दृष्टि में आर्य समाज या वैदिक धर्म का क्या सम्मान रह जायगा ?

आर्य समाज मंदिर की विशुद्धता की रक्षा आर्य समाज के अधिकारियों के हाथ में है और उसकी व्याख्यान वेदी के सम्मान की रक्षा प्रचारकों, उपदेशकों और वक्ताओं के हाथ में है। सब आर्य जनों का यह यत्न होना चाहिये कि आर्य समाज मंदिर और व्याख्यान वेदी के गौरव की रक्षा में सदा सावधान और यत्नवान रहें। इसके लिये जिन बातों का ध्यान रखना चाहिये उनका निर्देश सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रकाशित आर्य समाज की योजना में किया गया है। उन्हें और अधिक सम्पुष्ट करने के लिये निम्नलिखित निर्देश आर्य समाज के प्रचारकों के पास भेजे गये हैं।

प्रचारकों के लिये निर्देश

१—प्रचारक गण वेदी की पवित्रता का ध्यान रखें अर्थात् महर्षि दयानन्द सरस्वती जी द्वारा प्रतिपादित विषयों के अतिरिक्त अथवा विरुद्ध आर्य समाज की वेदी से कभी कोई बात अपने व्याख्यानों में न कहें।

२—उपदेशकों व प्रचारकों को अपने प्रचार में इस बात पर बल देना चाहिए कि प्रत्येक आर्य समाजी साप्ताहिक सत्संगों में परिवार सहित सम्मिलित हो और जन्म गत जात पात को समाप्त करने के लिये आर्य समाज की वेदी से तीव्र आन्दोलन करें।

३—गोरक्षा आन्दोलन को तीव्र गति देने तथा ईसाइयों के अराष्ट्रीय प्रचार को रोकने के लिये पूर्ण प्रयत्न किया जाये।

४—शुद्धि आन्दोलन भी कभी आंखों से ओझल न होने पाये। अपने कार्यक्षेत्र में इसका विशेष ध्यान रखा जाये।

५—चरित्र निर्माण सम्बन्धी आन्दोलन तीव्रता से किया जाये जिससे देश में भ्रष्टाचार दूर हो।

६—अपने भाषणों में विशेष रूपेण (शिक्षा संस्थाओं) विद्यार्थियों में अनुशासन की भावना उत्पन्न करने पर बल दिया जाये।

७—सहशिक्षा (बालक बालिकाओं की साथ २ शिक्षा प्राप्त करना) महर्षि दयानन्द द्वारा प्रदर्शित वैदिक मर्यादा की विरोधी है अतः सह-शिक्षा आर्य संस्थाओं में प्रचलित न की जाये और आर्य पुरुषों से अनुरोध किया जाये कि वे सह-शिक्षा को रोकें और आर्य पुरुषों (संस्था संचालकों) से साग्रह अनुरोध किया जाय कि वे अपनी संस्थाओं में आर्यत्व के भावों को उत्पन्न करने का यत्न करें और अपनी २ संस्थाओं को वास्तविक आर्य संस्था का रूप दें। यह भी प्रयत्न करें कि समस्त शिक्षा संचालकों के हृदयों में संस्थाओं में एकरूपता अपनाने का भाव उत्पन्न हो।

८—उपदेशकों को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये कि ग्रामों में वैदिक धर्म प्रचार अवश्य हो और तेजी से हो।

— इन्द्र विद्यावाचस्पति

सम्पादकीय टिप्पणियां

एक जिज्ञासा का समाधान

बिहार के एक सज्जन लिखते हैं :-

"जब कि वेद में आर्य और दस्यु शब्द पाये जाते हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि वर्णाश्रम की व्यवस्था स्मृति कालीन है परन्तु यह कृत्रिम और अहितकर है।

वर्तमान आर्य्यों (हिन्दुओं) की पूरी संख्या अगर ४० करोड़ की भी मानी जाय तो करीब ८ करोड़ लोग क्षत्रिय हो सकते हैं जिनमें ४ करोड़ करीब स्त्रियां होंगी फिर तीन अन्य आश्रम में रहने के कारण करीब क्या संख्या १ करोड़ रहेंगे। गृहस्थ क्षत्रिय जिन्हें वास्तव में लड़ने का अधिकार और कार्य होगा। इनमें रोगी आदि निकालकर और सैन्य संगठन के अन्य २ भागों पर नियुक्ति के पश्चात् करीब २०-२२ लाख क्षत्रिय फील्ड सैनिक हो सकेंगे। क्या रूस इत्यादि देशों के वर्तमान करोड़ों सैन्य डिवीजन तथा ऐसे ही अन्य शतप्रतिशत जन सैन्य देश के सामने ये टिक सकते हैं?

अगर नहीं तो यह धर्म व्यवस्था निस्सन्देह त्रुटि पूर्ण, अहितकर और त्याज्य है। यों तो आश्रम तथा वर्ण के पक्षपाती अन्य धर्मावलम्बी नहीं हैं परन्तु बौद्धिक क्रांति करने वाला आर्य समाज भी इसी का पक्षपाती और प्रचारक है। धर्म के नाम पर इस व्यवस्था का स्थायित्व कहां तक हितकर है?

निस्सन्देह

"निस्सन्देह इस समय वैदिक वर्ण व्यवस्था के सांचे में संसार के किसी भी समाज का संगठन ढला हुआ प्रतीत नहीं होता। भारतवर्ष में यह जन्मगत जातपात के रूप में परिणत हुई है जो वैदिक वर्णाश्रम धर्म की भावना के विरुद्ध है परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वर्णाश्रम व्यवस्था स्वयं त्रुटिपूर्ण है। त्रुटि तो उसके विशुद्ध रूप के विकृत हो जाने और उसके दुरुपयोग से उत्पन्न हुई है।

वर्ण व्यवस्था वेद प्रतिपादित है इसके प्रमाण के लिये निम्नलिखित वेद मन्त्रों को देखें।

ब्राह्मणोस्य मुखमासिद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद् वैश्यः, पद्भ्यांशूद्रो अजायत।
ऋ० १०।९०।१० मनु० ३१।१०

ब्रह्मणे ब्राह्मणं, क्षत्राय राजन्यं,
मरुद्भ्यो वैश्यं तपसे शूद्रम्। यजु० ३०।५

इन तथा अन्य अनेक मन्त्रों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र ये शब्द स्पष्ट आये हैं और उनके कर्तव्यों का उत्तमता से निर्देश किया गया है।

वेद में मनुष्यों का "आर्य और दस्यु" का विभाजन मानवीय विकास का द्योतक है और ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य व शूद्र का विभाजन कार्य विभाजन की दृष्टि से है। इन चारों वर्णों के व्यक्तियों को अपनी योग्यता और शक्ति के अनुसार कार्यों का अनुष्ठान करते हुए भी आर्य बनना वा बने रहना परमावश्यक होता है और यही उनके जीवन के विकास का पैमाना होता है।

वैदिक वर्ण व्यवस्था की पुनः स्थापना ही आज के अशान्त संसार की महौषधि है। यह बात देश विदेश के विद्वानों और समाज शास्त्रियों के लेखों भाषणों और ग्रंथों से प्रमाणित है।

वैदिक वर्ण व्यवस्था किसी एक देश के निवासियों के लिये अभिप्रेत नहीं है यह तो विश्व के प्राणियों के लिये अभिप्रेत है।

इसलिये इसका प्रभाव केवल भारतवर्ष तक सीमित रखना और उनके उदाहरण से इसकी निस्सारता सिद्ध करना ठीक नहीं है।

आजकल की सेना के सिपाहियों के चुनाव वा भरती में यह ख्याल नहीं रखा जाता कि सैनिक जन्मगत क्षत्रिय वंश का ही होना चाहिए। इस भेद भाव के बिना सब वर्ण के लोग भरती होते और सेना में लिये जाते हैं। क्षत्रियों की वीरता की परीक्षा भी अब भूतकाल की वस्तु बन गई। आज का युद्ध शारीरिक पुरुषार्थ व शक्ति का युद्ध नहीं रह गया है। अब तो एटम बम, उदजन बम, आदि बमों, गैस

बारूदों, कीटाणुओं आदि साइन्स के आविष्कारों का युद्ध है। जय और पराजय का निर्णय सैनिक की संख्या वा वीरता पर नहीं अपितु अधिक से अधिक मारक और घातक युद्धोपकरण का उनके, संग्रह पर निर्भर है। ऐसी अवस्था में कौन क्षत्रिय है कौन नहीं है। क्षत्रिय कम हैं वा अधिक हैं, इस प्रकार की जिज्ञासाओं का कोई महत्व नहीं है।

वर्णव्यवस्था के सिद्धान्तानुसार क्षत्रियों की भारत में संख्या के विषय में जो मनघड़न्त कल्पना की गई है उसमें कुछ सार नहीं। विशेष आपत्ति के समय तो ब्राह्मण, वैश्य और शूद्र भी शास्त्रानुसार शस्त्र ग्रहण कर सकते हैं। ऐसी विशेष अवस्था में भी कहा है कि विशं विशं युद्धाय संशिशाधि।

अर्थात् प्रत्येक प्रजाजन को युद्ध के लिये तय्यार करो। पर वेद व्यवस्था विशेष आपत्ति के अवसरों के लिये सामान्यतः वर्णाश्रम व्यवस्थानुसार कार्य करने से सबका कल्याण हो सकता है:—

एक अंग्रेज की दृष्टि में आर्य समाज का भविष्य

प्रो० जे. कैम्पबैल ओमन कृत Indian like religious and social नामक पुस्तक में जो १८८२ ई० में छपी थी आर्यसमाज पर एक अध्याय लिखा गया है। आर्यसमाज के भविष्य के सम्बन्ध में विचार करते हुए लेखक महोदय लिखते हैं:—

भारत के पुनरुज्जीवन में आर्यसमाज का सम्भवतः मुख्य भाग होगा। बुद्धि संगत सिद्धान्तों के प्रति आर्यसमाज की विशेष रुचि होने के कारण उसका बौद्धिक भविष्य उज्ज्वल देख पड़ता है। मूर्ति पूजा का प्रकाश्य और अप्रकाश्य रूप में परित्याग और एकेश्वर वाद की स्वीकृति ये दोनों ही भारत की धार्मिक सम्मति पर उत्तम प्रभाव डाले बिना न रहेंगी। यद्यपि समाज सुधार की दिशा में अभी तक आर्यसमाज को उल्लेखनीय सफलता प्राप्त नहीं हुई है तो भी यदि यह समाज अपने सिद्धान्तों के प्रति सधा रहा तो जब उत्साह पूर्ण कार्य का अनुकूल अवसर उपलब्ध होगा तब निश्चय ही ठीक मार्ग में अपना प्रभाव डालने की इससे आशा की जाती है। पिछले कुछ समय से आर्यसमाज की राजनैतिक आन्दोलन के प्रति भी रुचि बढ़ती देख पड़ता है और इस तथ्य से स्पष्ट है कि इस समाज का अस्तित्व जितना धार्मिक भावनाओं से अनुप्राणित है उतना ही राष्ट्रीय भावनाओं से ओत प्रोत है।

पंजाब सरकार ध्यान दें

पिछले दिनों ईद के अवसर पर तथा उसके आस पास गुड़गांव जिले की नूह और फीरोजपुर झिरका तहसीलों के अन्तर्गत साकरस आदि ग्रामों में प्रकाश्य रूप से गोहत्या हुई। ट्रकों में लदकर हड्डियाँ और चमड़ा बाहर गया। गत फरवरी मास में मेवों की पंचायत में नगीना स्थान पर गोहत्या बन्द कर देने का निश्चय हुआ था। इस निश्चय के कुछ दिन पर्यन्त गोहत्या बन्द भी रही। पंजाब की राज्य सरकार ने गोवध निषेध विषयक अपने कानून का कठोरता के साथ परिपालन करके गोवध को सर्वथा बन्द कर देने का आश्वासन दिया था। उपर्युक्त घटना से पंचायत का निश्चय और राज्य सरकार का आश्वासन दोनों ही हवा में उड़ा दिये गए प्रतीत होते है। पंचायत का निश्चय होने के समय जहां उसका स्वागत हुआ था वहां यह आशंका भी प्रकट की गई थी कि कहीं बाद में यह रद्द या निष्क्रिय न हो जाय। इसीलिए पंजाब सरकार को विधान सभा द्वारा गोवध निषेध के लिए एक प्रभावशाली कानून बनाने की प्रेरणा की गई थी। वह आशंका ठीक सिद्ध हुई। पंजाब राज्य सरकार को उचित है कि वह बने क्षेत्र में प्रकाश्य या अप्रकाश्य रूप में होने वाली गोहत्या को कठोर हाथों से बन्द करदे और कानून की त्रुटि या राज्याधिकारियों की उपेक्षा दोनों में जो कोई इन घटनाओं के लिए जिम्मेवार हो उसे दूर करने और सम्बद्ध राज्याधिकारियों के विरुद्ध कठोर कार्यवाही करने में आगा पीछा न देखे।

अणु तथा उद्जन बम का भय

इन दिनों अणु और उद्जन बमों का भय बढ़ता जा रहा है। जब से हिरोशिमा और नागासाकी के अभागे नगरों पर अणु बम का प्रलयकर प्रहार हुआ है तभी से मानवीय आत्मा व्यथित और व्याकुल है। राख में मिले हुए इन नगरों के भग्नावशेषों में मानव की बर्बरता का जो चित्र खिंचा है वह जन्तुओं की बर्बरता को भी लजाने वाला है। उन भग्नावशेषों में आज भी मानवता सिर धुनती हुई यह पूछती प्रतीत होती है कि *"क्या यही वीरता है और क्या विज्ञान का यही सदुपयोग है?"*

कायरता की भर्त्सना उन वीरों के गले तो सहज ही उतर सकती है जो उच्च उद्देश्यों के लिए मर्य्यादा के भीतर लड़ते और जिनकी मर्य्यादा में नागरिक प्रजा पर आक्रमण अपराध माना जाता है। इस भर्त्सना का चोरों और डाकुओं पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता विशेषतः उन पर जो शक्ति संवर्द्धन, शोषण, दोहन और विशिष्ट स्वार्थों की रक्षा और संवृद्धि आदि निकृष्ट उद्देश्यों की पूर्त्यर्थ अपने मार्ग के कण्टकों को दूर करने में व्यवस्थित हिंसा का आश्रय लेते और शान्ति रक्षा के नाम पर उसे युद्ध का नाम देकर उसका औचित्य प्रतिपादित करते हैं।

युद्ध और प्रेम में सब कुछ उचित होता है। यह मान्यता उन्हें प्रत्येक प्रकार के दुष्कृत्यों की खुली छुट्टी दे देती है। धोखा देने से, विश्वास घात करने से, निहत्थों पर शस्त्र प्रहार करने से, नागरिक प्रजा में भय का संचार करने से, उसे मौत के घाट उतारने आदि जिस उपाय से शत्रु का पतन संभव हो सकता हो वे उसका आश्रय लेने में आगा पीछा नहीं सोचते। हीरोशिमा और नागासाकी के दुष्कृत्य पर अब तक युद्ध के किसी देवता ने पश्चात्ताप प्रकट किया हो, यह हमें ज्ञात नहीं है।

'क्या विज्ञान का यही सदुपयोग है?' इस भर्त्सना से संभवतः अनेक विज्ञान वेत्ताओं के हृदय को ठेस लगी हो। विशेषतः उनके हृदय को जो अणु बम के आविष्कार के लिए प्रत्यक्षतः उत्तर दाता थे। उनमें से एक वैज्ञानिक के पश्चात्ताप का समाचार तो प्रकाश में आया है। इनका नाम है डा. गफ। वे शिकागो टैम्पिल के पादरी हैं। इनकी गणना अणु बम के प्रमुख तम आविष्कारकों में है। एक व्याख्यान माला के लिए गए थे। पहले व्याख्यान के पश्चात उस विश्वविद्यालय के विज्ञान-विभाग के अध्यक्ष ने डाक्टर महोदय को अपने घर पर आमंत्रित किया। वे दोनों एक बन्द कमरे में बैठे अणुबम की चर्चा छिड़ी। डाक्टर महोदय ने अपने पर हुई अणुबम की प्रतिक्रिया का निम्न प्रकार पश्चात्तापपूर्ण वर्णन किया:—

मैं उन छः या यों कहिए प्रमुखतम वैज्ञानिकों में से था जिन्होंने अणुबम का आविष्कार किया है। हमने इसके परीक्षण में २ वर्ष व्यतीत किये थे। यह कार्य इतना गुप्त रखा गया था कि स्वय मेरी पत्नी तक को इसका पता न लग पाया। जिस दिन हिरोशिया पर बम फेंका गया था उसके दूसरे दिन मैंने हिरोशिमा के घोर विध्वंस का विवरण एक समाचार पत्र में पढ़ा। पढ़ते ही मैंने वह समाचार पत्र अपनी पत्नी को देते हुए कहा *'लो मेरे दो वर्ष के कार्य का विवरण पढ़लो'* मेरी पत्नी ने वह दुःखद कहानी पढ़ी। मेरी ओर देखा और देखते २ ही उसका मुंह पीला पड़ गया। उस दिन से अब तक उसे रात को पूरी नींद नहीं आई और न मुझको ही आई है।

इतना कह चुकने पर डाक्टर महोदय एक दम चुप हो गए और इधर उधर हाथ फेंकते हुए चिल्ला उठे *'परमात्मा' हमने पृथ्वी पर यह क्या बरपा कर दिया है।"*

इस आत्म बोध को निराशा के घोर अंधकार में प्रकाश की एक धुंधली रेखा ही कह सकते हैं। केवल इतने भर से रक्त पात और महा विनाश के कार्य में प्रयुक्त विज्ञान का काला आंचल धवल हो जायगा वा उसका दुरुपयोग एकदम बंद हो जायगा सम्प्रति यह आशा करना दुराशा मात्र है। उद्जन बम का अणु

बम से भी अधिक घातक और बीभत्स बनाए जाने की चेष्टा की गई है। कहा जा रहा है कि उद्जन बम के विस्फोट से पृथ्वी पर कोई चेतन प्राणी जीवित न रह सकेगा।

उद्जन बमों जैसे घातक अस्त्रों की होड़ में युद्ध के देवताओं और विज्ञान वेत्ताओं को व्यस्त देखकर और कोरिया के युद्ध को तृतीय महासमर की भूमिका समझकर सर्व साधारण प्रजा को अणु तथा उद्जन बमों का खतरा टलता प्रतीत नहीं होता। उन्हें प्रत्यक्ष देख पड़ रहा है कि हीरोशिमा और नागासाकी के अणुबम के विस्फोट से युद्ध के देवताओं और विज्ञान वेत्ताओं के मन में कोई सुन्दर परिवर्तन नहीं हुआ है और असंख्य नगरों के भाग्य में हीरोशिमा और नागासाकी का दुर्भाग्य लिखा है।

अभी कुछ दिन हुए क्रिश्चियन साइंस मानीटर नामक पत्र में अमेरिका के १५ साधारण व्यक्तियों के हस्ताक्षरों से युक्त एक पत्र छपा है जिसमें सर्व-साधारण प्रजा का भय और उद्जन बमों के प्रति घोर विरोध भली भांति प्रति बिम्बित होता है। वे लोग कहते हैं:—

"हम महत्व पूर्ण व्यक्ति नहीं हैं। हम सड़कों के कोनों पर निवास करने वाले श्रमजीवी हैं। और कुछ धन एकत्र करने में लगे हैं जिससे उपनगरों में रहने के लिए मकान क्रय कर सकें। परन्तु हम ही वे व्यक्ति हैं जो उद्जन बम जैसे घातक अस्त्रों का शिकार बनेंगे। हमें रेडियो और समाचार पत्रों द्वारा यह बताया गया कि अमेरिका को उद्जन बम प्राप्त हो गया है। एक ही उद्जन बम से सैकड़ों वर्ग मीलों के भीतर के प्रत्येक चेतन प्राणी का संहार हो जायगा। कतिपय उद्जन बमों से समूचे देश का अस्तित्व मिट जायगा। इस पत्र पर हस्ताक्षर करने वाले हम लोग बहुत साधारण व्यक्ति हैं। हमारी गणना उच्च कोटि के व्यक्तियों में नहीं है। हमारा नाम किसी ने नहीं सुना है। परन्तु हम जिन्दा रहना चाहते हैं। हम चाहते हैं हमारे बच्चे और बच्चों के बच्चे भी जीवित रहें। क्या अमेरिका के अन्य साधारण जन जीवित रहना नहीं चाहते? वे अवश्य जीवित रहना चाहते हैं। हम उनसे सहायता की याचना करते हैं।"

इस भय को यह कहकर दूर करने की चेष्टा की जा रही है कि अणु तथा उद्जन बमों की शक्ति पर अन्तराष्ट्रीय नियन्त्रण रखने का यत्न हो रहा है। आश्वासन दिया जा रहा है जिस प्रकार गत महायुद्धों में विषैली गैसों, हैजे, चेचक और ताऊन के कीटाणुओं का प्रयोग वर्जित हो गया था उसी भांति तृतीय महासमर में अणु और उद्जन बमों का प्रयोग न होगा। परन्तु अमेरिका और रूस की पारिस्परिक अविश्वास की भावना को देखते हुए इस प्रकार के आश्वासनों से बहुत सन्तोष नहीं मिलता। कहा जाता है कि इस प्रकार के घातक अस्त्र स्वतः अपने पर प्रतिबन्ध लगा लेते हैं जब वे आक्रान्ता और प्रतिरक्षक दोनों के लिये घातक सिद्ध होते हैं। १९१४ और १९३९ के महायुद्धों में यह सत्य प्रतिष्ठित हो चुका है। पं० ज्वाहरलाल नेहरु से एक सम्वाद दाता द्वारा इस प्रकार का प्रश्न किया गया तो उन्होंने उत्तर दिया कि यदि संसार में शैतान का ही हाथ ऊपर रहना है तब तो उद्जन बम संसार को नष्ट कर देगा और यदि मानवता का हाथ ऊपर रहना है तो उद्-जन बम अपनी मौत स्वयं मर जायगा। इसलिए मानवता के नाम पर इस प्रकार के घातक अस्त्रों पर प्रतिबन्ध लगाए जाने और प्रत्येक राष्ट्र से इस बात को मनवाने का यत्न होना ही चाहिए। यह समस्या का आंशिक हल है। पूरा हल तो युद्धों की पुनरावृत्ति को रोकना है। जिस उपाय से भी हो युद्धों की पुनरा-वृत्ति को रोकना चाहिए। तभी अणु और उद्जन बमों का भय नष्ट हो सकता है।

—रघुनाथप्रसाद पाठक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

का

सैंतालीसवां वार्षिक वृत्तान्त

(१-३-५४ से २८-२-५५ तक)

निर्माण व्यवस्था

इस वर्ष इस सभा में १५ प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभायें और सभा की नियमावली की धारा सं० ६ के अनुसार सभा में सीधे प्रतिनिधित्व प्राप्त करने वाली ८ आर्य समाजें सम्मिलित रहीं। वर्ष के अन्त में यह सभा प्रदेशीय प्रतिनिधि सभाओं के ६२, आर्यसमाज के ६, भूतपूर्व प्रधान ४, आजीवन सदस्य २०, प्रतिष्ठित ५ कुल ६० सदस्यों का समुदाय थी।

प्रदेशीय सभायें

१. आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश
२. ” ” पंजाब
३. ” ” बंगाल आसाम
४. ” ” बिहार
५. ” ” राजस्थान
६. ” ” मध्यभारत
७. ” ” मध्यप्रदेश
८. ” ” हैदराबाद
९. ” ” सिन्ध
१०. ” ” बम्बई
११. ” ” पूर्वीय अफ्रीका
१२. ” ” नैटाल
१३. ” ” मौरीशस
१४. ” ” फिजी
१५ ” ” सुरीनाम (डच गयाना)

सम्बद्ध आर्य समाजें

१. आर्यसमाज दीवान हाल, देहली
२. ” सदर, देहली
३. ” मेरठ सिटी
४. ” केसरगंज, अजमेर
५. ” अलवर
६. ” मंगलौर (द० भा०)
७. ” गाजियाबाद
८. ” फतेहपुर (उ० प्र०)

७-३-५४ की अन्तरंग के निश्चयानुसार श्रीयुत पं० शालिग्राम जी आजीवन सदस्य स्वीकृत हुये और—१-५-५४ की अन्तरंग के निश्चयानुसार आर्यसमाज सदर बाजार देहली सभा में प्रविष्ट हुआ।

कार्य विवरणान्तर्गत वर्ष में सभा के निम्नलिखित अधिकारी और अन्तरंग सदस्य रहे:—

सभा के अधिकारी

१. प्रधान श्रीयुत राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री
२. उपप्रधान " पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
३ उपप्रधान " स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज
४. उपप्रधान " डा० डी० राम जी पटना
५. मन्त्री " कविराज हरनामदास जी
६. उपमन्त्री " ला० रामगोपाल जी शालवाले
७. कोषाध्यक्ष " ला० बालमुकन्द जी आहूजा
८. पुस्तकाध्यक्ष श्रीयुत नरदेव जी स्नातक एम. पी.

अन्तरंग सदस्य

१. श्रीयुत पं० मिहिर चन्द्र जी धीमान्
२. श्रीयुत शिवशंकर जी गौड़
३. श्रीयुत बा० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट
४. " बा० कालीचरण जी आर्य
५. " पं० वासुदेव जी शर्मा
६. " पं० विजयशंकर जी
८. " पं० नरेन्द्र जी
९. " ला० चरणदास जी पुरी एडवोकेट
१०. " पं० भीमसेन जी विद्यालंकार
११. " बा० मुसद्दीलाल जी
१२. " प्रो० रामसिंह जी एम० ए०
१३. " स्वामी अभेदानन्द जी सरस्वती
१४. " पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार
१५. श्रीमती लक्ष्मीदेवी जी
१६ श्रीयुत चौधरी जयदेवसिंह जी
१७. श्रीयुत पं० यशःपाल जी सिद्धान्तालंकार

२८-११-५४ की अन्तरंग बैठक में सभा के प्रधान श्रीयुत राजगुरु पंडित धुरेन्द्र जी शास्त्री का ७-११-५४ को संन्यास लेने के कारण त्यागपत्र प्रस्तुत होकर उनकी सेवाओं के लिये धन्यवाद के प्रस्ताव सहित स्वीकृत हुआ और स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज से (जो संन्यास लेने पर उनका नाम रखा गया) प्रार्थना की गई और अनुरोध किया गया कि वे पूर्ववत् प्रधान का कार्य करते रहें। इस पर इन्होंने प्रधान पद का उत्तरदायित्व लेने की अनिच्छा प्रकट की। फलतः अन्तरंग सभा ने प्रधान जी की भावना का आदर करते हुए श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति से कार्यकर्त्ता प्रधान का कार्य करते रहने की प्रार्थना की तब से श्रीयुत पं० इन्द्र जी इस दायित्व को वहन करते आ रहे हैं।

इस वर्ष के मुख्य-मुख्य कार्य

आर्य महासम्मेलन हैदराबाद

७-३-५४ की अन्तरंग सभा ने आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद का निमन्त्रण स्वीकार करके हैदराबाद नगर में सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन का आठवां अधिवेशन २८ से ३० मई तक किये जाने की घोषणा की।

श्रीयुत घनश्यामसिंह जी गुप्त की अध्यक्षता में सम्मेलन बड़ी सफलता और समारोह के साथ सम्पन्न हुआ जिसके लिये आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के अधिकारियों और स्वागत समिति ने कोई प्रयत्न उठा न रखा था। केन्द्रीय धारा सभा के उपाध्यक्ष श्रीयुत अनन्त शयनम् द्वारा सम्मेलन का उद्घाटन हुआ।

हैदराबाद तथा उसके निकटवर्ती स्थानों में आर्यसमाज की लोकप्रियता की वृद्धि तथा प्रचार कार्य के प्रसार की दृष्टि से सम्मेलन का आयोजन स्वागत योग्य रहा। महासम्मेलन के साथ कई और भी सम्मेलन हुये जिनका प्रधानत्व योग्य विद्वानों, नेताओं और विदुषी देवियों के द्वारा हुआ।

महासम्मेलन के निश्चयों को २७-६-५४ की अन्तरंग सभा ने सम्पुष्ट करके उनके सम्बन्ध में आवश्यक कार्य किये जाने का निश्चय किया। इन निश्चयों में दो मुख्यतम् निश्चय गोरक्षा और ईसाई प्रचार निरोध आंदोलनों से सम्बद्ध थे जो सार्वदेशिक सभा द्वारा संचालित हो रहे हैं।

गोरक्षा आन्दोलन के संचालन का सर्वाधिकार श्री पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के सुपुर्द हुआ

और ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन का कार्य सार्वदेशिक सभा की साधारण सभा द्वारा नियुक्त समिति के अधीन रहा जिसके संयोजक श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति निर्वाचित हुये थे।

सम्मेलन के अवसर पर सभा के प्रधान श्रीयुत राजगुरु पं० धुरेन्द्रजी शास्त्री ने गोरक्षा आन्दोलन तथा ईसाई प्रचार निरोध कार्य के संचालनार्थ ५ लाख की अपील की जिसमें से ३१०३।-) सार्वदेशिक सभा में प्राप्त हुआ।

गोरक्षा आन्दोलन

श्रीयुत स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज ने आर्य महासम्मेलन के निश्चयानुसार अपनी समिति नियुक्त की और २७ ६-५४ की अन्तरंग के निश्चयानुसार २-५-५४ की अन्तरंग द्वारा बनी हुई समिति भंग हुई। श्री स्वामी जी महाराज ने इस समिति का संयोजक श्रीयुत लाला रामगोपाल जी को ही नियत किया जो इस आंदोलन को सभा की ओर से चलाते रहे थे और सार्वदेशिक सभा द्वारा नियुक्त समिति के संयोजक थे। श्रीयुत स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ के अधीन प्रचार कार्य किया गया।

राज्यों द्वारा कहां-कहां गोवध निरोध के लिए कानून बने हुए हैं सर्वप्रथम यह जानकारी प्राप्त करने का कार्य हाथ में लिया गया। इस कार्य की प्रगति का विवरण इस प्रकार है :—

१. पंजाब—डिप्टी कमिश्नर की आज्ञा से लाइसेंस प्राप्त स्थानों के अतिरिक्त किसी शहर या स्थान पर गोवध नहीं हो सकता और किसी स्थान का लाइसेंस दिया नहीं जाता। राज्य की वर्तमान नीति के अनुसार गुड़गांव जिले में भी गोवध बन्द हो चुका है।

२ पेप्सु—इस राज्य में गोवध नहीं होता।

३ उत्तरप्रदेश—इस राज्य में श्रीयुत सीताराम जी की अध्यक्षता में बनी गोसम्वर्धन जांच कमेटी की रिपोर्ट के अनुसार सम्पूर्णतः गोवध निषेध का कानून बनने वाला है। कानून का प्रारूप विधान सभा में प्रस्तुत हो चुका है।

४ हिमाचल प्रदेश—इस राज्य में गोवध नहीं होता इसलिए कानून बनाने की आवश्यकता नहीं हुई।

५ बिहार—पशु रक्षा और सुधार बिल प्रवर समिति को भेजा गया वहां से प्राप्त होकर विधान सभा में :विचारार्थ प्रस्तुत हो चुका है। इस बिल में गोवध निषेध की तो व्यवस्था रखी गई है परन्तु बैलों के वध का निषेध नहीं किया गया है जिसके लिये इस सभा द्वारा प्रयत्न हो रहा है।

६ बंगाल—पश्चिमी बंगाल एनीमल स्लाटर कन्ट्रोल एक्ट १६५० के द्वारा उपयोगी पशुओं का वध निषिद्ध है।

७ मध्यप्रदेश—सेन्ट्रल प्राविन्स एण्ड बरार एनीमल प्रीजर्वेशन एक्ट १६४६ के द्वारा गोवध निषिद्ध है परन्तु बैल के वध पर प्रतिबन्ध नहीं है।

८ मध्यभारत—कृषि उपयोगी संरक्षण विधान संवत् २०६ के द्वारा गोवध निषिद्ध है।

६ हैदराबाद—१६५० के एक्ट के द्वारा ३ वर्ष से ऊपर आयु के अनुपयोगी पशुओं का डाक्टरी अनुमति पर वध होता हैं।

१० बम्बई—एल० ए० बिल नं० ७२ सन् १६५४ दुधारू, प्रजनन योग्य और कृषि उपयोगी पशुवध निषेध बिल धारा सभा में प्रस्तुत होने वाला है।

११ ट्रावनकोर—गोवध निषेध कानून बनाने का प्रश्न राज्य सरकार के विचाराधीन हैं।

१२ आसाम—गोवध निषेध कानून पास हो चुका है परन्तु अभी राज्य में लागू नहीं हुआ है।

१३ राजस्थान—राजस्थान प्रीजर्वेशन आफ सरटेन एनीमल (कतिपय पशु रक्षा एक्ट)

एक्ट नं० ४, १९५० द्वारा गोवध पूर्ण रूप से निषिद्ध है।

१४ देहली—राज्य सरकार ने गैर सरकारी तौर पर प्रस्तुत इस बिल को ठुकराया हुआ है। पुनः यह बिल पेश किया गया है।

१५ अजमेर—अजमेर राज्य सरकार ने अजमेर एनीमल प्रीजर्वेशन एक्ट १९५४ पास करके गाय बैल तथा बछड़े बछड़ी का वध निषिद्ध कर दिया है।

जिला बोर्डों, नगर पालिकाओं और टाउन-एरिया कमेटियों से पत्र व्यवहार

उत्तर प्रदेश के जिला बोर्डों, नगर पालिकाओं और टाउन एरिया कमेटियों को गोवध निषेध विषयक निश्चयों वा आज्ञाओं की प्रतिलिपि भेजने के लिए लिखा गया। २३ जिला बोर्डों, ३२ नगर पालिकाओं तथा ३९ टाउन एरिया कमेटियों के उत्तर प्राप्त हुए जिनके अनुसार प्रायः सभी स्थानों पर वैधानिक गोवध बन्द हो चुका है।

सर्वाधिकारी श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी का उत्तर प्रदेश का भ्रमण

४ सितम्बर से २२ सितम्बर तक श्री स्वामी जी महाराज ने उत्तर प्रदेश का भ्रमण किया। इस भ्रमण में आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के मन्त्री श्रीयुत बा० कालीचरण जी आर्य, श्री ओमप्रकाश जी पुरुषार्थी प्रधान सेनापति आर्य वीर दल तथा पं० रुद्रमित्र जी शास्त्री स्वामी जी महाराज के साथ रहे। इस भ्रमण का उद्देश्य आंदोलन के सम्बन्ध में जनता का सही मार्ग प्रदर्शन करना और उत्तर प्रदेश में गोवध कानून के निर्माणार्थ लोकमत जाग्रत करना था। इस उद्देश्य की दृष्टि से यह भ्रमण सफल रहा। श्री स्वामी जी इस भ्रमण में गाजियाबाद, मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, देहरादून, मुरादाबाद, रामपुर, बरेली, बदायूं, फरुखाबाद, कानपुर, फतहपुर, प्रयाग, फैजाबाद, बनारस गोरखपुर तथा अयोध्या गये। स्थान २ पर उन्हें थैलियां भेंट की गई। थैलियों में २३४) की राशि प्राप्त हुई।

सत्याग्रह और गोरक्षा आन्दोलन

गोरक्षा आंदोलन की भावी रूप रेखा पर विचार करने के लिए गोरक्षा समिति की एक विशेष बैठक २६-११ ५४ को देहली में की गई जिसमें हैदराबाद सम्मेलन के गोरक्षा आंदोलन विषयक निश्चय सं० ३ को सम्पुष्ट करके श्री स्वामी जी महाराज द्वारा हुए कार्य पर सन्तोष प्रकट किया गया और सम्पूर्ण भारत में राज्यों द्वारा कानून गोवध निषिद्ध कराने के निमित्त आंदोलन को उग्र करने की प्रेरणा की गई।

सत्याग्रह के सम्बन्ध में समिति ने अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए घोषणा की कि समिति इष्ट की सिद्धि के लिये आवश्यक होने पर सत्याग्रह को अवैध नहीं मानती।

गोरक्षा समिति के इस निश्चय को अन्तरङ्ग सभा ने अपनी २८ ११ ५४ की बैठक में सम्पुष्ट किया

श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज का त्यागपत्र और नई समिति की नियुक्ति

दुर्भाग्य से श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज को अपनी लम्बी बीमारी के कारण गोरक्षा आन्दोलन के सर्वाधिकारी पद से त्याग पत्र देने के लिए विवश होना पड़ा जो १३-२-५५ की अन्तरङ्ग सभा द्वारा खेद पूर्वक स्वीकृत हुआ। इसके साथ ही उनके द्वारा निर्मित गोरक्षा समिति समाप्त हो गई और कार्य सञ्चालनार्थ नई उपसमिति की नियुक्ति हुई जिसके प्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज और संयोजक श्रीयुत लाला रामगोपालजी निर्वाचित हुए। इसी बीच में उत्तर प्रदेश के राज्यपाल ने राज्य की विधान सभा में घोषणा की कि उन की राज्य सरकार ने सर सीताराम कमेटी की रिपोर्ट के निर्देशानुसार राज्य में सम्पूर्णतः गोवध निषेध का कानून बनाने का निश्चय किया है इस घोषणा का सर्वत्र यथेष्ट स्वागत हुआ।

देहली, बिहार, हैदराबाद और पंजाब राज्यों के साथ शिष्ट मंडलों की भेंट विषयक पत्र व्यवहार

पंजाब—

पंजाब के गुड़गांवा जिले की नूह और फीरोजपुर झिरका तहसीलों के कतिपय ग्रामों में मेव मुसलमानों के द्वारा प्रतिदिन बड़ी संख्या में गोवध होता था। पंजाब सरकार से इस कांड को रोकने के लिये प्रभावशाली कानून बनाने की मांग की गई और इस सम्बन्ध में सभा के एक शिष्ट मंडल से भेंट के लिये स्वीकृति देने के लिये पंजाब राज्य के मुख्य मंत्री श्री भीमसेन जी सच्चर को निवेदन किया गया। इसी बीच में १५-२-५५ को नगीना में मेवों की एक बड़ी पंचायत हुई जिसमें जिलाधीश भी सम्मिलित हुए थे। इस पंचायत ने आगे से गोवध न करने का निश्चय किया जिसका सर्वत्र स्वागत होना ही था। पंजाब राज्य का यह दावा था कि उस राज्य में गोवध नहीं होता। मेवों के इस निश्चय से उसका दावा गलत सिद्ध हुआ। पंजाब राज्य सरकार का ध्यान इस ओर से आकृष्ट करके मेवों की इस घोषणा के प्रभाव को स्थायी बनाने के लिये राज्य की विधान सभा के द्वारा एक प्रभावशाली कानून बनाने की आवश्यकता के कारणों [पर प्रकाश डालते हुये राज्य सरकार को विधान बनाने की विशेष प्रेरणा की गई।

बिहार तथा हैदराबाद

आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार को प्रेरणा की गई कि वे अपनी राज्य सरकार के मुख्यमंत्री महोदय के साथ सार्वदेशिक सभा के शिष्ट मंडल की भेंट की व्यवस्था करें। इसी प्रकार हैदराबाद सभा को भी लिखा गया है। देहली राज्य में मुख्य मन्त्री को सीधे सभा कार्यालय से लिखा गया है। शिष्ट मंडल की भेंट के लिये श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त बिहार राज्य के अधिकारियों के साथ पत्र व्यवहार कर रहे हैं।

श्री महात्मा आनन्दभिक्षु जी का सहयोग

श्री महात्मा आनन्दभिक्षु जी ने अपनी विदेश यात्रा के दौरान में सभा की गोरक्षा निधि के लिये गोरक्षा के नोटों की बिक्री के द्वारा १२१५०) भिजवाया जिसके लिये सभा महात्मा जी को साधुवाद देती है।

कार्यकर्ता

गोरक्षा आन्दोलन के कार्यार्थ इस समय २ वैतनिक कार्यकर्ता हरियाना आदि में कार्य कर रहे हैं उनके कार्य की रिपोर्ट इस प्रकार हैः—

श्रीयुत पोहकर मल जी मासिक वेतन ७०)

प्रतिज्ञा पत्र भरवाये	१६००
नोट बेचे गये	१८००)
गोकरुणानिधि बेची गई	१५००
गोकृष्यादि स्थापित हुई	३०० ग्रामों में
व्याख्यान दिये	६००
व्याख्यान सुनने वालों की संख्या	८००००
गोरक्षा सम्मेलन हुये	१००
ग्राम पंचायतों से राष्ट्रपति को प्रस्ताव भिजवाये गये	१२८

नई आर्य समाजें स्थापित की गईं ४८ ग्रामों में

श्रीयुत रामस्वरुप जी मासिक वेतन १००)

मुख्यतः विविध स्थानों में अवैध गोवध के निरीक्षण और रिपोर्ट का कार्य इनके आधीन है। इनकी नियुक्ति दिसम्बर ५४ से हुई है। मेवों की पंचायत के फलस्वरूप कई ग्रामों में गोवध के मामले प्रकाश में आये हैं। अब गोहत्या का औसत १ से १० तक प्रतिदिन का है।

मेवों की पंचायत के बाद २२६ गाएं गुड़गांवा जिले में कसाइयों से छीनी गईं और गौ रक्षकों को सौंपी गई। इस कार्य में सभा मंत्री तथा उपमन्त्री जी ने भी विशेष उद्योग करके पं० रामस्वरूप जी को सहायता पहुंचाई।

ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन

७-३-५४ की अन्तरंग के निश्चयानुसार समस्त प्रदेशीय सभाओं को प्रेरणा की गई कि वे ईसाई प्रचार निरोध कार्यार्थ अपने बजट में धन की विशेष व्यवस्था रखें और समाजों को आदेश देवें कि शुद्धि कार्य को विशेष प्रगति दी जाये। इस कार्य के लिये विशेष योजना बनाये जाने का भी निर्णय हुआ।

ईसाई प्रचार निरोध समिति ने निम्नलिखित कार्य क्रम बनाकर कार्य आरम्भ किया—

कार्यक्रम

१. सही आँकड़े एकत्र करना।
२. समस्या का रूप स्थिर करना।
३. ईसाई प्रचार निरोध के निमित्त निश्चित योजना बनाकर उसे क्रियान्वित करना।
४. वैदिक धर्म को छोड़कर ईसाई मत को अपनाने वाले भाइयों को पुनः वैदिक धर्म में दीक्षित करना।
५. ईसाई प्रचार की समस्या के समाधान के निमित्त अन्य उपयुक्त, उपायों को अपनाना
६. उक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिये धन संग्रह करना।

एक प्रश्नावली प्रदेशीय सभाओं को भेजी गई जिसमें उनके राज्यों में ईसाई प्रचार के संगठन, रूप, आकारः उपाय तथा अन्य ज्ञातव्य तथ्यों के विषय में जानकारी भेजने की प्रेरणा की गई। बम्बई, हैदराबाद, उड़ीसा, मध्य प्रदेश राज्यों से कुछ तथ्य प्राप्त हो चुके हैं अन्य प्रदेशों से तथ्य प्राप्त किये जाने का प्रयत्न जारी है।

देहली से कार्यारम्भ

मई १९५४ में सार्वदेशिक आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति श्री ओमप्रकाश जी पुरुषार्थी की देखरेख में देहली में कार्यारम्भ किया गया। २६ जुलाई ५४ से देहली राज्य में ईसाई संगठन के विषय में आंकड़े एकत्र करने तथा ईसाई प्रचार निरोध कार्य के लिये श्री वासुदेव शर्मा को १००) मासिक पर नियुक्त किया गया। श्री वासुदेव जी ने देहली, नई देहली, नरेला गन्नौर महरौली तथा राज्य के अनेक छोटे-छोटे ग्रामों में जाकर ईसाई संगठन के विषय में अत्यन्त महत्वपूर्ण आंकड़े और तथ्य एकत्र किये। इसके अतिरिक्त उन्होंने अनेक नव ईसाइयों को पुनः हिन्दू धर्म में दीक्षित कराया।

५ सितम्बर ५४ को विशेष समारोह में गन्नौर के २३० हरिजन भाइयों को जो ईसाई हो गये थे पुनः वैदिक धर्म में दीक्षित कराया। अक्टूबर में पं० जी की सेवायें समाप्त हुईं।

३०-८-५४ को सायंकाल ६ बजे बलिदान भवन देहली में देहली के आर्यजनों की एक सभा हुई जिसमें ईसाई प्रचार निरोध के लिये एक स्थानीय उपसमिति बनाई गई। निरोध कार्य के लिए १० हजार रुपये एकत्र करने तथा निरोध की निश्चित योजना बनाने का निश्चय हुआ। इन निश्चयों के अनुसार देहली राज्य की आर्यसमाजों को उक्त समिति की कार्यवाही का विवरण भेज दिया गया तथा ईसाई प्रचार निरोध का कार्य करने की प्रेरणा की गई।

उत्तर प्रदेश

उत्तर प्रदेश मेरठ डिवीजन में निरोध कार्यार्थ एक समिति बनी हुई है। पं० शिवदयालु जी की अध्यक्षता में निरोध कार्य हो रहा है। वहां कार्य विवरणान्तर्गत वर्ष के अन्त तक सहस्रों ईसाई आर्य धर्म में वापस आ चुके हैं। श्री स्वामी वेदानन्द जी, श्री बाल दिवाकर जी हंस तथा गाजियाबाद के अनेक उत्साही आर्यवीर लाभदायक कार्य कर रहे हैं। इसी प्रकार देश के अन्य भागों में उत्साही आर्य युवक इस महान् संकट को दूर करने में प्रयत्नशील हैं।

मध्य प्रदेश

मध्य प्रदेश के अशिक्षित आदिवासियों में ईसाई मिशन का कार्य अत्यधिक फैला हुआ है। इस राज्य में पादरियों ने प्रत्येक जिले में मुख्यतया वन प्रदेशों में अपने केन्द्र खोले हुये हैं जिन पर प्रति वर्ष लगभग ५ करोड़ रुपया व्यय किया जाता है।

आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश ने अपने परिमित साधनों द्वारा इस बढ़ते हुये प्रचार कार्य का निरोध करने का दृढ़ संकल्प किया और श्री स्वामी दिव्यानन्द जी की अध्यक्षता में एक शुद्धि विभाग का संगठन किया। श्री स्वामी जी, आर्य बन्धु जी, श्री नीलकण्ठ जी शर्मा, रुद्रदत्त सिंह जी तथा श्री विश्वनाथ जी आदि सज्जनों ने आदिवासियों के ग्रामों तथा वन प्रदेशों में कार्य आरम्भ किया। अनेक स्थानों पर महत्वपूर्ण कार्य हो रहा है। आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त की अध्यक्षता में एक मिशनरी कार्य जांच समिति नियुक्त की गई है। इस समिति ने राज्य के कुछ भागों में मिशनरी कार्य की जांच की है। इस जांच के परिणामों के आधार पर ही सभा ने राज्य में ईसाई प्रचार निरोध की अपनी योजना बनाई है। इस कार्य के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश ने २०००) तथा इस कार्य में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने १०००) का अब तक अनुदान भाग दिया है

विहार उड़ीसा

विहार तथा उड़ीसा के अनेक प्रदेश पर्वतों तथा जंगलों से घिरे हुए हैं अतः वहां भी ईसाई मिशनरियों की गति विधि विशेष रूप से उग्र है ईसाइयों की गतिविधियों को निरन्तर द्रुत गति से प्रसारित होते देखकर वहां के वैदिक धर्मी आर्य जन सशंकित हो उठे। श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी जो उड़ीसा प्रदेश के निवासी हैं कार्यक्षेत्र में उतरे और सुन्दरगढ़, मयूरगंज आदि जिलों में दौरा करके ईसाई प्रचार तथा संगठन का उन्होंने भली भांति अध्ययन किया। श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी की रिपोर्ट के अनुसार केवल सुन्दरगढ़ में स्थित एक मिशन के आधीन १ बड़ा कालेज, २ हाईस्कूल २०० प्राइमरी स्कूल ३०० गिरजाघर, कई सेवा-केन्द्र तथा संस्थायें हैं। इस केन्द्र में ९८ विशेष पादरी, ४०० प्रचारक, ३५ प्रचारिकायें तथा अन्य व्यक्ति प्रचार कार्य करते हैं। इसी प्रकार के जिलों में अनेक केन्द्र हैं। इस एक विवरण से ईसाई मिशनरियों के संगठन की विशालता का अनुमान लगाया जा सकता है।

सार्वदेशिक सभा तथा अन्य कई समाजों की आर्थिक सहायता के बल पर श्री ब्रह्मानन्द जी ने कुलंगा (सुन्दरगढ़) में कार्य केन्द्र खोलकर ईसाइयों के आपत्तिजनक प्रचार कार्य का निरोध करना आरम्भ किया। ५-६ आदिवासियों को जो पहले ईसाई हो चुके थे शुद्ध करके आदिवासियों के लिये खोले गये स्कूलों में भेज दिया है जहां वे शिक्षण तथा प्रचार कार्य में संलग्न हैं।

स्वामी ब्रह्मानन्द जी का कार्य बड़ा सफल और और महत्वपूर्ण रहा है। सार्वदेशिक सभा की ओर से गत अगस्त मास से ८०) मासिक की सहायता इस कार्य के निमित्त दी जा रही है।

सभा प्रधान का दौरा

सभा के प्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी ने गत दिसम्बर मास में कुलंगा केन्द्र के कार्य का निरीक्षण किया। वे कुलंगा, झार सुगुडा, सुन्दरगढ़, राजगंजपुर पानपुरा, राउर, केला, हीराकुण्ड और वेदव्यास नामक स्थानों पर गये। इस दौरे से ईसाई प्रचार निरोध का कार्य करने वालों को बड़ा प्रोत्साहन प्राप्त हुआ। उड़ीसा के कृषि मन्त्री श्री कृपानिधि जी के कथनानुसार उक्त क्षेत्रों में पौने दो लाख व्यक्ति ईसाई बन चुके हैं।

आर्यनगर गाजियाबाद भूमि में सेवा केन्द्र

ईसाई प्रचार निरोध समिति के निश्चय के अनुसार जो १३-२-५५ की अन्तरंग बैठक में सम्पुष्ट हो चुका है ईसाई प्रचार निरोध के कार्यार्थ आर्यनगर गाजियाबाद की सभा की भूमि में सेवा केन्द्र खोलने

का निश्चय किया गया है जिसके मकानों के निर्माण के लिये सभा ने १५०००) तक व्यय करने की स्वीकृति दी है।

गोरक्षा तथा ईसाई प्रचार आन्दोलन के कार्य्य में श्री ओमप्रकाश जी त्यागी प्रधान सेनापति आर्य वीरदल का अच्छा सहयोग प्राप्त रहा।

आर्यसमाज का इतिहास

यह इतिहास श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति लिख रहे हैं जो तीन भागों में होगा। सभा की ७-३ ५४ की अंतरंग सभा ने इस कार्य के लिये १० हजार रुपये तक व्यय करने का निश्चय किया है जिसमें से ५०००) तक सामग्री के संग्रह एवं सम्पादन के लिये और शेष ५०००) तक इतिहास की छपाई में खर्च होगा। इतिहास पर सार्वदेशिक सभा का आधिपत्य रहेगा और वही इसे प्रकाशित करेगी। सभा ने इतिहास के हस्तलेख को देखने के लिये एक उपसमिति नियुक्त की है जिसके संयोजक सभा मन्त्री हैं।

कार्य विवरणान्तर्गत वर्ष के अन्त तक इतिहास के लगभग २ भाग पूरे हो चुके हैं।

भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास में आर्य समाज का स्थान

भारत सरकार ने भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास की तैयारी के लिये एक केन्द्रीय समिति नियुक्त की है जिसके अध्यक्ष डा० सैय्यद महमूद हैं। प्रदेशीय राज्य अपने अपने यहां का इतिहास तैयार कराके केन्द्रीय बोर्ड को भेजेंगे। प्रदेशीय आर्य प्रति निधि सभाओं को सार्वदेशिक सभा के कार्यालय से प्रेरणा की गई कि वे इन समितियों में आर्य समाज के प्रतिनिधियों को भी सम्मिलित करायें जिससे इतिहास में आर्य जनों के कार्य का समुचित उल्लेख हो सके। इस प्रेरणा के फल स्वरूप इस समय तक जो सफलता प्राप्त हुई उसका विवरण इस प्रकार है:-

१ देहली राज्य—श्री पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति, सदस्य भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास की कमेटी।

२ पंजाब—श्री अमर नाथ जी विद्यालंकार तथा श्री पं० जयचन्द्र जी विद्यालंकार उक्त कमेटी के सदस्य।

३ हैदराबाद—श्री पं० नरेन्द्र जी, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद उक्त समिति के सदस्य निर्वाचित हुये हैं।

४ सिन्ध—श्री प्रो० ताराचन्द्र जी गाजरा, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा सिन्ध, सिंध प्रांत के इतिहास की सामग्री संकलित करने के लिये बम्बई राज्य द्वारा नियुक्त समिति के मंत्री निर्वाचित हुये हैं।

५ राजस्थान—श्रीयुत डा० मथुरालाल जी डी० लिट प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान, राज्य समिति के उपाध्यक्ष निर्वाचित हुये हैं।

६ मध्य प्रदेश—सरकारी समिति के मन्त्री महोदय ने मध्य प्रदेश की सभा को आश्वासन दिया है कि वे आर्य समाज द्वारा भेजी हुई सामग्री का स्वागत करेंगे।

७ अजमेर—दत्तात्रेय वावले, प्रिन्सिपल दयानन्द कालेज, अजमेर उक्त समिति के संयोजक नियुक्त हुये हैं।

इस दिशा में प्रयत्न जारी हैं।

मराठी सत्यार्थप्रकाश का पुनर्मुद्रण

कोल्हापुर समाज के आर्य भानु प्रेस में मराठी सत्यार्थप्रकाश का नया संस्करण छप रहा है। दश समुल्लास छप चुके हैं। शेष कार्य अक्टोबर ५५ तक समाप्त हो जाने की आशा है, ५००० प्रतियां छप रही हैं। सार्वदेशिक सभा ने अन्तरंग दिनांक ६-३-५४ के निश्चयानुसार लागत मूल्य पर १०००) की पुस्तकें क्रय करके इस आयोजन में क्रियात्मक सहयोग देने का फैसला किया हुआ है।

कन्नड़ सत्यार्थप्रकाश

सभा के विशेष प्रयत्न से इस वर्ष कन्नड़ भाषा के सत्यार्थप्रकाश का नया संस्करण छपना आरम्भ हो गया है। सभा के दक्षिण भारत प्रचार के आर्गेनाइजर श्रीयुत पं० सत्यपाल जी स्नातक की देख रेख में यह कार्य हो रहा है। इन्होंने श्रीयुत पं० सुधाकर जी की मूल्यवान् सहायता से ३-४ मास लगा कर पहले पुराने संस्करण का निरीक्षण और संशोधन किया। इस कार्य में बंगलौर के पुराने प्रसिद्ध आर्य श्री हरनामदास जी कपूर, मैसूर समाज के मन्त्री श्रीयुत राम शरण जी आहूजा तथा अन्यान्य उत्साही आर्य जनों का पूरा पूरा सहयोग प्राप्त है। १३-२-५५ की अन्तरंग सभा के निश्चयानुसार इस सभा ने १०००) छपाई के कार्य को सुगम बनाने के लिये पेशगी रूप में दिया है जो पुस्तकों के रूप में सभा को वापस प्राप्त होगा। विविध समाजों के आर्डरों के अगाऊ तथा दान के धन से छपाई का कार्य हो रहा है। वर्ष के अन्त तक इस कार्य में २१४५) की आय और २३०३ का व्यय हुआ है।

तिलुगु सत्यार्थ प्रकाश

श्रीयुत पं० गोपदेव जी (आंध्र प्रांत के प्रसिद्ध उत्साही कार्यकर्त्ता) सभा के आंध्र प्रदेशीय प्रचार आर्गेनाइजर श्रीयुत पं० मदन मोहन जी विद्यासागर की सक्रिय सहायता से तिलुगु सत्यार्थप्रकाश के पुराने अनुवाद का निरीक्षण और संशोधन कार्य कर रहे हैं। ११ समुल्लास तक का कार्य समाप्त हो चुका है। आशा है आगामी वर्ष नया संशोधित संस्करण प्रकाशित होकर जनता के हाथ में पहुंचकर प्रचार कार्य में पड़ी हुई एक बहुत बड़ी बाधा दूर हो जायेगी।

अंग्रेजी सत्यार्थ प्रकाश

२८-११-५४ की अन्तरंग सभा के निश्चयानुसार श्रीयुत डा० चिरंजीव भारद्वाज कृत अंग्रेजी सत्यार्थप्रकाश की अच्छे टाइप में आफसेट प्रेस में १००० प्रतियां छापने और इस पर ६८००) तक व्यय करने का निश्चय हुआ है। यह भी निश्चय हुआ कि प्लेट सुरक्षित रखी जावें प्रथम १०००, १००० प्रतियां छपवाई जाती रहें प्रति हजार कागज सहित छपाई का २०००) व्यय होगा जो स्वीकार हो चुका है। फोटो के लिये मद्रास से प्रकाशित संस्करण का टाइप पसन्द किया गया है। मद्रास संस्करण की कम से कम २ प्रतियों की प्राप्ति पर कार्य आरम्भ हो सकेगा जिस की खोज की जा रही है। समाचार पत्रों तथा पत्र व्यवहार के द्वारा भी प्रतियों की प्राप्ति के लिये प्रयत्न किया जा रहा है।

संस्कृत सत्यार्थ प्रकाश

२८-११-५४ को अन्तरंग के निश्चयानुसार संस्कृत सत्यार्थ प्रकाश के निरीक्षण और संशोधन का कार्य आरम्भ हो गया है। यह कार्य गुरुकुल कांगड़ी के आचार्य श्रीयुत पं० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति के सुपुर्द है। आशा है आगामी वर्ष यह कार्य समाप्त होकर सत्यार्थ प्रकाश के पुनर्मुद्रण का कार्य हाथ में ले लिया जावेगा।

डेली प्रेअर आफ ऐन आर्य

२८-११-५४ की अन्तरंग के निश्चयानुसार श्रीयुत स्व० प्रो० सुधाकर जी द्वारा वैदिक संध्या के अंग्रेजी अनुवाद के प्रकाशन का स्वत्वाधिकार उनकी धर्मपत्नी जी से प्राप्त किया गया। पुस्तक विदेश प्रचारार्थ बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई है। इसका पुनर्निरीक्षण कराया जा रहा है। आशा है आगामी वर्ष नया संस्करण छप जावेगा।

सभा तथा हैदराबाद सत्याग्रह का इतिहास

सभा ने अपने २७ वर्षीय इतिहास के आगे अब तक का सभा का इतिहास तैयार कराके प्रकाशित कराने का निश्चय किया है। साथ ही हैदराबाद सत्याग्रह के इतिहास के पुनः प्रकाशन का निश्चय हुआ है। ये दोनों कार्य शीघ्र ही सम्पन्न कराने का प्रयत्न किया जा रहा है।

हिन्दी शब्द पारिजात

स्व० श्री द्वारिकाप्रसाद शर्मा कृत और रामनारायण लाल पुस्तक विक्रेता इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित "हिन्दी शब्द पारिजात" नामक हिंदी कोष में महर्षि दयानन्द और सत्यार्थ प्रकाश के सम्बन्ध में भ्रमपूर्ण और आपत्ति जनक बातें लिखी हैं। गत वर्ष आर्य समाज सिवहारा (बिजनौर) के द्वारा सभा का ध्यान आकृष्ट किये जाने पर सम्पादक और प्रकाशक दोनों से संशोधन की मांग की गई। इस कार्य में श्री डा. बाबूराम जी तथा श्रीयुत पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय से यथेष्ट सहायता ली गई। प्रकाशक महोदय ने नये संस्करण में संशोधन करना स्वीकार कर लिया है। उन्हें आर्य समाज का पक्ष लिखकर भेज दिया गया है।

आपत्तिजनक साहित्य

आर्य महासम्मेलन हैदराबाद के निश्चयानुसार सरकारी शिक्षा विभागों द्वारा स्वीकृत वेद और आर्य संस्कृति विरोधी विशेषतः ऐसी पाठ्य पुस्तकों के सम्बन्ध में विधिवत् आवश्यक कार्यवाही किये जाने का निश्चय हुआ है जिनमें वेद के सम्बन्ध में निराधार बातों का समावेश हो अथवा जिनमें वैदिक काल में गो मांस भक्षण का वर्णन हो। यह कार्य अंतरंग सभा के निश्चयानुसार श्रीयुत पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार के सुपुर्द हुआ है। ग्रन्थ संग्रह का कार्य प्रारम्भ हो गया है।

शुद्धि के इतिहास में सुनहरा पृष्ठ

श्रीयुत ठा० धर्म सिंह जी सरहदी के छोटे पुत्र के किसी आर्य गृहस्थ में विवाह कराने का प्रश्न इस सभा तथा आर्यजगत् के लिये अरसे से एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न बना हुआ था जिन्होंने लगभग ४० वर्ष पूर्व सपरिवार इस्लाम का परित्याग करके आर्य धर्म ग्रहण किया था और जो बड़ी निष्ठा और दृढ़ता के साथ आर्य धर्म में चले आ रहे हैं। ठाकुर महोदय ने अपनी ३ पुत्रियों का विवाह आर्यों के साथ किया है। प्रसन्नता है कि सार्वदेशिक सभा के मंत्री ने अपनी भांजी का रिश्ता ठाकुर महोदय के पुत्र के साथ करके आर्य जगत् के सामने अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया है। निःसन्देह इनके इस साहस पूर्ण पग से शुद्धि का मार्ग बहुत साफ हो गया है। इस सम्बन्ध पर दोनों महानुभाव बधाई के पात्र हैं।

लन्दन में आर्य समाज की पुनः स्थापना

महर्षि दयानन्द के निर्वाण के पश्चात् आर्य समाज के प्रथम युग में लन्दन में आर्य समाज स्थापित हुआ था। बहुत वर्षों तक वह चलता रहा परन्तु बाद में बन्द हो गया। हर्ष और सन्तोष की बात है कि श्री ब्र० उषर्बुद्ध और धीरेन्द्र जी शील के प्रयत्न से अब उसका पुनरुद्धार हो गया है। ८ नवम्बर १९५४ को लंदन के प्रसिद्ध कैक्सटन हाल में एक सार्वजनिक सभा करके आर्य समाज की वैधानिक स्थापना करदी गई है जिसका प्रधानत्व श्रीयुत सौरेन्सन, सदस्य ब्रिटिश पार्लियामेंट, महोदय ने किया था।

सौरेन्सन महोदय ने आशा व्यक्त की कि आर्य समाज पूर्व और पश्चिम में एक दूसरे को ठीक ठीक समझने की भावना का प्रचारक सिद्ध होगा। एक दूसरे अंग्रेज श्री वाकर महोदय ने आशा प्रकट की कि आर्य समाज शाकाहार के प्रचार में इस देश में स्थित शाकाहार प्रचार समितियों को पूरा पूरा योग देगा।

आर्य समाज की स्थापना के व्यर्थ सभा से ५००) तथा ६६८॥।=, की पुस्तकें व १२१॥) की हवन सामग्री इत्यादि भिजवाये गये।

साप्ताहिक एवं पारिवारिक सत्संग प्रारम्भ हो गये हैं। आर्य पर्व समारोह पूर्वक मनाये जाते हैं। व्याख्यान मालायें जारी हैं।

लन्दन में आर्य समाज के अधिकारी निम्न प्रकार निर्वाचित हुये हैं:—

प्रधान—श्रीयुत प्रो० सी० डबल्यू ले ग्रैंड (मनोविज्ञान के ब्रिटिश प्रोफेसर)

मंत्री—श्री धीरेन्द्र जी शील

उपमंत्री—कुमारी एन डेनियल (कनेडियन छात्रा)

कोषाध्यक्ष—श्रीयुत सुरेन्द्र जी कोहली
(कानून के छात्र)
पुस्तकाध्यक्ष—श्रीयुत कृष्ण चन्द्र वर्मा
(कानून के छात्र)

सदस्य संख्या ३० तक पहुँच चुकी है। समयोपयोगी साहित्य का निर्माण हो रहा है। शुद्धि और संस्कारों का क्रम आरम्भ हो चुका है।

ब्र० धीरेन्द्र जी शील १६ से २८ अक्टोबर तक ३ दिन केम्ब्रिज के तेईसवें ओरियन्टल सम्मेलन में सम्मिलित रहे जहां जर्मन, फ्रेंच, रूसी, डच, तथा अंग्रेजी विद्वानों का सम्पर्क प्राप्त हुआ। रूसी विद्वानों में भारत के प्रति विशेष आकर्षण और रुचि दिखाई देती है। संस्कृत के पाश्चात्य विद्वान् महानुभावों के द्वारा आर्य समाज के रूसी भाषा के साहित्य के निर्माण और प्रकाशन का प्रयत्न किया जा रहा है।

श्री ब्र० उषर्बुध जी हालैंड तथा जर्मनी के कतिपय स्थानों का भ्रमण कर आये हैं जहां उन्होंने जनता को व्याख्यानों एवं पारस्परिक बातचीत के द्वारा आर्य समाज और उसके सिद्धांतों से परिचित कराया है।

सभा की ओर से श्री ब्र० उषर्बुध जी तथा ब्र० धीरेन्द्र जी शील को उनके निजी व्ययार्थ ५००)-५००) की सहायता गत जून में दी गई।

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के अंग्रेजी अनुवाद का पुनर्मुद्रण

इंगलैंड में प्रचारार्थ अंग्रेजी ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका की बड़ी आवश्यकता अनुभव की जा रही है। इस सभा की प्रेरणा पर आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश उक्त पुस्तक का नवीन संस्करण छपवा रही है।

अमेरिकनों की दृष्टि में दयानन्द

नवम्बर ५४ में श्री जोहन ए० सिस्ववाच एरीजोना नामक एक अमेरिकन ने जिन्हें महापुरुषों के हस्ताक्षरों को एकत्र करने का शौक है और जिन्होंने अनेक महापुरुषों के हस्ताक्षर संगृहीत किये हैं सभा कार्यालय को महर्षि दयानन्द सरस्वती के स्वहस्ताक्षरों से युक्त उनकी कोई रचना वा पत्र भेजने के लिए लिखा। उन्होंने यह भी लिखा कि विस्तृत एवं विविध अध्ययन के पश्चात् मेरी यह धारणा बनी है कि दयानन्द १९ वीं शताब्दी में भारत के महानतम व्यक्ति थे। सभा कार्यालय से उन्हें स्वामी जी महाराज के हस्ताक्षर युक्त पत्र का फोटो भेज दिया गया।

सहायता कार्य

विहार—

आर्य प्रतिनिधि सभा विहार द्वारा मुजफ्फरपुर, मलाही (चम्पारन) तथा रक्सौल में ३ केन्द्रों से बाढ़ पीड़ितों की सेवा का कार्य हुआ। अन्न, वस्त्र और औषधि का वितरण किया गया।

मुजफ्फरपुर केन्द्र----

कार्य का विवरण इस प्रकार है :—

२३ ग्रामों में २४५७ व्यक्तियों को साड़ी, कमीज, पेंट, फ्राक आदि बांटे गये। २२ व्यक्तियों को कम्बल, १५ को चादरें दी गईं। ८३ परिवारों को झोंपड़ियां बनाने के लिये ११०) की नकद सहायता दी गई। आर्य समाज सीतामढ़ी को समाज मन्दिर की मरम्मत के लिये १००) दिये गये।

रक्सोल केन्द्र----

२१४॥=) की औषधियां बांटी गई। दयानन्द विद्यालय रक्सोल को ५०) की सहायता दी गई तथा १४१॥=) का अन्न बांटा गया।

सार्वदेशिक सभा ने इस कार्य के लिये १० हजार की सहायता देने का निश्चय किया था जिसमें से ५०००) विहार सभा को भेजे जा चुके हैं। आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद से ३००), उत्तर प्रदेश से २०१), पंजाब से ६१॥) विहार सभा को प्राप्त हुये। १२१८। ॥ विहार सभा ने अपने कोष से दिये।

इस प्रकार ३८-२ ५५ तक ६८२८॥।)॥ की आय और ५७५८।≈)। का व्यय हो चुका है। हैदराबाद की सभा ने बहु संख्या में कपड़े भी भिजवाये।

पंजाब सहायता—

इस वर्ष होनहार पीड़ित विद्यार्थियों की पुस्तकों छात्रवृत्तियों और सहायता के पात्र पीड़ित परिवारों के लिये अन्न व वस्त्र की व्यवस्था करने में ३८४'≈)॥ व्यय हुआ।

टंकारा ट्रस्ट

यह ट्रस्ट श्रीयुत सेठ नानजी भाई कालीदास जी के १॥ लाख रुपये के दान से स्थापित हुआ है जिसका उद्देश्य है टंकारा में महर्षि दयानन्द के एक उपयुक्त स्मारक का निर्माण। सार्वदेशिक सभा ने इस ट्रस्ट को सार्वदेशिक रूप दिलाकर समस्त आर्यजगत पर इसका उत्तरदायित्व डालने और उसकी सहायता का अधिकारी बनाने के उद्देश्य से ट्रस्ट के विधान में निम्नांकित व्यवस्थायें करके रजिस्ट्री कराने की मांग की हुई है :—

1. ट्रस्ट में प्रदेशीय सभाओं और सार्वदेशिक सभा का बहुमत
2. ट्रस्ट के न चलने की अवस्था में इसकी सम्पत्ति की स्वामनी सार्वदेशिक सभा हो
3. ट्रस्ट के आजीवन परामर्श दाता की सलाह को मानने के लिए ट्रस्ट वाध्य न हो।
4. ट्रस्ट-पत्र का भविष्य में कोई संशोधन वा परिवर्तन आवश्यक हो अथवा सदस्यों की मनोनीत संख्या में परिवर्तन करना हो तो सार्वदेशिक सभा की बिना सम्मति के न किया जाये।

यह कार्य हो जाने पर यह सभा समस्त आर्य जगत् को अपना सामूहिक योगदान देने की प्रेरणा करने में समर्थ होगी और प्रेरणा कर दी जायेगी।

सार्वदेशिक पत्र

इस वर्ष भी पत्र का सम्पादन सभा मन्त्री के द्वारा हुआ। इस वर्ष चन्दे से ३७३३≤)॥ और विज्ञापन से ६७५≡) कुल ४०३०॥≈)॥ की आय हुई। छपाई, कागज, वेतन लेखक और डाक व्ययादि में ४७७१।–,॥। व्यय हुआ। घाटा ७३२॥≡)। रहा। गत वर्ष घाटा ७६३॥)॥ रहा था। फरवरी ५५ के अन्त में ग्राहक सं० ७३७ थी। गत वर्ष ७२१ थी। इस वर्ष भी पत्र की लोक-प्रियता में वृद्धि हुई। पत्र को छपाई आदि सभी दृष्टि से उन्नत करने का प्रत्येक सम्भव यत्न किया २८५२–)जा रहा है।

पुस्तक भंडार (विक्रय-विभाग)

इस वर्ष इस विभाग में निम्नलिखित पुस्तकें उनके सामने दी हुई संख्या में छपी जिन पर निम्न प्रकार लागत आई :—

३००० प्रतियां मृत्यु और परलोक	१६४५।–)
५००० प्रतियां भारत में भयंकर ईसाई षड़यन्त्र	७११।≈)॥
४५०० प्रतियां मांसाहार घोर पाप और स्वास्थ्य विनाशक	१६५॥≈)॥
	२८५१–)

इस वर्ष १०१६३॥।) की बिक्री हुई।

व्यय:—

उपकरण व डाक व्ययादि	५०४॥)॥
वेतन लेखक	८२१।।–)
विज्ञापन सार्वदेशिक पत्र	२८३॥।)
	१६१–)॥

हानि लाभ:—

स्टाक वर्ष के अन्त पर	४०७७३॥≈)
बिक्री वर्ष भर में	१०१६३॥।)
	५११३७।≈
प्रारम्भिक स्टाक	३७६०६॥≈)॥
नया स्टाक	११०६२।–)॥
	४८६६६।)
प्राप्त लाभ	१६३८≈)
व्यय	१६१०–)॥
विशुद्ध लाभ	३२८)॥

स्थिर पुस्तकालय

इस वर्ष पुस्तकों को व्यवस्थित करने और उन्हें रजिस्टरों में विषय वार अंकित करने का कार्य पूरा हुआ। इस कार्य तथा आवश्यक फरनीचर की दुरुस्ती तथा निर्माण में १३३८।।=) व्यय हुआ।

पुस्तकों का विवरण----

वर्ष के अंत में विविध विषयों की ४१२३ पुस्तकें १०७०।≤ की लागत की हैं। गत वर्ष ४२५६ पुस्तकें ८१८८॥= की लागत थीं। इस वर्ष १६७ पुस्तकों की वृद्धि हुई जिनमें से ८१।।।-) की पुस्तकें क्रय की गईं तथा शेष भेंट तथा दान रूप में प्राप्त हुईं।

सार्व० सभा की सम्पत्ति व जायदाद

सार्वदेशिक भवन तथा बलिदान भवन

सभा के पास देहली में दो भवन सार्वदेशिक भवन और बलिदान भवन हैं। सार्वदेशिक भवन १७०) मासिक बलिदान भवन का सबसे नीचे का भाग अर्थात् दोनों दुकानें ६७॥) मासिक किराये पर चढ़ी हुई हैं। ५०) मासिक सभा कार्यालय से किराया लिया जाता है। सार्वदेशिक भवन का ५६८०) किराया प्राप्तव्य है जिसकी प्राप्ति के लिये कोर्ट का आश्रय लिया गया है। सभा के कार्यार्थ बलिदान भवन के नीचे की दोनों दूकानें खाली कराने का भी अंतरंग दिनांक १३-२-५५ की बैठक में निश्चय हुआ है।

श्रद्धानन्द नगरी

श्रद्धानन्द नगरी देहली में इस सभा के अधीन श्रद्धानन्द दलितोद्धार सभा द्वारा निर्मित दो भवन, आर्य समाज मन्दिर व पाठशाला भवन हैं। इन दोनों की लागत ६६६३) है। इन भवनों की जमीनों के पट्टे सार्वदेशिक सभा के नाम में परिवर्तित कराने के लिए इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट को नियमित आवेदन पत्र भेजा हुआ है।

वैदिक आश्रम ऋषिकेश

इस आश्रम की भूमि तथा उस पर बने मकानों का मूल्य १५००) है और सभा की सम्पत्ति है। यह आश्रम प्रबन्ध के लिये वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर के अधीन किया हुआ है।

इस आश्रम के मकानों में विशेष नियमों के अनुसार यात्रियों को ठहरने की सुविधा दी जाती है। इस वर्ष १३८ यात्री ठहरे। जिनमें प्रसिद्ध आर्य संन्यासी व विद्वान् भी सम्मिलित है। आश्रम में प्रति सप्ताह साप्ताहिक सत्संग होता है।

इस वर्ष आश्रम में ११८।) की आय और १२८-)॥ का व्यय हुआ। आय में १२०) श्री रणधीर जी सम्पादक मिलाप की १०) मासिक की सहायता सम्मिलित हैं जो आश्रम को प्राप्त रही।

आश्रम का तात्कालिक प्रबन्ध श्री देवानन्द जी संयासी के अधीन है।

जोधपुर की सम्पत्ति

जोधपुर में निम्न लिखित सम्पत्ति सभा के नाम में हैः —

१—५२६५ वर्ग गज भूमि सर प्रताप हाई स्कूल के सामने श्री रणछोड़दास के मन्दिर के पास

२ – आर्य श्मशान २७१२ वर्ग गज भूमि।

३ गुरुकुल मारवाड़ मंडौर—७ मकान कुल भूमि २५३३६ वर्ग गज।

४ --गौशाला मारवाड़ मंडौर--१ कोरीचारा डालने की ४ कोठरियां व २ बरांडे। भूमि ३०००६ वर्ग गज।

इस जायदाद के प्रबन्धादि के लिये सभा की ओर से श्री आत्माराम जी परिहार, जोधपुर निवासी के नाम मुख्तार नामा दिया हुआ है।

श्री लाला जगन्नाथ जी का दान

श्री युत लाला जगन्नाथ जी दिल्ली निवासी ने अपनी १०००) की जीवन बीमा पालिसी इस सभा के नाम में दान दी हुई है। सभा की अन्तरंग ने अपनी २४।४।४८ की बैठक में इस दान को स्वीकार किया था। इस राशि में से दानी की इच्छानुसार २०००) सर्वदानन्द साधु आश्रम को दिये जावेंगे।

श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी की वसीयत

श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी ने अपनी ४९२०) की सभा में तथा अन्यत्र जमा ७१५) की राशि तथा पुस्तकों की वसीयत जो १७००) की हैं इस वर्ष सभा के नाम करदी है।

विविध निधियां

चन्द्रभानु वेदमित्र स्मारक

यह निधि श्री चन्द्रभानु जी रईस बीतरों (सहारनपुर) निवासी की पुण्य स्मृति में उनके सुपुत्र श्रीयुत म० वेद मित्र जी जिज्ञासु द्वारा प्रदत्त ९०००) के धन से मथुरा शताब्दि के अवसर पर स्थापित हुई थी। दानी की इच्छानुसार इस राशि के ब्याज से आर्य साहित्य प्रकाशित किया जाता है। गत वर्ष तक इस निधि से ११ पुस्तकें छप चुकी हैं।

दक्षिण अफ्रीका वेद प्रचार सीरीज

२०-८-५० की अन्तरंग सभा के निश्चयानुसार यह निधि श्रीयुत पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय के १३३५=) के दान से स्थापित हुई जो उन्हें दक्षिण अफ्रीका से वहां के आर्य भाइयों की ओर से निजी व्यय के लिए भेंट रूप में मिला था। इस निधि के धन से अब तक सनातन धर्म और आर्य समाज, "लाइफ आफटर डैथ" और "एलीमेंट्री टीचिंगस आफ हिन्दू धर्म पुस्तकें" छपी हैं। 'लाइफ आफटर डैथ" का दूसरा संस्करण छप चुका है।

दयानन्द आश्रम

इस निधि के २२५०) के ब्याज से बुद्ध हुए भाइयों की सहायता की जाती है विशेषतः विद्यार्थियों को छात्रावृत्तियां दी जाती है। इस वर्ष १ लड़के और लड़की को ८) मासिक छात्रवृत्ति दी गई।

प्रचार कार्य

मदरास

इस वर्ष मई १९५४ से वर्ष के अन्त तक श्रीयुत पं० सत्यपाल जी एम० ए० स्नातक मार्च से सितम्बर ५४ के अन्त तक तथा श्रीयुत पं० मदनमोहन जी विद्यासागर द्वारा मदरास प्रान्त में प्रचार हुआ है।

आन्ध्र राज्य

इस क्षेत्र में पं० मदन मोहन जी विद्यासागर ने कार्य किया। कार्य की रिपोर्ट इस प्रकार है:--

तनाली, तेल्लूर, उस्मानाबाद, लातूर, निजामाबाद, वंरगल, खम्पमम्, सूर्यपेठ, गुंजोटी, आदि १२ स्थानों में प्रचार हुआ।

१ विवाह संस्कार, १ नामकरण और १५ यज्ञोपवीत संसकार कराये गये।

सत्यार्थप्रकाश के तिलुगु अनुवाद के संशोधन का कार्य चल रहा है। ११ समुल्लास तक कार्य हो चुका है।

अक्टोबर मास से पं० जी उपदेशक विद्यालय घटकेश्वर में सभा की दक्षिणा पर एक वर्ष के लिए आचार्य पद पर कार्य कर रहे।

स्नातक सत्यपाल एम० ए० का प्रचार

पं० सत्यपाल जी स्नातक का मुख्य स्थान मंगलौर (दक्षिण कनारा) नियत हुआ था परन्तु बाद में अक्टोबर ५४ मास से मैसूर में नियत किया गया।

पं० सत्यपाल जी ने इस वर्ष मदरास प्रान्त के कन्नड़, तामिल, मलयालम भाषा भाषी सभी भागों में भ्रमण करके आर्य समाज के कार्य की स्थिति का निरीक्षण किया और साथ साथ प्रचार भी किया।

६९ व्याख्यान हुये पुराने और शिथिल समाजों को पुनर्जीवित किया।

कन्नड़ सत्यार्थ प्रकाश का संशोधन हुआ एवं पुनर्मुद्रण का कार्यारम्भ हुआ। मुद्रण के लिये धन संग्रह किया गया।

कन्नड़ साहित्य के प्रचारार्थ प्रतिनिधि समिति की स्थापना की गई इसी के आधीन कन्नड़ सत्यार्थ-प्रकाश छप रहा है। इसी के आधीन वैदिक विवाह पद्धति तथा व्यवहार भानु के कन्नड़ अनुवाद तैयार होकर प्रकाशित हुये। इस समिति के प्रारम्भिक कार्य के संचालन के लिये सार्वदेशिक सभा से १५०) की राशि अगाऊ रूप से सहायतार्थ दी गई। ट्रेक्टों की बिक्री से आगे प्रकाशन का कार्यक्रम जारी रहेगा। संस्कार विधि का कन्नड़ अनुवाद प्रारम्भ हो चुका है।

मैसूर में आर्य धर्मार्थ औषधालय स्थापित किया गया है। एक हिन्दी विद्यालय भी खोल दिया गया है।

ईसाइयों के आपत्तिजनक प्रचार का निरोध करने के लिये संस्कृति पुनरुत्थान सभाओं के नाम से आर्य युवकों के संगठन बनाये जा रहे हैं जिनकी प्रगति के फलस्वरूप ईसाई प्रचार निरोध कार्य भी सफलता पूर्वक हो रहा है। शुद्धि का क्षेत्र भी धीरे धीरे तैयार हो रहा है।

५ प्रतिष्ठित ईसाई परिवारों की शुद्धि की गई। दक्षिण भारत प्रतिनिधिसभा के पुनर्संगठन पर विशेष ध्यान दिया जाता रहा। इस कार्य के लिये एक बीज समिति बनाई गई जिसमें समाजों के प्रतिनिधि लिये गये हैं जो नियमादि बनायेंगी आशा है आगामी वर्ष इस दिशा में पर्याप्त प्रगति हो जायेगी।

२२ विशेष यज्ञ व संस्कार हुये। आर्य पर्व समारोह मनाये गये।

श्री पं० सत्यपाल जी के कार्य के फल स्वरूप दक्षिण भारत में आर्य समाज के प्रति जनता में प्रेम और उत्साह उत्पन्न हो रहा है।

आवड़ी कांग्रेस के अवसर पर आयोजित प्रदर्शन में आर्य साहित्य प्रचार की व्यवस्था की गई। सभा तामिल भाषा के साहित्य के प्रकाशनार्थ २००) की स्वीकृति दी। इस अवसर पर "आर्य कौन है ?" तथा 'ईसाइयों से कुछ प्रश्न' ट्रक्टों को तामिल भाषा में ५०००-५००० की संख्या में छपवाया तथा वितरित किया गया।

नैपाल प्रचार

गत वर्ष के समान इस वर्ष भी नैपाल में प्रचार का कार्य आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार के आधीन रहा। इस सभा से १५० मासिक की सहायता दी जाती रही। वहां पं० रामदेव जी शास्त्री प्रचार कार्य करते हैं।

इस समय तक निम्न लिखित २४ स्थानों पर आर्य समाज स्थापित हो चुके हैं:—

नाम आर्य समाज	सदस्य संख्या
१—आर्य समाज वीरगंज	२२
२— " " भीमफेरी	९
३— " " अमलेख गंज	९
४— " " काठमांडू	३६
५— " " भक्तपुर	२१
६— " " कीर्तीपुर	९
७— " " मधपुर	१८
८— " " बनेपा	९
९— " " पनौती	६
१०— " " सूनार टोली	६
११— " " थानपुर	६
१२— " " ललितपुर	३
१३— " " भीमडुंगा	६
१४— " " देशवली	६
१५— " " छत्रपाठी	६
१६— " " मीरतुर	६
१७— " " जुआघोट	६
१८— " " त्रिशूल	६
१९— " " आस्घाट	६
२०— " " खान चौक	६

२१— "	" गोरखा	१
२२— "	" मनोमाम	६
२३— "	" विराट नगर	१
२४—स्त्री आर्य समाज काठमांडू		१
		२८२

साप्ताहिक सत्संग अधिकारियों के घरों पर या धर्मशालाओं में होते हैं। केन्द्रीय आर्य समाज काठमांडू के आधीन अबला अनाथरक्षा और प्रसूति गृह कार्य हो रहे हैं।

नैपाल रेडियो और गोरखा आदि प्रमुख समाचार पत्र वेद कथा तथा आर्य समाज के प्रचार कार्य में उचित सहयोग देते हैं।

इस वर्ष नैपाल के विभिन्न १८ स्थानों पर प्रचार किया गया।

वैदिक संध्या और हवन पुस्तकें, वेद की अनमोल शिक्षा, पुष्पांजलि आदि नैपाली भाषा के ट्रैक्ट वितरित किये गये।

नैपाल की राजनैतिक स्थिति जनता के समक्ष है। वहां के उच्च राजवर्गों तथा समझदार जनता को आर्य धर्म और संस्कृति के प्रचार और रक्षा की आर्य समाज से बड़ी बड़ी आशायें हैं। आर्य समाज कठिनाइयों से लोहा लेता हुआ भी इस विश्वास के अनुरूप अपने को सिद्ध करने के प्रयत्न में है।

कुमाऊं प्रचार

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के उपदेशक श्रीयुत पं० धर्मदत्त जी आनन्द की सेवायें सितम्बर और अक्तूबर ५४ में १॥ मास के लिये प्राप्त करके नैनीताल और अल्मोड़ा जिलों में पशुबलि निरोध का प्रचार कराया गया। इन्होंने सुल्तानपुर, बाजपुर, रामनगर, जसपुर, रानीखेत, झिझिया सैंड, नन्दा देवी, (मेला) धनिया, कोट आदि स्थानों में मुख्यतया मेलों में पशुबलि निरोध का सफल कार्य किया। इन इलाकों में पशुबलि निरोध और ईसाई प्रचार निरोध के कार्य की बहुत बड़ी आवश्यकता है। यह सभा आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के सहयोग से इस कार्य को स्थिर और विस्तृत रूप से कराने का प्रयत्न कर रही है।

उपसमितियां

आगामी वर्ष (कार्य विवरणान्तर्गत वर्ष) के लिये कार्य विभाजन करते समय २५-१४ की अन्तरंग सभा ने निम्नांकित उपसमितियां नियुक्त की थीं:—

आर्यनगर गाजियाबाद उपसमिति—

१. श्रीयुत लाला बालमुकन्द जी आहूजा
२. " चौ. जयदेवसिंह जी ऐडवोकेट
३. " बा. कालीचरण जी आर्य
४. " ला. हरशरण दास जी
५. " पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति
६. " कविराज हरनामदास जी, सभा मन्त्री (संयोजक)

१२-२-५५ को इस उपसमिति की एक बैठक हुई जिसमें भूमि में बन रहे कुये के निर्माण-कार्य को शीघ्र से शीघ्र समाप्त कराये जाने के निश्चय के अतिरिक्त यह निश्चय हुआ कि गाजियाबाद भूमि में नगर की ओर के छोटे टुकड़े में ईसाई प्रचार निरोध कार्य के लिये सेवा केन्द्र बनाने के लिए १५०००) की राशि की स्वीकृति अन्तरंग से प्राप्त की जाये। १३-२-५५ की अन्तरंग की बैठक द्वारा यह निश्चय स्वीकृत हो गया है।

उपदेशक विद्यालय—

१. श्रीयुत बा. पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट
२. " कविराज हरनामदास जी (संयोजक)
३. " पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय
४. " स्वामी अभेदानन्द जी
५. " पं० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति
६. " राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री
७. " पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार
८. " बा० कालीचरण जी आर्य

६. ,, लाला रामगोपाल जी आर्य

सभा का निश्चय है कि प्रदेशीय सभाओं से सम्प्रति ५ वर्ष तक प्रस्तावित उपदेशक विद्यालय के संचालनार्थ नियत परिमाण में आर्थिक सहायता का वचन लिया जाये और प्रथम वर्ष के व्यय के लिये ४ हजार रु० एकत्र हो जाने पर विद्यालय खोल दिया जाये। इस समय तक निम्नलिखित राशियां प्रदेशीय सभाओं से प्राप्त हुई हैं :—

५५१)	आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश		
५००	आर्य प्रतिनिधि सभा ईस्ट अफ्रीका		
२०८)	,,	,,	मौरीशस
३००)	,,	,,	बिहार
२००)	,,	,,	हैदराबाद दक्षिण
१७५१) सर्वयोग			

आर्यसमाज उपनियम संशोधन समिति—

१. श्रीयुत मदन मोहन जी सेठ
२. ,, पं० रामदत्त जी शुक्ल (संयोजक)
३. ,, चौ० जयदेवसिंह जी
४. ,, पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय
५. ,, बा० कालीचरण जी आर्य
६. ,, बा० मुसद्दीलाल जी

सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा द्वारा प्रस्तावित संशोधनों की पांडुलिपि प्रदेशीय सभाओं को सम्मति के लिये भेजी हुई है। इस समय तक निम्नलिखित सभाओं से सम्मति प्राप्त हो गई है :—

१. उत्तर प्रदेश २. बिहार ३. बम्बई ४. बंगाल ५. राजस्थान ६. मध्य प्रदेश ७. सिन्ध।

अन्य प्रदेशीय सभाओं से सम्मति प्राप्त किये जाने का प्रयत्न हो रहा है।

धर्मार्य सभा के नियम संशोधनार्थ नियुक्त उपसमिति

१. श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
२. ,, लाला चरणदास जी पुरी
३. ,, बा० कालीचरण जी आर्य
४. ,, पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार
५. ,, कविराज हरनाम दास जी

(संयोजक)

१२-२-५५ को इस समिति की बैठक हुई जिसमें धर्मार्य सभा द्वारा संशोधित नियमों पर विचार हुआ। उपसमिति की रिपोर्ट पर अन्तरंग सभा को विचार करना है।

(अन्य उपसमितियों के लिये देखें परिशिष्ट ६]

विविध भ्रमण पत्रिकायें व साहित्य समाजों को भेजा गया

आर्य महासम्मेलन हैदराबाद विषयक भ्रमण पत्रिकायें प्रचारित किये गये :—

१. सार्वदेशिक पत्र के मई व जून जुलाई के अंक
   [१] सभा मन्त्री के आर्यसमाजों में भ्रमण के अनुभव तथा प्रचार प्रणाली में सुधार-विषयक सुझाव।
   (२) आर्य महासम्मेलन हैदराबाद के प्रधान, स्वागताध्यक्ष के भाषण तथा प्रस्ताव।
२. आर्य कन्या पाठशालाओं में ईसाई अध्यापिकाओं की नियुक्तियों का प्रतिवाद।
३. आर्य मन्दिरों में बारातों के ठहराये जाने और नाटकों, हास्य सम्मेलनों आदि अवैदिक और अशिष्ट कार्यों का प्रयोग वर्जित कराने के लिये जिससे उनकी पवित्रता नष्ट होती हो उन्हें वास्तविक मन्दिरों का रूप देने के लिये आवश्यक सुझाव।
४. विदेशी मिशनरी कान्फ्रेंस देहली के प्रधान के हिन्दी और अंग्रेजी भाषण जिलाधीश डिप्टी कलेक्टर, पुलिस कप्तान और तहसीलदार आदि राज्य कर्मचारियों को दिये जाने तथा जनता में प्रचारित किये जाने के लिये।
५. जजिया और मुस्लिम राज्य तथा हिन्दी सांस्कृतिक एकता का शक्तिशाली अस्त्र ट्रैक्ट।

इस साहित्य का आर्यसमाजों में बड़ा आदर हुआ और बहुसंख्या में इनकी मांग आई जिसे

याथ सम्भव पूरा किया गया। कई समाजों ने इस साहित्य में से कुछ साहित्य को प्रचारार्थ स्वयं छपवा कर प्रचार कार्य में प्रयोग किया।

अखिल भारतीय आकाशवाणी—

इस सभा का प्रयत्न है कि ऋषिबोधोत्सव, ऋषि निर्वाणोत्सव और आर्यसमाज स्थापना दिवस के अवसर पर अखिल भारतीय आकाशवाणी से वार्तालाप प्रसारित हुआ करें। गत वर्ष से यह क्रम आरंभ हुआ है। इस वर्ष २७-२-५५ को ऋषिबोधोत्सव के दिन श्रीयुत अलगूराय जी शास्त्री एम. पी. द्वारा ऋषि दयानन्द जी की जीवनी पर एक उत्तम वार्तालाप प्रसारित हुआ।

महर्षि का चित्र संसद में—

आर्य पुरुषों के सुझाव और सभा के प्रयत्न से भारत सरकार के संसद कार्यालय ने उन महापुरुषों की सूची में आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती का नाम अंकित किया है जिनके चित्रों से संसद भवन अलंकृत करने का निश्चय किया गया है।

सार्वदेशिक आर्य वीर दल

शिक्षण शिविर—

इस वर्ष निम्नांकित १० स्थानों पर शिक्षण शिविर लगाये गए जिनमें ८१५ आर्यवीरों ने शिक्षण प्राप्त किया—

१—देहली
२—मथना (इटावा, उ० प्र०)
३—बुटाना (रोहतक, पंजाब)
४—टंकारा (सौराष्ट्र)
५—बिजनौर (उ० प्र०)
६—नरकटियागंज (बिहार)
७—दारागंज (उ० प्र०)
८—लखनऊ उ० प्र०)
९—रोहतक (पंजाब)
१०—सोना (पंजाब)

आर्य वीर दल सम्मेलन

इस वर्ष आर्य वीर दलों के लिए शारीरिक तथा बौद्धिक प्रतियोगिताओं के रूप में वार्षिक सम्मेलन करने का नया कार्यक्रम प्रसारित किया गया जिन के अनुसार निम्नांकित स्थानों पर बड़े ही भव्य रूप में स्थानीय, मांडलिक तथा प्रान्तीय सम्मेलनों का आयोजन किया गया जिनमें खेल, व्यायाम, भाषण, अन्ताक्षरी तथा वादविवाद आदि में प्रतियोगितायें कराई गईं और विजेताओं को उपहार दिये गए:—

१. कानपुर, २. सीतापुर, ३. बिजनौर, ४. देहली, ५. गाजियाबाद, ६. गोंडा, ७. लखनऊ, ८. शाहगंज, ९. गाजीपुर, १०. देहरादून, ११. नजीबाबाद, १२. श्रीनगर (उन्नाव), १३. भिवानी, १४. रोहतक, १५. देहली, १६. कोटद्वार, १७. कैराना (मुजफ्फर नगर) १८. जोधपुर १९. आबू रोड, २०. अलवर २१. पलवल (पंजाब), २२. बड़ौदा, २३. बम्बई २४. हैदराबाद, २५. रक्सौल (बिहार) २६. नरकटियागंज (बिहार), २७. जम्मू (काश्मीर) आदि।

सेवा कार्य

अष्टम आर्य महा सम्मेलन हैदराबाद के अवसर पर आर्य वीर दल ने अति ही प्रशंसनीय रूप से प्रबन्ध तथा सेवा का कार्य किया। दल की ओर से आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के प्रधान श्री पं० नरेन्द्र जी एम. एल. ए. की अध्यक्षता में खेलों की प्रतियोगिता का आयोजन भी सम्मेलन के अवसर पर किया गया, जिसने सम्मेलन को चार चांद लगा दिए थे।

२—शुद्ध हुई मुस्लिम लड़की शान्ति देवी का उद्धार करने में श्री प्रधान सेनापति जी ने महत्वपूर्ण सहयोग दिया।

३—मोतियाखान (देहली) के लगभग १५० हरिजनों को ईसाई बनने से बचाया।

४—गोरक्षा तथा ईसाई निरोध आन्दोलनों में

आर्य वीर दल के अधिकारी तथा सदस्यों ने प्रशंसनीय सहयोग दिया।

४—आर्य वीर दलों की ओर से फ्री टूटोरियल कक्षाओं ने प्रशंसनीय कार्य किया है। इनमें स्कूल कालेज के योग्य लड़कों ने शिक्षक का कार्य किया और कमजोर बच्चों ने पढ़ाई के साथ साथ आर्य समाज के सिद्धान्तों तथा नैतिकता का भी शिक्षण प्राप्त किया। ऐसे शिक्षणालयों में प्रमुख गाजियाबाद तथा लखनऊ के नाम उल्लेखनीय हैं।

दौरा

इस वर्ष दल के प्रधान सेनापति तथा श्री बाल दिवाकर हंस मन्त्री कार्यवाहक समिति ने बम्बई सौराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, राजस्थान तथा पंजाब का दौरा किया। मुख्यतः इस वर्ष सौराष्ट्र प्रान्त में दल की नये रूप से स्थापना की गई।

धर्मार्य सभा

वर्ष के अन्त में यह सभा ६९ सदस्यों का समुदाय थी। इस वर्ष इस सभा की साधारण सभा का १ (३०-४-५४) और अन्तरंग सभा के ५ अधिवेशन (६-३-५४, २९-४-५४, २६ ६ ५४ और २७-६-५४ तथा १३-२ ५५ को) हुए।

सभा के अधिकारी और अन्तरंग सदस्य निम्न प्रकार रहे :—

सभा के अधिकारी

१. प्रधान श्रीयुत पं० रामदत्त जी शुक्ल
२. उपप्रधान श्रीयुत स्वामी आत्मानन्द जी महाराज
३. मंत्री ,, पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति
४. उपमंत्री ,, पं० राजेन्द्रनाथ जी शास्त्री

अन्तरंग सदस्य

१. श्री रामानन्द जी शास्त्री बिहार
२. ,, स्वामी ध्रुवानन्द जी
३ ,, पं० बुद्धदेव जी विद्यामार्तण्ड
४. ,, आचार्य विश्वश्रवाः जी
५. ,, ,, प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति
६. ,, ,, बृहस्पति जी वेद शिरोमणि
७. ,, ,, द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री सि० शिरोमणि
८ ,, स्वामी अभेदानन्द जी
९. ,, ओमप्रकाश जी शास्त्री एम. ए., चूरू

धर्मार्य सभा के आवश्यक निश्चय

१—श्री नाथूलाल जी कृत 'ऐक्यवादी दयानन्द' नामक पुस्तक में महर्षि दयानन्द को अद्वैतवादी सिद्ध करने का दुःसाहस किया गया है जो बिलकुल अशुद्ध है। यह सभा घोषित करती है कि महर्षि दयानन्द ब्रह्म, जीव और प्रकृति इन तीनों को अनादि और नित्य मानने वाले त्रैतवादी थे। ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, वेदान्तध्वान्तनिवारण आदि महर्षि कृत ग्रन्थों को ध्यानपूर्वक पढ़ने से यह बात स्पष्ट ज्ञात होती है। महर्षि के लेखों के अभिप्राय को अयोग्यता के कारण अन्यथा समझ कर श्री नाथूलाल जी का सत्यार्थप्रकाश के प्रथम और प्रक्षेपों के कारण अमान्य संस्करण को ही प्रामाणिक मानना, जीव को उत्पन्न होने वाला और अनित्य बताना, पुनर्जन्म के वैदिक सिद्धान्त को न मानना, जीव ब्रह्म को एक मानना, ब्रह्म को जगत् का अभिन्न निमित्तोपादान कारण मानना तथा महर्षि दयानन्द को अद्वैत ऐक्यवादी मानना सर्वथा अशुद्ध और उनकी अपनी अयोग्यता और संस्कृत से नितांत अनभिज्ञता का सूचक है। यह सभा उनकी इस तथा 'त्रैतवाद संशोधन' आदि नामों से प्रकाशित पुस्तिका को सर्वथा अशुद्ध और अमान्य घोषित करती है।

२—सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के २७ ४ ५१ के बृहदाधिवेशन में निम्न प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ था :—

"वैदिक सिद्धान्तानुसार एक पुरुष की एक समय में एक ही पत्नी होनी चाहिये। एतद्विरुद्ध आचरण करने वाला आर्य समाज का आर्यसभासद् नहीं रह सकता।" सभा के इस निश्चय के सम्बन्ध में प्राप्त कुछ पत्र तथा श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के लेखादि पढ़कर सुनाये गये। विचार विनिमय के पश्चात् सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि—

[१] उपर्युक्त निर्णय किसी व्यक्ति के आर्य समाज में प्रवेश से पूर्व सम्पन्न एक से अधिक विवाहों पर लागू न होगा किन्तु आर्यसमाज के एक पत्नीव्रत, पतिव्रत तथा नैतिक स्तर को ऊंचा रखने के लिये यह आवश्यक है कि ऐसे व्यक्ति आर्य समाजों के अधिकारी न बनाये जाएं और न रहें।

[२] उपर्युक्त निर्णय स्त्रियों पर भी जो आर्य समाज की सदस्या हैं अथवा बनना चाहती हैं समानरूप से चरितार्थ होगा अर्थात वैदिक सिद्धान्तानुसार एक स्त्री का एक समय में एक ही पति होना चाहिये और उसे पतिव्रत धर्म का पालन करना चाहिये। तद्विरुद्ध आचरण करने वाली आर्यसमाज की सदस्या नहीं रह सकती।

[३] यह स्पष्ट करना अनावश्यक है कि उपर्युक्त निर्णयानुसार किसी के लिये रखैल अथवा उपपति रखना सर्वथा वर्जित है क्योंकि इसे सभी जानते हैं।

३. ब्रह्मपारायण यज्ञादि विषयक निश्चय

३०-४-१९५४ के सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की साधारण सभा के अधिवेशन में कई घन्टों तक विचार विनिमय के पश्चात् ३ के विरुद्ध १० के बहुमत से यह निश्चय किया गया कि—

"महर्षि दयानन्द के यजु० १। ३०। के भाष्य में 'सर्वैर्मनुष्यैरयं जगदीश्वरः प्रतिवस्तुषुस्थितः प्रतिपादितः पूज्यश्च भवतीति मन्तव्यम्। तथा चायं यज्ञः प्रतिमन्त्रेण सम्यगनुष्ठितः सर्व प्राणिभ्यः प्रतिवस्तुषु पराक्रम बलप्राप्तये भवतीति।"

भाषार्थ...... वैसे ही यह यज्ञ वेद के प्रति मन्त्र से अच्छी प्रकार सिद्ध, प्रतिपादित विद्वानों से सेवित किया हुआ सब प्राणियों के लिये पदार्थ २ में पराक्रम और बल के पहुँचने के योग्य होता है।

तथा ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के

"तत्पाठेन (वेद मन्त्र पाठेन) ईश्वरस्तुति प्रार्थनोपासनाः क्रियन्ते द्वितीयमेन किं फलं भवतीत्यस्य ज्ञानं, तत्पाठानुवृत्त्या वेदमन्त्राणां रक्षणम्,ईश्वरस्यास्तित्वसिद्धिश्च।

इत्यादि लेखों से ब्रह्मपारायण की सिद्धि होती है। "आग्ने आग्ने मे भव यजुषे यजुषे-यजन्ति येन तस्मै प्रतिमन्त्रम्" इससे यह भी भाव स्पष्ट होता है। तथा महर्षि दयानन्द से पूर्ववर्ती सांख्यायन गृह्यसूत्र ४ के अ०५०१५सू. ६०५ 'प्रत्यृचं वेदेन जुहुयात्' इत्यादि से सम्पूर्ण वेद मन्त्रों से यज्ञ का समर्थन होता है अत सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की साधारण सभा का यह अधिवेशन ब्रह्मपारायण यज्ञों की शास्त्रीयता का समर्थन करता है।'

४. सार्वदेशिक धर्मार्य सभा ने निर्णय किया है कि एक अथवा चारों वेदों से पारायण यज्ञ करना शास्त्रानुमोदित है। इस यज्ञ का प्राचीन नाम स्वाहाकारान्त योग है इसका चलित नाम ब्रह्मपारायण यज्ञ यद्यपि प्राचीन नहीं तथापि सुन्दर होने से पर्यायवाची के रूप में इसका प्रयोग किया जा सकता है। २ के विरुद्ध १२ के बहुमत से स्वीकृतप्रस्ताव—

५. यज्ञों में मन्त्र कोटि के स्थान में ओमादेश—इस विषय पर विचार विमर्श के पश्चात् बहुमत से स्वीकृत हुआ कि यज्ञों में सब वेद मन्त्रों के अन्त कोटि प्रणवादेश न किया जाए।

६. यजुर्वेद में गुङ् का उच्चारण—

इस विषय में विचार विनिमय के पश्चात् धर्मार्य सभा की २९-४-१९५४ की अन्तरंग सभा के

निम्न प्रस्ताव का सर्व सम्मति से समर्थन किया गया कि 'प्रातिशाख्यादि प्राचीन व्याकरण विषयक ग्रन्थों तथा याज्ञिक परम्परानुसार यजुर्वेद के मन्त्रों के अनुस्वार के स्थान पर जब वह र, श, ष, स, ह, से पूर्व आए तो गुङ् के समान उच्चारण होना चाहिये परन्तु साथ ही यह स्पष्ट करना भी उचित समझा गया कि गुङ् के समान अर्धमात्रिक उच्चारण होना चाहिये।

७. 'यज्ञ रूपप्रभो' इत्यादि विषयक निश्चय—

इस गान के भाव उत्तम होने पर भी कुछ शब्द भ्रम एवं आपत्ति जनक हैं उदाहरणार्थ यज्ञ रूप प्रभो--यज्ञ पुरुष महिमा इत्यादि। श्री पं० लोकनाथ जी को आदेश दिया जाता है कि इस भजन के शीर्षक में प्रभु प्रार्थना' और 'यज्ञरूप प्रभो' के स्थान पर पूजनीय प्रभो इस प्रकार के परिवर्तन कर दें जिससे यह सर्व मान्य हो जाए।

श्री पं० लोक नाथ जी ने इन परिवर्तनों को स्वीकार कर लिया।

८. श्री विद्यानन्द जी विदेह की पुस्तकों के सम्बन्ध में जो निश्चय हुआ है वह इस प्रकार है:—

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की अन्तरंग सभा का अधिवेशन २६-६ ५४ को मध्याह्न २ बजे श्री श्रद्धानन्द बलिदान भवन देहली में श्री पूज्य स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती की अध्यक्षता में हुआ।

श्री विद्यानन्द विदेह भी उपस्थित थे। इनका १४-५- १९५४ का श्री प्रधान जी सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के नाम लिखा पत्र पढ़के सुनाया गया।

श्री विद्यानन्द जी ने प्रारम्भ में यह कहा कि मुझे जो दंड दिया गया है वह अति कठोर है उसे नर्म किया जाए, इस पर सदस्यों ने उनसे प्रश्न किया कि आप अपने को अपराधी समझते और अपनी भूलों को स्वीकार करते हैं वा नहीं ? दण्ड की कठोरता आदि के विषय में उसके पश्चात् ही विचार किया जा सकता है। इस पर श्री विद्यानन्द जी ने श्री प्रधान जी सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के नाम निम्नलिखित पत्र लिखकर दिया:— श्री प्रधान जी धर्मार्य सभा, देहली,

सभा के ६-५-५४ के पत्र के साथ जो आपत्तिजनक स्थल उद्धृत किये गये हैं मैं उन्हें तब तक अशुद्ध नहीं मान सकता जब तक मुझे यह न समझाया जाता कि वे अशुद्ध अथवा सिद्धान्त विरुद्ध है। मैं अभी अपने किसी ग्रन्थ में कोई भूल नहीं मानता हूँ।

ह० विद्यानन्द विदेह २६-६-५४

इसके बाद श्री विद्यानन्द जी की पुस्तकों के विषय में विचार आरम्भ हुआ। श्री बुद्धदेव जी विद्यालंकार विद्यामार्तण्ड ने "विदेह गीतांजलि" के पृ० १२८ भजन सं० १८९ को पढ़कर सुनाया और श्री विद्यानन्द जी से प्रश्न किया कि ऐसी बातों को क्या आप आर्य समाजों में प्रचार योग्य और ठीक समझते हैं ?

एक पुरानी बात,
याद आ गई आज,
मैं सोई थी अचेत, आये तुम सचेत,
धर अधरो पर अधर, तुमने चूमे अधर,
मैं उठी अधर, देखा इधर उधर
सकुचाई देख तुम्हें अधो दृग हुई आई लाज
रही स्तब्ध खड़ी, अभागिन बड़ी।
रही यूं निहारती, दामन संवारती
उठे नयन बोझल, जब तुम हुए ओझल
देखा इधर उधर, न दीखे शिसुराज
उमड़ा हृदय सन्ताप, करने लगी विलाप
आकाशवाणी हुई, क्यों रोती खड़ी हुई।
यदि मिलने की चाह, मत रो मत भर आह।
मुझसे चाहती मिलना तो तज लोक लाज

इस पर श्री विद्यानन्द जी ने स्वीकार किया कि विदेह गीतांजलि न छपाई जायगी। मैं इसे भूल मानता हूँ। इसके पश्चात् सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की अन्तरंग सभा के ६-३-५४ के अधिवेशन में स्वीकृत प्रस्ताव के अंशों को एक एक करके लिया

गया। सबसे पहले "वैदिक योग पद्धति" के पृष्ठ १ के निम्न वाक्यों को लिया गयाः—

परमात्मा के समान आत्मा भी अणु, सूक्ष्म, शक्तिमान्, शुद्ध, पवित्र, अकाय, निष्पाप, अमर, कवि, मनीषी, प्रेरक, और संचालक हैं, जो गुण परमात्मा में है, वे ही आत्मा में हैं इत्यादि।

परमात्मा के समान आत्मा को भी अणु पवित्र, अकाय और निष्पाप कहना ठीक नहीं है। श्री विद्यानन्द जी ने कहा कि मेरा तात्पर्य अणु से सूक्ष्म का ही था किन्तु जब विद्वान् सदस्यों ने उन्हें बताया कि सूक्ष्म के साथ अणु शब्द का प्रयोग परिमाणवाचक हो जाता है जो अनावश्यक और दार्शनिक दृष्टि से भ्रमोत्पादक है श्री विद्यानन्द जी ने अपनी भूल स्वीकार की।

आत्मा को अकाय कहना भी ठीक नहीं। श्री विद्यानन्द जी ने इसका अर्थ अभौतिक बताया इसकी अशुद्धि का व्याकरण की दृष्टि से जब निर्देश अनेक सदस्य महानुभावों ने किया कि मुझे व्याकरण का ज्ञान नहीं। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि मेरी दर्शन गति नहीं। मैं संस्कृत भी उतनी नहीं जानता। अकाय में बहुब्रीहि समास है। इस शब्द का जीवात्मा के साथ प्रयोग होने से यह भ्रम उत्पन्न हो जा सकता है कि जीवात्मा भी कार्य बन्धन में नहीं जाता। यह बात सिद्धान्त विरुद्ध है।

आत्मा को निष्पाप कहना भी सिद्धान्त विरुद्ध है।

अपाप विद्धम्, यह विशेषण वेदों में केवल ब्रह्म के लिए आता है आत्मा के लिए नहीं। वैदिक योग पद्धति पृ० १, आत्मा और परमात्मा अपरिणामी और एक रूप है। यहां एक रूप शब्द संशयोत्पादक है।

वैदिक योग पद्धति पृ. २५ "जगत् मिथ्या है, माया प्रकृति असत्य है, नितान्त असत्य है, अतः सब कुछ जो भौतिक है मिथ्या, असत्य है ... असत्य का साक्षात्कार असत्य अनिश्चित और संदिग्ध होता है।" यह सिद्धान्त विरुद्ध है।

पृ. २१ "आत्मा और शरीर व्यापक व्याप्य होने से एकाकार और अभिन्न हैं।"

इसके विषय में उनके साथ विचार विमर्श के पश्चात् सभा ने निश्चय किया कि यह सारा वाक्य सिद्धान्त के विरुद्ध है।

पृ. २ पतंजल योग के विषय में विद्यानन्द जी का यह लिखना कि "यह अतिशय जटिल और सर्व साधारण के दैनिक जीवन में सर्वथा अव्यवहार्य है।" पर्याप्त समय तक उनके साथ विचार विनिमय के पश्चात् निश्चय हुआ कि श्री विद्यानन्द जी का यह कथन अनर्गल है।

पृ. २-३ "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः" यह योग की परिभाषा अपूर्ण है। वास्तव में चित्तवृत्ति निरोध योग का साधन है योग नहीं। इस पर अनेक सदस्य महानुभावों ने व्यास भाष्य के उद्धरण और व्याकरण की प्रतिक्रिया को श्री विद्यानन्द जी के सम्मुख रखा और श्री विद्यानन्द जी ने स्वीकार किया कि व्याकरण और दर्शन का मुझे ज्ञान नहीं, वेद ही मेरा विषय है। इस पर विचार विनिमय के पश्चात् सभा ने निश्चय किया कि श्री विद्यानन्द जी की योग विषयक यह कल्पना शास्त्रीय परिभाषा के विरुद्ध और अशुद्ध है।

सत्यनारायण की कथा पृ० २१ सत्यनारायण ब्रह्म को ज्ञानियों ने जो साकार वर्णन किया है वह भी सत्य है। व्याप्य व्यापक भाव से ज्ञानी जन ब्रह्मयुक्त ब्रह्माण्ड को अथवा ब्रह्माण्डयुक्त ब्रह्म को साकार ब्रह्म अथवा ज्येष्ठ ब्रह्म कहते हैं।

इस लेख के सम्बन्ध में श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यामार्तण्ड ने ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका के प्रमाण से श्री विद्यानन्द जी द्वारा उपस्थित "यस्य भूमिः प्रमा" इत्यादि मन्त्रों का वास्तविक अर्थ महर्षि के भाष्यानुसार बताते हुए स्पष्ट किया कि विराट् से तात्पर्य वहां ब्रह्माण्ड से है जो ईश्वर सिद्धि में प्रमा रूप से वर्णित है। विचार विनिमय के पश्चात् निश्चय हुआ कि विद्यानन्द जी का साकार ब्रह्म शब्द का प्रयोग सिद्धांत विरुद्ध है।

पृ० ३७. यदि तुम उस "सत्यनारायण" का साक्षात्कार करना चाहते हो तो उसके दर्शन के लिये

आकुल व्याकुल और विह्वल हो जाओ। यदि उससे एकाकार होना है तो तड़प उत्पन्न करो।

निश्चय हुआ कि यहां एकाकार शब्द का प्रयोग बड़ा भ्रमजनक है।

सत्यनारायण कथा की यज्ञपद्धति में जो केवल ३ प्रार्थना मंत्र रखे गए हैं तथा 'अयन्त इध्म आत्मा, उड़ा दिया गया है और स्वस्तिवाचन शान्तिप्रकरण के कुछ थोड़े से ही मंत्र रक्खे गए हैं। निश्चय हुआ है कि यह सब महर्षि दयानन्द कृत संस्कारविधि में निर्दिष्ट पद्धति के विरुद्ध है अतः संशोधनीय है। दिव्य भावना के 'शिवोस्मि पूर्णोस्मि' तथा 'मुक्तोस्मि' के विषय में भी विचार विनिमय के पश्चात् सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की ६ ३-५४ की अन्तरंग सभा द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव का समर्थन किया गया कि 'दिव्य भावना में शिवोस्मि पूर्णोस्मि तथा मुक्तोस्मि इत्यादि कुछ भावनाओं का सुझाव नवीन वेदांत की ओर प्रतीत होता है यद्यपि 'शिवोस्मि' का अर्थ श्री विद्यानन्द जी ने शुभकर्मा है यह कर दिया है। वस्तुतः परमेश्वर के अतिरिक्त पूर्ण कोई नहीं।

यह सब कार्यवाही आद्योपांत श्री विद्यानन्द जी की उपस्थिति में हुई और अन्त में उन्होंने निम्नलिखित वाक्य लिखकर कार्यवाही पर दिया :—

"मैं इन संशोधनों को स्वीकार करता हूँ।"

ह० विद्यानन्द विदेह २६-६ ५४

यहां यह बात आर्यजनता की सूचनार्थ उल्लेखनीय है कि ये सब संशोधन वही हैं जो ६-३-५४ की धर्मार्य सभा की अन्तरंग सभा में स्वीकृत हुए थे और जिनके विरुद्ध उन्होंने अपील की थी।

इतनी कार्यवाही होने के पश्चात् जो विषय के महत्व के कारण मध्यान्ह २ बजे से रात्रि के पौने आठ बजे तक चलती रही, सभा अगले दिन ७ बजे के लिये स्थगित की गई।

२७-६ ५४ को प्रातः ७ बजे से सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की अन्तरंग सभा का अधिवेशन श्री स्वामी आत्मानन्द जी की अध्यक्षता में प्रारम्भ हुआ। श्री विद्यानन्द जी का १४-५-५४ का श्री प्रधान जी सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के नाम लिखा पत्र अविकल रूप में पढ़कर सुनवाया गया। इस पर विचार प्रारम्भ ही हुआ था कि श्री विद्यानन्द जी ने निम्नलिखित पत्र लिखकर श्री प्रधान धर्मार्य सभा को दिया :—

श्री प्रधान धर्मार्य सभा देहली,

मैं आपको लिखे १४ ५-५४ के अपने पत्र को वापस लेता हूँ। ह० विद्यानन्द विदेह

२७-६-५४

इसके पश्चात् श्री विद्यानन्द जी ने प्रधान जी धर्मार्य सभा के नाम निम्नलिखित पत्र लिखकर दिया :—

मैं निवेदन करता हूँ कि मेरे ७ ४ ५४ के क्षमापत्र को पत्रों में प्रकाशित न किया जाए।

ह० विद्यानन्द विदेह

इन पत्रों को ध्यान में रखते हुए विचार विनिमय के पश्चात् निश्चय हुआ कि पत्रों में केवल सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की अन्तरंग सभा के २६ और २७ जून के अधिवेशनों की कार्यवाही ही प्रकाशित की जाए।

साथ ही सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि :—

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की यह अन्तरंग सभा निम्नलिखित सज्जनों की एक उपसमिति नियत करती है जो श्री विद्यानन्द जी की समस्त पुस्तकों का अनुशीलन करके उचित संशोधन प्रस्तुत करे और उसे धर्मार्य सभा का प्रस्तुत संशोधन समझा जाए।

इस संशोधित रूप में ही विद्यानन्द जी अपनी पुस्तकों के आगामी संस्करण निकालें और जब तक ऐसा न हो जाए तब तक वे उन पुस्तकों का वितरण और प्रचार स्थगित रखें।

श्री विद्यानन्द जी ने इसको स्वीकार किया।

उपसमिति के सदस्य :—

१ श्री स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती, २ श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति, ३ श्री आचार्य विश्वश्रवाः।

संशोधन श्री विद्यानन्द जी विदेह को भेज दिए गए हैं। (शेष पृष्ठ २४७ पर देखें।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

आय-व्यय चित्र १-३-५४ से २८-२-५५ तक

आय

पंचमांश (प्रान्तीय सभाओं से) २६७०॥≡)६
दशांश (सम्बद्ध समाजों से) ८८२।-)

३५५३)६

दान

आर्यसमाज स्थापना दिवस १०४४॥-)
विविध २२६८|||)

३३१३।-)

सूद तथा मकान किराया

बैंकों तथा सम्पत्ति से २८८४३।-)
विविध निधियों को दिया ५४८५)

२३३५८।-)

देश देशान्तर प्रचार १५००)
रक्षा निधि १०००)

२५८५८।-)

लीज प्लाट्स आर्य नगर २७॥-)

व्यय आर्य नगर ५॥-)६

२१|||≡)३

पुस्तक भण्डार बिक्री

बिक्री से १०१६३|||)
शेष स्टाक ४०७७३॥=) ५०६३७।=)
गतवर्ष का शेषस्टाक ३७६०६|||=)६
खरीदा व छपाया ११०६२।-)६
व्यय १६१०-)६

५०६०३।-)६

३२८)६

व्यय

कार्यालय

वेतन १००१८॥=)
सार्वदेशिक पत्र व पुस्तक-
भण्डार (बिक्री से` १२००)

८८१८॥=)

प्रोवीडेण्ट फण्ड ६७३॥=)

६४६२॥)

अधिवेशन व्यय ६४६-)६
मार्ग व्यय अन्तरंग सदस्य ५६६॥=)
,, ,, धर्मार्य सभा ३३६≡)

१५५०=)६

टैक्स व किराया—

बलिदान भवन ५६८≡)
सार्वदेशिक भवन १७८≡) ७७६।=)
विविध व्यय ४६६०)५
घिसाई फर्नीचर ११०)
वेतन लेखक व स्टेशनरी
आदि स्थिर पुस्तकालय ११३६॥=)३

७०२३)८

प्रचार व्यय

दक्षिण भारत ५८२६॥-)३
कुमायूं १४६॥=)
नैपाल १८००)
साहित्य ५७८|||)३

सूद बिरला विदेश प्रचार से	२३३४॥=)	विदेश	२३३४॥=)
ईसाई प्रचार निरोध फण्ड से	२६५७=)३	ईसाई प्रचार निरोध	२६५७=)३
गोरक्षा आन्दोलन निधि से	५४३६॥)३		१३३४४-,३
		गोरक्षा आन्दोलन	५४३६॥)३
		व्यय आर्यवीर दल संगठन	३५५४=)३
		आय दान	३३५≡)
			३११८॥≡)६
		सार्वदेशिक पत्र	४७७१।-)३
		आय	४०३८॥=)६
			७३२॥≡)३
			४०६११॥≡)११
		अधिक आय जो शेष पत्र में सम्मिलित की गई	२८०३।)१
योग	४३५०३।)	योग	४३५०३।)

हमारी आज की रिपोर्ट के अधीन प्रमाणित

(ह०) नारायणदास कपूर
एन० डी० कपूर एण्ड को
चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट

नई देहली
१६ अप्रैल १९५५

(ह०) रघुनाथप्रसाद पाठक
कार्यालयाध्यक्ष

(ह०) नरेशचन्द्र
एकाउन्टेन्ट

(ह०) बालमुकुन्द आहूजा
कोषाध्यक्ष

(ह०) कविराज हरनामदास
मन्त्री

(ह०) ध्रुवानन्द सरस्वती
प्रधान

(पृष्ठ २८५ का शेष)

वियोग

कार्य विवरण समाप्त करने से पूर्व बड़े खेद के साथ लिखा जाता है कि इस वर्ष निम्न लिखित महानुभाव हमसे सदैव के लिये वियुक्त हो गये हैं:-

१-श्रीयुत स्वामी परमानन्द जी महाराज
२- ,, पं० अमीचन्द्र जी विद्यालंकार
३- ,, गोपाल जी बी० ए०
४- ,, बा० गजाधर प्रसाद जी
५- ,, पं० शंकर दत्त जी शर्मा
६- ,, डा० श्याम स्वरूप जी सत्यव्रत
७- ,, दीवान हरबिलास जी शारदा।

इन महानुभावों के निधन से आर्य समाज की क्षति हुई है। परमात्मा से प्रार्थना है कि समस्त दिवंगत आत्मा को शान्ति और सद्गति प्राप्त हो।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

शेष-पत्र [वैलैन्स शीट] २८ फरवरी १९५५

निधियां तथा दातव्य

स्थिर निधियां

वेद प्रचार	५००००)
देश देशान्तर प्रचार	५००००)
भारतीय स्टेट्स	५००००)
रक्षा	२५०००)
सार्वदेशिक भवन	२४५००)
वैदिक आश्रम ऋषिकेश	१४०००)
आर्य साहित्य प्रकाशन	११७५०)
शहीद परिवार सहायता	१५०००)
चन्द्रभानु वेदमित्र स्मारक	५०००)
गंगाप्रसाद गढ़वाल प्रचार	२०००)
शिवलाल वेद प्रचार	६५०)
ढोढाराम चूड़ामणि वेद प्रचार	५०१)
डोमा महतो सुन्दरदेवी वेद प्रचार	१००)
	२४८५०१)

विशेष निधियां

दलितोद्धार	३०००)	
सूद	२१६॥।)	३२१६॥।)
दयानन्द आश्रम	२२५०)	
श्रद्धानन्द नगरी	६६६३)	
सूद		
शहीद परिवार सहा०	२२७१=)६	
गंगाप्रसाद गढ़वाल प्रचार	१३६।॥)	२४१५॥।=)६
		१४५४५'।=)६

सहायता (रिलीफ) निधियां

जनरल	५७६७१≡)६
बंगाल	१००००

सम्पत्ति तथा प्राप्तव्य

भूमि तथा मकान

श्रद्धानन्द बलिदान भवन देहली		३०५००)
सार्वदेशिक भवन		२४५००)
केशव आर्य हाई स्कूल हैदराबाद		२५०००)
वैदिक आश्रम ऋषिकेश		१४०००)
श्रद्धानन्द नगरी देहली		
आर्यसमाज मन्दिर	४२१६)	
,, पाठशाला	२४४७)	६६६३)
शोलापुर आर्यसमाज मन्दिर		१४६२२॥=)
गाजियाबाद भूमि		२७०४६)६
		१४२६३१।=)६

इन्वेस्टमेन्ट्स

सेन्ट्रल बैंक ३ साला कैश सार्टिफिकेटस	३४३१७॥)
ट्रेजरी सेविंग सार्फिकेट्स	५००००)
पंजाब नेशनल बैंक लि० चांदनी चौक F. D.	३३३२१॥)
नेशनल बैंक आफ लाहौर लि० देहली F. D.	१०३६३'।)
बैंक आफ बीकानेर लि० देहली F. D.	८०००
डिबेंचर्स मोहिनी सुगर मिल्स कलकत्ता	३०००)
शेयर्स सार्वदेशिक प्रकाशन लि० देहली	७९८०)
शेयर्स आर्य साहित्य मंडल लि० अजमेर	२०)

पंजाब ४६४।≡)४
विहार ६१३॥)
हिन्दू २००)
हिसार पद्य ६३॥)

६६०४३=)१०

दक्षिण भारत प्रचार निधियां

केशव आर्य हाई स्कूल
हैदराबाद २५०००)
शोलापुर आर्यसमाज मन्दिर १५०००)
हैदराबाद मन्दिर निर्माण ५०५४।=)६

४५०५४।=)६

विदेश प्रचार निधियां

अमेरिका ४४२६)
सूद ५४०।=)६ ४९६६।=)६
बिरला फंड १३०००)
सूद ५५।=)

१३०५५।=)
बगदाद आर्य मन्दिर १२७२) ११२६६।।।)६

धार्मिक पुस्तक प्रकाशन निधियां

चन्द्रभानु वेद मित्र ४६१०॥-)८
पुरानी पुस्तकें ५८१-)६
दक्षिण अफ्रीका वेद प्रचार ७६४॥=)३
दक्षिण भारत वेद प्रचार ५४।।।)
गंगा प्रसाद उपाध्याय पुस्तक
प्रकाशन १६६१≡)१
आर्य सिद्धान्त विरोधिनी
साहित्य खण्डनी ४८०)
आन्ध्र साहित्य प्रचार ८२६)
श्री नारायण स्वामी पुस्तक
प्रकाशन २७१२॥=)५
आर्य साहित्य प्रकाशन ३८६५॥=)६
अन्यों की पुस्तकों के ६१६६=)१०

२५०८६)६

ऋण

पाटौदी हाउस ट्रस्ट देहली
(सुरक्षित) ११०३६।=)
मकानों व भूमि पर २०७६००)
सार्वदेशिक प्रकाशन लि०
(सुरक्षित) ३०८६।।)६

३८२७२७॥=)६

फर्नीचर

गत शेष पत्र के अनुसार ३५७१।)६
इस वर्ष की वृद्धि ६३३।।।)६

४२०५-)३
घिसाई १५०) ४ ५५-)३

स्थिर पुस्तकालय

गत शेष पत्र के अनुसार ८२३७॥)६
इस वर्ष की वृद्धि ८१।।।-)

८३१६।-)६

पुस्तकों का शेष स्टाक

(लागत मूल्य—कार्यालयाध्यक्ष
द्वारा प्रमाणित) ४०७७३।=)

सूद व किराया प्राप्तव्य ४५४१९।।।-)

सिक्योरटी डिपोजिट ६६)

प्रान्तीय सभाओं से प्राप्त

सिंध ७६७५)
बंगाल १००००)

१७६७५)

पेशगियां

आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार ५०००)
आर्य प्रतिनिधि सभा
मध्य प्रदेश ३०००)
पं० मदन मोहन विद्यासागर
(आंध्र साहित्य निमित्त) ८२६)

सत्यार्थप्रकाश रक्षा निधि

सत्यार्थ प्रकाश रक्षा २२२६१॥-)६
सिंधी सत्यार्थ प्रकाश ७०८६=)

२९३४७॥≡)६

अन्य निधियां

दयानन्द समैपुर पाठशाला २४६॥।=)
टंकारा आर्य समाज मन्दिर ३५१-)
दयानन्द कीर्ति मन्दिर १६१)
दयानन्द पुरस्कार ६००००)
सूद ४३८१।-)६

६४३८१।-)६

आर्य नगर गाजियाबाद

रजिस्टर्ड ४८२४२≡)६
सुरक्षित होने वाला १३२१२।)

६१४५४।≡)६

आर्य महा सम्मेलन २७५॥।≡)
श्री महात्मा आनन्द भिक्षु
विदेश प्रचार २००)
उपदेशक विद्यालय १७५१)
आर्य समाज सहायता ५०)
गोरक्षा आंदोलन १३३७३॥≡)६
ईसाई प्रचार निरोध ५६६=)
उड़ीसा प्रचार ६५०)
आर्य समाज इतिहास ३००)

१४४०६४॥।)६

प्रोवीडेन्ट फण्ड सभा कर्मचारी ११२३=)

जनरल फण्ड

गत शेष पत्र के अनुसार ९८८०।)
इस वर्ष की वृद्धि १३८२)

११२६२।)

धरोहरें

आर्य समाज कराची ११७१३.-)१
श्री सेठ दीपचन्द जी पोद्दार कलकत्ता ६५०)
श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति (आर्यसमाज के इतिहासार्थ) २५५०)
श्री पं० सत्यपाल जी स्नातक ४५०)
कन्नड़ सत्यार्थ प्रकाश २८०)
विविध ११३१)६

१३८१००)६

ऋण प्रोवीडेंटफण्डों पर २४४४॥.-)१

नकद तथा बैंकों में

पंजाब नेशनल बैंक लि.
चां. चौक देहली चलत २०००)
पंजाब नेशनल बैंक लि.
नया बजार देहली चलत १६८१-`१०
प्रताप बैंक लि. चांदनी चौक
देहली चलत ३५५७॥।=)१
सेन्ट्रल बैंक आफ इण्डिया
लि. देहली चलत ३॥।-)३
पंजाब नेशनल बैंक लि.
नया बाजार होम सेविंग
एकाउन्ट्स २२१२॥=)
नकद कार्यालय में ५५१॥।=)

१०११५।-)२

आर्य समाज हैदराबाद (सिंध)	१३६॥)
आर्य समाज वाखनगीर (उड़ीसा)	७५)
आर्य समाज येवला (नासिक)	५०)
आर्य नगर कोपरेटिव सोसाइटी	५६॥)
आर्य संस्कृति रक्षा	१८५१)
श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी	४६२०)
,, महात्मा आनन्द भिक्षु जी	१४-=)
,, स्वामी ध्रुवानन्द जी	२८१॥)६
सभा कर्मचारी	११५५≡)१०
विविध	२११७)६
	२४६६१॥।,२

आय-व्यय खाता

गत शेष पत्र के अनुसार	२४७८२॥=)१०
इस वर्ष की अधिक आय	२८०३।)१
	२७५८५।=)११

योग ६६८४१०॥=)५ योग ६६८४१०॥=)५

हमारी आज की रिपोर्ट के अधीन प्रमाणित

(ह०) नारायणदास कपूर

नई देहली
१६ अप्रैल १९५५

एन० डी० कपूर एण्ड कम्पनी
चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट्स

(ह०) रघुनाथप्रसाद पाठक
कार्यालयाध्यक्ष

(ह०) नरेशचन्द्र
एकाउन्टेन्ट

(ह०) बालमुकन्द आहूजा
कोषाध्यक्ष

(ह०) कविराज हरनामदास
मन्त्री

(ह०) ध्रुवानन्द सरस्वती
प्रधान

* आर्य समाज का भावी कार्यक्रम *

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली की साधारण सभा दिनांक १-५-५५ द्वारा निर्धारित तथा प्रसारित आर्य समाज का भावी कार्यक्रम

[आर्य जनता की निरन्तर मांग पर यह कार्यक्रम पुनः प्रकाशित किया जाता है-सम्पादक]

(१) आन्तरिक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा समस्त प्रदेशीय प्रतिनिधि सभाओं व उनसे सम्बन्धित आर्य समाजों का ध्यान निम्न लिखित बातों की ओर आकर्षित करती है और आदेश देती है कि अपनी भावी कार्य प्रणाली में उनका ध्यान रखें।

१—वेदी की पवित्रता आवश्यक है अतः आर्य समाज की वेदी से मुख्यतः महर्षि दयानन्द के सिद्धांतों का ही प्रचार हो अन्य किसी संस्था का नहीं।

ख—आर्य समाज की वेदी से सिद्धांत विरोधी बात न कही जाये और सुयोग्य उपदेशकों को ही वेदी पर बैठने की प्रमुखता दी जाये।

ग—आर्य समाज मन्दिर में वा आर्य समाज की किसी शिक्षा संस्था या इमारत में नाटक आदि खेल तमाशे कदापि न करने दिये जायें।

२—आर्य समाज की वेदी से सत्संगों और सार्वजनिक सभाओं में प्रबन्ध सम्बन्धी आलोचनायें न की जायें। प्रबन्ध सम्बन्धी त्रुटियों पर विचार आवश्यक हो तो त्रुटियां अन्तरंग सभा के सम्मुख प्रस्तुत की जाया करें।

३—साप्ताहिक सत्संगों को रोचक बनाने के लिये पूर्व से निश्चित कार्यक्रम के अनुसार कार्य किया जावे।

४—प्रचार की सफलता के लिये आवश्यक है कि आर्य समाज का प्रत्येक सदस्य अपने परिवार में आर्य सामाजिक सिद्धांतों को प्रविष्ट करें और इस प्रयोजन के लिये परिवार सहित साप्ताहिक सत्संगों में सम्मिलित हुआ करें।

५—जन्म की जातपात को समाप्त करने के लिये आर्य समाज की वेदी से तीव्र आन्दोलन किया जाये।

(ख) अपना व अपने सन्तान का गुण कर्मानुसार विवाह करने वाले आर्य सदस्यों का प्रत्येक समाज में नियमित लेखा रखा जाये।

(ग) आर्य समाज के अधिकारियों की योग्यता का एक आधार वैदिक वर्ण व्यवस्था का क्रियात्मक किया जाना भी माना जाया करे।

(२) जन सम्पर्क

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा समस्त प्रदेशीय प्रतिनिधि सभाओं व उनसे सम्बन्धित आर्य संस्थाओं का ध्यान निम्नलिखित आवश्यक कार्यक्रम की ओर आकर्षित करती है :—

१—गोरक्षा का आन्दोलन तीव्रगति से प्रचलित रखा जाये और गोपालन का क्रियात्मक प्रचार किया जाये।

२—ईसाइयों के अराष्ट्रीय तथा वैदिक संस्कृति विरोधी प्रचार से भारतीय जनों की रक्षार्थ क्रियात्मक उपाय प्रयोग में लाये जायें।

शुद्धि आन्दोलन को तीव्र किया जाये।

४—चरित्र निर्माण सम्बन्धी आन्दोलन अधिक तीव्रता से संचालित किया जाये जिससे देश में से भ्रष्टाचार व अन्य बुराइयां दूर हो सकें और स्वराज्य प्राप्ति के साथ साथ सुराज भी हो सके। इस आंदोलन को सफल बनाने के लिये आर्य सभासदों व

आर्य कार्यकर्ताओं को इस कार्य पर विशेष बल देना चाहिये और आर्य समाजों से यह भी अनुरोध है कि आर्य सभासदों की सूची बनाते समय सदाचार सम्बन्धी नियमों पर विशेष ध्यान रखें।

५—विद्यार्थियों में अनुशासन की भावना उत्पन्न करने पर बल दिया जाये।

६—सह-शिक्षा (बालक बालिकाओं का साथ २ शिक्षा प्राप्त करना) ऋषि दयानन्द द्वारा प्रदर्शित वैदिक मर्यादाओं की विरोधी है अतः सह शिक्षा आर्य संस्थाओं में प्रचलित न की जाये। आर्य पुरुषों से अनुरोध है कि वे बालकों को सह शिक्षा वाले विद्यालयों में प्रविष्ट न करें।

७-आर्य शिक्षा संस्थाओं में जो आर्यत्व का अभाव देख पड़ता है उसे दूर करके उन्हें वास्तविक आर्य संस्थाओं का रूप दिया जाये।

८-आर्य समाज की शिक्षा संस्थाओं तथा गुरुकुलों, महाविद्यालयों, स्कूलों और कालेजों आदि में पाठ्यक्रम, परीक्षाशैली आदि की दृष्टि से एकरूपता लाने के लिये पग उठाया जाये और इस कार्य की एक विशेष योजना तैयार की जाये।

(३) प्रचार विधि

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा प्रदेशीय सभाओं का ध्यान वैदिक धर्म प्रचार की निम्न बातों की ओर आकर्षित किया जाता है :-

(१) साहित्य निर्माण तथा प्रकाशन

१-वेदों की शिक्षा को अधिक सरल प्रभावोत्पादक और मनोवैज्ञानिक रूप देने वाले वैदिक साहित्य का प्रकाशन किया जाये।

२-आर्य सिद्धांतों की पुष्टि में तुलनात्मक दृष्टि से ग्रन्थ तैयार कराये जायें।

वैदिक अनुसंधान विभाग की स्थापना की जावे।

(२) प्रचारकों द्वारा प्रचार

१—प्रचारकों को नियुक्त करते समय उनके सिद्धान्त ज्ञान और व्यक्तिगत चरित्र पर विशेष ध्यान रखा जाये।

२—प्रचारकों का ध्यान आकर्षित किया जाये कि वे वेदी से वैदिक सिद्धान्तों के विरुद्ध प्रचार न करें।

३—उत्सवों की रूपरेखा इस प्रकार की बनाई जाये कि उनका रूप भीड़ भड़क्कों और मेलों का न रह कर गम्भीर प्रचार का हो।

४—आर्य समाज के सन्देश को ग्राम्य जनता तक पहुँचाने के लिये ग्राम प्रचार की ओर विशेष ध्यान दिया जाये।

५—ग्रामों में वैदिक धर्म प्रचार के लिये नियमित योजनानुसार कार्य प्रारम्भ कर दिया जाये।

(३) सम्मेलनों द्वारा

सार्वदेशिक सभा की ओर से वैदिक संस्कृति सम्मेलन किया जाये जिसमें ऋषि दयानन्द द्वारा प्रतिपादिक वैदिक संस्कृति के स्वरूप का निरूपण किया जाये और वर्तमान काल में अनेक विद्वानों द्वारा आर्य समाज सिद्धांत विरोधी वैदिक साहित्य की व्याख्याओं का निराकरण करने की व्यवस्था की जाये।

(४) विदेश प्रचार

विदेश प्रचार का कार्य नियमित रूप से हाथ में लिया जाकर आगे बढ़ाया जाये।

१—निश्चय हुआ कि यह कार्यक्रम भ्रमण पत्रिका द्वारा आर्य समाजों को प्रेषित किया जाये।

२—प्रदेशीय सभाओं, आर्य समाजों और उपदेशकों को प्रेरणा की जाये कि इस कार्यक्रम को विशेषरूप से क्रियान्वित करें और इसकी प्रगति का नियमित विवरण प्रदेशीय व सार्वदेशिक सभाओं के कार्यालयों में रखा जाये।

सार्वदेशिक सभा

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली की अन्तरंग सभा दिनांक ५।६।५५ की कार्यवाही

१—गताधिवेशन की कार्यवाही प्रस्तुत होकर सम्पुष्ट हुई।

२—विज्ञापन का विषय सं० २ आर्य समाज के प्रचारकों के लिये निर्देश पत्र बनाने का विषय प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि सभा मन्त्री सभा प्रधान के परामर्श से निर्देश-पत्र बनाकर उसे प्रचारित करादें।

३—विज्ञापन का विषय सं० ३ गाजियाबाद की भूमि में प्रचार केन्द्र बनाने की स्वीकृति का विषय प्रस्तुत होकर गाजियाबाद भूमि उपसमिति की ४-६-५५ की बैठक का निम्न लिखित निश्चय पढ़ा गया।—

'निश्चय हुआ कि अन्तरंग सभा से यह अनुमति प्राप्त करली जाय कि आवश्यक व्यवस्था (नकशे इत्यादि की) हो जाने पर ईसाई प्रचार निरोध समिति के स्थान में गाजियाबाद आर्य नगर उपसमिति सेवा केन्द्र का निर्माण आरम्भ करादे।'

निश्चय हुआ कि सेवा केन्द्र का निर्माण कार्य शीघ्र से शीघ्र आरम्भ किया जावे और बजट में दी हुई १५०००) तक की राशि इस कार्य में व्यय की जाये।

४—विज्ञापन का विषय सं० ४ धर्मार्य सभा के नियम संशोधनार्थ नियुक्त उपसमिति की १३।२।५५ की बैठक की रिपोर्ट निम्न प्रकार प्रस्तुत होकर पढ़ीगई:—

'धर्मार्य सभा के संशोधित नियमों के निरीक्षण एवं आवश्यकतानुसार संशोधन का विषय प्रस्तुत हुआ। श्रीयुत पं० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति का ३।१०।५५ का पत्र पढा गया। उस पत्र में दिये सुझावों के सम्बन्ध में श्रीयुत बा० कालीचरण जी आर्य, श्रीयुत कविराज हरनामदास जी तथा लाला चरण दास जी पुरी के स्वीकृति सूचक नोट भी पढे गये। निश्चय हुआ:—

(१) वर्तमान धर्मार्य सभा को निर्वाचक मंडल माना जाये।

(२) ७ सदस्यों की धर्मार्य सभा बनाई जाये जिसके निर्णय अन्तिम हुआ करें।

(३) इस सभा की बैठकों का मार्ग व्यय सार्वदेशिक सभा दिया करे।

निश्चय हुआ कि रिपोर्ट स्वीकार की जाये और रिपोर्ट में अंकित सुझावों के अनुसार नियमों का संशोधन और धर्मार्य सभा का नव निर्वाचन शीघ्र से शीघ्र करा दिया जाये।

५—विज्ञापन का विषय सं० ५ आर्य समाज कलकत्ता (१९ कार्नवालिस स्ट्रीट) के २८।४।५५ के पत्र पर विचार का विषय प्रस्तुत होकर पत्र पढा गया। आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल के प्रधान का तार दिनांक ३०।५।५५ का भी पढा गया। निश्चय हुआ कि आर्य समाज कलकत्ता को स्वेच्छया आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल से अपना सम्बन्ध विच्छेद करने का अधिकार है या नहीं इस विषय पर बंगाल सभा के निर्देशानुसार २ मास के लिये विचार स्थगित रखा जाये।

६—विज्ञापन का विषय सं० ६ आर्य प्रनिनिधि सभा बंगाल की निम्न लिखित मांगों पर (उक्त सभा का २४।४।५५ का पत्र) विचार का विषय प्रस्तुत हुआ।

(१) बिलोनिया केन्द्र को सार्वदेशिक सभा अपना दायित्व मानकर उसको चलाये और ४००) मासिक उक्त सभा को इस काम के लिए देती रहे।

(२) जनरल रिलीफ फंड में बंगाल रिलीफ फंड का जितना धन परिवर्तित किया गया है वह वहां से निकालकर पूर्ववत् बंगाल रिलीफ फंड के नाम से जमा किया जाये।

निश्चय हुआ कि जनरल रिलीफ फंड के वर्तमान ५७६५१) में से ५००००) पचास हजार रुपया इसी निधि में रहने दिया जाये और शेष ७६५१) में से

वर्ष के लिए १००) मासिक त्रिपुरा केन्द्र की सहायतार्थ दिये जायें।

६—विज्ञापन का विषय सं० ७ सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड कम्पनी को भवन निर्माणार्थ सार्वदेशिक सभा से १५०००) पन्द्रह हजार रुपया मात्र ऋण दिये जाने के सम्बन्ध में श्रीयुत लाला हरशरण दास जी का १३।४।५५ का पत्र प्रस्तुत होकर पढा गया। धन विनियोग उपसमिति ४।६।५५ की बैठक का निम्न लिखित निश्चय भी पढा गया:—

'श्रीयुत लाला हरशरण दास जी का पत्र पेश हुआ। विचार हुआ। निश्चय हुआ कि इस विषय पर विचार करने के लिए आवश्यक है कि सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड का नियमित प्रस्ताव प्राप्त हो। अतः उक्त प्रस्ताव के प्राप्त हो जाने पर इस विषय में विचार किया जाये।'

२ (ख) निश्चय हुआ कि श्रीयुत लाला राम गोपाल जी सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड के लिये सभा के प्रतिनिधि हों। सभा यह आशा रखती है कि सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रतिनिधि को अपने बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स का सदस्य निर्वाचित करेंगे।

८—विज्ञापन का विषय सं० ८ श्री दयानन्द पुरस्कार समिति के एक सदस्य के निर्वाचन का विषय प्रस्तुत हुआ। निम्नलिखित ६ सदस्यों में से १ सदस्य को हटाने के लिए ६ नामों की पर्चियां डाली गई और उसके परिणाम स्वरूप श्रीयुत पं० बुद्धदेव जी का नाम हटाया गया और पुनः सर्व सम्मति से पं० बुद्धदेव जी सदस्य निर्वाचित हुए।

६ नाम—

१—श्रीयुत पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय
२— ,, ,, इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
३— ,, ,, शिव शंकर जी गौड
४— ,, ,, बुद्ध देव जी विद्यालंकार
५— ,, ,, रामचन्द्र जी देहलवी
६— ,, ,, स्वामी आत्मानन्द जी महाराज

९—विज्ञापन का विषय सं० ९--परोपकारिणी सभा की वर्तमान स्थिति पर विचार का विषय प्रस्तुत होकर परोपकारिणी सभा के साथ इस सम्बन्ध में अब तक का हुआ कार्यालय का पत्र व्यवहार पढा गया। निश्चय हुआ कि सभा प्रधान किसी महानुभाव को परोपकारिणी सभा में भेजकर वहां की सब वस्तुओं, ऋषि कृत ग्रन्थों की हस्तलिपियों तथा उनके छोड़े हुए निजी सामान की सूची मंगा लें। यदि सूची बनी हुई न हो तो परोपकारिणी सभा के मंत्री की सहायता से सूची बनवाने का प्रबन्ध करें।

१०—विज्ञापन का विषय सं० १० श्री सत्यपाल जी स्नातक सभा उपदेशक को स्थिर करने का विषय प्रस्तुत होकर श्री पं० सत्यपाल जी का १८।१२।५४ का प्रार्थना पत्र पढा गया। कार्यालय का ४।३।५५ का नोट भी पढा गया। निश्चय हुआ कि श्रीयुत स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज की मदरास भ्रमण की रिपोर्ट प्राप्त होने पर इस विषय पर विचार किया जाये।

११—विशेष रूप से सभा प्रधान की आज्ञा से श्रीयुत घनश्याम सिंह जी गुप्त का २१।५।५५ का पत्र पढा गया। निश्चय हुआ कि यह सभा इस प्रस्ताव से तो सहमत है कि आर्यसमाज के कार्य को प्रबल बनाने के लिए आर्यजनों का परस्पर परामर्श आवश्यक है परन्तु जब तक कोई सुझाव सामने न हो तबतक परामर्श से अधिक लाभ न होगा। श्रीयुत गुप्त जी से निवेदन किया जाये कि वे अपने सुझावों को लेखबद्ध करके भेज दें ताकि उनपर लोकमत का संग्रह किया जा सके और फिर उन्हें आर्य महा सम्मेलन के आगामी अधिवेशन में विचारार्थ रखा जाये।

१२—विशेषरूप से श्रीयुत पं० रुचि राम जी का २२।५।५५ का प्रार्थना पत्र प्रस्तुत होकर पढा गया। निश्चय हुआ कि उन्हें सम्प्रति ६ मास के लिए १००) मासिक पर ईसाई प्रचार निरोध कार्यार्थ सभा में रखा जाये।

सभा मन्त्री—कालीचरण आर्य

धर्मार्य सभा के चुनाव सम्बन्धी सूचना

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा, श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली के पदाधिकारियों और अन्तरंग सदस्यों का निर्वाचन आगामी तीन वर्षों के लिये निम्न प्रकार हुआ :—

१—प्रधान—श्रीयुत स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती, वैदिक आश्रम, यमुनानगर (अम्बाला)

२—उपप्रधान—श्रीयुत पं० बुद्धदेव विद्यालंकार प्रभात आश्रम, बरेली।

३—उपप्रधान मन्त्री—श्रीयुत आचार्य विश्वश्रवा: जी, वेद मन्दिर, बरेली।

४—अन्तरंग सदस्य—श्रीयुत स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती (राजगुरु) साधु आश्रम, हरदुआगंज (अलीगढ)

५—अंतरंग सदस्य—श्रीयुत पं० प्रियव्रत जी वेद वाचस्पति, आचार्य गुरुकुल कांगड़ी।

६— ,, ,,—श्रीयुत पं० धर्मपाल जी विद्यालंकार, अधिष्ठाता, गुरुकुल कांगड़ी।

७— ,, ,,—श्रीयुत स्वामी वेदानन्द तीर्थ अध्यक्ष विरजानन्द वैदिक संस्थान, छोटा खेड़ा (देहली)

८— ,, ,,—श्रीयुत पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड, आनन्द कुटीर, ज्वालापुर

९— ,, ,,—श्रीयुत भगवद्दत्तजी बी.ए. रिसर्च स्कालर, अध्यक्ष भारतीय अनुसन्धान संस्थान, ३ ४ ईस्ट पटेल नगर, देहली।

१०— ,, ,,—श्रीयुत आचार्य भद्रसेन जी वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

११— ,, ,,—श्रीयुत आचार्य रामानन्द जी शास्त्री, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार, पटना।

१२— ,, ,,—श्रीयुत प्रो० भीमसेन जी शास्त्री एम०ए०एम०ओ०एल० लोहिया कालेज, चूरू (राजस्थान)

१३— ,, ,,—श्रीयुत पं० हरिदत्त जी शास्त्री वेदान्तव्याकरण युर्वेदाचार्य, एकापशतीर्थ, एम०ए०, अध्यक्ष संस्कृत विभाग डी० ए० वी० कालेज।

१४— ,, ,,—श्रीयुत पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु प्रधान रामलाल कपूर ट्रस्ट, अजमतगढ़ पैलेस, बनारस।

१५— ,, ,,—श्रीयुत पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक व्यवस्थापक वेदवाणी, रामलाल कपूर ट्रस्ट, नई सड़क देहली।

आर्य वर की आवश्यकता

एक २० वर्षीय प्रभाकर तथा प्राज्ञ पास सुशील, स्वस्थ तथा गृह-कार्यों में निपुण आर्य कन्या के लिए वर की आवश्यकता है। पत्र-व्यवहार सावदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ६ द्वारा करें।

मन्त्री

आवश्यक चसूना

सत्यार्थ प्रकाश [स्थूलाक्षर] छपना आरम्भ

सत्यार्थ प्रकाश के स्थूलाक्षरों वाले संस्करण जिसके लिए स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी उद्योग कर रहे थे, छपने के लिए प्रेस में दे दिया गया है। जिन सज्जनों को लेना हो, वे अभी से १५) रुपये भेज दें। छपने के पश्चात् यह किसी भी मूल्य में न मिल सकेगा। परिमित प्रतियां ही छपाई जा रही हैं। मूल्य भेजने का पता—

स्वामी वेदानन्द तीर्थ
अध्यक्ष
विरजानन्द वैदिक संस्थान,
पो० खेड़ा खर्द (देहली)

एक मास तक श्रावणी-वेद सप्ताह-उपलक्ष्य में रियायती मूल्य में पुस्तकें

निम्न पुस्तकों में से १०) रुपये से अधिक मंगाने वालों को २५) सैंकड़ा कमीशन मिलेगा।
५०) से अधिक मंगाने पर कमीशन तथा रेल भाड़ा भी माफ चौथाई मूल्य अग्रिम भेजें।

- बाल्मीकि रामायण भाषा टीका १२)
- दयानन्द ग्रंथ संग्रह ४॥)
- आठ उपनिषदों का आर्य भाष्य ६)
- छान्दोग्य उपनिषद् २।)
- श्वेताश्वतरोपनिषद् १)
- तत्वज्ञान (आनन्द स्वामी) ३)
- प्रभुदर्शन ,, २॥)
- आनन्द गायत्री कथा ,, ॥)
- ईश्वरीय नियम ॥=)
- कर्तव्य दर्पण (मोटे अक्षर) ।॥=)
- वैदिक सन्ध्या रहस्य ।=)
- आर्य सिद्धांत प्रदीप १।)
- गृहस्थाश्रम ॥=)
- सामाजिक पद्धतियां ।=)
- दयानन्द चित्रावली २।)
- कल्याणमार्ग का पथिक
- स्वामी श्रद्धानन्द की आत्म-कथा २)
- संस्कार विधि विमर्श
- संस्कार विधि की व्याख्या ३)
- आर्य समाज का इतिहास १।=)
- ओंकार निर्णय १॥)
- वैदिक प्रार्थना १॥)
- योगासन (सचित्र) १॥)
- वैदिक सिद्धांतों पर बहिनों की बातें १।)
- संध्या विनय ॥)
- प्रार्थना प्रदीप ॥)
- आर्य समाज क्या है ? ॥)
- वीरबल की हाजिर जवाबी १)
- भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक ।)
- ओ३म् आर्य नमस्ते ॥)
- यवन मत समीक्षा १॥)
- वेद परिचय (स्वा० वेदानन्द) ।=)
- गो रक्षा परम कर्तव्य, गो हत्या महा पाप, (गोभक्षकों के वेदों पर किये मिथ्या आक्षेपों के उत्तर) ॥)
- नास्तिकवाद ॥)
- ब्रह्मचर्य जीवन और वीर्य नाश मृत्यु ।=)
- सत्यार्थ प्रकाश शंका समाधान ।)
- स्वामी दयानन्द और वेद ।)
- गुरुधाम एकांकी नाटक ॥)
- अनुराग रत्न (नाथूराम शंकर शर्मा) २॥)
- गीत श्रद्धांजलि १।=)
- सत्य हरिश्चन्द्र नाटक १)

प्रचार-योग्य आर्य विद्वानों के लिखे ट्रैक्ट

मूल्य -) प्रति, तथा ४) रुपया सैंकड़ा, ३५) रुपया हजार

१ मनुष्य बन, २ गायत्री माता, ३ ईश्वर सिद्धि, ४ आस्तिक नास्तिक संवाद, ५ पितृ श्राद्ध विचार, ६ सुख का साधन, ७ ईश्वरोपासना, ८ कल्याणी बन, ९ आर्यों का आदि देश, १० धर्म और अधर्म, ११ स्वामी श्रद्धानन्द, १२ तत्त्ववेत्ता दयानन्द, १३ पण्डित लेखराम, १४ सीता माता, १५ गो माता, १६ दयानन्द दिग्विजय, १७ चोटी का महत्त्व, १८ गुरु विरजानन्द, १९ मांस खाना छोड़ दो, २० मर्यादा पुरुषोत्तम राम, २१ देशसुधार-होली, २२ मूर्तिपूजा विचार, २३ भक्ति के लाभ, २४ आर्यसमाज के उद्देश्य, २५ वेद माता, २६ श्रद्धा माता, २७ धरती माता, २८ धर्म की रक्षा करो, २९ वैदिक संध्या, ३० हवन मन्त्र, ३१ ऋषि कृत वेदभाष्य का महत्त्व, ३२ गोपाल दयानन्द, ३३ भक्तिवाद की रूपरेखा, ३४ वैदिक भक्तिवाद, ३५ अंग्रेजी शिक्षा से हानि, ३६ सत्य की महिमा, ३७ आर्यसमाज की उन्नति का साधन, ३८ श्यामाप्रसाद मुखर्जी, ३९ वैदिक काल में तोप बंदूक, ४० पतिव्रत धर्म, ४१ ब्राह्मण समाज और मूर्तिपूजा, ४२ ईश्वरोपासक दयानन्द, ४३ ईश्वरावतार, ४४ महात्मा कृष्ण, ४५ ईसाईयों का भयंकर षडयन्त्र, ४६ सामाजिक व्यवहार, ४७ शिक्षा का उद्देश्य, ४८ ब्रह्मचर्य, ४९ वर्ण व्यवस्था, ५० कर्म व्यवस्था, ५१ वेद ज्ञान, ५२ तुलसी (रामायण) और आर्यसमाज, ५३ सत्य की खोज, ५४ मुर्दा क्यों जलावें, ५५ दयानन्द का उद्देश्य, ५६ दयानन्द और उनका लक्ष्य, ५७ ब्राह्मण समाज और मृतक श्राद्ध, ५८ श्रेय और प्रेय, ५९ सच्ची पूजा

सब प्रकार की पुस्तकें मिलने का पता—गोबिन्दराम हासानन्द, नई सड़क, देहली।

आवश्यकता है

आर्य प्रतिनिधि सभा फीजी सूवा के मन्त्री महोदय ने अपने स्कूलों के लिये मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल कांगड़ी से अध्यापक भेजने की निम्न प्रकार मांग की है:—

आर्य प्रतिनिधि सभा, फीजी के अन्तर्गत कुछ हाई स्कूलज़ हैं जहां कैम्ब्रज की सीनियर परीक्षाओं के लिये विद्यार्थी तैयार किये जाते हैं। इन में गणित, भूगोल, इतिहास, अंग्रेजी, हिन्दी आदि २ विषयों के लिये अध्यापकों की आवश्यकता है जो आप के यहां स्नातक हो। अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान हो और साथ साथ बी० टी० भी हो। यदि स्नातक न हों तो बी० ए० बी० टी० अथवा एल० टी० हों। आने वाले अध्यापकों के लिये निम्न बातें होंगी :—

१. आने जाने का भाड़ा आदि
२. ५ वर्षों तक काम करना होगा।
३. वेतन मासिक ४००)—३०)—६००)
४. रहने के लिये साधारण घर। घर न देने की दशा में ५०) रुपये मासिक घर का अलाऊन्स।

नोट—'यहां सैकैन्डरी स्कूलों की शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी है अतः वे ही सज्जन प्रार्थनापत्र भेजें जो अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान रखते हों और धारा प्रवाह अंग्रेजी बोल सकते हों।"

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली ७ में छपकर
श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक पब्लिशर द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ६ से प्रकाशित

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

ऋग्वेद

यजुर्वेद

वर्ष ३०

मूल्य स्वदेश ४

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ।।)

अंक ६

भाद्रपद २०

अगस्त १६

महर्षि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज

सम्पादक—

सभा मन्त्री

सहायक सम्पादक—

श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषयानुक्रमणिका

गुमशुदा की खोज

गोंडा (उत्तरप्रदेश) का एक नवयुवक जिसका नाम गोबिन्द भैयालाल (गोबिन्दराम) है। १४ जून १९५५ ई० से लापता है। युवक की आयु ३२ वर्ष की है। रंग सांवला है और इकहरे बदन का है। युवक की विधवा माता राजरानी और पत्नी दोनों बड़ी दुःखी हैं। जिस किसी सज्जन को उसका पता लगे वह उसे गोंडा पहुँचा दें वा मन्त्री आर्य समाज गोंडा को सूचित करने की कृपा करें।

कालीचरण आर्य
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली।

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष ३० } अगस्त १९५५, भाद्रपद २०१२ वि०, दयानन्दाब्द १३१ { अङ्क ६

वैदिक प्रार्थना

यो नः पिता जनिता यो विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा ।
यो देवानां नामधा एक एव तꣳ सम्प्रश्नं भुवना यन्त्यन्या ॥

य० १७ । २७ ॥

व्याख्यान हे मनुष्यो ! जो अपना पिता (नित्य पालन करने वाला) जनिता (जनक) उत्पादक "विधाता" सब मोक्षसुखादि कामों का विधायक, (सिद्धिकर्त्ता) 'विश्वा" सब भुवन लोकलोकान्तर धाम अर्थात् स्थिति के स्थानों को यथावत् जाननेवाला सब जातमात्र भूतों में विद्यमान है। जो दिव्य सूर्यादिलोक तथा इन्द्रियादि और विद्वानों का नाम व्यवस्थादि करनेवाला एक अद्वितीय वही है अन्य कोई नहीं। वही स्वामी और पितादि हम लोगों का है इसमें शंका नहीं रखनी। तथा उसी परमात्मा के सम्यक् प्रश्नोत्तर करने में विद्वान् वेदादि शास्त्र और प्राणीमात्र प्राप्त हो रहे हैं। क्योंकि सब पुरुषार्थ यही है कि परमात्मा, उसकी आज्ञा और उसके रचे जगत् का यथार्थ से निश्चय (ज्ञान) करना उसी से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चार प्रकार के पुरुषार्थ के फलों की सिद्धि होती है अन्यथा नहीं। इस हेतु से तन, मन, धन और आत्मा इनसे प्रयत्नपूर्वक ईश्वर के साहाय्य से सब मनुष्यों को धर्मादि पदार्थों की यथावत् सिद्धि अवश्य करनी चाहिये ॥४२॥

(आर्याभिविनय से)

ईसाई मत के प्रचार का निरोध कैसे हो !

इसे आर्य समाज की सजीवता का चिन्ह समझना चाहिये कि जब भी देश के सामने कोई महत्वपूर्ण समस्या खड़ी हो जाती है तब आर्य समाज के सभासद सचेत होकर उसके हल करने के उपाय सोचने लगते हैं और प्रायः समाज का सारा शासन-यन्त्र अपने कल पुरजों के साथ हिलने लगता है। जब से यह प्रगट हुआ है कि देश के कई भागों में ईसाई मत के गहरे प्रचार ने राष्ट्र के लिये संकट से भरी हुई परिस्थिति पैदा करदी है तब से आर्य समाज का विशेष ध्यान इस ओर खिंच गया है। हैदराबाद के आर्य महासम्मेलन में इस विषय में जो प्रस्ताव स्वीकार किये गये थे वह इस बात के सूचक थे कि आर्य समाज जाग उठा है और वह आर्य जाति के अंगों में लगे हुए इस पुराने नासूर को दूर कर देना चाहता है।

कुछ ईसाई और मुसलमान प्रचारकों और समाचार पत्रों ने आर्य समाज के ईसाई प्रचार विरोधी आन्दोलन को इस रूप में प्रकट किया है कि आर्य समाज जैसे पहले मुसलमानों का शत्रु था अब ईसाईयों का शत्रु है। सच यह है कि आर्य समाज किसी अन्य मतानुयायी का शत्रु नहीं। वह आर्यजाति का पहरेदार है। जहां कहीं उसे अनुभव होगा कि आर्य जाति के अंग कट रहे हैं वहां वह आत्मरक्षा के लिये अवश्य पहुँचेगा। यह बात सर्वथा स्पष्ट हो चुकी है कि गत २०० वर्षों में हमारे प्रमाद से लाभ उठाकर आर्य जाति के बहुत से पिछड़े हुए वर्गों को चुपचाप ईसाई बनाकर राष्ट्र से अलग कर दिया है। वह वर्ग सोचसमझकर या गुण दोष विवेचन करके ईसाई नहीं बने अपितु ईसाई राज्य के दबदबे से लाभ उठाकर अन्य उपायों से ईसाई बनाये गये। उनके सामने आर्य धर्म के विशुद्ध स्वरूप को रखना या उन्हें अपने धर्म में वापिस आने के लिये प्रेरणा करना शत्रुता का सूचक नहीं है। आर्य समाज यही चाहता है कि वह आर्य जाति के उन वर्गों को समझा बुझाकर और प्रेम से अपने अन्दर वापिस बुलाये जो भय, लोभ या भ्रम में पड़कर अपने धर्म को छोड़ बैठे हैं। यदि न्याय बुद्धि से विचार किया जाय तो आर्य समाज के ईसाई मत प्रचार निरोध सम्बन्धी आन्दोलन को दोषी नहीं ठहराया जा सकता।

वे ईसाई कैसे बने !

यह दुर्भाग्य और दुख की बात है कि इस रोग का पता तब चल रहा है जब यह राष्ट्र शरीर के कई अंगों में बुरी तरह फैल चुका है। रोग फैलता गया और हम सोये रहे। जब सचेत हुए तो देखा कि रोग मांस, मज्जा और धमनियों तक में पहुंच चुका है। जो भारत वासी ईसाई बनकर भी भारतवासी बने रहते हैं, आर्य जाति से अलग होकर भी अपने को आर्यजाति का अंग समझते हैं उनसे तो हमें इतना ही कहना है कि यदि वह वैदिक आर्य धर्म का पक्षपात हीन दृष्टि से अध्ययन करेंगे तो स्वयं उनकी अन्तरात्मा उन्हें अपने धर्म की ओर पुकारने लगेगी परन्तु जो अशिक्षित भारतवासी केवल भ्रान्ति में पड़ कर राष्ट्रीयता तक छोड़ बैठे हैं, उनकी आंखें खोलने के लिये भागीरथ प्रयत्न करने की आवश्यकता है।

आर्य समाज क्या करना चाहता है ?

प्रश्न यह है कि इस प्रयत्न का क्या रूप हो ? जब तक रोग का कारण भली प्रकार न जान लिया जाय तब तक उसका उपाय नहीं हो सकता। ईसाई मत के प्रचार को रोकने की योजना बनाने से पहले यह जान लेना आवश्यक है कि उसे अब तक जो असाधारण सफलता मिली उसके क्या कारण हैं ?

ईसाईयों के प्रचार के संबन्ध में दो बातें निर्विवाद रूप से कही जा सकती है। एक तो यह कि उन्होंने अपने मत के प्रचार के सम्बन्ध में अखबारी प्रोपेगन्डा नहीं किया। जो काम किया चुपचाप किया। यही

कारण है कि वह आर्य जाति के इतने बड़े भाग को काट ले गये और हम लोगों की आंखें न खुलीं। ईसाई पादरियों के बारे में दूसरी निर्विवाद बात यह है कि उन्होंने कभी अन्य धर्मावलम्बियों के साथ संघर्ष को निमन्त्रण नहीं दिया। वे शास्त्रार्थों और मुबाहिसों से भागते रहे हैं। कारण यह है कि उन लोगों का भरोसा वाणी पर इतना नहीं है, जितना कर्म पर है। हमें प्रिय लगे या न लगे, यह तो मानना ही पड़ेगा कि ईसाई पादरी विदेश से भारत में केवल इसलिए आते हैं कि यहां की गरीब और पिछड़ी हुई जनता को ईसाई बनाये और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वह जीवन की अन्य इच्छाओं को छोड़-कर पहाड़ों और जङ्गलों में बसी हुई छोटी बड़ी बस्तियों में जमकर बैठ जाते हैं। उनके जीवन प्रचार के केन्द्रों में ही गल जाते हैं। यह माना कि वह धर्म प्रचार के जिन उपायों को काम में लाते हैं वह निर्दोष नहीं। हिन्दू जाति द्वारा परित्यक्त निर्धन और पिछड़े हुये लोगों को वह केवल समझा बुझाकर ही ईसाई नहीं बनाते अपितु भय और लोभ का भी प्रयोग करते हैं। तो भी इसमें सन्देह नहीं कि उनकी सफलता का मुख्य कारण यह है कि वे उन लोगों में रम जाते हैं और उनके रात दिन के साथी से बन जाते हैं, जिन्हें वे ईसाई बनाना चाहते हैं।

ईसाई मिशनरियों का दूसरा बड़ा साधन उनकी जन सेवा सम्बन्धी संस्थायें हैं। चिकित्सालय, शिक्षणा-लय और अनाथालयों द्वारा लोगों की सेवा करके वह उन्हें उपकृत कर देते हैं और इस तरह उनके हृदयों को जीतने में सफल हो जाते हैं। आसाम के पहाड़ों और जंगलों में और बिहार की अविकसित बस्तियों में जाकर देखें तो आपको गांव गांव में घर बना कर बैठे हुए यूरोपियन और अमेरिकन पादरी मिल जायेंगे। हमारा प्रचार रेल के साथ साथ होता है। परन्तु वह जङ्गली रास्तों में घोड़ों और बैल-गाड़ियों द्वारा घूम घूम कर प्रचार करते हैं। अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए जीवन अर्पण कर देने की और सेवा की यह भावना है जिसने ईसाइयों के प्रचार को सफलता प्रदान की है।

यदि अब हम ईसाइयों के सौ वर्षों के प्रचार-कार्य के प्रभाव को दूर करना चाहते हैं तो हमें अपनी प्रचार पद्धति में परिवर्त्तन करना चाहिए। हमें ईसाई मत प्रचार के निरोध के लिए उन उपायों को काम में लाना होगा जो उनके बनाये हुए गढ़ को तोड़ने में सफल हो सकें। ईसाई पादरियों का उत्तर देने के लिए रेलवे लाइन के साथ साथ प्रचार पर्याप्त नहीं है। और न केवल शास्त्रार्थों से काम चलेगा। मौखिक वाद-विवाद से श्रोताओं के हृदयों को अशान्त किया जा सकता है उनमें अपने धर्म अंकुर उत्पन्न नहीं किये जा सकते। धर्म के अंकुर तो तभी उत्पन्न किये जा सकते हैं जब हम जनता के हृदयों को जीत लें। इस प्रसङ्ग में मैं एक पत्र उद्धृत करता हूं जो बरेली से प्राप्त हुआ है। श्री वीरेन्द्र कुमार जी लिखते हैं:—

"सार्वदेशिक अथवा आपके निर्देशन में होने वाली शुद्धि-प्रचार सम्बन्धी गति विधि की जानकारी समय समय पर प्राप्त होती रहती है। बहुत समय से आपसे पत्र-व्यवहार की इच्छा थी। आज ऐसा अति आवश्यक समझकर ही कर रहा हूँ। आशा है आप विचार कर उत्तर अवश्य देंगे। बरेली, ईसाई मिशनरियों द्वारा प्रचार तथा उनके संगठन का एक बड़ा केन्द्र है वे अपनी पंचसाला योजना के अन्त-र्गत देहातों में बराबर गिरजे बनाते चले जा रहे हैं। पिछले काफी समय से इस सब प्रयत्न को रोकने का प्रयत्न किया है। कुछ सफलता मिली है। कर्मठ साथियों का सर्वथा अभाव है। आर्य भिक्षु जैसे साथियों को अन्न मिल जाने के बाद भी दूसरे प्रचार सम्बन्धी कार्यों में एक पैसे तक का सहयोग नहीं मिलता। कहीं कहीं तो इसे चुनाव स्टंट भी बनाया जा रहा है। ईसाई होने वाले बुद्धिवाद से संचालित नहीं होते, वहां भौतिक समस्यायें काम करती हैं। वहां शिक्षा, औषध, उद्योग आदि का सहारा लेकर हर तीस गांव के बीच एक सेवा-केन्द्र ऐसा बनाने की आवश्यकता है जहां हमारा मिशनरी ३६५ दिन बैठा

रहे—हिले नहीं। प्रचार करके शहरों में भाग आना अब काम नहीं देगा। भौतिकवाद से युद्ध में अध्यात्म वाद जीतेगा। ऐसे अध्यात्मवादी आर्य वीरों को जो शहरों का त्याग कर ग्रामों में जमने को तैयार हैं, उनको क्या आप सहयोग देंगे? सहयोग केवल अस्थाई समय के लिए चाहिए। आर्य वीरों में कुछ में Creative genius है। आप एक ही केन्द्र स्वावलम्बन के आधार पर बनवाने में सहयोग दें।"

वीरेन्द्र कुमार जी ने स्थिति का जो विश्लेषण किया है वह बहुत कुछ ठीक है। ईसाई-प्रचार निरोध की योजनायें बनाते हुए आर्य समाजों और प्रतिनिधि सभाओं को यह स्मरण रखना चाहिए क अब तक की हमारी प्रचलित विचार-पद्धति ईसाई प्रचारकों का उत्तर देने के लिए पर्याप्त नहीं है। यदि हम आर्य जाति के बिछुड़े हुए अंगों को फिर वापिस बुलाना चाहते हैं तो हमें उनके हृदयों को जीतना होगा, और हृदय केवल शब्दों से नहीं जीते जा सकते। इसके लिए निरन्तर सम्पर्क और सेवा की आवश्यकता है। —इन्द्र विद्यावाचस्पति

सार्वदेशिक सभा का स्वर्ण-जयन्ती महोत्सव

इसी अंक में अन्यत्र पाठक आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता श्री बाबू मदनमोहन सेठ का पत्र पढ़ेंगे। श्री सेठ जी ने उस पत्र में प्रस्ताव किया है कि १९५८ में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना को ५० वर्ष हो जायेंगे। इसलिए सभा का स्वर्ण जयन्ती उत्सव मनाया जाय और इस अवसर से लाभ उठा कर आर्य समाज के और सभा के कार्यों को पुष्टि देने वाली योजनायें कार्यान्वित की जायें। प्रस्ताव बहुत ही सामयिक और उपयुक्त है। प्रत्येक आर्य को उसका हृदय से समर्थन करना चाहिये। मेरा आर्य प्रतिनिधि सभाओं, आर्य समाजों तथा आर्य जनों से निवेदन है कि वह श्री सेठ जी के प्रस्ताव पर अपने मत प्रकाशित करें। यह प्रस्ताव अगस्त के अन्त में सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग के सामने विचारार्थ उपस्थित होगा। उससे पूर्व आर्य जनता को और आर्य संस्थाओं को इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट कर देने चाहियें। —इन्द्र विद्यावाचस्पति

सम्पादकीय टिप्पणियां

कादियानी मुसलमान नहीं हैं

लाहौर की यू० पी० आई० की ६ जून की 'बम्बई क्रानिकल' में प्रकाशित रिपोर्ट से विदित हुआ है कि कैम्बलपुर के डिस्ट्रिक्ट जज ने रावलपिंडी के सिविल जज के इस निर्णय को मान्यता प्रदान की है कि कादियानी लोग मुसलमान नहीं हैं, और इस्लामी शरीअत के अनुसार कादियानी स्त्री मुसलमान की पत्नी नहीं रह सकती।

यह फैसला कैप्टेन नजीरुद्दीन की पत्नी के प्रार्थना पत्र पर दिया गया है जिसमें हक मेहर की अदायगी की प्रार्थना की गई थी।

कैप्टेन और उमैतुल करीम के पारस्परिक सम्बन्ध खराब हो गये थे और देवी अपने मां बाप के पास चली गई थी।

नजीरुद्दीन ने इस आधार पर उमैतुल करीम को तलाक दिया कि वह कादियानी है

जिला जज ने कहा :—

१ मुसलमान मौलवी इस बात में सहमत हैं कि मुहम्मद साहब आखरी पैगम्बर थे। उनके बाद दूसरा पैगम्बर नहीं हो सकता।

२—मुसलमान मौलवी इस बात में भी सहमत हैं कि जो व्यक्ति यह नहीं मानता कि मुहम्मद आखरी पैगम्बर थे वह इस्लाम से बहिष्कृत है।

३—मुसलमान मौलवियों का यह भी फतवा है कि कादियानी लोग पैगम्बर को अन्तिम पैगम्बर नहीं मानते इसलिए वे मुसलमान नहीं हैं।

प्रश्न उठता है कि राष्ट्र संघ में पाकिस्तान की हिमायत करने वाले सर जफरुल्लाखां की क्या स्थिति होगी?

महत्वपूर्ण योजना

लगभग दो वर्ष हुए एक दिन भारतीय विदेश मन्त्रालय के एक अन्डर सेक्रेटरी महोदय से हमारी बातचीत हो रही थी। बातचीत के मध्य में आर्य समाज का प्रसंग छिड़ गया। उन्होंने प्रश्न किया कि

आर्य समाज की आय का मुख्य साधन क्या है ? जब उन्हें यह बताया गया कि आर्य समाज पूंजीपति समाज नहीं है, गुरुद्वारों, मन्दिरों एवं मठों की तरह बड़ी २ जायदादें और जागीरें इसके पास नहीं हैं और वह बिना पूर्व पूंजी के काम आरम्भ कर देता है और सर्व साधारण जनता के श्रद्धा पूर्ण दान के आधार पर बाद में उसे आर्थिक चिन्ता नहीं रहती तो वे इस कथन की सत्यता को मान गये। उन्होंने इस बात पर खेद प्रकट किया कि देश के विभाजन से पंजाब और सिन्ध में आर्यसमाज की बड़ी आर्थिक हानि हुई है। स्व० महात्मा हंसराज और स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की उन्होंने बड़ी श्रद्धा के साथ चर्चा की। उन्होंने अधिकांश भारतीय नवयुवकों और नवयुवतियों की अनुशासन हीनता, चरित्र हीनता, उच्छृङ्खलता और सब से बड़ी भारतीय ऋषियों, महात्माओं एवं महान् ग्रन्थोंकी अवज्ञा पूर्ण अनभिज्ञता की चर्चा करते हुए कहा कि देश का भविष्य अन्धकार-मय देख पड़ता है आज कल के नवयुवक यहां तक कि उनके अधीन काम करनेवाले अधिकांश नवयुवक कर्मचारी बड़े उत्तरदायित्व शून्य हैं। न जाने देश के कर्णधार इस सम्बन्ध में कम चिन्तित क्यों हैं ? उन्होंने अपना उदाहरण दिया और कहा मेरे २ लड़के हैं। दोनों कालेजों में पढ़ते हैं। वे एंग्लो इण्डियन गवर्नेस की देख रेख में रहे हैं। उन्हें सब प्रकार का बाह्य एटीकेट आता है। परन्तु मेरी पत्नी को सन्तोष नहीं रहा। मैं प्रायः उस असन्तोष की पर्वाह न करता था। एक दिन संयोगवश मैं एक लड़के से पूछ बैठा 'वेद क्या हैं और रामायण क्या है।' लड़के ने कहा 'वेद गड-रियों के गीत हैं और रामायण एक भाट की लिखी हुई किताब है।' इस उत्तर से मेरी आंखें खुल गईं। मैं चाहता हूं कि मैं एक संस्कृत अंग्रेजी के विद्वान् को नियुक्त करूं जो बच्चों को केवल आर्य संस्कृति के विशिष्ट ग्रन्थों, महानुभावों और उसके विशिष्ट तत्वों से बात चीत और कथा कहानी की शैली में परिचित करादें। इतना ही नहीं मैं उन पाठों में पास पड़ोस के बच्चों को भी शामिल किया चाहता हूँ। पंडित का व्यय मैं स्वयं उठाऊंगा।"

'सार्वदेशिक'के पाठकों को यह जान कर हर्ष होगा कि उन्होंने इस योजना को क्रियात्मक रूप दे दिया है। यह योजना स्वागत योग्य है। यदि आर्य समाजें तथा आर्य नरनारी इस योजना के अनुसार अपने२ यहां कार्य आरम्भ कर दें तो इसका बड़ा अच्छा फल सामने आ सकता है। व्याख्यानों और साहित्य का महत्व है परन्तु पारस्परिक बातचीत और कथा कहानी की शैली का अपना पृथक् महत्व है।

पुरुष तथा स्त्री समाज

एक सज्जन लिखते हैं :—

"यहां पर एक विवाद खड़ा हो गया है। आर्य समाज में कुछ लोगो का कहना है कि उपनियमों के अनुसार 'स्त्री आर्य समाज' नहीं खोला जा सकता। एक स्त्री समाज खुला था वह बन्द कर दिया गया।

स्थानीय आर्य समाज के अधिकारी राष्ट्रीय कार्य को आर्य समाज का विरोधी कार्य समझते हैं।"

आर्य समाज के वर्तमान उपनियमों में स्त्री समाज का कोई स्थान नहीं है। उपनियमों में स्त्री और पुरुष दोनों के सम्मिलित समाज की भावना पाई जाती है। यत्न यह होना चाहिये कि स्त्रियां पुरुष समाज में ही भाग लेवें और लोक-सेवा का कार्य सम्पादन करें। परन्तु यदि अनिवार्य स्थिति वश पृथक् रूप में कार्य करें तो उनके निर्माण और संचा-लन के लिए उपनियमों में कोई स्पष्ट प्रतिबन्ध भी नहीं है। वे खुल सकते हैं और आज कल अनेक स्त्री समाज देश में कार्य कर रहे हैं।

यदि कोई आर्य भाई, आर्य संस्कृति आर्य धर्म और आर्यसमाज के सिद्धान्तों एवं नीति की रक्षा करता हुआ देश सेवा में भाग लेता है तो वह ऐसा कर सकता है।

गोआ समस्या

पुर्तगाल और गोआ के शासक 'गोआ मुक्ति आंदोलन' को ईसाइयों के धार्मिक अधिकारों की रक्षाके आवरण में नृशंसता पूर्वक दबाने में व्यस्त है परन्तु

रोम के पोप ने पं० जवाहरलाल जी नेहरू के साथ रोम में हुई भेंट में यह स्पष्ट कर दिया है कि गोआ की वर्तमान समस्या विशुद्ध राजनैतिक है धार्मिक नहीं। इस स्पष्टीकरण से धर्म की आड़ में होने वाले राजनैतिक अन्याय और अत्याचार की कहानियों में एक ज्वलन्त उदाहरण जुड़ गया है। गोआ मुक्ति आन्दोलन में भाग लेने वाले सत्याग्रही वीरों के प्रति हमारी सहानुभूति है और उन पर अमानुषिक अत्याचार करने के लिये पुर्तगाल सरकार निष्पक्ष और सहृदय लोक मत के समक्ष तिरस्कृत एवं निन्दित है। प्रायः आर्य जन पूछते हैं कि क्या वे गोआ आन्दोलन में भाग ले सकते हैं? न केवल प्रत्येक आर्य, भारतवासी होने की हैसियत से सत्याग्रह में भाग लेनेमें स्वतन्त्र है अपितु यह उसका कर्तव्य है।

बाघू की समस्या

बाघू (मेरठ)की स्थिति गैर जिम्मेदार व्यक्तियों द्वारा निकृष्ट से निकृष्टतम न बन जाय इस पर विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है। यह प्रसन्नता की बात है कि वहां ईसाइयों के आपत्तिजनक प्रचार के निरो धार्थ आर्य समाज की शक्ति लगी हुई है और वह शान्ति पूर्ण ढंग से कार्य कर रही है परन्तु उस शक्ति का नियन्त्रण प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के हाथ में रहना चाहिये जिससे उसका अधिकाधिक अच्छा फल सामने आये और वह किसी अवांछनीय गलती की उत्तरदायिता से मुक्त रहे।

श्रीमती राजकुमारी अमृतकौर ने बाघू में अपने भाषण में समाज पर जो गन्दे एवं असत्य आक्षेप किये हैं उनका प्रतिवाद होना ही चाहिये। परन्तु क्षमा मांगने या त्यागपत्र की मांग करने में जल्दी न करके इस सम्बन्ध में सार्वदेशिक सभा तथा प्रदेशीय सभा के निर्देशों की प्रतीक्षा करनी चाहिये। समय आने पर उक्त सभायें इस विषय को अपने हाथ में लेकर जनता का मार्ग प्रदर्शन करेंगी।

आत्मिक शक्ति की विजय

प्रधान मंत्री श्रीयुत पं. ज्वाहर लाल जी का रूस में जो अभूतपूर्व भव्य स्वागत हुआ है उससे प्रत्येक स्वदेश प्रेमी का मस्तक अभिमान के साथ ऊंचा उठ सकता है। उनके स्वागत समारोह पर हम जितना हर्ष मनाएं कम है। पं. जी का स्वागत भारत वर्ष का स्वागत था। पं. जी के भव्य स्वागत का कारण जहाँ उनका महान् व्यक्तित्व है वहां उनके मिशन की पवित्रता और उनके इरादों की ईमानदारी मुख्य कारण है। वे कूटनीतिज्ञ नेता वा राजनीतिज्ञ के रूप में नहीं गए थे अपितु भारत के एक महान् नेता के रूप में संसार में व्याप्त अशान्ति और तनाव को कम करके शान्ति की संभावनाओं में वृद्धि करने के मिशन पर गए हुए थे। उन्होंने जैसा कि उनका स्वभाव है स्पष्ट रूप में अपनी यात्रा का उद्देश्य वही बताया था।

महान् से महान् घातक अस्त्र शस्त्रों के स्वामी राष्ट्र भी आज युद्ध के भय से त्रस्त और क्लान्त हैं और खुशी या मजबूरी से शान्ति का सन्देश सुनने तथा शान्ति स्थापित करने के लिये उत्सुक हैं। भारत का सैन्य बल नगण्य है, भारत का उन देशों की तुलना में आर्थिक प्रभाव भी शून्य वत् है फिर भी शक्ति सम्पन्न नेता और राजनीतिज्ञ भारत के शान्ति प्रयत्नों के सामने झुक रहे हैं। क्यों? इसीलिये कि वे निस्स्वार्थ हैं और विश्वहित से परिपूर्ण हैं। उन प्रयत्नों में आध्यात्मिकता की चमक और संबल है।

संसार व्यापी २ युद्धों के अनुभव ने यह बात स्पष्ट करदी है कि युद्ध से शान्ति की समस्याका हल सम्भव नहीं है। शान्ति की विजय युद्ध की विजय से कम गौरव शालिनी नहीं होती। पं. जवाहरलाल नेहरू शान्ति की विजय के लिए ही प्रयत्न शील हैं। शांति स्थापना के लिए सर्वस्व की बाजी लगाई जा सकती है परन्तु सत्य की नहीं। यह सिद्धान्त रक्षा पं. जी के शांति प्रयत्नों में पग पग परदेख पड़ती है यह हर्ष और गौरव का विषय है। अमेरिका के राष्ट्र पिता जार्ज वाशिंगटन ने कहा था कि युद्ध की तैयारी शान्ति रक्षा का सबसे अधिक प्रभावशाली उपाय है।

यह बात धर्म युद्धों के विषय में सही भले ही हो आज के अधर्म युद्धों के विषय में तो यह बात अभि-

शाप सिद्ध हुई है। अतः इस सिद्धान्त पर ध्यान न दिया जाना चाहिए इसी में विश्व का हित है।

अभिमान, ईर्ष्या, भय, महत्वाकांक्षा और क्षोभ शांति के शत्रु होते हैं। इन्हें दूर कर दो शान्ति व्याप्त हो जायगी।

समझौतों और पैक्टों से शान्ति स्थापित नहीं हुआ करती। अधर्म और पाप पर विजय प्राप्त करने पर ही अशान्ति पर विजय प्राप्त होती है।

महापुरुषों के मस्तिष्क

प्रसिद्ध विज्ञान वेत्ता स्व. प्रोफेसर आइन्स्टीन महोदय की प्रतिभा का रहस्य जानने के लिये उनके मस्तिष्क का परीक्षण किया जा रहा है। प्रश्न यह है कि क्या यह सम्भव हो सकेगा? यह विश्वास किया जाता था कि मनुष्य की खोपड़ी की शक्ल से उसकी बौद्धिक योग्यता जानी जा सकती है और उसके मस्तिष्क के उभारों की संख्या और बनावट के माध्यम से उसकी कलात्मक भावात्मक तथा अन्यान्य विशेषताओं का अन्दाजा लग सकता है। यही मस्तिष्क विद्या कही जाती है और जो वैज्ञानिक मस्तिष्कों के द्वारा सामुद्रिक और ज्योतिष्शास्त्रों के समकक्ष अविश्वसनीय मानी जाती रही है।

इस पर भी यह विश्वास अभी तक प्रचलित है कि प्रतिभावान व्यक्ति के मस्तिष्क के विश्लेषण से उसकी मानसिक प्रतिभा का रहस्य ज्ञात किया जा सकता है। इस विश्लेषण में मस्तिष्क के छोटे २ छिद्रों का गिनना, उन छिद्रों के बन्द होने की प्रक्रिया का जानना दिमाग के रासायनिक तत्व का विश्लेषण करना रक्त धारा के प्रवाह का पता लगाना और दिमाग के अन्य स्वरूपों का आकार वजन और रंग का नोट किया जाना सम्मलित है। दिमाग की चीरफाड़ से रोग की साक्षी भी मिल सकती है।

दिमाग के वजन से उसकी शक्तियों का पता नहीं लगता। औसत आदमी के दिमाग का वजन लगभग ३ पौंड होता है परन्तु बहुत से प्रसिद्ध प्रतिभावान व्यक्तियों के दिमागों का वजन ३ पौंड से भी कम निकलता है। प्रसिद्ध जर्मन तत्व वेत्ता और वैज्ञानिक कान्ट के दिमाग का वजन २ पौंड से भी कम वजन का निकला था।

स्व प्रो० आइन्स्टीन के दिमाग के सूक्ष्म परीक्षण का कोई भी फल क्यों न हो इस सम्बन्ध में प्रायः सभी सहमत है कि प्रो. महोदय का मस्तिष्क बलिष्ठ था।

इंडिया आफिस लायब्रेरी (पुस्तकालय)

पिछले दिनों भारत के शिक्षा मन्त्री मौलाना आजाद इण्डिया आफिस लाइब्रेरी को भारत और पाकिस्तान के अर्पण करने के लिये ब्रिटिश सरकार को राजी करने के उद्देश्य से इंग्लैण्ड गये थे। यह पुस्तकालय अविभाजित भारत की सम्पत्ति थी और भारत तथा पाकिस्तान दोनों ही वास्तविक उत्तराधिकारियों के रूप में इसे हस्तगत करने में सहमत हैं। परन्तु इस प्रसंग में इंग्लैण्ड सरकार के कामन वेल्थ रिलेशन विभाग के मन्त्री और मौलाना के मध्य हुई बात की जो रिपोर्ट समाचार पत्रों में छपी है वह सन्तोषजनक नहीं है। ब्रिटिश मन्त्री के कड़े रुख से भारत के शिक्षा शास्त्रियों, विद्वानों, इतिहास और राजनीति के पंडितोंमें असन्तोषव्याप्त हो गया है। आशा करनी चाहिये कि ब्रिटिश गवर्नमेंट भारत और पाकिस्तान के न्याय्य अधिकार को स्वीकार कर उक्त पुस्तकालय को लौटा कर दूरदर्शिता का परिचय देगी और इतिहास के उस पृष्ठ की आभा को कम न होने देगी जिसे उसने भारत को स्वतन्त्र करके महान् उज्ज्वल रूप प्रदान किया है।

यह सर्व विदित तथ्य है कि ब्रिटिश सरकार इंडिया आफिस (भारत कार्यालय) के द्वारा भारत का शासन करती थी जो भारत मन्त्री के अधीन होता था। इसी कार्यालय के अधीन इण्डिया आफिस लाइब्रेरी थी। इस लाइब्रेरी में पौर्वात्य विद्वानों के परिश्रम के फल स्वरूप लगभग २०० वर्ष के काल में बहुमूल्य ग्रन्थ एकत्र हुए जिनमें से कुछ क्रय किये गए थे, कुछ परिवर्तन में लिए गये थे, कुछ लूट के द्वारा और बहुत से कापी राइट कानून के अन्तर्गत हस्तगत किये गये थे जिसके अनुसार इस पुस्तकालय के अध्यक्ष

को यह अधिकार प्राप्त था कि वह भारत में प्रकाशित किसी भी ग्रन्थ को विना मूल्य मंगा सकता था।

इस पुस्तकालय को उन्नत अवस्था में लाने का श्रेय विल्किन्स, विल्सन, रोष्ट, और टानी जैसे सुशिक्षित विद्वानों और परिश्रमी पुस्तकाध्यक्षों को प्राप्त हुआ था।

इस पुस्तकालय की नींव वारेन हैस्टिंग्स और सर विलियम जोन्स के संरक्षण में पड़ी थी। १८६४ ई० में इसके भवन का निर्माण हुआ था जिस पर १८८००० पौंड खर्च हुए थे। भूमि ६६७६५ पौंड में क्रय की गई थी। यह सब व्यय भारतीय कोष से दिया गया था।

यद्यपि इसकी स्थापना ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने की थी तथापि कम्पनी का इसे उल्लेखनीय सहयोग प्राप्त न हुआ था। प्रारम्भ में इस बात पर बहुत विवाद हुआ था कि इसमें केवल अंग्रेजी की पुस्तकें रखी जायं वा अन्य भाषाओं की भी। लार्ड मैकाले ने अंग्रेजी भाषा का पक्ष लेकर इस विवाद में सक्रिय भाग लिया था और अन्त में उसी की विजय भी हुई थी। परन्तु पौर्वात्य साहित्य के पक्ष पोषक विद्वान् हताश न हुए थे वरन् उन्होंने कई पौर्वात्य विद्वान् पैदा कर दिये थे। पुस्तकालय के इतिहास का यह भाग बड़ा मनोरंजक और कौतूहल वर्धक है।

यह पुस्तकालय संसार में पौर्वात्य विषय के ग्रन्थों का सब से बड़ा और प्राचीन पुस्तकालय है। विल्किन्स ने ही सब से पहले भगवद्‌गीता का अंग्रेजी में अनुवाद किया था।

प्रारम्भ में यह पुस्तकालय एक अद्‌भुतालय के रूप में था जो पूर्वीय संग्रहालय के नाम से पुकारा जाता था। विल्किन्स ने ही ईस्ट इंडिया कम्पनी के डाइरेक्टरों को इस पुस्तकालय की स्थापना के लिये तय्यार किया था और यही महानुभाव २०० पौंड वार्षिक आनरेरियम पर पहिले पुस्तकालयाध्यक्ष नियुक्त हुए थे। स्थापना के होते ही इसे विपुल धन राशि और हस्त लेखों के दान प्राप्त हो गये। टीपू सुल्तान की लाइब्रेरी का बहुमूल्य भंडार सबसे पहिले इंग्लैंड की लाइब्रेरी में पहुंचा था। इसके पश्चात् बेबोलेनिया का पत्थर का एक विचित्र चीता पहुंचा, फारसी के अलभ्य हस्त ग्रंथ पहुंचे, फारस की कविताओं के संग्रह, तंजोर के विविध चित्र, बहुमूल्य खनिज पदार्थ, और पशुओं आदि के चित्र पहुँचे। इन वस्तुओं के पहुंचने पर पुस्तकालय के अद्‌भुतालय विभाग को पुस्तकालय विभाग से अलग करना पड़ा और यह विभाग एक पृथक अध्यक्ष के अधीन कर दिया गया।

कुछ समय हुआ इस पुस्तकालय के छपे हुये ग्रन्थों की गणना हुई थी जिसके अनुसार इसमें प्राचीन पूर्वीय भाषाओं के लगभग ३४१०० और अर्वाचीन भारतीय भाषाओं के लगभग १ लाख २२ हजार ६ सौ उनचास ग्रन्थ थे। इसके अतिरिक्त इसमें पुरातत्व विषयक असंख्य मनोरंजक मूल्यवान चित्र भी विद्यमान हैं।

यह पुस्तकालय भारत की सम्पत्ति का बहुमूल्य कोष है और भारत की लूट का एक बहुत बड़ा भाग है। अतः ब्रिटिशकाल में ही देश प्रेमी भारतीयों ने इस पुस्तकालय को भारत के अर्पण कर देने की मांग की थी परन्तु खेद है कि वह न तब पूरी हुई और अब भी इस मांग की पूर्ति में अड़चन डाली जा रही है।

सर्व साधारण प्रजा के माने हुये नेता और बड़े २ उत्तरदायित्वपूर्ण व्यक्ति इस पुस्तकालय से स्वतन्त्रता पूर्वक लाभ उठाते हैं इसीलिये यह पुस्तकालय समस्त देशों के विद्वानों के लिये बड़े काम का सिद्ध हुआ है। स्वतन्त्र भारत वर्ष उन सबको यह अवसर देना चाहता है कि लोग भारत में उस वातावरण में अध्ययन और अनुसंधान का काम करें जिसके सौंदर्य के परीक्षण के लिये वे लन्दन की यात्रा करते हैं और करते रहे हैं। पौर्वात्य विद्वानों का उद्देश्य पश्चिम के सामने पूर्व की व्याख्या रखना मात्र है। यदि पुस्तकालय लन्दन से भारत आजाये तो उन्हें अत्यन्त सुपरिचित और क्रियात्मक रूप में अपने कर्तव्य के अनुष्ठान में सहायता मिलेगी।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

(मई के अंक से आगे)

(५)

(ले० श्रीयुत पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय)

Life, it was found, had evolved, by a gradual yet continuous process, from the earliest forms of living organisims up to its latest and most elaborate product, man. The earliest forms of life were thought to have appeared as Specks of protoplasmic-Jelly in the scumleft by the tides as they receded from the shores of the world's first seas. In the warm waters of the proterozoic seas anything from six hundred and sixty million years ago, there were amoebas and there were Jelly fish, the earth grew cooler, life left the waters and proliferated into enormous reptile like creatures, the dinosaurs and giganto saurs of the mesozoic age; cooler still, and there were birds and animals. Among them was a smaller lemur-like creature, a comparatively late comer whose descendants split into two branches. the one developed into the anthrofod apes, the other culminated in man.

छोटी योनियों से लेकर उच्चतम, विकसित तम तथा जटिलतम मनुष्य योनि तक जिसको योनियों की सीढ़ी में सब से अन्तिम कहना चाहिये सभी योनियां एक आरंभिक योनि से प्रादुर्भूत हुई हैं। यह विकास क्रमशः तथा निरन्तर होता गया है। जब सृष्टि की आदि में समुद्र का ज्वारभाटा का जल बह गया तो तट पर फैन के ऊपर कुछ प्रारंभिक जीवित योनियों के विन्दु मात्र प्रतीत हुये। ६ करोड़ वर्ष से लेकर आठ करोड़ वर्ष पूर्व के आरंभिक समुद्रों के गर्म जल में अमीबा और जैली मछली ही पाये जाते थे। जब पृथ्वी कुछ ठंडी पड़ी तो यह प्रारंभिक जलों को छोड़ कर थल में आ गये और इनका मध्यकालीन दीर्घकाय तथा भीषणकाय मकोड़ों का रूप हो गया।

जब पृथ्वी और ठंडी हुई तो पक्षी और दूध पिलाने वाले प्राणी बन गये। कुछ दिनों पश्चात् लैमा बन्दर के समान का एक जन्तु उत्पन्न हुआ। उसकी सन्तान की दो शाखायें हो गईं। एक शाखा से वानर जाति (नर अर्थात् मनुष्य की आकृति के पशु) उत्पन्न हुई और दूसरी उन्नति करते करते मनुष्य बन गई।

यह है विकासवाद ! इस को सब से पहले विद्वानों के सामने लाने वाले थे चार्ल्स डार्विन महाशय। इसके लिये ऐतिहासिक प्रमाण तो मिल ही

Joad's Guide to modern Thought p. 29.

न सकते क्योंकि जब आरंभिक समुद्रों की आरंभिक लहरों के ऊपर प्रारंभिक जीवन के विन्दु उत्पन्न हुये तो उनको देखने वाला अथवा उनके विकास को नोट करने वाला कोई ऐतिहासिक न था न हो सकता था। उस विन्दु से मनुष्य तक उन्नति करने में साठ करोड़ वर्ष लग गये। और मनुष्य के मस्तिष्क ने बड़ी कठिनता से समयान्तर में ही डार्विन जैसे विकसिततम मस्तिष्क के रूप में उन्नति कर पाई। क्योंकि इस करोड़ों वर्ष के इतिहास को अपने अपूर्व मस्तिष्क में रजिस्टर करने का सौभाग्य डार्विन से पहले किसी को प्राप्त नहीं हुआ था।

उस एक आदि कोष्ठ ने मानवी मस्तिष्क जैसे जटिल पदार्थ तक कैसे उन्नति की और क्यों उन्नति की यह एक समस्या रही है। इसके लिये एक मोटा उदाहरण दे दिया जाय। आप सब ने मेंढक देखा है। यदि आप मेंढक के अंडे से लेकर पूरे मेंढक तक की क्रमानुगत अवस्थाओं का निरीक्षण करें तो आपको बड़ा आश्चर्य होगा। मनुष्य का बालक या घोड़े का जन्म के समय भी मनुष्य या घोड़े की आकृति का होता है परन्तु मेंढक का बालक मेंढक से कुछ भी समानता नहीं रख सकता। मनुष्य का बालक केवल बढ़कर ही मनुष्य हो जाता है, जो छोटा मुंह था वह बड़ा मुंह हो गया। जो छोटा हाथ था वह बड़ा हाथ हो गया। केवल दांत निकल आये। पशुओं के तो दांत भी साथ आते हैं। परन्तु मेंढक के बच्चों को मेंढक बनने के लिये कतिपय ऐसी अवस्थाओं में होकर गुजरना पड़ता है जिन में कुछ अंग गिरते रहते हैं और कुछ नये निकलते रहते हैं। यह ऋण-धनात्मक क्रिया निरन्तर जारी रहती है। विकासवादी कहते हैं कि बस इसी प्रकार आरंभिक जीवन कोष्ठों और अमीवा आदि प्राणियों में निरन्तर ऋण धनात्मक क्रिया के क्रमशः होने से ही मनुष्य बन गया। उदाहरण के लिये लेमर एक छोटी दुम का बन्दर होता है जो अब भी अफ्रीका आदि के जंगलों में पाया जाता है। कल्पना कीजिये कि इसकी सन्तान की एक शाखा ऐसे जंगलों में रही जहां इसकी पूंछ पर अधिक काम पड़ता था। इस निरन्तर अभ्यास और व्यायाम के कारण पूंछ बढ़ती गई और कालान्तर में उस लेमर के बड़े बड़े लंगूर बन गये। दूसरी शाखा ऐसे स्थलों में रही जहां पूंछ का कुछ काम नहीं पड़ता था। उस का परिणाम यह हुआ कि पूंछ छोटी होती गई। यहां तक कि मनुष्य के गुदास्थान में पूंछ का ठूंठ सा तो दिखाई देता है परन्तु पूंछ नहीं रही और न उसका कुछ काम ही पड़ता है।

यह तो हुआ वर्णन। परन्तु क्यों? और कैसे? यह दो प्रश्न तो वैसे ही बने रहे। योनिभेद या योनि परिवर्तन का मूल कारण क्या? भौतिक और सर्वथा अचेतन जगत् में पानी के फैन पर जीवन का वह बीज कहां से आ गया जिसको विना चेतन माने काम ही नहीं चल सकता और उस चेतन ने किस प्रकार मानवी मस्तिष्क तक उन्नति की।

डार्विन ने इसके दो हेतु दिये। एक का नाम है नेचरल सिलेक्शन (Natural Selection) या *"प्राकृतिक निर्वाचन"* और दूसरे का सर्वाइविल आफ़ दी फिटेस्ट (Survival of the fittest) अर्थात् *"योग्यतम की विजय।"*

यह तो स्पष्ट ही है कि माता पिता और सन्तान में कुछ न कुछ भेद होता ही है। यदि भेद न होता तो आदि कोष्ठ अमीबा से चल कर मनुष्य तक कैसे नौबत आती जब सन्तान कुछ भिन्नता रखेगी तभी चढ़ाव या उतार हो सकेगा। डार्विन कहता है कि यह भिन्नता दो प्रकार की होती है। एक साधक दूसरी बाधक! साधक भिन्नता वह है जिसके द्वारा सन्तान अधिक बलवती, अधिक भोजन कमाने के योग्य और अधिक जीवन शक्तिशालिनी हो सके। जैसे दौड़ने में तेजी, पंजों में पकड़ने की शक्ति आदि। दूसरी बाधक जिस से संतान को जीवन सामग्री के जुटाने में कठिनाई पड़े। साधक भिन्नता सन्तान को उन्नतशील बनाती है और बाधक उसके नाश का कारण होती है। प्रकृति में जीविका की सामग्री कम है। उसके

सुख और दुःख

(श्री आचार्य्य नरदेवजी शास्त्री वेदतीर्थ)

संसार में सुख–दुःख का चक्र अनवरत घूमता ही रहता है- कभी सुख बढ़ता है, दुःख दब जाता है। कभी दुःख बढ़ जाता है सुख दब जाता है। कभी दुःखों से ऊब उठते हैं, जीवन से निराश होकर बैठते हैं, तो इतने में सुखरूपी मधु की बून्द टपक पड़ती है! कभी सुखों में मस्त होकर कर्तव्य को भूल बैठते हैं तो दुःख आ टपक पड़ता है। संसार में कोई ऐसा स्थान हो जहां एकान्त सुख हो अथवा एकान्त दुःख हो अथवा कोई ऐसी अवस्था हो, यह बात देखी नहीं गई—

दूरदर्शी, परिणामवादी तत्ववेत्ताओं ने यही सिद्धांत स्थिर किया है कि यह संसार दुःखमय है भागो इससे

दुःखमेव जन्मोत्पत्तिः'। न्याय

यह संसार का जन्ममरण का चक्र दुःखमय ही है, इसलिए संसार में रहने, फंसने में, संसार के साथ बहने में कोई सार नहीं है।

दूसरे प्रकार के तत्ववेत्ता संसार को केवल दुःखमय नहीं मानते। वे कहते हैं कि—

न. सुखस्यान्तरालनिष्पत्तेः

नहीं, भाई, नहीं, संसार केवल दुःखमय नहीं। यदि केवल दुःखमय होता तो बीच-बीच में ये सुख कहाँ से आ टपकते हैं। यदि संसार केवल दुःखमय होता तो प्राणी इससे चिपटे क्यों रहते हैं। इसलिए संसार में सुख भी है और दुःख भी है इसीलिए इन का कथन है कि--

सुखं वा यदि वा दुःखं।
प्रियं वा यदि वाऽप्रियं॥
प्राप्तं प्राप्तमुपासीत।
हृदयनापराजितः ॥

इसीलिए मनुष्य को चाहिए कि चाहे सुख आये चाहे दुःख, चाहे प्रिय वस्तु से पाला पड़े अथवा अप्रिय वस्तु से, जो भी प्राप्त हो उस को अपराजित हृदय से वे--जो संसार को केवल दुःखमय मानते हैं कि संसार

लिये यत्न करना पड़ता है। जो हाथ पैर मार सकते हैं वह जीवित रहते हैं जो जीवन संग्राम मे विजय नहीं पा सकते वह नष्ट हो जाते हैं। यही *"योग्यतम की विजय"* (Survival of the Fittest) का सिद्धान्त है। अर्थात् जो अधिक योग्य होगा वह जीवित रहेगा जो अयोग्य होगा उसको प्रकृति जीवित रहने नहीं देगी। प्रकृति स्वतः यह निर्वचन किया करती है। जिसको योग्य देखती है उस को रहने देती जिसको अयोग्य जानती है उसे नष्ट कर देती है। यह निर्वाचन 'काट छांट' स्वयं ही हुआ करता है। इसी का नाम *प्राकृतिक निर्वचन*(Natural Select on) है।

अब डार्विन से पूछा गया कि "प्राकृतिक निर्वचन" और "योग्यतम की विजय" के सिद्धान्त तो तभी लागू हो सकेंगे जब पहले भिन्नता हो जाय। यदि दो योनियों में भिन्नता न होती तो यह दोनों सिद्धान्त न चल सकते। किस को अधिक योग्य कहते और किसको कम? प्रकृति निर्वचन भी किस प्रकार करती? उस योनि भेद के लिये तो कारण चाहिये। डार्विन इसके उत्तर में अपनी माथापच्ची नहीं करता। उसके लिये तो इतना ही पर्याप्त है कि पहले अकस्मात्' कुछ थोड़ा सा अन्तर हो गया। वह अन्तर बढ़ते २ इतना बढ़ गया कि अन्त की दो सर्वथा भिन्न योनियां बन गईं।

क्या यह अन्तर अत्यन्त क्रमिक और शनैः शनैः ही हुआ करता है कभी यकायक बड़ी तब्दीलियां नहीं होती

को छोड़कर वन में, गुफाओं में, गिरिकन्दराओं में जाकर ध्यानयोग द्वारा इस पर परमात्मा का साक्षात्कार करना चाहिए जो कि केवल आनन्दस्वरूप है।

यह बात भी विचारणीय है कि संसार छोड़कर केवल वन में जाने से ध्यान थोड़े ही लगता है वहां भी भीतर की वासनाएं उसको कब चैन से बैठने देती है --

वनेऽपि दोषा प्रभवन्ति रागिणाम्।
गृहेऽपि पञ्चेन्द्रियनिग्रहस्तपः ।

वन में रागियों के रागरंग के संस्कार उठ सकते हैं और घर में रहते हुए भी पांचों इन्द्रियों का निग्रह तथा तप हो सकता है।

महाभारत में स्यूमरश्मि नामक ऋषि की कथा आयी है। इसका तो ध्यान योगियों को चैलेंज था कि कौन कहता है कि घर में रहते मोक्ष नहीं होता अथवा नहीं मिलता।

फिर प्रश्न यह है कि—

कौन सा मार्ग अपेक्षित है? दोनों प्रकार के ज्येष्ठ और श्रेष्ठ लोग मिलते हैं—

ध्यानयोगी भी, कर्म योगी भी। ध्यान योगियों की संख्या भी कम नहीं है और कर्मयोगी भी कम नहीं हैं, पर हमारा मत यह है कि ध्यानयोग से कर्मयोग कठिन है। संसार के झंझटों में रहकर संसार से ऊपर और संसार से अलिप्त रहना यह अत्यन्त कठिन मार्ग है—सनकादि ऋषि ध्यान मार्ग से गये। जैगीषव्यजनकादि कर्मयोग मार्ग से संसार में रहकर ही विदेह मुक्त हुए और कहलाये।

भगवान् कृष्ण की गीता हमें कर्मयोग अर्थात् संसार में रहकर संसार के सुख दुःखों से अलिप्त रहने की बात कहते हैं—

फिर जरा यह भी सोचने की बात है कि यह सुखदुःख का बवण्डर है क्या? जिससे लोग घबराते रहते हैं सच पूछो तो अनेक दुःख तो केवल समझने के अर्थात काल्पनिक दुःख हैं। बहुत से दुःख तो परिणाम में जाकर सुख में परिणत हो जाते हैं उन दुःखों को दुःख समझना ही भूल है। इसी प्रकार सुखों की गाथा है काल्पनिक सुख सुख नहीं परिणाम में जाकर दुःख बनने वाले सुख यथार्थ में सुख नहीं— इसलिये हम परिणामवादियों को यथार्थ सुख दुःख की बात समझकर चलना अथवा संसार में बढ़ना चाहिए— वही बात कि अपराजित हृदय से जैसा कि योगवासिष्ठ में कहा गया है—फिर यह भी सोचने की बात है कि—

सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता।
परो ददातीति कुबुद्धिरेषा ॥

अपने सुख दुःख के लिए हम ही तो स्वयं उत्तरदायी हैं—

आत्मापराधवृक्षाणाम्।
फलान्येतानि देहिनाम्

सुख दुःख, दारिद्र्य, व्यसन, भय आदि तो आत्मापराधरूपी वृक्ष ही के तो ये फल हैं। अपने किये अपने लाये सुखों दुःखों को क्यों न हम फिर अपराजित भुगतें—अपराजित हृदय से इनसे सुलझें-

फिर यह भी कौन सी भलमनसाहत है कि सुख रूपी फल देने वाले दुःखरूपी वृक्ष को हम जड़मूल से उखाड़ फेंकना चाहें और फिर भी सुखरूपी फल की आकांक्षा! है कि नहीं अविवेक की पराकाष्ठा।

—उत्तम धर्मात्मा पुरुषों के मार्ग में चलने से दुःख कभी नहीं होता।
—कभी किसी की निन्दा न करनी चाहिए।

— दयानन्द सरस्वती

* धर्म के स्तम्भ *

(३)

बुद्धि

(लेखक—रघुनाथ प्रसाद पाठक)

मनुष्य को पशु से पृथक् करने वाली वस्तु बुद्धि होती है। बुद्धिहीन मनुष्य पशु तुल्य होता है।

बुद्धि वह ज्योति होती है जिससे मनुष्य का आभ्यन्तर प्रकाशित होता है। तभी तो बुद्धि को हृदय की आंखें कहा जाता है। आंखों से काम लेने के लिये सूर्य के प्रकाश की और हृदय की आंखों से काम लेने के लिये आत्मा के प्रकाश की आवश्यकता होती है। सूर्य और आत्मा के प्रकाश के बिना ये दोनों आंखें व्यर्थ होती हैं जब बुद्धि आत्मा पर केन्द्रित रहती है तभी वह आत्मिक ज्योति से प्रकाशित रहती और उसका यथेष्ट विकास होता है। जब बुद्धि का लक्ष्य आत्मा न रहकर शरीर बन जाता है तब आत्मा बुद्धि का स्वामी न रहकर उसका दास बन जाता है। मन और इन्द्रियों के वशीभूत हो जाने पर बुद्धि दूषित हो जाया करती है।

बुद्धि का कार्य कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य, सत्य और असत्य, पाप और पुण्य का निश्चय करना होता है। बुद्धि का विकास आत्म ज्ञान से होता है। शुद्ध और विकसित बुद्धि द्वारा प्राप्त किए ज्ञान की हृदय पर अमिट छाप पड़ती है। जब बुद्धि का विकास और सुधार अपने ज्ञान की वृद्धि और दूसरों को इस ज्ञान से लाभान्वित करने के उद्देश्य से किया जाता है तब विकास कल्याण प्रद होता है। कहा जाता है कि ज्ञान बल होता है परन्तु वह ज्ञान अपने और दूसरों के लिये हितकारी हो। शेर बड़ा बलवान होता है परन्तु उसके बल का प्रयोग दूसरों को आतंकित करने और अपना शिकार मारने में होता है। जंगल के इस नियम को मानव समाज में प्रश्रयन मिलना चाहिए। मानवीय बुद्धि और ज्ञान का उपयोग मानव समाज के हित में होना चाहिए, उसके विनाश और उसको आतंकित करने में नहीं।

ज्ञान एवं हृदय की प्रेरणाओं के अनुकूल आचरण करने से बुद्धि की शोभा सुरक्षित रहती है।

प्रखर बुद्धि वाले व्यक्ति धर्म्म का अवलम्बिन किए बिना भी उन्नति कर सकते हैं परन्तु उनकी उन्नति स्थिर और शान्ति दायिनी नहीं होती। आज १ भौतिक विज्ञान के विकास और चमत्कारों में बुद्धि की अभूतपूर्व प्रखरता देख पड़ती है, जिस पर अनायास ही मुंह से 'धन्य'' शब्द निकल पड़ता है परन्तु यह विकास विश्व में शान्ति स्थिर रखने के स्थान में उसके लिये खतरा बन गया है। क्यों ? इस लिये कि यह उन्नति साधन बनने के स्थान में साध्य बन गई है और मनुष्य का लक्ष्य स्वार्थ सिद्धि और शक्ति संचय बनकर विशाल मानवता से हट गया है। मनुष्य ने अपनी बुद्धि के बल पर बाह्य जगत को जानने में तो कमाल कर दिखाया है परन्तु अपने को भूल गया है। यदि वह प्रकृति पर अधिकार करने के साथ २ अपने को जानने पर भी समान ध्यान देता तो विज्ञान की उन्नति विश्व के लिये देन सिद्ध होती

बुद्धि का प्रयोग अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये हो सकता है परन्तु जब मनुष्य बुराई को भलाई समझ कर उसका प्रयोग करता है तब स्थिति बड़ी भयंकर बन जाती और उसके परिणाम बड़े दुःखद होते हैं। आज का विज्ञान वेत्ता जिसकी बुद्धि और ज्ञान का घातक सैनिक अस्त्रों की उत्पत्ति में दुरुपयोग हो रहा है अपने राष्ट्र की सेवा करने का सन्तोष भले ही अनुभव करें, परन्तु

(शेष पृष्ठ २६१ पर)

मानव विकास

लेखक—बा० पूर्णचन्द जी एडवोकेट, प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा उ० प्रदेश

शिक्षा और दीक्षा का उद्देश्य मानव का विकास है। मानव को अतिरिक्त शक्तियों को विकसित करना है। यह केवल मनुष्य में ही विशेषता है कि वह ज्ञान प्राप्त कर सकता है ज्ञान में वृद्धि कर सकता है अन्य प्राणियों में केवल स्वभाविक ज्ञान है परन्तु मनुष्य में केवल स्वभाविक ज्ञान उसके विकास के लिये प्रयाप्त नहीं उसमें ज्ञान प्राप्त करने की शक्ति है परन्तु उसका ज्ञान दूसरों से मिलता है जिससे ज्ञान मिलता है वह अध्यापक, गुरु कहलाते हैं परन्तु ज्ञान आदि का अर्थ चरित्र का निर्माण है ऐसी दशा में जिनके द्वारा ज्ञान प्राप्त हो उनके लिये सबसे उत्तम परिभाषा आचार्य की है। आचार्य वह है जो स्वयं जैसा जाने वैसा करें और जिनको ज्ञान दे उनको न केवल जानने और मानने की प्रेरणा करें परन्तु जैसा जाने व माने वैसा जानने व करने के लिये भी उत्साहित करें।

आजकल की शिक्षा जहां तक ज्ञान देने का सम्बन्ध है एक अंश में सफल है। ज्ञान देने, ज्ञान के विस्तार के अनेक साधन हैं और विज्ञान के आधार पर सरल, सुगम और सार्वजनिक साधन प्रचलित है। आज अमरीका में बैठे हुए एक अध्यापक पढ़ाये और सारे संसार में विद्यार्थी रेडियो के सहारे एक नियत समय पर पढ़ सकते हैं अर्थात ज्ञान प्राप्त कर सकते है। ज्ञान देते समय या ज्ञान के विस्तार के समय यह ध्यान में रहना अनिवार्य है कि जिस प्रकार शारीरिक स्वास्थ्य के लिये शरीर के भोजन की जांच पड़ताल आवश्यक है इसी प्रकार मानसिक भोजन के लिये मानसिक ज्ञान की परीक्षा अत्यन्त आवश्यक है जीवन पर जो कुछ वह सुनता, देखता सोचता, और खाता है सबका प्रभाव पड़ता है इन प्रभावों के सामूहिक नाम को ही संस्कार कहते हैं और संस्कार से ही चरित्र निर्माण होता है। इससे ही विकास होता है और इनसे ही अवनति होती है। ऐसी दशा में इस बात पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि ज्ञान देने वाला कौन है? किस प्रकार का ज्ञान देता है? किस आधार पर देता है? और कैसे साधन प्रयोग में लाये गये हैं? उदाहरण के लिये गाने और कहानियों से भी ज्ञान का विस्तार हो सकता है परन्तु यदि गाने में रस दूषित है और कहानियों में भाव आक्षेप जनक है तो ज्ञानतो बढ़ेगा परन्तु विषके साथ जिस प्रकार शारीरिक भोजन के साथ यदि विषैला पदार्थ चला जावे तो धीरे २ स्वास्थ्य दूषित होने लगता है और फिर औषधि और उपचार की चिन्ता होती है इसी प्रकार यदि मानसिक भोजन के साथ साथ अनुचित सामग्री का समावेश मानसिक जगत मे हृदय के अन्दर प्रवेश करता जावेगा तो शिक्षा ज्ञान बढ़ेगा परन्तु विष के साथ। और इसका ही दुष्परिणाम है कि शिक्षित जगत पर न केवल भारत में परन्तु न्यून या अधिक प्रत्येक देश में चरित्र हीनता का दोषारोपण हो रहा है इसका ही परिणाम है कि निष्क्रमणिता का आक्षेप बहुधा सुना जाता है। यदि अधिक खा लिया जावे हजम न हो सके और भूख न लगे तो वह अधिक खाया हुआ भोजन अजीर्ण और अन्य प्रकार के कई रोग पैदा कर देता है। वैद्यों की दृष्टि में पेट, सब रोगों का आधार है यदि पेट ठीक तो सारे शरीर के अंग ठीक, इसी प्रकार मानसिक स्वास्थ्य के लिये हृदय व मन की पवित्रता अनिवार्य है यदि केवल भोजन की मात्रा और स्वाद पर ध्यान गया और खाने वालो को हजम करने को शक्ति पर ध्यान नहीं दिया गया तो खाया और पिया हुआ लाभ के स्थान पर हानि करता है इसी प्रकार भिन्न भिन्न प्रकार की कलाओं ने मानसिक भोजन का स्वाद तो बढ़ा दिया है और इस स्वाद में भिन्नता भी आ गई है जो स्वयं उसको रोचक बनाती

है परन्तु यदि कला केवल रोचकता के आधार पर प्रिय और उपयोगिता पर दृष्टि न हो तो वही परिणाम होगा जो चटपटे भोजन और चाट खाने का विद्यार्थियों पर और व्यक्तियों पर होता है। शिक्षा द्वारा विकास प्रश्न पर विचार करते हुए अर्थात अध्यापक और विद्यार्थी दोनों पर दृष्टि रखनी होगी और दोनों स्तम्भों को संयुक्त करने के लिये जो पुल है वह शिक्षा की पाठ विधि और पद्धति है। यह तीनों मिलकर तीन प्रश्न हमारे सामने उपस्थिति करते हैं। कौन पढ़ाये क्या पढ़ाये और किसको पढ़ाये आजकल एक आपत्ति और है आर्थिक दृष्टिकोण ने राष्ट्र के संचालकों पर गहरा प्रभाव डाला हुआ है। रोटी की समस्या उनके सम्मुख है। वह यह भी नहीं भूल पाये कि केवल रोटी ही एक समस्या नहीं है। गम्भीरता से विचार करने से शिक्षा प्राप्त करने की अवधि में रोटी के उपार्जन की समस्या विद्या ग्रहण करने वालों के सम्मुख आनी ही नहीं चाहिये वह सादा भोजन करें एक समय करें और चिन्ता से मुक्त होकर करें यह आदर्श है और वैदिक शिक्षा अर्थात् कृषि प्रधान शिक्षा इन सब में मनोविज्ञान की दृष्टि से एवं उपरोक्त दृष्टिकोण से एक महान त्रुटि है। जहां प्राचीन आदर्श के अनुसार ब्रह्मचर्य अवस्था में विद्यार्थी को रोटी की चिन्ता से मुक्त रखकर उसको इस प्रकार शिक्षित बनाता था कि जब गृहस्थ जीवन में प्रविष्ट करें और रोटी के उपार्जन में संलग्न हो तो उसके अन्दर रोटी के लिये लोभ और मोह न हो और न रोटी के संग्रह पर अभिमान। यदि वह रोटी की चिन्ता से मुक्त होकर शिक्षित होगा तो रोटी के चक्कर में इतना नहीं पड़ेगा कि रोटी ही रोटी चिल्लाये और इस बात का ध्यान न रहे कि रोटी कैसी है, कहां से प्राप्त हुई है और खाने योग्य भी है या नहीं। आर्थिक संकट से व्याकुल, आर्थिक झंझटों में फंसे हुए नेता और संचालक इस समस्या का समाधान नहीं कर सकते इसके लिये तो आध्यात्मिक दृष्टिकोण ही अनिवार्य और आवश्यक है। भारत वर्ष में तो आर्थिक दृष्टिकोण का शिक्षा के साथ संयुक्त होना अत्यन्त अहितकर है। यहां तो शिक्षितों की संख्या ही अत्यन्त न्यून है और पैत्रिक संस्कारों के आधार पर व्यवसाय को पुत्र स्वयं ही सीख लेता है और उसका प्रयोग करने लगता है। उसको जीविका के उपार्जन के लिये शिक्षा व साधारण ज्ञान की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। इसलिये शिक्षितों की संख्या में वृद्धि नहीं होती यदि शिक्षा का प्रमुख अंग धनोपार्जन रोटी की प्राप्ति, वेतन का मिलना होगा तो वह समुदाय जिनके लिये उपरोक्त प्रश्न स्वयं समाधान हुआ है शिक्षा के और आकर्षक नहीं होगा और न उनका विकास ही हो सकेगा। शिक्षा का सीधा सम्बन्ध दीक्षा से है और दीक्षा का चरित्र निर्माण से और चरित्र निर्माण का सम्बन्ध मानसिक जगत् की व्यवस्था से है। मानसिक जगत की व्यवस्था से अभिप्राय संकल्प और विकल्प की मर्यादा से है। यदि इच्छा और द्वेष का मर्यादित होना अनिवार्य है तो व्यक्ति क्या चाहे और क्या न चाहे इसकी इच्छा करे या न करे आंतरिक अंकुश आरम्भ से ही आवश्यक है और अनुचित इच्छा या द्वेष स्थान पागया और अन्धकार मन के जगत में प्रवेश करने से दूषित संस्कार के रूप में केवल अतिथि बनकर नहीं परन्तु गृहस्वामी होकर रहने लगा तो फिर वही अंकुश निष्फल और निष्प्रयोजन हो जावेंगे, जब गृह में गृहस्वामी जमकर बैठगया है तो उसको कौन निकालेगा। शिक्षा के जगत वाले मस्तिष्क के आगे जाने की चेष्टा नहीं करते और न उसके आगे उनकी पहुंच है। मुख्य द्वार तक पहुँचने के लिये पांचों ज्ञान इन्द्रियों के मार्ग हैं। परन्तु पांचों मार्गों और प्रमुख द्वार की व्यवस्था एक हो और गृहस्वामी की मर्यादा इससे पृथक हो बुद्धि जहां तक मस्तिष्क का सम्बन्ध है मुख्यद्वार तक पहुंच सकती है वह चौकीदार का काम भी कर सकती है और अतिरिक्त प्रवेश को और अधिक सुगम भी बना सकती है। चौकीदार चोरी को रोक भी सकता है और चोरी को सुगम भी बना सकता है मुख्यद्वार के अन्दर जो प्रत्येक व्यक्ति का एक गृह राष्ट्र है उसके निर्माण के लिये एक विशेष विधि है और विधि के ज्ञान बिना शिक्षा पूरी नहीं हो

सकती और न गृहस्वामी का विकास और परिपूर्ण होना सम्भव है। आज पांचों मार्ग बड़े सुसज्जित और मुख्यद्वार भी आकर्षक है अन्दर की दशा अत्यन्त शोचनीय है। बाहर की दशा को देखकर आशा और अन्दर की दशा देखकर निराशा ने बहुत चिन्ता उत्पन्न करदी है जैसा ऊपर दर्शाया गया है। अर्थ समस्या भी बाहरी व्यवस्था से नहीं सुलझती तो काम की व्यवस्था तो बिल्कुल नहीं होती। ब्रह्मचर्य पालन तो और भी असम्भव हो गया है। कलाओं के प्रचार पर सुन्दर चित्र, आकर्षक गाने, मुख्य द्वार के अन्दर प्रवेश लेते हैं और कलाओं की आड़ में गृहस्वामी को बेकल कर देते हैं। और फिर कल्याण कहां यदि व्यक्ति का कल्याण हो तो समाज का कल्याण हो प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि पर बल दिया गया अर्थात् अधिक खाओ और खिलाओ द्वितीय पंचवर्षीय योजना में उद्योग पर बल अर्थात् अधिक कमाओ खूब कमाओ। यह सब बड़े आकर्षक प्रतीत होते हैं परन्तु खाने वाले, कमाने वाला कौन है, उसके निर्माण के लिये कौनसी योजना है इधर अभी योजनाओं के निर्माण करने वालों का ध्यान नहीं गया है यदि खाना और कमाना अधिक हुआ तो दूर की सूझेगी, पेट भरे को बड़ी उढान सूझती है पेट भरा चंचल मन, व्याकुल मस्तिष्क यह शिक्षित की परिभाषा बीसवीं शताब्दी की है। बगला है जो खूब देखता है दूर की देखता है यन्त्रों से देखता है आकाश तक देखता है पाताल में भी देखता परन्तु क्या देखता है क्यों देखता है इस पर ध्यान नहीं। वर्तमान शिक्षा और विज्ञान के प्रचार ने शिक्षित युवक को एक अल्लड़ मन चला पशु या तेज मोटर बना दिया है। बछड़े के लिये लगाम नहीं पशु को अंकुश और मोटर के लिये ब्रेक। तेज गति है परन्तु गति को ठीक प्रगति में लाने के लिये गति देने वाला संचालक दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है। मनुष्य केवल चले ही नहीं परन्तु दौड़ भी लगा सकता है उसके लिये तो बहुत ही बड़ी बलयुक्ति अंकुश चाहिये। शारीरिक शक्ति बढ़ रही है, मानसिक शक्ति बढ़ रही है, इन दोनों के प्रभाव से हृदय जगत् में हलचल उत्पन्न हो रही है दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि भूचाल आ रहे हैं भूमि हिल रही है अब कैसे रुके कैसे थमे इसका उपाय नहीं सूझता। वर्तमान उन्नत विज्ञान भूचाल के सम्बन्ध में अब तक केवल यह पता चला सका है कि कितनी दूर से आया और कितनी देर के लिये आया न आने के पहिले पता लगता है और न रोकने के साधन हैं।

भूचाल आ गया, मकान गिर गये, नगर बर्बाद हो गये व्यक्ति नष्ट हो गये राष्ट्र निर्माण और संचालकों ने शोक प्रकट किया सहानुभूति का प्रदर्शन किया, सहायता दी, नगर और बाजारों के निर्माण में लग गये परन्तु भूचालों से स्थाई रक्षा हो विज्ञान यह बताये में असमर्थ है। आध्यात्मिक जगत में हृदय रूपी संसार में काम, क्रोध, लोभ, मोह के आक्रमणों से इस प्रकार के भूचाल आते हैं कि सब पढ़ा लिखा समाप्त बना बनाया काम खतम जांच कमीशन बैठा कारणों का पता लगा लिया पर अधूरा, नई योजना बनाई वह भी अपूर्ण। वास्तविक कारण, आंतरिक रूपरेखा, न उनके सम्मुख है और न उनकी पहुंच वहां तक है। मन बुद्धि, चित्त, अहंकार अन्तःकरण कहलाते हैं यह अन्दर के वर्ग हैं वर्तमान शिक्षा अन्तःकरण केवल १ चौथाई विभाग बुद्धि तक उनकी पहुंच है वह भी अधूरी है। मन, चित्त, और अहंकार तो उनकी पहुंच के बाहर हैं न उनका ध्यान इस ओर है और न उनका ज्ञान वहां तक है। जब न ज्ञान है न ध्यान है तो उनके सुधार का सामान तो उपलब्ध ही क्या कर सकते हैं भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति. मन, चित्त, और अहंकार की स्थाई व्यवस्था को लक्ष्य में रखकर ही की थी और बुद्धि की मर्यादा इन तीनों की मर्यादाओं सम्बन्धित थी इसलिये बुद्धि की मर्यादा के लिये गायत्री का मन्त्र आवश्यक है और गायत्री के आधार पर न बुद्धि मर्यादित होती है परन्तु वैसी बुद्धि प्राप्त होती है कि मन पवित्र, चित्त शांति और अहंकार की भावना मर्यादित होती है। अहंकार या अहम भाव कुचला नहीं जा सकता, म-

कृष्ण के जीवन पर एक दृष्टि

(एक कृष्ण भक्त)

कृष्ण चरित्र में सत्य प्रकट करना बड़ा ही कठिन काम है क्योंकि मिथ्या और अलौकिक घटनाओं की भस्म में यहां सत्यरूपी अग्नि ऐसी छिप गई है कि उसका पता लगाना टेढ़ी खीर है। जिन उपादानों से सच्चा कृष्ण चरित्र प्रकट हो सकता है वह असत्य के समुद्र में निमग्न हो गए हैं फिर भी जितना सत्य उपलब्ध होता है उसके आधार पर कृष्ण चरित्र का बड़ा उत्तम प्रतिपादन होता है।

बचपन में श्री कृष्ण आदर्श बलवान् थे। उस समय उन्होंने केवल शारीरिक बल से ही हिंसक जन्तुओं से वृन्दावन की रक्षा की थी और कंस के मल्लादि को भी मार गिराया था। गौ चराने के समय ग्वालों के साथ खेल कूद और कसरत कर उन्होंने अपने शारीरिक बल की वृद्धि कर ली थी। दौड़ने में काल यवन भी उन्हें न पा सका। कुरुक्षेत्र युद्ध में उनके रथ हांकने की भी बड़ी प्रशंसा पाई जाती है।

शस्त्रास्त्र की शिक्षा मिलने पर वह क्षत्रिय समाज में सर्वश्रेष्ठ वीर समझे जाने लगे। उन्हें कभी कोई परास्त न कर सका। कंस, जरासंध, शिशुपाल आदि तत्कालीन प्रधान योद्धाओं से तथा काशी, कलिंग, गांधार आदि के राजाओं से वे लड़ गये और सब को उन्होंने हराया। सात्यकी और अभिमन्यु उनके शिष्य थे। वे दोनों भी सहज ही हारने वाले न थे। स्वयं अर्जुन ने भी युद्ध की बारीकियां उनसे सीखी थी।

केवल शारीरिक बल और शिक्षा पर जो रणपटुता निर्भर है वह सामान्य सैनिक में भी हो सकती है। सेनापतित्व ही योद्धा का वास्तविक गुण है। महाभारत आदि में एक भी अच्छे सेनापति का पता नहीं लगता। भीष्म या अर्जुन अच्छे सेनापति न थे। श्री कृष्ण के सेनापतित्व का कुछ विशेष परिचय जरासन्ध युद्ध में मिलता है। उन्होंने अपनी मुट्ठी भर यादव सेना लेकर जरासन्ध की अगणित सेना को मथुरा से मार भगाया था। अपनी थोड़ी सी सेना से जरासन्ध का सामना करना असाध्य समझ कर मथुरा छोड़ना, नया नगर बसाने के लिए द्वारिका द्वीप का चुनना और उसके सामने की रैवतक पर्वत माला में दुर्भेद्य दुर्ग निर्माण करना जिस रण नीतिज्ञता का परिचायक है उस समय के और किसी क्षत्रिय में नहीं देखी जाती है।

कृष्ण की ज्ञानार्जनी वृत्तियां सब ही विकास की पराकाष्ठा को पहुंची हुई थीं। वे अद्वितीय वेदज्ञ थे। भीष्म ने उन्हें अर्घ प्रदान करने का एक कारण यह भी बताया था। शिशुपाल ने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया था। केवल इतना ही कहा था कि वेद व्यास के रहते कृष्ण की पूजा क्यों?

नहीं जा सकता परंतु फैलाया जा सकता है। एक जीवका अहम् भाव आत्मिक दृष्टिकोण से प्राणीमात्र तक विस्तार में और परमात्मा तक ऊंचाई में पहुंच सकता है और यही अहम् भाव गहराई में अपनी आत्मा तक होगा प्राणीमात्र तक विस्तृत परमात्मा तक उन्नति और आत्मा तक गम्भीर एक व्यक्ति तब महान् बनते हैं। व्यक्ति को महान् कहो महात्मा कहो, विकसित कहो, बड़ा कहो, आचार्य कहो, गुरु कहो, साधु कहो या संत कहो सबके अन्तरंग में महानता के गुण होने चाहिये। जिनके गुण महान् उनका स्वभाव महान् जिनका स्वभाव महान् उनका चरित्र महान् और महान् चरित्र वालों का समुदाय महान् अनुकरणीय। हमारी यह विकास की योजना है कठिन परन्तु अटल और स्थाई है। क्या अच्छा हो यदि योजना का निर्माण करने वाले इस प्राचीन योजना पर भी विचार करना सीखें।

श्रावणी

लेखक:—श्री कालीचरण प्रकाश सि॰ शास्त्री उपदेशक आर्य प्रतिनिधि सभा है॰ द॰

मनुष्य को आदि काल से ज्ञान की आवश्यकता बनी रही है। इसी से सदैव ज्ञान प्राप्ति के लिए वह प्रयत्न करता रहा है और उसे सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा ने प्रथम वेदों का ज्ञान प्रदान किया तत्पश्चात् स्मृति द्वारा क्रम प्रचलित रह कर बुद्धिधर्शानेन शुद्ध्य बलि की प्रथा ने भी मानव कल्याण में अपना हाथ बटाया। जिससे मानव उत्थान में संस्कृति प्रगति पथ पर अग्रसर होती गई और परमात्मा की यह सृष्टि, विशेष रूप से आर्यावर्त (भारतवर्ष स्वर्ग की उपमा बन संसार का ध्यान आकर्षित करती रही किन्तु जब से संसार के गुरु कहलाने वाले आर्य और आर्यावर्त के निवासी ज्ञान सम्पादन और उसके प्रचार तथा

कृष्ण ने वेद प्रतिपादित उन्नत, सर्वलोक हितकारी सब लोगों के आचरण योग्य धर्म का प्रचार किया। इस धर्म्म में जिस ज्ञान का परिचय मिलता है वह प्रायः मनुष्य बुद्धि के परे हैं। कृष्ण ने मानुषी शक्ति से सब काम सिद्ध किए हैं। गीता कृष्ण की अनुपम देन है।

श्री कृष्ण मन से श्रेष्ठ और माननीय राजनीतिज्ञ थे। इसी से युधिष्ठिर ने वेद व्यास के कहने पर भी श्री कृष्ण के परामर्श बिना राजसूय यज्ञ में हाथ नहीं लगाया। स्वेच्छाचारी यादव और कृष्ण की आज्ञा में चलने वाले पाण्डव दोनों ही उनसे पूछे बिना कुछ नहीं करते थे। जरासन्ध को मार कर उसकी कैद से राजाओं को छुड़ाना उन्नत राजनीति का अति सुन्दर उदाहरण है। यह साम्राज्य स्थापन का बड़ा सहज और परमोचित उपाय है। धर्म राज्य स्थापन के पश्चात् उसके शासन के हेतु भीष्म से राज्य व्यवस्था ठीक कराना राजनीतिज्ञता का दूसरा बड़ा प्रशंसनीय उदाहरण है।

कृष्ण की सब कार्यकारिणी वृत्तियां चरम सीमा तक विकसित हुई थीं। उनका साहस उनकी फुर्ती और तत्परता अलौकिक थी। उनका धर्म तथा सत्यता अचल थी। स्थान २ पर उनके शौर्य, दयालुता और प्रीति का वर्णन मिलता है। वे शान्ति के लिए दृढ़ता के साथ प्रयत्न करते थे और इसके लिए वे दृढ़ प्रतिज्ञ थे। वे सब के हितैषी थे। केवल मनुष्यों पर ही नहीं गो वत्सादि जीव जन्तुओं पर भी वह दया करते थे। वे स्वजन प्रिय थे। पर लोक हित के लिए दुष्टाचारी स्वजनों का विनाश करने में भी कुण्ठित न होते थे। कंस उनका मामा था। उनके जैसे पांडव थे वैसे शिशुपाल भी था। दोनों ही उनकी फूफी के बेटे थे। उन्होंने मामा और भाई का लिहाज न कर दोनों को ही दण्ड दिया।

जब यादव लोग सुरापायी (शराबी) हो उद्दण्ड हो गए तो उन्होंने उनको भी अछूता न छोड़ा।

श्री कृष्ण आदर्श मनुष्य थे। मनुष्य का आदर्श प्रचारित करने के लिए उनका प्रादुर्भाव हुआ था। वे अपराजय, अपराजित, विशुद्ध, पुण्यमय, प्रेममय, दयामय, दृढ़कर्मी धर्मात्मा, वेदज्ञ, नीतिज्ञ धर्म्मज्ञ, लोकहितैषी, न्यायशील क्षमाशील, निर्दय, निरहंकार योगी और तपस्वी थे। वे मानुषी शक्ति से काम करते थे परन्तु उनमें देवत्व अधिक था। पाठक अपनी बुद्धि के अनुसार ही इसका निर्णय कर लें कि जिसकी शक्ति मानुषी पर चरित्र मनुष्यातीत था वह पुरुष मनुष्य था देव! राइस डेविड्स ने भगवान बुद्ध को हिन्दुओं में सब से बड़ा ज्ञानी और महात्मा माना है। (The wisest and greatest of the Hindus) हम भी कृष्ण को ऐसा ही मानते हैं। (बङ्किमचन्द्र चट्टोपाध्याय के

"कृष्ण चरित्र" के आधार पर)

प्रसार में उपेक्षा सी बरतने लगे तब से मानव तथा मानव व्यापी संसार दुःख के गर्त की ओर बढ़ता गया।

आज मानव और मानव व्यापी विश्व दुःख के गर्त में पड़ा होने के कारण कराह रहा है। एवं इसकी ओर अपेक्षित हैं कि उसे उसके कल्याण मार्ग का दर्शन कराया जाय जिससे जहां उसे शारीरिक, मानसिक और मस्तिष्क को शान्ति मिले वहां वह आत्म शान्ति भी सुगमता से प्राप्त कर सके। आज के अन्य प्रयत्न इस दिशा में कहां तक लाभदायक होंगे यह तो और बात है पर आर्यावर्त की इस पुण्य भूमि में चिरकाल से एक क्रम चला आ रहा हैं, जिसके द्वारा मनुष्य को इन दिशाओं में कुछ प्रकाश सा प्राप्त हो रहा है।

ऋषियों ने देश में परम्परा प्रचलित की थी कि आर्य अधिक से अधिक आर्ष ज्ञान प्राप्ति से सुख को प्राप्त किया करें। चूंकि आर्ष ज्ञान ही मनुष्य की बुद्धि को ठीक कर सकता है। विकृत ज्ञान से मनुष्य बुद्धि का ठीक रहना सम्भव नहीं। बुद्धि के विकृत हो जाने से ही मनुष्य के कर्म विकृत होकर दुःख प्राप्ति होती है। आज संसार में मनुष्य को और विशेष कर आर्यावर्त (भारत) को जो भी ज्ञान प्राप्त हो रहा है, या कुछ काल से प्राप्त होता चला आ रहा है वह स्वार्थमय होने के कारण विकृत रहा है, जिससे आर्य (भारतीय) दिन प्रतिदिन दुःख ही प्राप्त करते आ रहे हैं। सुख प्राप्ति के लिए ऋषि मुनियों ने यह आदेश दिया था कि प्रत्यक्ष संन्यासी, ब्राह्मणों (विद्वानों) तथा धर्मात्माओं से सत्संग करें और उनकी परीक्षा में आर्य ग्रन्थ का स्वाध्याय (पाठ) हो, जो कि निःस्वार्थता के साथ केवल संसार मात्र के कल्याण की भावना से लिखे गए हों। साथ ही इनके प्रचार व प्रसार का भी आदेश दिया था वे स्वयं भी उपदेश आदि के द्वारा परम्परा को स्थिर रखते रहे हैं।

इस दिशा में उनका स्थिर प्रयास यह भी रहा कि इस ज्ञान प्रसार की परम्परा को मानव जीवन का अंग ही बनाया जाए, तदर्थ इन्होंने ज्योतिष शास्त्र आदि के द्वारा जीवन की गति ज्ञान में वर्ष आदि का निर्माण कर उसमें विशेष रूप से 'श्रावण' मास की भी योजना की. जिसमें किसी प्रकार अनिवार्य रूपेण ज्ञान चर्चा होती। वेद के स्वाध्याय का क्रम आरम्भ करने के लिए और होनी ही चाहिए भी। चौमासे में श्रावण मास की समाप्ति के दिन सभी मिलकर रक्षा बन्धन का पर्व बड़े हर्ष और उत्साह पूर्वक मनाकर मानव तथा भूमण्डल पर बसने वाले प्राणी मात्र की सुख-शांति को सुरक्षित कर देने की घोषणा द्वारा कटिबद्ध होते थे। इस श्रावणी वेद सप्ताह के पर्व द्वारा श्रावण मास में शुद्ध और आर्ष ज्ञान की प्राप्ति से तथा पवित्र और आदर्श जीवन वाले संन्यासी; ब्राह्मणों तथा विद्वानों के सत्संग से स्वाध्याय एवं तप आदि के द्वारा इस संकट कालीन दुनियां से हटकर आत्म शांति की दुनियां में पहुँच कर आनन्द अनुभव करता, जो वास्तविकता में जीवित स्वर्ग प्राप्ति ही होती। किन्तु इस शुभ कर्म के लिए श्रद्धा अवश्य चाहिए। मानव प्राणी वर्ष के ११ मास में जहां भोजन प्राप्त कर शारीरिक शान्ति और अर्थ यथा ऐश्वर्य की प्राप्ति से मानसिक सुख और शांति प्राप्त कर लेता है वहीं इस श्रावण मास के द्वारा आत्म शांति की यथेष्ट सामग्री प्राप्त कर लेता था।

इस परम्परा की रक्षा प्रातः स्मरणीय महर्षि श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज की अनन्य कृपा से उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज से कुछ अंश में हो रही है।

* राजनैतिक रंग मंच *

संसार की राजनीति का भावी स्वरूप

(१)

किसी राजनैतिक सिद्धान्त का प्रचार और उसे क्रियान्वित करने का प्रयत्न करने वाले व्यक्ति को राजनीतिज्ञ कहते हैं। राजनैतिक दल के अधिकांश सदस्यों को अपने दल के कार्य क्रम का अधिक तो क्या थोड़ा सा भी ज्ञान नहीं होता उसके राजनैतिक सिद्धान्त के दार्शनिक आधार के परिज्ञान के विषय में तो कहना ही क्या है। वे लोग नाम की चमक का अनुसरण करते हैं। वे समाज वादी, लिबरल, टोरी साम्राज्यवादी साम्यवादी आदि २ होते हैं। किसी पार्टी या दल में बहुसंख्यक लोगों के होने का कारण यह नहीं होता कि वे सब समस्त राजनैतिक सिद्धान्तों पर सुव्यवस्थित रूप से विचार करके दल में सम्मिलित हुए होते हैं अपितु इसका कारण गुटबंदी की भावना होती है जिसके प्रवाह में वे सहज ही बह जाते हैं। यदि इनसे यह प्रश्न कर लिया जाय कि उनकी राजनैतिक मान्यता क्या है तो वे बगलें झांकने लगते हैं और विभिन्न प्रकार की व्याख्याएं प्रस्तुत करने लग जाते हैं।

यदि इनमें से किसी में साहस हुआ तो वह कह बैठता है कि मुझे राजनैतिक मान्यता का तो अधिक ज्ञान नहीं है मैं अमुक नेता को पसन्द करता हूँ इसीलिए उसका अनुयायी हूँ। *वस्तुतः वर्तमान राजनीति मानवीय स्वार्थों और मनोविकारों का युद्ध क्षेत्र है।*

वर्तमान कालीन राजनैतिक स्थिति को ठीक रूप में समझने के लिए कम से कम पिछले २००० वर्ष के राजनैतिक इतिहास पर विहंगम दृष्टि डालना आवश्यक है जब कि एक या दो जनतंत्र शासन थे और सर्वत्र उच्च वर्गीय शासन (कुलीन तंत्र) प्रथा प्रचलित थी। इन दिनों अधिकांश आधुनिक जनतंत्र शासनों से भिन्न जनतंत्र शासनों का स्वरूप भी उच्चवर्गीय था। उन दिनों राज्य और साम्राज्य विद्यमान थे। राजा लोग ही सर्व प्रभुता सम्पन्न थे। उनकी शक्ति मुख्यतः उच्च वर्गों पर आश्रित थी। सूक्ष्म रूप से वह पुरोहित वर्ग पर केन्द्रित थी। यद्यपि कभी २ मिश्र के समान, राजा धर्माचार्य भी होता था तथापि वह ऐसी कोई महत्व की बात न कर पाता था जो पुरोहित वर्ग के हितों के विरुद्ध जाती हो क्यों कि इन दिनों संस्कृति और ज्ञान विज्ञान का प्रतिनिधित्व यही पुरोहित) वर्ग करता था प्राचीन काल में राजा के मार्ग दर्शक के रूप में पुरोहित लोग ही राज दरबार में उपस्थित रहते थे। प्राचीन भारतीय राजाओं और सम्राटों का विद्वानों और ऋषिमुनियों के द्वारा ही मार्ग प्रदर्शन होता था।

इन दिनों वीरता, व्यक्तिगत त्याग और उत्तम शासन के आधार पर ही राजपद प्राप्त होता था। कौशल एक विशेष योग्यता समझी जाती थी। हिन्दू शास्त्रों में क्षत्रिय को यों ही प्रजा का रक्षक नहीं कहा गया है। वह अपने बल से समाज की सेवा करता और उसकी रक्षा में अपना खून बहाने के लिए सदैव उद्यत रहता था। इसी कारण उसे समाज में बड़ा सम्मान प्राप्त रहता था।

सांस्कृतिक वर्गों की गड़बड़ के इस आधुनिक काल में अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि कोण से देखा जाय तो सैनिक वर्ग रक्षक वर्ग नहीं समझा जा सकता। इस वर्ग की मनोभावना इतनी अधिक आक्रामक बनी हुई है, और यह

हालैंड निवासी प्रसिद्ध मनोविज्ञान वेत्ता डा० मीज की विचार धारा

आक्रान्ताओं के हाथ में इतना अधिक खेलता और और इतना अधिक शक्तिसम्पन्न हो गया है कि यह बिल्कुल निकम्मा बन गया है। जहरीली गैसें और बम निर्दोष प्रजा के नगरों को नष्ट भ्रष्ट कर देते हैं। वर्तमान युद्ध में सर्वाधिक सुरक्षित स्थान खाइयों में प्राप्त होता है इस कहावत में यद्यपि अतिशयोक्ति से काम लिया गया है तथापि यह अब भी महत्त्वपूर्ण कहावत है।

प्राचीन काल में उच्चवर्ग कठोर परिश्रम से और कठोर परीक्षाओं में से गुजरकर प्राप्त होता था। योद्धाओं को अपने बलवीर्य का प्रमाण देकर नियत परीक्षणों में विजयी होना पड़ता था परन्तु यह विजय एक मात्र पशु बल तक ही सीमित न थी। राज्यपद पैतृक न था और न वंश परम्परा से ही सम्बद्ध था। उसे अपनी ताकत, बहादुरी और सेवा कार्य की योग्यता का प्रदर्शन करना पड़ता था और तभी वह प्रजा का नेतृत्व करने एवं उन पर शासन करने के योग्य समझा जाता था।

कभी २ ये परीक्षण बड़े कठोर होते थे। उदाहरण के लिए पेरू के भावी राजा का चुनाव करने के लिए पेरू के योग्य एवं पवित्र रक्त के लड़कों को उग्र शारीरिक और मानसिक नियंत्रण में से गुजरकर अपनी विशिष्टता प्रमाणित करनी होती थी। अत्यधिक बलवान परिश्रमी और श्रेष्ठ सिद्ध होने वाला लड़का ही जीवित राजा का उत्तराधिकारी नियत होता था।

इसके पश्चात् हम वंशाधिकार में परिवर्तित राज पद को धन और शक्ति का संचय करते और धीरे २ रक्षा एवं नेतृत्व से पृथक् होकर सुख और विषयभोग का जीवन व्यतीत करते हुए देखते हैं। यदि शुरु २ में इसके द्वारा ज्ञान विज्ञान और कला कौशल में उन्नति हुई तो बाद में इसके द्वारा संस्कृति की प्रगति कुंठित हो गई। यदि प्राचीन काल के योद्धा परमात्मा के झंडे के नीचे धर्मरक्षा के लिए युद्ध करते थे तो बाद के योद्धाओं का धर्म के साथ सम्पर्क टूटा हुआ देख पड़ता है। लोक कल्याण के स्थान में उन्होंने अपने लिए जीना आरंभ कर दिया था।

जब से राजाओं का प्रजाजनों के साथ सम्पर्क छूटा तबसे सामाजिक सामंजस्य छिन्न भिन्न हो गया। इसके फल स्वरूप वर्णाश्रम व्यवस्था भंग हो गई। अवश्य धर्म का कुछ प्रदर्शन कायम रहा परन्तु सीधे परमात्मा से प्राप्त होने वाली प्रेरणा तथा उसके प्रति दायित्व की भावना लुप्त हो गई। इस बीच में कसाइयों और चोरों के पेशों के समान सैनिक वाद एक पेशा बना। निस्सन्देह वर्तमान युग में अत्यधिक मानवीय भावनाओं और अनुशासन से अनुप्राणित होकर सैनिक व्यवसाय ऊंचा तो उठा परन्तु महाभयंकर आयुधों और युद्ध प्रणालियों से भयंकर भी बन गया है।

वर्तमान युग में चारित्रिक उच्चता के लगभग सभी परीक्षण समाप्त हो गए हैं। युद्ध में प्रदर्शित वीरता अब भी विशिष्ट सम्मानों के द्वारा पुरस्कृत होती है लोकसेवा की उपयोगिता उपाधियों के द्वारा स्वीकृत की जाती है परन्तु ये सब गौरवपूर्ण प्रथाओं की जूठन मात्र है। सैनिक परीक्षणों के अतिरिक्त जो सुयोग पर आश्रित है, अन्य सब परीक्षण बुद्धि के परीक्षणों में परिवर्तित हो गए हैं।

चरित्र और सामाजिक भावना के परीक्षणों ने विचार और कण्ठस्थ करने की क्षमताओं का रूप ले लिया है। क्रियात्मक जीवन के परीक्षण कागज के परीक्षणों में बदल गए हैं। केवल पौरोहित्य वर्ग अपवाद है, परन्तु जिन धर्मों में यह वर्ग वंशानुक्रम से सम्बद्ध है उनमें उनकी आचारिक योग्यता और क्षमता के परीक्षण भी समाप्त हो गए हैं। (क्रमशः)

—प्रायः सब मनुष्य यह चाहते हैं कि सत्य मेरे पक्ष में रहे परन्तु विरले ही पुरुष सत्य के पक्ष में रहते हैं।

सार्वदेशिक सभा का स्वर्ण जयन्ती महोत्सव

लेखक—श्री मदनमोहन जी सेठ भूत पूर्व प्रधान सार्वदेशिक सभा

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का जन्म २५ सितम्बर १६०८ ई० को आगरा नगर में हुआ था। उस समय मैं आगरा कालेज में विद्याध्ययन कर रहा था। एम० ए० पास कर चुका था और एल० एल० बी० की परीक्षा की तैयारी में लगा था।

आगरा कालेज लिटरेरी सोसाइटी का मन्त्री था। स्व० श्री पं० भगवानदीन जी की अध्यक्षता में सार्वदेशिक सभा की स्थापना, हींग की मंडी, आर्य समाज मन्दिर में हुई। आगरा कालेज लिटरेरी सोसाइटी के मन्त्री के नाते मैंने श्री पं० भगवानदीन जी से सोसाइटी में व्याख्यान देने की प्रार्थना की। उन्होंने सोसाइटी की मीटिंग में ईश्वर स्तुति, प्रार्थना, उपासना पर विद्वतापूर्ण और भक्तिभाव से भरा व्याख्यान दिया। कालिज के तत्कालीन प्रिन्सिपल स्व० मि० टी० सी० जोन्स मीटिंग के अध्यक्ष थे। कालेज के विान प्रोफेसर स्व० मि० डी डब्लू० टी० मेलीगन भी उपस्थित थे। उन्होंने व्याख्यान का भाव बड़े सुन्दर रूप में अंग्रेजी में प्रस्तुत किया।

सार्वदेशिक सभा की उस मीटिंग में स्व० महात्मा मुंशी राम जी (पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द जी) तथा अन्य गणयमान्य आर्य नेता सम्मिलित हुये थे।

इसके चार मास पश्चात् ही महात्मा मुंशीराम जी ने अपनी प्रस्तावना मेरे उन पत्रों के सम्बन्ध में लिखी थी जो **"Arya Samaj a political body"** के नाम से आर्य समाज के समर्थन में गुरुकुल कांगड़ी से प्रकाशित होने वाले वैदिक मेगजीन नामक अंग्रेजी मासिक पत्र में मुद्रित हुये थे, और जो स्व० महात्मा हंसराज जी तथा स्व० पं० घासी राम जी को पसन्द आये थे।

अगले वर्ष अर्थात् १६०६ से सार्वदेशिक सभा के अधिवेशन देहली में होने लगे और वही उसका मुख्य स्थान नियत हुआ।

१६५८ में सार्वदेशिक सभा को संस्थापित हुये पूरे ५० वर्ष हो जायेंगे। आर्य जगत् को चाहिए कि वह अपनी केन्द्रीय सभा की स्वर्ण जयन्ती बड़े समारोह और उत्साह से मनावें और कुछ ऐसे ठोस कार्य करें जिससे समाज का गौरव तथा प्रभाव सारे जगत में फैल जावे।

स्व० श्री महात्मा नारायण स्वामी जी ने सार्वदेशिक सभा का २७ वर्षीय इतिहास लिखा है। उससे यह बात भली प्रकार विदित हो जाती है कि १६२५ ई० के मथुरा में मनाये गये दयानन्द जन्म शताब्दि महोत्सव ने सार्वदेशिक सभा में जान डाल दी। तब से यह सभा उत्तरोत्तर उन्नति पथ पर अग्रसर है।

यदि हम सार्वदेशिक सभा की स्वर्ण जयन्ती अच्छे परिमाण पर मनाएंगे तो निश्चय ही उसका कार्य क्षेत्र बहुत उन्नत और व्यापक बन जायेगा।

यह महोत्सव देहली नगर में मनाना उपयुक्त होगा। फरवरी मास अर्थात् बसन्त ऋतु इसके लिये उचित रहेगा। इन्हीं दिनों दयानन्द जन्म शताब्दी महोत्सव भी मनाया गया था।

अभी २॥ वर्ष है तब तक बहुत सी तैयारी की जा सकती है।

(१) सबसे अधिक आवश्यकता सभा के लिये एक अच्छे भवन की है। महात्मा नारायण स्वामी जी अपने २७ वर्षीय इतिहास में बलिदान भवन के संबन्ध में लिखते है :–

"दुःख है कि भवन अपनी महत्ता और आवश्यकता के अनुसार नहीं बना है।" अब तो और भी दिक्कतें बढ़ गई है। नया बाजार में जहां सम्प्रति

भवन है, काम काज बहुत बढ़ गया है। वहां शोर अधिक रहता है विचार विमर्श में कठिनाई पड़ती है।

सभा के लिये कोई अच्छा भवन नई देहली में लिया जाये। स्व० लाला नारायणदत्त जी एवं स्व० लाला ज्ञानचन्द जी की इस सम्बन्ध में बड़ी याद आती है। यदि आज वे होते तो इस कार्य में बड़ी सहायता मिलती। फिर भी हमें निराश न होना चाहिये। सौभाग्य से हमारे मध्य श्री सेठ हंसराज जी मौजूद हैं, उन्हीं के दानवीर श्वसुर स्व० सेठ रघुमल जी के भवन में इस समय हम अपने कार्य करते है।

(२) आर्य समाज हींग की मण्डी, आगरा में एक छोटा सा स्तम्भ अथवा कमरा बनाया जाये जिस पर सार्वदेशिक सभा की स्थापना तिथि इत्यादि और उन सज्जनों के नाम जिन्होंने उस समय स्थापना में भाग लिया अंकित किये जायें और सितम्बर १९५८ में किसी उचित अवसर पर उसका उद्घाटन कराया जाये।

(३) एक डोक्यूमेंट्री फिल्म तैयार कराया जाये। उसमें महर्षि की जीवनी की विशेष घटनायें दिखलाई जायें तथा उनके टंकारा के गृह एवं मथुरा की विरजानन्द कुटी इत्यादि की झांकी रहे।

पं० गुरुदत्त, आर्य मुसाफिर लेखराम, स्व० श्रद्धानन्द, पं० भगवान दीन, महात्मा हंसराज ला० लाजपत राय, श्री नारायण स्वामी, पं० घासी राम इत्यादि के चित्र दिखाए जावें। परोपकारिणी सभा के प्रथम और मुख्य अधिकारी यथा महाराणा सज्जन सिंह, कर्नल प्रताप सिंह, राजाधिराज नाहर सिंह जी, श्री गोविन्द महादेव रानाडे इत्यादि के चित्र भी रखे जायें। आर्य समाज के बड़े बड़े समाज मन्दिर तथा इन्स्टीटियूशन जैसे बम्बई आर्य समाज गुरुदत्त भवन लाहौर, नारायण स्वामी भवन लखनऊ, डी० ए० वी० कालेज लाहौर और डी० ए० वी० कालेज, कानपुर इत्यादि के चित्र भी रहें।

दयानन्द जन्म शताब्दि मथुरा, दयानन्द निर्वाण शताब्दि तथा हैदराबाद सत्याग्रह इत्यादि के दृश्य दिखाये जायें।

४) इस अवसर पर सार्वदेशिक आर्य संग्रहालय की स्थापना हो इसमें महर्षि दयानन्द के हस्त लिखित ग्रन्थ उनके वस्त्र और वस्तुयें रखी जायें। आर्य समाज के हुतात्माओं और नेताओं के चित्र रहें। उनकी हस्त लिपियां और स्मृति सूचक वस्तुयें भी हों।

(५) सम्भव हो तो सार्वदेशिक पत्र साप्ताहिक किया जाए जो विचार पत्र हो और सारे देश में पहुँच सके।

(६) आर्य समाज का इतिहास जिसे श्री पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति लिख रहे हैं उस समय तक छप कर जनता के हाथ में होना चाहिए। इस इतिहास का संक्षिप्त विवरण अंग्रेजी में भी प्रकाशित हो जिसे आर्य भाषा से अपरिचित भाई भी आर्य समाज की गति विधि से परिचित हो जायें।

७) सार्वदेशिक सभा का ५० वर्षीय इतिहास श्री पं० हरिशंकर शर्मा कविरत्न से तैयार कराया जाए। इस इतिहास के परिशिष्ट स्वरूप प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं के संक्षिप्त इतिहास भी दिखाए जावें। यह इतिहास भी स्वर्ण जयन्ती समारोह तक प्रकाशित हो जाना चाहिए।

—श्रेष्ठ विचारों वाला व्यक्ति कभी अकेलापन अनुभव नहीं करता।

—संसार पर विचारों का ही शासन होता है।

—युवावस्था की मूर्खताएं बुढ़ापे को अपमान जनक बना देती हैं।

—सत्य समस्त ज्ञान का आधार और समाज का सीमेंन्ट होता है।

—सत्य का अनुसंधान प्राय: बहुत से व्यक्ति कर लेते हैं परन्तु सत्य को क्रिया में बहुत कम व्यक्ति लाते हैं।

बाइबिल की वास्तविकता

लेखक—श्री सूर्य्यनारायण सिंह साहित्य सदन, नारघाट, मिरजापुर।

ईसाइयत है क्या ?

लैटिन शब्द बाइबिल ईसाइयों की एक पुस्तक का नाम है जिसके दो खण्ड हैं—(१) पुराना अहद-नामा और (२) नया अहदनामा। यह पुस्तक अपने वर्तमान रूप में सन् १६११ ई० में इंगलैण्ड के राजा जेम्स प्रथम के शासन काल में अंग्रेजी में इंगलैण्ड के पार्लामेण्ट के अधिकार से छपी। इलाहाबाद में श्री मित्र के इण्डियन प्रेस में १६२६ में हिन्दी में छपी। इस बाइबिल का नाम "धर्मशास्त्र व पुराना नया धर्म नियम" रखा गया। इञ्जील का नाम हिन्दी में 'सुसमाचार' और अंग्रेजी में 'दि स्क्रिप्चर' है। दोनों पुस्तकों में कपोल कल्पित कहानियां हैं और अनोखी, अवैज्ञानिक, अयथार्थ उत्पत्तियों का वर्णन है। धर्म की कोई बात नहीं है। धर्मशास्त्र नाम लोगों को धोखा देने के लिये रखा गया है।

पुराने अहदनामे से १४ पुस्तकें और नये से १४ पुस्तकें कुल २८ पुस्तकें सन्दिग्ध (अपाक्रिफल apo-cryqhal) ठहरा कर निकाल दी गई हैं। पुराने अहदनामे में गौड (God) की कुछ आज्ञायें हैं। उनमें हीदनों व गैर यहूदियों को और सब यहूदियों के गौड का कोपभाजन होने के पश्चात् उनका स्थान लेनेवाले गौड के अनुगृहीत ईसाइयों से पृथक् गैर ईसाइनों को मिठाकर उन्हें ईसाई बनाने की आज्ञा ईसा गौड देते है। यही काम ईसाई मिशन का है।

गौड (God) की व्युत्पत्ति

गौड शब्द की व्युत्पत्ति क्या है कोई नहीं कह सकता। यह न ग्रीक न लैटिन न सैक्सन भाषा का ही शब्द है। डौग (Dog) के उलटे गौड (God) शब्द का प्रयोग लगभग एक हजार वर्ष से होने लगा है। दसवीं सदी में रिचार्ड प्रथम (जो बड़ा धार्मिक और शक्तिशाली था) के समय तक गौड शब्द का पता नहीं था। हेनरी सप्तम से पहिले तक सब अशिक्षित थे। मुसलमानों को कुत्तों से हमेशा से नफरत रही है। नवीं और दशवीं शताब्दी में ईसाइयों से मुसल-मानों की लड़ाइयां हुईं। इस्लाम फ्रान्स तक पहुंच गया था। चार्लमेन ने पेरीनीज की लड़ाइयों में मुसल-मानोंको हराया न होता तो ईसाइयत का आज पता न होता। ईसाई लोग मुसलमानों को 'यु डाग' (you dog) कहकर चिढ़ाया करते थे। उनके खुदा को डाग कहते थे।

ग्रीस और स्काटलैण्ड आदि पर्वतीय देशों में कुत्ते बच्चों की रखवाली करते थे। आल्प्स पर्वत पर सेण्ट बरनार्ड मोनेस्ट्री थी जिसमें मौंक लोग ऐसे कुत्ते पालते थे जो बर्फ के गड्ढों में गिरे या बर्फ से ढके प्राणी की जान बचाते थे इसलिए कुत्तों को सेवियर (हाफिज या रक्षक) कहते थे। खुदा को भी सेवियर याफिज या रक्षक कहते हैं। इसलिये डौग के सामने भी पराजितो का सिर झुकवा लिया इस विचार से सेवियर डौग के अक्षरों को उलटे रखकर सेवियर गौड बना। अब तो गौड प्रचलित होगया और गौड के सामने सब का सिर झुक रहा है।

कुत्ता अपने मालिक के लिये अपनी जान दे देता है। इसी लिये खुदा ईसा ने अपनी जान अपने प्रभु गौड के लिये दी। इस प्रकार सांसारिकता को आध्या-त्मिकता का रूप दिया गया।

बाइबिल में गौड

डौग और गौड में बहुत कुछ समानता होने के कारण ईसाइयों को दोनों अति प्रिय हैं। गौड लोक का स्रष्टा बतलाया जाता है। जल के ऊपर गौड की आत्मा तैरती हुई स्थित थी। गौड का बैरी शैतान

यह आवश्यक नहीं कि सम्पादक लेखक से सर्वांश सहमत हो। —सम्पादक

गौड को ही स्वयंभू ठहराया जाता है। गौड मिट्टी से आदम को और आदम की पसली निकाल कर स्त्री हौव्वा का सृजन करता है। इस प्रकार आदिम आदम आदम इव स्त्री हौव्वा बनते हैं। गौड आदम और हौव्वा को दजला और फरात नदियों के बीच अदन के बाग में रखता है। गौड आदम को सब वृक्षों के फल खाने की आज्ञा देता है किन्तु भला बुरा पहिचान करने वाले वृक्ष के फल खाने से वर्जता है। सांप के बहकाने से आदम और हव्वा वर्जित वृक्ष का फल खाते हैं जिससे इन्हें ज्ञान होता है कि वे नंगे हैं। इस विवेक के प्राप्त होने के कारण गौड आदम और हौव्वा दोनों को बागे अदन से निकाल देता है और उन्हें शाप देता है कि वे अपने पसीने की कमाई की रोटी खायं इत्यादि।

ईसा

इंजीली ईसा की कहानी का आरम्भ यूसुफ की मंगेतर कुंआरी मरियम के मैथुन से पूर्व गर्भवती होने और पुत्र जनने से होता है। मेरी, मरियम या मर्य्यमा पुत्र जनती है जिसका नाम इम्मानुएल (अर्थ गौड हमारे साथ) रखा जाता है। अंग्रेजी में मेरी, उर्दू में मरियम और संस्कृत में छपी इंजील में मर्य्यमा ईसा की मां का नाम छपा है शेक्सपीयर को रचनाओं में यीजीस और क्राइस्ट अज्ञात थे। कुरान में ईसारूह अल्लाह छपा है। सो यदि अल्लाह की रूह या प्राण उससे अलग कर दिया जाय तो अल्लाह निष्प्राण रह जाता है।

इंजील में प्रयुक्त शब्दों से इंजीली कहानी के आधार का पता लगता है। वैदिक शब्द 'ईशा' इब्रानी ईसा बन जाता है। संस्कृत ईशस, इब्रानी ईसस अंग्रेजी जीसस बनता है। (देखिये इम्पीरियल डिक्शनरी ईसाई संघ की नींव व पिता पितर, प्रस्तर (पेट्रास) पीटर ईसा का प्रमुख शिष्य बनता है। संस्कृत के वप् धातु में स्म प्रत्यय लगाने से वपतिस्म (अर्थ बीज बोया) अंग्रेजीका बैप्टिज्म बनता है। यह एक जल संस्कृत है जिससे लोग ईसाई बनाये जाते हैं।

शुक्ल यजुर्वेद का अन्तिम मन्त्र और कठोपनिषद् का प्रथम श्लोक है।—

ईशा वास्यमिदं सर्वम् यत्किञ्चिज्जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥

यही इंजील की कहानी का आधार है।

चर्च या ईसाई संघ का आधार पिता (फादर आफ दि चर्च रोमन कैथोलिक ईसाई आज तक अपने पादरी को फादर कहते हैं) पीटर जो ईसा का प्रमुख शिष्य था मछुआ था उसे जनता का मछुआ ईसा ने बनाया। इसका अर्थ होता है जिस तरह मछुआ मछली को जाल में फंसा कर उसे पानी से अलग करके मारता है इसी प्रकार उचित वा अनुचित हथ कंडों से अपनी तादाद बढ़ाने वाले ईसाई पादरियो का काम लोगों को जाल में फंसाकर मारना है। हिन्दुस्तान में श्वेतांग क्रिस्तानों ने इस देश को अपने जाल में फंसाकर भुखमरी की क्रिया को शाश्वत किया।

प्रार्थना

इंजील में निम्न वाक्यों में प्रार्थना करने का आदेश है- "ऐ हमारे बाप तू जो आसमान में है तेरे नाम की तकदीस हो; तेरी मरजी जैसी आसमान में है जमीन पर भी आवे, हमारी रोज की रोटी हमें दे। हमको अतिक्रम की ओर मत ले जा किन्तु पाप से छुड़ा जिस तरह हम पाप से छुड़ाते हैं कारण कि बादशाहत कुदरत जलाल हमेशा तेरा है।' इस पर स्वाभाविक आपत्ति होती है कि बाप का आसमान में होना असम्भव है। राज्य का कानून अतिक्रम का निर्णय करता है। गौड रोटी नहीं देता। अपने परिश्रम से रोटी मिलती है (गौड ने आदम और हौव्वा को शाप दिया था कि अपने पसीने की कमाई की रोटी खांय।) अंगरेज पादरियों का खाना खानसामा पकाता है बेअरा मेज पर उसे लाकर रखता है। तब कुरसी पर बैठकर मेज पर लगाये भोजन को खाना आरम्भ करने के पहिले खाने वाले उपरोक्त प्रार्थना करते हैं और इसके लिए खुदा का शुक्रिया करते हैं। यों ईसाई पादरी अहसान फरामोशी करते हैं और मानव श्रम को

अवहेलना करते हैं। यही ईसाइयत है। अब ईसाई ईमान की ओर दृष्टिपात कीजिए।

ईसाई जमायत उच्च स्वर से इस ईमान को कहती है यद्यपि रानी एलिजवेथ के समय तक इसका पता नहीं था। "मैं ईमान रखता हूँ खुदा कादिर मुतलक बाप पर जिसने आसमान और जमीन को पैदा किया। उसके एकलौते बेटे हमारे खुदावन्द यसू मसीह पर जो मुजस्सिम हुआ, कुंआरी मरियम के पेट से पैदा हुआ, पैंतूस पिलातूस की हुकूमत में दुःख उठाया, मस्लूब हुआ (शूली पर चढ़ाया गया) मर गया, दफन हुआ, तीसरे दिन मुर्दों में से जी उठा, कब्र से बाहर आया, चालीस दिन शागिर्दों के बीच में रहा तब आसमान पर चढ़ गया, खुदा बाप के दाहिने हाथ बैठा है जहां से वह जिन्दों और मुर्दों की अदालत के लिए आवेगा।' मेरा ४७ वर्ष ईसाई रहने और उच्चस्वर से इसे जमायत के संग कहने का अनुभव है कि ऐसा ईमान न तो किसी का होता है न हो सकता है।

(मती ३—१०) "आकाशवाणी हुई कि यह मेरा प्रिय पुत्र है जिससे मैं प्रसन्न हूं। उसकी तुम सुनो।" एक जगह लिखा है कि बप्तिस्मा लेने के पीछे पवित्र आत्मा कपोत के रूप में ईसा पर उतरी। क्या खूब! कैसा झूठ! बाप, बेटा और पवित्र आत्मा ये ट्रिनिटी हैं। यह त्रिनिटी शब्द भी संस्कृत का त्रीणि इति त्रीणीति ही है। पादरी कहता है 'मैं तुम्हें बाप, बेटा, पवित्र आत्मा के नाम से बप्तिस्मा देता हूं।' यह कहकर जल संस्कार करता है और ईसाई बनाता है। गौड का पुत्र ईसा, ईसा स्वयं गौड और गौड ईसा का बाप। इस प्रकार ईसा अपना पुत्र और अपना बाप दोनों या यों कहें कि ईसा गौड गौड का बाप है। खूब! आसमान गौड का सिंहासन है और धरती उसका पावदान है। आसमान (फर्मामेण्ट) मानो ठोस है जैसे धरती। महामूर्ख भी इस पर विश्वास नहीं करेगा।

बेगारी और उदारता

बाइबिल में लिखा है "जो कोई कोस भर बेगार ले जाय उसके संग दो कोस चला जा।" "जो कोई कोट मांगे उसे अपना लबादा भी दे दे।" क्या सुन्दर उदारता है भारतवर्ष में यही बेगारी की प्रथा का आधार बना। १८०८ ईसवी में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने बेगार लेने का कानून पास किया। इसके पहले इस देश में बेगारी प्रथा न थी।

(मती ६—१६, २० "अपना खजाना जमीन पर मत जमा कर वहां जंग और कीड़े लग जायेंगे। चोर चुरा ले जायगा। किन्तु आसमान में जहां न कीड़े लगेंगे न जंग और न चोर ही चुरा सकेगा।" यह असम्भव है। मिशनरियों का कुल व्यापार; सारा काम जमीन पर के खजाने पर ही आश्रित है। ईसाई अमेरिका अपना सारा सोना जमीन में ही जमा कर रख रहा है। इंजील में लिखा है:—अपने लिये अन्न भोजन वस्त्र की चिन्ता मत कर।" ऐसा कोई पागल ही करेगा। इस वाक्य से इंजील सबको पागल बनाना चाहती है।

ईसा के कुछ अनोखे काम या चमत्कार कोढ़ी को चंगा करना, अन्धों को आंख देना, मुर्दों को जिलाना, शाप से वृक्ष को सुखाना, मुर्दे की लाश को कब्र से निकलवा कर जिलाना, भूत प्रेत निकालना, अर्धांगी और लकवा मारे को चंगा करना, १२ वर्ष से खून जाती स्त्री को अपना वस्त्र पीछे से छू लेने से चंगा करना, पानी से शराब बनाना, पानी पर चलना, आंधी को डाट कर रोकना, पांच सात रोटियों से टोकरियों रोटी बना देना, सहस्रों को खिलाना फिर भी कई टोकरी रोटी बचा रहना। इत्यादि—यह सब झूठ है, कोरी कल्पना है, असम्भव है।

जजमेन्ट डे की असत्यता

एक धनी के सम्बन्ध में लिखा है कि धनी मेज पर खाता था और बेचारा दरिद्र लाजर उसकी मेज पर से गिरा जूठन खा कर अपना पेट भरता था, मरने पर धनी नरक में गया और लाजर बैकुण्ठ में। यह ईसाइयों के अकीदे (विश्वास) को कि आसमान पर ईसा खुदा के दाहिने हाथ बैठा है जहां से वह जिन्दों

और मुर्दों की अदालत के लिये आवेगा (जजमेण्ट डे को) झूठ सिद्ध करता है, जजमेन्ट डे आने के पहिले ही धनी और लाजर के नरक और बैकुण्ठ में जाने का फैसला कैसे हो गया। इंजील से बढ़ कर असत्यता किसी भी किताब में नहीं पाई जायगी।

ईसा कहते हैं कि यदि तुम्हारे में राई के दाने के बराबर ईमान हो और इस पहाड़ से कहो कि तू समुद्र में जाकर गिर तो वह समुद्र में जाकर गिरेगा। इस परख से तो सब ईसाई ईमान रहित ही ठहरते हैं क्योंकि ऐसा न कभी हुआ है न हो सकता है। यह सर्वथा असम्भव है राई को कौन कहे पर्वत बराबर भी ईमान क्यों न हो। क्या किसी ईसाई में राई बराबर भी ईमान नहीं जो इस कथन की सत्यता सिद्ध होती।

गौड

योहन्ना (जान) रचित इंजील में गौड की परिभाषा यों की गई है। 'आदि में वचन था, वचन गौड के संग था, वचन देहधारी हुआ यानी ईसा हुआ... ...' इससे मरियम से जन्मे ईसा और ईसाइयों का अकीदा दोनों गायब हो जाते हैं।

एक आज्ञा है तू खून मत कर।' परन्तु इसके बिल्कुल विपरीत ईसाइयों का इतिहास खून कत्ल जुल्म और डकैती से भरा पड़ा है। पर-स्त्री-गमन और व्यभिचार वर्जित है परन्तु श्वेतांगों में यह आम बात है।

ईसाइयों के जुल्म

सन् १४०८ से १६०८ तक तीन लाख पैंतालीस हजार मनुष्यों को यातना दी गई। ३२ हजार को जलाया गया। दूरदर्शी यन्त्र ईजाद करने वाले गैलीलियो को बारह वर्ष कैद रक्खा गया। बिशप काल्विन ने ब्रूनो को जीते दो घन्टे जलवाया। इङ्गलैण्ड की खूनी मेरी ने जो कैथोलिक थी ढाई सौ ईसाइयों (प्रोटेस्टेण्ट) को जीता जलवाया। प्रार्थना में तीन दस हजार ह्यूगनट ईसाइयों को फ्रांस में कत्ल किया गया। लोगों की अंगुली शिकंजे में कसकर पिच्ची की जाती थी। उन्हें तानकर चीरा जाता था। पैरों में कीलें ठोंकी जाती थीं। ईसाई धर्म मानने वाले श्वेतांग महाप्रभुओं के शासन काल में देश भक्त क्रान्तिकारियों की अंगुलियोंमें पिन चुभोया गया। जोगेशचन्द्र चैटर्जी के सिर पर पाखाना उड़ेला गया। इनकी टांगें बांधकर उन्हें उलटा लटकाया गया। लाहौर में एक अस्सी वर्ष के बूढ़े को और उसके बेटे को जो बैरिस्टर था लोहे के पिंजड़े में बन्द करके जेठ की धूप में रखा गया। अमरीका में लिंच लॉ से हब्शी को छुरी भोंक कर अधमुआ करके जलाया जाता रहा है।

ईसाई आज हिन्दुस्तान पाकिस्तान में बसे हैं और बसते जारहे हैं उन्होंने अपने हाते घेर रखे हैं। उनके अस्पताल, दवाखाने, स्कूल, कालिज हैं, खेती तथा इंजिनियरिंग आदि व्यवसाय की संस्थायें हैं। हिन्दुस्तान की गरीबीका अनुचित लाभ उठाकर अनेकों उपाय से यहां की भोली भाली निर्धन और अशिक्षित जनताको ईसाई बनाने का कार्यक्रम वे जोरों से चला रहे है। भारतीय जनता का कर्तव्य है कि सतर्क हो जाय और अपने पेट पर काबू रखकर ईसाइयों के इस जाल से बचे तथा अपने भोले भाले गरीब भाइयों को भी बचाने का भरपूर यत्न करें।

ईसाई रिलिजन बन्धन सिखाता है। तुम ईसा यानी श्वेतांगों के गुलाम हो यही सिखाता है। स्वतन्त्र भारत को इस ओर ध्यान देना चाहिए। हिन्दुस्तान पाकिस्तान में खरबों की अंग्रेजी अमरीकी पूंजी लगी हुई है जिसका सूद अमेरिका इंगलैण्ड को जाता है, बड़ी बड़ी योजनाओं में बड़े बड़े बंधे जो बांधे जा रहे हैं उनके बनाने में करोड़ों रुपये अंग्रेज अमरीकन इंजिनियरों को दिए जा रहे हैं। दामोदर घाटी के बँधे का सामान अमरीका से आता है। क्या हिन्दुस्तान की भी वही हालत होगी जो अमरीका, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका की हुई थी जहां श्वेतांग मालिक बसे हैं।

अभी समय है भारतीयों को सावधान हो जाना चाहिये नहीं तो समय बीतने पर चेते तो—
'का वर्षा जब कृषि सुखानी'।

महिला-जगत्

एक जापानी अमेरिकन पत्नी के अनुभव

(इतिहास का एक विद्यार्थी)

"मैं उन १० हजार जापानी पत्नियों में से हूँ जो द्वितीय महायुद्ध के समय अमेरिकन सैनिकों और सैनिक अफसरों के साथ अमेरिका में लाई गई थी। जिन समस्याओं से प्रवासी जन परेशान होते हैं उन्हीं से हम अमेरिकन जापानी पत्नियाँ परेशान रहती है क्योंकि हमारी संस्कृति, भाषा, रीति रिवाज पाश्चात्यता से नितान्त भिन्न है और उनकी इस सभ्यता के साथ सङ्गति नहीं बैठती।

मेरे पिता जापानी राज्य की कूटनीतिज्ञ सेवा में नियुक्त थे। मेरे बाबा जापान की औद्योगिक राजधानी ओसाका नगर में एक बड़े उद्योग पति थे। जब जापान पर अमेरिका का आधिपत्य हुआ था तब मेरी आयु २१ वर्ष की थी। मैंने कृत्रिम उपायों से सन्तति नियमन के विरुद्ध एक पत्र में लेख लिखा। मैक आर्थर के मुख्य स्थान के अमेरिकन सेंसर ने उस लेख का प्रचार बन्द कर दिया। इस पर मैं आग बबूला होकर उनके दफ्तर में गई और वहां सेंसर अधिकारी पैट मैलायें से मेरी भेंट हुई।

इस भेंट के फलस्वरूप हम दोनों की शादी हो गई। इसके कुछ दिन बाद ही हम अमेरिका पहुँच गए।

हम पहले १२००० की जन संख्या वाले एक कस्बे में रहे। उस इलाके में मैं ही पहली जापानी स्त्री थी और वहां की किसी स्त्री ने कभी जापानी बच्चा न देखा था। वे मेरे प्रथम बच्चे को देखने मीलों दूर से आतीं और बच्चे को उपहार दे जातीं। आज हम न्यूयार्क नगर से १ घंटे की मोटर यात्रा की दूरी पर रहते हैं। हमारी २ कन्याएं है। एक की आयु ८ वर्ष की और दूसरी की आयु ४ वर्ष की है।

हम जापानी और अमेरिकन महिलाओं में एक बड़ी विभिन्नता यह है कि अमेरिकन महिलाएं प्रतियोगिता से परेशान हैं। अमेरिका की महिला को जिन बहुत सी बातों के लिए प्रतियोगिता करनी होती हैं जापान में उनकी व्यवस्था रीति-रिवाज और परिवार प्रथा के द्वारा हो जाती है। उदाहरण के लिए जापानी महिलाओं को पति प्राप्ति के लिए परेशान होना नहीं पड़ता। परिवारों को ही इसकी चिन्ता करनी होती है।

कपड़ों में भी अमेरिकन नारी को प्रतियोगिता करनी होती है। जापान में समानआयु, व समान सामाजिक और आर्थिक स्तर की महिलाओं की वेष भूषा बहुत कम बदलती है। जब अमेरिकन नारियां छोटी होती हैं तो वे चमकीले रंग के कपड़े पहनती हैं और ज्यों २ वे बड़ी उम्र की होती हैं त्यों २ उनके कपड़ों का रंग गहरा होने लग जाता है।

मुझ से पूछा जाता है कि अमेरिका का मैं कैसा पसन्द करती हूँ ? यह कहने के लिए मैं विवशता अनुभव करती हूँ कि यह बहुत अच्छा और शानदार है। मैंने यह सीखा कि अमेरिका में पैर धरते ही एक निकम्मे होटल में पहली रात को मुझे जो कुछ अनुभव हुआ था उसका वर्णन मुझे स्पष्ट रूप में न करना चाहिए। मुझे यह कहना चाहिए 'बढ़िया, बढ़िया, आप की बड़ी कृपा रही, अमेरिकन दुःखद के स्थान में सुखद उत्तर सुनने में खुश रहते हैं। अमेरिका वासियों के विषय में यह बड़ी विचित्र बात है। उनका अनुरोध होता है कि प्रत्येक व्यक्ति खुश रहे यदि वह खुश नहीं

रहता तो वे उसकी उपेक्षा करने लग जाते हैं यहां तक कि गम्भीर व्यक्ति को वे अपने मध्य गुप्तचर मानने लग जाते हैं। मुझे बच्चा बनकर छोटी २ बातों में यह सीखना पड़ा कि किन बातों से उन्हें (अमेरिकनों) दुःख होता है। क्षमा मांगने की उन्होंने देर से आदत डाली हुई है जो उचित स्थान पर उदार और अच्छी आदतमानी जाती है परन्तु अमेरिकन व्यवस्था का इस से मेल नहीं खाता।

बहु संख्यक युद्ध कालीन जापानी पत्नियां संरक्षण के लिए एक साथ मिलकर रहती हैं क्योंकि वे अंग्रेजी जानती नहीं होतीं। हमें सब ओर से सहायता मिल सकती है परन्तु इस सहायता की खोज स्वयं हमें करनी होती है क्योंकि अमेरिका के लोग हमें मार्ग बताने की नहीं सोचते और यह भी नहीं जानते कि जापानी लड़कियाँ मारे शर्म के किसी के आगे हाथ नहीं पसारतीं।

एक अमेरिकन की जापानी पत्नि के यहां उसके घर जापान में १० नौकर थे। एक नौकरानी का काम केवल प्रातःकाल के समय उसके सिर में कंघी करना और बालों को संवारना रहता था। आजकल वह और उसका पति तीन बच्चों सहित दो तंग कमरों में रहते हैं और घर का समस्त काम कपड़े धोना, बच्चों को संभालना आदि स्वयं करते हैं।

जब मेरी बड़ी बेटी एक दिन स्कूल से आई तो उसने पूछा 'ममी! मैं कौन हूँ? मैंने सीधे स्वभाव कह दिया कि तुम आयरलैंड निवासी और जापानी का मिश्रण हो। दूसरे दिन उसने पूछा 'ममी क्या तुम जानती हो कि कोलम्बस ने अमेरिका का पता कब लगाया था? 'मुझे पता न था। ममी की अज्ञानता के विषय में हम दोनों को बड़ी हंसी आई। क्या हम सदैव इसी प्रकार हंसी में टालते रहेंगे या किसी दिन उसे अपनी माँ के कारण शर्मिंदा होना पड़ेगा?

(पृष्ठ २०५ का शेष)

वह शीघ्र ही विस्मृति के गहरे गड्ढे में विलीन हो जाने की अवस्था उत्पन्न कर रहा है क्योंकि संसार विशाल मानवता के हित में प्रयुक्त बुद्धि और बुद्धि जीवीका ही आदर करता और मानवता का अपमान वा उसका अहित करने वाले बुद्धि जीवी को शीघ्र ही भूल जाता है। संसार उन बुद्धि जीवी, चरित्र वान महापुरुषों का कितना कृतज्ञ है जो अपनी सुविकसित बुद्धि के द्वारा संसार को प्रकाशित और लाभान्वित करते हैं। उनकी बुद्धि का सदुपयोग प्रकाश स्तम्भ के उन दीपकों के समान होता है जो समुद्र तट से बहुत दूर के यात्रियों को प्रकाश देकर उनको रास्ता दिखाते हैं।

बुद्धि की गणना मनुष्य को चमकाने वाले गुणों में की जाती है। धर्म्म और शुभ कर्म में प्रेरित होने पर ही बुद्धि चमकती है। ससार में सत्य, सौन्दर्य और कल्याण की जो ज्योति देख पड़ती है वह सब धर्म और कर्त्तव्य मार्ग में प्रेरित बुद्धि का ही चमत्कार है। यही कारण है कि बुद्धि को कल्याण मार्ग पर आरूढ़ रखने के लिये बार २ परमात्मा से प्रार्थना की जाती है, बुद्धि को बुरे काम में लगाने और उस काम को बार २ करने से मनुष्य पाप पथ पर अग्रसर हो जाता और अच्छे काम में लगाने से पुण्य और यश का संचय करता है।

बुद्धि की सबसे बड़ी कमी यह है कि उसमें सहज प्रेरणा नहीं होती। सहज प्रेरणा का कार्य अन्तः प्रेरणा द्वारा होता है। जब बुद्धि अन्तः प्रेरणा के अनुकूल काम करने लगती है तब मनुष्य का कल्याण सुनिश्चित हो जाता है। यदि नैपोलियन बोना पार्ट का हृदय उसकी बुद्धि की प्रखरता का साथ देता तो उसकी गणना संसार के महापुरुषों में होती।

मनुष्य में यह एक व्यापक कमजोरी होती है कि वह अपने भाग्य से कभी सन्तुष्ट नहीं होता और अपनी समझ से कभी असन्तुष्ट नहीं होता। इस त्रुटि का सुधार उच्च आध्यात्मिक भावनाओं को हृदय में बिठाने और परमात्मा की शरण ग्रहण करने से होता है। जिस मनुष्य की बुद्धि को सदैव शुभ मार्ग में प्रेरित रखने वाली प्रेरणा होती है और जो मनुष्य पर सत्पुरुषों के आचरण और परामर्शों के द्वारा व्यक्त होती है। ये प्रेरणाएं ही हैं जो मनुष्य को विनम्र बनाती, उसके अभिमान पर पर्दा डालती और उसे वास्तविक अर्थ में मनुष्य बनाती हैं।

बाल-जगत्

बालिका विक्टोरिया की सचाई

बचपन में ही माता पिता ने विक्टोरिया को उत्तम गुण एवं शील सम्पन्न बनाने का पूरा प्रयत्न किया था। राजकुल में विक्टोरिया ही एक मात्र संतान थी, अतः इंगलैंड का राजमुकुट उसके सिर को भूषित करेगा, यह पहले से निश्चित था। यह प्रयत्न बड़ी सावधानी से माता लुइसा करती थी कि उनकी पुत्री में कोई दुर्गुण न आने पावे। विक्टोरिया को खर्च के लिये सप्ताह में एक निश्चित रकममिलती थी। विक्टोरिया उसके प्रायः खिलौने खरीद कर साथी बच्चों को बांट दिया करती थी। माता ने उसे कह रक्खा था कि किसी से कर्ज या उधार नहीं लेना चाहिये।

एक दिन अपनी आठ वर्ष की अवस्था में विक्टोरिया अपनी शिक्षिका के साथ बाजार गई खिलौने की दूकान पर आकर उसने एक छोटा सा सुन्दर बक्स पसन्द किया। उसके पैसे शिक्षिका के पास रहते थे। शिक्षिका ने बताया कि सप्ताह के पैसे हो गये हैं। दूकानदार ने कहा—आप बक्स ले जाइये पैसे पीछे आजायेंगे।

बालिका विक्टोरिया ने कहा—मैं उधार नहीं लूंगी मेरी माता ने मुझे मना कर रक्खा है। आप बक्स अलग रख दें। अगले सप्ताह जब मुझे पैसे मिलेंगे मैं उसे ले जाऊंगी। एक सप्ताह बाद पैसे मिलने पर विक्टोरिया ने जाकर वह बक्स खरीद लिया।

एक दिन विक्टोरिया का मन पढ़ने में नहीं लग रहा था। उसकी शिक्षिका ने कहा—थोड़ा पढ़लो। मैं जल्दी छुट्टी दे दूंगी।

बालिका ने कहा आज मैं नहीं पढ़ूंगी।

शिक्षिका बोली—मेरी बात मान लो।

बालिका मचल गई—मैं नहीं पढ़ूंगी।

माता लुइसा ने यह सुन लिया और पर्दा उठाकर उस कमरे में आ गई और पुत्री को डांटने लगीं—क्या बकती है?

शिक्षिका ने कहा—आप नाराज न हों राजकुमारी ने एक बार मेरी बात नहीं सुनी है।

बालिका विक्टोरिया ने तुरन्त शिक्षिका का हाथ पकड़ कर कहा—आपको याद नहीं है मैंने दो बार आपकी बात नहीं मानी है।

बचपन का यह उदार स्थिर एवं सत्य के पालन का स्वभाव ही था कि अपने राज्य काल में महारानी विक्टोरिया इतनी विख्यात तथा प्रजाप्रिय हो सकी।

अनमोल मोती

—बालकों को गन्दे साहित्य के पठन पाठन से सावधानी पूर्वक दूर रहना चाहिये।

—जो गुरु जनों (बड़ों) का आदर करता है उसके बल, आयु, विद्या और यश की वृद्धि होती है।

—सदा सत्य बोलो। झूठ बोलने वाले का लोग विश्वास नहीं करते।

—कोई बात बिना समझे मत बोलो। जब किसी बात की सचाई का पूरा पता हो तभी उसे कहो।

—व्यवहार में स्पष्ट रहो। जो काम तुमसे नहीं हो सकता उसे करने का वचन मत दो। नम्रतापूर्वक अस्वीकार कर दो।

ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन

ईसाई प्रचारकों के नये हथकंडे

(१)

ईसाई पादरियों ने आदि वासियों एवं हरिजनों के बीच ईसाई धर्म के प्रचार के जो हथकंडे अपनाये हैं, वे भारतीय संस्कृति तथा यहां की नई नई स्वाधीनता के लिए भी हानिकारक सिद्ध हो सकते हैं। यह मत हजारीबाग जिले में घूम कर सारी स्थिति का अध्ययन करने के बाद आर्य समाज के एक प्रचारक श्री भूपेन्द्र नारायणसिंह ने प्रकट किया है।

उन्होंने बताया है कि चितपुर नामक गांव में ईसाई पादरियों ने एक बार वहां के जंगली और देहाती क्षेत्र में हरिजनों एवं आदिवासियों की सभा में भारत सरकार की भरपूर निन्दा की और स्वाधीनता की अनर्गल बुराइयां उन्हें बतायीं। ईसाई पादरियों ने उनसे यहां तक कहा कि "१९४७ के पहले जब भारत में अंग्रेजी शासन था तब तुम स्वतंत्र थे, यहां की जमीन तुम्हारी थी, जंगल तुम्हारा था, पहाड़ तुम्हारा था और तुम उसमें स्वच्छन्द विचरण करते थे। पर गांधी जी का राज्य क्या आया, तुम्हारे ऊपर कष्टों के पहाड़ आ पड़े। तुम्हारी जमीन छीन ली गई और जंगल भी ले लिया गया।

"तुम भूखे और नंगे हो। अतएव अब ईसा की शरण में आओ और उनसे प्रार्थना करो कि हम फिर से सुखी हों, पुनः पूर्व का-सा जीवन व्यतीत करें।"

हजारीबाग जिले में विभिन्न गांवों में इस तरह का भ्रामक प्रचार जोर-शोर से चल रहा है। लोगों को प्रभावित करने के लिए विद्यालय खोले जा रहे हैं, दवाखाने खोले जा रहे हैं और उन्हें ईसाई बनाया जा रहा है। भोले-भाले ग्रामीणों में बिस्कुट, लेमनजूस, चौकलेट, अमरीकी घी एवं वस्त्र आदि का वितरण किया जाता है, इसके भी कई उदाहरण बड़े दिलचस्प मिले हैं।

अनर्थकारी तरीका

एक स्थान की कहानी है कि मिशनरी विद्यालय के कुछ अबोध बालकों को मोटरगाड़ी पर बैठा कर सुदूर जंगली स्थानों में ले जाया गया। बीच में बिलकुल सूनसान में मोटरगाड़ी अचानक रोक दी गई और बालकों से कहा गया कि गाड़ी खराब हो गई है, इस लिए बढ़ती नहीं। पादरी ने बालकों से कहा कि अब तो शाम हो गई, तुम लोगों के घर भी दूर हैं। मोटर खराब हो गई। तुम लोग अब भगवान राम और कृष्ण से प्रार्थना करो कि वह हमारी गाड़ी आगे बढ़ायें बेचारे अबोध बालक प्रार्थना करते हैं। मोटर चालक गाड़ी को आगे बढ़ाता नहीं। इस पर पादरी फिर कहता है, देख लिया अपने भगवान राम और कृष्ण को। अब जरा ईसा-मसीह से प्रार्थना कर देखो। राम कृष्ण तो बहरे हैं। ईसा-मसीह के नाम से प्रार्थना करवाई जाती है और प्रार्थना समाप्त होते ही गाड़ी बढ़ जाती है। यह जादू बालकों पर मनोवैज्ञानिक असर कर जाता है।

और भी उदाहरण हैं। कभी-कभी उन बालकों को अच्छे कपड़े आदि पहना कर देहातों में ले जाया जाता है। वहां के गरीब और वस्त्रहीन बच्चों से कहा जाता है कि देखो ईसा मसीह की शरण में आने से कितने अच्छे स्वच्छ वस्त्र मिलते है, मोटर पर चढ़ने को मिलता है। तुम भी ईसा की शरण में आकर अपना जीवन सुधारो। ये हैं हथकंडे ईसाई पादरियों के

राजकुमारी अमृतकौर से स्तीफा देने की मांग

(२)

स्थानीय आर्यसमाज दीवान हाल में आर्य युवक संघ के तत्वावधान में एक विराट अधिवेशन १० जुलाई

को ३ बजे मध्याह्नोत्तर से आयोजन किया गया। अपार जनता की भीड़ ने समारोह के साथ वेदमन्त्रों का पाठ किया। इसके पश्चात् श्री प्रो० रामसिंह जी एम० एल० ए० की अध्यक्षता में आर्य युवक संघ का अधिवेशन आरम्भ हुआ।

श्रीयुत लाला रामगोपाल जी शालवाले ने आर्य समाज में आई हुई शिथिलता और अकर्मन्यता आदि को दूर करने के लिये आर्य युवकों का देश व्यापी संगठन करने की योजना जनता के समक्ष रखी। ईसाई पादरियों की भयानक गतिविधियों की ओर संकेत करते हुये बताया कि गत तीन वर्षों से लगभग २६॥ करोड़ रुपया विदेश से ईसाई प्रचार के लिये आया। लगभग १० हजार विदेशी प्रचारक प्रचार कर रहे हैं। उड़ीसा मध्य प्रदेश कोचीन, ट्रावनकोर और आसाम की जनता बड़े वेग के साथ ईसाई बनाई जा रही है। इस समय अंग्रेजी राज्य से भी अधिक ईसाइयत का प्रचार किया जा रहा है। इन सभी समस्याओं पर गम्भीरता पूर्वक विचार करने और उनका हल निकालने के लिये आर्य युवक संघ स्थापित किया गया है। इसके पश्चात् बाल दिवाकर हंस ने एक प्रस्ताव के द्वारा राजकुमारी अमृतकौर के दिल्ली के मैसी हाल तथा मेरठ जिला अन्तगत बाघू स्थान पर दिये हुये भाषणों पर आपत्ति करते हुये कहा कि इस प्रकार के उत्तरदायित्वपूर्ण पद पर रहते हुये राजकुमारी अमृतकौर के लिये यह ठीक नहीं है कि वह आर्यसमाज पर घृणित आक्षेप करें। प्रस्ताव में मांग की गई कि वे इन आक्षेपों के लिये क्षमा मांगें या अपने पद का परित्याग कर दें। श्री ब्रजनारायण ब्रजेश ने अपने ओजस्वी भाषण द्वारा इस प्रस्ताव का समर्थन किया। श्री वेदराम के विशेष समर्थन पर वैदिक धर्म के जयघोष के साथ यह प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास हुआ।

इसके पश्चात् गोआ सत्याग्रह के वीर सेनानी श्री वी० जी० देशपांडे का दिल्ली के समस्त आर्य समाजों की ओर से स्वागत किया गया। श्री देशपांडे जी ने स्वागत का उत्तर देते हुये कहा कि गोआ से वापस आने पर मेरे ये विचार हो गये हैं कि गोआ की समस्या का हल केवल सत्याग्रह से न होगा। गोआ के भीतर लगभग ३५ प्रतिशत हिन्दू लोग ईसाई बनाये जा चुके हैं वहा के ६५ प्रतिशतक हिन्दुओं ने अपने धर्म की रक्षा की है। सरकार के बदलने के साथ ही वहां ईसाइयत का विशेष जोर न रहेगा ऐसी मुझे आशा है। इसलिये गोआ की समस्या को हल करने के लिये एक मात्र शुद्धि ही एक उपाय है। आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं को इस महान् कार्य को अपने हाथ में लेकर भारत मां की लाज बचाने के लिये अग्रसर होना चाहिये।

अन्त में श्री प्रो० रामसिंह जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि जिस प्रकार ब्रह्मचारी उषर्बुध तथा धीरेन्द्र शास्त्री ने योरुप में प्रचुर मात्रा में प्रचार किया है तथा लन्दन में आर्यसमाज की स्थापना की और अब आर्यसमाज मन्दिर बनाये जाने की योजना बनाई जा रही है इसी प्रकार हजारों नवयुवक आर्य युवक संघ के झंडे के नीचे आकर आर्यसमाज की सेवा का व्रत लें। ऐसा करने से ही भारत माता के और टुकड़े करने वाले नये ईसाईस्तान को रोका जा सकता है। यह काम केवल मात्र आर्यसमाज कर सकता है। बड़े जोश के साथ वैदिक धर्म के नारे के साथ सायंकाल ६ बजे सभा समाप्त हुई।

रामगोपाल शाल वाले
मन्त्री
आर्य युवक संघ, दिल्ली राज्य, देहली।

ईसाइयों की शुद्धि

(१)

आर्य समाज खंडवा के तत्वावधान में ग्राम रुस्तमपुर पिपलोद खुर्द तहसील खंडवा (निमाड़) में १८ ईसाई परिवारों की जिनकी सदस्य संख्या ६६ थी शुद्धि की गई। इससे पूर्व १०-६-५५ को ग्राम मांझारिया में २३ ईसाई परिवारों की जिनकी सदस्य संख्या १०० थी तथा १८-६-५५ को छोटा बोरगांव में २२२ ईसाइयों की शुद्धि हुई।

अमृतकौर का विष वृक्ष फैलने लगा

(४)

पिछले दिनों भारत की स्वास्थ्य मन्त्राणी श्रीमती अमृतकौर ने देहली में विदेशी पादरियों का समर्थन और प्रशंसा की थी और परिगणित जाति के जो लोग ईसाई बन गये हैं उनके लिये विशेष अधिकार तथा छात्र वृत्ति आदि के लिये आन्दोलन करने का परामर्श दिया था। पता चला है कि अब इनके परामर्श से ईसाई मिशनरी योजनाबद्ध रूप में यह आंदोलन खड़ा कर रहे हैं। अभी हाल में मध्य प्रदेश के जगदलपुर स्थान पर अखिल भारतीय आदिवासी सम्मेलन ईसाइयों की ओर से किया गया था जिसमें सरकारी नुमाइन्दा श्रीकांत वैलफेयर कमिश्नर ने सब आदिवासियों को बिना किसी प्रकार का धर्म आदि का विचार किये समान रूप से सुविधा देने का मत प्रकट किया। बतलाया है।

जब कि ईसाइयों में कोई अछूतपन नहीं है और करोड़ों रुपया वार्षिक विदेशों से इनकी सहायता के लिये ले रहे हैं तो इनको सुविधा देना किसी भी प्रकार से राष्ट्रीय एवं वैधानिक कार्य नहीं माना जा सकता।

अभी हाल में श्रीयुत कुन्जर जनरल सेक्रेटरी छोटा नागपुर कैथोलिक सभा रांची ने भारत के प्रधान मन्त्री पं० जवाहरलाल नेहरू को इसी आशय का एक पत्र लिखा है और आदिवासियों के लिये हिन्दू हरिजनों को दी जाने वाली सुविधायें और छात्रवृत्ति की मांग की है और साथ ही मध्य प्रदेश की रायगढ़ तहसील के ईसाई आदिवासियों की स्थिति को शोचनीय बतलाते हुए आर्य समाजी व हिन्दू कार्यकर्ताओं पर ओछा वार किया है।

हम श्रीमती अमृतकौर और उनके इशारों पर नाचने वाले देशी व विदेशी ईसाई मिशनरियों और उनकी तथा कथित संस्थाओं की इस गतिविधि की कड़ी भर्त्सना करते हैं और भारत सरकार से अनुरोध करते है कि वह श्रीमती अमृतकौर की राष्ट्र विरोधी एवं साम्प्रदायिक गति विधि पर पूरा नियन्त्रण करें।

प्रगतिशील कथालिकों से पोप पन्थी कथालिकों को खतरा

(५)

चीन, रूस तथा अन्य साम्यवाद प्रभावित देशों में वहां के कथालिक ईसाइयों ने प्रगतिशील कथालिक चर्च की स्थापना करली है और रोम के पोप से जो यिसुमसीह के बाद पापों को क्षमा कराने का अपने को अधिकारी समझता है अपना नाता तोड़ दिया है। बाइबिल की प्रत्येक शिक्षा पर आंख मींच कर यह लोग अब विश्वास करना भी आवश्यक और उचित नहीं समझते। तथा बाइबिल की शिक्षाओं को बुद्धिवाद एवं मानववाद के प्रकाश से समझना चाहते हैं

उत्तरीय वितनाम (चम्पा) की सरकार ने कथालिकों की मतान्धता के विरुद्ध भारी संग्राम छेड़ा हुआ है। लाखों अन्धविश्वासी कथालिक उत्तरी वितनाम छोड़ कर दक्षिणी वितनाम आदि में चले गये हैं और निरन्तर जा रहे हैं। कथालिक पादरी भी भारी संख्या में उत्तरीय वितनाम से भाग गये हैं और बहुत से जेलों में बन्द हैं। अब यहां की सरकार ने प्रगतिशील कथालिक प्रचारकों को पोलेन्ड तथा फ्रांस से बुलाया है जो घूम २ कर सद्भावना का प्रचार कर रहे हैं। फ्रांस के एक प्रसिद्ध कथालिक पत्र के सम्पादक भी जिन्हें चर्च की विचारधारा की कड़ी समालोचना करने में ख्याति प्राप्त है उत्तरीय वितनाम में पहुँच रहे हैं।

हम उस दिन की आशा लगाए हुए हैं जब भारत में भी प्रगतिशील चर्च स्थापित होगा और विदेशी पादरियों और चर्चों के साथ मतान्धता एवं तर्क शून्य मान्यताओं के विरुद्ध वह खुलकर प्रचार करेगा।

अर्जेन्टाइना गणतन्त्र : अमेरिका

(६)

कलकत्ते से प्रकाशित हैरेल्ड समाचार-पत्र लिखता है अर्जेन्टाइना के एक लाख कथालियों ने पैरीन सरकार के विरुद्ध भारी विद्रोह खड़ा कर दिया है। श्री पैरीन अपने गणतन्त्र को कथालिकों के अन्धविश्वास एवं मतान्धता से मुक्त करना चाहता है और

इसी उद्देश्य से उसने वहां के चर्च से शिक्षा संस्थाओं को पृथक रहने की घोषणा की। क्योंकि यह शिक्षा संस्थाएं ही कथालिक मतवाद के प्रचार के सब से बड़े अड्डे हैं अतः पादरियों को यह सह्य न हुआ। उन्होंने अपने अनुयायियों को उभारा और उन्होंने खुला विद्रोह आरम्भ कर दिया। यहां तक कि यह लोग राजभवनों में घुस कर तोड़ फोड़ करने और अर्जेन्टाइना के राष्ट्रीय ध्वज को उखाड़ कर फूंकने तक पर उतारू हो गये।

शीघ्र ही इसकी प्रतिक्रिया भी आरम्भ हो गई और जनता ने बड़े गिरजाघर पर हमला बोल दिया। कथालिक धर्माध्यक्ष कोपैलो के निवास स्थान पर भी हमला किया गया।

अर्जेन्टाइना की सरकार ने कथालिकों पर तोड़-फोड़ व झण्डा फूंकने के खुले आरोप लगाये हैं और उसने देश द्रोहियों की धर पकड़ दृढ़ता के साथ आरम्भ कर दी है।

यह भी विचारणीय है कि यहां सरकार एवं जनता विश्वास की दृष्टि से कथालिक मतानुयायी है किन्तु मतान्धता एवं अन्धविश्वासों के विरुद्ध क्योंकि अब सारे ही विश्व में भारी विरोध खड़ा हो रहा है तो अमेरिका का यह गणतन्त्र कैसे बच सकता था, वह दिन दूर नहीं है जब कि यूरोप एवं अमेरिका के भी स्थान स्थान में इस कथालिक पन्थ के विरुद्ध आवाज उठेगी और संसार मतान्धता एवं अन्ध-विश्वासों के गढ़े से निकल कर बुद्धिवाद एवं मानवता के पवित्र वातावरण में श्वांस लेगा।

भारत के कथालिकों को भी अर्जेन्टाइना के इस बदले हुए दृष्टिकोण पर गम्भीरता के साथ दृष्टिपात करना चाहिये और अपनी गतिविधि में समय रहते मौलिक परिवर्तन कर लेने चाहिये।

रियासत जसपुर : मध्यप्रदेश : में ईसाई मिशनरियों का भयंकर जाल

(७)

मध्य प्रदेश की रियासत जसपुर में जो अब एक तहसील के रूप में विद्यमान है वहां के लगभग दो लाख आदिवासियों को स्वतन्त्र भारत में ईसाई बनाया गया है. आदिवासियों के प्रत्येक ग्राम में कथालिक मिशनरियों ने स्कूल खोलकर उनके बच्चों की शिक्षा अपने हाथ में ली है, और उन्हें अनिवार्य रूप से ईसाई मत की शिक्षा बराबर दी जा रही है और इस प्रकार आदि वासी हिन्दुओं को धर्म भ्रष्ट किया जा रहा है वहां उन्हें घोर अराष्ट्रीय बनाने का षडयन्त्र भी चालू है।

मध्यप्रदेश की सरकार ने सन् १९४८ ई० में ठक्कर बप्पा की अध्यक्षता में एक आदिवासी कल्याण विभाग खोला है और उसके आधीन जसपुर रियासत में ६० प्राथमिक विद्यालय ग्रामों में स्थापित किये हैं। इन स्कूलों के खिलाफ और मध्यप्रदेश की सरकार के खिलाफ कैथालिक मिशनरी निरन्तर शोर मचा रहे हैं। हम मध्यप्रदेश की सरकार से यह अनुरोध करेंगे कि वह इन ईसाई स्कूलों को जो शिक्षा की आड़ में बच्चों को धर्म भ्रष्ट और अराष्ट्रीय बना रहे हैं उन्हें तुरन्त बन्द कर दिया जाये और जिन कैथालिक मिश-नरियों ने नाबालिग बच्चों को ईसाई बनाया है उनके खिलाफ कड़ी कार्यवाही की जाये।

कथालिक मिशनरियों का विश्वव्यापी षडयंत्र

(८)

संसार के कोने-कोने में विशेष कर एशिया और अफ्रीका में अमरीका के पैसे के बल पर कैथालिक मिशनरी छाये हुए हैं। फ्री वर्ग जर्मनी का समाचार है कि इस समय विश्व भर में ४५ करोड़ कैथालिक ईसाई हैं और उनमें ३ लाख ६० हजार के करीब पुरोहित, पादरी कार्य कर रहे हैं। हर १२०० ईसाइयों में १ पादरी है। फ्री वर्ग की प्रामाणिक, कैथालिक पत्रिका हेर फेर कोरेम्स पौन्डेन्स में प्रस्तुत आंकड़ों के अनुसार इन पादरियों का परिमाण उन देशों में अधिक है जहां कैथालिक आबादी कम है जैसे जापान इसराइल आदि देश। इसी प्रकार भारत व अफ्रीका में भी कौने २ में कैथालिक मिशनरी छाये हुए हैं।

उक्त पत्रिका में यह भी प्रकाशित किया गया है कि विश्व भर के धर्म प्रान्तों (कैथोलिक धर्म प्रान्तो) में ६०००० विद्यार्थी पुरोहित शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। कैथलिकों जैसा संसार का कोई भी मत या सम्प्रदाय ऐसा नहीं जो इतनी सरगर्मी के साथ मिशनरी तैयार कर रहा हो, और संसार को ईसाई बनाने के स्वप्न को अरबों रुपया प्रतिवर्ष खर्च करके सत्य करने में संलग्न हो।

आज बुद्धिवाद एवं मानवता को अन्ध विश्वासी मतान्ध कैथोलिक मिशनरी भारी चुनौती दे रहे हैं। देखें संसार में बुद्धिवादी और मानवता के पुजारी किस दृढ़ता के साथ इस चुनौती को स्वीकार करते हैं।

नियोगी जाँच समिति मध्यप्रदेश का मिशनरिय ो द्वारा बहिष्कार

(१)

मध्य प्रदेश में ईसाई मिशनरियों का भारी जाल छाया हुआ है। चप्पे २ पर वहां देशी व विदेशी मिशनरी तैनात हैं। भारत के स्वतन्त्र होने के उपरान्त लाखों हिन्दुओं को बपतिस्मा देकर ईसाई बनाया है। ईसाई बनाने में सब सम्भव उचित व अनुचित साधनों का प्रयोग किया गया है।

मध्यप्रदेश की सरकार ने माननीय नियोगीजी की अध्यक्षता में मिशनरी जांच समिति नियुक्त की हुई है। समिति अपना काम तत्परता के साथ कर रही है। मिशनरियों की गतिविधि के सम्बन्ध में समिति ने ९९ प्रश्न प्रकाशित किये थे और वे विभिन्न धार्मिक सामाजिक नैतिक संस्थाओं को भेजे गये थे। विदित हुआ है कि मध्य प्रदेश के मिशनरियों ने इस समिति का बहिष्कार कर दिया है। इनके समाचार पत्रों में इस समिति के विरुद्ध विष उगला जा रहा है।

इस जांच समिति की नियुक्ति को यह मिशनरी लोग अपने ऊपर आक्रमण करना समझते हैं अब तक जो छापे इन मिशनरियों ने भोले हिन्दुओं पर मारे हैं अब उनका भन्डा फोड़ होने का इनको पूरा-पूरा भय है और इसी लिये समाचार पत्रों में शोर मचा रहे हैं। हमें मिशनरियों के शोर मचाने का कोई आश्चर्य नहीं, इन्होंने तो जसपुर व बड़िवीजन में सरकार द्वारा की जाने वाली शिक्षा विस्तार योजना का भी ईसाई मिशन पर भारी आक्रमण करना समझा है।

विदेशी धन, पशुबल तथा प्रेस की शक्ति के आधार पर ईसाई मिशन भारत में अब अधिक फूल फल न सकेगा। जिस समय तक भारत का ईसाई मिशन पूर्ण भारतीय बन कर भारतीय भाषा, भेष और संस्कृति को ना अपनावेगा और मतान्धता तथा अन्ध विश्वासों को तिलांजलि देकर बुद्धिवाद एवं मानववाद का आश्रय न। लेगा इसकी प्रगति सम्भव नहीं। —शिवदयालु तिलक पार्क मेरठ

दयानन्द वचनामृत

—धन्य है वे मनुष्य जो अनित्य शरीर और सुख दुःखादि के व्यवहार में वर्तमान होकर नित्य धर्म का त्याग कभी नहीं करते।

—जब तक जिओ तब तक सदा सत्य कर्म में ही पुरुषार्थ करते रहो किन्तु इसमें आलस्य कभी मत करो ईश्वर का यह उपदेश सब मनुष्यों के लिये है।

—अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्म्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे।

—सत्य का मूल ऐसा नहीं है कि जिसको कोई सुगमता से उखाड़ सके और (यदि) भानु के समान ग्रहण में भी आ जावे तो थोड़े ही काल में फिर उग्रह अर्थात् निर्मल हो जायगा।

वैदिक धर्म प्रसार व विविध समाचार

आर्य प्रतिनिधि सभा बंग आसाम के प्रोग्राम पर आर्य सन्यासी स्वामी जगदीश्वरानन्द धर्म सूरी ने आसाम में निम्नलिखित रूप से वैदिक धर्म का प्रचार किया :— डिबरूगढ़ में ता० १६ मई को गवर्नमेन्ट हाई स्कूल में श्री गणेश बिहारी शर्मा राष्ट्र भाषा प्रचारक के सभापतित्व में भारतीय संस्कृति पर भाषण २१ मई एवं ४ जून को डिबरूगढ़ मारवाड़ी हरिकीर्तन समाज में ईश्वर प्राप्ति विषय पर वेदोपदेश ६ जून को चाय बागान के प्रसिद्ध स्वत्वाधिकारी राय साहिब हनूमानबक्श कनोई के निवास स्थान पर वेदोपदेश। ७ जून को श्री ललित चन्द्र हजारिका के सभापतित्व में सभा में भाषण। शिव सागर में विशालजन धर्मशालास्थ शिवशंकर विद्यालय में श्री सुरेशचन्द्र ठाकुर के सभापतित्व में ८ जून को भाषण। ६ जून को दुलिया स्कूल में श्रीरविन्द्रकान्त द्विवेदी के सभापतित्व में भाषण १० जून को शिवशंकर विद्यालय तथा ११ जून को विद्यापीठ शिवसागर में श्री सुरेशचन्द्र बड़ ठाकुर के सभापतित्व में भाषण हुये। स्वामी जी के प्रचार से पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। प्रतिनिधि सभा की ओर से सत्यार्थ प्रकाश तथा वैदिक धर्म सम्बन्धी अन्य पुस्तिकाओं की प्रतियां आसाम में वितरणार्थ भेजी गई है। आर्य धर्म के दूसरे प्रचारक शंकर स्वामी आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार गोहाटी में गोहत्या निरोध समिति के सहयोग से पंचायती ठाकुर बाड़ी फैंसी बाजार में गोरक्षा के सम्बन्ध में पन्द्रह दिन प्रचार किया। पश्चात् आपके भाषण चार और पांच जून को शिलांग के आर्य समाज एवं आर्य स्त्री समाज में हुये। —जंगीलाल प्रचार मन्त्री

गढ़वाल आर्य समाज

१ जून से ३ जून तक चौककोट (गढ़वाल) में विराट् आर्य सम्मेलन हुआ। सम्मेलन के अध्यक्ष श्री खुशहालसिंह व श्री भवानीदत्त जी थे। उद्घाटन श्री शीशराम जी के द्वारा हुआ। सम्मेलन में कई संसद सदस्यों और आर्य विद्वानों ने भाग लिया। सम्मेलन में ग्रामो के पौराणिक सवर्णों के अत्याचारों की निन्दा की गई। गढ़वाल में आर्य समाज के प्रचारकों विस्तृत तथा दृढ़ करने के उपायों पर विचार किया। उत्तर प्रदेश की आर्य प्रतिनिधि सभा से उपदेशकों का प्रबन्ध करने तथा समाज के संगठन कार्य करने की मांग की गई।

हिन्दी संस्कृत परीक्षाएं

विरजानन्द संस्कृत परिषद देहली की हिन्दी एवं संस्कृत के माध्यम द्वारा होने वाली धार्मिक परीक्षाएं आगामि नवम्बर मास में होगी। आवेदन पत्र भेजने की अन्तिम तिथि १५ अगस्त ५५ है।

चेम्बूर कैम्प बम्बई

श्री महात्मा हरभजनलालजी ने १॥ मास पर्यन्त बम्बई के विभिन्न भागों में वैदिक धर्म का प्रचार किया।

आर्य वीर दल गाजियाबाद

स्थानीय आर्य वीर दल का बौद्धिक शिक्षण शिविर २७ से २८ मई तक श्री ओमप्रकाश जी पुरुषार्थी प्रधान सेनापति की प्रधानता में लगा। शिविर का उद्घाटन श्रीयुत पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति के द्वारा हुआ।

आदर्श विवाह

श्रीयुत फूलचन्द जी निडर (भिवानी) निवासी के पुत्र श्री मेधाकर आर्य 'सिद्धांतरत्न' का विवाह श्री ला० मंगलचन्द गडोला (राजस्थान) निवासी की बाल विधवा पुत्री शकुंतला देवी के साथ रविवार ३-७-५५ को देहली में सम्पन्न हुआ। विवाह संस्कार श्री आचार्य राजेन्द्रनाथ जी शास्त्री के द्वारा सम्पन्न हुआ। विवाह में श्री ला० रामगोपाल जी शालवाले उप मन्त्री सार्वदेशिक सभा, श्रीयुत शिवकुमार जी शास्त्री श्री बालदिवाकर हंस जी आदि २ महानुभावों ने भाग लिया।

* विदेश समाचार *

(१) आर्यसमाज एलडोरेट

आर्यसमाज एलडोरेट (ईस्ट अफ्रीका) का २७ मार्च से ११ अप्रैल तक २३वां वार्षिकोत्सव समारोह मनाया गया। नैरोबी के श्रीयुत पं० सत्यपाल जी, कम्पाला के श्री रणधीर जी नकुरु के श्री आर्यमुनि जी, भारत के श्रीकृष्ण शर्मा और किसुमु के श्री विप्रबन्धु जी तथा स्थानीय अनेक गण्य मान्य आर्यबन्धुओं ने उत्सव में भाग लिया। इस अवसर पर २७ मार्च से ६ अप्रैल तक बृहद् यजुर्वेद यज्ञ हुआ। प्रतिदिन यज्ञ के उपरान्त श्री पं० सत्यपाल जी तथा पं० श्री कृष्ण शर्मा के वेदोपदेश होते थे। ४ ४-५५ को बृहद् खेल हुए और १० अप्रैल को बिल्डिंग ट्रेडिंग कम्पनी के श्री दौलतराम जी द्वारा पारितोषिक वितरण हुआ। ८ ४ ५५ को बाल स्वास्थ्य प्रदर्शिनी हुई। श्री डा० अनन्तराम जी, श्री बख्शी जी और श्री रतीलाल पटेल ने बच्चों का निरीक्षण किया और श्रीयुत हंसराज जी की पत्नी श्रीमती पावती देवी जी ने पारितोषिक प्रदान किए।

किसुमू का आर्यवीर दल ७ ४-५५ को ही विप्र बन्धु जी के नेतृत्वमें एलडोरेट पहुँच गया था। ४ दिन के नवास में इस दल ने जनता की सेवा की और अपने सद्व्यवहार से लोगों को प्रसन्न किया। खेलों तथा बैंड से सर्व साधारण जनता बड़ी प्रभावित हुई। आर्यसमाज ने १ कप तथा श्री गुरदत्तसिंह ने १०० शिलिंग आर्यवीर दल को भेंट किए—

८-४-५५ को श्री स्वामी स्वतंत्रानन्दजी महाराज के निधन का नैरोबी से समाचार प्राप्त होते ही विराट शोक सभा हुई जिसमें उपनिवेश के विविध भागों से आए हुए सम्मान्य लोगों ने भाग लेकर श्री स्वामीजी के प्रति अपने भाषणों द्वारा श्रद्धांजलि प्रस्तुत की।

बाल सभा का भी आयोजन हुआ जिसमें एकमात्र छोटे २ बच्चों ने भाग लिया। भजन कविता, गर्वा-नृत्य आदि आकर्षक पुरोगम से जनता का मनोरंजन हुआ। इस आयोजन की सफलता का श्रेय श्रीमती इन्दिरा और कुमारी उर्मिला को विशेष रूप से प्राप्त है।

इस अवसर पर स्त्री सम्मेलन, हिन्दी वाक प्रतियोगिता भी सफलता पूर्वक हुए। प्रीतिभोज का भी आयोजन रहा।

(२) लंदन

श्रीयुत ब्र० धीरेन्द्र शील लिखते हैं :—

'हमें मौरीशस से एक डुप्लीकेटर प्राप्त हो गया है। इससे कुछ पुस्तिकाएं छापने की तय्यारी की जा रही है।'

'आर्यसमाज परिचय पत्रिका' Hope of the world नाम से प्रकाशित करने की योजना तैयार है। अंग्रेजी में एक मासिक बुलीटीन आर्यसमाज लंडन बुलेटिन के नाम से निकालने का निश्चय किया गया है। साथ ही फ्रेंच, जर्मन आदि अन्य युरोपीय भाषाओं में भी इसे प्रकाशित करने का विचार है।

ग्रीष्मकालीन भाषण माला के बीच में ही श्री पं श्रुतिकान्त विद्यालंकार के २ विशेष भाषण हुए। वे ब्रिटिश गयाना जाते हुए १५ दिन ठहरे।'

● शिक्षा संस्थाएं ●

गुरुकुल कांगड़ी

८-७-५५ को सब कुलवासियों ने मिलकर श्रमदान करके उत्साह पूर्वक वनमहोत्सव मनाया। आयुर्वेद कालेज को जाने वाले मार्ग पर शिरीष, नीम, जामुन, महुवा, शहतूत आदि के छायादार पेड़ गुरुजनों के हाथ से रोपे गये। पहिले पहल श्री आचार्य प्रियव्रत जी तथा सहायक मुख्याधिष्ठाता श्री पण्डित धर्मपाल जी विद्यालंकार ने शिरीष के पौदे का रोपण करके वनमहोत्सव का श्रीगणेश किया। इसके अनन्तर अन्य गुरुजनों ने भी पेड़ लगाये। रात्रि को वेद मन्दिर में गुरुकुल के वनस्पति शास्त्र के प्रो० श्री चम्पतस्वरूप जी का 'जंगली जानवरों का संरक्षण' विषय पर मैजिक लालटेन के चित्रों के साथ मनोहर व्याख्यान हुआ। आपने अनेक जानवरों की उपयोगिता और संरक्षण की कहानी सुनाई। ब्रह्मचारियों की गंगोत्री, यमुनोत्री यात्रा के चित्र भी प्रदर्शित किये गए। इस समारोह का सभापतित्व श्री पण्डित धर्मपाल जी विद्यालंकार ने किया।

* दक्षिण भारत प्रचार *

११ मई को मैं मदुरा रवाना हुआ। सुना था वहां एक आर्य समाज है और सोचा कि यदि उसकी स्थिति का अध्ययन कर कुछ सहायता करने से पुनः प्रगतिशील हो जयगा तो मद्रास प्रान्त में तीन समाजें हो जायेंगी। बीच में कोयम्बटूर में भी उतरा क्योंकि कुछ व्यक्तियों ने सूचना दी कि वहां पश्चिमी पंजाब के कुछ सज्जन हैं और उनकी सहायता से अवश्य ही समाज स्थापित हो जायगी।

कोयम्बटूर यह मद्रास प्रांत में एक जिला है। नगर भी विशाल एवं सभ्य है। कुछ पंजाबी सज्जनों से जिन की सूचना मुझे मिली थी मिला परन्तु उन्होंने आर्य समाज की स्थापनादि के प्रति उदासीनता ही दिखाई परन्तु मदुरा से आते समय एक सज्जन तद्देशीय ही मिले और उनके द्वारा कोयम्बटूर में कुछ काम करने का आश्वासन मिल गया है। आशा है कुछ हो सकेगा।

मदुरा—यह नगर मद्रास प्रांत में भारत प्रसिद्ध नगर है। मन्दिरों के साथ गिर्जाघरों का भी काफी जोर है। आर्य सज्जनों से प्राप्त सूचना के आधार पर मैंने आर्य समाज को ढूंढ निकालने का प्रयत्न किया परन्तु न तो आर्य समाज ही मिला न उस आर्यसमाज का कोई सदस्य ही। इतना निश्चित है कि आज से लगभग दस वर्ष पूर्व यहां आर्य समाज का काम चल रहा था तथा यह नगर कुछ समय के लिए सार्वदेशिक सभा के दक्षिण भारतीय प्रचारकों का मुख्य केन्द्र भी रहा है। अन्ततः कुछ पंजाबी उत्साही नवयुवक मिले तथा कुछ लोगों से भी सदस्य बनने के लिए कहा गया। आशा है अग्रिम वार यह काम भी अवश्य पूर्ण होगा।

मेरा लक्ष्य दक्षिण भारत में एक एक आर्य समाज अवश्य स्थापित करने का है। आगे प्रभु की इच्छा।

१६ ता० को वापस मैसूर आगया। तदनन्तर गुलबर्गा एक विवाह के सिलसिले में जाना था परन्तु अकस्मात् ही तिथि स्थगित हो जाने से नहीं जासका तथा इसी गड़बड़ी में शिमोगा का कार्यक्रम भी न हो सका।

प्रतिनिधि प्रकाशन समिति

प्रकाशन विभाग)

मध्य में विवाह कृत्य में संलग्न हो जाने के कारण १२ दिन तक सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशन का काम स्थगित रहा। अभी तक कुल ४० फार्म छप चुके हैं। आशा है अगले १ या १॥ मास में यह विशाल कार्य समाप्त हो जायगा।

आर्योद्देश्य रत्नमाला तथा आर्य सत्संग गुटका प्रकाशन आरम्भ हो गया है। दोनों की कुल १००० १००० प्रति छपवाई जा रही है।

विक्रय विभाग

सार्वदेशिक सभा ने कृपा कर के हिन्दी व इंग्लिश भाषा की अमूल्य पुस्तकें समिति के इस विभाग को भिजवादी है। उन सभी की पृथक सूची बनाकर पृथक समाजों को भिजवादी गई इस विभाग के निरीक्षणार्थ एक समिति भी बनादी गई है। आशा है सदस्यों एवं मित्रों की अनुकम्पा से यह काम और अधिक बढ़ जावेगा। हमारी प्रबल आकांक्षा है कि दक्षिण भारत में "आर्य साहित्य" का एक विशाल विक्री विभाग हो। देखें परमात्मा कब इस इच्छा को करते हैं।

अन्ततः इस मास गृहाश्रम प्रवेश के शुभावसर पर मुझे सभी स्थानों से सभी गुरुजनों भाईयों माताओं बहनों तथा मित्रों का स्नेहमय आशीर्वाद प्राप्त हुआ है मैं उन सबका बड़ा आभारी हूं आशा है उनके स्नेह तथा आशीष से मैं अपने जीवन में आर्य समाज एवं देश के लिए कुछ कर सकूंगा। सबसे विनय प्रार्थना है कि वे अपने इस स्नेही को भुलाएं नहीं तथा इसी प्रकार आशीर्वादों एवं उत्साहात्मक वाक्यों से सत्प्रेरणा देते रहें।

सत्यपाल शर्मा स्नातक
दक्षिण भारत आर्य समाज आर्गेनाइजर

चयनिका

वैज्ञानिकों की चेतावनी

दुनिया के आठ सुप्रसिद्ध वैज्ञानिकों ने एक वक्तव्य पर हस्ताक्षर किए हैं। इस वक्तव्य को ब्रिटेन के दार्शनिक लार्ड बर्टरण्ड रसल ने प्रकाशित कर दिया है। इस वक्तव्य पर स्वर्गीय प्रोफेसर अलबर्ट आइन्स्टीन ने भी अपनी मृत्यु के कुछ ही समय पहले हस्ताक्षर किए थे, इसलिए इसे उनकी मानव जाति को वसीयत माना जा सकता है। प्रो० आइन्स्टीन की वैज्ञानिक खोजों को अणुशक्ति और आणविक शस्त्रास्त्रों के निर्माण का श्रेय दिया जाता है। अतः वही व्यक्ति जब इनके सम्बन्ध में कोई सुझाव देता है तो वह विशेष रूप से विचारणीय होना चाहिए। इस वक्तव्य पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति कुछ पूर्वी देशों के तो कुछ पश्चिमी देशों के रहने वाले हैं, किन्तु उनका कहना है कि उन्होंने इस वक्तव्य पर अमुक देश या महाद्वीप के रहने वाले अथवा अमुक विचारधारा को मानने वाले की हैसियत से नहीं, बल्कि एक मनुष्य की हैसियत से हस्ताक्षर किए हैं। उन्होंने मानव के नाते मानव से अपील की है ताकि वे इस खतरे को अनुभव कर सकें जो सारी मानव जाति के सामने उपस्थित है और जिसे सामूहिक प्रयास द्वारा ही टाला जा सकता है।

आणविक शस्त्रास्त्र सामूहिक संहार के साधन हैं यह अधिकाधिक अनुभव किया जा रहा है। उनकी संहार-शक्ति व्यापकता के बारे में भिन्न-भिन्न अनुमान किए जा रहे हैं, किन्तु यह अभी भी गहरी खोज का विषय है। किन्तु सुप्रसिद्ध वैज्ञानिकों का मोटा अनुमान भी इस सम्बन्ध में अधिक मान्य समझा जाना चाहिए। इस वक्तव्य पर हस्ताक्षर करने वाले वैज्ञानिकों का कहना है कि द्वितीय महायुद्ध के समय जो अणुबम जापानी नगर हिरोशिमा पर गिराया गया था, उससे ढाई हजार गुना शक्ति वाला बम आज बनाया जा सकता है। यह अनुमान किया जाता है कि एक हाइड्रोजन बम मास्को, न्यूयार्क अथवा लंदन जैसे विशाल नगरों को ध्वस्त कर सकता है। यदि विशाल नगरों को ध्वस्त होना हो तो वैज्ञानिकों की सम्मति में यह इतनी चिन्ता की बात नहीं होगी। इस आघात से दुनियां फिर भी उभर सकती है। पुनः नये नगरों और नई राजधानियों का निर्माण हो सकता है किन्तु आणविक शस्त्रास्त्रों के विस्फोट से जो रेडियोधर्मी राख उत्पन्न होती है, वह हवा के साथ उड़ती हुई दूर-दूर तक फैल जाती है और इसके कण वैसे और वर्षा की बूंदों के साथ धरती पर गिरते हैं, और न केवल मनुष्यों के लिए, बल्कि पशु-पक्षियों और वनस्पति के लिए भी मौत का संदेश सिद्ध होते हैं। वैज्ञानिकों की मान्यता है कि आणविक शस्त्रास्त्रों ने सारी मानव जाति के विनाश का खतरा उपस्थित कर दिया है। अब यदि किसी कारण युद्ध छिड़ जाए तो उसमें कोई भी एक पक्ष विजय की आशा नहीं कर सकता, बल्कि युद्धरत दोनों पक्षों के समूल विनाश का दरवाजा खुल जाएगा।

इस संकट का सामना करने के लिए तरह-तरह के सुझाव प्रस्तुत किए जा रहे हैं। कोई कहता है आणविक शस्त्रास्त्रों का जो ढेर अब तक जमा हो चुका है उसे नष्ट कर देना चाहिए। दूसरे कहते हैं राष्ट्रों को इस आशय की घोषणा करना चाहिए कि किसी भावी युद्ध में आणविक शस्त्रास्त्रों का प्रयोग नहीं करेंगे। ये सुझाव अपने तौर पर उपयोगी हैं और इनको यदि कार्यान्वित किया जाए तो मानवता के सिर पर मंडराने वाला खतरा जरूर कम होगा, किन्तु इससे इस बात की गारण्टी नहीं हो सकती कि अगर युद्ध छिड़ा तो सामूहिक संहार के इन शस्त्रास्त्रों का प्रयोग नहीं किया जाएगा। जब किसी भी तरह एक बार युद्ध शुरू हो जाता है तो फिर संयम और विवेक को उठाकर ताक में रख दिया जाता है और न करने लायक काम

* विचार विमर्श *

"हाथ जोड़ झुकाय मस्तक"

कुछ काल पूर्व यज्ञानन्तर प्रभु प्रार्थनारूप में गाये जाने वाले मेरे गान में आये हुए "हाथ जोड़ झुकाय मस्तक" इस पर कुछ सिद्धान्तानभिज्ञ व्यक्तियों ने मेरे विरुद्ध भ्रम फैलाने के लिये आपत्ति उठाई थी। जिस पर मुझे सर्वमान्य "सार्वदेशिक" पत्र में तथा अन्याय आर्य पत्रों में "हाथ जोड़ झुकाय मस्तक तथा रूखद्रभक" शीर्षक से एक विस्तृत लेख लिखना पड़ा जिसमें मैंने महर्षि दयानन्द जी कृत ग्रंथों से "कृताञ्जलि"—तथा "परमात्मा की शरण में सीस धर कर" वाक्य उद्धृत करके अपने लेख में महर्षि की अनुकूलता सिद्ध की थी। मेरे लेख पर सार्वदेशिक सभा की धर्मार्य सभाने सर्वसम्मति से मेरे गान को स्वीकार किया और मुझसे अनुरोध किया कि मैं स्वयं ही "यज्ञरूप" के स्थान पर "पूजनीय" पाठ परिवर्तित करदूं इत्यादि।

यह सब कुछ हो जाने पर भी कुछ सज्जनों ने "कृताञ्जलि" शब्द की उपस्थिति में भी हाथ जोड़ने पर आपत्ति करना नहीं छोड़ा है। एतदर्थ मैं संस्कार-विधि से महर्षि के शब्दों में से 'हाथ जोड़" पाठ को उद्धृत करके इस विवाद को सर्वदा के लिये समाप्त कर देना चाहता हूँ। संस्कारविधि के संन्यास प्रकरणस्थ पृष्ठ २७२ में महर्षि लिखते हैं कि "तदनन्तर संन्यास लेने वाला "हाथ जोड़ वेदी के सामने नेत्रोन्मीलन कर मन से "ओ३म् ब्रह्मणे नमः" आदि ६ मन्त्रों को जपे अब महर्षि के "हाथ जोड़" शब्द की उपस्थिति में 'हाथजोड़ झुकाय मस्तक' का विवाद सर्वदा के लिये समाप्त ही हो जाना चाहिये।

—लोकनाथ तर्क वाचस्पति आर्योपदेशक

भी बिना किसी झिझक के किए जाते हैं। युद्ध में विजय प्राप्त करने की भावना बड़ी प्रबल हो उठती है और इसलिए भले ही दुनिया के राष्ट्र आज यह घोषणा कर दें कि वे आणविक शस्त्रास्त्रों का प्रयोग नहीं करेंगे, किन्तु उन्हें अपने वचनों को भूल जाने में अधिक समय नहीं लगेगा और बहुत सम्भव है कि वे इन सामूहिक संहार के साधनों का उपयोग कर बैठें। अतः इन वैज्ञानिकों के मत से इस समय मानव जाति के सामने दो ही विकल्प हैं। एक तो यह कि युद्ध मात्र का आमूल परित्याग किया जाए और दूसरा यह कि युद्ध हो और मानव जाति अपने विनाश को निमंत्रण दे। दुनिया के इन वैज्ञानिकों की राष्ट्रों के भाग्यविधाताओं से यह अपील है कि वे पहले विकल्प को स्वीकार करें और अपना यह मजबूत इरादा बना लें कि उन्हें युद्ध किसी भी हालत में नहीं करना है और आपसी बातचीत के द्वारा अपने समस्त मतभेदों का निराकरण खोज लेना है। यदि शासक इस अपील पर उचित ध्यान नहीं देते तो आज जनता को इस विकल्प के हक में अपनी आवाज बुलन्द करनी चाहिए और वह इतनी जोरदार होनी चाहिए कि शासकों के लिए उस की उपेक्षा करना असंभव हो जाए। आम लोगों को इस बारे में उदासीन नहीं रहना चाहिए, कारण हरेक व्यक्ति का, उसके स्त्री और बच्चों का जीवन और सुख खतरे में है और उसकी रक्षा करने के लिए उसे सजग होना ही चाहिए। जिन वैज्ञानिकों ने इस दिशा में पहल की है, उनके प्रति मानव जाति को आभारी होना चाहिए और उसे उनकी आवाज को अधिक से अधिक बल पहुंचाना चाहिए। उनकी आवाज विवेक और बुद्धिमत्ता की आवाज है, जिसको दुनिया के हर क्षेत्र में आदर दिया जाना चाहिए।

—हिन्दुस्तान

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा

सार्वदेशिक सभा ने ता० २७-१२८ को अपने एक प्रस्ताव द्वारा सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की स्थापना की थी। उस समय से लेकर अब तक का धर्मार्य सभा का इति वृत्त शीघ्र प्रकाशित किया जावेगा। इतने समय में जो भी समय २ पर निर्णय होते रहे हैं उनको एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित करने का भी निश्चय है। साधारणतया विद्वानों को विशेषतया आर्य जनता को इन निश्चयों का पता न होने से उनके प्रतिकूल होता रहता है। जैसे पर्याप्त शास्त्रीय गवेषणा के पश्चात यह निर्णय किया गया कि यह ओं स्वाहा की परिपाटी अशुद्ध है। सार्वदेशिक के निश्चय का ज्ञान जिनको है उन्होंने तो इसको छोड़ दिया पर अन्य अब भी ओं स्वाहा करके ही यज्ञ कर रहे हैं प्रत्येक के पास इतने साधन नहीं कि वह स्वयं निश्चय कर सके। अतः आर्य विद्वानों में भी एकता के लिये यह आवश्यक है कि वे सब पिछले निर्णय और अब तक के सब ही विवादास्पद बातों के निश्चय शीघ्र प्रकाशित कर दिये जायें।

दैनिक सन्ध्या यज्ञ आदि की पद्धतियां भी अगस्त के अन्तिम सप्ताह में होने वाली धर्मार्य सभा की बैठक के पश्चात प्रकाशित कर दी जावेंगी।

उपर्युक्त कार्य तो सरलता से सम्पादन किये जा सकते हैं परन्तु सब से कठिन कार्य ऋषि दयानन्द सरस्वती जी के ग्रन्थों की एकता का है। भिन्न-भिन्न प्रकाशक भिन्न प्रकार से ऋषि के ग्रन्थों को प्रकाशित कर रहे हैं जिससे ऋषि के ग्रन्थों की एकता नहीं रही। जैसे एक पञ्चमहायज्ञ विधि को उठा कर हम देखें तो पता चलेगा कि वैदिक यन्त्रालय अजमेर की छपी पञ्चमहायज्ञ विधि में कुछ और पाठ है और रामलाल कपूर ट्रस्ट की छपी पञ्चमहायज्ञ विधि में कुछ और ही बातें हैं। गोविन्दराम हासानन्द देहली ने जो पञ्चमहायज्ञ विधि छापी वह इन दोनों से ही भिन्न है और हैं ये सब ऋषि दयानन्द की पञ्चमहायज्ञ विधियां इसे आपाधापी ही कहा जा सकता है।

सार्वदेशिक सभा यह चाहती है कि ऋषि के ग्रन्थों की ऐसी व्यवस्था हो कि भिन्न-भिन्न स्थानों से भी यदि ऋषि के ग्रन्थ छपें तब भी पाठ एक जैसे ही हों। सार्वदेशिक धर्मार्य सभा में इस वर्ष सभी विद्वान् सब दृष्टियों से रखे गये हैं उसमें तीन चार विद्वान् परोपकारिणी सभा के हैं, चार पांच विद्वान् रामलाल कपूर ट्रस्ट के हैं और तीन गुरुकुल कांगड़ी के। इसी प्रकार बिहार उत्तर प्रदेश आदि के विद्वान् इसकी अन्तरंग सभा में रखे गये हैं जिससे सभी लोग विचार में भाग लेकर एकमत होकर ऋषि के ग्रन्थों की पवित्रता की भी रक्षा कर सकें।

अभी समाचार मिला है कि परोपकारिणी सभा ने भी एक बैठक कुछ विद्वानों की बुलाई जिसकी बैठक देहली में ला.आ हंसराज जी गुप्त के मकान पर हुई। अच्छा तो यह है कि पृथक-पृथक बैठकें न होकर एक सामूहिक बैठक होकर प्रकार निश्चय हो जावे।

सार्वदेशिक सभा इसके लिए पर्याप्त यत्न कर रही है और करेगी। सार्वदेशिक सभा का स्वयं भी विचार एक अनुसन्धान विभाग प्रारम्भ करने का है। यद्यपि यह विचार बहुत पुराना है तथापि हमारे वर्तमान प्रधान माननीय पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति का विचार अब इस अनुसन्धान विभाग को प्रारम्भ ही कर देने का है। बल तो इसी बात पर दिया जावेगा कि इस अनुसन्धान विभाग द्वारा सर्वप्रथम ऋषि के ग्रन्थों पर ही कार्य हो। हम तो परोपकारिणी सभा से भी यही प्रार्थना करते हैं कि उनका जो विचार अन्य आर्ष ग्रन्थों के छापने का हो रहा है बहुत उत्तम विचार है। पर पहले हम सब का परिश्रम ऋषि के ग्रन्थों पर होना चाहिये। क्योंकि ऋषि के ग्रन्थों पर अन्य कोई संस्था कार्य नहीं करेगी। अन्य आर्ष ग्रन्थों को तो अन्य भी छाप सकते हैं। पहले ऋषि के ग्रन्थों को ठीक करने पर शक्ति सार्वदेशिक और परोपकारिणी दोनों को लगानी चाहिये।

आचार्य विश्वश्रवाः
प्रधानमन्त्री सार्वदेशिक धर्मार्य सभा देहली।

* आर्य प्रतिनिधि सभाएं *

मध्य प्रदेश

आर्य प्रतिनिधि सभा, मध्यप्रदेश का २६ वां वार्षिक वृहदधिवेशन दिनांक १८ मई १९५२ को सप्रे विद्यालय रायपुर में सम्पन्न हुआ। इसी अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा, मध्यप्रदेश द्वारा संचालित वनवासी सेवा शिक्षण शिविर का दीक्षान्त समारोह भी मनाया गया। वृहदधिवेशन में आगामी वर्ष के लिए प्रधान श्री घनश्याम सिंह जी तथा मन्त्री श्रीयुत इन्द्रदेवसिंह निर्वाचित हुए।

संस्कृत विश्व परिषद् की बैठक

आर्य समाज दयानन्द भवन, सदर नागपुर के साप्ताहिक सत्संग के उपरांत ६॥ बजे संस्कृत विश्व परिषद् (जिसके अध्यक्ष राष्ट्रपति श्री डा. राजेन्द्र प्रसाद जी एवं कार्याध्यक्ष उत्तरप्रदेश के राज्यपाल श्री के.एम. मुंशी हैं) के सहायक मन्त्री श्री गोपीकृष्ण जी द्विवेदी एम. ए. साहित्याचार्य का संस्कृत भाषा के महत्व पर श्री जे. पी. जैन बैरिस्टर की अध्यक्षता में भाषण हुआ। आपने संस्कृत भाषा के प्राचीन एवं अर्वाचीन महत्व एवं वैज्ञानिक युग में संस्कृत भाषा की अवहेलना होने के सम्बन्ध पर प्रकाश डाला। आपने वेद उपनिषद्, गीता, रामायण और महाभारत आदि महान् ग्रन्थों के उद्धरण देते हुए संस्कृत भाषा एवं भारतीय संस्कृति पर प्रकाश डाला। आगे आपने बतलाया कि संस्कृत भाषा के अध्ययन एवं प्रचार से भौतिक और आध्यात्मिक संस्कृतियों का समन्वय होकर किस प्रकार शांति प्राप्त हो सकती है। भारत के प्रधान मन्त्री श्री पं० जवाहरलाल जी नेहरू ने भी संस्कृत भाषा को भारत की सबसे बड़ी धरोहर बतलाया है। अध्यक्ष महोदय श्री बैरिस्टर साहब ने विद्वान वक्ता द्वारा दिए गए वक्तव्य का समर्थन करते हुए संस्कृत भाषा के प्रचार का समर्थन किया। आर्य प्रतिनिधि सभा, मध्यप्रदेश के मन्त्री श्री प्रो० इन्द्रदेव सिंह जी आर्य ने संस्कृत विश्व परिषद् की स्थानीय शाखा के निर्माण के लिए एक अस्थाई समिति बनाने का प्रस्ताव किया जो सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ।

राजस्थान

राजस्थान की समस्त आर्य समाजों अन्य आर्य सज्जनों व सम्बन्धित व्यक्तियों को सूचित किया जाता है कि आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान तथा आर्य धर्म रक्षामण्डल के अस्थायी प्रचारक श्री पं० शीतलचन्द्र जी शीतल को सभा तथा मण्डल की समस्त सेवाओं से मुक्त कर दिया गया है। उनका अब सभा तथा मण्डल से कोई सम्बन्ध नहीं रहा है।

भवदीय
भवानी प्रसाद
मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान

गोरक्षा सम्मेलन रायपुर

मध्य प्रदेश के शासन ने गोवध निषेध के सम्बन्ध में जो सबसे पहिले कानून बनाया है उसके लिए बधाई देते हुए इस सम्मेलन की राय है कि वह अपूर्ण है क्योंकि उसमें बैलों की हत्या का निषेध नहीं है। अतः यह सम्मेलन मध्यप्रदेश सरकार से सानुरोध आग्रह करता है कि वह शीघ्रातिशीघ्र अपने पशु रक्षा अधिनियम में समुचित संशोधन करके इस प्रांत में गोवंश की सपूर्ण रक्षा करें।

उत्तर प्रदेश शासन ने डा० सर सीताराम जी की अध्यक्षता में एक समिति बनाई थी जिसमें नवाब छतारी आदि मुसलमान सदस्य भी थे। उस समिति की जो रिपोर्ट प्रकाशित हुई है उसमें उन्होंने सर्व सम्मति से यह सिफारिश की है कि गौ और उसकी संतान का वध कानून द्वारा सर्वथा निषेध किया जाय। यह बड़े सन्तोष का विषय है कि उत्तर प्रदेश शासन ने उस रिपोर्ट को मान्य करते हुए संपूर्ण गोवंश के वध को बन्द करने के सिद्धांत को स्वीकार करके कानून बनाने का निश्चय कर लिया है।

॥ ओ३म् ॥

कार्यालय—
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
श्रद्धानन्द बलिदान भवन, दिल्ली
दिनाङ्क २०-७-१९५५

सत्याग्रह बलिदान स्मारक दिवस

बुधवार ३ अगस्त १९५५ को मनाइये

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली के दिनांक १३-१०-४० के स्थायी निश्चयानुसार हैदराबाद सत्याग्रह में अपने प्राणों की आहुति देने वाले आर्यवीरों की पुण्य-स्मृति में श्रावण शुक्ला पूर्णिमा तदनुसार ३ अगस्त १९५५ को आर्यसमाज मन्दिरों मे सत्याग्रह बलिदान स्मारक दिवस मनाया जायेगा। इसी दिन श्रावणी का पुण्य पर्व है। इसका कार्य क्रम आर्य पर्व पद्धति के अनुसार श्रावणी उपाकर्म के साथ मिलाकर निम्न प्रकार किया जाय :—

प्रात: ८॥ बजे आर्य समाज मन्दिरों में सभायें की जांय जिनमें उपाकर्म कार्यवाही के पश्चात् सब उपस्थित भद्र पुरुष तथा देवियां मिलकर निम्न प्रकार पाठ करें :—

(१) ओ३म् ऋतावान ऋतजाता ऋतावृधो घोरासो अनृतद्विषः।
तेषां वः सुम्ने सुच्छर्दिष्टमे वयं स्याम ये च सूरयः॥ ऋग्वेद ७।६६।१३

(२) ओ३म् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेय तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि॥ यजुर्वेद १।४

(३) ओ३म् इन्द्रं वर्धन्तोऽप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।
अपघ्नन्तो अराव्णः॥ सामवेद

(४) ओ३म् उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः।
दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृतःस्याम॥ अथर्ववेद १४।१।२

आर्य समाजों के पुरोहित अथवा अन्य कोई वेदज्ञ विद्वान् उपर्युक्त मन्त्रों का तात्पर्य इन शब्दों में पढ़ कर प्रार्थना करायें :—

(१) जो विद्वान् सदा सत्य के मार्ग पर चलते हुए सत्य की निरन्तर वृद्धि और असत्य के विरोध में तत्पर रहते हैं, उनके सुखदायक उत्तम आश्रय में हम सब सदा रहें तथा हम भी उनकी तरह मन, वचन और कर्म से पूर्ण सत्यनिष्ठ बनें।

(२) हे ज्ञान स्वरूप सब उत्तम संकल्पों और कर्मों के स्वामी परमेश्वर! हम भी आज से एक उत्तम व्रत ग्रहण करते हैं जिसके पूर्ण करने की शक्ति आप हमें प्रदान करें ताकि उस व्रत के ग्रहण से हमारी सब तरह से उन्नति हो। वह व्रत यह है कि असत्य का सर्वथा परित्याग करके हम सत्य की ही शरण में आते हैं। आप हमें शक्ति दें कि हम अपने जीवनों को पूर्ण सत्यमय बना सकें।

(३) हे मनुष्यो! तुम सब आत्मिक शक्ति तथा उत्तम ऐश्वर्य को बढ़ाते हुए कर्मशील बनकर उन्नति में बाधक आलस्य प्रमादादि दुर्गुणों का परित्याग करते हुए सारे संसार को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ सदाचारी, धर्मात्मा बनाओ।

(४) हे प्रिय मातृ-भूमे! हम सब तेरे पुत्र और पुत्रियां तेरी सेवा में उपस्थित होते हैं। सर्वथा नीरोग, स्वस्थ तथा ज्ञान सम्पन्न होते हुए हम दीर्घ आयु को प्राप्त हों और तेरी तथा धर्म की रक्षा के लिये आवश्यकता पड़ने पर अपने प्राणों की बलि देने को भी तैयार रहें।

इसके पश्चात् मिलकर निम्न लिखित कविता का गान किया जावे : -

धर्मवीरों के प्रति श्रद्धांजलि

श्रद्धांजलि अर्पण करते हम, करके उन वीरों का मान।
धार्मिक स्वतन्त्रता पाने को, किया जिन्होंने निज बलिदान॥
परिवारों के सुख को त्यागा, युवक अनेकों वीरों ने।
कष्ट अनेकों सहन किये पर, धर्म न छोड़ा वीरों ने॥
ऐसे सभी धर्मवीरों के आगे सीस झुकाते हैं।
उनके उत्तम गुण गण को हम, निज जीवन में लाते हैं॥
अमर रहेगा नाम जगत् में, इन वीरों का निश्चय से।
उनका स्मरण बनायेगा फिर, वीर जाति को निश्चय से॥
करे कृपा प्रभु आर्य जाति में, कोटि कोटि हों ऐसे वीर।
धर्म देशहित जोकि खुशी से प्राणों की आहुति दें धीर॥
जगदीश को साक्षि जानकर, यही प्रतिज्ञा करते हैं।
इन वीरों के चरण चिन्ह पर, चलने का व्रत धरते हैं॥
सर्व शक्तिमय दें बल ऐसा, धीर वीर सब आर्य बनें।
पर उपकार परायण निशि दिन, शुभ गुण धारी आर्य बनें॥
(ध० दे०)

धर्मवीर नामावली

श्यामलाल जी, महादेव जी राम जी श्री परमानन्द।
माधव राव विष्णु भगवन्ता, श्री स्वामी कल्याणानन्द॥
स्वामी सत्यानन्द महाशय मलखाना श्री वेद प्रकाश।
धर्म प्रकाश रामनाथ जी, पाण्डुरङ्ग श्री शांति प्रकाश॥
पुरुषोत्तम जी ज्ञानी लक्ष्मण-राव सुनहरा वेंकट राव।
भक्त अरूड़ा मातुराम जी नन्हूसिंह श्री गोविन्द राव॥
बदनसिंह जी रतीराम जी, मान्य सदाशिव ताराचन्द।
श्रीयुत छोटेलाल अशर्फीलाल तथा श्री फकीरेचन्द॥
माणिकराव भीमराव जी महादेव जी अर्जुनसिंह।
सत्यनारायण, बैजनाथ ब्रह्मचारी दयानन्द नरसिंह॥
राधाकृष्ण सरीखे निर्भय अमर हुए इन वीरों का।
स्मरण करें विजयोत्सव के दिन, सब ही वीरों धीरों का॥

कालो चरण आर्य
मन्त्री
सार्वदेशिक आ० प्र० सभा

सार्वदेशिक पत्र

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश १० शिलिङ्ग। अर्द्ध वार्षिक ३ स्वदेश, ६ शिलिङ्ग विदेश।

२. एक प्रति का मूल्य ।। स्वदेश, ।।=) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क वा नमूने की प्रति का मूल्य ।।=) स्वदेश, ।।।) विदेश।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये। चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा। पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने वा ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न दने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है, कि उनकी इच्छा वी० पी० द्वारा चन्दा देने की है।

४. सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख को प्रकाशित होता है। किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय में अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा। डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं। अतः समस्त ग्राहकों को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये।

५. सार्वदेशिक का वष १ मार्च से प्रारम्भ होता है अंक उपलब्ध होने पर बीच वर्ष में भी ग्राहक बनाए जा सकते हैं।

विज्ञापन के रेट्स

		एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
६.	पूरा पृष्ठ	१५)	४०)	६०)	१००)
	आधा "	१०)	२५)	४०)	६०)
	चौथाई ,,	६।	१५)	२५)	४०)
	⅛ पेज	४)	१०)	२५)	२०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

७ सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बंद कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

—*व्यवस्थापक*

'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(१) यमपितृ परिचय (पं० प्रियरत्न आर्ष) २)
(२) ऋग्वेद में देवृकामा ,, -)
(३) वेद में असित् शब्द पर एक दृष्टि ,, -)।
(४) आर्य डाइरेक्टरी (सार्व० सभा) १।)
(५) सार्वदेशिक सभा का
सत्ताईस वर्षीय कार्य विवरण ,, अ० २)
(६) स्त्रियों का वेदाध्ययन अधिकार
(पं० धर्मदेव जी वि० वा०) १।)
(७) समाज के महाधन
(स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी) २॥)
(८) आर्यपर्व पद्धति (श्री पं० भवानीप्रसादजी) १।)
(९) श्री नारायण स्वामी जी की सं० जीवनी
(पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) -)
(१०) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण(पं०इन्द्रजी) ।=)
(११) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या
(अनुवादक पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) ।)
(१२) आर्य मन्दिर चित्र (सार्व० सभा) ।)
(१३) वैदिक ज्योतिष शास्त्र(पं०प्रियरत्नजी आर्ष)१॥)
(१४) वैदिक राष्ट्रीयता (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।)
(१५) आर्य समाज के नियमोपनियम(सार्व सभा)-)॥
(१६) हमारी राष्ट्रभाषा (पं०धर्मदेवजी वि० वा०) ।-)
(१७) स्वराज्य दर्शन(पं०लक्ष्मीदत्तजी दीक्षित)स० १)
(१८) राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती) ॥)
(१९) योग रहस्य (श्री नारायण स्वामी जी) १।)
(२०) विद्यार्थी जीवन रहस्य ,, ॥=)
(२१) प्राणायाम विधि ,, =)
(२२) उपनिषदें:— ,,

ईश	केन	कठ	प्रश्न
।=)	॥)	॥)	।=)
मुण्डक	माण्डूक्य	ऐतरेय	तैत्तिरीय
।=)	।)	।)	१)

(२३) बृहदारण्यकोपनिषद् ४)
(२४) आर्यजीवनगृहस्थधर्म(पं०रघुनाथप्रसादपाठक)॥=)
(२५) कथामाला ,, ॥।)
(२६) सन्तति निग्रह ,, १।)
(२७) नया संसार ,, =)
(२८) आर्य शब्द का महत्व ,, -)॥
(२९) मांसाहार घोर पाप और स्वास्थ्य विनाशक -)।
(३०) मुर्दे को क्यों जलाना चाहिए -)
(३१) इजहारे हकीकत उर्दू
(ला० ज्ञानचन्द जी आर्य) ॥=)
(३२) वर्ण व्यवस्था का वैदिक स्वरूप ,, १॥)
(३३) धर्म और उसकी आवश्यकता ,, १॥)
(३४) भूमिका प्रकाश (पं० द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री) १)
(३५) एशिया का वैनिस (स्वा० सदानन्द जी) ॥।)
(३६) वेदों में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां
(पं० प्रियरत्न जी आर्ष) १)
(३७) सिंधी सत्यार्थ प्रकाश २)
(३८) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता -)
(३९) ,, ,, और उस की रक्षा में -)
(४०) ,, ,, आन्दोलन का इतिहास ।=)
(४१) शांकर भाष्यालोचन (पं०गंगाप्रसादजी उ०)५)
(४२) जीवात्मा ,, ४)
(४३) वैदिक मणिमाला ,, ॥=)
(४४) आस्तिकवाद ,, ३)
(४५) सर्व दर्शन संग्रह ,, १)
(४६) मनुस्मृति ,, ५)
(४७) आर्य स्मृति ,, १॥)
(४८) आर्योदयकाव्यम् पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध, १॥), १॥)
(४९) हमारे घर (श्री निरंजनलाल जी गौतम)॥=)
(५०) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर
(श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी) २।) रिया० १॥)
(५१) भजन भास्कर (संग्रहकर्त्ता
श्री पं० हरिशंकरजी शर्मा १॥।)
(५२) मुक्ति से पुनरावृत्ति ,, ,, ।=)
(५३) वैदिक ईश वन्दना (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।=)॥
(५४) वैदिक योगामृत ,, ॥=)
(५५) कर्त्तव्य दर्पण सजिल्द (श्री नारायण स्वामी) ॥)
(५६) आर्यवीरदल शिक्षणशिविर(ओंप्रकाशपुरुषार्थी ।=)
(५७) ,, ,, ,, लेखमाला ,, १।।)
(५८) ,, ,, गीतांजलि(श्री रुद्रदेव शास्त्री)।=)
(५९) ,, ,, भूमिका =)
(६०) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी २।)
(६१) कम्युनिज्म (पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय) २)
(६२) जीवन चक्र ,, ,, ५)

मिलने का पता:—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, बलिदान भवन, देहली ६।

स्वाध्याय योग्य उत्तम साहित्य

स्व० श्री महात्मा नारायण स्वामी जी कृत कतिपय ग्रन्थ

(१) कर्त्तव्य-दर्पण

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज प्रणीत ४०० पृष्ठ, सचित्र और सजिल्द मूल्य प्रचारार्थ केवल ॥।) पच्चीस लेने पर ॥≈) अत्यंत उपयोगी पुस्तक। अभी अभी नवीन संस्करण प्रकाशित किया है। भारी संख्या में मंगा कर प्रचार करें।

(२) योग रहस्य

इस पुस्तक में अनेक रहस्यों को उद्घाटित करते हुए उन विधियों को भी बतलाया गया है जिनसे कोई आदमी जिसे रुचि हो—योग के अभ्यासों को कर सकता है।

पंचम संस्करण मूल्य १।)

(३) विद्यार्थी जीवन रहस्य

विद्यार्थियों के लिए, उनके मार्ग का सच्चा पथप्रदर्शक उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर शृङ्खलाबद्ध प्रकाश डालने वाले उपदेश

पंचम संस्करण मूल्य ॥=)

(४) आत्म कथा

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी का स्वलिखित जीवन चरित्र मूल्य २।)

(५) उपनिषद् रहस्य

ईश, (नवीन संस्करण) केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, बृहदारण्यकोपनिषद् की बहुत सुन्दर खोज-पूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्याएं। मूल्य क्रमशः—

।=), ॥), ॥), ।=); ≡), ।), ।), १), ४),

(६) प्राणायाम विधि

इस लघु पुस्तक में ऐसी मोटी और स्थूल बातें अंकित हैं जिनके समझने और जिनके अनुकूल कार्य करने से प्राणायाम की विधियों से अनभिज्ञ किसी भी पुरुष को कठिनता न हो और उन में इन क्रियाओं के करने की रुचि भी पैदा हो जाए।

चतुर्थ संस्करण मूल्य ≡)

मिलने का पता—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली ६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली ७ में छपकर
श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक पब्लिशर द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ६ से प्रकाशित

ऋग्वेद

यजुर्वेद

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

वर्ष ३०

मूल्य स्वदेश ५

विदेश १० शिलिङ

एक प्रति ।।)

अंक ७

भाद्रपद २०१२

सितम्बर १९५५

महर्षि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज

सम्पादक—

सभा मन्त्री

सहायक सम्पादक—

श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषयानुक्रमणिका

ओ३म्

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष ३० | सितम्बर १९५५, भाद्रपद २०१२ वि०, दयानन्दाब्द १३१ | अङ्क ७

वैदिक प्रार्थना

ऋजुनीती नो वरुणो मित्रो नयतु विद्वान्।
अर्यमा देवैः सजोषाः ॥ ऋ० १।६।१७।१।

व्याख्यान—हे महाराजाधिराज परमेश्वर ! आप हमको "ऋजु०" सरल (शुद्ध) कोमलत्वादिगुणविशिष्ट चक्रवर्ती राजाओं की नीति को "नयतु" कृपादृष्टि से प्राप्त करो, आप "वरुणः" सर्वोत्कृष्ट होने से वरुण हो, सो हमको वरराज्य, वरविद्या वरनीति देओ तथा सबके मित्र शत्रुतारहित हो हमको भी आप मित्रगुणयुक्त न्यायाधीश कीजिये तथा आप सर्वोत्कृष्ट विद्वान् हो हमको भी सत्यविद्या से युक्त सुनीति दे के साम्राज्याधिकारी सद्यः कीजिये तथा आप "अर्यमा" (यमराज) प्रियाप्रिय को छोड़के न्याय में वर्तमान हो सब संसार के जीवों के पाप और पुण्यों की यथायोग्य व्यवस्था करने वाले हो सो हमको भी आप तादृश करें जिससे "देवैः, सजोषाः" आपकी कृपा से विद्वानों वा दिव्यगुणों के साथ उत्तमप्रीति-युक्त आप में रमण और आपका सेवन करने वाले हों, हे कृपासिन्धो भगवन् ! हम पर सहायता करो जिससे सुनीतियुक्त हो के हमारा स्वराज्य अत्यन्त बढ़े ॥

सम्पादकीय

स्वयंसेवकों और सेवा साधनों के लिए अपील

गत मास देश के बड़े बड़े ईसाइयों के तीन प्रचार केन्द्रों के विस्तृत निरीक्षण के लिये, सार्वदेशिक सभा की ओर से, आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति पण्डित ओम्प्रकाश जी को भेजा गया था। उन्होंने बिहार, उड़ीसा और आसाम के अनेक स्थानों का भ्रमण करके सभा में जो रिपोर्ट दी है, उसका संक्षिप्त विवरण पाठक इसी पत्र में अन्यत्र पढ़ेंगे। उस रिपोर्ट से प्रतीत होता है कि ईसाइयों का काम बहुत गहराई तक पहुंच चुका है। उसमें केवल फुटकर धर्म परिवर्तन ही नहीं होते रहे, गांव के गांव और जिले के जिले ईसाइयत की शरण में चले गये हैं। उस रिपोर्ट से यह भी प्रतीत होता है कि ईसाई पादरियों ने यह कार्य अपने भुजबल से नहीं किया और नाहीं वाणी के बल से किया। मुख्यरूप से यह कार्य बुद्धिबल से ही सम्पन्न हुआ है। बुद्धि का उपयोग दोनों तरह से हो सकता है। सचाई से भी और छल से भी। ईसाइयों ने दोनों प्रकार से ही बुद्धि का प्रयोग किया है। उन्होंने सेवा द्वारा अशिक्षित और गरीब जनता के हृदयों को जीता है, तो मिथ्या आशाओं और थोथी धमकियों के प्रयोग में भी संकोच नहीं किया। आशाओं और धमकियों का प्रयोग वह मुख्य रूप से अंग्रेजी राज्य में करते थे। अब परिस्थिति वश उन्हेंवह सिलसिला बन्द कर देना पड़ा है। अब उनकीस्थिति मुख्य रूप से सेवा पर अवलम्बित है, जिसमें विदेशों से आये हुए धन से उन्हें बहुत सहारा मिलता है।

हम लोगों में यह एक बहुत बड़ा दोष आगया है कि जब किसी समस्या पर विचार करने लगते हैं तो प्रायः उसके प्रत्यक्ष और उथले रूप को देखकर सन्तुष्ट हो जाते हैं कि हमने सब कुछ समझ लिया। परिणाम यह होता है कि उसका वास्तविक अन्दरूनी पहलू हम लोगों से ओझल ही रहता है। भारत में ईसाइयों के बढ़े और बढ़ते हुए प्रचार के कारणों पर दृष्टिपात करते समय भी हमारे विचार में यही दोष आ गया है। हमने समस्या के बाह्य छिलके को देखा है, अन्दर के सार पर पूरी तरह दृष्टि नहीं डाली। ईसाई पादरी वाणी द्वारा प्रचार करते हैं या अशिक्षित लोगों को डरा धमका कर ईसाई बनाते हैं। यह परिस्थिति का केवल दृश्यमान रूप है। उसका आन्तरिक रूप यह है कि ईसाई प्रचारक कटीले जङ्गलों बीहड़ पर्वतों और झीलों से घिरे हुए दुर्गम प्रदेशों में जाकर वहां के सर्वथा अशिक्षित और बहुत कुछ सभ्यता से शून्य लोगों में बस जाते हैं। उनमें उनके बनकर रहने लगते हैं और उनके सुख दुःख के साथी बन जाते हैं। वे भूखों को अन्न देते हैं, रोगी होने पर दवा और सेवा द्वारा उनकी सहायता करते हैं और आर्थिक संकट आने पर उसे दूर करते हैं। इसे धोखा धड़ी कहिए या षड्यन्त्र, जङ्गली जातियों और आदिवासियों में ईसाई पादरी इसी प्रकार ईसाइयत का सन्देश पहुँचाते हैं। न वह बड़े बड़े शास्त्रार्थ करते हैं और न शहरों में जलूस बनाकर नारे लगाते हैं। ईसाई पुरुष और स्त्री प्रचारक दुर्गम और गन्दी बस्तियों में अपने जीवन लगाते रहे हैं। यही कारण है कि वह चुपचाप ईसाइयत का इतना लम्बा चौड़ा जाल फैलाने में सफल हो गये।

इस समय, भारत में ईसाइयत का जो विशाल भवन खड़ा है, उसके दो मुख्य आधार हैं। पहला आधार है अपने लक्ष्य पर जीवन का समर्पण करने वाले विदेशी और देशी प्रचारक और दूसरा आधार है विदेशों से आया हुआ वह पुष्कल धन जो उन्हें अपने मिशन की पूर्ति में सहायता देता है।

अशिक्षित लोगों में ईसाइयत का विस्तृत प्रचार भारतीय राष्ट्र के लिए कितना हानिकारक हो सकता है यह एक ओर गोवा में दूसरी ओर नागाओं के प्रदेश में स्पष्टता से प्रगट हो रहा है। गोवा में जो थोड़े बहुत हिन्दुस्तानी पुर्तगाल की सरकार के पक्ष में हैं

वह ईसाई हैं। उन्हें यह बहका दिया गया है कि पुर्तगाल की ईसाई सरकार के जाते ही उनका सर्वनाश हो जायेगा। गोवा के उन थोड़े से भूले भटके ईसाइयों को भारत की राष्ट्रीय सरकार शत्रु प्रतीत होती है। गोवा के समझदार ईसाई तो पूरी तरह भारत के साथ मिलने के पक्ष में हैं। परन्तु ईसाई प्रचारकों के बहकाये हुए अशिक्षित लोग अपना भला बुरा सोचने में असमर्थ हैं।

अब इसमें कोई सन्देह नहीं रहा कि पूर्वीय सीमा प्रान्त में जो नागा लोग सरकार के विरुद्ध उपद्रव कर रहे हैं उन्हें ईसाई पादरियों से ही प्रेरणा मिली है उन्हें समझाया जाता है कि तुम लोग इस देश के असली निवासी हो, भारत के अन्य निवासियों ने तुम्हारा देश छीन लिया है। हम तुम्हारे हितैषी हैं। तुम्हारी स्वतन्त्रता के पक्षपाती हैं। तुम्हें भारतीय राष्ट्र की आधीनता कभी स्वीकार नहीं करनी चाहिए। यह है युक्ति श्रृंखला जिससे भड़के हुए नागा लोग भारतीय गण राज्य के विरुद्ध शस्त्र उठा रहे हैं। इसमें सन्देह नहीं कि यदि इस रोग की रोकथाम न की गई तो भविष्य में नागों के प्रदेश की भांति देश के अन्य भी प्रदेश राजद्रोह के केन्द्र बन सकते हैं।

अब प्रश्न यह है कि इस भयावह परिस्थिति से बचने का उपाय क्या है?

सामान्य रूप से इस प्रश्न का उत्तर मैंने गत मास के 'सार्वदेशिक' में दिया था। प्रत्येक युद्ध के लिए दो वस्तुओं की आवश्यकता होती है। सेनाओं की और सेनाओं के लिए सामग्री की। संसार के शांत और अशान्त दोनों तरह के संग्राम जन और धन की शक्ति से जीते जाते हैं। आर्य समाज को भी इस शान्तिमय प्रचार युद्ध में जीतने के लिए प्रचारकों की और प्रचार के संगठन को चलाने के लिए धन की आवश्यकता है। आर्य जन प्रायः पूछते हैं कि ईसाइयों के प्रचार को रोकने के लिए क्या हो रहा है? लोगों में तरह तरह के भ्रम हैं। कुछ भाई समझते हैं कि भारत सरकार पर दबाव डालना चाहिए कि वह ईसाइयों के प्रचार को रोक दे। यह विचार सर्वथा भ्रम मूलक है। किसी सभ्य देश में धर्म प्रचार पर कानूनी रुकावट नहीं डाली जा सकती। यदि स्वामी विवेकानन्द अमेरिका में हिन्दू धर्म के सिद्धान्तों का प्रचार कर सकते थे और इंगलैण्ड में हमारे नवयुवक प्रचारक आर्य समाज की स्थापना कर सकते हैं तो कोई कारण नहीं कि सामान्य रूप से भारत में ईसाइयों के प्रचार को रोका जाय। वैदिक धर्म न इतना असहिष्णु है और न इतना कच्चा है कि अपने क्षेत्र में अन्य मतावलम्बियों को अपने सिद्धान्तों का प्रचार करने से रोके। उचित उपायों से प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचारों का प्रचार करने का अधिकार होना चाहिए। हां, यदि वह प्रचार के लिए छल या बल का प्रयोग करे तब वह दण्डनीय होगा। सामान्य दशा में तो हमें अपने सिद्धान्तों की सत्यता पर और प्रचार के संगठन पर भरोसा होना चाहिए। सत्य स्वयं इतना बलवान् है कि उसे किसी छल अथवा अन्य बल की सहायता नहीं चाहिए।

कुछ और भाई यह समझते हैं कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा इतनी शक्ति सम्पन्न है कि वह यदि तत्परता से काम करे तो ईसाइयों के प्रचार को झटपट रोक सकती है। यदि ऐसा नहीं होता तो सभा के कार्यकर्त्ताओं का दोष होना चाहिए। ऐसे भाइयों से मेरा निवेदन है कि सार्वदेशिक सभा में जो भी शक्ति है उसका आधार आर्य नर-नारी हैं। प्रचार के कार्य को अग्रसर करना हो तो जिन दो शक्तियों की आवश्यकता है उनका देना भी आर्य जगत पर ही अवलम्बित है। साधनों के बिना जैसे अन्य कोई संग्राम नहीं लड़ा जा सकता, वैसे प्रचार का संग्राम भी सफलता पूर्वक लड़ना असंभव है।

पहले जन-शक्ति की बात लीजिए। मेरा विचार है कि यदि हम देश भर में फैले हुए मिशन कार्य का जवाब देना चाहते हैं तो हमें न्यून से न्यून दो हजार ऐसे आर्य प्रचारकों की आवश्यकता होगी जो अन्य सब महत्वाकांक्षाओं को छोड़कर अपने जीवन का बड़ा भाग केवल प्रचार कार्य में लगाने को उद्यत हों निर्वाह मात्र पर कार्य करें, देश के जिस भाग में भी

आवश्यकता हो वहां जाने को उद्यत हों और यदि बरसों तक एक ही स्थान पर जम कर बैठने की आवश्यकता हो तो घबरायें नहीं। सारांश यह है कि वह धर्म वृक्ष के बीज बनने को तैयार हों। जो आर्य वीर अथवा वीरांगनायें इसके लिए उद्यत हों वह सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में पत्र भेजकर सूचना दे दें।

परन्तु उनसे तभी काम लिया जा सकेगा यदि आर्य जनता ने धन शक्ति से सहायता दी। गत वर्ष हैदराबाद के आर्य महासम्मेलन ने ऐसे कार्यों के लिए पांच लाख रुपयों की अपील की थी। इस अपील पर आर्य समाज ने कितनी धनराशि भेजी है इस प्रश्न का उत्तर देते हुये लज्जा आती है। राशि इतनी कम है कि उसका विवरण फाइल में रहना ही अच्छा है। बड़े बड़े आर्य समाजों को सभा के कार्यालय से विशेष पत्र लिखे गये जिनमें वह राशि भी लिखदी गई थी जो उन्हें भेजनी चाहिए। लगभग दो हजार समाजों में से अपना अंश भेजने वालों की संख्या दर्जन से अधिक नहीं। चारों ओर से सहायता की मांग आ रही है। कौनसा प्रान्त है जहां निरोध कार्य के लिए प्रचारकों की ओर धन की आवश्यकता नहीं। ऐसी दशा में आर्य समाजों का और आर्य जनों का यह पहला कर्त्तव्य हो जाता है कि वे बिना विलम्ब के सार्वदेशिक सभा के ईसाई-प्रचार निरोध कोष के लिए शक्ति अनुसार सहायता भेजें। केवल इच्छा करने से कोई काम नहीं होता। कार्य की पूर्णता के लिए साधनों का जुटाना आवश्यक है।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियां ❀

आसाम के गवर्नर का सत् परामर्श

८-२-१९४७ को ब्रिटिश गवर्नर सर ऐन्ड्रक्लो ने अपनी विदाई के समारोह के समय नागाओं को यह सत्परामर्श दिया था कि वे पृथक् नागा प्रदेश की मांग करने की भूल न करें। उनके इस परामर्श का महत्व इस समय तक स्थिर है। क्या ही अच्छा हो यदि नागाओं के नेता उस पर उचित ध्यान दें। गवर्नर महोदय का परामर्श इस प्रकार है :—

"The British Government is withdrawing and the future of the Government of India, including Assam and its hills, is a matter for the peoples of the land to decide." said Sir Andrew Clow, the Governor of Assam replying to an address of welcome at Mokokchung in Naga Hills.

Dealing with the constitutional future of Assam Hills, the Governor said that the Constituent Assembly which was charged with the duty of working out plans for the future, had already started work, and it would have to consider in due course, the position of the hill peoples. A few of the Nagas had spoken of setting themselves up as a separate nation. But in his opinion it was not practicable for any of the Naga people or even for all of them to form a separate state or even a separate province. If they did that, they would always remain poor and backward. Their needs in respect of education, communications and health could not be met and they would lose some of the inadequate services they now enjoyed. His advice, therefore, was that they should aim at reaching an accommodation with the people of the plains of Assam, which would be of mutual benefit to both.

अर्थात् नागा लोगों के लिए पृथक् नागा राज्य वा नागा प्रदेश का निर्माण करना अव्यावहारिक है। यदि उन्होंने ऐसा कर लिया तो वे सदैव निर्धन और पिछड़े हुए रहेंगे। वे शिक्षा, परिवहन और स्वास्थ्य की अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति न कर सकेंगे। इतना ही नहीं इस समय वे जिन अपर्याप्त सुविधाओं से लाभ उठाते हैं उनसे भी वंचित हो जायेंगे।

आर्यसमाज दीवान हाल देहली के निकट सिनेमा गृह

देहली के आर्य समाज दीवान हाल के निकट पहले से ही एक सिनेमा हाल है। अब दीवान हाल के बिलकुल निकट मुख्य द्वार के ठीक सामने एक दूसरे सिनेमा हाल के निर्माण की चर्चा चल रही है। सुना जाता है कि इस हाल के निर्माताओं को हाल का निर्माण करने की सरकारी आज्ञा भी उपलब्ध हो गई है। आर्य समाज दीवान हाल एक धार्मिक पवित्र स्थान है जहां प्रायः स्त्री पुरुष और बच्चे धर्म लाभ उठाने के लिए आते तथा उसमें अस्थायी रूप से आर्य लोग रहते हैं। हाल के निकट ही सिनेमा हाल के होने से इन लोगों को आने जाने में वा रहने में कष्ट और कठिनाई होगी क्योंकि सिनेमा गृहों के आस पास प्रायः अवांछनीय व्यक्ति घूमते फिरते रहते हैं। इसके अतिरिक्त उसका वातावरण दूषित होने से आर्य समाज के विविध कार्यों और सत्संगों में भी बाधा उपस्थित हो सकती है। ऐसी व्यवस्था में दीवान हाल के निकट इस नये हाल के निर्माण का औचित्य समझ में नहीं आया। आर्य समाज के अधिकारियों ने प्रस्तावित सिनेमा हाल के निर्माण का घोर विरोध करके राज्याधिकारियों को प्रेरणा की है कि वे इस हाल के निर्माण की आज्ञा न दें और यदि दी हो तो वापिस ले लें।

सिनेमा हाल सिद्धान्ततः बस्तियों के निकट न होने चाहियें और धार्मिक स्थानों के पास तो किसी दशा में भी न होने चाहियें। प्रतीत होता है कि राज्य के विशिष्ट अधिकारियों के नोटिस में या तो यह बात आई नहीं वा लाई नहीं गई। कारण कोई भी क्यों न हो, आर्य समाज मन्दिर दीवान हाल को सिनेमा हाल की गन्दगी से दूर ही रखना चाहिये। यह दीवान हाल वह सार्वजनिक स्थान भी है जहां प्रायः विशिष्ट कोटि की सभायें होती हैं और यह विश्वविद्यालयों आदि की परीक्षाओं का केन्द्र रहता है। यदि राज्याधिकारियों ने यहां सिनेमा हाल के बनवाने की भूल की तो निश्चय ही उनका यह कार्य अदूरदर्शितापूर्ण होगा और यदि उसके कारण अवांछनीय स्थिति पैदा हुई तो उसकी उत्तरदायिता उन्हीं पर होगी।

राज्याधिकारियों का जनता के मनोरंजन की व्यवस्था करने में योग देने का एक कर्त्तव्य हो सकता है परन्तु जनता की नैतिकता और धार्मिक स्थानों की पवित्रता के बलिदान पर इस व्यवस्था के करने का उन्हें अधिकार नहीं हो सकता।

सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति के नेतृत्व में देहली के प्रमुख आर्यों का एक शिष्ट मंडल देहली के चीफ कमिश्नर महोदय से २०-८-५५ को मिल चुका है। हमें आशा करनी चाहिये कि इस भेंट का फल अच्छा निकलेगा और राज्य सरकार समय रहते असन्तोष के इस कारण को दूर कर अपनी दूरदर्शिता का सुन्दर परिचय देगी।

अनुकरणीय यत्न

आर्य्य समाज विनय नगर (देहली) ने नवम्बर १९५३ में श्रीयुत हैम्फ्रे ईवान्स नामक एक अंग्रेज सज्जन को अपने वार्षिकोत्सव के अवसर पर अंग्रेजी सत्यार्थप्रकाश की १ प्रति भेंट की थी। किसी प्रकार यह पुस्तक रिचर्ड ए-बक्सटन (लंदन) को प्राप्त हो गई। उक्त महाशय इस ग्रन्थ का मनोयोग पूर्वक अध्ययन कर रहे हैं। पुस्तक की प्राप्ति स्वीकार करते हुए बक्सटन महोदय अपने २१-४-५५ के पत्र में आर्य समाज विनय नगर को लिखते हैं :—

"भारतवर्ष, मिश्र और जार्डन की यात्रा की वापसी पर मुझे सत्यार्थ प्रकाश' की एक प्रति मिली। पुस्तक के भीतर आपके आर्य समाज का नाम अंकित है। मैं आपका अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। श्रीयुत हैम्फ्रे ने मुझ से इस पुस्तक की चर्चा की थी। हो सकता है उन्होंने ही यह पुस्तक मेरे पास भेजी हो। मैं दानी का कृतज्ञ हूं भले ही वह कोई क्यों न हो। मैं बड़े चाव से इस ग्रन्थ को विशेषतः इसके ११वें समुल्लास को पढ़ रहा हूं।"

आर्य समाज विनय नगर का यह यत्न सराहनीय एवं अनुकरणीय है। अन्य आर्य समाजों और आर्य नर नारियों को भी अपना साहित्य विशिष्ट जनों तक

पहुँचाने का विशेष ध्यान रखना चाहिए। कौन जानता है कि हमारी पुस्तक कितने हाथों में पहुँचकर पढ़ी जाय और इससे लाभ उठाया जाय। आर्यसमाज विनय नगर ने बक्सटन महोदय से प्रार्थना की है कि इस महान ग्रन्थ के अध्ययन के पश्चात् इनकी जो सम्मति बने उससे इसे सूचित कर दिया जाय। सम्मति प्राप्त होने पर उससे 'सार्वदेशिक' के पाठकों को विदित कराने का प्रयत्न किया जायगा।

उर्दू तथा सिन्धी सत्यार्थप्रकाश में एक भूल की ओर संकेत

श्री प्रो० ताराचन्द जी गाजरा एम.ए. लिखते हैं—

"सत्यार्थ प्रकाश के ११वें समुल्लास में स्वामी जी महाराज ने ठाकुर जी की आलोचना करते हुये नर्सी महता की हुंडी की बात लिखी है और इसमें लिखा है कि साल १८५७ ईसवी में (सम्वत् १९१४) अंग्रेजों ने मन्दिर और मूर्तियों को उड़ा दिया था। और ऐसा भी लिखा है कि वाघेर लोगों ने कुछ वीरता दिखाई। इस पर वाघेर का अर्थ उर्दू सत्यार्थ प्रकाश में भागी हुआ लिखा है और सिन्धी सत्यार्थ प्रकाश में 'बागी' या द्रोही किया है परन्तु ये दोनों अटकल पच्चू अर्थ है। वास्तव में वाघेरों की एक छोटी सी जाति थी ये लोग प्रायः समुद्री वाहनों में चोरी आदि करते थे (They were pirates) सिन्ध के सेठ नाऊमल होत चन्द्र के memoirs में इनका संकेत आता है। इन लोगों ने निःसन्देह १८५७ में अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह किया था।"

ख्वाजा हसन निज़ामी

दिल्ली के ख्वाजा हसन निज़ामी अब इस जगत् में नहीं है। इस साल के प्रारम्भ में ८० वर्ष की आयु में देहली में इनका देहान्त हो गया।

ख्वाजा महोदय के कई रूप सामने आये। एक रूप तो इनका वह देखा जब कि वह पक्के सम्प्रदायवादी मुसलमान के रूप में शुद्धि से मोर्चा लेने के लिये मैदान में उतरे हुये थे और 'दाइये इस्लाम' पुस्तक आदि के द्वारा हिन्दुओं को उचित वा अनुचित जिस प्रकार से भी सम्भव हो मुसलमान बनाने का मुसलमानोंमें प्रचार करते थे। मुख्यतया उनके प्रचार के फल स्वरूप साम्प्रदायिक भावनाओं को इतनी अधिक उत्तेजना मिली कि वह श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की हत्या में जाकर परिणत हुई।

एक समय आया जब कि तब्लीग के सक्रिय कार्य से उपराम हुये ख्वाजा महोदय को हिन्दू मुस्लिम एकता के लिये सक्रिय प्रयत्न करते हुये देखा। यह इनका दूसरा रूप था। उन्होंने अपने ग्रन्थों और लेखों के द्वारा मुसलमानों को हिंदू धर्म से और गैर मुस्लिमों को मुस्लिम धर्म से परिचित कराने का भी पूरा पूरा यत्न किया। इनका कुरान का हिन्दी अनुवाद इस दिशा में अच्छा उदाहरण है। उन्होंने गो वध के विरुद्ध उर्दू में एक प्रामाणिक पुस्तक लिखी जिससे मुसलमानों को गोवध निषेध की अच्छी प्रेरणा मिल सकती है।

ख्वाजा महोदय उर्दू के अच्छे लेखक थे।

"महिलाएं गार्हस्थ जीवन का महत्व न भुलाए"

लखनऊ विश्वविद्यालय के उपकुलपति डा० राधाकमल मुखर्जी ने कहा है कि आधुनिक महिला अधिक आरामतलब हो गई है और सतीत्व एवं निष्ठा की पुरातन भावनाओं पर सिनेमा तथा सस्ते उपन्यासों ने प्रहार किया है। डा० मुखर्जी ने यह मत विश्वविद्यालय के लेडी कैलाश गर्ल्स होस्टल में छात्राओं द्वारा आयोजित एक स्वागत-समारोह में व्यक्त किया। उन्होंने कहा कि समाज की वर्तमान अवस्था में, जो पुरातनता और आधुनिकता का विचित्र सम्मिश्रण है, घर में महिलाओं को कोई काम काज नहीं है, जिससे उनमें आरामतलबी और गपबाजी बढ़ गई और वह धीरे-धीरे निठल्लेपन और परजीवता में परिणत हो गई। साथ ही, पुरातन गार्हस्थ विधि पति के प्रति भक्तिपूर्ण निष्ठा, आत्म बलिदान की पवित्र भावना आदि—का लोप हो चला है, जिससे कौटुम्बिक जीवन कृत्रिम तथा विषाक्त हो चला है। डा० मुखर्जी ने कहा कि सस्ते उपन्यासों, सिनेमा, फिल्मों आदि ने

प्रेम की पवित्रता नष्ट कर दी है और यौन सुख को प्रमुखता प्रदान कर दी है।

कन्याओं को यूरोप और अमरीका की संस्कृति से सावधान करते हुए डा० मुखर्जी ने कहा कि कन्यायें ही गृहिणी बनकर इस देश को उस भयावने सांस्कृतिक आक्रमण से बचा सकती है, जो पश्चिम में गार्हस्थ जीवन का सर्वनाश कर अब पूर्व में जड़ जमाने की चेष्टा कर रहा है। उन्होंने कहा कि विश्वविद्यालय जीवन के उच्चतर गुणों की पौदशाला है, जहां कन्यायें अपने विवेक की तुला पर विभिन्न संस्कृतियों को तौल कर अपने जीवन का पथ निश्चित कर सकती है।'

तम्बाकू का दुष्प्रभाव

तम्बाकू का दुर्भाग्य से देश में बहुत रिवाज बढ़ता जा रहा है। परन्तु इसके जहरीले प्रभाव से बहुत कम लोग जानकारी रखते हैं। एक पौंड तम्बाकू में ३८० ग्रेन अत्यन्त घातक विष रहता है जिसका नाम निकोटीन (Nicotine) है। यदि यह (३८० ग्रेन) विष ३०० आदमियों को इस प्रकार खिला दिया जाय कि वह उनके पेटों में पहुंच जाय तो सब के सब मनुष्य उस विष के प्रभाव से मर जायं। इस विष के सम्बन्ध में अनेक परीक्षण किये गये हैं। एक कुत्ता जिसके भीतर यह विष पहुंचा दिया गया १० मिनट के भीतर मर गया। इसी प्रकार मक्खी और मेंढक तो बस धुएं से ही मर गये। (देखो Man the master piece by Dr Kello.

लेडी रामाराव और आर्यसमाज

भारत सरकार द्वारा नियुक्त "नैतिक और सामाजिक कल्याण परामर्शदातृ (Moral and Social Hygiene Advisory Committee)" समिति ने श्रीमती लेडी रामाराव की अध्यक्षता में देश के विभिन्न भागों में घूम कर देश में व्याप्त अनैतिकता के विषय में विशेष जानकारी प्राप्त की है। लेडी रामाराव ने अजमेर और हैदराबाद में अपने सार्वजनिक भाषणों में जिनकी रिपोर्ट समाचार पत्रों में छपी है आर्य समाज के विधवाश्रमों को अनैतिकता के अड्डे बतलाया है। सार्वदेशिक सभा के प्रधान की ओर से विरोध पत्र लिख कर श्रीमती रामाराव से पत्र में प्रकाशित उनके भाषण की रिपोर्ट की सत्यता ज्ञात की गई है: —

पत्र

"मेरा ध्यान हैदराबाद में २८ जुलाई १९५५ को एक प्रेस कान्फ्रेंस में दिये गये आपके भाषण की रिपोर्ट की ओर आकृष्ट किया गया है जो २९-७-५५ के टाइम्ज आव इण्डिया में प्रकाशित हुई है जिसमें आपने यह कहा है कि 'महासभा और आर्य समाज द्वारा संचालित बहुत से नारी संरक्षण गृह, संरक्षण गृह न होकर और सब कुछ हैं।" जो लड़कियां इन इन आश्रमों में शरण लेती हैं वे विवाह के बाजार में प्रस्तुत की जाकर अधिक से अधिक पैसा देने वाले के हाथ बेच दी जाती हैं।" मैं चाहता हूँ कि ये बातें ग़लत हों, यतः ये बातें एक जिम्मेवार और सुप्रसिद्ध पत्र में छपी हैं इसलिए इन पर सहसा ही अविश्वास भी नहीं किया जा सकता इसीलिए यह पत्र भेजता हूं।

मुख्यतया आर्य समाज से सम्बद्ध आपकी असंगत बातों से मुझे और आर्य समाज के क्षेत्रों में अन्य आर्यों को जिन्होंने यह रिपोर्ट पढ़ी है बड़ा दुःख हुआ है। आर्य समाज ने अपने जन्म दिन से ही अपनी समस्त संस्थाओं में जिनमें नारी संरक्षण गृह' सम्मिलित हैं सदाचार के रक्षण पर विशेष ध्यान रक्खा है। फिर भी आर्यसमाज अपनी संस्थाओं की कार्य शैली में व्याप्त किसी भी कमी वा अपूर्णता के निर्देशन का स्वागत करेगा यदि वह सद्भाव में किया जाय और प्रमाणों पर आधारित हो।

मैं आपका विशेष कृतज्ञ हूंगा यदि आप मुझे आर्य समाज से सम्बद्ध वा आर्य समाज द्वारा संचालित उपर्युक्त प्रकार के संरक्षण गृह के नाम व पते लिख भेजें ताकि मैं उनके सुधार की शीघ्र से शीघ्र व्यवस्था कर सकूं।"

विधवा विवाह पद्धति

विदेश से एक आर्य सज्जन लिखते हैं :—

"यहां पर कई विधवा विवाह किए गए हैं जो साधारणतया सामान्य प्रकरणम् तक हवन करके पाणि ग्रहण के मन्त्रों से प्रतिज्ञा करादी गई है। क्या यह विधिवत है ? इसका निर्णय लिखें। यदि कोई विधवा विवाह पद्धति है तो भेजने की कृपा करें। विधवा विवाह के सम्बन्ध में निम्न विचारों पर प्रकाश डालें :—

"विधुर पुरुष अर्थात् युवक और क्वारी युवती तथा विधवा युवती और क्वारे युवक इनके विवाह किस पद्धति से कराये जावें। विधवा विवाह के अनुसार या विवाह संस्कार की पूर्ण विधि के अनुसार करना चाहिये ?

विधवा विवाह के लिए पृथक् पद्धति निर्धारित नहीं है जो होनी चाहिए। पत्र प्रेषक सज्जन उपर्युक्त जिस विधि से विवाह कराते हैं वह पद्धति ठीक ही है। विधुर का विवाह विधवा से और विधवा का विवाह विधुर से होना चाहिये। उसकी पद्धति भी वही होगी जैसी पत्र प्रेषक ने अपनाई हुई है। कोई आपत्तिकाल हो और इस नियम का पालन न हो सके तो ये विवाह भी विधवा विवाह समझ कर उसी पद्धति से करा देना चाहिये।

गोवा कांड

१५ अगस्त को गोवा में वीर गति को प्राप्त एवं आहत हुए शांत सत्याग्रहियों के त्याग और बलिदान से भारतवर्ष का कौन ऐसा प्राणी होगा जिसका हृदय देशाभिमान से पुलकित न हो उठा हो। उन वीरों के लिए सहसा ही हृदय से साधुवाद निकल पड़ता है निश्चय ही इनका बलिदान व्यर्थ न जायगा और शीघ्र ही गोवा विदेशी शासन से मुक्त होकर रहेगा। सत्य और न्याय की आवाज गोलियों और लाठियों से न कभी बन्द हुई और न बन्द की जा सकती है। इस प्रकार के अत्याचार का दमन से सत्याग्रह का मार्ग साफ होगा और विजय श्री निकटतर आती रहती है। शक्ति औरभ्रम में भटकी हुई गोवा सरकार पर यह सत्य शीघ्र ही प्रकट होकर रहेगा।

'सविता'

अजमेर से प्रकाशित होने वाले सविता पत्र के अगस्त के अंक में श्री विद्यानन्द जी विदेह की पुस्तकों की प्रशंसा में कुछ आर्य विद्वानों और आर्य पत्रों की सम्मतियां प्रकाशित हुई हैं। सार्वदेशिक पत्र की सम्मति भी उद्धृत की गई है।

इस नोट के द्वारा हम यह स्पष्ट कर देना आवश्यक समझते हैं कि 'सार्वदेशिक पत्र' की सम्मति बहुत पुरानी है सार्वदेशिक सभा की धर्मार्य सभा ने विदेह जी की उन पुस्तकों में अनेक संशोधन करके उनको ठीक कराके छापने वा प्रचारित करने की जब से मांग की है उसके बाद की कोई भी सम्मति सार्वदेशिक की नहीं है। अतः जनता किसी प्रकार के भ्रम में न पड़े। पुरानी सम्मतियों को इस समय छापने से प्रकाशकों का अभिप्राय धर्मार्य सभा के सुधारों का महत्व कम करना हो तो उनके उद्देश्य की सिद्धि न होगी उलटा अपना केस कमजोर करना होगा। वे सम्मतियां व्यक्तिगत सम्मतियां हो सकती हैं। यह भी निश्चय नहीं कि वे ठीक रूप में छपी है या नहीं। सामूहिक निश्चय के सामने उनका महत्व नगण्य है समझदार जनता इनका ठीक २ मूल्यांकन करेगी।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

वेद और सृष्टि उत्पत्ति

(लेखक—श्री शिवस्वामी जी सम्भल)

पाठकगण ! यह सृष्टि जो इस समय विद्यमान है, कब, कैसे और क्यों उत्पन्न हुई इसका उत्तर विद्या और बुद्धि के अनुकूल केवल एक वेद भगवान् ही दे सकते हैं। कब और कैसे हुई ? इसको माइन्स बतलायेगी। क्यों हुई ? इसकी फिलासोफी व्याख्या करेगी। वेद सत्य विद्याओं का भण्डार है अतः इन सब प्रश्नों का उत्तर वेद भगवान् निम्न मन्त्रों में सन्तोष जनक देते हैं।

१—अस्मदादिगण, सृष्टि उत्पत्ति किस प्रकार हुई इसको क्यों नहीं जानते ? इसका सहेतुक उत्तर—

१ को अद्धा वेद क इह प्रवोचत् कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः। अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाथा को वेद यत आबभूव ॥ ऋ० १०। १२९।६॥

भावार्थः—सत्य ठीक २ कौन जान सकता है, यहां या इस विषय में कौन उत्तम रीति से कौन प्रवचन या उपदेश कर सकता है ? यह सृष्टि कहां से प्रगट हुई ? यह विविध प्रकार सर्ग—जगत् किस मूलकारण से और क्यों हुआ ? यह तेज से चलने वाले सूर्य चन्द्रादि लोक भी इस जगत् को विविध प्रकार से रचने वाले मूल कारण के पश्चात् ही है। तो फिर कौन इस तत्व को जानता है जिस से यह जगत चारों ओर प्रकट हुआ ? ऋ० १०। १२९। ६॥

सायणाचार्य कृतार्थः—

(१) कः पुरुषः अद्धा पारमार्थ्येन वेद जानाति को वा इहास्मिन् लोके प्रवोचत् प्रब्रूयात् इयं दृश्यमाना विसृष्टिः कस्मादुपादानात् कारणात्कुतः कस्माच्च निमित्तकारणा=दाजाता प्रादुर्भूता एतदुभयं सम्यक् को वेद ? को वा विस्तरेण वक्तुं शक्नुयादित्यर्थः ? ननु देवा अजानन्त सर्वज्ञास्ते ज्ञास्यन्ति वक्तुं च शक्नुयुरन्तीत्यत आह—अर्वागिति देवाश्चास्य जगतो विसर्जनेन वियदादि भूतोत्पत्त्यनन्तरं विविधं यद् भौतिक सर्जनं सृष्टिः तेन अर्वाक् अर्वाचीनाः कृताः भूतसृष्टेः पश्चाज्जाता इत्यर्थः तथाविधास्ते कथं स्वोत्पत्तेः पूर्वकालीनां सृष्टिं जानीयुः ? अजानन्तो वा कथं प्रब्रूयुः इक्तं दुर्ज्ञानत्वं निर्गमयति अत एवं मति देवा अपि न जानन्ति किम तद्व्यतिरिक्तः को नाम मनुष्यादिर्वेद तत् जगत् कारणं जानाति।

१०। १२९। ६॥

आशय यही है कि जिस समय यह सृष्टि रची जा रही थी, उस समय देवता भी नहीं थे। न कोई मनुष्य था; क्योंकि यह देव मनुष्यादि सृष्टि तो जगत् उत्पन्न हो जाने के उपरान्त रची गई है। उत्तर यही होगा कि ब्रह्म के अतिरिक्त और कोई नहीं जानता। "भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्" ॥

Who verily knows and who can here declare it, whence it was born ? and whence comes this creation ? the gods are later than this world's production. Who knows then whence it first came into being ? 10 I29 6

(२) इयं विसृष्टिर्यत आबभूव यदि वादधे यदिवा न। यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन्त्सो अंग वेद यदि वा न वेद ॥ ऋ० १०। १२९। ७॥

भावार्थ—यह विविध प्रकार की सृष्टि जिस मूलतत्व से प्रगट हुई है, और जो वह इस जगत् को धारण करता है, जो इसका अध्यक्ष प्रभु वह परमपद में विद्यमान है। हे विद्वन् ! वह सब तत्व को जानता हो। चाहे कोई और उसको भले ही नहीं जानता हो। अर्थात चाहे मनुष्य उसको, बाद को उत्पन्न होने के कारण, न जानता हो, परन्तु परमात्मा तो

नित्य होने से सब कुछ जानता है। सायणाचार्य आदि आधुनिक भाष्यकारोंने "यदि वा वेदश्च यदि वा नवेद" का यथार्थ भाव न जानकर अनर्थ कर डाला है। श्री महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने यथार्थ भाव प्रगट कर दिया है।

सायणकृतार्थः—......इयं विसृष्टिः विविधा गिरिनदीसमुद्रादिरूपेण विचित्रा सृष्टिः आबभूव आजाता सोपि किल यदि वा-दधे धारयति यदिवा न धारयति एवं च को नामान्यो धर्तुं शक्नुयात् यदि धारयेत् ईश्वर एव धारयेत् नान्य इति। एतेन कार्यस्य धारयितृत्वप्रतिपादनेन ब्रह्मणः उपादानकारणत्वमुक्तं भवति। अस्य भूतभौतिकात्मकस्य, जगतो यो अध्यक्ष ईश्वरः परमे उत्कृष्टे सत्यभूते व्योमन् व्योमनि आकाशे आकाशवन्निर्मले स्वप्रकाशे प्रतिष्ठितः ईदृशो यः परमेश्वरः सो अंग अंगेति प्रसिद्धौ सोपि नाम वेद जानाति यदि वा न वेद न जानाति को नामान्यो जानीयात् सर्वज्ञ ईश्वर एव तां सृष्टिं जानीयात् नान्य इति ॥ १० । १२९ । ७ ॥

He the first origin of this world, whether he formed it all or didnot form it, whose eye controls this world in height heaven, he verily knows it, or perhaps he kuows not
10-12 -7

प्रश्नोत्तर—

प्रश्न—नित्य किसको कहते हैं ?

उत्तर १)—सदकारणान्नित्यम्।

जिस सत्ता का कोई कारण न हो।

(२)—यस्मिन् परिणाम्यमाने तत्वं न विहन्यते तन्नित्यम्।

तदपि नित्यं यस्मिन् तत्वं न विहन्यते।

महाभाष्य।

"कील हार्न" का संस्करण।

भाग १। पृ० १। पं० २२।

वह भी नित्य है, जिसका वास्तविक स्वरूप नष्ट न हो। जैसे—

अणु का वह भाग, परमाणु जो त्रुटि से रहित है, नित्य है।

प्रश्न—जबकि तुम्हारे मत में जीव, ईश्वर और प्रकृति तीनों नित्य हैं, तो तीन ईश्वर होगये वा नहीं ?

उत्तर—नहीं। नहि किंचित कस्यचित केनचित् सामान्यं न संभवति। न च तावता यथात्वं वैषम्यं निवर्तते ॥ वेदान्त सूत्र ३।१।९। पर शंकर पृ० २१०३

यूनानी मस्तिष्क भी यही कहता है—

"जिस चीज़ में तमाम सिफात खुदा की पाई जायें वह खुदाई सिर्फ एक सिफ्त मिलने से नहीं।

(देखो—बराहीन अहमदिया। सफा १८६ ॥)

प्रश्न—क्या ब्रह्म ही परिणत होकर जगत् रूप नहीं बन गया ?

उत्तर—नहीं। परिणामपक्षो दुर्घट इति यदुक्तम्—तदस्मदिष्टम् एव इति। विवर्तवादेन सिध्यति। (वेदान्त सूत्र पर रत्नप्रभा व्याख्या पृ० १०७३।)

परिणाम पक्ष दुर्घट है। ऐसा जो तुमने कहा है वह हमें इष्ट ही है। इस अभिप्राय से सूत्रकार विवर्त वाद से सिद्धान्त करते हैं ॥

(३) कामस्तदग्रे समवर्तत मनसा रेतः प्रथमं यदासीत्। सकामकामेन बृहता सयोनी रायस्पोषं यजमानाय धेहि ॥ अथर्व १९।५२।१॥

भाषार्थः—समस्त सृष्टि उत्पन्न होने के भी पूर्व में, वह परमेश्वर ब्रह्म ही काम अर्थात् सृष्टि को उत्पन्न करने की इच्छा या कामना करनेहारा स्वयं काम, समष्टि संकल्परूप विद्यमान था। जिस ज्ञानमय उस ब्रह्म का सबसे प्रथम या सबसे श्रेष्ठ रेतस—वीर्य जगत् का उपादान कारण—सामर्थ्य—तेजस् विद्यमान था। वह कामनामय परमेश्वर अपने बृहत्—बड़े भारी काम—सृष्टि उत्पन्न करने के संकल्प के साथ एक ही स्थान पर विराजमान रहता है। हे परमेश्वर ! यजमान को ऐश्वर्य की समृद्धि प्रदान कर ॥ १९।५२।१॥

प्रथम दोनों मन्त्रों में यह बतलाया कि परमेश्वर के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं जानता कि सृष्टि कैसे उत्पन्न हुई ? इस तीसरे अथर्व मन्त्र में बताया कि यह सृष्टि क्यों उत्पन्न हुई ? परमात्मा ने क्यों सृष्टि

सिद्धान्त विमर्श

रुद्र का वैदिक-स्वरूप

(२)

(जून के अंक से आगे)

(लेखक—श्री शिवपूजन सिंह 'पथिक' विद्यावाचस्पति, साहित्यालङ्कार, कानपुर)

श्री उव्वटाचार्य्य जी का मतः—आप 'यजुर्वेद भाष्य' में 'रुद्र' का अर्थ लिखते हैं :—

रुद्रैः स्तोतृभिः ॥ यजु० ३८ । १६ ॥

स्तुति करने वाला 'रुद्र' होता है।

रुद्रवर्तनी रुग्णावर्तनी ॥ यजु० १९ । ८२ ॥

रुद्र का अर्थ 'रुग्ण' (रोगी) है और रुद्र वर्तनी का अर्थ रोगी के मार्ग से चलने वाले हैं।

रुद्रो शत्रूणां रोदयितारौ ॥ यजु० २० । ८ ॥

शत्रुओं को रुलाने वाले रुद्र होते हैं।

रुद्रैः धीरैः ॥ यजु० ११ । ५४ ॥

रुद्र का अर्थ धीर है।

श्री महीधराचार्य जी का मतः—आप यजुर्वेद में 'रुद्र' का अर्थ करते हैं:—

रुद्रस्य शिवस्य ॥ यजु० १६ । ५० ॥

शिव (कल्याण स्वरूप परमेश्वर) रुद्र है।

रुद्राय शङ्कराय ॥ यजु० १६ । ४८ ॥

शङ्कर (कल्याण करने वाला ईश्वर) ही रुद्र होता है।

रुत् दुःखं द्रावयति रुद्रः । रवणं रुत् ज्ञानं राति ददाति । पापिनो नरान् दुःख भोगेन रोदयति ॥

यजु० १६ । १ ॥

रुत् का अर्थ दुःख है, दुःख का नाश करता है इस लिए परमात्मा का नाम रुद्र है। अथवा रुत् शब्द का अर्थ ज्ञान है, उस ज्ञान को जो देता है, वह उपदेशक रुद्र कहलाता है। पापी मनुष्यों को दुःख भोग भुगवा कर रुलाता है, इसलिए ईश्वर का नाम 'रुद्र' है।

रुद्रस्य क्रूरदेवस्य ॥ यजु० ११ । १५ ॥

क्रूर देवता का नाम रुद्र होता है।

रुत् दुःखं द्रावयति नाशयति रुद्रः ॥

यजु० १६ । २८ ॥

दुःख दूर करता है, इस लिये ईश्वर का नाम 'रुद्र' है।

उत्पन्न करने की इच्छा को ? पूर्वकल्प के जीवों के शुभाशुभ कर्म बीजरूप से विद्यमान थे—उनके फल भुगतवाने के लिये यह सृष्टि रची।

सायणकृतार्थः—तादृशमनःसम्बन्धि रेतः भाविनः प्रपञ्चस्य बीजभूतं प्रथमम् अतीते कल्पे प्राणिभिः कृतं पुण्यापुण्यात्मकं कर्म यत् यतः कारणात् सृष्टि समये आसीत् अभवद् भूष्णु वर्धिष्णुः समजायत । परिपक्वं-सत् फलोन्मुखं आसीदित्यर्थः। ततोहेतोः फलप्रदस्य सर्वसाक्षिणः कर्माध्यक्षस्य परमेश्वरस्य मनसि सिसृक्षा जायतेत्यर्थः ॥ ११।५२।१॥

There after rose desire (काम in the begining desire the primvol seed a d germ of spirit. 6 kama—सिसृक्षा Desire to creation, swelling with th- lofty kama, give growth of riches to the sacrifice. 19-52-1.

भोगापवर्गार्थं दृश्यम्।

अर्थात्—यह जगत् पूर्व कर्मों के भोग के लिये, और कर्म की समाप्ति—क्षय वालों को मुक्ति दिखाने को रचा। यही कर्म बीजरूप से थे। इससे परमेश्वर पर नैर्घृण्य दोष नहीं लगता। परन्तु आवागमन न मानने वालों पर यह दोष लगता है।

रुद्रो दुःखनाशकः ॥ यजु० १६ । ३१ ॥

दुःख को नाश करने वाला रुद्र है।

रोदयति विरोधिनां शतं इति रुद्रः ॥ यजु० १।२७॥

सैंकड़ों विरोधियों को रुलाता है इसलिये उसको रुद्र कहते हैं।

रुद्रौ शत्रूणां रोदयितारौ ॥ यजु० २० । ८१ ॥

शत्रुओं को रुलाने वाला रुद्र होता है।

रुद्रैः धीरैः बुद्धिमद्भिः ॥ यजु० ११ । ५४ ॥

रुद्र का अर्थ धैर्यशाली बुद्धिमान् है।

रुद्रैः स्तोतृभिः ॥ यजु० ३८ । १६ ॥

स्तुति करने वाले कवि का नाम रुद्र है।

रुद्रवर्तनी रुग्णवर्तनो भिषजौ अश्विनौ ॥

यजु० ११ । ८२ ॥

रुद्र अर्थात् रुग्ण जहां होता है, वहां वैद्य जाता है, इसलिये वैद्यों को 'रुद्र-वर्तनी' (रुग्ण-मार्ग-स्थ) कहते हैं, इस प्रकार के अश्विन देव हैं।

कदन्नभक्षणे चौर्ये वा प्रवर्त्य, रोगमुत्पाद्य, जनान् घ्नन्ति तेभ्यः पृथ्वीस्थेभ्यो अन्नायुधेभ्यो रुद्रेभ्यः ॥

यजु० १६ । ६६ ॥

बुरा अन्न खाने, चोरी आदि में प्रवृत्ति करके, रोग उत्पन्न करके, जो प्राणियों का नाश करते हैं, वे अन्न-रूपी शस्त्रों को धारण करने वाले पृथ्वी पर रुद्र हैं।

कुवातेनान्नं विनाश्य वातरोगं वा उत्पाद्य जनान् घ्नन्ति ॥ यजु० १६ । ६५ ॥

दूषित वायु के कारण अन्न को बिगाड़ कर वात रोग को उत्पन्न करके जो प्राणियों को मारता है, उसको रुद्र कहते हैं।

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती का मतः—आप अपने 'ऋग्वेदभाष्य' में 'रुद्र' का अर्थ करते हैं—

रुद्राय परमेश्वराय जीवाय वा ॥.......॥रुद्रशब्देन त्रयोऽर्था गृह्यन्ते। परमेश्वरो जीवो वायुश्चेति। तत्र परमेश्वरः सर्वज्ञतया येन यादृशं पापकर्म कृतं तत्फल-दानेन रोदयिताऽस्ति। जीवः खलु यदा मरणसमये शरीरं जहाति पापफलं च भुंक्ते तदा स्वयं रोदिति। वायुश्च शूलादिपीडाकर्मणा कर्मनिमित्तः सन् रोद-यितास्ति। अत एते रुद्रा विज्ञेयाः ॥ ऋ० १।४३।१ ॥

रुद्र शब्द के तीन अर्थ होते हैं। परमेश्वर, जीव और वायु। परमेश्वर सर्वज्ञ होने से जिसने जैसा पाप किया होता है उसको वैसा ही दण्ड देकर पापियों को रुलाता है, इसलिये उसको रुद्र कहते हैं तथा जीव जब इस शरीर से पृथक् होने लगता है उस समय शरीर छोड़ने और पाप फल भोगने के कारण रोता है, इस कारण उसको 'रुद्र' कहते हैं। तथा वायु दर्द उत्पन्न करके शरीर में पीड़ा देता है, इसलिए इस रोग उत्पन्न करने वाले वायु को भी 'रुद्र' कहते हैं, अतएव ये तीनों रुद्र हैं।

रुद्र दुःख नाशक ॥ ऋ० २ । ३३ । १ ॥

दुःख निवारण करने वाला 'रुद्र' होता है।

रुद्रः दुष्टानां भयंकर ॥ ऋ० ५ । ४६ । २ ॥

दुष्ट जन जिससे डरते हैं, उसको रुद्र कहते हैं।

रुद्र दुष्टदण्डक ॥ ऋ० ५ । ५१ । १३ ॥

दुष्टों को दण्ड देने वाले को 'रुद्र' कहते हैं।

रुद्र सर्व रोग दोष निवारक ॥ऋ० २ । ३३ । २॥

सब रोगों और दोषों को दूर करने वाला 'रुद्र' कहा जाता है।

रुद्रस्य रोगाणां द्रावस्य निःसारकस्य ॥

ऋ० ७ । ५६ । १ ॥

रोगों को हटाने वाला रुद्र होता है।

रुद्र रोगाणां प्रलयकृत् ॥ ऋ० २ । ३३ । ३ ॥

रोगों का सर्वथा नाश करनेवाला 'रुद्र' कहलाता है

रुद्र कुपथ्यकारिणां रोदयितः ॥ ऋ० २ । ३३।४॥

कुपथ्य करने वाले को रुलाता है, इसलिए उसको 'रुद्र' कहते हैं।

रुद्रस्य प्राणस्य वर्तनिः मार्गः ययोस्तौ रुद्रवर्तनी ॥

ऋ० १ । ३ । ३ ॥

प्राण के मार्ग पर चलने वालों को रुद्र वर्तनी कहते हैं।

रुद्रं शत्रुरोद्धारं ॥ ऋ० १ । ११४ । ४ ॥

शत्रु का प्रतिबन्ध करने वाला रुद्र होता है।

रुद्रस्य शत्रूणां रोदयितुर्महावीरस्य ॥ऋ० १।८५॥

अत्यन्त शूरवीर, जो शत्रुओं को रुलाता है रुद्र कहा जाता है।

रुद्राणां प्राणानां दुष्टान् श्रेष्ठांश्च रोदयतां ॥

ऋ० १।१०१।७॥

दुष्ट और श्रेष्ठों को रुलाने वाले प्राणादि को 'रुद्र' कहते हैं।

रुद्र ! रुतः सत्योपदेशान् राति ददाति तत्संबुद्धौ ॥

जो सत्य उपदेश करता है, उसका नाम रुद्र है।

रुद्रः अधीतविद्यः ॥ ऋ० १।११४।११॥

जिसने विद्या का अध्ययन किया होता है, वह रुद्र कहलाता है।

रुद्राय सभाध्यक्षाय ॥ ऋ० १।११४।६॥

सभा का अध्यक्ष रुद्र होता है।

रुद्र न्यायाधीश ॥ ऋ० १।११४।२॥

न्यायाधीश को रुद्र कहते हैं।

रुद्रियं रुद्रस्येदं कर्म ॥ ऋ० ११३४।२॥

रुद्र का जो जो कर्म होता है, उसको रुद्रिय कहते हैं।

पुनः आप अपने "यजुर्वेद भाष्य" में 'रुद्र' का अर्थ यों करते हैं:—

'रुद्रः परमेश्वरः। चतुश्चत्वारिंशद्वर्षकृतब्रह्मचर्यो विद्वान् वा ॥ यजु० ४ २०॥

परमेश्वर वा ४४ वर्ष पर्यन्त अखण्ड ब्रह्मचर्याश्रम सेवन से पूर्ण विद्यायुक्त विद्वान् रुद्र कहलाता है।

रोदयत्यन्यायकारिणो जनान् स रुद्रः ॥

यजु० ३।५७॥

अन्यायकारी मनुष्यों को रुलाने वाले विद्वान् को 'रुद्र' कहते हैं।

(रुद्रम्) दुष्टानां रोदयितारं परमेश्वरम् ॥

यजु० ३।५८॥

दुष्टों को रुलाने वाले जगदीश्वर को 'रुद्र' कहते हैं।

(रुद्र) यो रोदयति शत्रूंस्तत्संबुद्धौ शूरवीर ॥

यजु० ३।६१॥

रुद्र शत्रुओं को रुलाने वाले युद्ध विद्या में कुशल सेनाध्यक्ष विद्वान्।

(रुद्रः) दुष्टानां रोदयिता विद्वान् ॥यजु० ५।२१॥

दुष्टों को रुलाने वाला परमेश्वर वा विद्वान् 'रुद्र' कहलाता है।

रुद्रः शत्रूणां रोदयिता शूरवीरः ॥ यजु० ६।३६॥

शत्रुओं को रुलानेवाले शूरवीर का नाम 'रुद्र' है।

रुद्रस्य शत्रुरोदकस्य स्वसेनापतेः ॥ यजु० ११ १५॥

उसी प्रकार अपने सेनापति को रुद्र कहते हैं।

रुद्रः जीवः ॥ यजु० ८।५॥

जीव को भी रुद्र कहते हैं।

(रुद्राः प्राणापानव्यानोदानसमाननागकूर्मकृकल-देवदत्तधनञ्जयाख्या दश प्राणा एकादशो जीवश्चेत्येकादश रुद्राः ॥यजु० २।५॥

प्राण, अपान, व्यान उदान, समान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनञ्जय और ग्यारहवें जीवात्मा इन दस प्राण को 'रुद्र' कहते हैं।

रुद्राः प्राणरूपा वायवः ॥ यजु० ११।५४॥

प्राणरूप वायु 'रुद्र' है।

रुद्रा बलवंतो वायवः ॥ यजु० १५।११॥

बलवान् वायु रुद्र है।

रुद्राः सजीवाः अजीवाः प्राणादयो वायवः ॥

यजु० १६।५४॥

सजीव और निर्जीवों में रहने वाले वायु रुद्र हैं।

रुद्रा मध्यस्थाः ॥ यजु० १२।४४॥

मध्यस्थों को रुद्र कहते हैं।

रुद्रा रुद्रसंज्ञका विद्वांसः ॥ यजु० ११।५८॥

विद्वानों का नाम रुद्र होता है।

रुद्र राजवैद्य ॥ यजु० १६।४९॥

राजवैद्य रुद्र होता है।

रुद्रस्य सभेशस्य ॥ यजु० १६।५०॥

सभापति भी रुद्र कहलाता है।

इस प्रकार 'रुद्र' शब्द के कई अर्थ होते हैं।

श्री यास्काचार्य जी का मत—

अग्निरपि रुद्र उच्यते ॥

(निरुक्त, दैवतकांड, १०।७।२)

अर्थात अग्नि को भी 'रुद्र' कहा जाता है। यह रुत् द्रावक अर्थात् दुःखनाशक है, रुत्+द्रु+णिच्+ड=रुद्र।※

※. देखो—पं० चन्द्रमणि विद्यालंकार 'पालीरत्न कृत 'निरुक्तभाष्य' उत्तरार्ध प्रथमावृत्ति पृष्ठ ६१३।

इसकी पुष्टि ब्राह्मणादि ग्रन्थों से इस प्रकार होती है:—

अग्निर्वै रुद्रः ॥

(शतपथ ब्रा० ५।३।१।१०;६।१।३।१०)

(त्वमग्ने रुद्रः……ऋ० २ । १ । ६)

रुद्रोऽग्निः (ताण्ड्य ब्रा० १२ । ४ । २४)

यो वै रुद्रः सोऽग्निः ॥

(शतपथ ब्रा० ५ । २ । ४ । १३)

एष रुद्रः । यदग्निः ॥

(तै० १ । १ । ५ । ८-९; १ । १ । ६ । ६)

रुद्रः अग्निर्वै (शतपथ ब्रा० १ । ७ । ३ । ८)

पशुओं के पति को 'रुद्र' कहते हैं यथाः—

रुद्र पशूनां पते ॥ तै० ३ । ११ । ४ । २ ॥

रुद्रः (एवैनं राजानं) पशूनां (सुवते)

॥ तै० १ । ७ । ८ । १ ॥

रुद्रꣳ हि नाति पशवः ॥

शतपथ ब्रा० ३ । २ । ४ । २० ॥

इसके अतिरिक्त 'रुद्र' के अर्थ :—

यद्रुद्रश्चन्द्रमास्तेन ॥ कौ० ६ । ७ ॥

वास्तव्यो वाऽएष देवः (रुद्रः) ॥

शतपथ ब्रा०१ । ७ । ४ । १३;५ । ३ । ३ । ७॥

रुद्रो वै स्विष्टकृत् ॥ कौ० ३ । ४,६ ॥

रुद्रः स्विष्टकृत् ॥ शतपथ ब्रा० १३ । ३ । ४,३ ॥

रुद्रो वै ज्येष्ठश्च श्रेष्ठश्च देवानाम् ॥कौ० २५।१३॥

घोरो वै रुद्रः ॥ कौ० १६ । ७ ॥

शूलपाणये (रुद्राय) स्वाहा ॥ षड्विंश० ५।११ ॥

उच्छेषणभागो वै रुद्रः ॥ तै० १ । ७ । ८ । ५ ॥

(रुद्रः) तं (प्रजापतिम्) अभ्यायत्याविध्यत् ॥

ऐतरेय ब्रा० ३ । ३३ ।

तꣳ (प्रजापतिम्) रुद्रोऽभ्यायत्य विव्याध ॥

शतपथ ब्रा० १ । ७ । ४३ ॥

एषा (उदीची) वै रुद्रस्य दिक् ॥ तै० १।७ ८।६ ॥

रुद्रस्य बाहू ('आर्द्रानक्षत्रम्' इति सायणः)

तै० १ । ५ । १ । १ ॥

रौद्रो वै प्रतिहर्त्ता ॥ गो० उ० ३ । १९ ॥

श्री यास्काचार्य जी अपने निरुक्त में शंका उठाते हैं कि :—

'अथापि विप्रतिषिद्धार्था भवन्ति । 'एक एव रुद्रोऽवतस्थे न द्वितीय.' ' असंख्याता सहस्राणि ये रुद्रा अधिभूम्यां' 'अशत्रुरिन्द्र जज्ञिषे' शतं सेना अजयत्सा-कमिन्द्रः इति ।'

[निरुक्त, यास्क-भूमिका १ अ० १३ खं०]

अर्थात् (कौत्स कहता है):—वेद मन्त्र परस्पर विरोधी अर्थों वाले हैं, इनमें परस्पर विरोध बहुत अधिक पाया जाता है । जैसे, 'एक एव रुद्रोऽवतस्थे न द्वितीयः' में तो यह कहा कि एक ही रुद्र अवस्थित है दूसरा नहीं, परन्तु 'असंख्याता सहस्राणि ये रुद्रा अधिभूम्यां' में कह दिया कि जो भूमि पर रुद्र हैं, वे सहस्रों असंख्यात हैं । एवं, 'अशत्रुरिन्द्र जज्ञिषे' में कहा हे इन्द्र ! तुम शत्रु रहित पैदा हुए हो और 'शतं सेना अजयत्साकमिन्द्रः' में कह दिया इन्द्र ने इकट्ठी सौ सेनाएं जीतीं । इस प्रकार वेदों में परस्पर विरोध होने के कारण ये अनर्थक हैं ।

''यथो एतद्विप्रतिषिद्धार्था भवन्तीति, लौकिकेष्व-प्येतद्यथाऽसपत्नोऽयं ब्राह्मणोऽनमित्रो राजेति ।''

[निरुक्त, यास्कभूमिका, १ अ० १४ ख०]

अर्थात् (श्री यास्कजी कौत्स के हेतुओं का खण्डन करते हुए कहते हैं)

'जो यह कहा कि वेदमन्त्र परस्पर विरुद्ध अर्थ वाले हैं, सो यह बात लौकिक वचनों में भी है; जैसे यह ब्राह्मण असपत्न है, यह राजा अशत्रु है ।

रुद्र एक है, रुद्र अनन्त हैं; इन्द्र शत्रु रहित है, इन्द्र के अनेक शत्रु हैं—वे परस्पर विरोधी बातें नहीं । इसको हम इस तरह समझा सकते हैं कि जिस तरह लोक में प्रायः कहा जाता है कि रामचन्द्र अजातशत्रु थे । यद्यपि रावणादि उनके शत्रु थे, तो भी जो अजातशत्रु कहा जाता है, उसका यही अभिप्राय होता है कि महाराज रामचन्द्र के दुश्मन बहुत कम थे, और जो थे भी, वे बहुत शक्तिशाली न थे । (समाप्त)

मन्त्रोच्चारण

लेखक— श्री सोमेश्वर फारेस्ट आफीसर राजगढ

आर्य समाज का तृतीय नियम है कि "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना सब आर्यों का परम धर्म है।" आर्य पर्वों पर व हर रविवार को आर्य समाज भवन में जो आर्य जाते हैं वे तीसरे नियम का पालन कुछ अंशों में करते हैं। आर्य पण्डित, पुरोहित व वक्ता जो भी आर्य समाज की वेदी पर उपदेश करने खड़े होते हैं, वे पहिले वेद मन्त्र के उच्चारण द्वारा प्रभु की आराधना कर के फिर आगे अपना उपदेश शुरू करते हैं।

व्याकरण शास्त्र के अनुसार उच्चारण में ३ प्रकार का अशुद्धि होती है (१) वर्ण की अशुद्धि, (२) मात्रा की अशुद्धि, (३) स्वर की अशुद्धि। अशुद्ध उच्चारण से अर्थ का अनर्थ हो जाता है जैसे "सकल" के स्थान पर "शकल" पाठ किया जाये तो अर्थ का भेद हो गया। "सकल" का अर्थ है सबका "शकल" का अर्थ खण्ड का होता है। इसी प्रकार मात्रा के भेद होने से अर्थ बोध ठीक नहीं होता। बिना स्वर के कोई शब्द नहीं होता। एक भिखारी सम्पन्न घराने के द्वार पर भिक्षा के लिये जाता है तो आवाज लगाता है "दीजिये"। एक धनवान जब ऋणी से कर्जा वसूल करने जाता है वह भी शब्द "दीजिये" बोलता है। आप कमरे में बैठे हुए कह सकते हैं कि बाहर से आवाज भिखारी की आ रही है। या किसी धनवान की आ रही है। शब्द तो दोनों सज्जनों ने एक ही उच्चारण किया है परन्तु स्वर दोनों ने अलग २ लगाये हैं, इसी से आप इससे भेद कर सके कि आवाज किस की है।

नाटककार जो नाटक (ड्रामा लिखते हैं उसमें वार्तालाप के सम्मुख कोष्ट में अंकित करते हैं कि ओर से बोला जायेगा या "धीरे से" ताकि जो पंक्ति नाटककार ने लिखी है उसका ठीक प्रकार ही अर्थ सम्पादन हो सके। अगर कहीं पर जोर से बोलने का है, वहां पर धीरे से बोला जाता है तो उसका अर्थ असली प्रगट नहीं होता।

संसार में जितनी भाषायें हैं, सब में समय के अनुसार परिवर्तन होता जाता है। एक भाषा जो आज से १०१० वर्ष पूर्व थी, उसका वही स्वरूप आज नहीं है जो स्वरूप उस भाषा का आज है वह एक हजार वर्ष पश्चात् नहीं रहेगा। किसी भाषा में ज्यादा परिवर्तन होता है किसी में कमहोता है जो जितनी ज्यादा Scientific) भाषा है, उसमें उतना कम अन्तर पड़ता है। आर्य पण्डितों के अनुसार सृष्टि को उत्पन्न हुए १९७२९४९०५५ वर्ष हो गये हैं। जब से सृष्टि का आरम्भ है तभी से वेदोत्पत्ति है। इतने लम्बे अर्से तक वेद वाणी जैसी की तैसी ही रही है, इसमें कोई भेद नहीं हुआ है। इससे प्रगट है कि भाषाओं में पूर्ण श्रेष्ठ व वैज्ञानिक कोई भाषा है तो वह वेद वाणी है। वेद मन्त्रों के ऊपर अगर आप दृष्टि डालें तो आप देखेंगे कि उस पर आड़ी व खड़ी लकीरें लगी हुई हैं यह आड़ी व खड़ी लकीरें ही स्वर का बोध कराती हैं। इनको देख कर ही आप उसका ठीक उच्चारण कर सकते हैं, उससे ही उसका ठीक अर्थ कर सकते हैं। यह स्वर के निशान ही है जो वेद वाणी को अब तक पवित्र रख सके हैं।

बिना स्वर का ध्यान रखकर मन्त्रों का उच्चारण करने से व उनका अर्थ करने से अर्थ का अनर्थ हो जाता है। "देवदास" शब्द है, इनमें स्वर का भेद करने से समास बदल जाता है और समास बदल जाने पर शब्द का अर्थ बदल जाता है।

"देवदास" दूसरा स्वर उदात्त उच्चारण हो जाने से बहुब्रीहि समास हो जाता है, जिसका अर्थ

होता है "देव दास है जिसका" । दूसरा व चौथा स्वर उदात्त होने से कर्मधारय समास हो जाता है, जिसका अर्थ होता है "देव नामक दास है जिसका" । चौथा स्वर उपादन्त होने से षष्ठीतत्पुरुष समास हो जाता है जिसका अर्थ होता है "देव का दास"। स्वर के बदलने से एक शब्द के तीन अर्थ हो गये हैं। वेद मन्त्र में कौनसा अर्थ लगता है, यह स्वर से ही निर्धारित किया जाता है। स्वर रहित पाठ में मन्त्र विकृत हो जाता है, इससे अर्थ का बोध न होकर अनर्थ बोध होने लगता है।

"इन्द्रशत्रो विवर्द्धस्व" इस मन्त्र में "इन्द्र शत्रु" शब्द में यदि "इन्द्र का शत्रु अर्थात् विनाशक" यह अर्थ लगाना हो तो षष्ठी तत्पुरुष समास होगा। षष्ठी तत्पुरुष समास होने पर अन्त का स्वर उदात्त प्रयोग कर दिया तो बहुव्रीहि-समास हो जायेगा। अर्थ हो जायेगा कि "इन्द्र है शत्रु जिसका।" यह अर्थ का अनर्थ स्वर के गलत उच्चारण से हो गया।

आर्य समाज के प्रवर्तक ऋषि ने संस्कार विधि के २६ वें पृष्ठ पर लिखा है "सब संस्कारों में मधुर स्वर से उच्चारण यजमान ही करे न शीघ्र न विलम्ब से उच्चारण करे, किन्तु मध्य भाग जैसा जिस वेद का उच्चारण है, करें।" ऋषि के कथन से प्रगट है कि हर वेद के उच्चारण का ढंग अलग प्रकारसे है। ऋषि चाहते हैं कि हर आर्य मधुर स्वर सहित जैसा जिस वेद का उच्चारण है उस प्रकार करे। गुरुकुल के स्नातक आर्य समाजों के पण्डित, पुरोहित व विद्वान् वेदोच्चारण में वर्ण की अशुद्धि व मात्रा की अशुद्धि की ओर तो ध्यान देते हैं, परन्तु स्वर की ओर तो प्रायः कोई विरले ही ध्यान देते हैं :—

पतञ्जलि मुनि महाभाष्य में अशुद्ध उच्चारण के लिये अंकित करते हैं।

"दुष्टः शब्दः स्वरतो वर्णतो वा
मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह।
सवाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति,
यथेन्द्र शत्रुः स्वरतोऽपराधात्।

जो शब्द वर्ण मात्रा व स्वर से मिथ्या प्रयुक्त होता है वह उस अर्थ को न कह कर वाणी रूप वज्र होकर यजमान को नष्ट कर देता है।

महामान्य स्वामी श्री दयानन्द जी महाराज ने जब भी कहीं वेद मन्त्र उद्धृत किये, उनको स्वर सहित अंकित किया है। आजकल कुछ आर्य पण्डित वेदों के प्रचार में रत है, दैनिक, पाक्षिक या मासिक पत्र व पत्रिकायें निकालते हैं, व कई श्रद्धालु धार्मिक वैदिक सन्ध्या, हवन व अन्य मन्त्र प्रचार हेतु छपवा कर मुफ्त या कम क़ीमत पर बांटते हैं उन सब में ९९% फी सदी सज्जन स्वर के निशान भी वेद मंत्रों पर नहीं देते हैं। अगर वे मन्त्रों पर स्वर के निशान भी अंकित करे तो उनको देख कर मन में यह भाव अवश्य उत्पन्न होता है कि यह आड़ी व खड़ी लकीरें किस प्रयोजन के लिये है। ईश्वर की ओर से सद्-बुद्धि प्राप्त होने पर व प्रयास करने पर स्वर सहित पाठ भी होने लगेंगे। वेद मन्त्रों पर जब स्वर के निशान देना ही बन्द कर दिया तो किसी भी पढ़ने वाले का ध्यान स्वर की तरफ नहीं जायगा।

अंत में मैं यह प्रार्थना उपरोक्त श्रद्धालु व भक्त, कार्यकर्ताओं से करूंगा कि वे जब कहीं पर वेद मन्त्र छपवावे, या लेख वगैरा में उद्धृत करे तो उनको जैसा का तैसा यानि स्वरों के निशान के सहित ही देने की कृपा करे, ताकि जिस परोपकार की भावना से प्रेरित होकर कार्य किया है, वह उनका पूर्ण हो।

ईश्वर-विश्वास

(लेखक—श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति)

तर्क द्वारा अनुभूति की पुष्टि

मनुष्य अनुभूति द्वारा जिस विश्वास पर पहुँचता है, तर्क से उस की पुष्टि करता है। मनुष्य जीवन के साथ सम्बन्ध रखने वाले प्रश्नों का उत्तर पहले हृदय से ढूंढता है, फिर तर्क का आश्रय लेता है। यह उसका भ्रम है कि वह जिन धार्मिक विचारों को मान रहा है, वह मुख्य रूप से उसके चिन्तन और विवेचना के परिणाम हैं। वह या तो जन्म की परिस्थितियों के कारण किसी मत का अनुयायी होता है, अथवा हृदय पर कोई गहरा प्रभाव पड़ने से विशेष प्रकार के धार्मिक सिद्धान्तों को मानने लगता है। प्रायः पुत्र अपने पिता के धार्मिक विचारों को लेकर उत्पन्न होता है। अपने समुदाय या परिवार से रुष्ट होकर, अन्य समुदाय की सज्जनता या सेवा भाव से प्रभावित होकर और कभी कभी नैतिक अथवा आर्थिक स्वार्थ के कारण उस के विश्वास बदल जाते हैं। जो लोग अपने जन्म से प्राप्त मत में परिवर्तन करते हैं, उनमें केवल तर्क और विवेचना का सहारा लेने वालों की संख्या सौ में एक के अनुपात से अधिक नहीं। केवल चिन्तन और तर्क द्वारा मनुष्य सुधारक बन सकता है, आस्तिक से नास्तिक हो सकता है, परन्तु धार्मिक विचारों में परिवर्तन नहीं कर सकता, क्योंकि धर्म का आधार विश्वास से, और विश्वास का सम्बन्ध प्रधान रूप से हृदय की भावनाओं से है, दिमाग की कतरनी से नहीं। ईश्वर विश्वास अन्तरात्मा से उठता है, बाहिर से डाला नहीं जा सकता। युक्ति और तर्क से तो उस विश्वास की पुष्टि ही हो सकती है। यह निश्चित बात है कि साधारण दशा में मनुष्य का अन्तरात्मा किसी ऐसी शक्ति की आवश्यकता को अनुभव करता और उस की सत्ता के पक्ष में गवाही देता है जो मानवी शक्ति और प्रकृति की शक्ति से ऊंची होने के कारण 'परम-आत्मा' और सब का संचालन करने वाली होने के कारण 'ईश' पद की अधिकारिणी हो।

अनुभव ईश की सत्ता का पहला प्रमाण है। यद्यपि उसकी पुष्टि तर्क और प्रमाणों से की जा सकती है परन्तु यह निर्विवाद बात है कि तर्क और प्रमाण ईश्वर सिद्धि के सहायक साधन हैं, मूल साधन नहीं।

ईश्वर की सिद्धि में युक्तियां

ईश्वर की सत्ता को अनुभव करने वाला मनुष्य अपने विश्वास की पुष्टि तर्क से कर सकता है।

संसार में जितनी उत्पन्न और नष्ट होने वाली वस्तुएँ हैं, सब का कोई न कोई कर्त्ता होता है। यह चराचर जगत् उत्पन्न और नष्ट होने वाला है, अतः इस का कोई न कोई कर्ता होना चाहिये, वह कर्ता ही ईश्वर है।

दृश्यमान जड़ वस्तुओं को गति देने के लिये किसी चेतन शक्ति की आवश्यकता है। सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी आदि पदार्थों को गति देने वाली शक्ति का नाम ईश है। यह स्पष्ट है कि यदि अनन्य शक्ति रखने वाली कोई चेतन शक्ति न हो तो प्राकृतिक जड़ पदार्थों में गति उत्पन्न नहीं हो सकती।

संसार में व्यवस्था है। ग्रह, नक्षत्र आकाश में भ्रमण करते हैं, परन्तु परस्पर टकराते नहीं। दिन के पीछे रात और रात के पीछे दिन का आना अनिवार्य है। आग की ज्वाला ऊपर को जाती है, पानी नीचे की ओर बहता है। जड़ या चेतन—जिस वस्तु पर दृष्टि डालें उसकी रचना में, आकृति में, और उत्पत्ति तथा क्षय में एक अनिवार्य व्यवस्था—जिसे नियति कहते हैं—दिखाई देती है। कोई व्यवस्था चेतन व्यवस्थापक के बिना नहीं चल सकती। यह व्यवस्थापक ईश्वर है।

ईश्वर की सत्ता के पक्ष में एक प्रबल प्रमाण—जिसे हम अन्य सब की अपेक्षा बलवान् और निर्णायक प्रमाण कह सकते हैं यह है कि प्रत्येक समय और प्रत्येक देश में—निन्यानवें फीसदी नर-नारियों ने एक अनन्त शक्ति सम्पन्न चेतन शक्ति को किसी न किसी रूप में स्वीकार किया है। वे बिना किसी तर्क के या उपदेश के, यह मानते रहे हैं, और आज भी मानते हैं कि इस संसार का संचालन, और मनुष्य के भाग्यों का अधिष्ठातृत्व एक ऐसे पुरुष विशेष के हाथों में है, जो चेतन है, सर्व शक्तिसम्पन्न है, और स्वयं संसार की उलझनों से ऊपर है। उस के नाम और रूप अनेक हैं, मनुष्यों ने अपनी बुद्धि और परिस्थिति के अनुसार भिन्न भिन्न रूपों में उसकी कल्पना की है, परन्तु उसके निजस्वरूप और प्रभाव के सम्बन्ध में मनुष्य जाति प्रायः सहमत है। इसे मनुष्य जाति की अन्तरात्मा की साक्षी कहते हैं।

नास्तिकता—एक प्रतिक्रिया

नास्तिकता—मनुष्य से अधिक शक्तिसम्पन्न एक व्यापिका शक्ति में विश्वास मनुष्य के लिये स्वाभाविक है और नास्तिकता अस्वाभाविक, परन्तु अस्वाभाविक होती हुई भी वह उन अनेक प्रकार की प्रतिक्रियाओं का परिणाम होती है, जो मनुष्य के मन में जीवन की घटनाओं के कारण उत्पन्न होती हैं। मनुष्य के जीवन में अनेक घटनायें ऐसी हो जाती हैं, जो उसके सहज विश्राम को ठोकर पहुँचा देती हैं। प्रियजनों का वियोग, मित्र द्वारा द्रोह, अत्यन्त निर्धनता, परिवार जनों के दुःसह कष्ट, संसार में फैली हुई घोर अपमानता की अनुभूति और कुसंग आदि अनेक कारण हैं, जो मनुष्य के विश्वासरूपी भवन की दीवारों को गिरा देते हैं। वही कारण, जो एक प्रबल इच्छा शक्ति वाले व्यक्ति के मन में संकटों पर विजय प्राप्त करने का प्रबल संकल्प उत्पन्न करते हैं, और जो प्रकृति से त्याग की ओर झुकने वाले हृदय को वैरागी बना देते हैं, सामान्य व्यक्ति को नास्तिकता की ओर धकेल देते हैं। ऐसे लोग सब दुःखों और विघ्नबाधाओं की उत्तरदायिता ईश्वर पर डाल कर उस से इन्कार कर देते हैं। आश्चर्य यह है कि ऐसे नास्तिक पहले ईश्वर की सत्ता को मान लेते हैं, फिर उससे रुष्ट होकर उससे इन्कारी हो जाते हैं। उन से पूछा जा सकता है कि यदि वह है ही नहीं तो तुम नाराज किस से हो, और अन्यायी किसे कहते हो।

उन्नीसवीं सदी के अन्त और बीसवीं सदी के आरम्भ में पश्चिम के देश नये विज्ञान और हेतुवाद के प्रभाव में आकर नास्तिकता के प्रवाह में बहने लगे थे, परन्तु बीसवीं सदी का मध्य उन्हें फिर ईश्वर विश्वास की ओर झुका हुआ पाता है। पहले कुछ वैज्ञानिकों और दार्शनिकों का यह विचार हो गया था कि वे वैज्ञानिक खोज और हेतुवाद का प्रयोग करके संसार के आदि कारण तक पहुंच जायगे, और रसायन-शालाओं में मनुष्य और जीवजन्तुओं की रचना करने लगेंगे, परंतु अब उन लोगों की यह भ्रांति दूर हो चुकी है। उन्हें कुछ दूर पहुँच कर विज्ञान और हेतुवाद के आगे अज्ञेयता का अन्धकार छाया हुआ दिखाई देता है। इस कारण अब पश्चिम के बड़े-बड़े वैज्ञानिक और हेतुवादी भी यह स्वीकार कर रहे हैं कि वे विज्ञान या हेतुवाद की सहायता से जगत् के मूल कारण सम्बन्धी प्रश्न की बीच धारा में तो पहुंच सकते हैं, उस से पार नहीं जा सकते। पार जाने के लिये उन्हें एक परोक्ष परंतु अनन्त शक्तिसम्पन्न महान् चेतन सत्ता का स्वीकार करना पड़ता है। इस में संदेह नहीं कि मनुष्य जाति का ९९ वें फीसदी अंश संसार के एक व्यवस्थापक की सत्ता को किसी न किसी रूप में स्वीकार करता है।

ईश का स्वरूप

हम इस परिणाम पर तो पहुँच गये कि जगत् के कर्ता और नियन्ता ईश्वर की सत्ता मनुष्य की अनुभूति और तर्क द्वारा असन्दिग्ध रूप से सिद्ध होती है, परन्तु इन प्रश्नों का उत्तर देना अभी शेष है कि उस ईश का स्वरूप क्या है? वह स्थूल है या सूक्ष्म? वह एक है या अनेक? वह दूर है या पास? उसकी

शक्ति परिमित है या अपरिमित ? और उसका पूर्ण रूप से जानना सम्भव है या नहीं ?

इन सब प्रश्नों के उत्तर ईशोपनिषद् में बड़ी स्पष्टता से दिये गये हैं।

ईश एक है

ईशोपनिषद् का चौथा मन्त्र है—

अनेजदेकम्मनसो जवीयो नैनद्देवा
आप्नुवन्पूर्वमर्षद्।

तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो
मातरिश्वा दधाति ॥

वह ईश एक है, अचल है, मन से भी अधिक तीव्र गति वाला है, जहां इन्द्रियां पहुँचती हैं, वहां ईश्वर पहले ही विद्यमान रहता है और वह अचल होता हुआ भी भागने वालों से आगे रहता है। वायु भी उस में ही मेघों को धारण करता है। ईश्वर एक है। जिन प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि ईश्वर है, उन्हीं से आवश्यक रूप से यह भी सिद्ध होता है कि ईश्वर एक है। पहले 'अन्तरात्मा में अनुभूति' पर ही विचार कीजिये। मनुष्य यह अनुभव करता है कि ससार में कोई ऐसी शक्ति अवश्य है, जो इसे बनाती, नष्ट करती और संचालन करती है। इस का नाम आप चाहे कुछ रख दें—इसे ईश्वर पुकारें या प्रकृति; गाड कहें या नेचर, इस की सत्ता का अनुभव प्रत्येक मनुष्य करता है। उस अनुभव का यह भी एक भाग है कि मनुष्य उस शक्ति को अन्य सब से बड़ी अद्वितीय मानता है। यदि दो बराबर की शक्तियां हों, तो दोनों एक दूसरे से कट जायंगी—वे सर्व शक्तिसम्पन्न न रह सकेंगी। ईश्वर की एकता, मूलरूप में, ईश्वर विश्वास में ही सन्निहित है।

हमारी इस स्थापना के खण्डन में बहुदेवतावाद को प्रमाणरूप में उपस्थित किया जा सकता है। यह प्रश्न हो सकता है कि जब मनुष्य जाति के कुछ समुदाय अनेक देवताओं की सत्ता को स्वीकार करते रहे हैं, और अब भी स्वीकार करते हैं तो यह कैसे कहा जा सकता है कि ईश्वर की एकता सर्वसम्मत है ? इस प्रश्न का उत्तर बहुत स्पष्ट और सरल है। बहुदेवतावाद में भी किसी एक देवता की प्रधानता सुनिश्चित मानी जाती है। अनेक देवताओं की सत्ता में विश्वास करने वाला प्रत्येक हिन्दू किसी न किसी एक देवता को सर्वोपरि मानता है। वह देवता शिव हो, विष्णु हो ब्रह्मा हो या शक्ति हो। वह जिसे सर्वोपरि देवता मानता है वही ईश्वर है, क्योंकि उसकी शक्ति सब से बड़ी हुई, और सब का संचालन करने वाली है।

अन्य बहुदेवतावादी देशों की भी यही दशा है। पुराने मिसर में बहुत से देवी देवता माने और पूजे जाते थे, परन्तु उन में मुख्य स्थान 'का' का समझा जाता था। अन्य देवता चाहे कुछ चाहें, चलती 'का' की ही थी। वही उनका ईश्वर था। इसी प्रकार बैबोलोनिया में 'डिम्मेरा' असीरिया में 'असुर' इजराईल में जहोवा' चीन में 'टाईन' बौद्धों में 'बुद्ध' यूनानियों में 'जयूस' स्लावदेशों में 'परम' और इसी प्रकार अन्यत्र भी सभी देशों और जातियों में किसी न किसी एक सर्व प्रधान शक्ति पर विश्वास किया जाता था। बहुदेवतावाद अन्त में एकेश्वरवाद में ही समाप्त होता है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति के लिये कोई न कोई एक दवता अन्य सब से ऊंचा और प्रमुख होता है। समान शक्ति वाले अनेक देवताओं में विश्वास अस्वाभाविक होने के कारण अपवाद हो सकता है नियम नहीं। [सम्वत २०१३ में श्रद्धानन्द स्मारक निधि के सदस्यों को स्वाध्याय मञ्जरी में भेंट दी जाने वाली पुस्तक का अश]।

(गुरुकुल पत्रिका)

—सरलता और निरभि मानता से मनुष्य के गुण चमका करते हैं।

—महापुरुष सचाई को अपने जीवन में सम्मिलित कर लेते हैं और साधारण जन उस पर प्रसन्न होकर सन्तुष्ट हो जाते हैं।

महर्षि दयानन्द के जीवन चरित के सम्बन्ध में कुछ विवाद ग्रस्त विषय :—

(इन्द्र विद्यावाचस्पति)

यह आश्चर्य की बात है कि महर्षि दयानन्द के जीवन के सम्बन्ध में कई मौलिक बातें अब तक विवाद ग्रस्त चली आती हैं। यदि विवाद आर्यसमाज के विद्वानों और अन्य विद्वानों में होता तब बहुत अद्भुत बात न समझी जाती। परन्तु अब तो परिस्थिति यह है कि आर्य समाज के विद्वानों में ही परस्पर मत भेद है कुछ तत्वों पर गौण मत भेद है परन्तु महर्षि की जन्म तिथि और आर्य समाज के स्थापना दिवस की तिथि के सम्बन्ध में जो मतभेद है, वह बहुत महत्वपूर्ण होने से अवाञ्छनीय भी है। जब विचारों में भेद है तो मतभेद का होना स्वाभाविक है। अवाञ्छनीय बात यह नहीं कि मत भेद है क्यों, अवाञ्छनीय यह है कि अब तक हम परस्पर परामर्श द्वारा एक मत नहीं हो सके। आर्य समाज के इतिहास को लिखते हुए मेरे सामने यह धर्म संकट आ गया है कि महर्षि के जन्म और आर्य समाज की स्थापना की कौन सी तिथियों को प्रामाणिक माना जाय। मैंने सब विवादग्रस्त विषयों पर सम्पूर्ण सामग्री को एकत्र करने का यत्न किया है और अपनी स्वल्प बुद्धि अनुसार उन पर विचार भी किया है। मैंने यह उचित समझा है कि एक एक विषय को लेकर उस पर अपने विचार विस्तारपूर्वक 'सार्वदेशिक' द्वारा प्रकट करूं जिससे विद्वानों को उन पर सम्मति प्रकट करने का अवसर मिल जाय। उनकी सम्मतियों से मुझे ठीक निर्णय पर पहुँचने और इतिहास में उसी के अनुसार घटनाओं के उल्लेख करने का सुअवसर प्राप्त हो जाय। मेरा निवेदन है कि मेरी इस लेखमाला को आर्य विद्वान् विचार परम्परा का ही एक अंग मानें अन्तिम विचार या निर्णय नहीं। आपरितोषाद्विदुषां न साधुमन्ये प्रयोग विज्ञानम्।

आर्य विद्वान इन विचारों को पढ़कर सार्वदेशिक द्वारा अथवा निजी पत्र द्वारा मुझे अपनी सम्मतियों से सूचित करने की कृपा करें।

१—महर्षि का जन्म स्थान

महर्षि के जन्म स्थान के सम्बन्ध में अब कोई अधिक वाद-विवाद नहीं रहा। कुछ ऐसे लोगों को छोड़कर जो केवल द्वेष या ईर्ष्या के वशीभूत होकर झूठी बात कहने में अपनी सफलता समझते हैं, शेष सब लेखक तथा विचारक इस विषय में सहमत हो गये हैं कि महर्षि का जन्म काठियावाड़ (सौराष्ट्र) के अन्तर्गत मोरवी राज्य के टंकारा नामक ग्राम में हुआ था।

इसके विरुद्ध मत रखने वालों में से एक लेखक ने श्री वेंकटेश्वर समाचार में "स्वामी दयानन्द के पिता कौन थे ?" इस शीर्षक से एक लेख लिखा था। उस में उसने लिखा "अर्थात् स्वामी दयानन्द का पूर्व नाम शिव भजन और उनके पिता का नाम भजन हरि या हरिभजन था। वह पापड़ी जाति के थे। पापड़ी जाति भाटों की एक शाखा है जो गाने बजाने और छोकरे नचाकर मांगकर खानेका रोजगार करते हैं।"

ऐसे लोगों का तो एक ही सिद्धान्त है "मुख मस्तीति वक्तव्यं दशहस्ता हरीतकी" बोलने के लिए मुंह दिया गया है अतः कह जाओ कि हरीतकी दस हाथ लम्बी होती है। आज तक किसी व्यक्ति ने ऐसा कोई प्रमाण प्रस्तुत नहीं किया जिस से महर्षि का जन्म स्थान टंकारा के अतिरिक्त अन्य कोई अथवा उनकी जाति ब्राह्मण के अतिरिक्त अन्य कोई प्रमाणित हो सके। जो स्थापनाएं बिना किसी आधार के की जाती हैं इतिहास लेखक के लिए उनका कोई मूल्य नहीं है।

महर्षि ने अपने जन्म स्थान का निर्देश अपने पूना वाले व्याख्यान में निम्नलिखित शब्दों में किया था।

"मेरा जन्म काठियावाड़ के मौरवी राज्य के एक नगर में औदिच्य ब्राह्मण के घर में सम्वत् १८८१ में हुआ था।"

अपने जन्म के सम्बन्ध में अधिक परिचय न देने का इन्होंने यह कारण बताया था कि हमारे प्रान्त के लोगों में सन्तान का मोह बहुत अधिक होता है। इस कारण मैंने प्रारम्भ से ही अपने पिता का तथा उस शहर का जिसमें वे रहते थे नाम बताने में संकोच किया है। इस इशारे से लाभ उठाकर महर्षि के सबसे पहले जीवन चरित लेखक पण्डित लेखराम जी आर्य पथिक मौरवी गये और वहां जाकर छान-बीन करने का यत्न किया। पण्डित जो जिस वेशभूषा में रहते थे गुजरात के लोग उसे मुसलमानों की वेश-भूषा समझते थे और अभी वह लोग आर्य समाज के काम और नाम से परिचित भी नहीं थे। एक कमी यह थी कि पण्डित जी वहां की भाषा से सर्वथा अपरिचित थे। परिणाम यह हुआ वह मौरवी पहुँच कर भी टंकारा को न छू सके। कुछ वर्षों के पश्चात् कलकत्ते से पण्डित देवेन्द्रनाथ मुकर्जी अनेक आर्य सज्जनों की प्रेरणा से गहरी खोज करने के लिए मौरवी में गये, बहुत से लोगों से मिले और पुराने कागज पत्र भी देखे। वह इस परिणाम पर पहुँचे कि जिस नगर में उन का जन्म हुआ वह टंकारा था।

जब आर्य समाज ने यह निश्चय किया कि महर्षि के जन्म स्थान पर जन्म शताब्दी का उत्सव मनाया जाय, तब गुरुकुल कांगड़ी के आचार्य प्रोफेसर रामदेव जी को अधिक जांच पड़ताल करके किसी निर्णय पर पहुंचने के लिए मौरवी भेजा गया बहुत से लोगों से मिलकर और पुराने कागजात देखकर वे भी इसी परिणाम पर पहुंचे कि टंकारा नगर ही महर्षि का जन्म स्थान है।

सन् १९२६ के फरवरी मास में टंकारा में महर्षि की जन्म शताब्दी का महोत्सव मनाया गया। महोत्सव के सभापति स्वयं मौरवी नरेश श्रीमन् महाराजा साहिब श्री लखधीरसिंह जी बहादुर थे। इस अवसर पर आर्य समाज के सर्व श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी, स्वामी सर्वदानन्द जी, श्री नारायण स्वामी जी, आचार्य रामदेव जी, मास्टर आत्माराम जी तथा पण्डित अयोध्याप्रसाद जी आदि आर्य समाज के प्रायः सभी प्रमुख व्यक्ति विद्यमान थे। सभापति श्री मौरवी नरेश जी ने अपने भाषण के प्रारम्भ में कहा था "गत दिसम्बर मास में हमारे मित्र वीरपुर ठाकुर साहब ने हमें परिचित किया कि आप लोग यहां इस सम्मेलन का आयोजन करना चाहते हैं। तब उस महापुरुष की जन्मभूमि के लिए आप सबका अगाध प्रेम देखकर हमें बहुत प्रसन्नता हुई, चूंकि जिस महा पुरुष की विशाल बुद्धि अटल धैर्य तथा शुद्ध चारित्र्य ने समस्त भारत भूमि की जनता पर गहरी छाप डालकर लोगों में स्वधर्म प्रेम तथा स्वदेश भावना के गहरे बीज डालकर जागृति उत्पन्न की है, ऐसे एक महा पुरुष का जन्म हमारे राज्य में होने से हमें भी यथार्थ रूप में अभिमान है।

देश के एक कोने में आये हुए मौरवी और टंकारा आज समस्त भारत वर्ष में सुप्रसिद्धि को प्राप्त हुए हैं।"

मौरवी नरेश के अतिरिक्त उस रियासत के अन्य अनेक ऊंचे अधिकारियों ने भी श्री देवेन्द्र नाथ मुकर्जी के पत्रों के उत्तर में जो सन्देश भेजे थे उनमें मौरवी नरेश के विचारों का समर्थन किया था। राज-कोट की एजेन्सी आफिस के दफ्तरदार श्री विठ्ठलराय ने लिखा था कि जब मेरे दादा जी ने स्वामी दयानन्द सरस्वती के दर्शन किये थे तब स्वामी जी ने यह कहा था कि वह मौरवी रियासत के मूल निवासी हैं। आप ने टंकारा का नाम भी लिया था।

राजकोट के राजमान्य श्री प्राणलाल-विश्वनाथ शुक्ल ने मुकर्जी महाशय को लिखा था कि "१९१४

महर्षि-जीवन चरित्र और हम

(लेखक—श्री देवराज सहगल)

महर्षि दयानन्द के जीवन काल में ही स्थान २ पर आर्य समाजें स्थापित हो चुकी थीं, जिन के सदस्य प्रायः सुशिक्षित तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति थे, इस पर भी उन दिनों न तो आर्य समाज को समाज रूप में और न ही किसी आर्य समाजी को व्यक्तिगत रूप में ऋषि-जीवन के सम्बन्ध में सामग्री एकत्र करने की चिंता हुई। धन्य है कर्नल अल्काट जिन का ध्यान सब से पूर्व इस ओर गया। उन्होंने श्री महाराज को अपना आत्म-चरित लिपिबद्ध करने की प्रेरणा की और इसे लिखवा कर उस समय के अपने पत्र 'थियासोफिस्ट' में प्रकाशित किया। इसके अतिरिक्त १५ अगस्त सन् १८७५ ई० के दिन पूना नगर में जब ऋषिवर व्याख्यान दे रहे थे, उस समय उपस्थित श्रोताओं ने उन से अपने जीवन सम्बन्ध में कुछ बोलने के लिए आग्रह किया, उस समय उन्होंने जो कुछ कहा, वह उस समय के आर्य पत्रिका में छपा है।

इस सम्बन्ध में आर्य समाज ने जो उदासीनता दिखाई है, वह अति खेद जनक है, इसमें सन्देह नहीं। यदि देवेन्द्र बाबू यत्न कर के महर्षि का ठीक जन्म-नाम तथा जन्म स्थान का पता न लगाते तो सम्भवतः संसार उनके वास्तविक जन्म-नाम अथवा जन्म-स्थान से अनभिज्ञ रहता। कितना महान् उपकार है इस सम्बन्ध में देवेन्द्र बाबू का संसार भर के आर्य समाजियों पर !

सन् १८८३ की ३० अक्तूबर को महर्षि के परम पद प्राप्त करने के उपरान्त सन् १८८४ में आर्य समाज को सुध आई और इस सम्बन्ध में कुछ कार्य होना आरम्भ हुआ। सब से प्रथम पं० लेख रामजी ने इस कार्य को हाथ में लिया। उन्होंने ऋषि जीवन के सम्बन्ध में सामग्री एकत्र करने के लिए अथक परिश्रम किया और अभी पर्याप्त मात्रा में (नोटों के रूप में) सामग्री ही एकत्र कर पाये थे और उन्हें क्रम देना अभी शेष था कि ६ मार्च सन् १८८६ के दिन एक यवन के हाथों अमर पद को प्राप्त हुए।

दूसरा यत्न इस सम्बन्ध में देवेन्द्र बाबू का है। जो सराहनीय तो है ही, आर्य समाजियों के लिए अशोभनीय भी है। देवेन्द बाबू आर्य समाजी न थे, वे कोई धनी मानी भी न थे केवल एक साधारण व्यक्ति थे। जिन की आय केवल अपनी पुस्तकों की

के फरवरी के महीने में मैंने टंकारा जाकर छान बीन की तो मुझे निश्चय हुआ कि स्वामी जी का जन्म स्थान वही था। मैंने वह स्थान देखा जहां स्वामी जी ने अपना बचपन व्यतीत किया था। स्वामी जी का पहला नाम मूलशंकर' था। इस प्रान्त के रिवाज के अनुसार उन्हें घर वाले 'दयाराम' इस नाम से भी पुकारते थे। स्वामीजी के पिता का नाम कर्सनजी था। ये सामवेद शाखा के औदीच्य ब्राह्मण थे। कहा जाता है कि उनका गोत्र गौतम था। स्वामी जी के वंश में और कोई पुरुष उत्तराधिकारी न होने के कारण घर और भूमि आदि चीजें उनकी बहन की सन्तान को चली गईं। आजकल उस घर में पोपट नाम का ब्राह्मण रहता है।" पोपटलाल स्वामी जी की बहन का वंशज बतलाया जाता है।

इसी प्रकार अन्य कई सज्जनों ने मोरवी में जाकर खोज की। प्रायः सभी इस परिणाम पर पहुंचे कि महर्षि का जन्म टंकारा नगर में ही हुआ था। अब जन्म स्थान का प्रश्न वाद-विवाद की सीमा से बाहर चला गया है।

बिक्री पर ही निर्भर थी। उसीमें वे अपना निर्वाह भी करते थे और ऋषि जीवन के लिए सामग्री एकत्र करने पर भी व्यय करते थे। ऋषि जीवन के सम्बन्ध में छोटी से छोटी घटना का पता लगाने के लिए वे सैंकड़ों कोष की यात्रा करते और अपना पेट काट कर भी इस पर खर्च करने को सर्वदा उद्यत रहते। ऐसा उद्यम तथा परिश्रम वे निरन्तर पन्द्रह वर्ष तक करते रहे। कितना अगाध प्रेम था उन्हें महर्षि के प्रति, यह केवल इसी बात से जाना जा सकता है। अतः इस सम्बन्ध में आर्य जगत देवेन्द्र बाबू तथा कर्नल अल्काट का अति आभारी है, जो आर्य समाजी न होते हुए भी महर्षि के प्रति इतना प्रेम रखते थे, और जिस कार्य को करना आर्य समाजियों का कर्तव्य था वे उसे करते रहे।

उस समय के आर्य समाजियों की महर्षि के प्रति इस प्रकार की उपेक्षा अशोभनीय है इस में सन्देह नहीं, परन्तु दूसरी ओर उन आर्य समाजियों ने समाज के कार्य का न केवल इतना बढ़ाया ही, प्रत्युत समाज का नाम संसार में सूर्य की भांति चमकाया भी। इस प्रकार सचमुच वे ऋषि ऋण से उऋण हो गए। परन्तु आज का आर्य समाजी तो केवल "जो बोले सो अभय महर्षि दयानन्द की जय" का जय घोष लगा कर ही ऋषि ऋण से उऋण हो जाना चाहता है।

हां तो मैं बता रहा था, न तो पं० लेखराम जी और न ही देवेन्द्र बाबू उक्त कार्य को अपने जीवन काल में पूरा कर पाये। पं० लेखराम जी के नोटों को क्रम देकर मास्टर आत्माराम जी ने सन् १८९७ में 'दयानन्द चरित उर्दू' में प्रकाशित, किया, इस प्रकार पं० लेखराम जी का कार्य सम्पन्न हुआ। इस के उपरान्त उक्त महानुभाव जो सामग्री एकत्र कर पाये थे, उन सब से लाभ उठा कर पहले तो स्वामी सत्यानन्द जी ने 'दयानन्द प्रकाश' प्रकाशित किया और फिर इन सब से लाभ उठा कर पं० घासी राम जी ने महर्षि का वृहद् जीवन चरित लिखा और उसे दो भागों में प्रकाशित किया। यह चरित उत्तम होते हुए भी इतना मंहगा है कि एक साधारण व्यक्ति के लिए इसका खरीदना अति कठिन है। अतः इस कठिनाई को ध्यान में रखते हुए आर्य जगत् की एक मात्र विश्वस्त प्रकाशन संस्था—सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड कम्पनी ने ४०० पृष्ठों तथा ७२ उन महानुभावों के चित्र देकर जिन का महर्षि से साक्षात्कार हुआ था, जीवन चरित केवल ॥=) में देकर तथा १॥ वर्ष के अल्प समय में ही इस की २६००० प्रतियां जनता के हाथों में पहुंचा कर वैदिक धर्म के प्रचार को विशेष रूप में आगे बढ़ाया है। याद रखिये! उच्चात्माओं की जीवनियां पतितात्माओं तक की जीवनियां बदल डालती हैं। महर्षि जीवन-चरित का प्रचार करना प्रत्येक आर्य समाजी नहीं २ प्रत्येक उस व्यक्ति का कर्तव्य है जो महर्षि का भारतवासियों पर कुछ भी उपकार समझता है। इसे मित्रों सम्बन्धियों में उपहार रूप में दीजिये, बच्चों को पुरस्कार रूप में दीजिये, जनता को भेंट रूप में दीजिये कोई भी घर इस से वंचित नहीं रहना चाहिए। वैदिक धर्म के प्रचार का यही एक मात्र सस्ता एवं उत्तम साधन है।

चुने हुए फूल

—क्षमा के समान इस जगत में दूसरा तप नहीं है।

—अक्रोध से क्रोध को जीते। भलाई से बुराई को जीते। कृपण को दान से जीते और झूठे को सत्य से जीते।

- मूर्ख मनुष्य दुर्वचन बोलकर खुद ही अपना नाश करते हैं।

* राजनैतिक रंग मंच *

संसार का राजनैतिक भावी स्वरूप

(२)

जब कुलीन वर्ग के शासक स्वच्छन्द जीवन व्यतीत करने लगे और कुछ स्थानों में विलासिता और लोगों पर अत्याचार करने की प्रवृत्तियां उनमें घर कर गईं तो उनके रंग ढंग से जनता का असंतुष्ट होना स्वाभाविक था। उन देशों में जहां उनका पतन चरम सीमा को पहुंच गया था, क्रान्तियों का होना अवश्यंभावी था। फ्रांस की खूनी क्रान्ति ने युरोप में कुछ समय तक सामाजिक तनाव को रोके रक्खा परन्तु 'औद्योगिक क्रान्ति' तथा यांत्रिक युग ने सामाजिक तनाव और मानवीय शोषण की नई समस्याओं को जन्म दे दिया। सब से पहले उदारदलीय लोगों ने स्वतंत्रता और मानवीयता के उन विचारों को प्रतिष्ठित किया जिन्हें व्यावहारिक राजनीति में कोई स्थान प्राप्त न था। उदार दल के लोगों ने साम्यवादियों का मार्ग साफ किया। दमन और शोषण से परिपीड़ित श्रमजीवियों की आवाज उच्च से उच्चतर होती गई।

इसी बीच में धर्म्म संघ राजनैतिक प्रभुता के काल में से गुजरा जो उच्चतम सांस्कृतिक वर्ग (ब्राह्मण) का काम नहीं है। भारत में ब्राह्मणों का राजनैतिक शासन कभी नहीं रहा है। किसी समय युरोप की समस्त राजनैतिक सत्ता ईसाई संघ के हाथ में थी। बाद में यद्यपि बहुत से देशों में राजनैतिक प्रभुता उसके हाथ से छिन गई थी तथापि मुख्यतया रोमन कथोलिक देशों और रूस में बहुत बड़ी राजनैतिक और सामाजिक शक्ति प्राप्त थी। सत्य यह है कि कुछ अवस्थाओं में इसे सामाजिक अत्याचार कह सकते हैं। फ्रांस का ईसाई संघ (Jesuit Order) के विरुद्ध विप्लव रूप की राज्य-क्रान्ति और स्पेन के उपद्रव न्यूनाधिक रूप में इस अत्याचार के परिणाम थे।

कालान्तर में क्षत्रिय और ब्राह्मण दोनों वर्ग अपने २ वर्णों के कर्तव्यों से च्युत हो गये। कुछ देशों में स्वाभाविक वर्गों की गड़बड़ से सामाजिक सामञ्जस्य इतना छिन्न-भिन्न हुआ कि साधारण उपायों से उसका ठीक होना सम्भव न हो सका और क्रान्तियां अनिवार्य हो गईं।

अवश्य कुछ देशों में सामाजिक सम्बन्ध बहुत कटु नहीं हुए। परन्तु समाज का काम सच्चे ब्राह्मणों और क्षत्रियों के बिना नहीं चल सकता।

निम्न श्रेणियां न्याय की दुहाई देती हुईं आगे बढ़ीं। निस्सन्देह यह ठीक था। परन्तु जहां जनता को खुली छुट्टी मिली वहां वह ज्वालामुखी बन गई। जहां वह अंकुश में रखी गई वहां राजनैतिक रूप से अल्प वर्ग में रही। उनके मुख्योद्देश्यों की पूर्ति हो जाने पर कई स्थानों पर उनके नेता सिर पर चढ़ने लग गए।

पहले राजतंत्र राजाओं के हाथ में रहा। इसके पश्चात् उद्योग पतियों के नेताओं के हाथ में गया। इसके उपरान्त ऐसा दीख पड़ने लगा कि वह श्रमजीवियों के हाथ में चला जायगा और कुछ देशों में चला भी गया है।

(क्रमशः)

हालैंड निवासी प्रसिद्ध मनोविज्ञान वेत्ता डा० मीज़ की विचारधारा।

पशु पक्षियों का परस्पर सहयोग

‡ जंगली पशुओं के विशेषज्ञ हिलबर्ट सीगलर को एक बार हरे घने जंगल में चमकीले नीले रंग की झलक दिखाई दी। इसके पश्चात् एक दूसरा नीला सा धब्बा हिला और सीगलर ने देखा कि वह चुपचाप उड़कर उसी शाखा पर जा बैठा जहां पहला नीला पक्षी बैठा था। आगन्तुक पक्षी के मुख में कुछ खाद्य पदार्थ था। वह फुदक कर पहले पक्षी के और अधिक सन्निकट हो गया। पहले पक्षी ने उत्सुकता से उसकी ओर सिर उठाकर देखा और अपना मुंह आगन्तुक की भेंट को स्वीकार करने के लिए अदा के साथ खोल दिया।

सीगलर को यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ। पंख निकलने की ऋतु में पक्षी अपने बच्चों को लाड़ करते हैं और यह लाड़ पंख निकलने के अनन्तर भी प्रायः रहता है। प्रेमालाप के मौसम में भी नर पक्षी उत्तम उत्तम खाद्य पदार्थ देकर मादा पक्षी को अपनी ओर आकृष्ट करते हैं। परन्तु यह न तो पंख निकलने का समय था और न ही प्रेमालाप का इस समय तो कठोरतम सर्दी थी।

जंगली पशुओं के विशेषज्ञ ने शीघ्रता से अपना टैलर-कोप (दूरबीन विशेष) उठाया और परिस्थिति को समझ लिया। भेंट को ग्रहण करने वाला एक पुराने भूरे रंग का युवा पक्षी था। इसकी निचली चोंच का पिछला हिस्सा टूटा हुआ था और यह किसी भी प्रकार से भोजन उठाने में असमर्थ था।

निकट पारिवारिक सदस्यों द्वारा परस्पर सहयोग की यह अन्तः प्रेरणा जंगली पशुओं में प्रायः पाई जाती है। परन्तु यहां उपरोक्त घटना में मानवी भाई चारे के अति सन्निकट की चीज प्रतीत होती है।

प्राकृतिक प्राणियों में प्रतिस्पर्धा और निजाभिव्यक्ति की अन्तः प्रेरणा विद्यमान होती है। परन्तु सारे जीवन भर इस प्रकार की नैसर्गिक बुद्धि अन्य प्रकार के प्रयत्न से सन्तुलित रहती है। प्रकृति अपने बच्चों में केवल यह सन्देश नहीं भरती कि "अपनी चिन्ता करो" वरन् वह उनमें पुरातन और सार्वभौम सह अस्तित्व के सन्देश को भरती है और इसकी महत्ता उतनी ही है जितनी जीवन धारण में प्राणों की।

प्रत्येक प्राणी की जीवनरक्षा के लिए जितनी आवश्यकता भोजन और पानी की है उतनी ही पारस्परिक मैत्री की। छोटे प्राणियों की परीक्षा लेते हुए प्राणिशास्त्र विज्ञानियों ने जाना है कि ये छोटे प्राणी भी परस्पर सहयोग की भावना से इतने प्रभावित होते हैं कि एक अकेला प्राणी अपने शरीर के किसी छोटे से घाव को भरने में काफी समय लेता है। परन्तु यदि इसके साथ इसका दूसरा साथी रख दिया जाय तो इसकी हीलिंग पावर (घाव भरने की नैसर्गिक शक्ति) जादुई असर के साथ बढ़ जाती है। वैज्ञानिकों ने परीक्षणों से पता किया है कि यदि एक छोटे चूहे को उचित भोजन और सुविधाएं दी जायें तो इतनी जल्दी उसकी वृद्धि नहीं होती जितनी कि उसके सजातीय चूहों को साथ रखने से होती है।

वे प्राणी जो प्रारम्भ में अनघड़ होते हैं प्रायः समय पाकर उन्नत साथियों के रूप में परिणत हो जाते हैं। श्री आर० एम० मार्क्स जिनका बन्दरों पर अधिकार था, ने एक चिम्पांजी को सुगन्धित भोज्य पदार्थ से युक्त एक भारी सन्दूक दिया। यह ऊपर से एक पूरे ढक्कन से बन्द था। प्रसन्नता से नथने फुलाते हुए बन्दर ने इसे घसीट कर अलग ले जाने का प्रयास

‡ रीडर्स डाइजेस्ट में प्रकाशित एलन डीव के लेख पर आधारित उक्त लेख पाठकों के मनोरंजनार्थ यहां दिया जाता है।

किया जिससे वह इसे आराम और निश्चिन्तता के साथ खोल सके। परन्तु सन्दूक इसकी शक्ति से अधिक भारी था। बन्दर ने अपने एक दूसरे साथी को ढूंढा और उसका कन्धा पकड़ कर सहायता के लिए निहारने लगा। दोनों ने मिलकर बाआसानी बक्से को हिलाया इसे खोला और खाद्य का मिल कर उपभोग किया।

एक अन्य प्रसंग में एक चिम्पोजी को भोजन दिया गया और उसी स्थान पर एक बन्दर को सींखचों के अन्दर भूखा बन्द रखा गया। लोगों ने देखा कि चिम्पोजी अपने हिस्से में से सींखचों में से बन्दर को खिला रहा है। यह परस्पर हिस्सा बांटना, मात्र हिस्से तक ही सीमित नहीं रहता वरन् कई बार सहायता तक भी पहुंच जाता है। एक बार एक बन्दर अपनी अंगुली में क्षति विशेष के कारण पट्टी बांध कर दूसरे बन्दर के पास गया। डाक्टर बन्दर ने इसका उपचार उतने ही उत्तरदायित्व के साथ किया जितना मनुष्य करते हैं।

मध्य और दक्षिण अमेरिका के प्रदेश में जो जंगल हैं उनमें छोटे प्राणियों की बहुतायत है। ये प्रायः अपने से छोटे प्राणियों का शिकार करते हुए समूह में घूमते हैं। इनका रुचिकर भोजन छिपकली है। परन्तु छिपकली को पकड़कर मारना इतना आसान नहीं जितना खाना। अतः ये शिकारी पक्षी अपने दल को दो भागों में विभक्त करते हैं। एक आकर, जहां छिपकलियां सोई पड़ी होती हैं उन्हें शोर आदि मचा कर भगाता है। दूसरा दल इस अवसर के लिए सन्नद्ध रहता है और मौका मिलते ही इनकी फौज इन शिकारों पर टूट पड़ती है।

अमेरिका के श्वेत पौलिकेन्स (प्राणिविशेष) का मछली पकड़ने का तरीका आन्तरिक एकता का एक प्रसिद्ध दृष्टान्त है। पौलेकेन्स फुदकते हुए आते हैं और समुद्र के किनारे पर एक बड़ा सा अर्ध वृत्त बनाते हैं। फिर एक दूसरे के साथ बिलकुल कन्धे से कन्धा भिड़ा कर, मानो कोई एक ही चीज हो, किनारे की ओर बढ़ते हैं। इनकी चोंच समान ऊंचाई पर पानी से ऊपर होती है। ऐसा प्रतीत होता है मानो कोई जिन्दा जाल चला आ रहा हो। धीरे २ पक्षियों का यह वृत्त अपने पंखों से पानी का विलोडन करते हुए कम होता जाता है। यों मछलियां ज्यों २ किनारे के पास आती हैं त्यों २ अधिक छोटे घेरे में घिरती जाती हैं। किनारे पर आकर ये सभी पक्षी मिलकर उन्हें खाते हैं। इस प्रकार परस्पर मिलकर ये पक्षी ऐसा भोजन प्राप्त कर लेते हैं जिसे अलग २ रहकर प्राप्त कर सकना नितांत असम्भव था।

कौआ और चील सम्मिलित बुद्धि के पुरस्कार के परिचायक हैं। फ्रांसेस पिट्ट, प्राकृतिज्ञ शौर्पशेयर और पशु पक्षियों पर लिखी लगभग ३० पुस्तकों के लेखक, 'बैन' और जो' नामक एक चील दम्पति के प्रति ऋणी हैं, जिनका एक बिल्ली से परस्पर मिल कर भोजन छीनना बहुत ही आनन्ददायक था। 'बैन' बिल्ली के सामने पहुँचता था। इस समय 'जो' पीछे से बिल्ली की दुम में जोर से अपनी चोंच मारता था। ज्यों ही मामले की तहकीकात के लिए बिल्ली पीछे देखती थी, बैन उसके सामने से भोजन उठा कर भाग जाता था और ये दोनों परस्पर बांट कर प्रेम पूर्वक अपनी बुद्धि के फल को खाते थे।

मैंने तीन कौवों की एक सामूहिक पार्टी को देखा कि उन्होंने मिल कर एक बहुत बड़े उल्लू को मार २ कर टहनी से गिरा दिया। प्राणियों के छोटे छोटे मित्र समूह धीरे २ बड़ी २ सेनाओं में परिवर्तित हो जाते हैं और यों परस्पर सहयोग की प्रवृत्ति से बड़े-बड़े काम भी कर लेते हैं।

एक बार एक स्वेलो दम्पति ने अपना मिट्टी का घोंसला मकान के छज्जे पर बनाया। इनके बच्चों के पालन को देखने की इच्छा से एक प्राकृतिज्ञ एक दिन देख रहा था। एक दिन उसने देखा कि एक स्पैरो (पक्षी-विशेष) ने इस पर अपना अधिकार जमा लिया, और बड़े क्रोध के साथ अपनी चोंच घोंसले के द्वार से बाहर निकाल कर बैठ गया मानो उसका यह निजी घर हो। अन्ततोगत्वा बेचारे स्वेलो परिवार को

भारत के पूर्वी क्षेत्रों में ईसाई प्रचार की तीव्रता और प्रकार

(श्री ओ३म् प्रकाश पुरुषार्थी प्रधान सेनापति सार्व० आर्य वीर दल)

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के निर्देशानुसार मैंने १८ जून ५५ से लगा कर पहिली अगस्त तक बिहार, उड़ीसा, कलकत्ता, आसाम, मनीपुर स्टेट तथा नागा प्रदेश के पर्वतीय क्षेत्रों में ईसाई प्रचार की स्थिति का निरीक्षण किया। स्थिति का सही ज्ञान प्राप्त करने के निमित्त वर्षादि विपरीत परिस्थितियों तथा नागा आदि के आक्रमण का भय होते हुये भी मैं उन स्थानों पर गया कि जहां पैदल जाने के अतिरित अन्य कोई साधन उपलब्ध नहीं था। दौरे के समय नागा प्रदेश में एक अज्ञात व्यक्ति ने मेरे ऊपर आक्रमण भी किया, परन्तु प्रभु की कृपा से बच गया अन्यथा वहां से अन्धा ही होकर लौटता।

दौरे से पूर्व ईसाइयों की प्रचार सम्बन्धी कुछ बातें मुझे समाचार पत्रों, पुस्तकों तथा विशेष सूत्रों द्वारा प्राप्त हो चुकी थीं, और इसी आधार पर मैंने एक छोटी सी पुस्तिका "भारत में भयंकर ईसाई षड़यन्त्र" लिखी थी, परन्तु दौरे की समाप्ति पर मैं अब बल पूर्वक कह सकता हूं कि मेरा वह ज्ञान आंकड़ों की दृष्टि से भले ही एक रेखा चित्र हो, परन्तु वस्तु स्थिति से कोसों दूर है। पहिले मैं आर्य समाज की संस्थाओं और इसके विशाल भवनों पर बड़ा अभिमान किया करता था और लाहौर का भूतपूर्व आर्य समाजी गढ़ मेरे अभिमान का एक आधार था, परन्तु रांची, कुलंगा, शिलांग,, उखरूल, च्थांगपोकपी, एजल आदि नगरों में मीलों लम्बे क्षेत्रों में स्थित भिन्न भिन्न ईसाई मिशनों के विशाल भवनों को देखकर मैं अवाक् रह गया और मेरा वह समस्त अभिमान चूर २ हो गया। लाखों नहीं करोड़ों रुपये की गगन चुम्बी इमारतें वहां जंगलों में अपनी विजय पताका फहरा रहीं हैं।

उस घोंसले को छोड़ कर जाना पड़ा। कुछ समय पश्चात् वह रवेलो परिवार अपने पास-पड़ौस के बहुत से साथियों की एक बड़ी सी क्रुद्ध सेना लेकर वहां आया। इन सब की चोंच में गीली मिट्टी थी, जिस से ये अपना घोंसला बनाया करते हैं। ये पक्षी अधिकृत घोंसले पर बैठ कर परस्पर वार्तालाप करते रहे। जब ये उड़ गये तो प्राकृतिज्ञ ने देखा कि इस पक्षि-सेना ने स्पेरो के घोंसले को अच्छी प्रकार मजबूती से सील कर दिया है और यों यह घर अन्दर वाले के लिए घर न रह कर कब्र बन गया है।

पशु-पक्षियों के इस नाटकीय एकत्व के व्यवहार का एक चीनी प्राणीविज्ञान-शास्त्री डाक्टर एस. एस. टसे ने भी अध्ययन किया। उसने एक पिंजरे में एक बिल्ली और एक चूहे को रखा। इस के साथ पारदर्शक माध्यम से अलग होने वाला एक खाद्य पिंजरा भी जुड़ा हुआ था। यह बीच का माध्यम पिंजरे के दो बटनों के दबाने से अलग किया जा सकता था। परंतु दोनों बटनों का एक साथ दोनों प्राणियों द्वारा दबाया जाना आवश्यक था। थोड़ी देर में दोनों प्राणियों ने मिलकर इस समस्या का सामना किया।

यह परस्पर सृजनात्मक एकत्व सर्वप्रथम व्यक्तित्व तक सीमित रहता है। इस के पश्चात् पारिवारिक भावना आती है। और फिर यह समूह में परिवर्तित होती हुई अन्त में मानवता का जामा पहन कर विश्वास को दृढ़ करती हुई सुन्दर सार्वभौम बन्धुत्व के रूप में प्रकट होकर "वसुधैव कुटुम्बकम्" तक पहुंच जाती है। प्रकृति विज्ञान के विशेषज्ञों ने जब भी प्रकृति की दुनिया के रहस्यों में गम्भीरता से दृष्टिपात किया है तभी वह इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि हमारे सहानुभूति और सहयोग के आदर्श केवल काल्पनिक नहीं हैं। वे यथार्थ हैं। प्राणिमात्र के स्वभाव में इन आदर्शों के बीज विद्यमान हैं।

उदाहरणार्थ अकेले शिलांग में ईसाइयों के डान-बस्को ट्रेनिंग स्कूल, लड़के लड़कियों के चार कालेज तथा छः अस्पताल ट्रेनिंग स्कूल में रंगाई, छपाई, बढ़ई, लुहार, पेन्टिग, दर्जी, ढलाई, जिल्द साजी आदि सभी शिल्प कलाओं के शिक्षण का प्रबन्ध है और सब के लिये अलग २ भवन हैं। ये समस्त संस्थायें शिलांग के मध्य में कम से कम दस वर्ग मील में होंगी।

"विदेशी प्रचारक"

भारतीय इतिहास में पढ़ा करते हैं कि एक समय भारत के धर्म प्रचारक विदेशों में गये और वहां वैदिक धर्म का प्रचार किया, परन्तु इसके सर्वथा विपरीत विदेशों के हजारों धर्म प्रचारक बड़ी ही सफलता, योग्यता तथा धैर्य के साथ आज भारत के इन दुर्गम सघन जङ्गलों के सर्वथा प्रतिकूल वातावरण में बड़ी ही प्रसन्नता के साथ सेवा और ईसाई धर्म का प्रचार कर रहे हैं। विधर्मी होने के कारण भले ही हम उनसे घृणा तथा द्वेष करें, परन्तु उनका त्याग एवं तप सराहनीय है। हृदय में जब तक अपने धर्म के प्रति अगाध श्रद्धा तथा प्रेम न हो तब तक केवल आर्थिक प्रलोभन पर इतना त्याग एवं तपस्या कदापि नहीं की जा सकती है।

उदाहरणार्थ थोड़ी २ उम्र के विदेशी नवयुवक नवयुवती प्रचारिकायें पर्वतों की उन उपत्तिकाओं में वर्षों से प्रचार कार्य कर रहे हैं जहां न उनके अनुकूल मौसम है, न यूरूप जैसे रमणीक स्थान हैं, न आने जाने का कोई सुलभ साधन है, और जहां मलेरिया तथा काले ज्वर का एक छत्र राज्य है, और जहां के लोगों की भाषा, खान-पान तथा रहन-सहन एक दम विपरीत तथा नीचे स्तर के हैं। परन्तु विपरीत वातावरण के आगे सिर न झुकाकर इन्होंने धीरे २ उनकी भाषा रीति रिवाज को सीख और अपने अनुकूल वातावरण उत्पन्न कर जगंल में एक स्वर्ग की रचना कर डाली। जंगलियों को सभ्य और सुशिक्षित बनाकर इन्होंने एक नये यूरूप का निर्माण कर दिया उन जंगलों में।

"विदेशियों का एक छत्र राज्य"

पर्वतीय अपढ़, निर्धन तथा असभ्य लोगों के बीच ये गोरे चमड़ी वाले धनवान पादरी महाराजाओं की भांति प्रभाव जमाये हुये हैं। इन्हें लोग ईश्वर के दूत समझते हैं और गौड फादर कहकर पुकारते हैं। इनके प्रभाव की ओर उंगली तक उठाने वाली भारत की एक भी धार्मिक संस्था वहां नहीं है। परिणाम स्वरूप ईसाई और गैर ईसाई सभी इनका आदर करते हैं। बगल में भले ही इनके छुरी हो, परन्तु मुख से ये सभी के साथ बड़ा ही मधुर व्यवहार करते हैं।

'प्रचार के हथकण्डे"

विदेशी प्रचारकों के बाह्य रूप के प्रति जो श्रद्धा व प्रेम वहां एक व्यक्ति के हृदय में उत्पन्न होता है वह उस समय घृणा में परिणित हो जाता है कि जब वह इनके प्रचार षड्यन्त्र को देखता है। उनमें से कुछ निम्न प्रकार हैं—

१—स्कूल, कालेज, अस्पताल तथा अनाथालय ये इनके मुख्य प्रचार केन्द्र है। यहां का वातावरण ये इस प्रकार निर्माण करते हैं कि यहां की दीवारें भी ईसा मसीह के गीत गाती हैं।

२—स्कूलों में इनकी ओर से दी जाने वाली छात्रवृत्तियां इनका बड़ा भयंकर जाल है जिसमें जो फंसा नहीं कि ईसाई बना नहीं, वहां के निर्धन देश व जाति में कीड़े-मकोड़ों की भांति मा-बाप स्वयं अपने बच्चों को इन जालों में फैंक जाते हैं।

३—अस्पतालों में दवाई देने से पूर्व सब मरीजों को ईसा से दुआ मांगने पर विवश किया जाता है।

४—ईसाई मरीजों को विशेष सुविधायें दी जाती हैं।

५—पर्वतीय लोग अपने गांव-मुखिया के अन्ध भक्त व अनुयायी होते हैं। ये पादरी पहिले इन मुखिया लोगों को ही नाना प्रकार के प्रलोभनों तथा सेवाओं द्वारा अपने काबू में करते हैं फिर

देखते २ भेड़-बकरियों की भांति गांव के गांव इनके द्वारा ईसाई बना दिये जाते हैं।

६— गरीबों को ऋण देकर फिर वसूली में कड़ाई करते हैं और उसके ही सजातीय किसी ईसाई व्यक्ति द्वारा उसे ईसाई बन उस ऋण से मुक्ति पाने का प्रलोभन दिलाते हैं।

७—अनाथ बच्चों को दूरस्थ स्थानों में लेजाकर उन्हें विशेष रूप से ईसाई बनाने का प्रयत्न करते हैं।

परिणाम

इस प्रचार शैली का परिणाम यह हुआ है कि खसिया, नागा, मिकिर, गारो, मुण्डा आदि पर्वतीय जातियां चालीस से लगा कर अस्सी प्रतिशत, तक ईसाई बनादी गई हैं और कई क्षेत्र ऐसे बना दिये गये हैं जहां ईसाइयों के विरुद्ध बोलना मृत्यु को निमन्त्रण देना हो गया है। नागा प्रदेश तो स्पष्ट बागी देश बना दिया गया है। वहां स्वतन्त्र रूप से बिना लाइसंन्स के अस्त्र-शस्त्र लिये लोग घूमते हैं और सीधे पुलिस, सरकारी अधिकारी तथा बाहर के लोगों पर आक्रमण करते हैं। सरकार वहां स्कूल खोलने की चेष्टा करती है तो ये नहीं चलने देते हैं।

"प्रचार तथा प्रचार केन्द्र"

प्रचारक तथा प्रचार केन्द्रों की दृष्टि से इन क्षेत्रों की ईसाई स्थिति निम्न प्रकार है—

क्रम से क्षेत्र	प्रचार केन्द्र	पादरी	प्रचारक
१ बिहार		२०३	९९२
२ रांची		५६	×
३ उड़ीसा		८२	११७
४ खसिया जैन्तिया (आसाम)		८३	×
५ लुशाई पहाड़ी क्षेत्र (,,)		४६	×
६ गारो पहाड़ी क्षेत्र (,)		११	×
७ नागा क्षेत्र (,,)		२५	×
८ मनीपुर स्टेट (,,)		१५	×

नोट—नागा देश का बहुत भाग ऐसा है जहां का विवरण प्राप्त न हो सका। यह विवरण कोहिमा के आस पास का है।

मेरी दृष्टि में स्थिति इतनी भयंकर है कि यदि इन क्षेत्रों की ओर आर्य जाति के कर्णधारों, संस्थाओं तथा सरकार ने शीघ्र ध्यान न दिया तो ये क्षेत्र स्वतः पाकिस्तानी रूप धारण कर जायंगे और भारत की सुरक्षा व उन्नति को सदैव चुनौती देते रहेंगे।

इसके अतिरिक्त पर्वतीय लोग हजारों वर्षों से अलग रहने के कारण अपने खान-पान तथा रहन-सहन में इतने अलग हो गये हैं कि वह अपने को मुण्ड, खसिया, नागा कहते हैं हिन्दू कहने में झिझकते हैं उनमें बहुत से सांप, बिल्ली, कुत्ता, गाय आदि के खाने के शौकीन हैं। अतः इन्हें बड़ी ही समझदारी तथा धैर्य के साथ अपनी ओर आकर्षित करना होगा। विदेशी धर्म प्रचारक तो इस स्थिति का लाभ उठा ही रहे हैं, परन्तु दुर्भाग्यवश देश के कुछ स्वार्थी राजनैतिक नेता भी उन्हें हिन्दुओं से अलग रखने में ही अपना हित देख रहे हैं।

अतः इस समस्या के लिये आर्य जाति के सामूहिक शक्ति के लगाने की आवश्यकता है और वहां कार्य करने के लिये बड़े ही त्यागी, संयमी सेवा प्रेमी, धर्म प्रेमी तथा मिशनरी लगन वाले व्यक्तियों की आवश्यकता है। ईसाई गढ़ों के सामने हमें भी अपने गढ़ बनाने होंगे। इसके लिये धन चाहिये परन्तु यदि एक रु० मासिक एक लाख आर्य जन भी सार्व० सभा को चन्दा देने का ५ वर्ष के लिये भी प्रण करले तो निश्चित रूप से आर्य नवयुवक प्रत्येक दृष्टि से इन विदेशी पादरियों को भारत छोड़ने पर विवश करदेंगे और उलटे अमरीका और यूरूप तक में वैदिक धर्म का प्रसार करदेंगे, परन्तु शोक आर्य जाति के रक्त में से वह पुरानी गर्मी व तड़फ न जाने कहां चली गई है।

* ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन *

रूस और चीन में ईसाइयत की दुर्दशा

जो व्यक्ति पोप अथवा खलीफा का अन्ध-विश्वासी है, उसके आदेश पर चलना ही जिसका परम-धर्म है वह कभी भी देश-भक्त एवं राष्ट्रीय हो ही नहीं सकता। तथा जो व्यक्ति मतान्धता का पक्षपाती है वह कभी किसी राष्ट्र में प्रजातन्त्रीय भावनाओं एवं मानवता का हृदय से समर्थक भी नहीं हो सकता। इसी तत्व को भली भांति समझकर आज रूस, चीन तथा विश्व के समस्त साम्यवादी राष्ट्र इन मतान्धता के प्रचारक, पोपडम के दास, तथा अन्ध-विश्वासों के स्वर्ग में स्वांस लेने वाले कथालिक ईसाइयों को सत्पथ पर दृढ़ता के साथ लाने में प्रयत्नशील है। इनके प्रचारकों को देश निकाला दे दिया गया है या कारागार में डाला हुआ है। इनके मठों, आश्रमों तथा विश्व-विद्यालयों का अन्त कर शिक्षा-संस्थाओं को अपने हाथ में ले लिया है और चर्च से उनका नाता सर्वथा तोड़ दिया है।

कई स्थानों पर तो कथालिक चर्चों में जाने वाले ईसाइयों को ब्लैक लिस्ट तक कर दिया है।

बम्बई से प्रकाशित होने वाले अंग्रेजी कथालिक साप्ताहिक ऐक्ज़ामिनर ने अपने ९ जौलाई के अङ्क में लोह-आवरण में कथालिक ईसाई शीर्षक से कुछ आंकड़े छापे हैं और सिद्ध किया है कि आज विश्व के ४५ करोड़ कथालिक ईसाइयों में से ६६५०३००० साम्यवादी देशों के लोहे के सिकंजों में जकड़े हुए हैं। हम पाठकों की जानकारी के लिये वह आंकड़े उद्धृत करते हैं :—

१. रूस	८००००००
२. चीन	४००००००
३. पोलैन्ड	२१००००००
४. उत्तर जर्मनी	२००००००
५. जैकोस्लोवाकिया	६००००००
६. हंगरी	६१२५०८०
७. रूमानिया	३००००००
८. यूगोस्लाविया	५५०००००
९. लिथूनिया	२२०००००
१०. उत्तर वियतनाम	१२०००००
११. लटेविया	५००००
१२. उत्तर कोरिया	२००००
१३. बलगेरिया	५६०००
१४. अलबानिया	१०००००
१५. एस्टोनिया	२०००
	६६५०३०००

बेलजियम, अर्जेनटाइना आदि प्रदेशों के आंकड़े जो साम्यवादी नहीं है इनसे भिन्न हैं। इस समय कथालिकों के गढ़ इटली, स्पेन, पुर्तगाल में विशेष रूप से हैं। यूरोप तथा अमेरिका के अन्य देश सुधार-वादी ईसाई दलों से विशेष सम्बन्ध रखते हैं। एशिया में इनके विशेष प्रचार-क्षेत्र जापान, भारत, फिलिपाइन्स स्याम, हिन्देशिया हैं तथा सारा अफ्रीका महाद्वीप है।

ईसाई संस्थाएँ

आज दिन भारत में ईसाई मिशनों द्वारा संचालित संस्थाओं में ६ लाख बालक एवं बालिकाएं शिक्षा पाती हैं। जिनमें ५ लाख से ऊपर हिन्दू हैं। इन सब संस्थाओं में हिन्दू सन्तान को अनिवार्य रूप से ईसाइयत की मतवादी शिक्षा दी जाती है। भारतीय महापुरुषों की खुली अवज्ञा इन छात्र छात्राओं के सम्मुख ईसाई अध्यापक एवं अध्यापिकाएं निरन्तर करती रहती हैं।

भारतीय शिष्टाचार को भुलाकर सर्वथा अभारतीय रहन सहन एवं अभिवादन इनको सिखाया जाता है। माता, पिता आदि को डडी ममी का पाठ पढ़ाया जाता है। भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी की प्रायः उपेक्षा की जाती है। किसी भी ईसाई स्कूल के छात्र एवं

छात्रा को अच्छा हिन्दी लिखना और पढ़ना नहीं आता।

भारतीय वेशभूषा के स्थान पर अंग्रेजी वेशभूषा का भारत की सन्तति को दास बनाया जाता है। तथा खान पान में अन्डों का प्रयोग नन्हें २ बच्चों को कराने की स्थान स्थान से शिकायतें आई हैं। आसाम में तो विद्यार्थियों को रुपयों का लालच देकर गो मांस तक खिलाने की शिकायतें विद्यमान् हैं।

मध्य प्रदेश की सरकार ने जसपुर रियासत के आदिवासियों के ग्रामों में जहां ईसाई स्कूल काम कर रहे हैं अपने स्कूल खोलकर जैसे ही शिक्षा को अपने हाथों में लेना आरम्भ किया कि भारत भर के ईसाई समाचार पत्रों ने और विशेषकर संजीवन, हैरल्ड, एवं ऐक्जामिनर ने बड़े बड़े शीर्षक देकर यथा Government denies constitutional right to Catholics अर्थात् सरकार कथालिकों के वैधानिक अधिकारों को छीन रही है शोर मचाना आरम्भ कर दिया है।

हम स्पष्ट शब्दों में इन मिशनरियों से तथा भारत सरकार से यह पूछना चाहते हैं कि क्या भारत में किसी भी वर्ग को यह वैधानिक अधिकार प्राप्त है कि वह अपनी मतवादी शिक्षा अनिवार्य रूप से बच्चों के सर पर लादे तथा उनको भारतीयता से विमुख कर अराष्ट्रीय बनावे।

हम दावे के साथ यह घोषणा करते हैं कि कैथालिक स्कूल तथा कालेज निश्चय ही भारतीयता के मार्ग में भयंकर रोड़े हैं और इनका सुधार अथवा अन्त हमें करना होगा।

यदि इन शिक्षणालयों में बाईबिल मतवादी शिक्षा के स्थान पर भारतीय संस्कृति के आधार पर नैतिक शिक्षा दी जाए तथा भारतीय वेषभूषा, भाषा एवं शिष्टाचार का पाठ पढ़ाया जाए तथा भारतीय महापुरुषों की गौरव गाथाएं बालकों के हृदय पटल पर बैठाई जायें तो हमें इनसे कोई विरोध नहीं।

यह ईसाई शिक्षा संस्थाएं हिन्दू बालकों को अहिन्दू और ईसाई बनाने के बड़े अड्डे हैं इनको बन्द कराने का व्यापक आन्दोलन आर्य हिन्दू संस्थाओं को देश के कोने कोने में जम कर करना होगा। जब तक इन ईसाई संस्थाओं का भारतीयकरण न हो जाय हमें चैन नहीं लेना चाहिये।

क्या मध्य प्रदेश की भांति भारत की अन्य प्रादेशिक सरकारें इस दिशा में अपना कर्त्तव्य समझेंगी और भारत के हिन्दू लाल-ललनाओं को इन विदेशी मिशनों के जाल से बचाने में कटिबद्ध होंगी।

हमारी दृष्टि में यह आन्दोलन साम्प्रदायिक नहीं अपितु शुद्ध राष्ट्रीय एवं सिक्यूलरिज्म का रक्षक है। मतान्धता एवं अन्धविश्वास जिन पर ईसाइयत अवलम्बित है निश्चय ही भारत की राष्ट्रीयता एवं मानव वाद के मार्ग में दो भयंकर रोड़े हैं जिन्हें उखाड़ने के लिये हमें सन्नद्ध होना होगा।

बम्बई के आर्च-विशप ने घड़ियाली आंसू बहाए

श्रीयुत वैलेनियम कार्डीनल ग्रेसियस बम्बई के आर्च विशप ने अंग्रेजी के साप्ताहिक पत्र ऐक्जामिनर में प्रकाशित किया है कि उनके साथी कैथालिक लोग मध्य प्रदेश मेरठ आदि में निरन्तर नाना प्रकार के कष्टों में से गुजर रहे हैं।

भारत के प्रधान मन्त्री पं० जवाहरलाल नेहरू के ईसाइयों सम्बन्धी उद्‌गारों की सराहना करते हुए यह खेद प्रगट किया है कि योरुप से लौटने के बाद उनकी सारी आशायें धूल में मिल गई है और भारत सरकार ने किसी भी आश्वासन का पालन नहीं किया। अब उन्होंने हताश व निराश होकर गिरजा घरों में प्रार्थना करने की योजना बनाई है जिससे तथा कथित सतावट करने वालों के हृदय परिवर्तित हो। यह ग्रेसियस महोदय वही सज्जन हैं जो नेहरू जी के इटली पहुंचने से पहले रोम के पोप से मिले हैं और इटली के समाचार पत्रों में बाधू में ईसाइयों की सतावट की बड़ी चर्चा की है।

हम इस लेख में मध्य प्रदेश सम्बन्धी इनकी शिकायतों की चर्चा न करके बाघू के सम्बन्ध में ही प्रकाश डालना चाहते हैं।

राजकुमारी अमृतकोर के पदार्पण से बाघू का नाम भारत के कोने कोने में विख्यात हो गया है और इसके सम्बन्ध में पर्याप्त जानकारी जनता को हो चुकी है। नीचे लिखी घटनाओं से यह पता चल सकेगा कि बाघू में सतावट ईसाइयों की ओर से है या वहां के आर्यसमाजी हिन्दुओं की ओर से है।

१. बाघू में एक शुद्ध हरिजन के छप्पर को फूंकने का अभियोग मेरठ के शैसन न्यायालय में पुलिस की ओर से कुछ ईसाइयों के विरुद्ध चल रहा है।

२. ईसाइयों द्वारा चौ. रामफल व रामचन्दर गूजरों को लाठियों द्वारा पीटने और इनकी हाथ की हड्डी तोड़ने के सम्बंध में ६ ईसाइयों का चालान पुलिस की ओर से किया गया है।

३. एक हरिजन हिन्दू को पीटने के सम्बंध में तीन ईसाइयों को बाघू की ग्राम पंचायत ने दंडित किया है।

४ ८ हिंदुओं के विरुद्ध १०७, ११७ की कार्यवाही अदालत में चल रही है। जिसमें गवाही देते हुए एक ईसाई गवाह बेहोश होकर गिर पड़ा।

इन घटनाओं से यह स्पष्ट हो जावेगा कि बम्बई के आर्च बिशप के आरोप भारत सरकार तथा आर्य हिंदू जनता पर कितना महत्व रखते हैं। गिरजाघरों में हृदय परिवर्तन की प्रार्थना करना वस्तु स्थिति पर पर्दा डालने के लिये घड़ियाल के आंसुओं के समान ही केवल है।

ईसाई चर्चों की एकता आन्दोलन से कथालिक चर्च बौखला उठा

डाक्टर फिशर ने इंग्लैंड आदि के विभिन्न ईसाई चर्चों को एक संगठन में लाने का आन्दोलन कुछ समय से आरम्भ किया हुआ है। कथालिक पोप ने अपने पन्थ को इस आन्दोलन से पृथक रखने का निर्णय किया और अपनी दुन्दुभी पृथक् ही बजाते रहने की घोषणा की है।

रेवेरेण्ड एस विलियम सन ने ६ जौलाई को लन्दन के सैन्ट मैगनस मार्टयर के चर्च में इस एकीकरण आन्दोलन की चर्चा करते हुए कहा है कि दक्षिण भारत के चर्च को मिलाकर जो ईसाइयत पर भरी कुठारा चलाया गया है, क्योंकि दक्षिण-भारत के चर्च के विधान में यह नियम अंकित है कि इस चर्च के किसी सदस्य के लिए ईसाई मान्यताओं को सर्वांश में मानना आवश्यक नहीं है. अर्थात् वह चाहें तो यीशु मसीह का सलीब पर मरना और फिर जी उठना और सदेह स्वर्ग जाने में विश्वास न रखें और यदि चाहें तो कुंवारी मरियम से यीशु मसीह का उत्पन्न होना भी न मानें।

हम दक्षिण भारत के चर्च के इस उदार नियम की सराहना करते हैं। इन्होंने अन्धविश्वासी एवं तर्क शून्य मान्यताओं से ऊब कर ही ऐसा नियम बनाया है। यदि वह इस नियम को न बनाते तो दक्षिण भारत के बुद्धिमान् जन कदापि ईसाइयत को अंगीकार न करते।

अब समय की यह मांग है कि भारत के सब ईसाई चर्च मिलकर भारत में राष्ट्रीय चर्च की स्थापना करें और विदेशी चर्चों और विशेषकर रोम के पोप से चीन के राष्ट्रीय चर्च की भांति अपना सम्बन्ध सर्वथा विच्छेद कर दें तथा तर्क शून्य मान्यताओं और अन्धविश्वासों को तिलांजलि देने की भी साथ ही घोषणा करें। भारत के राष्ट्रीय चर्च को बाइबिल का भारतीय संस्करण स्वयं तैयार करना चाहिये और इसमें सब आवश्यक संशोधन निस्संकोच और निर्भय होकर कर डालने चाहियें। इसी में धर्म का प्रकाश राष्ट्रीयता का विकास एवं मानवता की उन्नति अन्तर्हित है।

शिवदयालु, तिलक पार्क मेरठ।

ईसाई मिशनरियों द्वारा भारत-विरोधी प्रचार

जांच समिति के समक्ष भुक्त भोगियों के बयान

रायपुर २२ जुलाई । ईसाई मिशनरी जांच समिति ने आज यहां धमतरी, बसना व महासमुन्द के साक्षियों की साक्षी ली। दूधाधारी मठ के महंत वैष्णवदास, पंढरीराव किरदत्त (धमतरी) शिवदत्त शर्मा (बसना, जटाशंकरजी महासमुन्द) तथा अन्य कई व्यक्तियों की साक्षी ली गयी। कुष्टाश्रम के चार कुष्टरोगियो झरिया, मौजीराम, हरदेव तथा हीरो ने अपनी साक्षी में बताया कि स्वतन्त्रता के पूर्व, जब कुष्टाश्रम मिशनरियों के हाथ में था कुष्टाश्रम में केवल उन्हीं व्यक्तियों को भर्ती किया जाता था जो ईसाई धर्मग्रहण करते थे। उन्हें भी ईसाई बनना पड़ा। किन्तु स्वतन्त्रता के उपरांत जब आश्रम राज्य ने अपने हाथ में ले लिया तब सैकड़ों व्यक्तियों ने पुनः हिंदू धर्म ग्रहण कर लिया। उन्होंने धर्मान्तर के लिये मिशनरियों द्वारा दबाव डाले जाने व सताए जाने की शिकायत की।

ईसाई संस्था गास मेमोरियल केन्द्र के अधीक्षक गुरुबचन सिंह ने इस कथन का खंडन करते हुए कहा कि आश्रम का संचालन कमिश्नर की अध्यक्षता में असोसियशन द्वारा होता था व मिशनरी उसका मंत्री होता था। आश्रम में भर्ती करने की कोई शर्त नहीं थी। धमतरी के सम्पूरना नामक व्यक्ति ने कहा कि उसने अपने छोटे भाई जीवनलाल को धमतरी के मिशन स्कूल में पढ़ने के लिये भेजा था वहां उसे ईसाई बनाया गया। अन्य साक्षियों ने भी मिशनरियों द्वारा दबाव डाले जाने, लालच देने व दूसरे धर्मों के विरुद्ध प्रचार करने के आरोप लगाए।

महासमुन्द के श्री जटाशंकर जी ने कहा कि मिशनरियों द्वारा प्रचार किया जाता है कि जब भारत पर ईसाईयों का शासन था तब जनता सुखी थी और आज भी भारत सरकार अमेरिका से गेहूँ व धन की सहायता लेती है। उन्होंने कहा कि डा० सैम्युअल (जो चिकित्सा करते हैं) महासमुन्द में बाजार के दिन नियमित रूप से ईसाई धर्म का प्रचार करते हैं और उन्होंने कहा है कि हरिजन यदि ईसाई बन जांय तो पाकिस्तान की भांति वे भी अपना पृथक राज्य बना सकते हैं, नागा प्रदेश व झारखंड में इसी तरह का आन्दोलन हो रहा है।

जांच समिति की बैठक में दर्शक भारी संख्या में उपस्थित थे।

शुद्धियां

—आर्य समाज बैकुण्ठपुर के तत्वावधान में ३-७-५५ को ईसाई युवती कुमारी सुशीला भरोस सहायक अध्यापिका कन्या माध्यमिक शाला की तथा २२-७-५५ को सूर ग्राम पो० सीतापुर में एक ईसाई परिवार की जिसमें आठ व्यक्ति थे शुद्धि की गई।

—आर्य समाज खंडवा के तत्वावधान में १६-७-५५ को ग्राम दुल्हार तहसील खंडवा में ८ ईसाई परिवारों की जिनकी सदस्य संख्या ५५ थी शुद्धि हुई।

युरोप में तलाक की संख्या बहुत जोरों से बढ़ रही है। विद्यार्थियों का ईश्वर में विश्वास घट रहा है और अश्लील नाटकों का प्रचार बढ़ रहा है। यह बहुत बुरी बात है। —रोम के पोप

गऊ हमारे परिवार का अङ्ग है

श्रीयुत पुरुषोत्तम दास टंडन के मथुरा में हुए भाषण का सार

आज देश में जो गोवध चल रहा है, वह लज्जा की बात है। हम लोग जो स्वतन्त्रता संग्राम में लड़े थे, यह समझते थे कि हमारा राज्य हमारी इच्छा और हमारी संस्कृति के अनुरूप होगा और उसमें गोरक्षा का प्रथम स्थान होगा। लेकिन आज गोरक्षा के स्थान पर हम गोनाश का कार्य कर रहे हैं। हमारे नेता महात्मा गांधी ने हमें विश्वास दिलाया था कि अंगरेजी राज्य के जाने पर गो का रक्षण होगा। उन्होंने अनेक बार गो की महिमा के सम्बन्ध में वाक्य कहे थे। गो हमारे देश की प्रतीक है। गो या हमारे देश का धर्म है। उनके सामने इस समस्या को हल करने में पैसे का प्रश्न नहीं था। लेकिन आज जिनके हाथ में शासन है वे पैसे का प्रश्न उठाते हैं। वे कहते हैं कि यदि विदेशों को चमड़ा नहीं जाएगा तो डालर कहां से आएगा। आज हमारे शासक गांधीजी की बात करते हैं और दूसरे देशों में उनके नाम से आदर पाते हैं। लेकिन एक ओर अहिंसा की बात करते हैं और दूसरी ओर यह नहीं सोचते कि अहिंसा में गोवध कैसे हो सकता है। मैं तो अन्य पशुओं क वध को भी बुरा समझता हूँ। मैंने विंध्याचल में जाना भी इसी लिए छोड़ दिया कि वहां देवी के सामने पशु वध होता है। अलंकार की बातों को बिना जाने पूछे वध करने का अर्थ लगाया जाना बुरी बात है। हमारे देश में जब अन्य पशु मारे जाते थे तब गाय को अघन्या कहा था।"

धिक्कार है

मेरा स्वराज्य की लड़ाई में हाथ था, लेकिन मैं आज के शासन कर्म से उदासीन हूं, क्योंकि इसमें गोवध होता है। कलकत्ता में ही सूर्य उदय से पूर्व एक सहस्र से अधिक गाएं नित्य मारी जाती हैं। इन आंकड़ों को देखकर मैं यह समझता हूँ कि हमारा सच्चा स्वराज्य अभी नहीं आया। हमारे स्वराज्य का आरम्भ गोवध निरोध से होना चाहिए था आज तो बूचड़ों का सौदा है। क्या हमने यही गांधीजी से सीखा है? कलकत्ता और बम्बई की सरकारें कहती हैं कि गोवध बन्द नहीं किया जा सकता। यह सरकारें हमारे देश का प्रतिनिधित्व नहीं करतीं।

गांवों की उपेक्षा

गांव का कष्टमय गन्दा जीवन हमारे हृदय में खटकता है। आज की हमारी सभ्यता बिजली, मोटर और रेल की सभ्यता है। हमारा अर्थशास्त्र गांव की वास्तविक स्थिति और उनके स्थान पर आधारित होना चाहिए था। हमारे देश में सात करोड़ परिवार है। हमें ऐसे ग्राम बसाने चाहिएं कि प्रत्येक परिवार को आधा एकड़ जमीन जरूर मिले। जिसमें कि थोड़े में उनका घर हो और शेष में हरियाली घास और पेड़ पौधें हों ताकि गोपालन हो सके। लेकिन आज की स्थिति यह है कि हमारे यहां किसी किसी क पास तो एक-एक हजार एकड़ भूमि है। उत्पादन का प्रश्न तो छोटा है उसमें सुख पहुँचाने की गुंजइश नहीं है। सुख पहुंचाने के लिए हमें रावण की समृद्धि नहीं चाहिए। हमें तो रामराज्य का सुख चाहिए। मैं जब कलकत्ता और बम्बई में बड़े-बड़े महलों का दर्शन करता हूँ तो मेरे हृदय में एक टीस उठती है। बेईमानी से पैदा किए गए धन और समृद्धि से सुख नहीं मिल सकता। उत्पादन की अपेक्षा वितरण मुख्य समस्या है। आप लोग उस सौन्दर्य की कल्पना कीजिए कि हर घर में आधा एकड़ भूमि हो और वहां गोपालन हो रहा हो। मैं इस बात को गलत मानता हूँ कि जन संख्या बढ़ जाने से गाय और मनुष्य में होड़ हो गई है। यह बात गलत है कि यहां ऐसी

(शेष पृष्ठ ३५१ पर)

* गोरक्षा आन्दोलन *

गाय भैंस के दूध का वैज्ञानिक विश्लेषण

अंग्रेजी में एक कहावत है कि Cow milk and honey are the root of beauty. (गो दुग्ध और शहद सौन्दर्य के मूल कारण हैं।) गाय अपनी मुलायम रंग बिरंगी चमड़ी द्वारा सूर्य की किरणों से बलवान् प्राण-तत्वों का आकर्षण करके अमृतमय दूध देती है। यही कारण है कि गाय के दूध, मक्खन आदि शरीर के विष को बाहर निकाल कर उसे सब प्रकार से स्वस्थ रखते हैं। डाक्टरों का यह भी अनुभव है कि धारणा शक्ति को तीव्र बनाने तथा इसको टिकाए रखने में भी यह बहुत सहायक है। किन्तु ये सब गुण भैंस के दूध में कहां ? स्काटिश अनाथालय में इसका प्रयोग करके देखा गया है तो भैंस का दूध पीने वाले बच्चे धड़ाधड़ बीमार पड़ने लगे। पूना एग्रीकल्चरल कालिज के अध्यापक राय बहादुर जे० एल० सहस्त्रबुद्धे ने इसका प्रयोग छोटे बच्चों पर करके देखा था। उनकी रिपोर्ट से पता लगता है कि बच्चे मंदबुद्धि और रोगी होने लगे। गाय और भैंस के दूध का प्रयोग घोड़ी के बच्चों पर भी करके देखा जा चुका है। जो बच्चे भैंस के दूध पर पले है वे सुस्त थे तथा गर्मी सहन नहीं कर सकते थे। डा० एन० एन० गोडबोले ने भी भैंस और गाय के दूध की पूरी २ खोज की है और बतलाया है कि कार्बोहाइड्रेट आदि वर्तमान होने से गाय के दूध की मलाई मानव स्वभाव के अनुकूल है और तुरन्त पचकर वीर्य उत्पन्न करती है। इसके विपरीत भैंस के दूध की मलाई को पचाने के लिए मनुष्य की अंतड़ियों को बड़ा परिश्रम करना पड़ता है। भोजन पचाने के लिए अंतड़ियों में नमक है पर भैंस के दूध को पचाने के लिए वह पर्याप्त नहीं है। फलतः जिस नमक से हड्डी बनती है अन्तड़ियों को उसे हठात भैंस के दूध को पचाने में खर्च करना पड़ता है। यही कारण है कि छोटे बच्चों को यह दूध नहीं पचता तथा इसके व्यवहार से उनका यकृत (जिगर) बेकाम हो जाता है साथ ही गाय के घी में आयोडीन (Iodine) है जो भैंस के घी में नहीं। उसमें विटामीन 'ए' बहुत है। वह जल्दी पचता है। दर्द और बीमारी के काम में आता है। ये सब बातें भैंस के घी में कहां ? हम लोग कितने मूर्ख हैं कि बच्चों को भैंस का दूध पिला पिला कर उन्हें मन्दबुद्धि बना रहे हैं।

धर्मलाल सिंह

—नारी की कीर्ति स्फटिक दर्पण के सदृश है जो अत्यन्त उज्ज्वल एवं चमकीला होने पर भी दूसरे के एक श्वास से भी मलिन होने लगती है।

—यदि कोई मनुष्य सच्ची महत्ता प्राप्त करना चाहे तो उसे 'जैसा कहो वैसा करो' के सद्-गुण को जीवन में धारण करना चाहिए।

—भले आदमी दूसरों के आनंद से आनंदित हुआ करते हैं।

महिला-जगत्

फूल देवी

लेखक—इतिहास का एक विद्यार्थी

पुरन्दर ने फूलबाई का मार्मिक पत्र एक ही सांस में पढ़ लिया। उन्हें तृप्ति न हुई। एक बार, दो बार, तीन बार, कई बार उन्होंने उसे पढ़ा। उनकी आंखें भर रही थीं पर पत्र वे पढ़ते ही जा रहे थे। बचपन का सारा दृश्य उनकी आंखों में झूल गया।

पुरन्दर के ही देवल गांव में विधवा वृद्धा की एक मात्र पुत्री फूलबाई थी। वही अपनी मां की आंखों की पुतली, अंधे की लाठी और जीवन का सहारा थी। पुरन्दर और फूलबाई दोनों गांव की पाठशाला में एक ही साथ शिक्षा पाते थे। बाल्यकाल में दोनों में खूब प्रेम था। दोनों परस्पर हिल-मिल कर पढ़ते और साथ ही खेला करते थे। आयु के साथ साथ उनका प्रेम भी बढ़ता गया।

फूलबाई को यौवन में प्रवेश करते देख कर उस की माता ने पुरन्दर के साथ विवाह करना निश्चित कर दिया पर इस कामना की पूर्ति भी न हो पाई कि वह काल के कराल गाल में चली गई। फूलबाई वृक्ष से गिरी लतिका की भांति मुरझाने लगी। वह अनुपम लावण्यवती थी। उसी के गांव में औरंगजेब ने इसे देखा और लुब्ध हो गया। उसके सैनिक फूलबाई को उठा ले गये। वह बेगमों की प्रधान बनी। फूलजानी बेगम उसका नाम पड़ा।

पर वह इससे बहुत दुखी थी और उसने आत्म हत्या का विचार करके पुरन्दर को मार्मिक पत्र लिखा था। एक बार अन्तकाल में दर्शन की कातर प्रार्थना की थी उसने।

"मेरी सहायता तुम कर सकोगी?" आंसू पोंछते हुए पुरन्दर ने पत्र-वाहिका से पूछा। वह फूलजानी बेगम की प्राण प्रिय और परम विश्वासी बांदी थी।

'बेगम साहिबा की ख्वाहिश पूरी करने के लिए मैं अपनी जान भी दे सकती हूं। उसने तुरन्त जवाब दिया।

'तो मुझे अपनी बेगम के पास ले चलो' पुरन्दर बांदी के पीछे २ चल पड़े।

× × ×

'मैं परम अपवित्र हूं, मुझे स्पर्श न करें, नाथ।' फूल ने रोते २ कहा। उसकी आंखों में आंसुओं की बाढ़ आ गई थी।

'तुम परम पवित्र हो, देवी! जिसका मन और जिसकी आत्मा अपवित्र नहीं हैं, जो विवश है, मन से जिसने पर-पुरुष की ओर दृष्टि भी नहीं डाली, वह नारी काया से बंधन में पड़ कर भी अपवित्र नहीं मानी जा सकती। मैं तुम्हें अपनी सहधर्मिणी बना कर रक्खूंगा।'

'मैं ऐसा न होने दूंगी स्वामी! मैं आपके दर्शन के लिए ही जीवित थी। मैं चाहती हूं कि आप अपने ही हाथों मेरा प्राणान्त कर दें। मेरी इच्छा पूरी हो जायगी"।

'यह क्या कहती हो, फूल!' पुरन्दर ने उदास होकर कहा।

'मैं जो कह रही हूं, वही ठीक है। आप मेरी लालसा पूरी करें। मराठा राजपूत हैं आप!' वह बोल गई। पुरन्दर ने कटार खींच ली। हाथ ऊपर उठाया। कटार चमक गई। पुरन्दर का कलेजा धड़क उठा और हाथ हिल गया पर फूल के चहरे पर प्रसन्नता नाच उठी।

सहसा पीछे से एक बांदी ने हाथ पकड़ लिया। पुरन्दर सन्न रह गए। फूल क्रोध से कांप उठी।

'हाथ छोड़ दे! मैं बेगम होकर हुक्म देती हूं।' बेगम ने ज़ोर से डांटा, बांदी भाग खड़ी हुई।

\+ \+ \+

'नालायक बांदी ने बादशाह को सारा भेद बता दिया।' फूल ने घबरा कर कहा—'आप इस सुरंग की राह से शीघ्रता से चले जांय। सुरंग द्वार पर सुसज्जित अश्व तैयार है।

पुरन्दर सुरंग में घुसे। घोड़े पर सवार हो भाग निकले, पर औरंगजेब के सैनिक इसके पीछे लग गए थे। सैनिकों के बाण पुरन्दर के शरीर में चुभते जा रहे थे। रक्त टपक रहा था पर वे हवा से बात करते हुए घोड़ा भगाए लिए जा रहे थे। अन्त में उनका शरीर शिथिल पड़ गया। वे पकड़ लिए गए।

'महल के भीतर कैसे पहुँचे?' औरंगजेब ने सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा। वहां कोई आदमी नहीं जा पाता। भेद बता देने पर मैं तुम्हें माफ कर दूंगा।'

तुम्हारे जैसे चोरों से वीर मराठे माफी नहीं चाहते। क्रोध से कांपते हुए लाल २ आंखें किए पुरन्दर ने उत्तर दिया। तुमने मेरी पत्नी की चोरी की थी, मैं उसे ही लेने आया था।'

औरंगजेब अपमान नहीं सह सकता था। उसने पुरन्दर को तुरन्त प्राणदण्ड की आज्ञा दी। बाणविद्ध पुरन्दर के शरीर में चमकती हुई संगीनें चारों ओर से धंस गई। औरंगजेब अपनी आंखों से देख रहा था।

सहसा पीछे की ओर से एक दर्द भरी चीख सुन कर वह घबरा गया। देखा तो हाथ में कटार लिए फूलजानी बेगम भागती चली आ रही है। उसकी बिखुरी केश राशि नागिनों की भांति पीठ पर लहरा रही थी।

औरंगजेब कांप उठा। एक क्षण सैनिक भी स्तब्ध रह गए। उन्होंने बेगम के हाथ से कटार छीनने की कोशिश की किन्तु इसके पूर्व ही कटार उसके कोमल हृदय में प्रवेश कर गई। फूल गिर पड़ी। खून का फौहारा टूट पड़ा।

मरते २ उसने कहा—'हिन्दू नारी का पति ही उसका सर्वस्व होता है। महल में बंद रहकर भी मैं तुम्हीं के चरणों में थी।

औरंगजेब ने सिर थाम लिया। हिन्दू नारी की पति भक्ति देखकर वह चमत्कृत हो गया।

(पृष्ठ ३४८ का शेष)

होड़ है कि या तो गाय जीवित रहे या मनुष्य। यह ठीक है कि मनुष्य तथा गाय दोनों की बढ़ती हुई आबादी को रोकना चाहिए नसलें सुधरनी चाहिए। परन्तु इसके माने यह नहीं कि हम गोवध करें। आज सरकार की ओर से जो गो सम्वर्धन हो रहा है वह गोसम्वर्धन नहीं है। वह तो हमारी आंखों में धूल डालना है। चाहिए यह कि पहले गोरक्षा हो और पीछे गोसम्वर्धन। मुझे यह प्रिय होगा कि हम गाय का दूध न पिएं पर गोवध नहीं होगा। मैंने प्रधानमंत्री को एक पत्र लिखा था कि गो के सम्बन्ध में आप जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करते। आज सरकारें प्रधानमंत्री के दृष्टिकोण में रंगी हुई है, क्योंकि वह यहां के वातावरण में नहीं पले इसलिए उनका दृष्टि कोण भारतीय नहीं है। हां, उत्तर प्रदेश तथा बिहार की सरकारों का दृष्टिकोण भारतीय है।

परिवार का अंग

गाय हमारे परिवार का एक अंग बन गई है। हमें बंगाल तथा बम्बई की सरकारों का विरोध करना होगा और इसके लिए जनशक्ति को जगाना होगा। मैं संसद के सदस्य बनने के प्रत्येक इच्छुक से चुनाव के अवसर पर पूछूंगा कि क्या गोवध का विरोध करेंगे? मेरा वोट किसी दल विशेष को नहीं, केवल उसीको मिलेगा जो हिन्दो और गो का पक्षपाती होगा। गोरक्षा की लड़ाई समाप्त होने वाली नहीं है। मेरी सभी दलों को चुनौती है कि तुम्हें जनशक्ति के सामने झुकना होगा। लेकिन दबना अच्छा नहीं है। तुम जनशक्ति का स्वागत करो जैसा कि उत्तर प्रदेश की सरकार कर रही है।

बाल-जगत्

जार्ज वाशिंगटन की परदुःखकातरता एवं सत्य-प्रियता

एक पहाड़ी नदी के किनारे सबेरे के समय एक स्त्री बड़े करुणा पूर्ण स्वर में चिल्ला रही थी— "बचाओ ! मेरे बच्चे को बचाओ।"

लोग दौड़ आए, पर कोई नदी में कूदने का साहस न कर सका। नदी की धारा बहुत तेज थी और भय था कि इसमें पड़ने पर चट्टानों से टकरा कर हड्डियां तक चूर २ हो जायेंगी। इतने में एक १८ वर्ष का युवक वहां दौड़ा हुआ आया। उसने अपना कोट उतार कर पृथ्वी पर फेंक दिया और वह धम्म से नदी में कूद पड़ा।

लोग एक टक देख रहे थे। अनेक बार वह नौजवान भंवर में पड़ता जान पड़ा। कई बार तो वह चट्टान पर टकराने से बाल २ बचा। कुछ क्षण में यह सब हो गया। अन्त में वह उस डूबे हुए मूर्छित बालक को अपनी पीठ पर लादे तैरता हुआ किनारे आ गया। दूसरों की रक्षा के लिए अपने प्राणों पर खेल जाने वाला युवक था -जार्ज वाशिंगटन।

जार्ज वाशिंगटन अमेरिका के एक किसान का लड़का था। वह जब छोटा था, तब एक दिन इसके पिता ने इसे एक कुल्हाड़ी दी। इसे लेकर जार्ज बगीचे में खेलने गया।

बगीचे में जो पेड़ देखता, वह उसी पर कुल्हाड़ी चलाता और हंसता। उसके पिता ने बड़ी कठिनता प्राप्त करके एक फल का वृक्ष लगाया था। जार्ज ने इस पर भी कुल्हाड़ी चला दी। इस प्रकार कुल्हाड़ी से खेल कर वह खुशी २ घर लौटा।

इधर इसका पिता बगीचे में पहुँचा तो इसने मालियों से पूछा, पर किसी ने भी पेड़ काटना स्वीकार न किया। तब घर आकर जार्ज से पूछा। जार्ज ने कहा, 'पिताजी मैं खेल रहा था और पेड़ों पर कुल्हाड़ी चला चलाकर यह आजमा रहा था कि मुझ से पेड़ कटते हैं या नहीं। इस पेड़ पर भी मैंने ही कुल्हाड़ी मारी थी और वह उसी से कट गया था।'

पिता ने कहा, 'बेटा ! तुझे इस काम के लिये तो मैंने कुल्हाड़ी नहीं दी थी। परन्तु तेरी सच्ची बात पर मैं बहुत खुश हूं। इससे मैं तेरा कसूर माफ करता हूं,' तेरी सच्चाई देख कर मुझे बड़ी ही प्रसन्नता हुई है।

यही जार्ज वाशिंगटन बड़ा हो कर अमेरिका का प्रख्यात राष्ट्रपति हुआ था।

विवाह की कौन विधि से समाज में सामंजस्य और स्थायी व्यवस्था रह सकती है—आर्य जाति ने इसी का पता लगाने का यत्न किया जिस प्रकार युरोप के राज परिवार राज्य के विचार से ही विवाह सम्बन्ध करते थे और जिस प्रकार संतान शास्त्र मानव जाति की प्रगति के लिए व्यक्तिगत भावना के त्याग का उपदेश देता है उसी प्रकार आर्य जाति में भी समाज-हित के लिए जीवन के प्रलोभनों से बचने की दृष्टि से विवाह की व्यवस्था की गई है। आर्यों की वैवाहिक विधि का यही अभिप्राय है। मानव जाति की उन्नति के लिए ही आर्य शास्त्र स्वाभाविक प्रवृत्तियों को बुद्धि और आत्मा के कठोर नियंत्रण में रखने की शिक्षा देते हैं। — जे० टिसल डेविस

* चयनिका *

अकारण विरोध

कुछ लोग दक्षिण में अकारण ही हिन्दी का विरोध कर रहे हैं। मद्रास राज्य में हिन्दी भाषा के विरुद्ध एक वातावरण बनाने की विशेष रूप से चेष्टा की जा रही है। रेलवे स्टेशनों के नाम अन्य भाषाओं के अलावा हिंदी में भी अंकित कर दिए गए थे। उनको कोलतार से पोत देने की मुहिम शुरू की गई। सरकार ने हठाग्रहियों की इन हरकतों को चुपचाप सहन कर लिया और उसने हिन्दी भाषा के नाम पटों को बिगड़ने दिया। इससे हठाग्रहियों के हौसले और बढ़ गए। उन्होंने घोषणा की कि सरकार की हिन्दी नीति के विरोध में वे राष्ट्रीय झण्डे को सार्वजनिक रूप से जलाएंगे। यह हिमाकत की हद थी। राष्ट्रीय झण्डे का यह खुला अपमान देशद्रोह का सूचक था और आखिर मद्रास के मुख्य मंत्री श्री कामराज को यह चेतावनी देनी पड़ी कि अगर राष्ट्रीय झंडे का सार्वजनिक अपमान किया जाएगा, तो सरकार ऐसा करने वालों के खिलाफ कठोर कार्रवाई करेगी। यह चेतावनी व्यर्थ नहीं गई और द्रविड़ मुनेत्र कड़गम संस्था के नेताओं ने राष्ट्रीय झंडे को जलाने का अपना क्रम स्थगित कर दिया। राष्ट्रीय झंडे का अपमान करनेवाला व्यक्ति नागरिकता के सामान्य दायित्व की भी अवहेलना करता है और वह उस स्वतन्त्रता का अधिकार खो देता है जो इस देश के नागरिक को प्राप्त है।

हम उन लोगों की बात समझ सकते हैं, जिनके विवेक पर प्रादेशिकता की भावना ने पर्दा डाल दिया है और जो उत्तर भारत और दक्षिण भारत को दो टुकड़ों में विभक्त करने के मूर्खतापूर्ण स्वप्न देखते हैं परमात्मा न करे कि उनके ये स्वप्न कभी पूरे हों, अन्यथा देश की स्वतन्त्रता अल्पजीवी सिद्ध होगी और उत्तर भारत और दक्षिण भारत कहीं के नहीं रह जाएंगे। हमें यह देखकर आश्चर्य होता है जब हम कुछ समझदार लोगों को भी हिन्दी का विरोध करते देखते हैं उदाहरण के लिए मद्रास विश्व विद्यालय के उपकुलपति डा० लक्ष्मण स्वामी मुदालियार का वह भाषण हमारे सामने है जो उन्होंने मद्रास की विधान परिषद् में राज्य पाल के भाषण पर होनेवाली बहस के दौरान में दिया है। वह कहते हैं कि भारत सरकार ने तमिलनाड पर हिन्दी थोपने का अपना प्रयास बन्द नहीं किया है। हम नहीं जानते कि भारत सरकार ने तमिलनाड पर या और किसी राज्य पर हिंदी को थोपने की चेष्टा की है। संघीय राज्य सेवा आयोग की परीक्षाओं में हिंदी को एक स्वैच्छिक माध्यम स्वीकार करने के बारे में भारत सरकार के गृह मंत्रालय ने विश्वविद्यालयों से एक मांग की थी। इसी पर मुदालियार साहब बिगड़ पड़े हैं। किंतु यदि केन्द्रीय सरकार को आगे चल कर अपना कामकाज हिंदी भाषा के माध्यम से चलाना है तो क्या उसके कर्मचारियों के लिए हिंदी जानना जरूरी नहीं होगा? और अभी तो अंग्रेजी के माध्यम को खत्म करने का सवाल ही कहां है? केवल उन उम्मीदवारों को स्वतन्त्रता देने का सवाल है, जो हिंदी के माध्यम को अपने लिए ज्यादा अनुकूल समझते हैं। मद्रास के उम्मीदवार अंग्रेजी भाषा में ज्यादा प्रवीण होते हैं तो उनको इस लाभ से अभी कहां वंचित किया जा रहा है? जो विदेशी भाषा में उनके जितने पारंगत नहीं हो सकते, उनको हिंदी माध्यम को अपनाने से क्यों रोका जाए? केन्द्रीय सरकार के जिन कर्मचारियों को हिंदी नहीं आती, यदि उनको सायंकालीन कक्षाओं में हिंदी सिखाई जा रही है, तो क्या यह भी कोई बुरा कार्य है, जिसकी श्री मुदालियार शिकायत करते हैं। हिंदी को और अंग्रेजी को वह एक ही तराजू पर बराबर २ तोलना चाहते हैं। वह कहते हैं कि एक तमिल भाषी बालक के लिए अंग्रेजी का सीखना

जितना अस्वाभाविक है, उतना ही हिंदी का सीखना भी। किन्तु वे यह क्यों भूल जाते हैं कि हिंदी किसी प्रादेशिक भाषा का स्थान नहीं ले रही है? प्रादेशिक भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाने में किसी को आपत्ति नहीं। केवल जो चाहा जा रहा है, वह इतना ही कि अन्तर-प्रान्तीय व्यवहार के लिए देश की सार्वदेशिक भाषा होनी चाहिए और इसके लिए हिंदी को अन्य सब भाषाओं की अपेक्षा उपयुक्त समझा गया है। अतः राज्यों में प्रादेशिक भाषाओं के साथ-साथ हिंदी का अध्ययन भी अनिवार्य रूप से होना चाहिए। इसमें हमारी समझ से किसी को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

मद्रास के वित्त मंत्री को शायद विरोधियों को संतुष्ट करने के लिए एक से अधिक बार यह कहना पड़ा कि हिंदी को लोगों पर न थोपा जाए, यह सरकार की मूलभूत और बुनियादी नीति है। किंतु हम फिर भी कहना चाहेंगे कि हिंदी को किसी पर थोपने का कोई सवाल ही नहीं है। जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों ने देश के संविधान में हिंदी को एक विशेष स्थान दिया है और देश के राजकाज में उसे व्यवहार में लाने का एक सुनिश्चित कार्यक्रम स्वीकार किया है। उसी निश्चय को अब कार्यरूप देने का सवाल है। क्या कोई यह गम्भीरतापूर्वक चाह सकता है कि भाषा के बारे में संविधान के निर्देशों की अवहेलना की जाए? मद्रास के वित्तमंत्री महोदय ने पता नहीं भारत के प्रधान मंत्री के हवाले से कैसे यह कह डाला है कि हिन्दी राष्ट्रभाषा नहीं है और संविधान में उल्लिखित १४ भाषाओं में से केवल एक है। जहां तक हम जानते हैं श्री नेहरू ने यह कभी नहीं कहा कि हिन्दी राष्ट्रभाषा नहीं है। अवश्य ही उन्होंने प्रदेशिक भाषाओं को नीचा और हिंदी को ऊंचा नहीं बताया है। हिंदी और प्रादेशिक भाषाओं के बीच ऐसी तुलना करने की कोई आवश्यकता भी नहीं है। हिंदी की अगर कोई विशेषता है तो यही कि देश के १४ करोड़ लोग उसे बोलते और समझते हैं। इस व्यापकता के आधार पर ही उसे सार्वदेशिक रूप देने का प्रयत्न किया जा रहा है, ताकि वह वास्तव में राष्ट्र भाषा बन जाए। जो लोग राष्ट्र की एकता को जरूरी समझते हैं उन्हें निस्संकोच सार्वदेशिक भाषा के रूप में हिंदी को अपनाना और उसका समर्थन करना चाहिए; न कि भ्रामिक आधारों पर अकारण उसका विरोध करना चाहिए। मद्रास के वित्तमंत्री ने प्रादेशिक भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने की जो बात कही है, उससे किसी को मतभेद नहीं होगा। यह खयाल ही क्यों पैदा हो रहा है, कि हिन्दी प्रादेशिक भाषाओं को अपदस्थ करके उनका स्थान ले लेगी? यह आशंका सर्वथा निराधार है और उसे जितना शीघ्र निर्मूल कर दिया जाएगा उतना ही सबके लिए श्रेयस्कर होगा।

—हिन्दुस्तान

—संसार परमात्मा की सर्व हितकारिणी इच्छा का चमत्कार और उसकी पुनीत लीला की एक झांकी है।

—परमात्मा सृष्टि की रचना इसलिए नहीं करता है कि मनुष्य उसमें अपने को भुलाकर परमात्मा को भूल जाय।

गोवा

(डी फिरान्डेज़)

गोवा की भौगोलिक स्थिति

भारत में पुर्तगाली बस्तियां तीन हैं – गोआ, डमन और ड्यू। गोआ बम्बई से दक्षिण की ओर दो सौ मील दूर है। पुर्तगाल की यही सबसे बड़ी बस्ती है। यह १४ सौ वर्गमील है और बाकी दोनों बस्तियां १३८ वर्ग मील हैं। डमन और ड्यू दोनों सौराष्ट्र में हैं।

इन तीनों बस्तियों की आबादी ७ लाख है। गोआ के तीन ओर समुद्र है और एक ओर की भूमि भारत के साथ मिली हुई है। गोआ का समुद्र तट ६२ मील है। पनजिम अथवा "नवा गोआ" वहां की राजधानी है। समुद्रतट के साथ पश्चिमी घाट की पर्वतश्रृंखला है। इन बस्तियों की आबादी, अधिकांश, हिन्दू है, लगभग दो लाख रोमन कैथलिक ईसाई हैं।

गोआ अत्यन्त प्राचीन नगर है। भारत के इतिहास में इसका पुराना नाम गोमान्त और गोआपुरी है। वास्को डी-गामा के बाद पुर्तगाली सरदार अलबुकर्क ने १० फरवरी १५१० को गोआ पर हमला करके वहां के मुसलिम शासक यूसुफ आदिल शाह को भगा दिया और पुर्तगाली शासन की नींव डाली।

मध्ययुग की ब्रिटेन-पुर्तगाल संधियां

और ब्रिटेन के साथ यह संधियां क्या है? जरा वह भी सुन लीजिए। इसमें एक संधि सात सौ वर्ष पुरानी है जिसके अनुसार पोप ने विश्व का आधा भाग पुर्तगाल को देने की बात कही है! पुर्तगाल के प्रधानमंत्री डा० सालाजार ब्रिटेन के साथ १६४२ की संधि की दुहाई देते हैं। इस संधि की एक धारा के अनुसार, इंगलैंड के राजा का यह कर्तव्य है कि वह पुर्तगाल के सब उपनिवेशों और उसके विजित प्रदेशों की वर्तमान और भविष्य के शत्रुओं से रक्षा करें। १६३० में इस संधि में एक संशोधन किया गया जिसके अनुसार पुर्तगाल के राजा को अधिकार दिया गया कि वह स्वयं अथवा उसका कोई प्रतिनिधि इंगलैंड में सिपाही भर्ती कर सके और घोड़े इकट्ठे कर सके ताकि स्पेन से रक्षा की जा सके। एक धारा के अनुसार धनुष बाण तक देने का उल्लेख है। इस संधि के कुछ समय बाद ही पुर्तगाल और इंगलैंड के राजपरिवारों के बीच वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित हो गये। इसमें ब्रिटेन को दहेज के रूप में बम्बई नगर भेंट दे दिया गया। इस समय फिर यह संधि दोहरायी गयी कि ब्रिटेन पुर्तगाल की मौजूदा और आगे आने वाले शत्रुओं से रक्षा करेगा। १६४२ की संधि में एक गुप्त धारा थी। इसके अनुसार अगर ब्रिटेन पर हमला हो तो पुर्तगाल उसकी सहायता करेगा।

परन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध में पुर्तगाल ने ब्रिटेन पर जर्मनी के हवाई हमलों के समय कोई सहायता नहीं की। इतना ही नहीं, वह दुनिया को दिखाने के लिए तटस्थ रहा किन्तु नाजी और फासिस्ट जासूसों का बड़ा अड्डा पुर्तगाल था। उत्तर अतलांतिक संधि संघ (नाटो) का सदस्य होने के नाते पुर्तगाल ब्रिटेन, अमेरिका, फ्रांस आदि राष्ट्रों से सहायता की अपेक्षा करता है पर इस संधि संघ के प्रमुख सदस्यों का कहना है कि औपनिवेशिक क्षेत्रों पर यह संधि लागू नहीं होती है।

मजहब की आड़

पुर्तगाल ने अपनी अनीति को छिपाने के लिए मजहब की आड़ ली है। वह कहता है कि गोआ में रोमन कैथलिक ईसाई हैं और भारत में गोआ के मिल जाने से इनके साथ बुरा व्यवहार होगा। इस

प्रकार पुर्तगाल गोआ को "मजहबी प्रश्न" बनाना चाहता है। नेहरू जी अपनी हाल की पूर्वी यूरोप की यात्रा में इटली गये थे और वहां रोम में रोमन कैथलिक ईसाइयों के गुरु पोप से मिले थे। इस मुलाकात के बाद नेहरू जी ने सार्वजनिक रूप से यह घोषणा की है कि पोप गोआ के प्रश्न को मजहबी नहीं समझते किन्तु राजनीतिक समझते हैं। दुर्व्यवहार की दलील का तो स्पष्ट उत्तर भारत में ईसाइयों की लगभग ८० लाख संख्या का होना है। इनमें १० लाख के लगभग रोमन कैथलिक हैं। ये सब भारत में आराम से रहते हैं। इनमें से कई बड़े-बड़े ओहदों पर हैं। इन रोमन कैथलिकों का लाट पादरी एक भारतीय हो है। इसके विरुद्ध गोआ में लगभग २ लाख रोमन कैथलिक हैं। इनमें से किसी को बड़ा पादरी आज तक नहीं बनाया गया है और सरकार के ऊंचे ओहदों पर भी कोई नहीं है। यह सब यूरोपीय ईसाइयों के लिए ही सुरक्षित हैं। पुर्तगाल गोआ को पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति का केन्द्र बताता है। यह सर्वथा मिथ्या है। यह ठीक है कि वहां के कई नागरिक कोट-पतलून पहनते हैं पर इसी पोशाक से वहां पश्चिमी सभ्यता नहीं मानी जा सकती। वहां प्राधान्य भारतीय सभ्यता का ही है।

१२वीं सदी में हुई ब्रिटेन पुर्तगाल संधि की ओर संकेत करते हुए नेहरू जी ने कहा कि उस समय अंग्रेज भारत में व्यापारी मात्र थे, शासक नहीं थे। अतः उस संधि को मानने के लिए भारत कानूनीरूप से बाध्य नहीं है।

मुक्ति आंदोलन

गोआ-मुक्ति का आंदोलन अब भारत में जोर पकड़ रहा है। श्री पीटर अलवारेन्स, डा० गोतेन्दो और लोकमान्य तिलक के पौत्र श्री तिलक के नेतृत्व में इस आन्दोलन का सचालन हो रहा है। देश के सब राजनीतिक दल इसमें सहयोग दे रहे हैं। कांग्रेस ने भी इस मुक्ति आंदोलन का समर्थन करते हुए कांग्रेसियों को व्यक्तिगत रूप से सत्याग्रह करने की स्वीकृति दे दी है, सामूहिक रूप से नहीं, क्योंकि कांग्रेस का कहना है कि गोआनियों को ही इस आंदोलन में भाग लेना चाहिए। कई संसद सदस्य भी इस सत्याग्रह आंदोलन में शामिल हो रहे हैं। मथुरा के एक सत्याग्रही श्री अमीरचन्द अग्रवाल की गोआ पुलिस के हाथों भयंकर पिटाई होने के कारण मृत्यु होने से इस मुक्ति आंदोलन को विशेष स्फूर्ति मिली है। १५ अगस्त के अवसर पर ५ हजार सत्याग्रहियों ने गोआ में प्रवेश किया। इनमें से ३१ शहीद हो गये।

भारत गोआ में चलने वाली रेल पटरी के नीचे पुर्तगालियों द्वारा सुरंगें बिछा देने के कारण भारत ने रेल-गाड़ी बन्द कर दी हैं और नयी दिल्ली में पुर्तगाली दूतावास बन्द कर दिया गया है। गोआ में जाने वाले सत्याग्रहियों पर अमानुषिक अत्याचार किये जाते हैं, भयंकर रूप से पिटाई करना तो साधारण बात है, इन्हें आधी रात जंगल में ले जाकर छोड़ दिया जाता है और कई सत्याग्रहियों के अंगों को काट दिया जाता है। कई प्रमुख सत्याग्रहियों को जहाज में लादकर पुर्तगाल के अफ्रीकी टापुओं में ले जाकर बन्द कर दिया जाता है। वहां से किसी के जीवित वापस आने की आशा भला क्या हो सकती है?

पुर्तगाल सरकार ने गोआ में सब सरकारी अधिकारी, पुलिस और सेना में अपने अफ्रीकी उपनिवेशों के नीग्रो अथवा यूरोपियन भर्ती कर दिये हैं। गोआनियों पर उसे विश्वास नहीं है। कुछ बड़े पुलिस अफसर पुर्तगाल के इस व्यवहार से खिन्न होकर भारत की शरण में आ गये हैं।

विश्व के प्रमुख राष्ट्रों की सहानुभूति भारत की ओर बढ़ रही है। पर लंका और पाकिस्तान के व्यवहार पर खेद है। बांडुंग-सम्मेलन के निश्चयों के विरुद्ध ये दोनों देश गोआ में रसद तथा अन्न की सहायता भेज रहे हैं और इन्हीं बन्दरगाहों से छुपकर शस्त्र और सेना गोआ जाती है।

हमारा दृढ़ विश्वास है कि गोआ भारत में मिलकर ही रहेगा और पुर्तगाल को अपने हठ के लिए पछताना पड़ेगा।

* दक्षिण भारत प्रचार *

शिमोगा में आर्य समाज की स्थापना

अक्टूबर मास के पश्चात् इस वर्ष के अन्त में सार्वदेशिक सभा के भूतपूर्व प्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती दक्षिण भारत आ रहे हैं सभा के द्वारा उनकी एक मास की स्वीकृति मिल गई है। उनके यहां होते हुये कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना करने के लिये कार्य क्रम बनाया जा चुका है। इससे पूर्व कम से कम मैसूर राज्य के समस्त मण्डलों में एक एक आर्य समाज की स्थापना कर देने का निश्चय है। इसी कार्यक्रम के अनुसार २८ जून को शिमोगा की ओर रवाना हुआ। वहां आर्य समाज की स्थापना कर दी गई। श्री वीरेन्द्र प्रभु प्रधान, श्री नरसिंह मूर्ति मन्त्री व श्री मञ्जुनाथैया कोषाध्यक्ष निर्वाचित हुए। पहले भी कुछ वर्ष पूर्व यहां एक आर्यसमाज थी परन्तु बीच में कार्यकर्त्ता न होने से बन्द हो गई। अब आशा है कि इन उत्साही युवक कार्यकर्त्ताओं के हाथों यह समाज प्रगति पथ पर अग्रसर होगी।

दो शुद्धियां

प्रसन्नता की बात तो यह है कि यह आर्यसमाज दो शुद्धियों के द्वारा प्रारम्भ हुई। शिमोगा जिले के मण्डगद्दे नामक ग्राम में (जहां ईसाइयों का काफी जोर है) एक ईसाई की शुद्धि हुई तथा शिमोगा नगर में ही स्थापना दिवस के दिन १० जौलाई को एक सैम्यूएल पीटर नामक ईसाई की शुद्धि हुई। सोमदेव नाम रक्खा गया। इसी नगर में निकट भविष्य में ही एक और परिवार की शुद्धि होने वाली है।

यहां दो सार्वजनिक सभाओं में संस्कृत में ही भाषण भी हुये जिनमें आर्य संस्कृति व संस्कृत भाषा का परिचय उपस्थित व्यक्तियों को दिया। इसी अवसर पर संस्कृत भाषा के प्रचारार्थ तथा वयस्कों के शिक्षार्थ चार विभिन्न शिक्षा केन्द्र खोले गये जिनमें निःशुल्क शिक्षा दी जायगी तथा स्थानीय एवं मण्डल समितियां भी बनाई गई जो कि संस्कृत विश्व परिषद् बम्बई के तत्वावधान में काम करेंगी। इस संस्कृत विश्व परिषद् के द्वारा मुझे Honorary Professor के पद पर नियुक्त कर देने तथा एक प्रामाणिक पदस्थ व्यक्ति का स्थान देने से आर्यसमाज के इन कार्यों में बड़ी सुविधा हो गई है।

चित्रदुर्ग जिले में भी आर्यसमाज की स्थापनार्थ कुछ व्यक्तियों से मिला। आशा है दूसरी बारी में वहां भी आर्य समाज स्थापित हो जायगी।

इसी प्रकार तुमकूर में भी शीघ्र ही एक आर्य समाज की स्थापना करने के प्रयत्न चल रहे हैं।

मैसूर में वेद सप्ताह

मैसूर आर्यसमाज अब दिनों दिन प्रगति पर है। उसकी प्रगति व नवचेतना के फलस्वरूप दयानन्द सप्ताह से भी उत्कृष्ट रूप में वेद प्रचार सप्ताह मनाने की योजना बन चुकी है। आर्य समाज का प्रत्येक व्यक्ति श्री डा० विश्वमित्र जी (यज्ञ संयोजक) को बड़ी सहायता पहुंचा रहा है। आशा है परमात्मा की कृपा से यज्ञ निर्विघ्न प्रभावात्मक रूप में सम्पन्न होगा।

विजयादशमी पर प्रचार

विजयादशमी का पर्व मैसूर राज्य के लिए एक अनोखा पर्व है। दूर दूर स्थानों से इस उत्सव पर सम्मिलित होने के लिए व्यक्ति आते हैं। इस स्वर्णावसर का लाभ उठाकर आर्यसाहित्य के प्रचारार्थ प्रदर्शिनी में एक दूकान ली जा रही है। इस प्रकार का प्रयत्न आर्य समाज की ओर से दक्षिण भारत में प्रथम

आवश्यक सूचनाएं तथा वैदिक धर्म प्रसार

अन्तर्जातीय विवाहों की व्यवस्था

आर्य उपप्रतिनिधि सभा लखनऊ (५ मीराबाई मार्ग) के तत्वावधान में युवकों तथा कन्याओं की एक सूची स्थायी रूप से रखी जा रही है ताकि दोनों पक्षों को गुण कर्म स्वभाव की समानता के अनुसार एक दूसरे से मिलाया सके। कोई शुल्क नहीं लिया जाता। आर्य समाजी होना भी आवश्यक नहीं है। गत जून मास में २ अन्तर्जातीय विवाह कराये जा चुके हैं।

आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार और पंजाब

आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार के वार्षिक निर्वाचन में श्री डा० दुःखनराम जी प्रधान और आचार्य रामानन्द जी शास्त्री मंत्री निर्वाचित हुए। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज तथा मंत्री श्रीयुत् वीरेन्द्र जी निर्वाचित हुए।

गुरुकुल कांगड़ी

गत ७ अगस्त को केन्द्रीय कृषि मंत्री डा० पंजाबराव देशमुख द्वारा गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में कृषि विद्यालय की स्थापना हुई।

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी का बृहत् दौरा

श्री स्वामी जी महाराज ने सार्वदेशिक सभा के आदेशानुसार छोटा नागपुर और दक्षिणी बिहार में लगभग २ मास पर्यन्त ईसाई प्रचार निरोध तथा गोवध निषेध आंदोलन के निमित्त भ्रमण किया। बिहार के बाढ़ पीड़ित स्थानों का भी श्री स्वामी जी ने निरीक्षण किया। वहां का दृश्य बड़ा कारुणिक था। आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार के मंत्री आचार्य श्री रामानन्द जी शास्त्री भ्रमण में सर्वत्र श्री स्वामी जी के साथ रहे। धनबाद, रांची, हजारी बाग मठ गुलनी, नवादा, पीरो, आरा, पटना साहिब गंज आदि में ईसाई प्रचार निरोध कार्य का निरीक्षण किया गया।

आर्य समाज दीवान हाल देहली

उक्त समाज के मुख्य द्वार के ठीक सामने एक सिनेमा घर बनाये जाने की योजना बन रही है। दीवानहाल से सम्बद्ध लगभग १ दर्जन आर्य संस्थाओं ने इसका कड़ा विरोध करके चीफ कमिश्नर देहली, मुख्य मन्त्री देहली राज्य, केन्द्रीय गृहमंत्री, डिपुटी

प्रचलन है। यदि सफल हो गया तो इसको और भी विस्तृत एवं स्थाई रूप में बना देने का विचार है। यह प्रचार सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से संयोजित होगा तथा इसके प्रबन्धादि के लिए प्रबन्ध समिति स्थानीय सदस्यों को लेकर बना ली गई है। इस अवसर पर विक्रयार्थ प्रतिनिधि प्रकाशन समिति को श्री गोविन्दराम हासानन्द दिल्ली वालों ने पुस्तकें भेजने की स्वीकृति दे दी है। सभा भी स्वयं पुस्तकें भिजवा रही है। अन्य भी कई सज्जनों एवं संस्थाओं से प्रार्थना की गई है यदि कोई सज्जन व सभा संस्थायें प्रचारोपयोगी पुस्तकें भिजवायेंगी तो इस से बड़ा लाभ होगा तथा इस महान् यज्ञ में उन की भी एक परम सहायता होगी। ईसाइयों के प्रचार के विरोध में लिखे गये ट्रैक्टों की बड़ी आवश्यकता

है। आशा है इस स्वर्णावसर से लाभ उठाने में हमें उत्तर भारत की समाजों व सभाओं से अपूर्व सहायता मिलेगी।

प्रतिनिधि प्रकाशन समिति

कन्नड़ सत्यार्थ प्रकाश का प्रकाशन कार्य यथापूर्व चल रहा है। ११ वां समुल्लास पूर्ण हो चुका है। विजयादशमी से पूर्व ही यह प्रकाशित हो जायगा ऐसी आशा है।

विक्रय विभाग

अभी तक १०१) की हिन्दी एवं अंग्रेजी आर्य ग्रन्थों की बिक्री हो चुकी है।

सत्यपाल शर्मा स्नातक
दक्षिण भारत आर्य समाज आर्गेनाईजर
आर्यसमाज मैसूर

कमिश्नर देहली को तार तथा प्रार्थना पत्र भेजे हैं। आर्य समाज के सदस्यों में इससे बड़ा रोष फैल गया है। सार्वदेशिक सभा के उपमंत्री श्रीयुत् डा० रामगोपाल जी ने एक विशेष वक्तव्य निकाल कर इस योजना के दुष्परिणामों का वर्णन करके सरकार को चेतावनी दी है कि वह इस योजना की आज्ञा न दे अन्यथा यदि आज्ञा के असन्तोष के कारण स्थिति बिगड़ी तो उसकी उत्तरदायित्व राज्य सरकार पर होगी।

उत्तरप्रदेश में बाढ़-पीड़ितों की सहायतार्थ कार्य

उत्तरप्रदेश की भयंकर बाढ़ से पीड़ित क्षेत्रों में सहायता प्रारंभ करनेके लिए सार्वदेशिक सभाने १०००) आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश को दिया है। आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश की अपील का सार्वदेशिक के प्रधान श्रीयुत् पं० इन्द्र जी ने एक विशेष वक्तव्य के द्वारा समर्थन करके आर्य नर नारियों को अपना भाग सार्वदेशिक या उत्तरप्रदेश की सभा को भेजने की प्रेरणा की है।

सार्वदेशिक आर्य वीर दल

गोआ में चल रहे सत्याग्रह में भाग लेने के लिए आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी ने आर्यवीरों को आह्वान किया है कि जो वीर सत्याग्रह में भाग लेना चाहें वे अपने नामादि आर्य वीर दल कार्यालय देहली में भेज दें।

८ से १५ अगस्त तक सोहना (गुड़गांवा) में आर्य शिक्षण शिविर लगा जिसमें ४१ आर्य वीरों ने शिक्षण प्राप्त किया। इस अवसर पर नगर में प्रतिदिन प्रचार होता रहा। दीक्षांत में गुड़गांवा जिले के आर्य समाजों के प्रतिनिधियों ने भी भाग लिया और सब समाजों ने अपने जिले में एक वैतनिक शिक्षक रखने का भी निश्चय किया।

दल के समस्त अधिकारियों को सूचित किया गया कि यथानुसार इस वर्ष विजयदशमी के अवसर पर दल सदस्यता उत्सव विशेष समारोह के साथ मनाया जाय। नगर की समस्त शाखाओं को मिलकर निम्न कार्यक्रम क्रियान्वित करने का आदेश दिया गया है:—

१. राष्ट्र-गान २. ध्वजारोहण तथा नारे ३. प्रदर्शन (व्यायाम सैनिक शिक्षा आदि ४. दल सहायता ५. प्रतिज्ञा दोहराना ६. सामूहिक गान तथा भाषण ७. ध्वज गान ८. विकिर। संगृहीत धन का ¼ भाग प्रधान केन्द्र देहली ¼ भाग प्रदेशीय केन्द्र तथा शेष ½ भाग स्थानीय तथा मांडलिक कार्य के लिए रहेगा।

सार्वदेशिक पत्र (हिन्दी मासिक)

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश १० शिलिङ्ग। अर्द्ध वार्षिक ३) स्वदेश, ६ शिलिङ्ग विदेश।

२. एक प्रति का मूल्य ।। स्वदेश, ।।=) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क वा नमूने की प्रति का मूल्य ।।=) स्वदेश, ।।।) विदेश।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये। चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा। पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने वा ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न देने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है कि उनकी इच्छा वी० पी० द्वारा चन्दा देने की है।

४. सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख को प्रकाशित होता है। किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय में अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा। डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं। अतः समस्त ग्राहकों को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये।

५. सार्वदेशिक का वर्ष १ मार्च से प्रारंभ होता है अंक उपलब्ध होने पर बीच वर्ष में भी ग्राहक बनाए जा सकते हैं।

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
६. पूरा पृष्ठ (२०×३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा ” ”	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई ,,	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	३०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

७. सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

—व्यवस्थापक

'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

Regd No. D 51.

स्वाध्याय योग उत्तम ग्रन्थ

धर्म्म प्रेमी स्वाध्याय शील नर-नारियों के लिये

* शुभ सूचना *

श्री महात्मा नारायणस्वामी जी कृत, अब तक लगभग १२ संस्करणों में से निकली हुई अत्यन्त लोकप्रिय पुस्तक

कर्त्तव्य दर्पण

का नया सस्ता संस्करण

साईज २०×३० / १२ पृष्ठ ३८४ सजिल्द,

मूल्य केवल ।।।)

आर्यसमाज के मन्तव्यों, उद्देश्यों, कार्यों धार्मिक अनुष्ठानों, पर्वों तथा व्यक्ति और समाज को ऊंचा उठाने वाली मूल्यवान सामग्री से परिपूर्ण।

मांग धड़ाधड़ आ रही है अतः आर्डर भेजने में शीघ्रता कीजिये, ताकि दूसरे संस्करण की प्रतीक्षा न करनी पड़े।

दयानन्द सिद्धान्त भास्कर

सम्पादक—श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी

द्वितीय संस्करण, मू. २) प्रति, 'रियायती' मू. १।।) प्रति।

इस पुस्तक की विशेषता यह है कि भिन्न-भिन्न महत्वपूर्ण विषयों पर महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज की भिन्न-भिन्न पुस्तकों व पत्र-व्यवहार तक में वर्णित मत को एक स्थान पर संग्रह किया गया है। आप जब किसी विषय में महर्षि की सम्मति जानना चाहें तो वही प्रकरण इस पुस्तक में देख लें। पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है।

यह पुस्तक सम्पादक के लगभग ११ वर्ष के कठिन परिश्रम का फल है। उनका परिश्रम सराहनीय है।

भजन भास्कर मू. १।।।)

तृतीय संस्करण

यह संग्रह मथुरा शताब्दी के अवसर पर सभा द्वारा तय्यार कराके प्रकाशित कराया गया था। इस में प्रायः प्रत्येक अवसर पर गाए जाने योग्य उत्तम और सात्विक भजनों का संग्रह किया गया है।

संग्रहकर्त्ता श्री पं० हरिशंकर जी शर्मा कविरत्न भूतपूर्व सम्पादक 'आर्य मित्र' हैं।

अङ्गरेज चले गए अङ्गरेजियत नहीं गई

क्यों?

इस लिए कि अंग्रेजी जानने वालों के मनों में वैदिक संस्कृति की छाप नहीं रही इसके लिए "Vedic Culture" अंग्रेजी पढ़े लिखे लोगों तक पहुँचाइए।

VEDIC CULTURE

लेखक :—

श्री गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०

भूमिका लेखक :—

श्री डा० सर गोकुल चन्द जी नारंग

मूल्य ३।।)

दयानन्द-दिग्दर्शन

(ले.-श्री स्वामी ब्रह्ममुनिजी)

दयानन्द के जीवन की ढाई सौ से ऊपर घटनाएं और कार्य वैयक्तिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, वेद प्रचार आदि १० प्रकरणों में क्रमबद्ध हैं। २४ भारतीय और पाश्चात्य नेताओं एवं विद्वानों की सम्मतियां हैं। दयानन्द क्या थे और क्या उनसे सीख सकते हैं यह जानने के लिये अनूठी पुस्तक है। छात्र, छात्राओं को पुरस्कार में देने योग्य है। कागज छपाई बहुत बढ़िया पृष्ठ संख्या ८४, मूल्य ।।।)

मिलने का पता—**सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,** बलिदान भवन, देहली ६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली ७ में छपकर
श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक पब्लिशर द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ६से प्रकाशित

ऋग्वेद

॥ ओ३म् ॥

यजुर्वेद

सार्वदेशिक

अंक ८

द्वितीय भाद्रपद

२०१२

अक्टूबर १९५५

वर्ष ३०

मूल्य स्वदेश ५)

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ।।)

संध्या-गीत

(१)

देवी-स्वरूप ईश्वर, पूरण अभीष्ट कीजे । यह नीर हो सुधामय, कल्याण-दान दीजे ॥
नित ऋद्धि-सिद्धि बरसे, हित हो सदा हमारा । बहती रहे हृदय में, सद्धर्म प्रेम-धारा ॥

(२)

तन मन-वचन से होंगे हम शुद्ध कर्मचारी ।
दुष्कर्म से बचेंगी, सब इन्द्रियां हमारी ॥
वाणी विशुद्ध होगी, प्रियप्राण पुण्यशाली ।
होंगी हमारी आंखें यह दिव्य ज्योति वाली ॥
ये कान ज्ञान पूरित, यह नाभि पुष्टिकारी ।
होगा हृदय, दयामय ! सम्यक् सुधर्मधारी ॥
भगवान ! तेरी गाथा गायेगा कंठ मेरा ।
सिर में सदा रमेगा, गौरव-गुरुत्व तेरा ॥
होंगे ये हाथ मेरे यश ओज तेजधारी ।
मेरी हथेलियां भी होंगी पवित्र-प्यारी ॥

(३)

जीवन-स्वरूप जगपति ! मस्तक पवित्र करदो ।
दयार्द्र हो दयामय ! नयनों में ज्योति भरदो ॥
आनन्दमय अधीश्वर हम को सुकंठ दीजे ।
भगवन ! हृदय-सदनमें हरदम निवास कीजे ॥
जग के जनक ! हमारी हो नाभि निर्विकारी ।
पद भी पवित्र होवें, हे सर्वज्ञानधारी ॥
पुनि-पुनि पुनीत सिर हो, हे सत्यरूप स्वामी ।
सर्वाङ्ग शुद्ध होवे, व्यापक विभो ! नमामि ॥
सर्वेश सर्व व्यापक सम्पूर्ण सर्वज्ञाता ।
शिव सत्य रूप सुन्दर सर्वत्र ही सुहाता ॥

सक्रिय सगुण सचेतन सर्वज्ञ सर्वदाता ।
तेरी शरण में आया हूँ आर्त हो, विधाता ॥

सामवेद

सम्पादक—
सभा मन्त्री
सहायक सम्पादक—
श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

विषयानुक्रमणिका

* ओ३म् *

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३० } सितम्बर १६५५, भाद्रपद २०१२ वि०, दयानन्दाब्द १३१ } अङ्क ८

वैदिक प्रार्थना

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।

तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥ यजु० ३१ । १८ ॥

व्याख्यान—सहस्रशीर्षादि विशेषणोक्त पुरुष सर्वत्र परिपूर्ण (पूर्णत्वात्पुरि शयनाद्वा पुरुष इति निरुक्तोक्तेः) है उस पुरुष को मैं जानता हूँ अर्थात् सब मनुष्यों को उचित है कि उस परमात्मा को अवश्य जानें, उसको कभी न भूलें, अन्य किसीको ईश्वर न जानें। वह कैसा है कि "महान्तम्" बड़ों से भी बड़ा उससे बड़ा या तुल्य कोई नहीं है "आदित्यवर्णम्" आदित्यादि का रचक और प्रकाशक वही एक परमात्मा है तथा वह सदा स्वप्रकाशस्वरूप ही है किंच "तमसः परस्तात्" तम जो अन्धकार अविद्यादि दोष उससे रहित ही है तथा स्वभक्त, धर्मात्मा, सत्यप्रेमी जनों को भी अविद्यादिदोषरहित सद्यः करने वाला वही परमात्मा है, विद्वानों का ऐसा निश्चय है कि परब्रह्म के ज्ञान और उसकी कृपा के बिना कोई जीव कभी सुखी नहीं होता। "तमेव विदित्वेत्यादि" उस परमात्मा को जान के जीव मृत्यु को उल्लङ्घन कर सकता है, अन्यथा नहीं क्योंकि "नाऽन्यः, पन्था, विद्यतेऽयनाय" बिना परमेश्वर की भक्ति और उसके ज्ञान के मुक्ति का मार्ग कोई नहीं है, ऐसी परमात्मा की दृढ़ आज्ञा है, सब मनुष्यों को इसमें वर्त्तना चाहिये और सब पाखण्ड और जंजाल अवश्य छोड़ देने चाहिये ॥

सम्पादकीय

सार्वदेशिक सभा का अनुसन्धान विभाग

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग ने अपने २८ अगस्त के अधिवेशन में निश्चय किया है कि वेदों का सरल अनुवाद करने तथा वेद सम्बन्धी अन्य कार्य करने के लिए एक अनुसन्धान विभाग खोला जाय। उसके प्रारम्भिक व्यय के लिए २५०००) (पच्चीस हजार) रुपये की राशि भी स्वीकार कर ली है। कार्य संचालन के लिए उपसमिति नियत की है जिसके निम्न-लिखित सदस्य हैं। (१) सभा प्रधान (२) सभा मन्त्री (३) पं० भीमसेन विद्यालंकार (४) बाबू पूर्णचन्द्र जी (५) पं० जियालाल जी। वेदों के सरल अनुवाद में मूल मन्त्र और उनका सरल भाषा में अनुवाद रहेगा। उस अनुवाद की प्रामाणिकता का समर्थन सार्वदेशिक सभा द्वारा नियुक्त समिति करेगी। यह कार्य कितना आवश्यक है आर्य जगत् को यह बतलाने की आवश्यकता नहीं। चिरकाल से वेदों के ऐसे सुगम और सुलभ प्रामाणिक अनुवाद का अभाव अनुभव किया जा रहा है जो अल्प शिक्षित नर नारियों के लिए भी उपयोगी हो सकता हो। वेद का नाम तो सब सुनते हैं, परन्तु उन्हें यह भी तो मालूम होना चाहिये कि वेदों में क्या ? है वह अनुवाद प्रारम्भ में एक ही भाषा में होगा, परन्तु हमारा लक्ष्य यह होना चाहिए कि संसार की सभी भाषाओं में उसे प्रकाशित किया जाय। वेद मनुष्य मात्र के लिए हैं तो मनुष्य मात्र के लिए उनका ज्ञान भी आवश्यक होना चाहिए। हम यह आशा नहीं रख सकते कि सभी मनुष्य वेदों को समझने योग्य संस्कृत भाषा पढ़ लेंगे या वह इतने धनी हो जायेंगे कि वेद भाष्य खरीद कर स्वाध्याय कर सकें। यदि हम मनुष्य मात्र को वेद का सन्देश सुनाना चाहते हैं तो हमें वेदार्थ को सर्व सामान्य के लिए सुलभ बनाना चाहिये।

सार्वदेशिक सभा ने अनुसन्धान कार्य को आरम्भ करने के लिए अपने कोष में से पच्चीस हजार रुपये की राशि अलग कर दी है। कार्य जितना बड़ा है राशि उसकी दृष्टि से बहुत ही छोटी है। केवल एक ही भाषा में चारों वेदों का अनुवाद करने और उसके प्रकाशित करने में न्यून से न्यून डेढ़-दो लाख रुपयों का व्यय होगा। आर्य जन प्रायः इस बात पर असन्तोष प्रकट करते रहे हैं कि वेदार्थ को सुलभ बनाने का कोई विशेष उद्योग नहीं किया गया। अब सभा ने यह कार्य उठाया है तो आशा रखनी चाहिये कि आर्य जनता खुली आर्थिक सहायता देकर ऐसा प्रयत्न करे कि यह कार्य अर्थाभाव के कारण बन्द न होने पावे। —इन्द्र विद्यावाचस्पति

उड़ीसा में बाढ और आर्यसमाज का कर्तव्य

आसाम, उत्तर प्रदेश और बिहार के पीछे जल विप्लव ने उड़ीसा पर आक्रमण किया है। आसाम में प्रायः हर वर्ष पानी का प्रकोप होता है इस कारण सरकार की ओर से वहां सहायता देने की थोड़ी बहुत स्थायी व्यवस्था बनी रहती है। उत्तर प्रदेश और बिहार की प्रादेशिक सरकारें इतनी समर्थ हैं कि केन्द्र का थोड़ा सा भी सहारा मिल जाने पर पीड़ितों की सहायता कर सकते हैं। उड़ीसा में इन दोनों कारणों का अभाव है। यह प्रान्त प्रायः बाढ़ का शिकार नहीं होता। इस लिये इसमें सहायता की कोई स्थिर-योजना नहीं है। यों उड़ीसा आर्थिक दृष्टि से अपेक्षया निर्बल प्रान्त है। उसमें बाढ़ भी तब आई हैं जब सरकार और सेवा करने वाली संस्थाओं का ध्यान अन्य क्षेत्रों की ओर बट चुका है। फलतः उड़ीसा के जल विप्लव की समस्या बहुत विकट हो गई है।

उड़ीसा की परिस्थिति में एक और भी विशेषता है, यह प्रान्त ईसाई पादरियों के बहुत बड़े गिरोह का कार्य क्षेत्र है। वह लोग प्रान्त के दलित आदिवासी और अन्य निर्धन लोगों की लाचारी से लाभ उठाकर ऐसे अवसरों पर उन्हें अपने घेरे में ले लेते हैं। यह स्वाभाविक बात है कि कष्ट के समय हमें जो व्यक्ति सहारा दे देता है हम उसे अपना हितैषी मानने लगते हैं और उसकी बात ध्यान से सुनते हैं। देश के पिछड़े हुए प्रदेशों में ईसाई प्रचारकों की असाधारण सफलता का यही रहस्य है।

हम लोगों की दशा यह है कि ठीक अवसर पर तो सोये रहते हैं और जब खेत बरबाद हो जाता है तब कनस्तर बजाने लगते हैं। हम लोगों को यह कह कर बड़ा सन्तोष मिलता है कि ईसाई पादरी चालाक हैं, वह धोखे से लोगों को अपने जाल में फंसा लेते हैं, या यह कि वह षड्यन्त्रकारी हैं। यह आरोप किसी अंश में सत्य भी हो सकते हैं परन्तु इससे न तो हमें सन्तुष्ट हो जाना चाहिये और न इस बात को भुलाना चाहिये कि ईसाई पादरियों की सफलता का मूल कारण उनकी सेवा है। हम यदि यह चाहते हैं कि पीड़ित लोगों को धर्म से पतित होने से बचायें तो हमारा कर्तव्य है कि हम उनके कष्टों के निवारण के लिये आगे बढ़ें। उड़ीसा में सेवा का अवसर आ गया है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली की ओर से आर्य वीर दल की एक सेवा मण्डली को सेवा कार्य के लिये उड़ीसा भेजा जा रहा है।

बाढ़ पीड़ित क्षेत्रों में सेवा के कार्य को भली प्रकार करने के लिए दो वस्तुओं की आवश्यकता होती है। पहली वस्तु स्वयं-सेवक और दूसरी धन। स्वयं-सेवकों के सम्बन्ध में मेरा विचार है कि आर्य वीर दल पर्याप्त होगा, वह आवश्यकतानुसार कार्यकर्ता दे सकेगा। परन्तु उनके सेवा काल को सफल बनाने के लिये जितनी धन राशि की आवश्यकता है आर्य समाज उतनी देगा या नहीं इसमें अब मुझे सन्देह होने लगा है। कुछ समय से आर्य जनों में कुछ उपेक्षावृत्ति सी आ गई है। वह चाहते तो बहुत कुछ हैं परन्तु उसके साधन जुटाने के समय प्रायः उपेक्षावृत्ति धारण कर लेते हैं। यह शाब्दिक आन्दोलन चारों ओर सुनाई देता है कि ईसाइयों के बढ़ते हुए प्रचार की रोक थाम की जाय परन्तु जब उस कार्य के लिये आर्थिक सहायता की माँग की जाती है तब बहुत ही कम प्रतिक्रिया दिखाई देती है। जो आर्य जन चाहते हैं कि अपने भाइयों को अन्य मतों के प्रचारकों के हाथों में पड़ने से बचाया जाय और साथ ही मनुष्य सेवा के पुण्य का भागी बना जाय उनके लिये अब उत्तम अवसर आ गया है। केवल उड़ीसा के बाढ़ पीड़ितों की सहायता के लिये हमें पचास हजार रुपयों की आवश्यकता होगी। यह राशि सुनने में बड़ी है परन्तु यदि प्रत्येक आर्य समाज और आर्य नर नारी इस निवेदन को पढ़ने के साथ ही सप्ताह भर के अन्दर इस कोष के लिये सार्वदेशिक सभा को यथाशक्ति आर्थिक सहायता भेज दे तो मेरा विश्वास है कि अभीष्ठ राशि पूरी हो जायेगी। आप दूसरे को न देखें कि वह कब और क्या भेजता है आप अपनी अन्तरात्मा से परामर्श करके जो राशि उचित समझें बिना विलम्ब के मनीआर्डर द्वारा भेज दें। ऐसा करने से आप उड़ीसा में सेवा कार्य करने वाले आर्य वीरों को साहस पूर्वक अपना कार्य करने का अवसर प्रदान करेंगे। शास्त्रों में कहा गया है कि कष्ट में पड़े हुए प्राणियों के कष्ट निवारण से बढ़ कर कोई धर्म नहीं है। —इन्द्र विद्यावाचस्पति

❋ सम्पादकीय टिप्पणियां ❋

सौ वर्ष की आयु की मर्यादा काल्पनिक नहीं।

बड़ौदा के 'आर्य सन्देश' नामक गुजराती

भाषा के १५-६-५५ के अङ्क में प्रकाशित एक लेख में यह सिद्ध किया गया है कि मनुष्य की १०० वर्ष की आयु प्राकृतिक है। एक पाश्चात्य लेखक श्री सेवर्न के लेख का एक उत्तम उद्धरण देकर यह दिखाया गया है कि मनुष्य १०० वर्ष वा उससे अधिक काल तक जीवित रह सकता है। वह उद्धरण इस प्रकार है :—

"That man may attain to the age of one hundred years or more is no visionary statement. According to physiological and natural laws the duration of human life should be at least five times the period necessary to reach full growth.

The horse grows at five years and lives to about twenty five or thirty. The dog two and a half and lives to abcut twelve or fourteen, the camel grows at eight years and lives forty. Man grows to about twenty or twenty five years, hence if accident could be excluded, his normal duration of life should not be less than one hundred."

मनुष्य १०० वर्ष की आयु तक पहुंच सकता है यह काल्पनिक मर्यादा नहीं है। शरीर विज्ञान और प्राकृतिक नियमों के अनुसार मानव जीवन की अवधि युवावस्था प्राप्त करने के लिए आवश्यक समय से कम से कम ५ गुनी होनी चाहिए।

घोड़ा ५ वर्ष की अवस्था में जवान हो जाता है और २५ से तीस वर्ष तक जीवित रहता है। कुत्ता २॥ वर्ष में जवान हो कर १२ या १४ साल तक और ऊंट ८ वर्ष में बढ़कर ४० वर्ष तक जीवित रहता है। मनुष्य २० या २५ वर्ष में युवा होता है अतः यदि दुर्घटना की सम्भावना को निकाल दिया जाय तो उसके जीवन की साधारण अवधि २ सौ वर्ष से कम न होनी चाहिये।

पारमार्थिक शिक्षा संस्था

श्रीयुत मूलचन्द्र जी अग्रवाल उज्जैन से लिखते हैं:—

"तेरापंथी जैन श्वेताम्बर सम्प्रदाय के आचार्य श्री तुलसी के तत्वावधान में सरदार शहर (बीकानेर) में लड़कियों के लिये एक पारमार्थिक शिक्षण संस्था का प्रारम्भ हुआ है।

इस संस्था में अभी तक २२ बालिकाएँ हैं जिनमें ३ विधवा और १६ कुमारी हैं। संस्था में लड़कियों को जैन धर्म की शिक्षा दी जाती है और उनको आगे पीछे कभी भी संन्यासिनी बनाने को तैयार किया जा रहा है। लड़कियाँ सुशील हैं और पढ़ाई की व्यवस्था भी अच्छी है। लड़कियों की आयु १४ से २० वर्ष तक की है। वे बीकानेर, जोधपुर तथा जयपुर जिले के धनी घरों की हैं। संस्था की बालिकायें आचार्य महोदय जहाँ जाते है उन्हीं के साथ जाती हैं। बालिकाओं को रात दिन यही धुन रहती है कि उन्हें दीक्षा देने का जल्दी से जल्दी कब मौका मिले क्योंकि आचार्य ने इसी प्रकार का वातावरण पैदा किया है।"

हमारे सामने संस्था का पाठ्यक्रम और प्रबन्ध व्यवस्था की योजना न होने से उसका वास्तविक उद्देश्य जानने में कठिनाई है फिर भी यह कहे बिना नहीं रहा जा सकता कि छोटी आयु की कुमारियों के लिये परमार्थ शिक्षण की व्यवस्था करना समझ में आने वाली बात नहीं है। यदि यह व्यवस्था बड़ी आयु के परमार्थ को समझने वाले स्त्री पुरुषों के लिये होती तो बात समझ में आती। बलात् परमार्थ शिक्षण के खतरों को यहाँ गिनाने की आवश्यकता नहीं हैं। जो माता पिता परमार्थ शिक्षण के लिये इस प्रकार के विद्यालय में स्वयं भरती होने के स्थान में अपने सुकुमार बच्चों को भरती करते हैं वे बच्चों का हित नहीं

अपितु अहित करने का अपराध करते हैं। बौद्ध मत के पतन के कारणों में से एक कारण बलात् अनधिकारियों को परमार्थ पथ पर डालना ही तो था जिस पर जोश में भले ही कोई पड़ जाय उस पर सफलता पूर्वक चलना बड़ा दुरूह है। आशा है इस प्रकार का आयोजन करने वाले महानुभाव इस ऐतिहासिक सत्य से शिक्षा ग्रहण करके कन्याओं के लिए ऐसी शिक्षा की व्यवस्था करेंगे जो उन्हें अच्छी पुत्री, अच्छी माता, अच्छी गृहणी और अच्छी नागरिक बना सके।

अमरनाथ बाबा की कृपा !

दस्युराज मानसिंह के वध पर सन्तोष की श्वास लेते हुए मध्यभारतके गृहमन्त्रीने विधान सभामें कहा था कि अमरनाथ बाबा की कृपा से ही दस्युराज मारा गया। इस सम्बन्ध में सहयोगी हिन्दुस्तान यत्र-तत्र के शीर्षक से लिखता है :—

"मध्यभारत के गृह मन्त्री श्री नरसिंह राव दीक्षित ने जब अमरनाथ बाबा से मनौती मांगी तब कहीं दस्युराज मानसिंह को घेर कर मारा जा सका। यह बात मंत्री महोदय ने स्वयं राज्य की विधान सभा में प्रकट की। तभी अध्यक्ष श्री पटवर्धन ने सभी मन्त्रियों को अमरनाथ की यात्रा करने की सलाह दी।

जब डाकू मानसिंह अमरनाथ बाबा की कृपा से ही मरा, तब इतने बखेड़े की क्या आवश्यकता थी? क्यों नहीं यह कृपा पहले ही प्राप्त कर ली गई? कम से कम इस अभियान पर खर्च हुआ जनता का एक करोड़ रुपया तो बच जाता। समझ में यह भी नहीं आता कि अमरनाथ बाबा की कृपा ही क्या हुई जब मानसिंह को मारने के लिए बन्दूक की गोली की आवश्यकता पड़ी। उसे तो ऐसे सो जाना था कि फिर उठता ही नहीं।

पता नहीं, डाकू मानसिंह को यह बात मालूम थी या नहीं, लेकिन जो तथ्य सामने आये हैं उनसे यह पता अवश्य चलता है कि ब्राह्मणों और पूजा पाठ में उसकी गहरी निष्ठा थी। एक वर्ष पूर्व उसने काठमांडू जाकर पशुपतिनाथ के दरबार में हाजिरी देने का विचार किया था, लेकिन चार राज्यों की पुलिस के आगे उसका वश न चला। यदि वह वहां पहुंच सका होता तो सम्भव था कि वह भगवान शिव से अर्जुन की भांति कोई पाशुपत अस्त्र ले आता या रावण की भांति अमरता का वरदान प्राप्त कर लेता। तब वह दुर्जेय से अजेय हो गया होता। किन्तु मध्यभारत के गृह मंत्री जी पहले ही अमरनाथ बाबा के दरबार में अर्जी देकर उसे स्वीकार करा लाये।"

गोआ सत्याग्रही भी भविष्य में गोआ न जाकर यदि किसी सिद्ध-तीर्थ की शरण में जाएँ तो हमें विश्वास है कि सालाजार को भी मानसिंह की राह पर जाते अधिक देर न लगेगी।

राज्यों के मन्त्रियों की साधारण प्रजा की अपेक्षा अधिक जिम्मेदारी होती है। अतः उन्हें अपने शब्दों को बहुत नाप तोल कर बोलना चाहिये। उन्हें ऐसी बात तो कभी न कहनी चाहिए जिससे शिक्षित जनता में उनकी बात का मखौल बनाया जा सके, और अन्ध विश्वास की भावना अंकित हो सके, वा किसी की धार्मिक भावना को ठेस लग सके। देवी देवताओं की मनौतियों के सहारे बैठने वालों के द्वारा भारत का पहले ही बहुत वैयक्तिक व सामाजिक अहित हो चुका है अब तो इस प्रकार की मनौतियों का अन्त होना चाहिए।

मुस्लिम देवियों को बहुपत्नी वाद की प्रथा अग्राह्य

सर्व साधारण विशेषतः आधुनिक शिक्षा प्राप्त मुस्लिम देवियाँ जितनी पर्दे और पुरुषों के बहुविवाहों से तंग पाई जाती हैं उतनी शायद ही अन्य किसी बात से तंग हों। बहुपत्नी वाद की प्रथा को तो वे अपने लिए बड़ी हानिकारक अनुभव करती प्रतीत होती हैं। जैसा कि उनके वैयक्तिक और

सामूहिक सार्वजनिक विरोध से स्पष्ट होता रहता है। इस प्रथा को अन्य प्रथाओं की तरह कुरान और हजरत मुहम्मद की अनुमति और समर्थन प्राप्त होने से उनका अन्त किया जाना मजहब की अवहेलना मानी जाती है यद्यपि मजहब का अंकुश ढीला करने के लिए यह सिद्ध किया जाता है कि कुरान में और मुहम्मद साहब की व्यवस्थाओं में आपद्धर्म के रूप में इस प्रथा को अंगीकार किया गया है, नियम के रूप में नहीं, और व्यावहारिक दृष्टि से यह प्रथा स्त्रियों के प्रति अन्याय पूर्ण है।

इस प्रथा को बनाये रखने के पक्ष में अनेक युक्तियाँ प्रस्तुत की जाती हैं जिनमें से मुख्य २ इस प्रकार हैं :—

(१) पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की बढ़ी हुई संख्या का हल इस प्रथा के द्वारा ही सम्भव होता है। यदि पुरुषों को एक से अधिक स्त्री के साथ विवाह करने की छूट न दी जाय तो अधिक स्त्रियों को क्योंकर वश में रखा जा सकता है?

स्त्रियों की बढ़ी हुई संख्या की समस्या के हल के लिए पाप, पुण्य और त्याग को बीच में लाकर घसीटा जाता है। साधन सम्पन्न पुरुषों को अविवाहित जीवन करने पर लानत दी जाती है। उन्हें कापुरुष और पापी माना जाता और दो-दो तीन-तीन पत्नियाँ रखना बड़प्पन की निशानी और उनका कर्तव्य ठहराया जाता है। उन पत्नियों के त्याग की प्रशंसा की जाती है जो अपने पतियों को अनेक पत्नियाँ रखने देती हैं। उनके इस कार्य को 'जिहाद' के समान गौरव पूर्ण बताकर उनका सन्तोष किया जाता है और उनके इस त्याग का औचित्य यह कहकर प्रतिपादित किया जाता है कि वे अपनी बहिनों को कुपथगामिनी होने से बचाती हैं विशेषतः युद्ध के बाद जब स्त्रियों की संख्या बेहद बढ़ जाती है। कुमारी खदीजा फीरोजुद्दीन ने लाहौर में सदाचार की रक्षा के अतिरिक्त जाति की संख्या वृद्धि के लिए इस प्रथा को बनाए रखना आवश्यक ठहराया था।

यद्यपि इस प्रथा की कुरान से स्वीकृति प्राप्त है और मुहम्मद साहब के उदाहरण से इस प्रथा का अनुमोदन भी होता है तथापि भारतवर्ष में ५ प्रतिशत से अधिक पुरुष बहुविवाह भोगी नहीं पाये जाते। बहुधा अमीर लोग ही इस प्रथा का आश्रय लेते हैं। कहा जाता है कि पूर्वी बंगाल के ग्रामों में एक पुरुष कई २ पत्नियाँ रखता है परन्तु बहुविवाह और तलाक साथ २ चलते हैं। वहाँ तलाकों की प्रायः धूम मची रहती है। इसके अतिरिक्त भारत में मुस्लिम देवियों की संख्या पुरुषों की अपेक्षा कम ही है अतः भारतवर्ष में संख्या वृद्धि के आधार पर बहुपत्नी वाद का केस मजबूत नहीं ठहरता।

(२) बहुपत्नी वाद के समर्थकों की ओर से इस प्रथाको बनाए रखने के पक्ष में एक यह दलील दी जाती है कि पुरुष का निर्माण इस तरह पर हुआ है और वह जीवन की उन अवस्थाओं में रखा गया है कि उसे एक से अधिक पत्नियों की आवश्यकता होती है अतः एक विवाह का कानून उन पर थोपने से पुरुष की लम्पटता को खुली छुट्टी मिल जाने का अन्देशा है। इस लिए बहुपत्नी वाद के रूप में कुरान ने इसकी उचित रोक थाम कर दी है। अपवाद हो सकते हैं। इस दलील के द्वारा इस प्रथा को समाज के शारीरिक और नैतिक कल्याण के लिए आवश्यक दिखाने की चेष्टा की जाती है।

बहु-विवाह के समर्थन में एक और विचित्र युक्ति यह दी जाती है कि मनुष्य स्वभाव से बहु-विवाह जीवी है और स्त्री एक विवाह भोगी। कम से कम २५ प्रतिशतक पत्नियां बीमारी या पागलपन के कारण अपने पतियों को सन्तुष्ट करने में असमर्थ या अनिच्छुक पाई जाती हैं। २५ वर्ष की आयु में पत्नी का आकर्षण कम होने लगता है। क्या यह न्याय संगत होगा कि पति को दूसरी

तीसरी और चौथी शादी करने से रोका जाय ? २४ अक्टोबर १९३८ के 'लाइट' पत्र में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार एक महाशय तो यहां तक कह गये कि "मैंने पहला विवाह मां-बाप को खुश करने के लिए किया था और दूसरा विवाह अपने को खुश करने के लिये किया है।" इस प्रकार की दलीलों का प्रभाव समझदार मुस्लिम भाष्यकारों की इस स्वीकारोक्ति से कम हो जाता है कि इस्लाम ने जिस बात की विशेष काल के लिए आज्ञा दी है उसका कामुक लोग दुरुपयोग करने लगते हैं।

तीसरी और चौथी दलीलें इस प्रकार हैं :—

(३) यदि पहली शादी से लड़का पैदा न हो तो लड़के की उत्पत्ति के लिए बहु विवाह आवश्यक है।

(४) कुरान में ४ तक शादियां करने की अनुमति है और पैगम्बर के उदाहरण से इसकी सम्पुष्टि होती है।

लोकमत

एक मुस्लिम महिला ने १९३० में 'अखिल एशियाई महिला सम्मेलन में बहुपत्नी वाद का विरोध करते हुए कहा कि "बहुविवाह एकमात्र युद्ध की अवस्था में उचित माना जा सकता है। एक लेखक ने १९३५ के 'इस्लामिया रिव्यू' नामक पत्र में लिखते हुए इस सत्य को स्वीकार किया कि युद्ध काल में भी बहु विवाह न करना पाप या मजहब की अवहेलना नहीं है। मनुष्य अपनी सुविधा, जेब और मानसिक शान्ति को दृष्टि में रख कर १, २, ३ या ४ पत्नियां रखने में अपनी बुद्धि का इस्तेमाल करने में स्वतन्त्र है।

आल इंडिया मुस्लिम महिला सम्मेलन के एक अधिवेशन में (१९१८) एक सुप्रसिद्ध मुस्लिम महिला ने उन बुराइयों पर बोलते हुए जो मजहब में दाखिल हो जाने दी गई हैं घोषणा की 'इस्लाम में अत्याचार की अनेक लज्जा पूर्ण प्रथाओं में से एक प्रथा पुरुषों के बहुविवाह की प्रथा है जो अत्यन्त सुशिक्षित एवं प्रभावशाली जवान मुसलमानों में प्रचलित है" उन्होंने मुसलमान स्त्री-पुरुषों को इस प्रथा का परित्याग करने की अपील करते हुए कहा, 'इस्लाम इतना पवित्र मजहब है कि उसमें ऐसी विनाशकारिणी प्रथा को स्थान नहीं मिल सकता'। कुरान की ४ बीबियों की आज्ञा के वास्तविक अभिप्राय पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कहा, "निस्सन्देह कुरान ४ बीबियों की आज्ञा देता है परन्तु साथ ही यह आवश्यक आदेश देता है कि चारों बीबियों के साथ समान व्यवहार किया जाय‡ और किसी भी आदमी के लिए ऐसा करना नामुमकिन है इसलिए किसी भी पुरुष को एक से अधिक स्त्री के साथ विवाह न करना चाहिए" बहुत सी उपस्थित देवियों ने इन विचारों से सहमति प्रकट की परन्तु सभाध्यक्षा ने कहा, "यह ठीक है कि यह प्रथा बहुत सी बुराइयों की जड़ है, जिनके वर्णन में अतिशयोक्ति नहीं की गई है परन्तु कुरान की आज्ञा मानना प्रत्येक मुस्लिम स्त्री का फर्ज है। बुराई का कारण मनुष्य का दुर्व्यवहार है कुरान शरीफ नहीं है। इस दिशा में मुस्लिम कानून से स्त्रियों को बड़ा कष्ट है। देखना यह है इस कानून से कैसे राहत मिले ? अतः यह मामला अधिक बुद्धिमानों के सामने रखना चाहिए। मैं सम्मेलन के प्रस्ताव को (जिसमें यह प्रेरणा की गई थी कि माताएँ उन पुरुषों के साथ अपनी बेटियों की शादी न करें जिनके यहां अन्य बीबियां हों) आगे भेज दूंगी।" उपर्युक्त महिला के विचारों का मुस्लिम समाचार पत्रों में कड़ा विरोध हुआ परन्तु वह अपनी बात पर दृढ़ रही। एक अन्य अवसर पर उसने अपने भाषण में कहा, "मैं उस समय तक इस प्रथा के विरोध में बोलती रहूँगी जब तक मेरे सामने ऐसे दस पांच पुरुषों

‡ फ़ इन् खिफ़तुम अन्ला तअदिल फ़ वाहिदतन। पस अगर तुमको डर है कि तुम इंसाफ न कर सकोगे तो एक ही बीबी करना।

के उदाहरण न पेश किये जायंगे जो अपनी बीवियों के साथ पूर्ण न्याय और शान्ति के साथ रहते हों जैसे हमारे पैगम्बर रहे थे।"

इसके बाद अब तक समय २ पर महिला सम्मेलनों तथा समाचार पत्रों आदि में इस प्रथा का विरोध होता आ रहा है। इस आशय के प्रस्ताव भी पास होते रहे हैं कि एक से अधिक पत्नी वाले पुरुष के साथ जो स्त्री अपना विवाह करे वा जो माता पिता अपनी बेटी का विवाह करें उनका सामाजिक बहिष्कार किया जाय।

इस विरोध के फल स्वरूप पक्ष और विपक्ष के मध्य संगति बिठाने का यत्न होने लगा है जिस का अध्ययन मनोरंजक और उपादेय है।

हानियां

इस प्रथा की अनेक हानियों में से कुछ का वर्णन कर देना आवश्यक है। इस प्रथा के कारण घर में अशान्ति, कलह और ईर्ष्या व्याप्त रहती है। समाज की पवित्रता को आघात पहुँचता है और मुकदमे बाजी की भी नौबत आ जाती है। स्त्रियाँ हकीर समझी जाती हैं। स्त्रियां यह कहते सुनी जाती हैं "सौत बड़ी जहरीली छुरी होती है" यदि पहली पत्नी के बच्चा न हो और दूसरी के बच्चा हो जाय तो घर में घोर देवासुर संग्राम मच जाता है। बच्चे की मां पर जुल्म होने लगते हैं और पहली बीबी उसके विरुद्ध षडयन्त्र रचने लगती है। पति का प्रेम प्राप्त करने तथा सन्तानोत्पत्ति के लिये नाना प्रकार के उपाय काम में लाये जाते हैं। जादू टोना आदि का सहारा लिया जाता है। यदि सब बीबियों के बच्चे हों तो पैसे, कपड़े विवाह और जायदाद आदि के नाम पर आपस में कलह मचा रहता है। कुछ अच्छी बीबियाँ भी होती हैं जो अपने को खुदा, कुरान और मोहम्मद साहब की व्यवस्था के अर्पण समझ कर सन्तुष्ट रहती हैं। कुछ पत्नियां स्वयं सन्तान के लिये अपने पतियों को दूसरी शादी करने की प्रेरणा करती हैं। इतना ही नहीं उन्हें विवश भी करती हैं। कुछ पत्नियां तलाक के भय से इस प्रकार की आज्ञा दे देती हैं। कुछ पत्नियां आपस में प्रेम से रहती भी पाई जाती हैं और बड़ी पत्नी छोटी पत्नी की माता के रूपमें देख भाल करती है। फिर भी बहु विवाह की प्रथा अधिकांश मुस्लिम स्त्रियों को ग्राह्य नहीं।

देखना यह है कि पाकिस्तान के नये विधान में इस अन्याय पूर्ण प्रथा को प्रश्रय मिलता है या नहीं और मिलता है तो किस रूप में। भारतीय शासन ने तो इस अन्याय पूर्ण प्रथा का वैधानिक अन्त करके एक उत्तम उदाहरण प्रस्तुत कर दिया है।

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हाथरस

उक्त महाविद्यालय का रजत जयन्ती महोत्सव २७ से ३१ अक्टूबर ५५ तक कुल भूमि में मनाया जायगा। उच्चकोटि के विद्वानों, व्याख्याताओं और नेताओं की उपस्थिति, विविध समारोहों तथा आकर्षक पुरोगमों के द्वारा उत्सव को सफल बनाने के लिये प्रबन्धक जन पूरा २ यत्न कर रहे हैं। एक विशाल यज्ञ का भी आयोजन किया जा रहा है जो यज्ञ प्रेमी दानी महानुभाव यज्ञ में भाग लेना चाहें वे अपना नाम और पता भेज दें। उत्सव के प्रबन्ध के लिए एक स्वागत समिति का भी निर्माण होगया है, जिसकी सदस्यता शुल्क ५) रखी गई है, आर्य जन सदस्य बनकर इस आयोजन से भी लाभ उठा सकते हैं।

श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्द जी तथा श्री मोहनलाल जी आर्य ने जयन्ती महोत्सव के लिये १-१ मास की निःशुल्क सेवाएँ अर्पण की हैं। वे धन संग्रहार्थ समाजों में भ्रमण करेंगे।

कन्या गुरुकुल की मुख्याधिष्ठात्री श्रीमती लक्ष्मी देवी जी की चिर साधना, जिन्हें शब्द के ठीक २ भाव में गुरुकुल के प्राण कहा जा सकता है। आर्य जनों द्वारा पूर्णतया समादृत होने योग्य है। गुरुकुल महोत्सव को सफल बनाने तथा गुरुकुल कीआर्थिक स्थिति ठीक करने के लिये उन्हें अर्थ चिन्ता से मुक्त करना चाहिये।

यमयमी

लेखक—श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार,

ऋग्वेद के दशम मण्डल का दशम सूक्त यमयमी सूक्त के नाम से विख्यात है। यह सूक्त आर्यसमाज तथा सनातन धर्मके बीच सदा विवाद का क्षेत्र बनारहा है। इसमें मुख्य विवाद का विषय यह है कि यमयमी पति पत्नी हैं अथवा भाई बहिन? सनातनधर्मियों का कहना है कि यमयमी भाई बहिन हैं, दूसरी ओर आर्यसमाज का पक्ष है कि यमयमी पति पत्नी हैं।

पहिले तो इस में व्याकरण शास्त्र से पूछें तो आर्यसमाज का ही पक्ष बलवान् ठहरता है, क्योंकि यम शब्दका यमी रूप पुंयोगादाख्यायाम् इस सूत्र के अनुसार 'यमस्य पत्नी' इस अर्थ में ही बन सकता है, परन्तु यहाँ कोई कहे कि यह लौकिक व्याकरण के नियम वेद में व्यत्यय को प्राप्त हो जाते हैं तो उसके लिए हम आज शतपथ ब्राह्मण का प्रमाण उपस्थित करते हैं। सो सनातनधर्मियों के लिए तो यह प्रमाण साक्षात् वेद का ही हुआ, क्योंकि वे तो ब्राह्मणको भी वेद मानते हैं। प्रमाण इसप्रकार है।

यमेन त्वा यम्या संविदानेत्यग्नि र्वै यम इयं यमी।
शतपथ ७. २. १. १०।

इस पर सायण भाष्य देखिये।

अग्निर्यमः तदधिष्ठितत्वात्, इयम् पृथिव्येव यमी अर्थात् अग्नियम हैं और पृथिवी यमी है।

अब देखना चाहिए कि अग्नि और पृथिवी का परस्पर सम्बन्ध क्या है।

सोऽकामयत प्रजापतिः। भूय एव स्यात् प्रजायेयेति सोऽग्निना पृथिवीं मिथुनं समभवत्तत आण्डं समवर्त्तत। शतपथ ६।१।२।१।

इस पर सायण भाष्य देखिए :—

प्रजापतिरिदं जगदधिकं भवेदिति कामयित्वा अग्निना पृथिवीं मिथुनत्वेन समयोजयत्। तयोः संयोगेन 'अण्डम्' जातम्।

प्रजापति ने, यह जगत् अधिक हो, यह कामना करके अग्नि को पृथिवी से मिथुन भाव से जोड़ दिया, उनके मैथुन से अण्डा उत्पन्न हुआ। अब भी क्या किसी को सन्देह हो सकता है कि यम यमी पति पत्नी हैं वा नहीं?

लेख बहुत छोटा है, परन्तु विद्वानों को विचारने के लिए सामग्री इसमें अवश्य है। अब वे इस पर क्या कहते हैं सो देखना है॥

चुने हुए फूल

—अच्छे विचार रखने वाले व्यक्ति को अकेलापन अनुभव नहीं होता।

—वह सभा नहीं जिसमें वृद्ध नहीं। वे वृद्ध नहीं जो धर्म्म का कथन नहीं करते और वह धर्म्म नहीं है जिसमें सत्य नहीं है और वह सत्य नहीं है जो छल से रहित नहीं है।

—पर निन्दा न करने वाला, बुद्धिमान सदा उत्तम आचरण करने वाला महा संकट को प्राप्त नहीं होता और सर्वत्र शोभा पाता है।

—पहली आयु में वह कार्य्य करे जिससे बूढ़ा होकर सुख से रह सके। जीवन भर वह करे जिससे मर कर सुख से रहे।

—अधर्म्म द्वारा प्राप्त धन से जो छिद्र ढांका जाता है वह उघड़ जाता है, उससे दूसरा छिद्र फटता है।

—जिसे जान बूझकर झूठ बोलने में लज्जा नहीं वह कोई भी पाप कर सकता है।

—क्षमा के समान इस जगत में दूसरा तप नहीं है।

महर्षि के जीवन के सम्बन्ध में कुछ विवादात्मक प्रश्न

(लेखक—श्रीयुत पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति जी)

पिता का नाम

महर्षि के जीवन के सम्बन्ध में खोज करने वाले पहले इतिहास लेखक जिन्होंने सारे भारत-वर्ष में दौरा करके इतिहास की सामग्री एकत्र की थी, आर्य पथिक पंडित लेखराम जी थे। उन्होंने महर्षि के पिता का नाम "अम्बाशंकर" लिखा था। उसके पश्चात् कुछ वर्षों तक महर्षि के जो जीवन प्रकाशित होते रहे उनमें अम्बाशंकर यही नाम दोहराया जाता रहा। कई वर्ष पीछे अजमेर के श्री रामविलास शारदा ने 'आर्य धर्मेन्द्र जीवन' के नाम से स्वामी जी की जो जीवनी प्रकाशित की उसमें इसी नाम का उल्लेख है। सन् १८५७ में बंगाल के विद्वान देवेन्द्रनाथ मुकर्जी महर्षि के जीवन के सम्बन्ध की घटनाओं की अधिक छान-बीन के लिए मौरवी गये, और वहां के अनेक राज्याधिकारियों तथा सद् गृहस्थों से मिले। खोज करने पर वह इस परिणाम पर पहुँचे कि महर्षि के पिता का नाम अम्बाशंकर नहीं था। महर्षि ने अपने संक्षिप्त जीवन चरित में अपने पिता का जो परिचय दिया है उससे चार बातें स्पष्ट होती हैं। (१) वह शराफे का काम करते थे (२) जमींदार थे (३) रियासत में जमींदार (वर्तमान परिभाषा में कलेक्टर) का काम करते थे और (४) शिवभक्त औदीच्य ब्राह्मण थे। अब मुकर्जी महाशय ने ऐसे व्यक्ति की तलाश की जिसमें यह विशेषताएँ थीं तो महर्षि के पिता का अम्बाशंकर यह नाम मानना असम्भव हो गया। मुकर्जी के पश्चात् अन्य भी कई विद्वानों ने मौरवी में आ कर छान बीन की तो यही परिणाम निकला कि महर्षि के पिता का नाम कर्सन जी लाल जी त्रिवेदी होना चाहिए। कर्सन जी के उत्तराधिकारी श्री पोपट लाल जी ने अपनी बहि दिखा कर यह सिद्ध कर दिया कि जो विशेषताएँ स्वामी जी ने अपने पिता में बतलाई थी वह कर्सन जी में विद्यमान थीं।

श्री पोपटलाल जी की बहियों के अतिरिक्त उस प्रदेश के कुछ प्रतिष्ठित निवासियों ने भी इस बात की पुष्टि की थी कि स्वामी जी के पिता का नाम कर्सन जी था। राजकोट निवासी श्री प्राणलाल विश्वनाथ शुक्ल ने श्री देवेन्द्र नाथ मुकर्जी के प्रश्न के उत्तर में लिखा था—

Rajkot. 14th December 1914.

Babu Devendranath Mukerji,

Dear Sir,

In answer to your questions the birth place and the parentage of Swami Dyanand Saraswati I have been able to frnish you with the following information wihch I gathered from Vallamji a Brahmin relative of Swamiji at Tankara.

I visited Tankara in the February of 1914 and I have been led to ascertain that the birth place of Swamiji is Tankara. And I found the exact place where the early life of Swamiji was spent. His name was Mulshanker and also Dyaram because it is a custom of the people of his province to give one more pet name to a son or a daughter,

Swami Dyanand's father's name was Kersonji and he was an Audiohya Brahmin of Samved. It is said that he belonged to Gautam Gotra there was no heir in the family of Swamiji and so the house and landed property (the field for cultivating grains) were given to his sister's heir and at present in his house lives Brahmin Popat the son of Kersonji whose father was Bogha the son of Mangalji to whom their heirship was bestowed by Kersonji.

I hope this information will be of some use to you.

Your's sincerely,
(Sd.) Pran Lal V. Shukla,
Manager, Saraswati stores.

प्रिय महोदय,

आपने स्वामी दयानन्द सरस्वती के जन्म स्थान और माता-पिता के सम्बन्ध में जो प्रश्न किए हैं उनके सम्बन्ध में मैंने टंकारा में स्वामी जी के एक बल्लभ जी नाम के ब्राह्मण रिश्तेदार से जो जानकारी प्राप्त की है वह निम्नलिखित है।

मैं १९१४ के फरवरी मास में टंकारा गया था। वहां जाकर मैं इस निश्चय पर पहुँचा कि स्वामी जी का जन्म स्थान टंकारा ही है और मैं ठीक उस जगह पर भी पहुँच गया जहां स्वामी जी का प्रारम्भिक जीवन व्यतीत हुआ था। उनका नाम मूल शंकर था, और दूसरा नाम दयाराम भी था क्योंकि उस प्रान्त के निवासियों में यह रिवाज है कि वह पुत्र और पुत्री का दूसरा नाम भी रखते हैं। स्वामी दयानन्द के पिता का नाम कर्सन जी था और वह सामवेदी औदिच्य ब्राह्मण थे। कहा जाता है कि उनका गोत्र गौतम था। स्वामीजी के परिवार में कोई (पुरुष) उत्तराधिकारी नहीं था इस कारण घर और भूमि (अनाज पैदा करने के खेत) स्वामी जी की बहन के उत्तराधिकारियों को मिल गये और अब उनके घर में पोपट नाम का ब्राह्मण रहता है, जो बोघा के पुत्र कल्याण जी का लड़का है। स्वामी जी के पिता कर्सन जी ने बोघा के पिता मंगल जी को अपना उत्तराधिकारी स्वीकार कर लिया था।

मैं आशा करता हूँ कि यह जानकारी आप के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

भवदीय
प्राणलाल वी० शुक्ल

श्रीयुत गणपति केशव राम शर्मा ने बहुत सा परिश्रम करके स्वामी जी के जन्म स्थान तथा पिता के सम्बन्ध में तहकीकात करके जो परिणाम निकाले थे उससे भी श्री प्राणलाल जी के ऊपर दिए हुए पत्र की पुष्टि होती है। आपने बम्बई प्रान्त की आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री को जो पत्र लिखा था उसका सम्बद्ध भाग हम यहां उद्धृत करते हैं।

"स्वामी जी टंकारा के वतनी और औदीच्य ब्राह्मण थे। उनके पिता जी टंकारा के कामदार अर्थात् वही वट दार थे। उस समय टंकारा ग्राम मोरोबा पन्त उर्फ भाऊ साहब के पास गिरवी था और उस काल में वे (स्वामी जी के पिता जी) वही वटदार का काम करते थे। इसके सिवाय टंकारा में जो कुबेरनाथ जी महादेव का मन्दिर है वह स्वामी जी के पिताजी ने बनवाया है और उसकी मरम्मत भी उन्हीं ने कराई है। इस सम्बन्ध में यदि पूर्ण निश्चय करना हो तो उस महादेव की पूजा करने वाले के नाम कुछ जमीन भी है, उसकी आमदनी आज कल रावल पोपट लाल कल्याण जी, जो कि वर्तमान में पूजा करते हैं, को मिलती है। उसके अतिरिक्त मुझे यह भी विदित हुआ है

(शेष पृष्ठ ३७९ पर देखें)

एक अतिमहत्त्व पूर्ण विषय विचार और सम्मत्यर्थ वृक्षों में जीव

लेखक—श्री आचार्य विश्वश्रवाः जी मंत्री सार्वदेशिक धर्मार्य सभा देहली

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के सम्मुख यह विषय बहुत दिन से विचारार्थ प्रस्तुत है कि वृक्षों में जीव है या नहीं। हमारी विचारधारा का स्वरूप इस समय यह है कि महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती का इस सम्बन्ध में क्या निश्चय है। आर्यविद्वानों में आरम्भ से ही यह विवाद का विषय रहा है। हम आर्यविद्वानों तथा महर्षि के ग्रन्थों के स्वाध्याय करने वालों की विस्तृत सम्मति चाहते हैं। धर्मार्य सभा के सम्मुख उस की बैठक ता० २९-४-५४ में सत्यार्थ प्रकाश के द्वादश समुल्लास का निम्नलिखित प्रकरण आया है—

"देखो पीड़ा उन्हीं जीवों को पहुँचती है जिनकी वृत्ति सब अवयवों के साथ विद्यमान हो, इसमें प्रमाणः—

"पञ्चावयवयोगात् सुखसंवित्तिः"

॥ सांख्य० अ० ५। सू० २७॥

जब पांचों इन्द्रियों का पांचों विषयों के साथ सम्बन्ध होता है तभी सुख वा दुःख की प्राप्ति जीव को होती है जैसे बधिर को गाली-प्रदान, अन्धे को रूप वा आगे से सर्प व्याघ्रादि भय दायक जीवों का चला जाना शून्य बहिरी वाले को स्पर्श, पिन्नस रोग वाले को गन्ध और शून्य जिह्वा वाले को रस प्राप्त नहीं हो सकता इसी प्रकार उन जीवों की भी व्यवस्था है। देखो जब मनुष्य का जीव सुषुप्ति दशा में रहता है तब उसको सुख वा दुःख की प्राप्ति कुछ भी नहीं होती, क्योंकि वह शरीर के भीतर तो है परन्तु उसका बाहर के अवयों के साथ उस समय सम्बन्ध न रहने से सुख दुःख की प्राप्ति नहीं कर सकता और जैसे वैद्य वा आज कल के डाक्टर लोग नशे की वस्तु खिला वा सुंघा के रोगी पुरुष के शरीर के अवयों को काटते वा चीरते हैं उसको उस समय कुछ भी दुःख विदित नहीं होता वैसे वायुकाय अथवा *अन्य स्थावर शरीर वाले जीवों को सुख वा दुःख प्राप्त कभी नहीं हो सकता*। जैसे मूर्छित प्राणी सुख दुःख को प्राप्त नहीं हो सकता वैसे वे वायुकायादि के जीव भी अत्यन्त मूर्छित होने से सुख दुःख को प्राप्त नहीं हो सकते फिर इनको पीड़ा से बचाने की बात सिद्ध कैसे हो सकती है। जब उनको सुख दुःख की प्राप्ति ही प्रत्यक्ष नहीं होती तो अनुमानादि यहां कैसे युक्त हो सकते हैं?

(प्रश्न) जब वे जीव हैं तो उनको सुख दुःख क्यों नहीं होगा (उत्तर) सुनो भोले भाइयो जब तुम सुषुप्ति में होते हो तब तुम को सुख दुःख प्राप्त क्यों नहीं होते? सुख दुःख की प्राप्ति का हेतु प्रसिद्ध सम्बन्ध है, अभी हम इसका उत्तर दे आये हैं कि नशा सुंघा के डाक्टर लोग अंगों को चीरते फाड़ते और काटते हैं। जैसे उनको दुःख विदित नहीं होता इसी प्रकार अति मूर्छित जीवों को सुख दुःख क्योंकर प्राप्त होवें क्योंकि वहां प्राप्ति होने का साधन कोई भी नहीं।

(प्रश्न) देखो निलोति अर्थात् जितने हरे शाक पात और कन्दमूल हैं उनको हम लोग नहीं खाते क्योंकि निलोति में बहुत और कन्दमूल में अनन्त जीव हैं जो हम उनको खावें तो उन जीवों को मारने और पीड़ा पहुँचाने से हम लोग पापी हो जावें।

(उत्तर) यह तुम्हारी बड़ी अविद्या की बात है क्योंकि हरित शाक खाने से जीव का मरना, उनको पीड़ा पहुंचनी क्योंकर मानते हो?

भला जब तुम को पीड़ा प्राप्त होती प्रत्यक्ष नहीं दीखती है और जो दीखती है तो हमको भी दिखलाओ; तुम कभी न प्रत्यक्ष देख वा हमको दिखा सकोगे जब प्रत्यक्ष नहीं तो अनुमान उपमान और शब्द प्रमाण भी कभी नहीं घट सकता फिर जो हम ऊपर उत्तर दे आये हैं वह इसका भी उत्तर है क्योंकि जो अत्यन्त अन्धकार महासुषुप्ति और महानशा में जीव हैं इनको सुख दुःख की प्राप्ति मानना तुम्हारे तीर्थंकरों की भी भूल विदित होती है जिन्होंने तुमको ऐसी युक्ति और विद्याविरुद्ध उपदेश किया है। भला जब घर का अन्त है तो उसमें रहने वाले अनन्त क्योंकर हो सकते हैं जब कन्द का अन्त हम देखते हैं तो उसमें रहने वाले जीवों का अन्त क्यों नहीं? इससे यह तुम्हारी बात बड़ी भूल की है"

सत्यार्थ प्रकाश १२ समुल्लास
शताब्दी संस्करण पृष्ठ ६१६-६१८

सत्यार्थ प्रकाश के उपर्युक्त उद्धरण से यह प्रतीत होता है कि ऋषिवर दयानन्द की दृष्टि में वृक्षों में जीव है। स्वाध्यायशील विद्वद्गण से प्रार्थना है कि ऋषि के ग्रन्थों के आधार पर वे इस विषय पर दिग्दर्शन करने का अनुग्रह करें। परन्तु जिस व्यक्ति ने पहले से अपना कोई आग्रह बना लिया है वह ऋषि के ग्रन्थों में खेंचातानी करने का यत्न करेगा। अपना विचार पहले से स्थिर न करके खुले मस्तिष्क से आग्रह शून्य होकर ऋषि के ग्रन्थों का स्वाध्याय करके जानने का यत्न हमको करना चाहिये कि ऋषि दयानन्द क्या मानते थे।

महर्षि दयानन्द जी सब ऋषियों के प्रतिनिधि हैं जो सब ऋषि मानते होंगे वही ऋषि दयानन्द का सिद्धान्त होगा अन्य ऋषियों के ग्रन्थों में प्रक्षेप अर्थ दुरूहतादि के कारण उनका अभिप्राय समझने में कुछ कठिनाई होती है पर ऋषि दयानन्द के ग्रन्थ प्रक्षेप से शून्य और साधारण भाषा में है। अतः ऋषि के ग्रन्थों द्वारा हम समस्त ऋषियों को समझनेमें समर्थ हो सकते हैं।

यह एक साधारण निर्णय नहीं होगा अतः समस्त आर्य जगत के व्यक्तियों की संमतियां इस सम्बन्ध में प्राप्त होनी आवश्यक हैं आशा है इस सम्बन्ध में उपेक्षा न करके अपने विचार शीघ्र भेजने का अनुग्रह किया जावेगा।

(पृष्ठ ३७७ का शेष)

कि कल्याण जी रावल के पिता श्री बोधा रावल जी स्वामी दयानन्द जी की बहिन की कन्या के पुत्र थे। उस समय, जब कि स्वामी जी घर से प्रव्रजित हो गये और स्वामी जी के पिता जी का कोई उत्तराधिकारी नहीं रहा तो उन्होंने अपनी कन्या को ही अपना वारिस करार दिया था। और चूंकि उनकी कन्या भी बिना वारिस के ही स्वर्ग गामिनी हो गई तो इसलिए उनकी कन्या की पुत्री के पुत्र बोधा रावल इसके उत्तराधिकारी ठहराये गये। उनके पुत्र के कल्याण जी और कल्याण जी के पुत्र पोपट लाल जी इस समय टंकारा में उपस्थित हैं।"

श्री देवेन्द्र नाथ मुकर्जी के पश्चात् आचार्य रामदेव जी तथा आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई के अधिकारियों ने भी जो छानबीन की उनसे श्री मुकर्जी के निर्णीत किए हुए परिणामों की ही पुष्टि हुई।

स्वामी जी ने अपने आत्म चरित में बतलाया है कि उनके पिता शिवभक्त थे। उसकी पुष्टि कर्सन जी की एक पुरानी बही के पृष्ठ ३० के निम्न लिखित उल्लेख से होती है।

"श्री सही जोउजा श्री पृथ्वी राज जी, कसन जी लाल जी त्रिवेदी को लिख देते हैं कि आपने टंकारा में शिवजी का जो मन्दिर बनवाया है उसकी पूजा करने के कारण आपको १२ बीघे जमीन हम देते हैं। और जब तक आप सदा शिव की पूजा करें तब तक इसकी आमदनी आपको ईश्वर पूजा के निमित्त शिवार्पण की जाती है। उस पर हमारा अब कोई अधिकार नहीं।

* धर्म के स्तम्भ *

(४)

सत्य

लेखक :—रघुनाथ प्रसाद पाठक

सत्य परमात्मा का स्वरूप

सत्य परमात्मा का स्वरूप, समस्त ज्ञान का आधार और समाज का सीमेंट होता है। बाल्मीकि रामायण में इस भाव की अभिव्यक्ति इस प्रकार पाई जाती है :—

सत्य ही ओंकार स्वरूप ब्रह्म है। सत्य के ही सहारे धर्म की स्थिति है। अविनाशी वेद सत्य के मूर्तिमान् स्वरूप हैं। सत्य से बढ़ कर और कोई धर्म नहीं है। (अयोध्या० सर्ग १४ श्लोक ६-७)

सत्य मनुष्य को इस लोक में अविनाशी ब्रह्म-लोक प्राप्त करा देता है। संसार के सब धर्म सत्य के ही सहारे टिके हुये हैं। सत्य ही ईश्वर है। सत्य से बढ़ कर और कोई भी पद नहीं है। दान, यज्ञ, होम, तप और वेद इन सबका मूल सत्य है। इस कारण प्रत्येक मनुष्य को सत्यव्रती होना चाहिये।

(अयोध्या० सर्ग १०६ श्लोक ११-१४)

सत्य की महिमा

धर्म के तत्वदर्शियों ने सत्य को सर्वश्रेष्ठ बतलाया है। सत्य के सहारे पर ही संसार का विशद स्वरूप कायम है। जीवन में से सत्य के पृथक् हो जाने पर जीवन चन्द्रमा विहीन रात्रि के समान कान्तिहीन हो जाता है। मनुष्य में पर-मात्मा की कोई निशानी होती है तो वह सत्य ही है जो जीवन का प्रकाश होता है। सत्य एक और अद्वितीय होता है। सत्य से प्रेम करना परमात्मा के साथ प्रेम करना समझा जाता है।

मनुष्य का परम पुरुषार्थ देव बनना है

देव वह होता है जो सत्य माने, सत्य बोले और सत्य करे। अतः सत्य के रंग में रंग जाने पर मनुष्य न केवल मनुष्य ही अपितु देव बन जाता है और देव बनना ही मनुष्य का परम पुरुषार्थ होता है।

सत्य और प्रेम की अजेय शक्ति

सत्य के साथ प्रेम का सम्मिश्रण हो जाने पर इसकी शक्ति अजेय हो जाती है। भारतीय स्वतन्त्रता के संघष में अंग्रेजों का पशुबल महात्मा गान्धी के सत्य और प्रेम की शक्ति को परास्त न कर सका। अंग्रेजों की कूटनीति और दमन नीति, सत्य की सीधी सादी गति को कुंठित न कर सकीं।[1]

सत्य की रक्षार्थ कम बोलना चाहिये

प्लेटो का कहना है कि सत्य के सुनने अथवा बोलने के समान और कोई वस्तु आनन्द दायिनी नहीं होती। यही कारण है कि ईमानदार और सच्चे व्यक्ति के साथ संभाषण करने में बड़ा आनन्द आता है जो न तो कोई बात धोखा देने के इरादे से कहता है और न सुनता है। छल-रहित सीधा सादा सत्य थोड़े से शब्दों में ही बहुत कुछ कह दिया जाता है। रघुवंशियों के

---

१. ओ३म्। ऋतं चिदिरव ऋतमिच्चिद् ध्यृतस्य धारां अनु तृन्धि पूर्वीः।
नाहे यातु महासानद्वयेन ऋतंसपा स्वरूषस्य वृष्णः। ऋग्वेद०-५। १२। २॥

जीवन में व्याप्त इस मर्यादा का वर्णन करते हुये महाकवि कालिदास अपने रघुवंश काव्य में लिखते हैं कि वे सत्य की रक्षार्थ बहुत कम बोलते थे। यही सज्जन पुरुषों की रीति है।[२]

सत्य का परिणाम सुखकारक होता है

सत्य का परिणाम अमिट सुख की प्राप्ति होता है और यह स्वर्ग सुख-विशेष की सीढ़ी होता है।[३]

सत्य को क्रिया में लाने के लिये साधन भी उत्तम होने चाहिये। छलयुक्त कर्मों से तात्कालिक सिद्धि भले ही हो जाये उनसे बाद में मन को पीड़ा अवश्य होती है।

पाश्चात्यों का सिद्धान्त है कि उद्देश्य उत्तम होना चाहिये, साधन चाहे कैसे भी हों। यह हीन मनोभावना उनकी उस संस्कृति की देन है जो सिद्धान्त रूप में सत्य का समर्थन करती परन्तु व्यवहार में उसकी घोर अवहेलना करती है। हीन साधनों से प्राप्त सिद्धि से सत्य और न्याय का तिरस्कार होता है अतः इस सिद्धि की भूलकर भी आकांक्षा न करनी चाहिये। बेईमानी, छल-कपट, निन्दा, चुगली, चापलूसी और झूठ के व्यवहार से सत्य कृत्रिम रूप धारण कर लेता है। सत्य से उतना लाभ नहीं होता जितना बनावटी सत्य से हानि होती है। अतः सत्य की प्रतिष्ठा के लिये मानव को छलकपट आदि के विष से अपने आचरण को अछूता रखना चाहिये।

आज पग पग पर जीवन के प्रत्येक व्यापार में सत्य की अवहेलना और असत्य की मान्यता देख पड़ती है। तभी तो समाज की जड़ें खोखली होती जा रही है और साथ ही उसका भविष्य अंधकार मय बनता जा रहा है। सत्य को प्रतिष्ठित करना, उसकी खोज करना और समाज के मानसिक उत्थान में योग देना प्रत्येक पीढ़ी का आवश्यक कर्तव्य होता है। इस दिशा में हमारा लेखा बड़ा निराशाजनक है। यदि हमने इस तथ्य पर उचित ध्यान न दिया तो निश्चय ही हम आने वाली सन्तान के अभिशाप से बच न सकेंगे।

सत्य का उत्कृष्ट स्वरूप और उसकी खोज

सत्य का सर्वोत्कृष्ट स्वरूप वह होता है जो विश्व व्यापी अनुभव में आने पर भी खरा और अपरिवर्तित सिद्ध हो। सत्य पर किसी एक व्यक्ति या राष्ट्र का सर्वाधिकार नहीं होता और न हो सकता है। सत्य की खोज बड़ा श्रेष्ठ कार्य होता है और उसका प्रकाश करना कर्तव्य होता है। सत्य को जानने के लिये हृदय में सच्ची तड़प होनी चाहिये और सब से बढ़ कर उसे क्रिया में लाने का यत्न होना चाहिये। क्रिया में आने पर सत्य मनुष्य के जीवन का विशेष अंग बन जाता है। सत्य का बीज शुद्ध मन में जमता है अतः सत्य के द्वारा ही मन की शुद्धि करनी चाहिये।

सत्य की खोज करने वाले अनेक बुद्धिमान व्यक्ति हो सकते हैं परन्तु विरोध के बवंडर में सत्य पर आरूढ़ रहने वाले बिरले ही होते हैं। इटली के समाज सुधारक संत सावोनरोला ने ईसाई चर्च और राज्य दोनों में व्याप्त दुराचार और भ्रष्टाचार के विरुद्ध आवाज उठाकर उनमें अपेक्षित सुधार किया। चर्च का सुधार करने और सत्य की ज्योति प्रज्वलित करने के कारण स्वार्थियों और समाज के मूर्ख शत्रुओं के द्वारा उसका विरोध हुआ। उसके शत्रुओं ने उसका सामाजिक बहिष्कार किया और अन्त में उसे फांसी लगाकर मार दिया परन्तु संत अपने सत्य-प्रचार से उपराम न हुआ। स्वर्ग का पासपोर्ट देने

---

२. त्यागाय संभृतार्थानां सत्याय मित भाषिणाम् (रघुवंशम् प्रथम सर्ग श्लोक ७)

३. सत्य स्वर्गस्य सोपानं पारावारस्य नौरिव—विदुर नीति।

के बहाने अज्ञान और अन्ध विश्वासों में निमग्न भोली-भाली जनता का धन एवं सर्वस्व लूटने वाले महान् पोप की अलौकिकता का विरोध करने, अपने पुरुषार्थ तथा सत्कर्मों से व्यक्ति के मुक्ति प्राप्ति के अधिकार की घोषणा करने, और दुराचार, पापाचार एवं अन्धकार में आवृत्त ईसाई चर्च में अपेक्षित सुधार लाने के कारण महान् लूथर के विरुद्ध विरोध का तूफान खड़ा किया गया। उसका सामाजिक बहिष्कार हुआ। पोप के क्रोध और पशुबल ने अग्निवर्षा की और लूथर पर उग्र प्रहार किये परन्तु वह महान् वीर अडिग खड़ा रहा और अन्त में उसके सत्सिद्धांतों की विजय हुई।

सूर्य पृथ्वी के चारों ओर नहीं घूमता और वह संसार का केन्द्र है उस सत्य की खोज एवं प्रचार के कारण गैलीलियों का विरोध हुआ क्यों कि यह सत्य ईसाई मत के प्रमुख ग्रन्थ बाइबिल के इस असत्य के विरुद्ध था कि सूर्य पृथ्वी की परिक्रमा करता है। पहले तो उसने हंसी उड़ाये जाने के भय से अपने सत्य को छुपाये रखा परन्तु बाद में साहस करके उसका प्रचार किया परन्तु ईसाई अधिकारियों ने उस पर दबाव डालकर उसी से इस सत्य का खंडन करा दिया और उसे नजरबन्द कर दिया। सत्य की आवाज बन्द की जा सकती है परन्तु सत्य मिटाया नहीं जा सकता। कुचले जाने पर भी उसके बीज अंकुरित हो जाते हैं। आज उपर्युक्त सिद्धांत ईसाई जगत् में सर्वत्र माना जाता है।

सुकरात ने एकेश्वरवाद और बुद्धिवाद का प्रचार करके यूनान में ज्ञान की ज्योति जगाई जिसके कारण उस पर मूर्ख लोगों ने नास्तिकता और यूनान के नवयुवकों को पथभ्रष्ट करने का आरोप लगाकर उसे समाप्त करने का षड्यन्त्र रचा। उसने जीवन की बाजी लगाकर भी अपने सत्सिद्धान्तों का प्रचार एवं प्रसार करना जारी रखा। अन्त में प्रसन्नता पूर्वक जहर का प्याला पीकर उसने अपने सिद्धान्तों की रक्षा की। शंकर तथा आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द ने अपने को मिटाकर वैदिक सूर्य के चारों ओर छाये हुये अविद्या, अज्ञान, मिथ्या विश्वास और कुरीतियों के बादलों को हटाकर सत्य का प्रकाश दिखाया। संसार के महापुरुष सत्य को अपने लक्ष्य में रखते हैं। यदि वे एक ओर अपनी सत्य निष्ठा के कारण संसार के लोगों की सहानुभूति खोते हैं तो दूसरी ओर व परमात्मा के निकट हो जाते हैं।

सत्य आचरण का विषय

सत्य आचरण का विषय है। आचरण में आये बिना सत्य का गौरव प्रतिष्ठित नहीं होता और न मानव का कल्याण ही सिद्ध होता है। मन, वचन और कर्म में सादृश्य का होना आदर्श आचरण समझा जाता है। इस आदर्श की रक्षा के लिये मनुष्य को शुभ विचारों से परिपूर्ण होना आवश्यक होता है। यदि हम किसी से कोई प्रतिज्ञा करें तो उसका यथा समय पालन होना चाहिये। संसार के लोग प्रायः सत्य को अपने पक्ष में देखना चाहते हैं परन्तु बहुत कम व्यक्ति सत्य के पक्ष में होते हैं। इस उपालम्भ से बचने का हम सबका प्रयत्न होना चाहिये सत्याचरण के मार्ग में दुष्भावनायें, कामान्धता और द्वेष प्रबल बाधायें होती हैं। सत्य के प्रेमी जनों को अपने को इनके ऊपर रख कर और मन वचन, तथा कर्म में ईमानदारी से पवित्र रह कर उत्तम जीवन का निर्माण करना चाहिये।

सत्य की सीमायें

नीतिकार ने ठीक कहा है कि बोलने से न बोलना अच्छा है बोलने से सत्य बोलना श्रेष्ठ है सत्य बोलने से प्रिय सत्य बोलना उत्तम है।

धर्मयुक्त सत्य और प्रिय बोलना सर्वोत्कृष्ट है।[४] कुछ अवस्थाओं में समाज हित की दृष्टि से प्रायः पूर्ण सत्य का प्रकाश वर्जित होता है। समय से पूर्व और अनधिकारियों पर सत्य का प्रकाश हानिकारक ही नहीं अपितु अवैध माना जाता है। सत्य का निरादर न केवल मिथ्या भाषण एवं कर्म से ही अपितुं समय पर सत्य को छिपाने वा सत्य के प्रति उदास होने से भी होता है। यदि सत्यव्रत भीष्म पितामह दुर्योधन की दुर्नीति एवं पांडवों के प्रति किये गये अत्याचारों के विरुद्ध खड़े होकर सत्य का मंडन करते तो महाभारत की विभीषिका टल जाती और भारत महाभारत के अभिशापों से बच जाता।

सत्य की अद्भुत शक्ति का चमत्कार

स्काटलेंड के लोगों ने इंगलैंड के राजा के विरुद्ध विद्रोह किया। विद्रोह के असफल हो जाने पर विद्रोहियों को बड़ी निर्दयता पूर्वक दंडित किया गया। लोग कतार में खड़े किये और गोली से उड़ा दिये जाते थे। एक बार एक पंद्रह वर्षीय लड़का गोली से उड़ाये जाने के लिये कतार में खड़ा किया गया। सेनापति को उस बालक पर दया आई। उसने कहा "बच्चे, यदि तुम क्षमा मांगलो तो तुम मृत्यु दंड से बच सकते हो।" लड़के ने क्षमा मांगने से इन्कार कर दिया। इस पर सेनापति ने लड़के से कहा "मैं तुम्हें २४ घटे की छुट्टी देता हूँ। तुम्हारा कोई प्रिय जन हो तो जाकर उससे मिल आओ।" लड़का अपनी अकेली मां से मिलने घर चला गया। जाकर देखा कि मां बेहोश पड़ी है। मां को होश में ले आने पर कहा "मां, मैं आ गया हूँ।" अपने एकलौते बेटे का मुंह देख कर और यह सोच कर कि पुत्र की जान बच गई है, मां को अपार हर्ष हुआ। उसने बालक को गोद में बिठाकर उसे जी भर प्यार किया। समय समाप्त होता जानकर बालक जाने की तैयारी करने लगा। मां ने पूछा "बेटा कहां जाते हो?" बालक की आंखों में आंसू आगये। हृदय को संभाल कर उत्तर दिया "मा मुझे २४ घटे की छुट्टी मिली थी। मृत्यु दंड पाने के लिये कैम्प को जाता हूँ। "ईश्वर तुम्हारा रक्षक है।" मां को कुछ कहने का अवसर दिये बिना ही बालक घर से निकल गया और ठीक समय पर सेनापति के पास पहुँच गया। सेनापति को उस बालक के लौटने की आशा न थी। बालक की सचाई से सेनापति पर इतना प्रभाव पड़ा कि उसने तत्काल उसकी मुक्ति की आज्ञा जारी करदी।

वस्तुतः सत्य से चरित्र में बल आता, मनुष्य का विश्वास बढ़ता और कठोर से कठोर हृदय में भी कोमलता और दया का संचार हो जाता है।

उपसंहार

सत्य चाहे कहीं से भी प्राप्त हो, प्राप्त करना चाहिये। यह प्रवृत्ति मनुष्य और समाज दोनों के विकास में परम सहायक होती है। मनुष्य वस्त्रों से, आभूषणों से और नाना प्रकार के सौन्दर्य प्रसाधनों से अपने को अलंकृत करने में व्यस्त रहते हैं परन्तु इनकी उपयोगिता होते हुये भी यह अलंकार कृत्रिम हैं। सच्चा और स्वाभाविक अलंकार सत्य होता है। बिना सत्य के अर्थात् ठीक बनावट के न चेहरा सुन्दर हो सकता है न बिना ठीक अनुपात के भवन भव्य हो सकता है न बिना ठीक स्वर एवं ताल के गाना मधुर हो सकता है और न बिना सत्य वा मौलिकता के कविता वा गल्प पूर्ण और प्रभावशालिनी हो सकती है। इसलिये हमें सच्चे अलंकार सत्य से ही अपने को अलंकृत करना चाहिये। इसी में हमारी शोभा और हमारा कल्याण है।

---

४. अव्याहृतं व्याहृताच्छ्रेय आहुः सत्यं वदेद्व्याहृतं तद् द्वितीयम्।
प्रियं वदेद्व्याहृतं तत्तृतीयं धर्म्मं वदेद्व्याहृतं तच्चतुर्थम्॥ —विदुर नीति चतुर्थ अध्याय श्लोक १२

साम्यवाद और वैदिक आदर्श

(ले॰ श्री भवानीलाल 'भारतीय' एम॰ ए॰ सिद्धान्त वाचस्पति)

साम्यवाद की विचारधारा नवीन नहीं है। अत्यन्त पुरातन काल से ही मनुष्य समाज में साम्यवादी विचारों का प्रचार रहा है। सृष्टि के सर्वाधिक प्राचीन धर्म ग्रन्थ वेदों में मनुष्यसमाज के लिये निम्न उपदेश पाया जाता है—*अजेष्ठासो अकनिष्ठासो एते संभ्रातरो वावृधुः सौभगाय। युवा पिता स्वपा रुद्र एषां सुदुघाप्रश्निः सुदिना-मरुद्भ्यः॥* ऋ॰ ५। ६०। ५ अर्थात् हे मनुष्यो तुममें न कोई बड़ा है, न छोटा। तुम सब भाई भाई हो, अपने सौभाग्य की वृद्धि के लिये मिल कर आगे बढ़ो। श्रेष्ठ रक्षा करने वाला सब का पिता उत्तम कर्मशील ईश्वर है। उत्तम दूध देने वाली माता भूमि है। ऋग्वेद का अन्तिम सूक्त संज्ञान सूक्त कहलाता है, इसे संगठन सूक्त भी कहते हैं। इसमें भी *"संगच्छध्वं संवदध्वं संवो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथापूर्वे संजानाना उपासते।"* आदि मंत्र आते हैं जिनमें मनुष्यों को मिलकर चलने, एक भाषा बोलने, और एक जैसे मन वाले होकर आचरण करने की शिक्षा दी गई है इस प्रकार के अनेकों सूक्त वेदों से उद्धृत किये जा सकते हैं जो मनुष्य समाज को वास्तविक एकता और साम्यवाद की शिक्षा देते हैं। *"समानी प्रपा सहवो अन्न भागः समाने योक्त्रे सहवो युनज्मि।"* अथर्व ३। ३०। ६ आदि मंत्रों में जल पीने के स्थान और भोजन शाला के एक होने का विधान किया गया है और यह कहा गया है कि सब मनुष्यों को ईश्वर ने एक ही जुये में जोड़ा है जिससे वे मिलकर ईश्वर की पूजा कर सकें और इस प्रकार मिलकर रहें जैसे पहिये की धुरी में अरे जुड़े रहते हैं।

वैदिक साम्यभावनाओं का यह प्रवाह केवल वैदिक संहिताओं तक ही सीमित नहीं रहा, अपितु ब्राह्मणों, उपनिषदों और स्मृति ग्रन्थों में भी इसके यत्र तत्र दर्शन होते रहते हैं। यद्यपि लोग ऋषियों के गम्भीर आशय से अनभिज्ञ होने के कारण मनुस्मृति आदि आर्ष ग्रन्थों के महत्व को भली भांति हृदयंगम नहीं कर पाते हैं, परन्तु यदि पूर्वाग्रह को हटा कर इन ग्रन्थों के लेखकों की सहायता और मानव प्रेम का विचार किया जाय तो पता लगेगा कि इन ग्रन्थों में मानव बंधुत्व और साम्यभावना का निश्चित रूप से प्रतिपादन किया गया है।

वैदिक साम्यवाद के आदर्श से पाठकों को यत्किंचित परिचित करा देने के पश्चात् हम प्रचलित साम्यवाद के विषय में भी थोड़ा लिखना आवश्यक समझते हैं। वर्तमान साम्यवाद पश्चिमी विचारधारा की उपज है। यदि प्रकृटतः देखा जाय तो इस विचारधारा का सब से बड़ा पुरस्कर्ता जर्मनी का कार्ल मार्क्स ही विदित होता है, परन्तु पश्चिम में साम्यवाद के विचार इससे भी पहले विद्यमान थे। मार्क्सवादी विद्वानों ने साम्यवाद के उन प्राचीन विचारों को "काल्पनिक साम्यवाद" के नाम से अभिहित किया है, क्योंकि वे केवल मार्क्स की शिक्षाओं को ही वास्तविक यथार्थ मानते हैं। कार्ल मार्क्स जर्मनी के एक यहूदी वकील का लड़का था। अपने उग्र और क्रान्तिकारी विचारों के कारण वह जर्मनी से निष्कासित कर दिया गया। उसका शेष जीवन विद्रोहियों के शरणस्थान इंगलैण्ड की राजधानी लंदन में व्यतीत हुआ, जहां उसने अपनी पत्नी जैनी के साथ अपने जीवन के घोर कष्ट के दिनों को बिताया।

मार्क्स बड़ा भारी स्वाध्याय प्रेमी और परिश्रमी विद्वान था। वह अपने जीवन के अधिकांश समय को अध्ययन में व्यतीत करता था। विवरणों से पता चलता है कि उसके जीवन के कई वर्ष ब्रिटिश म्यूजियम के पुस्तकालय में समाप्त हुये। वहां वह सूर्योदय से सूर्यास्त तक बैठा २ राजनीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र, इतिहास आदि के ग्रन्थों का स्वाध्याय करता रहता था।

मार्क्स ने अपने मित्र एंगेल्स के सहयोग से द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की विचारधारा का प्रवर्तन किया। यह ऐतिहासिक भौतिकवाद (Historical Materialism) के नाम से भी प्रसिद्ध है। मार्क्स ने इतिहास की आर्थिक आधार पर व्याख्या की है और यह सिद्ध किया है कि मनुष्य की प्रवृत्तियों और प्रगतियों का एक मात्र मूलाधार अर्थ है। अर्थ ही मनुष्य की राजव्यवस्था, समाज व्यवस्था, नैतिकता और धार्मिकता का आधारभूत तत्व है। मार्क्स ने इन सिद्धान्तों का प्रतिपादन अपने Das Capital, Communist Manifesto आदि ग्रन्थों में किया है जो साम्यवादी विचारधारा के मूल ग्रन्थ हैं और साम्यवादियों की Bible के नाम से विख्यात हैं।

मार्क्स के दर्शन का आधार भौतिकवाद है। उसकी विचारधारा पर यूरोप के प्रसिद्ध दार्शनिक हीगल का प्रभाव पाया जाता है। मार्क्स ने ईश्वर और जीव की अलौकिक और अभौतिक सत्ता को अस्वीकार कर दिया और प्रकृति को ही सृष्टि चक्र का मूल तत्व मान कर उसकी व्याख्या की है। इसे क्रिया प्रतिक्रिया और समता (Thesis; Anti-thesis Synthesis) का सिद्धान्त भी कहते हैं अर्थात् प्रचलित व्यवस्था में विकृति उत्पन्न होने पर उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप विद्रोही तत्व उत्पन्न होते हैं और प्राचीन और नवीन उदीयमान व्यवस्था का संघर्ष होता है, जिसके फलस्वरूप एक आदर्श समाज व्यवस्था का जन्म होता है। कालान्तर में वह प्रचलित व्यवस्था ही समय की आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ होती है, और जीवन की प्रगति से विरुद्ध सिद्ध होती है अतः प्रगतिशील तत्वों का इसमे विरोध हो जाता है, और फलस्वरूप नई व्यवस्था उत्पन्न होती है। यह चक्र मनुष्य जाति की उत्पत्ति के समय से लेकर आज तक अबाधगति से चल रहा है।

मार्क्स चार्ल्स डार्विन के विकास सिद्धान्त (Theory of Evolution) को स्वीकार करता है। मनुष्य में आज जो चेतना दिखाई दे रही है वह प्रकृति का ही परिणाम है। जीवन-तत्व जिसे प्राणिविज्ञान की भाषा में Protoplasm कहते हैं, प्रकृति के तत्वों से ही उत्पन्न हुआ है। आरम्भ में प्राणी, जड़ जगत की अन्य वस्तुओं से भिन्न नहीं था। वनस्पति और प्राणियों में अत्यधिक समानता थी 'एमीबा'' 'आदि जीव' था जो एक सैल (Cell = कोष) का बना हुआ था। उसमें नर और मादा का भेद नहीं था। धीरे २ जीव "एमीबा" से तरक्की करता गया। मेंढ़क, छिपकली, मछलियां आदि अनेक वर्गों में होता हुआ वह बन्दर के रूप में आया और मनुष्य भी बना। डार्विन ने अपने सिद्धान्त को योग्यतम की विजय (Survivai of the Fittest) और प्राकृतिक चुनाव (Natural Selection) कहा है। अर्थात् जो जीव अपने संघर्ष पूर्ण जीवन में जीवित रह सकने की शक्ति प्राप्त कर सके वे ही संसार में जीवित रहे; अन्य योनियां लुप्त हो गईं।

मनुष्य समाज की उन्नति भी क्रमशः हुई है। सृष्टि के प्रारम्भ में मातृसत्ता की व्यवस्था थी, अर्थात् परिवार की स्वामिनी माता होती थी। धीरे २ कृषि का आविष्कार हो जाने से ग्रामीण सभ्यता की नींव पड़ी और कृषि कार्य के लिये

गुलामों की आवश्यकता पड़ी। यह दास प्रथा (Slavery) का युग था जिसमें राजाओं, जमींदारों और जागीरदारों का प्रभुत्व रहा। धीरे धीरे वैज्ञानिक आविष्कारों ने कला कौशल और उद्योगों को बढ़ाया और यंत्रीकरण का युग आया। यह व्यवस्था पूंजीवादी (Capitalistic) व्यवस्था के नाम से विख्यात हुई और इसके आश्रयदाता बड़े २ कारखानों, मिलों और फैक्ट्रियों के स्वामी पूंजीपति लोग हुये। इस समय समाज की सम्पूर्ण शक्ति राजाओं और जमींदारों से हटकर पूंजीपतियों में समा गई। राजनीति में पूंजीवाद ने प्रजातंत्रवाद (Democracy) को जन्म दिया। इंगलैंड, अमेरिका आदि देश पूंजीवादी, प्रजातन्त्र के ज्वलन्त उदाहरण हैं। इंगलैण्ड में यद्यपि राजतन्त्र (monarchy) का बड़ा सम्मान है, परन्तु अमेरिका में पूर्ण प्रजातन्त्र की प्रतिष्ठा है।

मार्क्स का यह कथन है कि जब इस पूंजीवादी व्यवस्था से समाज के निम्न वर्गों में असन्तोष उत्पन्न हो जायगा और यह व्यवस्था समाज को प्रगति की ओर ले जाने की अपेक्षा उसे प्रतिगामी बनाने का ही एक साधन रह जायगी, उस समय इस व्यवस्था के नाश होने का समय आ जायगा। पूंजीवादी व्यवस्था की विकृति ही उसके नाश का कारण बन जायगी और बुर्जुआ (शोषक वर्ग) और प्रोलोतिरेत (शोषित वर्ग) वर्ग के संघर्ष में पूंजीवादी वर्ग समाप्त हो जायगा और किसान, मजदूर वर्ग के साम्यवादी शासन का प्रारम्भ होगा। यह था मार्क्स का स्वप्न जिसे चीन, रूस तथा यूरोप के कुछ अन्य देशों के मनस्वी लोगों ने अपने पुरुषार्थ से चरितार्थ कर दिखाया है।

साम्यवादी व्यवस्था को जन्म देने के लिये मार्क्स हिंसामय क्रान्ति को ही एकमात्र साधन मानता है। उसका कथन है कि पुरानी प्रतिक्रियागामी व्यवस्था को समाप्त करने और नवीन व्यवस्था (किसान मजदूर वर्ग की तानाशाही) को सन्निकट लाने के लिये किसान-मजदूर वर्ग को क्रियाशील होना चाहिये और येन केन प्रकारेण (By fair or foul means) पूंजीवाद को समाप्त कर देना चाहिये। मार्क्स महात्मा गांधी की तरह साधनों की पवित्रता (purity of means) में विश्वास नहीं करता था क्योंकि उसके लिये शरीर ही सब कुछ था और "अर्थ" ही एक मात्र लक्ष्य। अतः यह क्रान्ति और हिंसा आदि द्वेष और ईर्ष्यामूलक उपायों का उसने निषेध नहीं किया। वह वर्ग संघर्ष (Class war) को अधिक से अधिक तीव्र (acute) बनाने के पक्ष में था, ताकि यह युद्ध शीघ्र समाप्त हो और एक वर्ग विहीन समाज (class less Society) की स्थापना हो सके, जिसका कि वह स्वप्न देखा करता था।

यह है मार्क्स के सिद्धान्तों का संक्षिप्त परिचय जिसके आधार पर साम्यवादी विचारधारा का बृहत् प्रासाद खड़ा है। लेनिन, स्तालिन आदि साम्यवाद के क्रियाशील उपासकों ने उसमें देश-काल और स्थिति के अनुसार परिवर्तन भी किये हैं। चीन में साम्यवाद के प्रचारक माओत्से तुंग ने भी अपनी राष्ट्रीय परिस्थितियों का ध्यान रखते हुए ही इस पर आचरण किया है। आगामी लेख में हम मार्क्स के इन सिद्धान्तों पर आलोचनात्मक विचार करेंगे।

(क्रमशः)

जो शुद्ध, पवित्र और निर्दोष पुरुष को दोष लगाता है उस मूर्ख को उसका पाप लौटकर लगता है जैसे वायु के रुख फेंकी हुई धूल अपने ऊपर ही आ पड़ती है।

* राजनैतिक रंग मंच *

फैसिस्ट और नैशनल सोशलिस्ट शासन प्रणालियों में दो त्रुटियां हैं और ये ही दो त्रुटियां रूस के समाजवाद में हैं। आनन्द यह है कि रूसी समाजवाद के रोग के शमन के लिये फैसिज्म के प्रयोग का दावा किया जाता है।

इन प्रणालियों में मानवीय स्वतन्त्रता के आदर्शों को तिलाञ्जलि दे दी गई थी। वर्तमान मनुष्य हृदय से प्रजातन्त्र का आदर करता है परन्तु उसका व्यवहार इस आदर्श के सर्वथा विपरीत है। उसको न स्वतन्त्रता के अधिकार सह्य हैं और न व्यक्ति की उपयोगिता ही ग्राह्य है। ये दोनों आदर्श उसकी भावनाओं के विरुद्ध जाते हैं। इन दोनों प्रणालियों की दूसरी त्रुटि जिसे हम कुछ सीमा तक पहली त्रुटि का परिणाम कह सकते हैं यह थी कि शासक वर्ग अपनी कल्पित सर्वोच्चता की भावना के वशीभूत हो प्रजा की आत्मा के साथ मनमानी करने लगा था। ये दोनों यह भी दावा करने लग गए थे कि स्टेट (राज्य) प्रजा से उच्च होता है और उसके अधिकारीगण जीवन के समस्त विभागों में सर्वेसर्वा होते हैं। परन्तु राज्य का लक्ष्य आध्यात्मिक शक्ति को हथियाने का लक्ष्य नहीं होना चाहिए और इसी प्रकार धर्म संघ का लक्ष्य राज-सत्ता को हथियाना नहीं होना चाहिये। मुसोलिनो को इस बात का श्रेय प्राप्त था कि उसने राज्य और धर्म-संघ के कार्य क्षेत्रों के मध्य एक विभाजक रेखा खींच दी थी।

जर्मनी के विषय में यह बात नहीं कही जा सकती। नाजी शासन के प्रारम्भ से ही लोगों से नैशनल सोशिलिज्म को जीवन की नई और पूर्ण फिलासफी मनवाने और क्रियात्मक रूप में उसको नए धर्म तथा हिटलर को उसके पैगम्बर के रूप में स्वीकार कराने का सरकारी यत्न रहा कथोलिक एवं प्रोटेस्टेन्ट आदि धर्म संघों (Churchs) को स्टेट (राज्य) के सामने घुटने टेकने और आदेश निर्देश को मानने के लिए बाध्य करने का भी निरन्तर यत्न रहा। सोवियत रूस में स्थिति इससे भी ज्यादा खराब थी, जहां लेनिन के शब्दों में 'भौतिक वाद' सरकारी फिलासफी है। वर्षों के कठोर दमन के पश्चात जब कि धर्म संघ (Church) की गन्दगी दूर होकर वह शुद्ध और पवित्र हो गया था और इसका स्वरूप विशुद्ध धार्मिक बन गया था तब ही धर्म के क्रमिक और व्यवस्थित उन्मूलन के लिए पंचवर्षीय योजना क्रियान्वित करदी गई थी। यदि हमारी सूचना सही है तो इस समय अन्ततोगत्वा रूस में धार्मिक स्वतन्त्रता का प्रत्यागमन हो गया है।

उन देशों में शासक वर्ग बहुत ऊंचे पद पर प्रतिष्ठित कर दिया गया था और यह सर्वथा भुला दिया गया था कि उससे भी ऊंची एक सांस्कृतिक श्रेणी होती है जिसका कार्य समाज के भाग्य का निर्माण करना उसका नेतृत्व और मार्ग प्रदर्शन करना एवं शासक वर्ग को आदेश उपदेश देना होता है। प्राचीन शासनों में धर्म गुरु वा ऋषि सदैव प्रेरक तत्व के रूप में राज-सिंहासन के पीछे रहा करता था। यद्यपि वह शासन नहीं करता था तथापि उसकी आलोचना पर सदैव ध्यान दिया जाता था। भारतवर्ष में साधारणतया ब्रह्म शक्ति और क्षात्र शक्ति में पारस्परिक सहयोग और सद्भावना रहती थी। निःसंदेह यह सत्य ठीक नहीं है कि कोई दार्शनिक संस्था, सम्प्रदाय अथवा चर्च राज्य को अपने इशारे पर नचाए क्योंकि यदि नैसर्गिक वर्गों में गड़बड़ हो तो यह आवश्यक नहीं है कि कोई संस्था

हालैंड निवासी प्रसिद्ध मनोविज्ञान वेत्ता डा० मीज की विचारधारा

या सम्प्रदाय ब्राह्मण वर्ग का स्थान ले ले-यह हो सकता है कि निम्न वर्गों के बहुसंख्यक व्यक्तियों और प्रभावों का संगठित धर्मों में समावेश हो गया हो जैसी कि वस्तुतः आजकल अवस्था है।

रूस में उच्चतम सांस्कृतिक वर्ग की आवाज नहीं सुनी जाती थी क्योंकि उस श्रेणी के बहुत से व्यक्तियों को मौत के घाट उतार दिया गया था अथवा क्रांति के दिनों में वे देश छोड़कर भाग गए थे। उनके स्थान पर बुद्धिवादी शासकों की एक नई श्रेणी का प्रभाव स्थापित हो गया था।

जर्मनी में (और कुछ सीमा तक इटली में) उच्चतम श्रेणी का मुंह बन्द कर दिया गया था अथवा विविध रीतियों से उसकी अवहेलना करदी जाती थी। इसी कारण से उन देशों का राष्ट्रीय दृष्टिकोण अत्यन्त संकुचित बन गया था। उच्चत्तम सांस्कृतिक वर्ग विश्व बन्धुत्व की भावना से ओत प्रोत होता है। उपद्रव के लिए ता यह कभी उतारू नहीं हो सकता। युद्ध और विजय में विश्वास रखने वाले इस बात का ढिंढोरा पीटते हैं कि वे उच्चत्तम सांस्कृतिक वर्ग में से नहीं हैं। साइंस के विद्यार्थियों के द्वारा उच्चतम वर्ग की व्यापकता का भली भांति परिचय मिल जाता है।

यतः हम नैशनल सोशलिस्ट और फैसिस्ट प्रणालियों की आधारभूत त्रुटियों के विषय में लिख रहे हैं अतः हमें आत्म-निर्भरता की आर्थिक नीति की भी चर्चा करनी चाहिए जो कि राष्ट्रीयता की अशुद्ध भावना का परिणाम है। इसकी मुख्य भावना युद्ध की संभावना को सामने रखकर बाह्य जगत से सर्वथा स्वतन्त्र रहने की है। कृषि और उद्योग धन्धों सम्बन्धी बनावटी संरक्षणों के उदाहरणों से प्रायः सब ही परिचित हैं। यह नीति कभी २ अत्यन्त हास्यास्पद विकल्पों को भी प्रोत्साहित करादेती है। इसका एक ताजा उदाहरण लकड़ीसे बनी हुई ऊन का जर्मन सरकार द्वारा प्रचलन और प्रकाशन है। इसे 'जैल वोली, (Zell wolle) कहते हैं। यद्यपि इसका मूल्य सच्ची ऊन से अधिक है। किस्म घटिया और उपयोग निश्चितरूप से अरुचिकर है तथापि जर्मन सरकार का आदेश था कि ऊन की वस्तुओं में इस बनावटी ऊन का कुछ प्रतिशत भाग अवश्य मिलाया जाया करे। दुकानदारों को अपनी दुकानों में सच्ची ऊन का विज्ञापन करने से रोक दिया गया था। यह ठीक है कि कभी २ बनावटी चीजें असली चीजों से सस्ती और अच्छी सिद्ध हो जाती है।

आत्म निर्भरताके सिद्धांत प्रायः दुनियांभर में पाए जाते हैं। और वे केवल मात्र नई प्रणालियों की अपनी विशेषताएं नहीं हैं। रूस स्वतः महाद्वीप के कारण, कुछ सीमा तक, आत्म-निर्भर हो सकता है परन्तु उस देश को इस ओर विशेष प्रवृत्ति नहीं है। प्रायः सन्धियों में अन्य देशों के माल पर निर्भर होने की आवश्यकता अङ्गीकार की जाती और उन सन्धियों में उसका समावेश किया जाता है।

नेशनल सोशलिस्ट शासन की कतिपय त्रुटियों की चर्चा कर देने के पश्चात् इसकी कतिपय सफलताओं का उल्लेख कर देना भी न्याय-संगत प्रतीत होता है। निस्सन्देह इसकी समस्त विशेषताओं का वर्णन करने में बहुत अधिक समय लगेगा। संभवतः इसकी सबसे बड़ी सफलता यह थी कि हिटलर ने जर्मन-प्रजा में नए सिरे से आत्म-विश्वास की भावना जागृत करदी थी और १९१४ के महायुद्ध के पश्चात् जर्मन-प्रजा में अपने को गिरा हुआ समझने की जो भावना घर कर गई थी वह दूर होकर उनमें आत्म-सम्मान और राष्ट्रीय उपयोगिता के भाव पैदा हो गए थे। सामाजिक नेता के रूप में, हिटलर ने परिवार में और उसके द्वारा समाज में स्त्री-पुरुषों के आत्मिक-सम्बन्ध को अनुभव किया

था। स्त्री-पुरुषों की समानता के वर्तमान अस्वाभाविक विचार का वह कुछ २ विरोधी था। उसके प्रभाव से वर्तमान कला मुख्यतः संगीत और चित्रकला की विविध अस्वाभाविक प्रवृत्तियों में पर्याप्त सुधार हो गया था। यद्यपि कला के क्षेत्र में राज्य का हस्तक्षेप कला के दृष्टिकोण से साधारणतया बहुत आक्षेप जनक माना जाता है। उसने अन्य अनेक प्रकार से जर्मन प्रजा के सामने आदर्श रखने की चेष्टा की थी।

अन्य देशों मे फेसिस्ट प्रणालियों की प्रतिच्छायाओं की प्रतिक्रिया यह हुई कि प्रजातन्त्र की शक्तियां एक साथ मिलकर खड़ी होगई। इस समय के समस्त विविध राजनैतिक आन्दोलनों में जिनका एक दूसरे पर निरन्तर प्रभाव पड़ रहा है प्रजा में साधारण रूप से एक प्रवृत्ति पाई जाती है वह है अपने शासकों के चरित्र में निर्मलता देखने की इच्छा और उत्कण्ठा। नई प्रणाली के मूल में सदैव शासक वर्ग की नपुंसकता के प्रति घोर निराशा और उसकी दुश्चरित्रता के प्रति क्रोध दृष्टिगोचर होता है। मुसोलिनी और हिटलर जैसे नेताओं की सफलता का रहस्य उनके व्यक्तित्व का जादू था। वे ऋषि न थे प्रत्युत कल्पना जगत में विचरने वाले प्राणी थे जिनमें अपनी कल्पनाओं को कुछ सीमा तक मूर्तरूप देने की शक्ति विद्यमान थी। लोग उनके पीछे चलते थे क्योंकि वे सबसाधारण में घुल-मिल सकते थे और लोगों की सामूहिक इच्छाओं के प्रतीक थे। पवित्र जीवन व्यतीत करने के कारण वे जनता के श्रद्धा-भाजन थे। वे शाकाहारी थे और अपने व्यक्तिगत सुख-चैन की परवाह किए बिना सारे समय राज्य के लिए कठोर परिश्रम करते हुए एकान्त में निवास करते थे। ऐसी चीजें जनता पर प्रभाव डाले बिना नहीं रहा करतीं।

इसके साथ ही सत्ताधारी नेता के लिए सूक्ष्म खतरे भी होते हैं। मुख्य यह है कि सर्व साधारण में घुल-मिल जाने की प्रवृत्ति के गाम्भीर्य के नष्ट हो जाने पर वह मनमानी करने वाला डिक्टेटर बन सकता है। सर्व साधारण द्वारा पूजे जाने पर अहंकार के वशीभूत हो वह अपने को सर्वोच्च ज्ञान और सत्ता का स्रोत मानने लगता है किसी की क्या मजाल कि जो उससे जवाबदेही कर सके। यहां तक कि विदेशी भी ऐसा नहीं कर पाते। उसे यह सीखने की आवश्यकता रहती है कि वर्तमान जगत में सत्ता सापेक्ष वस्तु बन गई है। महान सिकन्दर, रोम साम्राज्य और चंगेज खां के दिन बीत चुके हैं; और नेपोलियन ने स्वयं अपने जीवन के मूल्य पर उपर्युक्त बात सीखी थी।

व्यक्तित्व को असामयिक पतन से बचाने के लिए अधिकांश जनतन्त्र देशों ने कानून अथवा प्रथा के द्वारा अपने प्रेजीडेण्ट (President-प्रधान) प्राइम मिनिस्टर (Prime minister) अथवा गवनरों के पद-काल की अवधि नियत की हुई है। स्व० रूजवेल्ट मुसोलिनी वा हिटलर महान् नेता थे परन्तु अमेरिका की राजनैतिक पद्धति में आमूल चूल परिवर्तन हुए बिना उनको डिक्टेटर बनने का अवसर कभी नहीं मिल सकता था।

—जो छछोरा होता है वह ज्यादा आवाज करता है पर जो गंभीर होता है वह शांत रहता है। मूर्ख अधभरे घड़े की तरह शोर मचाते हैं, पर बुद्धिमान सरोवर की भांति शान्त रहते हैं।

—दूसरे का दोष देखना आसान है किन्तु अपना दोष देखना कठिन है।

प्रश्नों के उत्तर

। सार्वदेशिक के कार्यालय में प्रायः ऐसे प्रश्न आते रहते हैं जिनका आर्य समाज के सिद्धान्तों अथवा कार्य प्रणालि से सम्बन्ध होता है। उनमें से प्रायः ऐसे प्रश्न ही अधिक होते हैं जिनका सार्वजनिक रूप हो। यह निश्चय किया गया है कि प्रति मास उनमें से कुछ प्रश्नों के उत्तर सार्वदेशिक में दे दिये जाया करें। सब प्रश्नों के उत्तर एक साथ देना सम्भव नहीं। इस कारण प्रश्न कर्ताओं को अपने प्रश्नों के उत्तरों की प्रतीक्षा धैर्य से करनी चाहिए। प्रश्न सारभूत हों और यथा सम्भव संक्षेप से लिखे जायें]

प्रश्न—श्री मगतराम जी आर्यसमाज जमशेदपुर से लिखते हैं...... ता० १८-८-५५ का नव भारत टाइम्स दिल्ली के एक लेख आज का पंचांग का कटिंग आपकी सेवा में निर्णय के लिए भेज रहे हैं जिसमें आर्यों का नाम भी और वेदों का नाम भी देकर हम लागों को भ्रम में डाल दिया है। क्या आर्य समाजी भी अपने शुभ कार्य एक मास के लिए बन्द कर देंगे?

नवभारत टाइम्स का उद्धरण यह है—"आज से मल मास आरम्भ हो जाने के कारण वेदों के प्रधान उपासक सनातन धर्मी आर्यों में सभी नित्य नैमित्तिक त्योहारों, महोत्सवों, सामाजिक कार्यों और सभी प्रकार के नवीन मांगलिक कार्यों के मुहूर्त्त एक महीने तक बन्द रहेंगे।"

उत्तर—यों तो इस प्रश्न का उत्तर प्रश्न में ही विद्यमान है। क्योंकि ज्योतिषी जी ने आर्य से पहले सनातन धर्मी यह विशेषण लगा कर अपना अभिप्राय स्पष्ट कर दिया है। ज्योतिषी जी ने 'हिन्दु' शब्द के स्थान पर 'आर्य' शब्द का प्रयोग किया है और क्योंकि अन्ततोगत्वा सनातन धर्मी हिन्दु भी वेदों को ही अन्तिम प्रमाण मानते हैं इसलिए उन्हें वेदों के प्रधान उपासक इस विशेषण से निर्दिष्ट किया है। यह स्पष्ट है कि जो आर्य सनातन धर्मी नहीं है उनके लिए ज्योतिषी जी की भविष्य वाणी निःसार है। शेष रहा यह प्रश्न कि ज्योतिषी जी ने वेद और आर्य शब्द का ऐसे ढंग से प्रयोग क्यों किया है कि जिससे भ्रम पैदा हो सके। शब्दों के प्रयोग पर कोई प्रतिबन्ध कैसे लगाया जा सकता है। यदि कानून हमारे हाथ में होता तो भी शब्दों के असंगत प्रयोग को नहीं रोका जा सकता था। हम तो यही कर सकते हैं कि शब्दों के अर्थों को बुद्धि पूर्वक समझने का यत्न करें।

प्रश्न—कोटा से वहां के आर्यसमाज के अन्तरंग सदस्य श्री 'गोपी वल्लभ जी आर्य तथा श्री ब्रजनाथ नैय्यर ने निम्नलिखित प्रश्न भेजे हैं।

(१) श्री स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में पठन-पाठन सम्बन्धी आदेश दिया है कि बच्चों को आठवें वर्ष और कम से कम पांचवे वर्ष के

अनन्तर शिक्षार्थ विद्यालय में भेजा जावे।

(२) पांच वर्ष का लड़का, ५ वर्ष की कन्याओं की पाठशाला में न जावे और पांच वर्ष की कन्या ५ वर्ष के लड़कों की शाला में न जावे।

(३) एक ऐसी संस्था जो आर्य मन्तव्यों से भिन्न मन्तव्य रखती हो, जिसकी प्रबन्ध कारिणी सभा स्वाधीन अर्थात् आर्य समाज की अन्तरंग सभा के आधीन न हो और जिस के सदस्य कुछ आर्य तथा कुछ अन्य मतावलम्बी हों, के लिए आर्य समाज-मन्दिर दिया जा सकता है या नहीं।

उत्तर—ऋषि दयानन्द के मतानुसार आर्य समाज का यह सर्व सम्मत मन्तव्य है कि बालकों और बालिकाओं की शिक्षा अलग २ होनी चाहिए। इस कारण यह तो स्पष्ट ही है कि आर्य समाज से सम्बद्ध किसी संस्था में सहशिक्षा का सिद्धान्त नहीं माना जा सकता, और न आर्य समाज मन्दिर किसी ऐसे शिक्षणालय को दिया जा सकता है जिसमें लड़कों और लड़कियों को इकट्ठी शिक्षा दी जाय।

आर्य समाज-मन्दिरों के प्रयोग के सम्बन्ध में तो बहुत अधिक सावधान होने की आवश्यकता है। आज कल हमारे समाज मन्दिर कई तरह के उपयोग में लाये जाते हैं। कभी वह व्याख्यान भवन के रूप में परिणत हो जाते हैं तो कभी उन्हें स्कूल मान लिया जाता है। समाज मन्दिर के ये उपयोग उचित नहीं हैं। वर्तमान परिस्थिति का परिणाम यह हो रहा है कि कभी कभी और लोगों को उनके धर्म-मन्दिर होने में ही सन्देह हो जाता है, जिससे बहुत सी पेचीदगियाँ खड़ी हो जाती हैं। समाज-मन्दिर का उपयोग केवल अग्निहोत्र, प्रार्थना, सत्संग तथा धार्मिक व्याख्यानों तथा उत्सवों तक परिमित होना चाहिए। यदि आर्य समाज कोई पाठशाला अथवा स्कूल चलाना चाहे तो यत्न यही होना चाहिए कि उसके लिए अलग स्थान बनाया जाये, जो चाहे समाज-मन्दिर से मिलता हुआ हो परन्तु उससे भिन्न समझा जा सके। इस समय पश्चिमी पंजाब के आर्य समाज मन्दिर का मुआवजा मिलने में जो कठिनाई हो रही है उसका मुख्य कारण यही है कि हम समाज-मन्दिरों की पृथक् सत्ता और पवित्रता की रक्षा नहीं कर सके। हमें इस अनुभव से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। आर्य-समाज-मन्दिर का उपयोग केवल आर्य समाज से सम्बद्ध धार्मिक कृत्यों के लिए होना चाहिए।

—मूर्ख मनुष्य दुर्वचन बोलकर स्वयं ही अपना नाश करते हैं।

—अपने हाथ से कोई अपराध हो गया हो तो उसे स्वीकार करना और भविष्य में फिर कभी वह अपराध न करना।

—न आकाश में, न समुद्र में। न पर्वतों की खोह में कोई ऐसी जगह है जहां पापी अपने किए हुए पाप कर्म से बच सके।

—जो शुद्ध, पवित्र और निर्दोष पुरुष को दोष लगाता है उस मूर्ख को उसका पाप लौटकर लगता है जैसे वायु के रुख फेंकी हुई धूल अपने ऊपर ही आ पड़ती है।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली की अन्तरंग सभा

दिनांक २८-८-५५ स्थान—बलिदान भवन, देहली।

समय—२ बजे मध्यान्होत्तर

उपस्थिति—

१—श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति (प्रधान)
२—श्रीयुत बालमुकन्द जी आहूजा
३—,, लाला रामगोपाल जी
४—,, ,, चौधरी जयदेव सिंह जी
५—,, ,, भगवती प्रसाद जी
६—,, ,, पं० जियालाल जी
७—,, ,, पं० नरेन्द्र जी
८—,, ,, मिहरचन्द जी धीमान्
९—,, ,, भीमसेन जी विद्यालंकार
१०—,, ,, नरदेवजी स्नातक
११—,, ,, वासुदेव शर्मा जी
१२—श्रीमती लक्ष्मी देवी जी
१३—श्रीयुत प्रो० रामसिंह जी एम० ए०
१४—,, ,, बा० कालीचरण जी आर्य
१५—,, ,, बा० पूर्णचन्द्र जी
१६—,, ,, डा० महावीर सिंह जी
१७—,, ,, लाला चरण दास जी पुरी।

(१) गताधिवेशन की कार्यवाही प्रस्तुत होकर संपुष्ट हुई।

(२) विज्ञापन का विषय सं० २ सन् १९५८ में सार्वदेशिक सभा की स्वर्ण जयन्ती मनाये जाने विषयक श्रीयुत मदन मोहन जी सेठ का प्रस्ताव पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि स्वर्ण-जयन्ती महोत्सव मनाया जाये और महोत्सव की विस्तृत योजना बनाकर आगामी बैठक में प्रस्तुत करने के लिये निम्नलिखित महानुभावों की एक उप-समिति बनाई जाये:—

(१) सभा प्रधान (२) सभा मन्त्री (३ श्री मदन मोहन जी सेठ (४) श्री पं० नरेन्द्र जी एम० एल० ए० (संयोजक) (५) श्रीयुत लाला रामगोपाल जी

(३) विज्ञापन का विषय सं० ३ सभा के अधीन अनुसंधान विभाग खोलने का विषय प्रस्तुत होकर कार्यालय का १३-६-५५ का नोट पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि वेदों का सरल अनुवाद करने (जिसमें केवल मन्त्र और भाषानुवाद रहेगा और जिसकी प्रामाणिकता सार्वदेशिक सभा द्वारा नियुक्त समिति के द्वारा कराई जायेगी तथा वैदिक सिद्धान्त सम्बन्धी अन्य कार्य करने के लिये अनुसंधान विभाग खोला जाय और दयानन्द पुरस्कार निधि के ६००००) साठ हजार रुपये में से २५०००) पच्चीस हजार रुपये से यह कार्य आरम्भ किया जाय। यह भी निश्चय हुआ कि इस कार्य के संचालन के लिये निम्नलिखित उपसमिति नियुक्त की जाय।

(१) सभा प्रधान (२) सभा मन्त्री (संयोजक)
(३) श्रीयुत पं० भीमसेन जी विद्यालंकार
(४) श्रीयुत बा० पूर्णचन्द्र जी
(५) श्रीयुत पं० जियालाल जी

(४) विज्ञापन का विषय सं० ४ सार्वदेशिक सभा के अधीन ३ धार्मिक परीक्षाओं का संचालन सम्बन्धी श्री पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय का प्रस्ताव प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। पक्ष में ५ तथा विपक्ष में ६ सम्मतियां आने पर बहु सम्मति से अस्वीकृत हुआ।

(५) विज्ञापन का विषय सं० ५ श्रीयुत पं० लक्ष्मी दत्त जी दीक्षित का इस आशय का प्रस्ताव प्रस्तुत होकर पढ़ा गया कि भारतीय राज्य का तथा आर्य समाज का वर्ष चैत्र प्रतिपदा से आरम्भ हुआ करे। निश्चय हुआ कि इस प्रस्ताव का सम्प्रति व्यवहार में आना सम्भव प्रतीत नहीं होता।

(६) विज्ञापन का विषय सं० ६ श्रीयुत स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज का फाल्गुन कृष्ण १३ सम्वत् २०१३ को जन्म शताब्दी महोत्सव मनाये जाने का विषय प्रस्तुत होकर श्रीयुत पं० धर्म देव जी वेद वाचस्पति एम० ए० गुरुकुल कांगड़ी का २०-६-५४ का पत्र पढ़ा गया। इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में प्राप्त हुई प्रदेशीय सभाओं की सम्मति भी पढ़ी गई। निश्चय हुआ कि सार्वदेशिक सभा के तत्वावधान में महोत्सव मनाया जाय। उत्सव के स्थान के सम्बन्ध में २ प्रस्ताव आये। एक यह कि उत्सव देहली में मनाया जाय और दूसरा यह कि गुरुकुल कांगड़ी में मनाया जाय। ८ सम्मतियां गुरुकुल के और ७ सम्मतियां देहली के पक्ष में आने पर बहु सम्मति से महोत्सव का गुरुकुल कांगड़ी में मनाया जाना निश्चित हुआ।

(७) विज्ञापन का विषय सं० ७ प्रचलित ओ३म् ध्वज गीत की नियमित स्वीकृति का विषय प्रस्तुत होकर श्रीयुत पं० सूर्यदेव जी तथा पं० हरिशंकर जी कविरत्न के सुझाव पढ़े गये। निश्चय हुआ कि सभा प्रधान जी उन सुझावों पर विचार करके और आवश्यकता समझें तो अन्य कवियों के भी सुझाव मंगाकर ध्वज गीत को अन्तिम रूप दे देवें।

(८) विज्ञापन का विषय सं० ८ श्रीयुत के० पी० वर्मा को अमेरिका में अनुसंधान कार्य के निमित सभा की ओर से आवश्यक साहित्य भेजने का विषय प्रस्तुत होकर आर्य समाज नैनीताल के श्री बांकेलाल जी का ८-१२-५४ का पत्र तथा श्री वर्मा जी के साथ हुआ सभा का पत्र व्यवहार पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि श्री वर्मा द्वारा भेजी हुई सूची के अनुसार साहित्य भेज दिया जाय और इस कार्य में ५००) तक व्यय किया जाय।

(९) विज्ञापन का विषय सं० ९ सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड को १५०००) ऋण रूप में देने के सम्बन्ध में धन विनियोग उपसमिति की रिपोर्ट पर विचार का विषय प्रस्तुत होकर धन विनियोग उपसमिति की २७।८।५५ की बैठक का निम्नांकित निश्चय पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

"सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड को मकान बनाने के लिये १५०००) पन्द्रह हजार रुपये मात्र तक देने का विषय प्रस्तुत होकर अन्तरंग सभा दिनांक ५।६।५५ का निश्चय सं० ७ तथा सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड की संचालक समिति की २३।६।५५ की बैठक का निश्चय सं० ३ पढ़े गये। निश्चय हुआ कि प्रकाशन लिमिटेड की जमीन और उस पर बनने वाले मकान को रहन रखकर १५०००) तक १० आने सैंकड़ा मासिक सूद पर ऋण दे दिया जाय। जिस-जिस तरह भवन के निर्माण का कार्य चलता रहे और उस पर लागत लगती रहे उसी तरह से रुपया प्रकाशन लिमिटेड को उसके उपरोक्त प्रस्ताव के अनुसार दिया जाता रहे।"

(१०) विज्ञापन का विषय सं० १० अन्य उपसमितियों की रिपोर्टों को प्रस्तुत किये जाने का विषय प्रस्तुत होकर गोरक्षा समिति की २७।८।५५ की बैठक का निम्न लिखित प्रस्ताव पेश होकर पढ़ा गया :—

"संयोजक महोदय की रिपोर्ट पढ़ी गई। विचार के पश्चात् निश्चय हुआ कि सबसे प्रथम विहार प्रदेश में गोवध बन्द करने सम्बन्धी कार्य को आरम्भ किया जाय। इस कार्य पर विचार करने के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा विहार की

अन्तरंग सभा का एक विशेष अधिवेशन शीघ्र बुलवाया जाय और उसमें गोरक्षा समिति सम्मिलित होकर कार्यक्रम का निर्माण कराये। इस कार्य की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज से प्रार्थना की जाय कि वे इस कार्य का नेतृत्व करें। विहार अन्तरंग सभा की तिथि की सूचना आने पर गोरक्षा समिति की ओर से श्रीयुत बा० कालीचरण जी, श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी, श्रीयुत पं० नरेन्द्र जी तथा श्रीयुत लाला रामगोपाल जी वहां जायं। इनके अतिरिक्त समिति के जो सदस्य जा सकें वे भी जाने की अवश्य कृपा करें।

श्रीयुत पं० वासुदेव जी ने बताया कि विहार की परिस्थिति अभी इस योग्य नहीं है कि इस समय वहां यह कार्य हो सके अतः निश्चय हुआ कि पं० वासुदेव के वक्तव्य को दृष्टि में रखते हुये उपर्युक्त प्रस्ताव पुनर्विचार के लिये गोरक्षा समिति को भेजा जाय।

(११) विज्ञापन का विषय सं० ११ प्रदेशीय सभाओं की सम्मति के प्रकाश में आर्यसमाज के उपनियमों के संशोधन का विषय प्रस्तुत होकर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का १३।४।२०१२ का पत्र पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि पंजाब सभा की इच्छानुसार यह विषय आगामी बैठक में प्रस्तुत किया जाय। पंजाब सभा को इसकी सूचना दी जाय और लिख दिया जाय कि वे आगामी बैठक से पूर्व अपने संशोधन भेजदें। यदि उसके संशोधन प्राप्त न हुए तो यह विषय आगे स्थगित न किया जायेगा।

(१२) विज्ञापन का विषय सं० १२ मैसुर के आगामी दशहरा के अवसर पर साहित्य प्रचारार्थ २००) की सहायता की स्वीकृति का विषय पेश होकर सभा के उपदेशक श्री सत्यपालजी शर्म्मा का २४-६-५५ का पत्र तथा कार्यालय का १७-८-५५ का नोट पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि २००) दिया जाय।

(१३) विज्ञापन का विषय सं० १३ कन्नड़ सत्यार्थप्रकाश की छपाई की समाप्ति के लिये ५००) के अतिरिक्त ऐडवांस की स्वीकृति का विषय प्रस्तुत होकर पं० सत्यपाल जी का १८-७-५५ का पत्र तथा कार्यालय का २७-८-५५ का नोट पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि ५००) अतिरिक्त ऐडवांस दे दिया जाय।

(१४) विज्ञापन का विषय सं० १४ सभा के सभासदों के लिये शुल्क नियत करने का विषय प्रस्तुत होकर कार्यालय का १४-७-५५ का नोट तथा सोसाइटीज ऐक्ट नं० २१, सन् १८६० की धारा सं० १५ पढ़े गये। १), २, ५) वार्षिक शुल्क के ३ सुझाव आने और १) तथा ५) के लिये ७-७ सम्मतियां होनेपर प्रधान जी की व्यवस्थानुसार २) वार्षिक शुल्क नियत किया गया।

(१५) विज्ञापन का विषय सं० १५ सभा के गणक श्री नरेश जी का ग्रेड नियत करने का विषय प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि कार्यालय यह निश्चय करके कि उनकी स्थिर नियुक्ति हो चुकी है या नहीं आगामी बैठक में नियुक्ति तथा ग्रेड को स्थिर करने का विषय प्रस्तुत करें।

(१६) विज्ञापन का विषय सं० १६ सभा के उपदेशक श्री पोहकर मल जी की वेतन वृद्धि का विषय प्रस्तुत होकर गोरक्षा समिति की २७-८-५५ की बैठक का निश्चय सं० २ पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि समिति की सिफारिश के अनुसार १ ६-५५ से उनका ७०) के स्थान में १००) मासिक वेतन कर दिया जाय।

(१७) विज्ञापन का विषय सं० १७ धर्मार्य सभा के लिये सभा की ओर से प्रतिनिधि सदस्यों के निर्वाचन का विषय प्रस्तुत होकर निम्न प्रकार निर्वाचन स्वीकृत हुआ :—

प्रतिनिधि—

१—श्रीयुत पं० सुरेन्द्र शर्मा गौर,
२—आचार्य विश्वेश्वर जी गुरुकुल वृन्दावन
३—श्रीयुत आत्मानन्द जी विद्यालंकार
४—श्रीयुत पं० रमेशचन्द्र जी शास्त्री

विदुषी देवियां—

१—श्रीमती दमयन्ती देवी, कन्या गुरुकुल देहरादून।
२—श्रीमती पुष्पा बी० ए०
३—श्रीमती लक्ष्मी देवी जी

आर्य सन्यासी —

१—श्री शिवस्वामी जी, २—श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी, ३—श्री स्वामी आत्मानंद
४—श्री स्वामी अमृतानन्द जी।

(१८ विज्ञापन का विषय सं० १८ धर्मार्य सभा का नया विधान कब से चालू किया जाय इसके निश्चय का विषय प्रस्तुत होकर धर्मार्य सभा की २७-८-५५ की अंतरंग सभा का निश्चय पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि सम्प्रति पुराना विधान चालू रहे।

(१९) विज्ञापन का विषय २०—श्रीयुत स्वामी ब्रह्ममुनि जी की वसीयत का धन वापस करने का विषय प्रस्तुत होकर स्वामी जी का २० ७-५५ का कार्ड कार्यालयके २५-७-५५ के नोट सहित पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि वसीयत का धन तथा पुस्तकें स्वामी जी को लौटा दी जायें।

(२०) विशेष रूप से सार्वदेशिक भवन की मरम्मत का विषय पेश होकर ५००) के व्यय का आनुमानिक व्यौरा पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि ५००) तक का मरम्मत व्यय स्वीकार किया जाय।

(२१) विशेष रूप से कार्यालय के लिये हिन्दी का बड़ा टाइपराइटर क्रय करने का विषय पेश होकर निश्चय हुआ कि टाइपराइटर क्रय किया जाय और पुराना बेच दिया जाय।

(२२) विशेष रूप से धर्मार्य सभा की अन्तरंग दिनांक २७-८-५५ की बैठक का निम्नलिखित प्रस्ताव प्रस्तुत होकर पढ़ा गया।

श्री पं० विद्यानन्द विदेह जी के 'सविता' पत्र के कतिपय लेख धर्मार्य सभा के ध्यान में लाये गये। उनके प्रकाशित साहित्य व व्यवहार का आर्य जनता पर इस प्रकार का प्रभाव पड़ता है कि जिससे वह अपने आपको नवी, अवतार, मन्त्रद्रष्टा ऋषि आदि के रूप में प्रस्तुत करते हैं इससे आर्य जगत में भ्रम और अन्ध विश्वास फैल रहा है और उनसे वैदिक सिद्धांत के सर्वथा विरुद्ध भावना का उदय होता है। ऐसी अवस्था में यह सभा सार्वदेशिक सभा से अनुरोध करती है कि वह आर्य जगत् को इस भ्रम से बचाने का समयोचित उपाय अविलम्ब करें।

श्री विदेह जी के सविता पत्र के कुछ उद्धरण नीचे दिये जाते हैं :—

१. सविता योजनांक मास अगस्त ५५

(क) भगवान् समय समय पर लोकोद्धार के लिये एक युग नेता अवश्य भेजते हैं मेरी समझ में तो लुप्त हो रही वेद विद्या तथा योग विद्या के प्रचार के लिये ही आपका अवतरण हुआ है :-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥

गीता ४-७॥ सविता पृ० १६१।

(ख) ऋषिवर स्वामी दयानन्द जी जिस महान उद्देश्य को लेकर कार्य क्षेत्र में अवतीर्ण हुये थे और जिसे पूर्ण न कर पाने की अन्त:

पीड़ा लिये हुये उन्होंने इह लौकिक यात्रा पूर्ण करदी थी उसी उद्देश्य की पूर्त्यर्थ आचार्य विदेह जी को मानो परमात्मा ने संसार में भेजा है।

सविता पृ० १६२।

(ग) आचार्य विद्यानन्द विदेह...
त्रिप्र ऋषि दिव्य द्रष्टा इत्यादि।

सविता पृ० १४३

निश्चय हुआ कि सार्वदेशिक सभा की ओर से आर्य समाजों को इस आशय का आदेश दिया जाय क्योंकि विदेह जी ने अनेक बार ध्यान खींचे जाने पर और आश्वासन देकर भी वैदिक सिद्धान्तों के विरुद्ध प्रचार बन्द नहीं किया इस कारण :—

(१) आर्य समाज की वेदी पर से उनके व्याख्यान न कराये जायें।

(२ उनके ग्रन्थ आर्य समाजों के पुस्तकालय में न रखे जायें।

(३) उनके ग्रन्थों के प्रकाशन के लिये अथवा अन्य किसी कार्य के लिये आर्थिक सहायता न दी जाय।

(२३) विज्ञापन का विषय सं० १६ महर्षि का चल चित्र बनाया जाय या नहीं प्रस्तुत होकर धर्मार्य सभा दिनांक २८-८-५५ का महर्षि दयानन्द चल चित्र विषयक निम्नलिखित प्रस्ताव पढ़ा तथा अंकित किया गया :—

(२-क)—यह सभा नाट्य काल को वैदिक मानती है।

(२-ख)—तथा विषयासक्ति वर्धक कलामात्र को दूषित समझती है।

(२-ग)—ऋषि के चल चित्र के सम्बन्ध में सभा यह निश्चय करती है कि यदि उपर्युक्त सिद्धान्त के विपरीत कोई चल चित्र ऋषि का बनेगा या उनका चरित्र दोष-पूर्ण या सिद्धान्त विरुद्ध या अनुचित रीति से चित्रित किया जायेगा तो सभा उसकी आज्ञा न देगी। इसलिये यह आवश्यक है कि उक्त चलचित्र का प्रत्येक अंश सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रमाणित हो।

(२४) विशेष रूप से महर्षि स्वामी दयानन्द के हस्तलेखों तथा अन्य सामान की सूची बनवाये जाने का विषय प्रस्तुत होकर सभा प्रधान का परोपकारिणी सभा के साथ हुआ पत्र व्यवहार पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि परोपकारिणी सभा के विधान को देख कर यह निश्चय किया जाय कि सार्वदेशिक सभा को उसके मामलों में हस्ताक्षेप करने का कहां तक वैधानिक अधिकार है। इस सम्बन्ध में परामर्श देने के लिये निम्नलिखित उपसमिति नियुक्त की जाय :—

१— श्रीयुत बा० पूर्ण चन्द जी

२—श्रीयुत प्रो० रामसिंह जी

और उपसमिति की रिपोर्ट आगामी बैठक में प्रस्तुत की जाय।

(२५) विशेष रूप से प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि पंजाब बैंक चांदनी चौक देहली में २०००) से सभा का जो चलत खाता खोला गया है उसकी सम्पुष्टि की जाती है। इस एकाउंट पर कार्यवाही करने का अधिकार सभा के कोषाध्यक्ष श्रीयुत लाला बालमुकन्द आहूजा को दिया जाता है। उनके तथा सभा मन्त्री वा सभा प्रधान दोनों में से किसी एक के संयुक्त हस्ताक्षरों से रुपया निकाला जाया करे। बैंक को इसकी सूचना दी जाये।

(इन्द्र विद्यावाचस्पति)
सभा पति

॥ ओ३म् ॥

श्रीयुत विद्यानन्द विदेह के लिए आर्य समाज की वेदी बन्द

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली का महत्वपूर्ण निश्चय

आर्य समाजों के नाम आदेश

सेवा में

श्रीयुत मन्त्री जी,

आर्य समाज..........

श्रीमन्नमस्ते ।

श्री विद्यानन्द जी विदेह का विषय इस सभा में गत दो वर्ष से अधिक समय से चला आ रहा है ।

श्री विद्यानन्द जी के विषय में गत चार पांच वर्ष से यह शिकायत सुनने में आ रही थी कि वे अपने प्रवचनों में, भाषणों में और वैयक्तिक वार्ताओं में आर्य समाज, ऋषि दयानन्द और वैदिक सिद्धान्तों के विरुद्ध कहते रहते हैं जिससे जनता में भ्रम उत्पन्न होता है । उनके मित्रों और आर्य समाज के हितैषियों का उनकी गतिविधि को ठीक करने का प्रयास असफल होता रहा है । जब उनकी गति विधि सीमा का उलंघन करने लगी और वैयक्तिक प्रेरणा का कोई फल न हुआ तो आर्य समाजों तथा आर्यों को वैधानिक रीति से उनका विरोध करने के लिये वाध्य होना पड़ा । आर्य समाज मेरठ, अलीगढ़, एटा, गाजियाबाद आदि आदि समाजों ने विदेह जी की घोर गुरुडमपरक और वेद विरुद्ध बातों के सम्बन्ध में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को शिकायतें लिख कर भेजीं और उनकी गतिविधि को सुधारने का अनुरोध किया । कतिपय मुख्य मुख्य शिकायतें इस प्रकार थीं :—

१—वधाई के गीतों द्वारा सन्तान पैदा होने का प्रचार करना ।

२—विदेह जी का अपने को ऋषि मानना और मनवाना ।

३—ऋषि दयानन्द और वैदिक धर्म की जय का लगाया जाना साम्प्रदायिक बताना ।

४—परमात्मा को निराकार और साकार दोनों मानना और ऐसा ही प्रचार करना ।

५—मुरदों का आजकल लकड़ी के अभाव में बिजली से जला दिया जाना उचित बताना

६—यह कहना कि उनकी रग-रग में वैराग्य भरा हुआ है परन्तु उनकी धर्म पत्नी संन्यास ग्रहण करने की आज्ञा नहीं देती, पूरा वैराग्य हो जाने पर भी बिना स्त्री की आज्ञा के संन्यास न लेने का प्रचार करना अवैदिक बताना ।

७—कान के ऊपर टटोल कर कुछ पाइन्ट अर्थात् व्यक्ति के भूत, भविष्यत तथा वर्तमान की स्वाभाविक घटनाओं का बताना ।

८—आर्य समाज के तीसरे नियम को अपूर्ण बताना ।

इसी प्रकार उनकी रचित पुस्तकों के अनेक स्थल अवैदिक मान्यताओं और शिक्षाओं से परिपूर्ण पाये गये जिनके निरीक्षण की सार्वदेशिक धर्मार्य सभा से मांग की गई। इतना ही नहीं अनेक असन्तुष्ट समाजों ने प्रस्ताव पास करके सार्वदेशिक सभा से मांग की कि बिदेह जी के लिये आर्य समाज की वेदी बन्द करदी जाये।

इन सब शिकायतों के प्राप्त होने और उनमें निरन्तर वृद्धि होते रहने पर सार्वदेशिक सभा के लिये आवश्यक कार्यवाही का करना अनिवार्य हो गया। फलतः सभा ने विद्यानन्द जी से उन शिकायतों का उत्तर मांगा जो प्राप्त हुआ परन्तु सन्तोष जनक न पाया गया। जब यह बात उनके ध्यान में लाई गई तो उन्होंने ७-४-५४ को सार्वदेशिक सभा के तत्कालीन प्रधान को इस आशय का क्षमा पत्र लिखकर दे दिया कि भविष्यमें उनके लेखों, एवं व्याख्यानों में कोई भी सिद्धांतादि की भूल न सुन पड़ेगी। पुस्तकों में जो सिद्धान्त विषयक त्रुटियां धर्मार्य सभा घोषित करेगी उसे स्वीकार कर वे तत्काल अपनी पुस्तकें संशोधित कर देंगे। इस विश्वास पर कि उनकी गतिविधि में परिवर्तन होकर कोई शिकायत न सुनी जायेगी श्री विद्यानन्द जी की इच्छानुसार उनका क्षमा पत्र कार्यालय की फाइल का ही अंग रखा गया और उनकी कुछ पुस्तकें संशोधन के लिये धर्मार्य सभाके सुपुर्द करदी गईं।

धर्मार्य सभा ने उनकी पुस्तकों का निरीक्षण किया और संशोधनीय स्थलों के सम्बन्ध में एक विशेष निश्चय किया (निश्चय साथ है)

इस निश्चय की प्रति विदेह जी को भी भेजी गई परन्तु उन्होंने धर्मार्य सभा द्वारा निर्दिष्ट त्रुटियों को स्वीकार करने से इंकार कर दिया। इस पर सार्वदेशिक सभा ने धर्मार्य सभा का एक विशेष अधिवेशन २६ ६ ५४ को देहली में बुलाया और श्री विदेह जी को उन त्रुटियों को सभा के सम्मुख अन्यथा सिद्ध करने की प्रेरणा की गई। श्री विदेह जी इस सभा में सम्मिलित हुये। उस सभा में उन्होंने अपनी त्रुटियों को न केवल माना ही अपितु लिखित रूप में धर्मार्य सभा द्वारा प्रस्तुत की हुई भूलों की स्वीकृति दे दी। धर्मार्य सभा ने उनकी पुस्तकों का भलीभांति संशोधन करने के लिये एक उपसमिति नियुक्त करदी। उक्त उपसमिति ने बड़े परिश्रम से संशोधनीय स्थलों की विस्तृत तालिका बनाई जो विदेह जी को इस आदेश के साथ भेजदी गई कि वे शीघ्र से शीघ्र अपनी पुस्तकों के संशोधित संस्करण निकालें या जब तक नये संस्करण न निकलें तब तक पुस्तकों का प्रचार बन्द रखें अथवा वर्तमान पुस्तकों में संशोधन छपवाकर संयोजित कर देवें। (संशोधन की विस्तृत तालिका साथ है)।

ये संशोधन ८-६-५४ को उन्हें भेजे गये थे और जनता की सूचना के लिये प्रकाशित कर दिये गये थे। खेद है आज लगभग एक वर्ष का समय होने पर भी पुस्तकों के न तो नये संस्करण प्राप्त हुये और न संशोधनों से संयोजित वर्तमान संस्करण ही यद्यपि विदेह जी को अनेक बार स्मरण कराया गया। उन्होंने प्रत्येक बार यही अनिश्चित उत्तर दिया कि नये संस्करण होने पर पुस्तकें भेजी जायेंगी। उन्होंने सभा को यह भी लिखा कि उनकी आपत्तिजनक पुस्तकों का प्रचार बन्द है।

इधर तो विदेह जी की ओर से यह आश्वासन मिलता रहा और उधर उनकी पुस्तकों का बिना संशोधनों के प्रचार जारी रहा, जो अब तक जारी है। इतना ही नहीं उनके 'सविता' पत्र में अनेक अवैदिक गुरुडम परक और मिथ्याभिमान पूर्ण बातें प्रकाशित होती रही हैं और हो रही हैं यथा.-

मुझसा कौन भला बड़भागी।

(१) वेद ज्ञान सम ज्योति पाई। मति ऋतम्भरा जागी॥
ब्रह्म सोम पीयूष पान कर। सदा समाधि लागी॥
(सविता मार्च ५५ पृ०२७)

× × × ×

(२) जीवन मुक्त विदेह कहायो, राज रहित अनुरागी।
(सविता मार्च ५५, पृष्ठ २७)

× × × ×

३) मेरी साधना पूर्ण हुई और मेरी रश्मियों ने प्रखरता के साथ समस्त विश्व को प्रकाशित कर दिया। मर्त्यलोक मेरे आलोक से आलोकित हो गया......अक्षय रश्मियों और अजस्र आलोक से सुयुक्त रहता है। (सविता मई ५४, पृष्ठ ७०)

× × × ×

विदेह विचार

मैं वहा हूँ कि जहां हर्ष नहीं शोक नहीं। मैं वहां हूँ कि जहां रोक नहीं टोक नहीं॥
मैं वहां हूँ कि जहां भोग और विलास नहीं। मैं वहां हूँ कि जहां लाभ और ह्रास नहीं॥
मैं वहां हूँ कि जहां दुख और त्रास नहीं। मैं वहां हूँ कि जहां परता का आभास नहीं॥
मैं वहां हूँ कि जहां द्वन्द्व का प्रभाव नहीं। मैं वहां हूँ कि जहां भाव का अभाव नहीं॥
मैं वहां हूँ कि जहां ईर्ष्या वा द्वेष नहीं। मैं वहां हूँ कि जहां घृणा वा क्लेश नहीं॥
मेरे संसार में संसार का व्यवहार नहीं। मेरे व्यवहार में संसार का व्यवहार नहीं॥
यह मेरा लोक तो न्यारा है और ऊंचा है बहुत। तुम्हारा लोक मेरे लोक से नीचा है बहुत॥
निम्न उलझन से तुम जब तक न सुलझ पाओगे। तुम मुझे दूर से तब तक न समझ पाओगे॥
(सविता सितम्बर ५४, पृष्ठ १३३)

धर्मार्थ सभा का निश्चय—

इसी प्रकार विदेह जी के वेद भाष्य के विरुद्ध सार्वदेशिक धर्मार्य सभा ने अपनी अन्तरंग सभा दिनांक ३०।४।५५ में निम्न प्रकार निश्चय किया :—

"श्रीयुत विद्यानन्द जी विदेह ने सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के २६।६।५४ के अधिवेशन के सामने स्वीकार किया कि मेरी दर्शन में गति नहीं और मैं संस्कृत भी उतनी नहीं जानता। ऐसी स्थिति में पं० विद्यानन्द जो विदेह ने अपने ऋग्वेद भाष्य के प्रकाशन के लिये आर्य जनता से जो अपील १ लाख रुपये की की है, सार्वदेशिक धर्मार्य सभा उसका घोर विरोध करती और सार्वदेशिक सभा से प्रार्थना करती है कि वह यथोचित कार्यवाही अविलम्ब करे। इस सभा की निश्चित सम्मति है कि ऐसे व्यक्ति को वेद भाष्य करने का कोई अधिकार नहीं।"

सार्वदेशिक सभा का निश्चय—

इस पर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अंतरंग सभा ने ३०-४-५५ की बैठक में निम्न निश्चय किया ;—

"विशेष रूप से सभा प्रधान की आज्ञा से प्रस्तुत होकर कि श्री विद्यानन्द विदेह द्वारा वेद-भाष्य के प्रकाशन के लिये १ लाख रुपये की अपील प्रकाशित हुई है निश्चय हुआ कि सार्वदेशिक सभा इस वेद भाष्य को प्रमाणित नहीं मानती अतः आर्यसमाजें एवं आर्य नरनारी इस सम्बन्ध में सचेत रहें और इसके लिये कोई आर्थिक सहायता न दी जाये। यही निर्देश उनके द्वारा छपी हुई अन्य पुस्तकों के सम्बन्ध में माना जाये।"

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के इन निश्चयों के होते हुए भी विदेह जी ने सार्वदेशिक सभा की अवहेलना करते हुये आर्य जनता से धन संग्रह करना जारी रक्खा।

धर्मार्य सभा के निर्णय का अभी तक क्रियान्वित न किया जाना अपितु उसके विरुद्ध व्यवहार करना या प्रकाशकों को करने देना आर्य समाज के संगठन और अनुशासन को खुली चुनौती है।

श्री विदेह जी की वर्तमान गतिविधि एवं लेखों इत्यादि से सभा को यह निश्चय हो गया है कि उन्हें अपनी भूलों पर जरा भी खेद नहीं है और वे आर्य समाज के अनुशासन का जरा भी सम्मान नहीं करते। ऐसी अवस्था में धर्मार्यसभा को उनके सम्बन्धमें पुनः विचार करनेके लिये बाधित होना पड़ा और उसने अपनी २८।८।५५ की सभा में निश्चय करके सार्वदेशिक सभा को प्रेरणा की है कि उनकी अवैदिक विचार धारा और गुरुडम को रोक देने का तत्काल उपाय करे जिससे आर्य जनता उनके फैलाये हुये भ्रम, अन्धश्रद्धा और अविश्वासों से मुक्त रहे। धर्मार्य सभा का निश्चय इस प्रकार है :—

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा ता० २७।८।५५ का निश्चय

(सार्वदेशिक सभा के पास भेजने के लिये)

विषय सं० २०—

पं० विद्यानन्द जी विदेह की वर्तमान गतिविधियों पर विचार

पर्याप्त विचार होकर सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि :—

"श्री विद्यानन्द विदेह जी के सविता पत्र के कतिपय लेख धर्मार्य सभा के ध्यान में लाये गये। उनके प्रकाशित साहित्य व व्यवहार का आर्य जनता पर इस प्रकार का प्रभाव पड़ता है कि जिससे वह अपने आपको नबी, अवतार, मन्त्रद्रष्टा, ऋषि आदि के रूप में प्रस्तुत करते हैं। इससे आर्य जगत् में भ्रम और अन्ध विश्वास फैल रहा है और उनसे वैदिक सिद्धान्त के सर्वथा विरुद्ध भावना का उदय होता है। ऐसी अवस्था में यह सभा सार्वदेशिक सभा से अनुरोध करती है कि वह आर्य जगत् को इस भ्रम से बचाने का समयोचित उपाय अविलम्ब करे।

विदेह जी के सविता पत्र के कुछ उद्धरण नीचे दिये जाते हैं :—

सविता योजनांक मास अगस्त १९५५—

(क) भगवान समय-समय पर लोकोद्धार के लिये एक युग नेता अवश्य भेजते हैं। मेरी समझ में तो लुप्त हो रही वेद विद्या तथा योग विद्या के प्रसार के लिये ही आपका अवतरण हुआ है—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम ॥ (गीता ४-७)

(सविता पृष्ठ १६१)

(ख) ऋषिवर स्वामी दयानन्द जी जिस महान उद्देश्य को लेकर कार्यक्षेत्र में अवतीर्ण हुये थे और जिसे पूर्ण न कर पाने की अन्तः पीड़ा लिये हुए उन्होंने इहलौकिक यात्रा पूर्ण करदी थी उसी उद्देश्य की पूर्त्यर्थ आचार्य विदेह जी को मानो परमात्मा ने संसार में भेजा है। (सविता पृष्ठ १६२

(ग) आचार्य विद्यानन्द विदेह...... ......
विप्र ऋषि दिव्यद्रष्टा (सविता पृष्ठ १४३)
इत्यादि

सार्वदेशिक सभा का निश्चय—

धर्मार्य सभा के इस निश्चय पर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की २८-८-५५ की अन्तरंग ने निम्नांकित निश्चय किया है :—

निश्चय सं० २०—सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की २७-८-५५ की अंतरंग का प्रस्ताव प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से आर्य समाजों को इस आशय का आदेश दिया जाय कि क्योंकि विदेह जी ने अनेक बार ध्यान खींचेजाने पर और आश्वासन देकर भी वैदिक सिद्धान्तों के विरुद्ध प्रचार बन्द नहीं किया है इस कारण—

(१) आर्य समाज की वेदी पर से उनके व्याख्यान न कराये जायें।
(२) उनके ग्रन्थ आर्य समाजों के पुस्तकालयों में न रखे जायें।
(३) उनके ग्रन्थोंके प्रकाशन के लिये अथवा अन्य किसी कार्य के लिये आर्थिक सहायता न दीजाय।

इस निश्चय को क्रियान्वित करना प्रत्येक आर्य, आर्य समाज और आर्य संस्था का परम कर्तव्य है। सभा को आशा है कि इस निश्चय का अक्षरशः पालन होगा और कोई आर्य, आर्य समाज और आर्य संस्था आदि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को अनुशासन भंग की कार्यवाही करने का अवसर न देगा। यह सभा इस निश्चय का, बुराई के प्रसार, को रोकने के लिये कड़ाई के साथ परिपालन कराने के लिये कृतसंकल्प है।

विदेह जी के प्रति इस अनुशासनात्मककार्यवाही के करने में सभा को दुःख है। सब से बड़ा दुःख इस बात का है कि सभा ने विदेह जी को अपनी गति विधि में सुधार करके आर्य समाज का एक उपयोगी अंग बने रहने की आवश्यकता से अधिक अवसर दिया परन्तु उन्होंने उससे समुचित लाभ न उठा कर सभा को उपयुक्त प्रकार का निर्णय करने के लिये विवश कर दिया। आर्य समाज की शिक्षाओं, सिद्धान्तों और मन्तव्यों के विरुद्ध प्रचार करने में कोई आर्य स्वतन्त्र नहीं किया जा सकता। आर्य समाज के सिद्धान्त, उसके मन्तव्य और सब से बढ़ कर उसका हित विदेह जी पर बलिदान नहीं किये जा सकते।

कालीचरण आर्य
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

महिला-जगत्

विलासिता के पदार्थों के अभिशाप

लेखक—श्रीयुत वी० के० शर्म्मा

एक समाचार पत्र में एक समाचार छपा था उन दिनों जबकि भारत का विभाजन हुआ था। पंजाब से उत्पीड़ितों के दल के दल चले आ रहे थे। उन्हें दिल्ली के आसपास शिविरों में ठहराया गया था। समाचार पत्र में कहा गया था कि एक उत्पीड़ित शिविर को देखने के लिए जब एक सरकारी अधिकारी वहां पहुँचे तब उत्पीड़ित लोगों में से अनेक लड़कियों ने उनसे पाउडर, साबुन, स्नो आदि न मिलने की शिकायत की। उस समय तक ऐसी व्यवस्था नहीं हो सकी थी कि उत्पीड़ितों के लिए पर्याप्त अन्न एवं वस्त्र दिया जा सके किन्तु विलासिता की सामग्रियों के प्रति इतनी उत्कट लालसा उन मांग करने वाली लड़कियों में थी कि उन्हें भोजन एवं वस्त्र से भी अधिक ये पाउडर आदि आवश्यक जान पड़े। यह रोग पंजाबी लड़कियों में ही नहीं देश भर में व्यापक है।

पाउडर, स्नो, सेंट, क्रीम, लिपस्टिक आदि विलासिता की वस्तुएं जब एक बार उपयोग में आने लगती हैं तब फिर इनका मोह छोड़ना कठिन हो जाता है। खेद है विलासिता की वस्तुओं का व्यसन बराबर बढ़ता जा रहा है।

पिछले युद्ध के समय जब हिटलर के सैंकड़ों हवाई जहाज नित्य इंग्लैंड पर बम बरसा रहे थे इंग्लैंड में वस्त्रों की और लोहे की कमी हो गई। इंग्लैंड में उस समय यह आन्दोलन चल पड़ा कि दाढ़ी रखना तथा पेबंद लगे वस्त्र पहनना उत्तम पुरुष का चिन्ह है। ऐसा इसलिए कि सेफ्टी रेजर में लगने वाली पत्तियां बचती थीं और कपड़े का कम से कम व्यय करना देश हित में आवश्यक था। देश में अनेक आवश्यक कार्यों के लिए धन का अभाव है। करोड़ों गरीब स्त्रियों और बच्चों के पास तन ढकने को भी कपड़ा नहीं है। इतने पर भी देश का करोड़ों रुपया विलासिता की सामग्री के लिए नष्ट हो जाता है। करोड़ों रुपया पाउडर सैन्ट आदि के लिए विदेश चला जाता है। बढ़िया फैशन के कपड़े चाहे वे निर्लज्जता के ही बढ़ाने वाले हों, बुरी कमाई करके भी प्राप्त करने की कोशिश होती है। यह भी इस समय धन का घोर दुरुपयोग है। देश की दरिद्रता के समय तो देश का पूरा धन देश-हित में ही लगना चाहिए।

जो लोग सैन्ट क्रीम आदि का व्यवहार करते हैं, यदि वे अपनी उन विलासिता की वस्तुओं में व्यर्थ नष्ट होने वाले धन को बचा कर उसका सदुपयोग करें तो एक व्यक्ति भूख से मरने वाले एक प्राणी के प्राण बचा सकता है। बाढ़ आदि से जो लोग बे घरबार हो गए हैं, जिनके बच्चों को एक समय आधा पेट अन्न नहीं मिलता उन्हें इनका विलासिता में नष्ट होने वाला धन जीवन-दान कर सकता है। यदि लोग इसे परोपकार में न लगा सकें तो भी यह उनके परिवार के लिए भी अच्छा सहायक होगा।

किसी ऐसे व्यक्ति को जो नित्य पाउडर

लगाता है, सवेरे के समय जब उसने अपना शृंगार न किया हो तो आप देखलें तो आपको उसके पीले बदरंग चहरे से घृणा हो जायगी। पाउडर, क्रीम, सैन्ट आदि वस्तुओं के उपयोग से केवल धन का नाश होता हो सो बात नहीं है। इनके द्वारा चरित्र का नाश होता है और स्वास्थ्य भी बिगड़ता है। इन वस्तुओं में प्रायः हानिकर एवं अपवित्र पदार्थ पड़े होते हैं, कुछ तो चर्बी जैसे वा उससे भी अपवित्र पदार्थ इनमें से अनेक वस्तुओं में पड़ते हैं और फिर इनको मुख एवं होठ तक लगाया जाता है जो लोग आचार का तनिक भी ध्यान रखते हैं उन्हें इन वस्तुओं के उपयोग से सर्वथा ही दूर रहना चाहिए। पाउडर, क्रीम आदि में पड़े हुए पदार्थों का यह सहज गुण है कि वे चमड़ी की कोमलता और स्वाभाविक सौन्दर्य को नष्ट कर देते हैं। एक प्रकार की मनोहर चिकनाई जो चमड़ी में होती है पाउडर का उपयोग करते रहने से नष्ट हो जाती है। इस प्रकार विलासिता के ये पदाथ स्वाभाविक सौन्दर्य को नष्ट करके इस बात के लिए विवश कर देते हैं कि व्यक्ति अपने को कृत्रिम रूप से सदा सजाए रहे। जब भी वह इन पदार्थों का इस्तैमाल किए विना दूसरों के सामने जाता है उसका चहरा और उसकी त्वचा सूखी तथा अनाकर्षक दिखाई देते हैं।

नाखूनों पर, होठों पर तथा शरीर पर आप जो पदार्थ लगाते हैं कैसे सम्भव है कि उनका कोई भाग आपके पेट में न पहुँचे। नाखून तथा होठ रंगने में जिन रगों तथा पदार्थों का प्रयोग होता है, उनमें से अनेक विषैले हैं। वे पेट में पहुँच कर पाचन क्रिया को दूषित कर देते हैं। अनेक प्रकार के रोग इससे उत्पन्न होते हैं। शरीर में जो रोम हैं, उनकी जड़ों में सूक्ष्म छिद्र हैं। इन छिद्रों से पसीने के द्वारा शरीर का दूषित द्रव्य सदा बाहर आया करता है। पाउडर स्नो आदि के उपयोग से रोम छिद्र बन्द हो जाते हैं और पसीने के प्रवाह में बाधा पहुँचती है। शरीर का दूषित द्रव्य निकलने नहीं पाता। इससे त्वचा की कान्ति नष्ट हो जाती है। त्वचा सम्बन्धी रोगों की सम्भावना बढ़ जाती है। ऐसे लोगों को यदि कोई त्वचा सम्बन्धी रोग हो जाता है तो बहुत कष्ट देता है। साधारण फुन्सियां भी ऐसी त्वचा पर अत्यन्त पीड़ा देने वाली बन जाती हैं।

आजकल अज्ञानवश माताएं छोटे शिशुओं को भी पाउडर लगाकर सजाती हैं। बालक की कोमल खाल पर इसका बहुत ही हानिकारक प्रभाव पड़ता है। बालक के लिए धूल में खेलना बहुत स्वाभाविक तथा स्वास्थ्य-प्रद है। शुद्ध सरसों के तेल की शिशु के अंगों में मालिश करने से शिशु के अंग पुष्ट होते हैं, किन्तु बच्चों के क्रीम पाउडर आदि न लगाने चाहिए इससे बालक का स्वास्थ्य नष्ट होता है।

आवश्यकता इस बात की है कि सरकार विलासिता के पदार्थों का विदेश से देश में आना सर्वथा बन्द कर दे और देश में इनके निर्माण पर प्रतिबन्ध लगा दे। मनुष्य जीवन के लिए यह पदार्थ आवश्यक नहीं हैं। इनसे धन चरित्र तथा स्वास्थ्य का नाश होता है। प्रत्येक व्यक्ति को इन पदार्थों के उपयोग से बचना चाहिए और अपने बच्चों को बचाना चाहिए।

स्नो, क्रीम, पाउडर आदि की उपर्युक्त स्वास्थ्य सम्बन्धी हानियों से किसी का मत भेद हो तो वे अपना पक्ष सप्रमाण लिखकर भेज सकते हैं। —सम्पादक

* बाल-जगत *

उच्च आदर्शों की व्यावहारिकता

(लेखक—श्री त्रिलोकीनाथ जी ऐडवोकेट)

राजपूत वीराङ्गनाओं की अपूर्व वीरता, उनके असीम साहस तथा आदर्श सतीत्व के अनेक प्रमाण भारतीय इतिहास में भरे पड़े हैं। राजपूत प्रथा के अनुसार रण क्षेत्र से भागकर लौटे हुए पति को भी स्त्रियां तिरस्कार की दृष्टि से देखती थी। उनकी सदैव यह अभिलाषा रहती थी कि या तो उनके पति और पुत्र रण क्षेत्र से विजयी होकर लौटे या फिर रणक्षेत्र में ही लड़ते २ अपने प्राण त्याग दें।

जिस प्रकार राजपूत रमणियां अपने प्राण प्रिय पतियों का मोह छोड़ सकती थीं उसी प्रकार प्राचीन स्पार्टा में माताएं तथा बहिनें रण पर जाने वाले योद्धा को ढाल देकर कहती थीं come with the shield or on it (युद्ध में विजय प्राप्त करके इस ढाल को लिए हुए लौटना अन्यथा वीर गति को प्राप्त कर इस पर पड़े हुए आना)

लगभग २८५० वर्ष हुए, ईसा से पूर्व नवीं शताब्दी में स्पार्टा उत्कट वीरों का एक देश था। वर्तमान ग्रीस देश के दक्षिणी भाग में जो मोरिया प्रायद्वीप है वही पहले स्पार्टा कहा जाता था। स्पार्टा की शासन प्रणाली Lycurgus (लाईकर गस) नामक महान विद्वान् ने बनाई थी। उन्होंने देश में सोने चांदी के लिए कोई स्थान ही नहीं रखा था। उनके देश में लोहे का सिक्का चलता था। उन्होंने सारे देश का रहन सहन सैनिक आधार पर बनाया था। देश में विलासिता की चीज बनती ही न थी और न लोग उनको काम में ही लाते थे। स्पार्टन लोग परम आज्ञाकारी और अत्यन्त दृढ़ होते थे। व्यायाम से उनका शरीर वज्रवत दृढ़ हो जाता था। वे बहुत सादा भोजन करते थे और वह भी सामूहिक रूप से। स्पार्टा के लोग अपने बालकों के स्वास्थ्य का विशेष ध्यान रखते थे। उनके यहां एक राजनियम था जिसके अधीन सभी बच्चे राज्य की सम्पत्ति होते थे और राज्य के ही द्वारा उनका लालन पालन होता था। अस्वस्थ, कमजोर और रोगी बच्चों को वहां के लोग एक राष्ट्रीय भार और कलंक समझते थे। यही कारण था कि सभी स्पार्टन बालक पूर्ण स्वस्थ एवं हृष्ट-पुष्ट होते थे। स्पार्टा की यह दशा लगभग ५ सौ वर्षों तक इसी क्रम से चलती रही और इस काल में स्पार्टा के लोग किसी से पराजित न हुए।

यूनान देश में मैसेडन प्रान्त का राजा प्रसिद्ध वीर सिकन्दर हुआ है। इसने बचपन से ही अदम्य उत्साह और बुद्धिमत्ता का परिचय दिया। इसने विशाल ईरानी राज्य को विजय किया। खेद है ३३ वर्ष की आयु में ही इसका देहान्त हो गया। सिकन्दर गुणग्राही था और उसमें एक खास गुण यह था कि वह अपनी माता का अनन्य भक्त था। जिस समय सिकन्दर एशिया के देशों पर चढ़ाई करने के लिए चला तो उसने अपनी माता ओलम्पिया को मैसेडन का राज्य सुपुर्द कर एन्टीपेटर को उनका मन्त्री रख दिया था एन्टी पेटर बराबर अपने पत्रों में ओलम्पिया के हस्ताक्षेप की शिकायतें लिखा करता था जिनका उत्तर सिकन्दर ने यह दिया (Antipator ! You do not know that one tear of my mother is able to wash away a thousand of thy epistles) 'एन्टी पेटर' तुम नहीं जानते कि यदि दुःख में मेरी माता का एक आंसू भी गिरा तो उसमें तुम्हारे हजारों पत्र बह जायंगे। ऐसी थी सिकन्दर की उत्कट मातृ भक्ति जिसने उसे महानता के उच्चतम शिखर पर पहुँचा दिया। मातृ शक्ति का आदर्श इतना पवित्र और उच्च है जो हर देश और काल के बालकों के लिए सर्वथा अनुकरणीय है।

इसी प्रकार रोम का इतिहास सभी उच्च आदर्शों से भरा पड़ा है।

* दक्षिण भारत प्रचार *

कन्नड़ भाषा में सत्यार्थप्रकाश छप गया

१० वर्ष पूर्व श्री० भास्कर पन्त सुब्बनरसिंह जी शास्त्री द्वारा लिखित कन्नड़ सत्यार्थ प्रकाश की समाप्ति के पश्चात् दक्षिण भारत में आर्य समाज के प्रचार में इस अमूल्य ग्रन्थ के अभाव से बहुत बाधा थी। स्व० श्री हरनाम दास जी कपूर के सहयोग तथा मैसूर निवासी श्री० रामशरण जी आहूजा की अमूल्य सहायता तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली एवं गुलबर्गा व हुबली जैसी आर्य समाजों व आर्य व्यक्तियों के उत्साहप्रद सहयोग से यह विशाल कार्य पूर्ण हो गया। सत्यार्थ प्रकाश की कुल ४००० प्रतियां छपवाई गई हैं। लगभग १००० पृष्ठों का बृहद् ग्रन्थ हो गया है। कागज व छपाई भी बहुत सुन्दर है। ऐसा निश्चय किया गया है कि जो व्यक्ति व समाजें विजया दशमी से पहले पहले पेशगी धन भेज देंगी उनको वास्तविक मूल्य पर ही पुस्तकें देदी जावेंगी। इसके पश्चात् विक्रय मूल्य पर ही पुस्तकें प्राप्त हो सकेंगी। शीघ्र ही प्रतिनिधि प्रकाशन समिति की कार्यकारिणी में वास्तविक मूल्य व विक्रय मूल्य का निर्धारण कर पत्रों तथा करपत्रों द्वारा सूचित कर दिया जावेगा।

प्रचार क्रम

मिलहल्ली—यह मैसूर मण्डल में एक ग्राम है इसमें ग्राम के पटेल के निवास स्थान पर २२ जूलाई को एक विशाल यज्ञ हुआ। इसमें ग्रामीणों की बहुत अच्छी उपस्थिति रही। यज्ञ एवं भाषण के उपरान्त प्रभावित ग्रामीणों ने ग्राम में एक यज्ञशाला बनवाने तथा कम से कम प्रतिमास यज्ञ कराने का संकल्प किया।

मण्डया—यह मैसूर रियासत का एक जिला है। यहां भी एक आर्य समाज की स्थापना के लिए प्रयत्न किया गया तथा ५-६ उत्साही सज्जन एतदर्थ संयोजन करने के लिए कार्य कर रहे हैं। आशा है श्री० राजगुरू जी के भ्रमण काल में यहां भी समाज की विधिवत् स्थापना हो जायगी।

मरकरा—यह नगर कुर्ग की राजधानी है। यहां पहले एक आर्य समाज था परन्तु अब नहीं है। वहां जाकर तीन चार प्रतिष्ठित एवं उत्साही व्यक्तियों से मिला। उन्होंने आर्य समाज की स्थापना में पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया है। आशा है यहां भी पूर्ण सफलता मिलेगी।

मैसूर में वेद सप्ताह

कर्नाटक के अन्य जिलों में जहां आर्य समाज की स्थापना के प्रयत्न चल रहे हैं वहां मैसूर नगर में आर्य समाज के केन्द्र को दृढ़ करने का प्रयत्न हो रहा है। ४ अगस्त से १० अगस्त तक शिवरात्रि के समान ही सात दिनों का यज्ञ मैसूर आर्य समाज के पुरोहित श्री० डा० विश्वामित्र जी के प्रयत्नों से हुआ। इस बार उपस्थिति पहली बार से अधिक थी तथा यज्ञ का बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा। यह "सारस्वत महायज्ञ" वेदों से सरस्वती देवता वाले मन्त्रों का चुनाव करके किया गया तथा प्रातः सायं "सरस्वती की वास्तविक पूजा" पर विविध व्याख्यान होते रहे। इस अवसर पर कन्नड़ भाषा में "सारस्वत महायज्ञ" के महत्व को दर्शाते हुए एक छोटी पुस्तिका भी आर्य समाज मैसूर की ओर से बिना मूल्य बांटी गई।

कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा

जनवरी मास में श्री० स्वामी ध्रुवानन्द जी का दक्षिण भारत में भ्रमण पुरोगम निश्चय हो चुका है। इसका विस्तृत पुरोगम बन रहा है। सभा से तथा श्री. स्वामी जी के द्वारा स्वीकृत होने के पश्चात् करपत्र द्वारा सभी सम्बद्ध समाजों को सूचित कर दिया जायगा। इसी सिलसिले में कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना तथा प्रतिनिधि प्रकाशन समिति के स्थिरीकरण के प्रयत्न चल रहे हैं। विशाल कर्नाटक निर्माण के निश्चय से इसका भविष्य उज्जवल दिखाई देता है। इस विषय में मैसूर रियासत से बाहर की कर्नाटक प्रदेशीय समाजों से भी बातचीत हो रही है। आशा है इसमें सभा को अवश्य सफलता मिलेगी।

प्रतिनिधि प्रकाशन समिति

समिति का प्रकाशन कार्य जोरों से चल रहा है। सत्यार्थ प्रकाश के अतिरिक्त चार पुस्तकें और छप रही हैं।

१. वैदिक यज्ञ माला—इसमें कन्नड़ भाषा व लिपि में सन्ध्या, अग्निहोत्र, स्वस्तिवाचन, शान्ति-प्रकरण, सामान्य प्रकरण, आर्य पर्व पद्धति, शुद्धि संस्कार पद्धति तथा हिन्दी व कन्नड़ भाषा के चुने हुए भजन रखे गए हैं। सभी वेद मन्त्र कन्नड़ लिपि में ही छपे होने से यह पुस्तक कर्नाटकनिवासियों कोबड़ी लाभप्रद सिद्ध होगी।

२. आर्योद्देश्यरत्नमाला, ३. गोकरुणानिधि तथा ४. गृहाश्रम प्रकरण। गृहाश्रम प्रकरण के प्रकाशन के लिए गुलबर्गा निवासी श्री बालकृष्ण जी ने १२५) का दान दिया है।

समिति ने निश्चय किया है कि जो दानी जिस पुस्तक के प्रकाशनार्थ दान देंगे उनका धन उसी निधि में सुरक्षित रखा जायगा तथा उन पुस्तकों के विक्रय से प्राप्त धन से पुनरपि उन्हीं के नाम पर वह पुस्तक प्रकाशित की जावेगी।

विक्रय विभाग

विजयादशमी पर आर्य साहित्य प्रचारार्थ १२५) की एक दूकान ले ली गई है। सार्वदेशिक सभा ने इस अवसर के लिये २००) की अमूल्य सहायता दी है। इसके लिये हम अत्यन्त कृतज्ञ हैं। श्री गोविन्दराम हासानन्द ने लगभग २५०) की पुस्तकें भिजवाई हैं। अन्य संस्थाओं से भी प्रार्थना है कि वे शीघ्र ही भिजवावें।

इनके अतिरिक्त कन्नड़ भाषा में मन्त्रार्थ व महर्षि दयानन्द के सन्देश भी बड़े बड़े अक्षरों में लिखवाए जा रहे हैं। साथ ही दो तीन करपत्र भी सामयिक छपवाए जा रहे हैं।

नया पता

घर तथा आर्य समाज मण्डी मुहल्ला से हटाकर मैसूर नगर के मध्य में ले आया गया है। उसका पता :—"११५१ आर्य समाज देवराज मुहल्ला, मैसूर है। अत: जो भी सज्जन तथा आर्य संस्थायें पुस्तकें आदि भिजवाना चाहें वे ऊपर के पते पर ही भिजवाने की कृपा करें।

विजयादशमी के अवसर पर आर्य पत्र-पत्रिकाओं की प्रदर्शनी भी रखने का विचार है। अतः समस्त आर्य-जगत् से प्रार्थना है कि वह अपनी पत्र-पत्रिकाओं की कुछ प्रतियां "विजयादशमी" विशेषाङ्क अवश्य भिजवाने की कृपा करें। बिक्री करके सभी पुस्तकों व पत्र-पत्रिकाओं का धन सम्बद्ध संस्थाओं को भिजवा दिया जायगा। कृपया कोई भी वी० पी० न करें।

भवदीय
सत्यपाल शर्मा स्नातक
दक्षिण भारत आर्यसमाज ऑर्गेनाइजर

साहित्य समीक्षा

समालोचना के लिए पुस्तक की २ प्रतियां आनी चाहिए। समस्त प्राप्त पुस्तकों की आलोचना का आश्वासन नहीं दिया जा सकता। विशेष २ साहित्य की ही आलोचना संभव है। उसके भी प्रकाशन की निश्चित तिथि वा अवधि नहीं बताई जा सकती। यथा समय और यथा सुविधा आलोचनाएँ प्रकाशित होती हैं।

—सम्पादक

(१)

गोज्ञान कोष प्रथम खण्ड

(ऋग्वेद से उपनिषत् तक)

सम्पादक—पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर।

प्रकाशक—गोवर्धन संस्था ६८६।५८ सदाशिव पेठ, मानू बाग, पूना - २. मूल्य ६)

इसमें 'गो' शब्द जिस किसी रूप में आया है, उन सब मन्त्रों का अर्थसहित संग्रह कर दिया है। श्री सातवलेकर जी प्रखर वेदाभ्यासी विद्वान् हैं। उनके लेख में निष्प्रयोजन पुनरुक्ति बहुत खटकती है। लेखक ने सभी मन्त्रों में आये 'गो' शब्द का अर्थ गो-पशु किया है जो ठीक नहीं है। अनेक स्थानों पर अरुन्तुद खींचातानी इस ग्रन्थ के गौरव को घटा रही है। सर्वत्र रूढ़िवाद का सहारा लेने वाले पण्डित जी को अनेक स्थानों पर अगत्या यौगिकवाद को अपनाना पड़ा है। इस ग्रन्थ में केवल वेदमन्त्रों का संकलन है, उपनिषदों का कोई वचन नहीं है। मूल्य अधिक है।

--स्वामी वेदानन्द

( )

मेरी आत्मकथा

लेखक श्री पं० गंगा प्रसाद जी एम० ए०, एम० आर० ए० एस०, रिटायर्ड चीफ जज,

प्रकाशक—आर्य साहित्य मंडल अजमेर, पृष्ठ संख्या २७४ मूल्य २) है।

उपरोक्त पुस्तक श्री पं० गंगाप्रसाद जी रि० चीफ जज की अपनी जीवनी है। इस जीवनी को आद्योपांत पढ़ने पर यह अनुभव होता है कि यदि श्री पं० गंगाप्रसाद जी ने अपना जीवन-चरित्र न लिखा होता तो आर्य समाज के इतिहास की कई बातें विस्मृत हो जातीं। अतः श्री पंडित जी ने यह पुस्तक लिख कर आर्यसमाज का बहुत उपकार किया है। वास्तव में तो "मेरी आत्मकथा" पं० गंगाप्रसाद जी का जीवन चरित्र होते हुये भी आर्यसमाज का सन् १८८५ से अब तक का वह इतिहास है जिसका सम्बन्ध न केवल श्री पं० गंगा प्रसाद जी से अपितु उनके समकालीन आर्य नेताओं और आर्य विद्वानों से भी है। श्री पंडित जी ने इस पुस्तक द्वारा यह बताने का सफल प्रयत्न किया है कि किस प्रकार वे अपने दादा जी को सत्यार्थप्रकाश सुनाते-सुनाते बाल्य-काल से ही सत्यार्थप्रकाश से प्रभावित होकर आर्य समाज में प्रविष्ट हुये और सरकारी उच्च पदों पर रहते हुये आर्य समाज की क्या-क्या सेवायें उन्होंने कीं, किस प्रकार कठिन परिस्थितियां भी उन्हें आर्य समाज की सेवाओं से विमुख न कर सकीं, किस प्रकार त्यागमय जीवन उन्होंने

बिताया। पुराने समय के आर्य लोगों के प्रचार की लगन, शैली और सोचने विचारने के ढंग आदि की एक उज्जवल झांकी इस पुस्तक में पाठकों को मिलती हैं। इस पुस्तक के अनेकों स्थल ऐसे हैं जो वर्तमान और आगे आने वाली आर्य पीढ़ी के लिये अनुकरणीय हैं फिर भी इस पुस्तक के कतिपय अध्याय विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं यथा अपनी रुग्ण कन्या के सम्बन्ध में इनके विचार, कटारपुर केस का वर्णन, इस केस के पश्चात् कठिन परीक्षा में से निकलना, स्वामी ज्ञानानन्द (वर्तमान असिस्टेंट डाइरेक्टर, नैशनल फिजीकल लेबोरेटरी, देहली) से भेंट, योग-सम्बन्धी अपने अनुभव आदि।

विषय और लेखनशैली की दृष्टि से पुस्तक बहुत ही उपयोगी है। यदि लेखनशैली के अनुरूप ही पुस्तक की छपाई और प्रूफ रीडिंग की ओर भी ध्यान दिया गया होता तो यह पुस्तक सर्वत्र भेंट करने योग्य हो जाती किन्तु खेद है कि 'प्रकाशकों की असावधानी के कारण पुस्तक के मुख पृष्ठ पर प्रकाशक का नाम भी शुद्ध नहीं छप सका और न वाह्याकर्षण की ओर ही प्रकाशकों ने ध्यान दिया है।' पुस्तक के अन्त में २॥ पृष्ठ का शुद्धाशुद्ध पत्र लगाने पर भी पुस्तक में प्रूफरीडिंग की ऐसी अनेकों भूलें रह गई हैं जिनके कारण पाठक का मन खिन्न हुये बिना नहीं रहता। आशा है इस पुस्तक के द्वितीय संस्करण में इन भूलों का निराकरण कर दिया जायेगा और इस पुस्तक की उपादेयता में वृद्धि होगी। अन्त में हम लेखक और प्रकाशक को ऐसे उपयोगी प्रकाशन के लिये बधाई देते हैं। —निरजनलाल गौतम

(३)

विभूति का समाज-सुधार अंक (अगस्त ५५)

प्रधान सम्पादक—श्रीयुत पं० नरेन्द्रजी एम०एल०ए०

सम्पादक—विनय कुमार साहित्यालंकार

यह मासिक पत्र आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद का मुख-पत्र है।

प्रस्तुत अंक में अछूतोद्धार सम्बन्धी आर्यसमाज की विचारधारा के प्रतिपादन के अतिरिक्त सामयिक एवं उपयोगी सामग्री का संकलन किया गया है। श्रीयुत डा० राजेन्द्र प्रसाद जी, पं० जवाहर लाल नेहरू, श्री राधाकृष्णन, श्री गोविन्द वल्लभ पन्त, श्री पं० विनायकराव विद्यालंकार, कांग्रेस अध्यक्ष श्री ढेबर आदि २ महानुभावों के संदेशों तथा चित्रों से अंक की उपयोगिता और भी अधिक हो गई है। भारत सरकार द्वारा पारित अस्पृश्यता निवारक कानून भी उद्धृत किया गया है। अंक का सम्पादन बहुत अच्छा हुआ है। छपाई आदि बढ़िया है। —रघुनाथ प्रसाद पाठक

प्राप्ति स्वीकार

१. **चमत्कारों की दुनिया** मू० ।||)
लेखक—श्रीयुत सन्तराम बी० ए०,
प्रकाशक—विश्वेश्वरानन्द संस्थान, प्रकाशन होशियारपुर।

२. **महाभारत की कहानियां** मू० १)
लेखक—श्रीयुत देवदत्त शास्त्री

३. **श्रावणी उपाक्रम** मू० ॥)
लेखक—श्रीयुत पं० सुरेन्द्र शर्मा गौर
प्रकाशक—गौर मन्दिर ६८६, कबूल नगर, शाहदरा देहली।

४. **आर्यों की दैनिक उपासना** मू० १)
लेखक—श्री चन्द्रानन्द जी वानप्रस्थी (पूर्व श्री चान्दकरण जी शारदा)
प्रकाशक—शारदा सत्कार समिति, शारदा भवन, अजमेर।

५. **मेरी आत्मकथा** मू० २)
लेखक—श्री गंगाप्रसाद एम० ए०, रिटायर्ड चीफ जज
प्रकाशक—आर्य साहित्य मंडल, अजमेर।

६. **दयानन्दायन** मू० ४)
लेखक—महाकवि स्व० गजाधर सिंह
प्रकाशक—सूबा बहादुर सिंह, केनिंग कालेज, डिस्पेंसरी यूनिवर्सिटी लखनऊ।

* ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन *

कथालिक पुरोहितों ने वैलजियम में विद्रोह का झन्डा उठा लिया

वैलजियम के कथालिक विशप कार्डिनल वान-रोई की अध्यक्षता में वहां के कथालिक पादरियों ने वैलजियम सरकार के विरुद्ध विद्रोह की घोषणा करदी है जैसा कि २० अगस्त के ऐक्जामिनर बम्बई कथालिक इंगलिश साप्ताहिक ने सूचित किया है।

वैलजियम की प्रजातन्त्रीय सरकार ने कथालिक मिशनरियों के शासन में निरन्तर बढ़ते हुए हस्ताक्षेप को रोकने के लिये तथा विद्यार्थियों में कथालिक स्कूल और कालेजों द्वारा फैलती हुई मतान्धता तथा अन्धविश्वास का सामना करने की दृष्टि से अभी पिछले दिनों एक कड़ा कदम उठाया था और कथालिक मिशन द्वारा संचालित सब शिक्षा संस्थाओं को अपने हाथ में ले लिया था। वैलजियम में १६५६३८ विद्यार्थी इन कथालिक मिशनों की संस्थाओं में शिक्षा पा रहे थे और यह संख्या कुलसंख्या से आधी से कुछ अधिक थी।

वैलजियम की राष्ट्रीय सरकार कथालिकों की मतान्धता तथा अन्धविश्वासों की मान्यता से अनभिज्ञ नहीं है उसे भी पता है कथालिक लोक प्रजातन्त्र में कोई आस्था नहीं रखते और इटली के पोप के आधीन उसके इशारे पर कार्य करते हैं। इनमें राष्ट्रीयता भी छू नहीं गई है। अतः यदि इनको रोका न गया तो आयरलैन्ड की भान्ति वैलजियम भी एक दिन रूढ़ि वादियों के चक्कर में फंसकर नष्ट हो जावेगा। यही कारण है कि वह देश की सन्तान को इनके प्रभाव से निकालना चाहती है।

हमें विश्वास है कि वह इन मतान्ध पुरोहितों का कठोरता के साथ दमन करेगी और राष्ट्रद्रोह के अपराध में कठोर दण्ड देगी और इनके सामने किसी भी कीमत पर नहीं झुकेगी।

क्या भारत की सरकार भी वैलजियम से कुछ सबक सीखना चाहती है ?

कथालिक चर्च के कारण आयरलैन्ड विनाश के पथ पर

श्री पाल ब्लैन शर्ड ने अभी हाल में एक पुस्तक लन्दन में प्रकाशित की है जिसमें यह दर्शाया गया है कि आयरलैंड के राजनैतिक और सामाजिक जीवन में वहां का कथालिक चर्च किस प्रकार से हस्ताक्षेप कर रहा है। कहने को आयरलैंड एक गणतन्त्र है किन्तु वास्तव में वहां के कथालिक चर्च का आयरिश जनता और वहां के नेताओं तथा शासकों पर पूरा पूरा अधिपत्य है, आयरिश गणतन्त्र का संचालन जनता द्वारा चुने हुये प्रतिनिधियों के हाथों में न होकर चर्च के हाथ में हैं। यह जनता के प्रतिनिधि चर्च का मुकाबला करने में सर्वथा असमर्थ है।

चर्च का आधिपत्य प्रजातन्त्र को केवल संकुचित ही नहीं बनाता अपितु नाना प्रकार से उसको नष्ट करने पर तुला हुआ है, चर्च एक मध्य कालीन युग का संगठन है जो अधिनायक वाद और एक चाल के अनुवर्तन में विश्वास रखता है, व्यक्तिगत स्वाधीनता के लिये वहां कोई स्थान नहीं, चर्च की मातृशक्ति विवाह, तलाक, शिक्षा तथा जन सेवा आदि क्षेत्रों में जो विचार धारायें काम करती हैं वह सब दकियानूसी हैं जिसका परिणाम आयरिश जनता की गरीबी, कूप मन्डूकता नारि जाति का दमन, मतान्धता तथा चरित्रहीन वाल्य जीवन आदि हैं।

चर्च की भेद नीति के कारण आयरलैंड के उत्तर और पश्चिम भागों का सम्मिलन असम्भव

हो गया है। दक्षिण आयरलैंड में कथालिक चर्च के जुल्म और अत्याचार नित्य बढ़ते जा रहे हैं। उत्तर आयरलैंड के सुधार वादी ईसाइयों की बहुसंख्या को यह भय है कि आयरलैंड के दोनों भाग एक हुये तो उत्तर में भी कथालिकों के जुल्म बढ़ जायेंगे।

श्री पाल ब्लैन शर्ड के मत में दक्षिण आयरलैंड में प्रजातन्त्र वाद केवल कागज तक सीमित है। लेखक ने यह भी दर्शाया है कि यूनाईटेड स्टेट की जनता और राजनैतिक जवन पर कथालिक चर्च का प्रभाव नित्य बढ़ता जा रहा है। इतना ही नहीं अंग्रेजी भाषा-भाषी योरुप के अन्य देशों में भी दक्षिण आयरलैंड के मतान्ध कथालिक उपद्रव मचा रहे हैं। लेखक के मत में आयरिश कथालिकों की शक्ति संसार के लिये एक समस्या बन चली है जहां मतान्ध कथालिक चर्च का अधिपत्य है वहां प्रजातन्त्र का दिवाला निकलना स्वभाविक है और यही कारण है कि आज आयरलैंड में प्रजातन्त्र का जनाजा निकल रहा है और मतान्ध कथालिक चर्च का बोलबाला हो रहा है।

संसार के जिन देशों में यह कथालिक चर्च पनप रहा है वहां की प्रजातन्त्री सक्यूलर सरकारों को गम्भीरता के साथ इस ओर ध्यान देना होगा। भारतवर्ष के अन्दर भी ईसाइयों में सबसे अधिक शक्ति शाली यह कथालिक चर्च हैं जो पोप के अधिनायकत्व में कार्य करता है और राष्ट्र धर्म तथा प्रजातन्त्र की खुली अवहेलना करने पर उतारू हैं, नागा प्रदेश, आसाम, छोटा नागपुर, मध्य प्रदेश, आदि में इसी का जोर है। गोवा की समस्या पुर्तगाली मतान्ध कथालिकों के कारण ही विकट रूप धारण करती जा रही है। दक्षिण भारत में भी सबसे अधिक प्रचार कथालिक मिश्नरियों द्वारा ही हो रहा है।

भारत सरकार को समय रहते इस कथालिक चर्च से पूर्णतया सावधान हो जाना चाहिये और इसके प्रवाह को कड़ाई के साथ रोकना चाहिये।

नागा प्रदेश में विदेशी मिशनरियों की प्रगति
भारत सरकार को फौजी बटेलियन भेजना पड़ा

नागा प्रदेश आसाम के उत्तर में एक पहाड़ी प्रदेश है जो तिब्बत, चीन, बर्मा, से घिरा हुआ है, यह प्रदेश केन्द्रीय सरकार द्वारा शासित किया जाता है। इस प्रदेश में उरांव, मुन्डा, खिसिया, शिखिर, गारी, नागा, अबर आदि पहाड़ी जातियां आबाद है। ब्रिटिश शासन काल से इस प्रदेश में ईसाइयत का प्रचार चालू है। सैंकड़ों मिशनरी स्थायी रूप से यहां प्रचार कर रहे हैं। इनके बड़े बड़े केन्द्र हैं तथा नाना प्रकार के प्रलोभनों द्वारा यहां की जातियों को ईसाई बनाया जा रहा है। लगभग ५० प्रतिशत यह जातियां ईसाइयत के जाल में फंसाई जा चुकी है और यहां के शेष हिन्दुओं को जबरदस्ती ईसाई बनाया जा रहा है। इस प्रचार कार्य में पाशविक बल का पूरा पूरा खुला प्रयोग किया जा रहा है।

आज़ाद नागा राज्य का सुख स्वप्न यहां की जातियों को इन विदेशी मिशनरियों ने दिया और उसी भावना के बल पर राष्ट्रवादी हिन्दू-जनता का वध तक किया जा रहा है। भारत सरकार ने विवश होकर इन हिंसात्मक प्रवृत्तियों को रोकने के लिये फौज भेजी है। फौज भेजने का एक कारण यह भी है कि यह नागा लोग अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित हैं और सीमा प्रान्त की पुलिस चौकियों पर छापे भी मारने लगे थे। सरकार ने यदि यहां कड़ी कार्यवाही नहीं की और इन विदेशी मिशनरियों को तुरन्त गिरफ्तार न किया तथा आक्रान्ताओं के शस्त्र छीन कर उनका दमन न किया तो नागा प्रदेश भीषण विस्फोट के रूप में भारत की उत्तर सीमा पर एक भयंकर समस्या उपस्थित कर देगा।

इस क्षेत्र में आर्य समाज का प्रचार कार्य इस समय असम्भव हो गया है। श्री ओमप्रकाश जी पुरुषार्थी सार्वदेशिक सभा की ओर से इधर स्थिति का अध्ययन करने के लिये गये थे। उन

पर भी आक्रमण होते २ बचा है। कोई भी भारतीय सम्प्रति नागा-प्रदेश में सुरक्षित नहीं है। हम आशा करते हैं कि भारत सरकार सैन्य बल द्वारा इन राष्ट्र द्रोही नागाओं के तथा इनकी जड़ में बैठकर उकसाने वाले विदेशी मिशनरियों के विरुद्ध अविलम्ब कड़ी कार्यवाही करेगी तथा शान्ति स्थापित करेगी जिससे राष्ट्र-धर्म की रक्षा और विस्तार वहां किया जा सके तथा सीमा क्षेत्र की सुरक्षा हो सके।

'स्वर्ग नरक की कहानी विकृत मस्तिष्क की उपज है' आक्सफोर्ड ईसाई सम्मेलन में कानन वसन्त की घोषणा

कलकत्ता से प्रकाशित हैरल्ड अपने २८ अगस्त के प्रकाशन में लिखता है कि कानन जे० एस० वसन्त (वेजेन्ट) ने अभी हाल में आक्सफोर्ड के ईसाई सम्मेलन में जो भाषण दिया है उसमें स्वर्ग नरक की बाईबिल की कल्पना के सम्बन्ध में बोलते हुए आपने कहा है कि—

१. नरक की आग और मृत्यु के बाद की नरक की यातनाओं सम्बन्धी पुराने विचारों के बारे में यही कहा जा सकता है कि यह विकार ग्रस्त मस्तिष्कों की उपज है।
२. उन धोका देने वाले स्वप्नों का, जो नरक के भयानक चित्र प्रस्तुत करते हैं, जब तक उनके पीछे गम्भीर मनो-वैज्ञानिक कारण न हों, कोई मूल्य नहीं आंका जा सकता।
३. स्वर्ग सम्बन्धी परम्परागत् तर्क शून्य कल्पना सर्वथा अवांछनीय है। मध्य कालीन कथालिक तथा सुधारवादी प्रोटैस्टेन्टों को अपनी अपनी मान्यताओं के आधार पर मरणोपरान्त की परिस्थिति स्वतन्त्र विचारों की एक उड़ान मात्र है।
४. जिस काल्पनिक रूप में मरणोपरान्त की स्थिति का चित्रण किया गया है उसने इसको पूर्ण रूपेण वास्तविकता शून्य बना दिया है। नरक अपमान कारक है तो स्वर्ग एक अनावश्यक बोझा है।
५. यह स्पष्ट रूप में स्वीकार करने में कोई दोष नहीं है कि हम 'ईसाई' जीवन तथा मृत्यु के सम्बन्ध में पत्ते पर रेंगने वाले कीड़े के बच्चे के उड़ने सम्बन्धी ज्ञान से अधिक कुछ नहीं जानते।

कथालिक पत्र श्री कानन वसन्त के भाषण से बहुत उद्विग्न हैं और समझते हैं कि बसन्त की विचार धारा के अनुसार तो नरक के अभाव में ईश्वर के अधिकार को भी त्यागना पड़ेगा। इतना ही नहीं मसीह का मर कर जीना भी त्याज्य ठहराया जायेगा। इससे तो ईसाइयत का भव्य भवन ही नष्ट हो जाएगा। इत्यादि अनेक बातें यह कथालिक पत्रकार बना रहे हैं।

हम तो श्री कानन बसन्त को साधुवाद ही कहेंगे कि जिसने अपने भाषण द्वारा ईसाई पन्थ को नंगा करने की दृढ़ता दिखलाई है। हम अनेक बार कह चुके हैं कि इस प्रकाश और विज्ञान के युग में, बुद्धिवाद एवं तर्क के युग में ईसाइयत के थोथे सिद्धान्त किसी भी विचारशील मानव को सन्तोष प्रदान नहीं कर सकते।

यदि संसार के ईसाई साम्यवाद की चक्की में पिसकर चकनाचूर होने से बचना चाहते है तो उनको मतान्धता और अन्ध विश्वासों की गन्दी नालियों से निकल आना चाहिये।

नरक स्वर्ग की कहानियों को, मसीह के कुमारी मरियम के पेट से खुदा द्वारा उत्पन्न किये जाने की गप्प को सलीब पर मरने और फिर जी उठने और बाद में सदेह स्वर्ग जाने की तर्क शून्य गल्प को मानव पुत्र मसीह को खुदा का बेटा और खुदा मानने सम्बन्धी बुद्धि शून्य धारणा को, मरियम को स्वर्ग की महारानी और खुदा की माता सिद्ध करने की व्यर्थ चेष्टा को तथा मुर्दों को जिन्दा करने सम्बन्धी गपोड़ों को त्याग कर बाईबिल में जो धर्म के मूल तत्व विदित है केवल उन्हीं की मान्यता और उन्हीं का प्रचार ईसाइयों को करना चाहिये। इसी में मानव जाति का सच्चा हित तथा भारतीय शिष्य सन्त ईसा की सच्ची पूजा है।

शिवदयालु—
तिलक पार्क मेरठ सदर

* सूचनाएं तथा वैदिक धर्म प्रसार *

वेद प्रचार सप्ताह

३-८-५५ से ११-८-५५ तक आर्य समाज खंडवा में वेदप्रचार सप्ताह बड़े समारोह से मनाया गया। प्रतिदिन सायंकाल ६॥ बजे सम्मिलित यज्ञ तथा सत्संग होते रहे। मोहल्ले वाले प्रत्येक सदस्य के यहां कार्यक्रम जारी रहा।

—चन्द्र, मन्त्री

आर्यसमाज दीवान हाल, देहलीमें वेदप्रचार सप्ताह के उपलक्ष्य में ३ से ११अगस्त तक प्रतिदिन प्रातःकाल श्री पं० शिवकुमार जी शास्त्री की अध्यक्षता में सामवेद पारायण यज्ञ हुआ। रात्रि में पं० देवकी नन्दन जी के भजनों के पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी के दर्शनोपाध्याय श्री प्रो० सुखदेव जी विद्यावाचस्पति की वेदों की कथा हुई। ३-८-५५ को श्री प० इन्द्र जी वि० वा० की अध्यक्षता में श्रावणी महापर्व व सत्याग्रह बलिदान दिवस मनाया गया। ११-८-५५ को श्रीयुत डा० युद्धवीरसिंह मन्त्री दिल्ली राज्य की अध्यक्षता में कृष्ण जन्माष्टमी उत्सव मनाया गया।

आर्य प्रतिनिधि सभा सिंध का कार्य

३ अगस्त को कल्याण कैम्प नं० ३ को आर्य समाज में वेद सप्ताह का आरम्भ किया गया। जिसमें प्रो० ताराचन्द गाजरा ने वेद सप्ताह का महत्व समझाया। तत्पश्चात् हैदराबाद आर्य सत्याग्रह दिवस मनाते हुए हुतात्माओं को श्रद्धांजली अर्पण की गई। महात्मा नारायणदेव ने सुन्दर भाषण दिया।

उसी दिन रात्रि को कैम्प नं० २ की आर्य समाज में वेद सप्ताह के सम्बन्ध में एक सभा की गई।

४अगस्तको हिन्दी पुष्पभवनमें नारियल पूर्णिमा और तिलक जयन्ती पर प्रो० गाजरा जी का व्याख्यान हुआ।

वेदसप्ताह के सम्बन्धमें ५अगस्तको प्रो०जी का व्याख्यान बैरक नं० १८४, कैम्प १ में हुआ।

६अगस्त को प्रो०जी का व्याख्यान शिवाजी पार्क आर्यसमाज दादर में हुआ और वहीं पर एक क्रिश्चियन की शुद्धि भी कराई।

६अगस्तको वेदसप्ताह के सम्बन्धमें प्रो०जी का भाषण सेवा समिति मेडीकल सेन्टर कैम्प नं० १ में हुआ।

१० अगस्त को कैम्प नं० २ में प्रातः और सायं भी उपदेश तथा कृष्णाष्टमी मनाई गई।

१५ अगस्तको प्रो०जी ने सेवा समिति में देश की स्वतन्त्रता स्थिर रखने के सम्बन्ध में अपने विचार प्रगट किये।

उसी दिन आपने कैम्प नं० २ के तुलसीदास संस्कृत हिन्दी विद्यालय में "स्वतन्त्रता और भविष्य" पर व्याख्यान दिया।

१६अगस्त को प्रो०जी ने सेवा समितिमें भाषण दिया।

प्रो० जी ने २१ को डा० धर्मदासजी के घर कैम्प नं० १ में सीमन्तोन्नयन और २५ को मास्टर जीवन राम के घर कैम्प नं० ४ में नामकरण संस्कार करवाये।

३१ अगस्त को प्रो०जी ने कैम्प नं०२ में पैरिस में हाल ही में जो शुद्धाहार सम्मेलन हुआ था, उस का वृतांत एक जाहिर सभा में सुनाया।

—गंगाराम
कार्यालय मन्त्री

आर्यसमाजों के निर्वाचन

शाहपुरा

इस वर्ष श्रीमान् राजाधिराज साहब श्री सुदर्शन देव जी की अध्यक्षता में आर्य समाज शाहपुरा का निर्वाचन हुआ जो इस प्रकार है –

प्रधान-राजाधिराज, उपप्रधान-श्री रामनिवास जी जोशी, श्री किस्तूरचन्द जी तोषनीवाल-मंत्री. श्री भंवरलाल जी भ्रमर उपमंत्री, श्री रामस्वरूप जी बेली, श्री हरकचन्द जी जेवर—कोषाध्यक्ष, रामदयाल जी धीया पुस्तकाध्यक्ष, भंवरलाल जी टोक। इनके अतिरिक्त ८ अन्तरंग सदस्य निर्वाचित हुए।

तिहाड़ देहली

प्रधान-डा० दयालदास, उपप्रधान-भक्त घत्तूराम जी, श्री यज्ञरामजी, मंत्री-देवी दयाल, उपमंत्री—श्री शामलाल जी, कोषाध्यक्ष-श्री मलावाराम जी।

आर्य समाजों के उत्सव

आर्य समाज अमृतपुरी (अन्धा मुगल) देहली का द्वितीय वार्षिकोत्सव ४ से ७ नवम्बर तक मनाया जायगा। इससे पूर्व २८ अक्टोबर से ३ नवम्बर तक श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी की वेद कथा होगी।

गोपालदास
मन्त्री

गोवा सत्याग्रह

आर्य समाज संयोगिता गंज इन्दौर ने २८-८-५५ को अपनी साधारण सभा में गोवा मुक्ति आन्दोलन के शहीदों तथा पीड़ितों के प्रति श्रद्धांजलि प्रस्तुत की।

गिरिजानन्द
प्रधान

विविध सूचनाएँ

राष्ट्रपति का स्वागत

२१-८-५५ को नागपुर जाते हुए राष्ट्रपति श्रीयुत डा० राजेन्द्र प्रसाद जी आधा घंटा तक कांटा बाजी (उड़ीसा) में ठहरे। जनता ने 'गोवध बन्द हो' 'गोवा हमारा है' के गगन भेदी नारों से राष्ट्रपति का स्वागत किया और श्री पवनकुमार बसल ने 'भारत में भयंकर ईसाई षड्यन्त्र' पुस्तक राष्ट्रपति को भेंट की।

आर्य कुमार परिषद् दिल्ली का दान

श्री पं० देवव्रत जी धर्मेन्दु दरियागंज ने महात्मा हंसराज जी के जीवन चरित्र की ५०० प्रतियां आर्य कुमारों में विना मूल्य वितरण के लिए दिल्ली प्रान्तीय आर्य कुमार परिषद् को दान दी है।

देवीदयाल
प्रधान

श्रमदान

१-६-५५ को महाराज पुर (विन्ध प्रदेश) में आर्य वीरदल के ६० नवयुवकों ने शिवसागर महाराजपुर की ८० गज लम्बी व ४ फीट ऊंची नहर को जो टूट चुकी थी मिट्टी डालकर बांधा।

फर्रुखाबाद में पौराणिकों से दूसरा शास्त्रार्थ
पौराणिक पन्थ की घोर पराजय

आर्य कुमार सभा फर्रुखाबाद के महान उद्योग से फर्रुखाबाद नगर में १० और ११ जौलाई सन् १९५५ को आर्य समाज और पौराणिक पन्थ में दो शास्त्रार्थ हुए। पहिले शास्त्रार्थ का समाचार दिया जा चुका है पहिले शास्त्रार्थ के पीछे १० ता० की शाम को आर्य कुमार सभा की ओर से घोषणा की गई कि कल ४ बजे शाम को नियोग या मूर्तिपूजा पर शास्त्रार्थ होगा। ११ ता. निश्चित समय पर आर्यकुमार सभा के उत्साही युवकों ने निश्चित कल वाले ही स्थान पर जाकर डेरा लगा दिया परन्तु पौराणिक दल वहां उपस्थित नहीं था। हमारी वेदी पर श्री पं० बिहारीलाल जी शास्त्री काव्यतीर्थ का व्याख्यान इसलिये प्रारम्भ करा दिया गया कि पौराणिक दल शास्त्रार्थ करने को नहीं आया है। प० जी की सिंह गर्जना को सुनकर पौराणिक दल में खलबली मची और वह दल बलात् पं० अखिलानन्द जी और पं० माधवाचार्य जी को खींचकर ले आया वहां आकर भी माधवाचार्य जी ने एक घंटा समय नष्ट किया श्री पं० अमरसिंह जी ने बार २ उनको ललकारा कि मूर्तिपूजा या नियोग दोनों में से किसी एक या दोनों पर शीघ्र शास्त्रार्थ प्रारम्भ करिये। माधवाचार्य जी सत्यार्थ प्रकाश पर ही प्रश्न करना चाहते थे पर उसमें से किसी एक विषय नियोग आदि पर नहीं। पौराणिकों को भागता देखकर श्री पं० अमरसिंह जी ने घोषणा कर दी कि लो सत्यार्थप्रकाश पर जो चाहो सो पूछो। माधवाचार्य जी ने यह प्रश्न किये।

१. सत्यार्थप्रकाश में चोटी कटाने की आज्ञा है।
२. बच्चे को माता दूध न पिलाये धाया दूध पिलाये।
३. मरे पति की लाश के पास से उठकर पत्नी नियोग कराये फिर मुर्दे को जलाया जाय।
४. गर्भवती स्त्री के पति से न रहा जाय तो नियोग करले।
५. पति परदेश गया हो तो पत्नी नियोग करले

१. शास्त्रार्थ कानन केसरी सिद्धान्त मार्तन्ड श्री पं० अमरसिंह जी ने उत्तर में बताया कि सत्यार्थ प्रकाश में चोटी कटाने के ६ प्रमाण पंडित जी ने दिये १ वेद का, १ कात्यायन स्मृति का, १ मनुस्मृति का और ३ पाराशर स्मृति के पढ़कर सुनाये।

२. धाया के दूध पिलाने का भी कहीं आवश्यक आदेश नहीं है वैसे जैसा सत्यार्थ प्रकाश में है उससे अधिक १ चरक २ सुश्रुत और ३ गरुड़ पुराण आदि में है इनके प्रमाण सुना कर वेद मन्त्र भी प्रमाण में दिये।

३. लाश घर में पड़ी हुई रहे और नियोग के पीछे जलाई जाय ऐसा कहीं भी सत्यार्थ प्रकाश में नहीं है यदि दिखा दो तो मैं अभी सनातन धर्मी बन जाऊं। जैसा और जितना सत्यार्थप्रकाश में है वैसा और उतना नाम इस मन्त्र के भाष्य में सायणाचार्य से इतना अधिक भी कि मरे पति के पास से उठ वहां लाश भी पड़ी है।

४. न रहे जाने पर नियोग न करे तो वैसे अनर्थ होंगे जैसे उतथ्य की गर्भवती पत्नी ममता के साथ देवगुरुवृहस्पति ने बलात्कारकरके किया था। जब महाभारतसे यह लेख पढ़कर सुनाया तो पौराणिक दल में बड़ी खलबली पड़ी। गान्धारी गर्भवती थी तो धतराष्ट्र ने वैश्या

से नियोग करके एक पुत्र उत्पन्न किया यह न रहे जाने पर प्रमाण है।

५ पति परदेश गया हो तो निश्चित समय तक प्रतीक्षा करे यह मनुस्मृति में है उसके पीछे नियोग करले यह नारदीय मनु संहिता में है, पाराशर स्मृति है, पुराणों में है सब प्रमाण पढ़कर सुनाये और त्रिपाठा ब्राह्मण की कथा सुनाई उस पर भी पौराणिक दल बड़ा घबराया।

शास्त्रार्थ कानन केसरी सिद्धान्तमार्तण्ड पं० अमरसिंह जी ने एक एक प्रश्न के उत्तर में अनेकानेक प्रमाणों की झड़ी लगादी पौराणिक पंडित बीच में ही गड़बड़ डालकर उठ खड़े हुए और भागते बने।

पौराणिकों की वेदी पर पं० अखिलानन्द जी बैठे हुए थे और आर्यकुमार सभा की वेदी पर श्री पं० बिहारीलाल जी शास्त्री काव्यतीर्थ और श्री पं० लोकनाथ जी तर्क वाचस्पति बैठे हुए थे। शास्त्रार्थ में पं० अमरसिंह जी ने युक्ति और प्रमाणों की ऐसी झड़ी लगाई कि जनता चकित रह गई और पं० जी ने हंसा २ कर जनता को लोट पोट कर दिया।

आर्य समाज की इस शास्त्रार्थ में अद्भुत विजय हुई और पौराणिक दल ने बुरी तरह मुंह की खाई। बीच में ही गड़बड़ डालने से उनका पोल का और भी भडा फूट गया।

पौराणिक दल सिटी मजिस्ट्रेट के पास जाकर रोया और सिटी मजिस्ट्रेट तथा कोतवाल साहिब के द्वारा उसने शास्त्रार्थ और न हों इस पर रोक लगवादी।

कालीचरण आर्य
मन्त्री आर्य कुमार सभा
फर्रूखाबाद

दयानन्द पुरस्कार निधि

सार्वदेशिक सभा ने अपनी दयानन्द पुरस्कार निधि में से वैदिक सिद्धान्तों पर अथवा उसके समर्थन में लिखी हुई मौलिक पुस्तकों पर निम्न प्रकार ३ पुरस्कार देने का निश्चय किया है :—

प्रथम	५००)
द्वितीय	३००)
तृतीय	·००)

गत विजया दशमी के पश्चात् आगामी विजयादशमी तक प्रकाशित हुई वा प्रकाशित होने वाली पुस्तकों पर ही विचार हो सकेगा। प्रत्येक पुस्तक की ६-७ प्रतियां प्राप्त होनी चाहिये। पुस्तकें भेजने की अन्तिम तिथि ३०।११।५५ है। पुस्तकें रजिस्टर्ड ए० डी० कवर में प्राप्त होनी चाहिये और प्रत्येक पुस्तक पर लेखक का नाम व पूरा पता अंकित होना चाहिये।

कालीचरण आर्य
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली।

सार्वदेशिक पत्र (हिन्दी मासिक)

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश १० शिलिङ्ग। अर्द्ध वार्षिक ३) स्वदेश, ६ शिलिङ्ग विदेश।

२. एक प्रति का मूल्य ।।) स्वदेश, ।।=) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क वा नमूने की प्रति का मूल्य ।।=) स्वदेश, ।।।) विदेश।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये। चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा। पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने वा ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न देने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है कि उनकी इच्छा वी० पी० द्वारा चन्दा देने की है।

४. सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख को प्रकाशित होता है। किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय में अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा। डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं। अतः समस्त ग्राहकों को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये।

५. सार्वदेशिक का वर्ष १ मार्च से प्रारंभ होता है अंक उपलब्ध होने पर बीच वर्ष में भी ग्राहक बनाए जा सकते हैं।

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
६. पूरा पृष्ठ (२०×३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा ,, ८	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई ,,	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	२०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

७. सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

—व्यवस्थापक

'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(१) यमपितृ परिचय (पं० प्रियरत्न आर्य) २)
(२) ऋग्वेद में देवृकामा ,, -)
(३) वेद में असित शब्द पर एक दृष्टि ,, -)।
(४) आर्य डाइरेक्टरी (सार्व० सभा) १।)
(५) सार्वदेशिक सभा का सत्ताईस वर्षीय कार्य विवरण अ० २)
(६) स्त्रियों का वेदाध्ययन अधिकार (पं० धर्मदेव जी वि० वा०) १।)
(७) आर्य समाज के महाधन (स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी) २॥)
(८) आर्यपर्व पद्धति (श्री पं० भवानीप्रसादजी) १।)
(९) श्री नारायण स्वामी जी की सं० जीवनी (पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) -)
(१०) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण(पं०इन्द्रजी) ।=)
(११) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या (अनुवादक पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) ।)
(१२) आर्य मन्दिर चित्र (सार्व० सभा) ।)
(१३) वैदिक ज्योतिष शास्त्र(पं०प्रियरत्नजी आर्य)१॥)
(१४) वैदिक राष्ट्रीयता (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।)
(१५) आर्य समाज के नियमोपनियम(सार्व सभा)-)॥
(१६) हमारी राष्ट्रभाषा (पं०धर्मदेवजी वि० वा०) ।-)
(१७) स्वराज्य दर्शन स०(पं०लक्ष्मीदत्तजी दीक्षित)१)
(१८) राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती) ॥)
(१९) योग रहस्य (श्री नारायण स्वामी जी) १)
(२०) मृत्यु और परलोक १।)
(२१) विद्यार्थी जीवन रहस्य ,, ॥=)
(२२) प्राणायाम विधि ,, =)
(२३) उपनिषदें:— ,,

ईश	केन	कठ	प्रश्न
।=)	॥)	॥)	।=)
मुण्डक	माण्डूक	ऐतरेय	तैत्तिरीय
(छप रहा है)	।)	।)	१)

(२४) बृहदारण्यकोपनिषद् ४)
(२५) आर्यजीवनगृहस्थधर्म(पं०रघुनाथप्रसादपाठक)॥=)
(२६) कथामाला ,, ॥)
(२७) सन्तति निग्रह ,, १।)
(२८) नैतिक जीवन स० ,, २॥)
(२९) नया संसार ,, ≡)
(३०) आर्य शब्द का महत्व ,, -)॥
(३१) मांसाहार घोर पाप और स्वास्थ्य विनाशक -)
(३२) मुर्दे को क्यों जलाना चाहिए -)
(३३) इजहारे हकीकत उर्दू (ला० ज्ञानचन्द जी आर्य) ॥=)
(३४) वर्ण व्यवस्था का वैदिक स्वरूप ,, १॥)
(३५) धर्म और उसकी आवश्यकता ,, १)
(३६) भूमिका प्रकाश (पं० द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री) १)
(३७) एशिया का वैनिस (स्वा० सदानन्द जी) ॥)
(३८) वेदों में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां (पं० प्रियरत्न जी आर्य) १)
(३९) सिंधी सत्यार्थ प्रकाश २)
(४०) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता -)
(४१) ,, ,, और उस की रक्षा में -)
(४२) ,, ,, आन्दोलन का इतिहास ।=)
(४३) शांकर भाष्यालोचन (पं०गंगाप्रसादजी उ०)५)
(४४) जीवात्मा ,, ४)
(४५) वैदिक मणिमाला ,, ॥=)
(४६) आस्तिकवाद ,, ३)
(४७) सर्व दर्शन संग्रह ,, १)
(४८) मनुस्मृति ,, ५)
(४९) आर्य स्मृति ,, १॥)
(५०) आर्योदयकाव्यम् पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध, १।), १॥)
(५१) हमारे घर (श्री निरंजनलाल जी गौतम)॥=)
(५२) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर (श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी) २।) रिया० १॥)
(५३) भजन भास्कर (संग्रहकर्ता श्री पं० हरिशंकरजी शर्मा १॥)
(५४) मुक्ति से पुनरावृत्ति ,, ,, ।=)
(५५) वैदिक ईश वन्दना (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।=)॥
(५६) वैदिक योगामृत ,, ॥=)
(५७) कर्त्तव्य दर्पण सजिल्द (श्री नारायण स्वामी) ॥)
(५८) आर्यवीरदल शिक्षणशिविर(ओम्प्रकाशपुरुषार्थी ।=)
(५९) ,, ,, ,, लेखमाला ,, १।)
(६०) ,, ,, गीतांजलि(श्री रुद्रदेव शास्त्री) ।=)
(६१) ,, ,, भूमिका ≡)
(६२) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी २।)
(६३) कम्युनिज्म (पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय) २)
(६४) जीवन चक्र ,, ,, ५)

मिलने का पता:—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, बलिदान भवन, देहली ६ ।

स्वाध्याय योग्य साहित्य

(१) श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की पूर्वीय अफ्रीका तथा मौरीशस यात्रा २।)
(२) वेद की इयत्ता (ले० श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी) १।।)
(३) दयानन्द दिग्दर्शन (श्री स्वा० ब्रह्ममुनिजी ।।।)
(४) इंजील के परस्पर विरोधी वचन (पं० रामचन्द्र देहलवी) ।=)
(५) भक्ति कुसुमांजलि (पं० धर्मदेव वि० वा० ।।)
(६ वैदिक गीता (स्वा० आत्मानन्द जी) ३)
(७) धर्म का आदि स्रोत (पं० गंगाप्रसाद जी एम. ए.) २)
(८) भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक (ले०—श्री राजेन्द्र जी) ।।)
(९) वेदान्त दर्शनम् (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ३)
(१०) संस्कार महत्व (पं० मदनमोहन विद्यासागर जी) ।।।)
(११) जनकल्याण का मूल मन्त्र „ ।।)
(१२) वेदों की अन्तः साक्षी का महत्व „ ।।=)
(१३) आर्य घोष „ ।।)
(१४) आर्य स्तोत्र „ ।।)
(१५) स्वाध्याय संग्रह (स्वा० वेदानन्दजी) २)
(१६) स्वाध्याय संदोह „ ४)
(१७) सत्यार्थ प्रकाश ।।।=)
(१८) महर्षि दयानन्द ।।=
(१९) नैतिक जीवन स० (रघुनाथप्रसाद पाठक) २।।)

English Publications of Sarvadeshik Sabha.

1. Agnihotra (Bound) (Dr. Satya Prakash D. Sc.) 2/8/-
2. Kenopanishat (Translation by Pt. Ganga Prasad ji, M. A.) -/4/-
3. Kathopanishat (By Pt. Ganga Prasad M.A. Rtd. Chief Judge) 1/4/-
4. The Principles & Bye-laws of the Aryasamaj -/1/6
5. Aryasamaj & International Aryan League (By Pt. Ganga Prasad ji Upadhyaya M. A.)-/1/-
6. Voice of Arya Varta (T. L. Vasvani) -/2/-
7. Truth & Vedas (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/6/-
8. Truth Bed Rocks of Aryan Culture (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/8/-
9. Vedic Culture (Pt. Ganga Prasad Upadhyaya M. A) 3/8/-
10. Aryasamaj & Theosophical Society (Shiam Sunber Lal) -/3/-
10. Wisdom of the Rishis (Gurudatta M. A.) 4/ /-
11. The Life of the Spirit (Gurudatta M.A.) 2/-/-
12. A Case of Satyarth Prakash in Sind (S. Chandra) 1/8/-
13. In Defence of Satyarth Prakash (Prof. Sudhakar M. A.) -/2/-
14. We and our Critics -/1/6
15. Universality of Satyarth Prakash -/1/-
16. Tributes to Rishi Dayanand & Satyarth Prakash (Pt. Dharma Deva ji Vidyavachaspati) -/8/-
18. Political Science Royal Editinn 2/8/- Ordinary Edition -/8/-
19. Elementary Teachings of Hindusim „ -/8/- (Ganga Prasad Upadhyaya M.A.)
20. Life after Death „ 1/4/-

Can be had from:—**SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA, DELHI-6**

नोट—(१) आर्डर के साथ २५ प्रतिशत (चौथाई) धन अगाऊ रूप में भेजें।
(२) थोक ग्राहकों को नियमित कमीशन भी दिया जायेगा।
(३) अपना पूरा पता व स्टेशन का नाम साफ २ लिखें।

उत्तम ग्रन्थों के स्वाध्याय से अपना जीवन यज्ञमय बनायें

स्वर्गीय महात्मा नारायण स्वामी जी के अमूल्य ग्रन्थ आपके आध्यात्मिक मित्र हैं।

इन्हें मंगा कर अवश्य पढ़ें और दूसरों को पढ़ाने की प्रेरणा करें !

कर्त्तव्य दर्पण

आर्य समाज के मन्तव्यों, उद्देश्यों, कार्यों, धार्मिक अनुष्ठानों, पर्वों तथा व्यक्ति और समाज को ऊंचा उठाने वाली मूल्यवान सामग्री से परिपूर्ण—पृष्ठ ४००, सफेद कागज, सचित्र और सजिल्द। मूल्य प्रचारार्थ केवल ।।।)—२५ प्रतियां लेने पर ।।=) प्रति। अभी अभी नवीन संस्करण प्रकाशित किया है।

उपनिषद् रहस्य

ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक (छप रहा है) माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय और बृहदारण्यकोपनिषद् की बहुत सुन्दर, ओजपूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्यायें। मूल्य क्रमश

।=), ।), ।।), ।=), ।), ।), १), ४)।

मगाने में शीघ्रता करें

मृत्यु और परलोक

इसमें मृत्यु का वास्तविक स्वरूप, मृत्यु दुःखद क्यों प्रतीत होती है? मरने के पश्चात् जीवकी क्या दशा होती है? एक योनि से दूसरी योनि तक पहुँचने में कितना समय लगता है? जीव दूसरे शरीर में कब और क्यों जाता है, आदि महत्वपूर्ण प्रश्नों पर गम्भीर विवेचन किया गया है। अपने विषय की अद्वितीय पुस्तक है। मूल्य १।)

योग रहस्य

इस पुस्तक में योग के अनेक रहस्यों को उद्घाटित करते हुए उन विधियों को बतलाया गया है जिन से प्रत्येक आदमी योग के अभ्यासों को कर सकता है।

मूल्य १।)

मिलने का पता—**सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, बलिदान भवन, देहली—६**

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर
श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली-६ से प्रकाशित।

॥ ओ३म् ॥

ऋग्वेद

यजुर्वेद

सार्वदेशिक

वर्ष ३०

मूल्य स्वदेश ५)

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ।।)

अंक ६

आश्विन २०१२

नवम्बर १६५५

(जिनकी निर्वाण तिथि १४-११-५५ को मनाई जायगी)

सम्पादक—

सभा मन्त्री

सहायक सम्पादक—

श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषयानुक्रमणिका

ॐ ओ३म् ॐ

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३० } नवम्बर १९५५, आश्विन २०१२ वि०, दयानन्दाब्द १३१ } अङ्क ६

वैदिक प्रार्थना

सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् । सनिं मेधामयासिषꣳ स्वाहा ॥

यजु० ३२ । १३ ॥

हे सभापते ! विद्यामय न्यायकारिन् सभासद् सभाप्रिय सभा ही हमारा राजा न्यायकारी हो ऐसी इच्छा वाले आप हमको कीजिये । किसी एक मनुष्य को हम लोग राजा कभी न मानें किन्तु आपको ही हम सभापति सभाध्यक्ष राजा मानें, आप अद्भुत आश्चर्य विचित्र, शक्तिमय हैं तथा प्रियस्वरूप ही हैं, इन्द्र जो जीव उसको कमनीय (कामना के योग्य) आप ही हैं, "सनिम्" सम्यक भजनीय और सेव्य भी जीवों के आप ही हैं मेधा अर्थात् विद्या सत्यधर्मादि धारणा वाली बुद्धि को हे भगवन् ! मैं याचता हूँ सो आप कृपा करके मुझको देओ "स्वाहा" यही स्वकीय वाक् "आह" कहती है कि एक ईश्वर से भिन्न कोई जीवों का सेव्य नहीं है । यही वेद में ईश्वराज्ञा है सो सब मनुष्यों को मानना अवश्य योग्य है ॥

प्रान्तीय पुनर्गठन और आर्यसमाज

देश की राजनीति में इस समय प्रान्तों के पुनर्गठन के कारण बड़ी हलचल सी मची हुई है। दो प्रान्तों को छोड़कर कोई भी प्रान्त आयोग के हाथों से अछूता नहीं बचा। कांट-छांट की कैंची कहीं शहरों या जिलों पर चली है तो कहीं प्रान्त के प्रान्त उसकी मार में आ गये हैं। पुनर्गठन का प्रश्न मुख्यरूपसे राजनैतिक है। उसके पूर्णरूप से हल होने में पर्याप्त समय लगेगा। परन्तु आर्य समाज के कई क्षेत्रों में अभी से यह चर्चा चल गई है कि देश के पुनर्गठन का आर्य समाज के संगठन पर क्या असर पड़ेगा। असर पड़ना तो स्वाभाविक है। मान लीजिये आयोग के एक सदस्य के सुझाव को मान कर उत्तर प्रदेश दो भागों में विभक्त कर दिया जाय, उस दशामें क्या दो आर्य प्रतिनिधि सभायें बनाई जायेंगी? या आर्यसमाज की दृष्टि से वह एक ही प्रान्त रहेगा। यदि आयोग की सिफारिश को मान लिया जाय तो हैदराबाद का वर्त्तमान प्रान्त तो सर्वथा समाप्त ही हो जायगा। इस समय हैदराबाद आर्य समाज का एक जबरदस्त गढ़ बना हुआ है। उसके टूटने से दक्षिण में आर्य समाज की शक्ति अत्यन्त निर्बल हो जायेगी। हैदराबाद की बटी हुई आबादी जिन प्रान्तों में जुड़ रही है उनमें से दो में तो आर्य समाज की शक्ति नगण्य के बराबर है। नये विदर्भ प्रान्त में आर्य समाज की क्या दशा होगी उसकी अभी कल्पना नहीं हो सकती। इसमें सन्देह नहीं कि हैदराबाद के विघटन से आर्य समाज की शक्ति को भारी धक्का पहुँचेगा।

प्रश्न यह है कि प्रान्तों के नये विभाजन की दशा में आर्यसमाज को क्या करना चाहिये। वह राजनैतिक पुनर्गठन के हो जाने पर अपने प्रान्तों के संगठन को उसी के सांचे पर ढाल ले या अपनी सुविधा के अनुसार संगठन का निर्माण करे? प्रश्न बहुत विकट है। यह स्वाभाविक बात है कि शीघ्र अथवा देर में, प्रान्त की राजधानी ही उसकी शक्ति का केन्द्र बन जाती है। प्रायः आर्थिक, सामाजिक तथा नैतिक प्रवृत्तियां राजधानी में एकत्र हो जाती हैं। उस दृष्टि से प्रायः सभी प्रवृत्तियों को केन्द्रित हो जाना पड़ता है। इस प्रकार इच्छा हो या न हो, सभी प्रकार की संस्थाओं को अन्त में राजनैतिक राजधानी में मुख्य कार्यालय बनाने के लिए बाधित होना पड़ता है। प्रान्त के केन्द्र से प्रान्त भर में कार्यक्रम भी सुगम हो जाता है। उस दृष्टिकोण से देखें तो प्रतीत होता है कि राजनैतिक पुनर्गठन के पूरा हो जाने पर आर्य समाज को उसके अनुसार थोड़ा बहुत पुनर्गठन अवश्य करना पड़ेगा। परन्तु साथ ही यह न समझना चाहिए कि आर्य समाज का पुनर्गठन सर्वतोभावेन राजनैतिक पुनर्गठन के अनुसार ही होगा। यदि अपनी शक्ति की रक्षा के लिये हमें अपने संगठन को कुछ अंशों में भिन्न भी रखना पड़े तो उसमें कोई बाधा नहीं होनी चाहिए।

यह तो है विचार शैली जिसके अनुसार हमें इस समस्या पर विचार करना होगा, परन्तु अभी वह समय दूर है। अभी तो यही मालूम नहीं कि पुनर्गठन का क्या अन्तिम रूप होगा। जब अन्तिम रूप का निश्चय हो जायेगा तब अवसर होगा कि आर्य समाज की प्रतिनिधि संस्थायें अपने पुनर्गठन पर विचार करें। उस समय देश के आर्य प्रतिनिधियों का एक कन्वेंशन करने की आवश्यकता पड़ेगी, जो सारी समस्या पर

गम्भीरता से विचार करके कार्य-नीति का निर्धारण करे।

इन्द्र विद्यावाचस्पति

आवश्यक सुझाव

इसी अंक में हम पं० शिवदयालु जी का पत्र प्रकाशित कर रहे हैं। उसमें पण्डित जी ने जो आर्यजनों को सुझाव दिया है हम उसका समर्थन करते हैं। यह उचित ही है कि आर्य धर्मावलम्बियों के बच्चे ऐसे शिक्षणालयों में शिक्षा प्राप्त न करें जिनमें वैदिक धर्म के विपरीत शिक्षा दी जाती हो। यह सर्व सम्मत सिद्धान्त है कि जैसे कच्चे घड़े पर लगा हुआ निशान अमिट हो जाता है वैसे ही बचपन के संस्कार हृदय पर गहरा प्रभाव उत्पन्न करते हैं। पण्डित जी के इस सुझाव में भी बहुत सा सार है कि राष्ट्रीय सरकार की ओर से उन शिक्षणालयों को आर्थिक सहायता न मिलनी चाहिये जिनका मुख्य उद्देश्य विशेष धर्म का प्रचार करना है। यह राज्य लौकिक कहा जाता है। ऐसी दशा में ऐसे शिक्षणालयों को सरकारी सहायता मिलना, जिनका लक्ष्य राष्ट्रीयता विरोधी सम्प्रदायों को प्रोत्साहन देना हो, अनुचित ही है। यह ठीक है कि प्रत्येक धर्म के प्रचारकों को अपने धर्म का प्रचार करने का पूर्ण अधिकार है, परन्तु उस अधिकार में दो शर्तें हैं। पहली शर्त तो यह है कि उस अधिकार को प्रयोग में लाने से राष्ट्रीयता में बाधा नहीं पहुँचनी चाहिये और दूसरी शर्त यह है कि वह अधिकार सब के लिए एक सा हो। यह न होना चाहिये कि उस संस्था को तो सरकारी सहायता न मिले, जो किसी भारतीय धर्म का प्रचार करती हो और ऐसी संस्था को सहायता मिल जाय जिसका परिणाम राष्ट्र की एकता के लिए अच्छा न हो। प्रचार का अधिकार और सरकारी सहायता यह दो अलग २ चीजें हैं। समय आ गया है कि सम्पूर्ण भारतीय जनता और भारत की सरकार गोआ और आसाम के ईसाई प्रधान प्रान्तों की अवस्था से शिक्षा ग्रहण करके मिशनरियों के खतरे का डट कर मुकाबला करे।

इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियां ❀

महर्षि का बलिदान

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती सब से अधिक सत्य को प्रेम करते थे। जिस बात को वे असत्य समझते थे उसके साथ वे किसी अवस्था में भी समझौता न करते थे। वे सत्य के लिए जिये और सत्य की पवित्र वेदी पर उन्होंने अपने प्राणों का उत्सर्ग किया। अपने मजहब और अपने देश पर शहीद होने वाले बहुत से व्यक्ति हो सकते हैं परन्तु एक मात्र सत्य पर मरने वाले बिरले ही होते हैं। सत्य के लिए मरना संसार के लिए मरने के समान होता है। इस प्रकार ऋषि दयानन्द को संसार के लिए मरने वाले 'शहीदों' में स्थान प्राप्त है। महर्षि दयानन्द का रक्त अन्य दिव्य महात्माओं के समान इस उच्चतम स्थापना की सम्पुष्टि में बहा था कि वे परमात्मा के प्यारे थे ईश्वर के भय के अतिरिक्त उन्हें अन्य किसी का भय न था और वे दिव्य रूप में स्वतन्त्र थे। वे परमात्मा की सेवा में गिरे और गिर कर सितारा बनकर चमके। आओ हम यह देखें उनकी सत्य निष्ठा और संसार हित की भावना कितनी उग्र थी। वे लिखते हैं :—

"जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा ही कहना, लिखना और मानना सत्य कहाता है। जो सत्य है उसको सत्य जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना (मैंने) सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है। वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाय।

(सत्यार्थप्रकाश भूमिका)

जो मैं निरानिरी संसार का ही भय करता और सर्वज्ञ परमात्मा का कुछ भी नहीं कि जिसके अधीन मनुष्य के जीवन मृत्यु और सुख दुःख हैं तो मैं भी ऐसे ही अनर्थक वाद विवादों में मन (दे) देता परन्तु क्या करूं मैं तो अपना तन, मन, धन सब कुछ सत्य के ही प्रकाशनार्थ समर्पण कर चुका। मुझसे खुशामद करके अब स्वार्थ का व्यवहार नहीं चला सकता किन्तु संसार को लाभ पहुँचाना ही मुझ को चक्रवर्ती राज्य के तुल्य हैं।

मैंने इस धर्म कार्य का सर्व शक्तिमान् सत्य-ग्राहक और न्याय सम्बन्धी परमात्मा की शरण में शीश धर के उसी के सहाय के अवलम्ब से आरम्भ किया है।"

(भ्रान्तिनिवारण भूमिका)

"इस ग्रन्थ में ऐसी कोई बात नहीं रखी है और न किसी का मन दुखाना वा किसी की हानि पर तात्पर्य है किन्तु जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो सत्यासत्य को लोग जान कर सत्य को ग्रहण और असत्य का परित्याग करें क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है। यह लेख केवल सत्य की वृद्धि और असत्य के ह्रास होने के लिए है न किसी को दुःख देने वा हानि करने अथवा मिथ्या दोष लगाने के अर्थ... जो सर्वमान्य सत्य विषय हैं वे तो सब में एक से हैं झगड़ा झूठे विषयों में होता है।

(सत्यार्थ प्रकाश भूमिका)

यद्यपि मैं आर्यावर्त्त देश में पैदा हुआ और बसता हूँ तथापि जैसे इस देश के मतमतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न कर यथातथ्य प्रकाश करता हूँ वैसे ही (मैं) दूसरे देशस्थ वा मतोन्नति वालों के साथ भी बर्तता हूँ। जैसा मैं स्वदेश वालों के साथ मनुष्योन्नति के विषय में बर्तता हूँ वैसा विदेशियोंके साथ भी तथा सब सज्जनों को भी बर्तना योग्य है।"

(सत्यार्थप्रकाश भूमिका)

लोग बुराई पर भी शहीद होते हैं। गुणों पर शहीद होने वालों की अपेक्षा उनकी संख्या भी अधिक होती है परन्तु सन्तों महात्माओं और आप्त जनों के बलिदान से 'शहादत' को गौरव प्राप्त होता है। महर्षि दयानन्द ने अपने बलिदान से न केवल 'शहादत' को ऊंचा उठाया, अपितु अपने घातक का क्षमा करके और प्राणों की रक्षार्थ भाग जाने में उसे सहायता देकर 'शहादत' को गौरवान्वित भी किया। असीम मानव प्रेम तथा मरते हुए भी संसार के हर्ष समुदाय में योग देना जारी रखने की ऋषि दयानन्द जैसी मिसाल मुश्किल से अन्यत्र मिल सकती है।

केवल मात्र मृत्यु से ही मनुष्य हुतात्मा नहीं बनता है उद्देश्य से ही हुतात्मा बनता है। उद्देश्य जितना पवित्र होगा बलिदान भी उतना ही ऊंचा होगा। महर्षि का उद्देश्य विशुद्ध वेद ज्ञान से संसार को प्रकाशित एवं लाभान्वित करना था। उन्होंने मानव जाति को वास्तविक आध्यात्मिक एवं भौतिक उन्नति का मार्ग दिखाया। उन्होंने जन साधारण को मिथ्या ज्ञान-अज्ञान, अन्ध-विश्वास और समाज के शरीर में घुन की तरह व्याप्त विविध दुष्प्रथाओं तथा कुरीतियों की दासता से मुक्त करने का प्रयत्न किया। अपने सत्य प्रचार के कारण उन्हें अनेक कष्ट और अत्याचार सहन करने पड़े परन्तु परमात्मा ने उन्हें जो पवित्र कार्य सौंपा था वे उसके संचालन में अडिग रहे। उन अत्याचारों से अविचलित रहकर उन्होंने न केवल आत्म शक्ति की सर्वोपरिता ही सिद्ध की प्रत्युत उन्होंने अपने तप और त्याग से यह भी सिद्ध कर दिखाया कि शहीद के रूप में मरने की अपेक्षा शहीद के रूप में जीवित रहना अधिक कठिन होता है।

आज उनके महान् उपकारों के कारण संसार

उनकी प्रशंसा करता और उनका आदर करता है। संसार की यह रीति है कि जीवन में तो महा-पुरुषों पर अत्याचार होते हैं और मरने के बाद उनका गुणानुवाद होता है। महर्षि इस बात के अपवाद न थे।

महर्षि दयानन्द ने प्राण त्यागते समय इन शब्दों का उच्चारण किया था।

"प्रभो ! तेरी इच्छा पूण हो।"

ये शब्द स्वतः उस हृदय से ही निकल सकते हैं जो परमात्मा की आज्ञा पालन में निरत रहता है। जो महान पुरुष यह कहनेमें समर्थ होते हैं कि "मेरी नहीं वरन तेरी (ईश्वर की) इच्छा पूर्ण हो।" वे रेगिस्तान को हरा भरा बना देते हैं और जो यह कहते हैं, "मेरी मर्जी चलेगी तेरी नहीं।" वे हरे भरे को ऊजड़ बना दिया करते हैं। महर्षि ने परमात्मा को इच्छा को ही अपना विधान बनाया हुआ था इसलिए परमात्माका साहाय्य उन्हें प्राप्त रहा और उनके लिए प्रत्येक बोझ हल्का और प्रत्येक कर्त्तव्य आनन्द प्रद बना रहा। वे अपने उच्च जीवन से हमें जीना और मरना सिखा कर महान् प्रकाश में विलीन हुए थे।

आर्यसमाज की नींव उसके प्रवर्तक महर्षि के बलिदान से दृढ़ बनी है। अतः जब तक आर्य समाज में महर्षि दयानन्द और उनके पश्चात् के हुतात्माओं की सत्य के लिए मरमिटने की भावना बनी रहेगी तब तक उसका भविष्य उज्ज्वल रहेगा।

परिवार नियोजन की योजना

सरकारी सूचना के अनुसार केन्द्रीय शासन परिवार नियोजन के आन्दोलन पर ७३ नगरों, ४८५ बड़े कस्बों और ५०५८० ग्रामों में ६ करोड़ रुपया व्यय करने वाला है। इस आन्दोलन का उद्देश्य बढ़ती हुई जनसंख्या को कम करके प्रजा का भौतिक स्तर ऊंचा करना और देश की आर्थिक समस्या का हल करना ही हो सकता है। कृत्रिम साधनों से जिन्हें हम भ्रष्ट साधन कह सकते हैं सन्तति नियमन का कार्य नीति और स्वास्थ्य दोनों दृष्टियों से अवांछनीय और हानिकारक है। निस्सन्देह अमर्यादित सन्तान वृद्धि अनुचित है और एक बुराई है परन्तु बुराई को बुराई से मर्यादित करना घोर अपराध है। आत्म-संयम ही आर्य मर्यादा है जिसकी रक्षा करना प्रत्येक आर्य सभ्यता प्रेमी का परम कर्त्तव्य है।

मदरास का अंग्रेजी पत्र 'डेमोक्रेसी' लिखता है :—

"हमारी परिवार नियोजन की योजना आत्म संयम पर आश्रित है। जितने बच्चों का लालन पालन और शिक्षण करने में हम समर्थ हों उनसे अधिक बच्चे उत्पन्न करने की यदि हमारी इच्छा न हो तो हमें संयम से काम लेना चाहिए ' यही आर्य मर्यादा है। पश्चिम के लोगों का . वावस्था में विवाह होता है अर्थात जब लड़का कम से कम २१ वर्ष का होता है और लड़की १८ वर्ष की होती है। यदि भारतवर्ष में हमारी लड़कियों का विवाह कम से कम बड़ी आयु में होने लगे तो भारत की जनसंख्या प्रत्येक दशाब्दी में १० लाख के हिसाब से कम होने लगे। अकेला यही सामाजिक सुधार चमत्कारिक प्रभाव दिखा सकता है।"

इस दिशा में आर्य समाज के सदस्य और आर्यजन अपने कर्त्तव्य से परिचित हैं। उन्हें स्वास्थ्य और आचार को गिराने तथा कामुकता में वृद्धि करने वाली इस दूषित योजना के विरुद्ध अपनी आवाज दृढ़ता और निर्भीकता पूर्वक उठानी चाहिये। आर्य माताओं और आर्य पुरुषों को इस घातक आन्दोलन से सावधान रह कर स्वाभाविक एवं नैतिकता से परिपूर्ण आत्म-संयम

की आर्य मर्यादा को ऊंचा रखना चाहिये।

यौन अपराधों की बढ़ती हुई संख्या

गृह मन्त्री बो खिन मौंगले ने ब्रह्मा में यौन अपराधों की बढ़ती हुई संख्या पर चिन्ता प्रकट की है। उन्होंने कहा कि इन अपराधों का दोष प्रायः खराब आर्थिक दशा और अशिक्षा के सिर मढ़ दिया जाता है परन्तु इसके ४ मुख्य कारण हैं। एक तो समाज के नैतिक मान का पतन हो गया है। दूसरा कारण शहरों का भीड़ भरा जीवन और उसके द्वारा उत्पन्न होने वाली सामाजिक उपेक्षा है। तीसरे धार्मिक विश्वास घट रहा है। चौथे पारिवारिक जीवन टूटता जा रहा है। बर्मी सम्पादकों से गृहमन्त्री ने इस विषय पर विचार विमर्श किया और इन अपराधों को रोकने के लिए कड़े कदम उठाने का निश्चय किया। सम्पादकों ने बताया कि यौन अपराध करने वालों को मानसिक व्याधि से सताया हुआ मान कर विशेषज्ञों द्वारा इलाज कराना चाहिए। यह सुझाव दिया गया कि ऐसे अपराध करने वालों को और कड़ी सजाएं दी जायें। देश का नैतिक मान ऊंचा उठाने के लिये बराबर प्रयत्न करने पर भी जोर दिया गया।

अमेरिकन राजदूत से सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से श्री शिवचन्द्रजी की भेंट

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के आजीवन सदस्य श्री शिवचन्द्र जी ने अमेरिका के राजदूत श्री जान शर्मन कूपर से अमेरिकन दूतावास नई देहली में ४५ मिनट तक भेंट की और आर्य धर्म, आर्य संस्कृति, महर्षिदयानन्द सरस्वती तथा आर्य समाज सम्बन्धी १७ अंग्रेजी ग्रन्थ उक्त सभा की ओर से भेंट किये और उन ग्रन्थों में जो विषय अंकित हैं उन्हें समझाया जिनसे राजदूत महोदय बड़े प्रभावित हुए।

श्री राजदूत महोदय ने आर्य समाज शब्द का अर्थ तथा उसके उद्देश्य पूछे जो विस्तार सहित उन्हें समझाये गये और उनका ध्यान आर्यसमाज के दश नियमों की ओर आकर्षित किया गया जो उन्होंने आद्योपान्त पढ़े। इन नियमों की व्याख्या समझाते हुए श्री शिवचन्द्र जी ने उन्हें बताया कि आर्य समाज का उद्देश्य समस्त संसार को श्रेष्ठ तथा एक विशाल परिवार के रूप में बनाना है।

श्री राजदूत महोदय ने 'धर्म' की व्याख्या पूछी। उत्तर में उन्हें बताया गया कि 'धर्म' सनातन सार्वभौम और सर्वतन्त्र सत्यों के आधार पर उन कर्तव्यों को कहते हैं जो मनुष्य को उस प्रकार की सांसारिक उन्नति की ओर ले जाते हैं जो सांसारिक उन्नति अन्त में मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति कराती है जो कि मनुष्य का अन्तिम ध्येय है और आर्य धर्म तथा आर्य संस्कृति की चरम सीमा है।

इन उपरोक्त व्याख्याओं से श्री राजदूत महोदय इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने श्री शिवचन्द्र जी से इच्छा प्रकट की कि वह उनसे समय २ पर अवश्य मिलते रहें और उन्हें इस प्रकार के भावों से जानकारी प्राप्त कराते रहें। श्री राजदूत ने पं० शिवचन्द्र जी को पुनः नवम्बर मास के दूसरे सप्ताह में आमन्त्रित किया है।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से श्री शिवचन्द्र जी सब ही विदेशी राजदूतों से उन्हें आर्य धर्म, आर्य संस्कृति तथा आर्य राजनीति से जानकारी प्राप्त कराने के लिये समय समय पर भेंट किया करेंगे। इस भेंट का पूरा विवरण सार्वदेशिक के आगामी अङ्क में प्रकाशित किया जायगा।

दिगम्बर जैन समाज समय की गति पर ध्यान दे

इन्दौर के दिगम्बर जैन मन्दिरों में हरिजनों के प्रवेश के प्रश्न पर दोनों समुदायों में उत्तेजना देख पड़ती है। प्रवेश का विरोध करने वाले यह

सोचते प्रतीत होते हैं, कि हरिजनों के प्रवेश से मन्दिर भ्रष्ट हो जायेंगे। निश्चय ही नैतिक और वैज्ञानिक दोनों दृष्टिकोणों से वे लोग गलती पर हैं। १९५५ के अस्पृश्यता निवारक कानून के अनुसार हरिजनोंको मंदिर प्रवेश का हक प्राप्त है। उनका प्रवेश निषिद्ध करने वा रोकने वाले कानून के अनुसार अपराधी एवं दण्डनीय हैं।

हरिजन भाई मानव प्राणी हैं। जैनी लोग यह दावा करते हैं कि उनका मत मानवता, समानता, दया और अहिंसा पर आधारित है। उनके मत में अस्पृश्यता की भी गुंजायश नहीं है क्योंकि वह जात पांत को सिद्धान्ततः स्वीकार नहीं करता तब फिर हरिजनों को 'हरिजन' मान कर उन्हें मन्दिर प्रवेश के अधिकार से वंचित क्यों किया जाता है यह समझ में नहीं आया। जैन भाइयों के इस व्यवहार से समझदार वर्ग में उनके मत की अप्रतिष्ठा ही होगी। सत्य यह है कि 'अस्पृश्यता' का रोग जैन समाज में भी प्रविष्ट हो गया है इसी लिये यह आन्दोलन खड़ा हुआ है।

यदि जैन भाई अपने धार्मिक सिद्धान्त की रक्षा करना चाहते हैं और इस दावे को सत्य सिद्ध करना चाहते हैं कि उनका 'मत' मानवता की और मानवप्रेमकी शिक्षा देता है तो उन्हें हरिजनों के लिए अपने मन्दिर खोल देने चाहियें।

मूर्तिपूजा में हमारी आस्था नहीं है। हरिजन लोग मूर्ति के दर्शन से न तो मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं और न अपने को पवित्र ही बना सकते हैं। हमें उनके मन्दिर प्रवेश के प्रश्न पर केवल इतनी दिलचस्पी है कि उन्हें अपने अधिकार से वंचित न किया जाय जो नैतिक, वैधानिक और कानूनी तीनों दृष्टियों से उन्हें प्राप्त है।

कुछ जैनी भाई यह कहते हैं कि हम हिन्दू नहीं हैं अतः अस्पृश्यता निवारक कानून उन पर लागू नहीं होता। उनका यह कथन यथार्थ नहीं है। सामाजिक रूप से हिन्दुओं और जैनियों को पृथक समझना या बताना सत्यपर पर्दा डालना है।

प्रोफेसर घीसूलाल जी

अजमेर निवासी प्रो० घीसूलाल जी के निधन से राजस्थान अपने एक पुराने और अनुभवी कार्यकर्ता से वंचित हो गया है। प्रोफेसर महोदय बड़े विद्वान् और कानून विशारद थे। वे स्वनिर्मित व्यक्ति थे। परोपकारिणी सभा के पुराने और अनन्य सेवक थे। वर्षों पर्यन्त आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के मन्त्री और सार्वदेशिक सभा के सदस्य रहे। आर्यसमाज जिस गति से पुराने और परखे हुए सेवकों से वंचित हो रहा है और उनके स्थान की पूर्ति नहीं हो रही है, यह बात चिन्तनीय है। इस महान् दुःख में हमारी समवेदना प्रो० महोदय के परिवार के साथ है। परमात्मा से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को सद्‌गति मिले।

पाकिस्तानियों का गौरांगना-प्रेम

पिछले दिनों सहयोगी हिन्दुस्तान लिखता है:—

लन्दन के अखबारों में एक पाकिस्तानी छात्र तथा एक ब्रिटिश छात्रा के प्रेम की काफी चर्चा हुई थी। पाकिस्तानी छात्र का नाम है सैयद नाजिमुद्दीन पाशा और ब्रिटिश छात्रा का नाम है जैनट शार्प। छात्र की आयु २१ वर्ष है और छात्रा की १९ वर्ष। इन दोनों का विवाह तय हुआ है।

जैनट शार्प रोमन कथालिक ईसाई है और नाजिमुद्दीन न केवल मुसलमान, किन्तु उनमें भी सैयद, और साथ ही पाशा। जैनट का कहना है कि विवाह के बाद भी हम दोनों अपने २ धर्मों को मानते रहेंगे और हम में कोई संघर्ष नहीं होगा। जैनट ने अन्त में एक पते की बात कही है "मेरा मंगेतर पैसे वाला है।",

\+ + +

पाकिस्तान के 'चट्टान' नामक पत्र में शोरिश कश्मीरी ने लिखा था—"जब से पाकिस्तान बना

है तब से यहाँ के अमीरों और हाकिमों में एक नई बीमारी घर कर गई है। सिन्ध, सरहद और बलोचिस्तान तथा पंजाब के पश्चिमी जिलों में तो यह बीमारी अमरबेल की तरह फैल गई है। वहां के एक-एक खान और एक-एक जमींदार एक-एक पीर के हरम में कई-कई औरतें ढोरों की तरह रहती हैं। अधिकांश भले मानसों ने दौलत के चढ़ते हुए नशे में नये फैशन की बीवियां ढूंढी हैं और दस्तावेज की हैसियत से अपने साथ चिपका ली है।"

यों बहु विवाह इस्लाम में निषिद्ध नहीं है, और चार-चार पत्नियां तक रखने की शरियत की ओर से स्वीकृति है। सिन्ध विधान सभा के एक सदस्य ने तो बड़ा मनोरंजक सुझाव दिया था—"मन्त्रियों को चार-चार विवाह अवश्य करने चाहियें। हां, ऐसा करते समय उन्हें स्त्रियां अलग अलग प्रान्तों की चुननी चाहियें जिससे प्रांतीयता का विष दूर करने वाले इस नुस्खे से पंजाब और सीमाप्रान्त में स्त्रियों की कमी और सिन्ध तथा बंगाल में स्त्रियों के बाहुल्य की विषम समस्या भी सुलझ जाती और १०० पुरुषों के लिए ८८ स्त्रियां पाकिस्तान के लिए एक राष्ट्रीय समस्या है, इस गम्भीर समस्या के हल के लिए शासक वर्ग की ओर से सक्रिय पथ-प्रदर्शन भी हो जाता।

परन्तु मन्त्रियों के चार २ विवाह करने से भी पाकिस्तान की यह राष्ट्रीय समस्या सुलझती नजर नहीं आती, क्योंकि नये विवाहार्थियों का रुख अब पाकिस्तानी महिलाओं के प्रति न होकर यूरोप या अमरीका की गौरांगनाओं की ओर है। भूतपूर्व केन्द्रीय मन्त्री श्री एम० ए० एच० इस्पहानी और पंजाब के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री सर फरोजखां नून तो अपनी यूरोपीयन बीवियों के कारण समाज और राष्ट्र के इस दिशा में नेता रहे ही. पाकिस्तान के नये गवर्नर जनरल इस्कन्दर मिर्जा की ईरानी बीवी ने भी पाकिस्तानी बेगमों को ईर्ष्या की भट्टी में जलाने में कसर नहीं छोड़ी। किन्तु मिर्जा साहब के साहबजादे ने ऐन पाकिस्तान स्थित अमरीकी राजदूत की महाश्वेता सुकन्या को अपनी बेगम बनाया। पाकिस्तान के प्रधानमन्त्री श्री मुहम्मद अली ने भी अपनी प्राइवेट सेक्रेटरी कनाडियन तरुणी को बेगम मुहम्मद अली की सौत बनाकर ही दम लिया। पाकिस्तानके क्रिकेट के विख्यात खिलाड़ी श्री कारदार ने लन्दन पहुँचकर जब एक ब्रिटिश युवती से किसी को कानोंकान खबर हुएबिना गुपचुप विवाह कर लिया और पहली पत्नी को छोड़ दिया तब औरों की तो बात ही क्या, स्वयं उनके साथी खिलाड़ियों तक को आश्चर्य हुआ था। कहा जाता है कि अब तक लगभग ८० सरकारी अफसर गौरांगनाओं से शादी कर चुके हैं।

कुछ दिन पहले पाकिस्तान की एक रियासत के शेख ने विदेशी पत्रों में यह विज्ञापन दिया कि उन्हें एक ऐसी यूरोपियन बीवी चाहिये जो बुर्के में रह सकती हो। और उनके विज्ञापन के उत्तर में १६ श्वेतांगनाओं ने अपनी सेवायें अर्पित कीं। उन १६ में से किसको (या किस-किस को) उन्होंने सेवा का सुअवसर दिया, यह पता नहीं लग सका।

\+ \+ \+

प्रश्न यह है कि क्या केवल पाकिस्तानियों का ही गौरांगना प्रेम बढ़ा है, या गौरांगनाओं का भी पाकिस्तान-प्रेम बढ़ा है ? अनुभवी लोग कहते हैं कि एक हाथ से ताली नहीं बजती।

पर उसके मूल कारण की ओर जैनट शार्प के इन शब्दों में संकेत है : "मेरा मंगेतर पैसेवाला है।"

सय्यद नाजिमुद्दीन पाशा तो अपने बुजुर्गों के ही पाक पद-चिन्हों पर चलने का तुच्छ-सा प्रयत्न कर रहे हैं।

—रघुनाथप्रसाद पाठक

वैदिक यज्ञ और स्वर पाठ

[लेखक—श्रीयुत आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री, पोरबन्दर]

वैदिक यज्ञों का वर्णन श्रौत सूत्रादि ग्रन्थों में मिलता है। परन्तु इनके विद्यमान होते हुए भी आज बहुत से यज्ञों की प्रक्रिया की परम्परा लुप्त सी ही है। अश्वमेध आदि यज्ञों का नाम और करने का विधान हमें पूर्वोक्त श्रौतसूत्रों आदि में मिलता है परन्तु उनको यदि कराने को दे दिया जावे तो बहुत थोड़े ही व्यक्ति होंगे जो कराने में समर्थ होंगे। कारण यह है कि उनकी परम्परायें अब चालू नहीं हैं। यज्ञ सम्बन्धी छोटी २ बातें आज विचारणीय कोटि में आ जाती हैं। तथा उनका समाधान करना कठिन पड़ गया है। वस्तुतः ये विषय पुस्तक में पढ़ लेने मात्र के नहीं, बल्कि परम्परा चालू करने और घोर अभ्यास के हैं। संस्कारों में बहुत साधारण कर्म हैं परन्तु केवल पोथी लेकर बैठने से सफलता नहीं प्राप्त होती। प्राचीन समय पुरोहित प्रथा थी और याज्ञिकों का सम्प्रदाय भी चलता था। दर्श, पौर्णमास की क्रिया पद्धति लघु होते हुए भी ग्रन्थों में इसका बाह्याडम्बर कितना घबड़ा देने वाला है। सोमयाग की बात भी आज कठिनता से समझ में आती है। कराने की पद्धति में कितनी कठिनाई है विचारक स्वयं जान सकते हैं। "गोमेध-यज्ञ" की पद्धति के भी विचारपूर्वक निर्णीत करने की आवश्यकता पड़ेगी। यदि वैदिक ग्रन्थों में इसकी विधि है तो उसे ही अपनाना पड़ेगा। यदि नहीं है तो हम अपनी विधि युक्तियुक्त और शास्त्रीय ढंग पर बना सकते हैं। श्री पूज्य स्वामी आत्मानन्द जी महाराज ने गोमेध यज्ञ की एक विधि बनाई भी है और इसका प्रयोग भी श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी दण्डी द्वारा सुचारु ढंग से हैदराबाद में किया गया। 'गोमेध' यज्ञ की विधि बना कर पूज्य स्वामी जी महाराज ने विद्वानों के लिये मार्ग निर्माण किया है तथा उनका यह कार्य प्रशंसनीय है। यज्ञकी वेदी और उसके दूसरे उपस्करों को विधिवत् सजाने वाले व्यक्ति भी आज नहीं मिलते। प्रसन्नता है कि इस दिशा में मान्य स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज अच्छी जानकारी रखते हैं। श्री पं० परशुराम शर्मा जी भी इस विषय के बड़े ही जानकार थे। अस्तु, पूज्य स्वामी आत्मानन्द जी महाराज और पू० स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज दोनों ही महर्षि के अनन्य भक्त और उनके सिद्धान्तों की धारणा को मानने और पालन करने वाले हैं।

गोमेध यज्ञ की विधि को प्रांजल बनाने का साधन श्रौत सूत्रों में मिल सकता है। उसके ढूंढने की आवश्यकता है। मुझे जहां तक अध्ययन से ज्ञात हुआ है, मैं ऐसा ही समझता हूँ और पाता हूँ! लौगाक्षि-गृह्य सूत्र की ७१ वीं कण्डिका में एक "गोयज्ञ" वर्णित है। उसमें प्रथम सूत्र में लिखा है—"गावो भग" इति गोयज्ञस्य-अर्थात् "गावो भग" इस प्रतीक वाला मन्त्र गोयज्ञ का है। वहां पर टीकाकार देवपाल ने यह भी लिखा है कि यह "गोयज्ञ" ब्याई हुई गाय स्वास्थ्य और सद्गर्भ ग्रहण के लिये बसन्त में किया जाता है। इसमें "सीरा युञ्जन्ति" आदि हल चलाने और कृषि सम्बन्धी मन्त्रों का विनियोग है। मध्य में सीता यज्ञ के भी मन्त्र आ गये हैं। देखने से पता चलता है कि यहां गोयज्ञ में गोवंश की समृद्धि और उससे सम्बद्ध कृषि की समृद्धि दोनों का समन्वय है। यह गोमेध के लिये उपयोगी वस्तु है, नाम भले ही गोमेध न

होकर "गोयज्ञ" है। इसमें विनियुक्त सभी मन्त्र उपयोगी हैं। ताण्ड्य-ब्राह्मण के १९ वें अध्याय के १३ वें खंड में "गोसव" नामी यज्ञ का वर्णन है। यह यज्ञ कात्यायन श्रौत सूत्र २२।११।३१ और आपस्तम्ब २२।१२।१७ में वर्णित है। उसमें कात्यायन के अनुसार सहस्र बैलों की दक्षिणा दी जाती है। तैत्तिरीय ब्राह्मण २।७।७ में भी इस 'गोसव' का वर्णन है। इसे 'पशुस्तोम' भी कहा गया है। इस गोसव पर इन ब्राह्मणों में लिखा गया है कि अथैष गोसवः स्वाराज्यो वा एष यज्ञ'। अर्थात् यह स्वाराज्य यज्ञ है। इस प्रकार से इस यज्ञ का महत्व और भी अधिक प्रकट होता है। यह मैंने यहां पर एक निदर्शन उपस्थित किया है। ऐसे अनेक विषय हैं, जिनपर विचार करने की आवश्यकता है। पौराणिक याज्ञिक, जिनमें यज्ञ की कुछ परम्परा होने का लोगों को भास दिखलाया जाता है—वे भी इस विषय में उल्टे ही मार्ग पर चलते हैं। शतकुण्डी, सहस्रकुण्डी आदि का कहीं विधान नहीं मिलता, परन्तु ये कराते हैं। इनके कुण्डों की विधि भी शुल्वसूत्रों से मिलती नहीं पायी जाती। वेद मन्त्रों के भाव को न समझ कर उन्होंने कुण्डों की मेखला की उच्च मेखला पर "अर्घा" के आकार बनाना प्रारम्भ कर दिया है। यह घी के पात्र रखने के स्थान पर निर्मित होता है, तथा योनि के आकार का बनाया जाता है। साथ ही उसमें बीच में एक सुपारी भी रख दी जाती है जो उसमें पुरुष-सम्बन्धी चिन्ह की प्रतीक है। यह वस्तु वाममार्ग से आयी मालूम पड़ती है। यज्ञ में इसका कोई महत्व नहीं। उसमें तो साक्षात् यजमान और उसकी पत्नी होते ही हैं। इस अनर्गल वस्तु की वहां आवश्यकता ही क्या है? यज्ञ में यह विकार जिस प्रकार पौराणिक याज्ञिकों ने ग्रहण कर लिया है वैसे ही अन्य खराबियां भी उन्होंने अपना ली हैं। यज्ञ में वेदमन्त्रों के सस्वर पाठ की भी यही स्थिति है। पौराणिक या आज कल के वैदिक यज्ञ में भी उदात्त अनुदात्त और स्वरित सहित त्रैस्वर्य पाठ करते हैं—जब कि शास्त्रों में इसका निषेध पाया जाता है। ये लोग हाथ के द्वारा ही इन स्वरों का व्यक्तीकरण अधिकांश में करते हैं। यह हाथ के द्वारा स्वर व्यक्त करने की प्रथा कात्यायन की यजुः प्रातिशाख्य १।१२१ "हस्तेन ते" इस सूत्र से ली गई अथवा प्रचलित हुई मालूम पड़ती है। इस सूत्र पर भाष्य करते हुए उवट लिखता है—अनेन प्रकारेण हस्तेन ते स्वराः प्रदर्शन्ते। तत्रोदात्ते ऊर्ध्वगमनम् हस्तस्य अनुदात्तेऽधोगमनम् हस्तस्य। एतत्सर्वेषामाचार्याणां मतेन स्थितम्, स्वरितेतु विप्रतिपद्यन्ते। तत्प्रकाशनार्थमिदमाह—चत्वारस्तिर्यक् स्वरिताः १।१२२। चत्वारस्तिर्यग्धस्तं कृत्वा स्वरणीयाः पितृदानवद्धस्तं कृत्वेत्यर्थः। अर्थात् हाथ से स्वर दिखलाये जाते है। उदात्त में हाथ को ऊपर ले जाना होता है और अनुदात्त में नीचे —यह सभी आचार्यों के मत से सिद्ध है। परन्तु स्वरित के विषय में मतभेद है। इसलिये अगले सूत्र में कहा गया है कि स्वरित के चार भेद हाथ को तिर्छा करके करना चाहिये। अथवा पितृदान के समान हाथ करके करना-चाहिये। परन्तु उसके होते हुए यहां पर यज्ञ में स्वर पाठ का विधान नहीं। इसी प्रथम अध्याय के १३० वें सूत्र और १३१ वें सूत्र में क्रमशः 'एकम' "सामजपन्यूङ्खवर्जम्" आदि के द्वारा यज्ञ में "तानलक्षण" एक स्वर हो और वह साम, जप तथा न्यूङ्ख को छोड़ कर हो—ऐसा स्पष्ट कह दिया गया है। इन सूत्रों पर टीकाकार उवट लिखता है—तानलक्षणमेकं स्वरमाहुर्यज्ञकर्मणि······यज्ञ कर्मणि एकः स्वरो भवति तानलक्षणः। अर्थात् यज्ञ कर्म में तानलक्षण एक ही स्वर बोला जाता है। इसी प्रकार कात्यायन श्रौतसूत्र के परिभाषा प्रकरण में १।८।१६-१९ तक यज्ञ में वेदमन्त्रों का स्वर पाठ कैसा हो, यह विचार चलाया है। अन्त में १८ वें "तानो वा नित्यत्वात्" और १९ वें "एकश्रुति दूरात्सम्बुद्धौ

यज्ञकर्मणि सुब्रह्मण्या-साम-जप-न्यूङ्ख-याजमान वर्जम्" सूत्रों में सिद्धान्त निर्धारित किया है। १८ वें सूत्र में 'तान' पाठ को यज्ञ में नित्य बतलाया गया है। १९ वें सूत्र में आचार्य ने अन्य आचार्यों के प्रमाण को उद्धृत किया है—ऐसा ज्ञात होता है। यह मत आचार्य पाणिनि के एतद्विषयक सिद्धान्तों से मिलता है। यहां निश्चित है कि "तान" अथवा एक श्रुति स्वर ही यज्ञकर्म में मन्त्रों का होना चाहिए।

मीमांसा-दर्शन ६। २। ३० में भी इस विषय पर चर्चा की गई है। यहां पर भी अन्त में निर्णय यही किया गया है कि यज्ञ कर्म में "तान" स्वर से ही वेद मन्त्रों का पाठ होना चाहिये। मीमांसा के सूत्रों पर "शास्त्रदीपिका टीका" लिखने वाले पार्थसारथि मिश्र ने एक पग और भी बढ़कर इस सूत्र पर अपने जो उद्‌गार प्रकट किये हैं—वे पौराणिकों की इस प्रथा पर पानी फेर देते हैं। वे लिखते हैं—अयं चैकश्रुतिर्जपमन्त्रादिकातिरिक्त-विषयः । यज्ञकर्मण्यजपन्यूङ्खसामसु—इति पाणिनिस्मृते.।......एवं जपमन्त्रादिव्यतिरिक्तेषु करणमन्त्रादिरूपेषु "अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यादिषु आध्वर्यवयाजमानेषु आधुनिकानाम् याज्ञिकानां चातुःस्वर्येण प्रयोगे मूलम् मृग्यम् ॥-अर्थात् जप आदि विषयों को छोड़कर यज्ञकर्म में एकश्रुति ही पढ़ना चाहिये। पाणिनि का स्मृति (अष्टाध्यायी) से ऐसा ही पाया जाता है। ऐसा होने पर भी "अग्नये त्वा जुष्टं निर्वपामि" आदि करण आदि यजमान और अध्वर्यु सम्बन्धी मन्त्रों में भी आधुनिक याज्ञिकों का चतुःस्वर से पाठ करने का मूल ढूंढना चाहिये। यद्यपि प्रातिशाख्य में यजुः में प्रावाचन स्वर भी माना है और कात्यायन ने १।८।१९ सूत्र में "याजमानवर्जम्' पद से इस विषय में एकश्रुति का निषेध किया है, और यही शायद इन याज्ञिकों की प्रक्रिया का मूल हो गया हो, परन्तु फिर भी पारथ सारथि की यह भावना स्पष्ट है कि यज्ञ में त्रैस्वर्य या चातुःस्वर्य पाठ नहीं होना चाहिये। वह इन याज्ञिकों की प्रक्रिया से सहमत नहीं।

आचार्य पाणिनि ने भी अपने अष्टाध्यायी ग्रन्थ में इस विषय पर नियम बनाये हैं तथा उनका यह नियम इतना सर्वव्यापक है कि सर्वत्र पाया जाता है। ऊपर के प्रमाणों में सभी पर इसकी छाप है। पाणिनि का सूत्र उनकी अष्टाध्यायी १।२।३४ में "यज्ञ कर्मण्यजपन्यूङ्खसामसु" इस प्रकार है। यहां आचार्य कहते हैं कि यज्ञ कर्मश्रुति स्वर ही होना चाहिये, जप, न्यूंख और साम को छोड़कर यहां पर आचार्य की भावना स्पष्ट है। परन्तु सारा झगड़ा इस स्वर पाठ का नवीनों ने "विभाषा छन्दसि" १।२।२६ वें सूत्र से चला रखा है। यह सूत्र "यज्ञकर्म॰" सूत्र से एक सूत्र छोड़कर आता है। इस पर भाष्य करते हुए काशिकाकार लिखता है - विभाषाग्रहणं यज्ञकर्मणीत्यस्य निवृत्यर्थम्—अर्थात् सूत्र में "विभाषा" का ग्रहण "यज्ञकर्म" की निवृत्ति के प्रयोजन से है। दीक्षित, नागेश आदि ने भी इस सूत्र को "यज्ञकर्मणि॰" सूत्र का विकल्प माना है। अतः उन्होंने यह मत बना लिया कि "यज्ञकर्म" में प्राप्त एकश्रुति का यह विकल्पक सूत्र है और इसके अनुसार यज्ञमें भी त्रैस्वर्य पाठ होसकता है। परन्तु यह ठीक नहीं। दीक्षित आदि का विचार गलत मालूम पड़ता है। यज्ञकर्मण्यजपन्यूंखसामसु—इस सूत्र में यज्ञ में एकश्रुति विधान होने से ही यह सिद्ध है कि वेदमन्त्रों का पाठकाल में 'त्रैस्वर्य' पाठ होना चाहिये तथा नित्य प्राप्त है। यज्ञ में वह "त्रैस्वर्य पाठ" न प्राप्त हो जावे, इसलिये ही यह सूत्र व्यवस्था करने के लिए रचा गया। यदि "विभाषा छन्दसि" इस सूत्र में यज्ञ विषय में एकश्रुति विकल्प से हो—यही अभिप्रेत है तो फिर 'यज्ञकर्मणि॰' आदि सूत्र की रचना करने की ही सूत्रधार को आवश्यकता नहीं

भी। परन्तु इसकी उपादेयता सुतराम् सिद्ध है अतः यह निश्चित है कि "विभाषा छन्दसि—यज्ञ से अतिरिक्त विषय के लिये प्राप्त है और वह कार्य उसका यह है कि वेदमन्त्रों का सामान्योच्चारण काल में विकल्प से एक श्रुति होवे। इससे सामान्योच्चारण काल में भी वेदमन्त्रों का त्रैस्वर्य उच्चारण और एकश्रुति उच्चारण दोनों ही हो सकता है। दीक्षित आदि ने सूत्रकार के विपरीत भाव लेकर अपनी कल्पना खड़ी कर दी। वेदाङ्ग-प्रकाश के सौवर-प्रकरण और अष्टाध्यायी भाष्य दोनों में ही आचार्य दयानन्द ने इस सूत्र का ऐसा ही अर्थ किया है। अष्टाध्यायी वृत्तिकार श्री पं० जीवाराम जी भी ऐसा ही अर्थ करते हैं। इन सभी ने यहां पर सामान्योच्चारण काल में यह सूत्र दोनों प्रकार के उच्चारण बतलाता है- ऐसा ही माना है। दीक्षित ने जिस प्रकार "विदांकुर्वन्तु इत्यन्यतरस्याम" ३। १। ४१ सूत्र में पुरुष-वचन की विवक्षा न मानकर सभी पुरुषों में प्रयोग बना डाला है—जो सूत्र के आशय के सर्वथा विरुद्ध है वैसे ही इस "विभाषा छन्दसि" में यज्ञकर्म की अनुवृत्ति मानकर निरर्थक कल्पना कर डाली है। वस्तुतः यज्ञ में एकश्रुति उच्चारण हो ऐसा समस्त आचार्यों को अभिप्रेत है। उन्होंने विपरीत कल्पना कर आचार्यों की व्यवस्था तोड़ी है जो उचित नहीं। यज्ञ में एकश्रुति स्वर का ही उच्चारण होना चाहिये और आज कल के याज्ञिकों द्वारा किया जाने वाला यज्ञ में यह सस्वर पाठ ठीक नहीं। कई लोग महाभाष्य के "मिथ्याप्रयुक्त शब्दः स्वरतो वर्णतो वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति यथेन्द्र शत्रुः स्वरतोऽपराधात्"—वाक्य की शरण लेना चाहेंगे। परन्तु यहां पर अर्थ विज्ञान के लिए यह बात कही जा रही है—यज्ञ में सस्वर पाठ के सिद्ध करने के लिये नहीं। भाष्यकार का अभिप्रायः प्रकृतिस्वर के पाठ से भी सिद्ध हो सकता है। वस्तुतः अर्थ के लिये ही यह वचन मालूम पड़ता है। एकश्रुति पढ़ने में भी तो गलती नहीं होनी चाहिये क्योंकि उससे अनिष्टापत्ति ही होती है। यजमान कर्म के कुछ मन्त्रों में प्रकृति स्वर कात्यायन श्रौतसूत्र में वर्जित है—उस दृष्टि को मानकर भी "इन्द्रशत्रुः" की समस्या साधी जा सकती है और भाष्यकार का आशय सिद्ध हो सकता है।

चुने हुए फूल

—यद्यपि शरीर में अपनी चेतनता नहीं होती और यह स्वर विहीन वीणा होती है तथापि यदि इस पर पवित्रता की तान छेड़ी जाय तो यह सीधी दिव्य लोक में पहुँचती है।

—अपने शरीर को बल और यश से विभूषित कर एक विशिष्ट भेंट के रूप में परमात्मा के अर्पण रक्खो।

—शरीर की शोभा भीतर की शोभा से होती है।

—स्वस्थ शरीर में स्वस्थ आत्मा निवास करता है।

—परमात्मा का कृपा पात्र बनना शरीर की उच्चतम गति होती है।

—स्वस्थ और आकर्षक शरीर परमात्मा की एक विशिष्ट देन होती है।

वेद में मानव शरीर का वर्णन

[श्री पं० रामनाथजी वेदालङ्कार एम० ए०, गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी]

सचमुच मानव-शरीर की रचना और क्रिया-शक्ति बड़ी अद्भुत है। इसीलिए अथर्ववेद का कवि इसके एक एक अंग पर मुग्ध होता हुआ 'केन सूक्त' में कहता है—"अहो, किस विलक्षण कारीगर ने इस मानव-शरीर में एड़ियां बनाई हैं, किसने मांस भरा है, किसने टखने बनाये हैं, किसने परुओं वाली अगुलियां बनाई हैं, किसने इन्द्रियों के छिद्र बनाये हैं, किसने तलवे और किसने मध्य का आधार बनाया है? किस उपादान कारण से लेकर इस शरीर में नीचे टखने और उसके ऊपर घुटने बनाये गये हैं,जांघें जोड़ी गई हैं, दोनों घुटनों के जोड़ रचे गये हैं? घुटनों से ऊपर का यह धड़ जिसके चारों सिरों पर दो भुजा और दो जांघों के चार जोड़ हैं किस कारीगर ने बनाया है। किसने कूल्हे बनाये हैं जहां दोनों जांघों की हड्डियां जुड़ी हैं? अहो, कितने और कौन से वे कारीगर थे जिन्होंने मनुष्य की छाती और गर्दन बनाई, स्तन बनाये, कपोल बनाये, कन्धे बनाये, पसलियां बनाई? किस कारीगर ने वीरता के कार्य करने के लिये इसकी दोनों भुजायें बनाई हैं, किसने दोनों कंधों को शरीर के साथ जोड़ा है? किसने इसके दो कान रचे हैं, दो नाक के छेद रचे हैं, दो आंखें रची हैं, मुख रचा है? सिर के ये सातों छेद किसने घड़े हैं? कहो किसने दोनों जबाड़ों के बीच में जिह्वा रखी है जिससे यह वाणी बोलती है? कौन था वह कारीगर है जिसने इसका मस्तिष्क बनाया है, ललाट बनाया है, गले की घांटी बनाई है, कपाल बनाया है? किसने इसके दोनों जबाड़ों में शृङ्खलाबद्ध दांत जड़े हैं? किसने इस शरीर में रक्त भरा है जो लाल नीला रूप धारण कर हृदयसिन्धु से आता जाता है और ऊपर नीचे, इधर-उधर सब ओर प्रवाहित होता है? किसने शरीर में रूप भरा है, किसने इसमें नाम और महिमा निहित की है, किसने प्रगति, ज्ञान और चरित्र को पैदा किया है? किसने इस में प्राण-अपान का ताना-बाना किया है, किस देव ने इसमें समान को निहित किया है? किसने शरीर के ऊपर त्वचा का वस्त्र पहनाया है, किसने इसकी आयु रची है, किसने इसे बल प्रदान किया है, किसने इसे वेग दिया है? किसने इसमें रेतस भरा है जिससे यह प्रजातन्तु का विस्तार करता है, किसने इसमें बुद्धि पैदा की है, किसने इसे वाणी और नृत्य कला दी है?

(देखो, अथर्व, १०,२,१,१७)

मानव-शरीर की अद्भुत कृति पर ऐसे ही उद्गार सहसा प्रत्येक के मुख से निकल पड़ते हैं। मनुष्य व्यक्त वाणी द्वारा अपने विचारों को दूसरों पर प्रकट कर सकता है, मन से चिन्तन कर सकता है, बुद्धि से बड़ी-बड़ी समस्याओं को सुलझा सकता है। ये सब बातें अन्य शरीरों की अपेक्षा मानव-शरीर में विलक्षण हैं, जिनके कारण उसे श्रेष्ठता का पद मिला है।

यह देवपुरी है

इस मानव-शरीर को देवों की पुरी कहा गया है। ब्रह्माण्ड के सब देव इस शरीर के अन्दर प्रविष्ट होकर अपना अपना स्थान बना कर बैठे हुए हैं। अथर्ववेद ११,८ के अनुसार, "शरीर की हड्डियों को समिधायें बना कर, रस-रक्त आदि को जल बना कर रेतस् को घृत बना कर सब देव

पुरुष शरीर में प्रविष्ट हुए हुए हैं और यज्ञ रच रहे हैं। इस शरीर में सब जल, सब देवता, समस्त विराट् जगत् प्रविष्ट है, प्रजापति ब्रह्म भी इसके अन्दर है। सूर्य चक्षु रूप में शरीर में विद्यमान है, वायु प्राण रूप में, शरीर के अन्य अंग अग्नि को मिले हैं। जो विद्वान् है वह इस मानव-शरीर को साक्षात् देवपुरी या ब्रह्मपुरी समझता है, क्योंकि जैसे गौएं गोशाला में रहती हैं वैसे ही सब देव इस शरीर में आकर बसे हुए हैं।"[१] ऐतरेय उपनिषद् के अनुसार, "अग्नि वाणी बन कर मुख में प्रविष्ट है, वायु प्राण बन कर नासिका में प्रविष्ट है, आदित्य चक्षु बन कर आंखों में प्रविष्ट है, दिशायें श्रोत बन कर कानों में प्रविष्ट हैं, औषधि-वनस्पतियां लोम बन कर त्वचा में प्रविष्ट हैं, चन्द्रमा मन बन कर हृदय में प्रविष्ट है, मृत्यु अपान बन कर नाभि में प्रविष्ट है, जल रेतस् बन कर शिश्न में प्रविष्ट है।"

अथर्ववेद १०, २,३१-३३ के अनुसार मानव-शरीर देवपुरी अयोध्या है जिसमें आठ चक्र हैं, नौ द्वार हैं। इस पुरी के अन्दर एक ज्योति से आवृत हिरण्यय कोश है, जिसका नाम स्वर्ग है। उस हिरण्यय कोश के अन्दर एक यक्ष वास करता है जिसे वे जानते हैं जो ब्रह्मवित् हैं। इस प्रभ्राजमाना, हृदय हारिणी, यशोमयी, अपराजिता, स्वर्णिम देवपुरी में ब्रह्मा का वास है।[२]

इस प्रकार मानव-शरीर के सम्बन्ध में वैदिक दृष्टिकोण यह है कि यह एक देवपुरी है, आंख-नाक-कान आदि सब अवयव एक-एक देवता के प्रतिनिधि हैं। वैदिक विचार के अनुसार यह शरीर मल-मूत्र का चोला, या त्यागने योग्य वस्तु नहीं है। मानव आत्मा को अपना सौभाग्य समझना चाहिये कि देवताओं की यह पुरी उसे रहने के लिए मिली है।

यह यज्ञस्थली है

इस शरीर के सम्बन्ध में वैदिक साहित्य में यह विचार भी मिलता है कि यह एक यज्ञस्थली है। इस शरीर को हमें विषय भोग का ही साधन न समझकर एक पवित्र यज्ञगृह समझना चाहिए। अथर्व० १०, २, १४ "किस एक देव ने पुरुष-शरीर के अन्दर यज्ञ को निहित किया है।"[३] यह कहता हुआ मानव-शरीर की यज्ञमयता को स्वीकार करता है। अथर्व, ११, ८, २६ जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। शरीर की यज्ञमयता को बताता हुआ कहता है कि शरीर में हड्डियां ही समिधायें हैं, रुधिर वस्ति आदि के

---

१ अस्थि कृत्वा समिधं तदष्टापो असादयन्। रेतः कृत्वाऽऽज्यं देवाः पुरुषमाविशन्॥२६॥
या आपो याश्च देवता या विराड् ब्रह्मणा सह। शरीरं ब्रह्म प्राविशच्छरीरेऽधि प्रजापतिः॥३०॥
सूर्यश्चक्षुर्वातः प्राणं पुरुषस्य विभेजिरे। अथास्येतरमात्मानं देवाः प्रायच्छन्नग्नये॥३१॥
तस्माद् वै विद्वान् पुरुषमिदं ब्रह्मेति मन्यते। सर्वा ह्यस्मिन् देवता गावो गोष्ठ इवासते॥३२॥

२ अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या। तस्यां हिरण्ययः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः।
तस्मिन् हिरण्यये कोशे त्र्यरे त्रिप्रतिष्ठिते। तस्मिन् यद् यक्षमात्मन्वत् तद् वै ब्रह्मविदो विदुः॥
प्रभ्राजमानां हरिणीं यशसा संपरीवृताम्। पुरं हिरण्ययीं ब्रह्मा विवेशापराजिताम्॥

आठ चक्र = शरीर में नीचे से ऊपर की ओर क्रमशः मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्ध, ललित, आज्ञा, सहस्रार।

नौ द्वार—दो कान, दो नाक के छेद, दो आंखें, एक मुख, दो अधो द्वार। हिरण्यय कोश—आनन्दमय कोश। यक्ष ब्रह्मा = आत्मा या परमात्मा।

३ को अस्मिन् यज्ञमदधादेको देवोऽधि पूरुषे।

आठ प्रकार के जल ही यज्ञिय जल हैं और रेतस् ही घृत है। तैतिरीय ब्राह्मण में भी हड्डियों को समिधा तथा रेतस् को घृत कहा गया है।[1] यजुर्वेद ३४, ४ में मन की महिमा वर्णन करते हुए कहा है कि इस मन के द्वारा ही सप्तहोता यज्ञ चलता है।[2] यह सप्तहोता यज्ञ पाँच ज्ञानेन्द्रियां मन और बुद्धि इन सात होताओं से परिचालित होने वाला ज्ञानप्राप्ति रूपी यज्ञ ही है जो कि शरीर रूपी यज्ञशाला में होता है। गोपथ ब्राह्मण में शारीरिक यज्ञ की व्याख्या इस प्रकार की गई है—"पुरुष का शरीर यज्ञभूमि है...मन ही इस यज्ञ का ब्रह्मा है, प्राण उद्गाता है अपान प्रस्तोता है, व्यान प्रतिहर्ता है, वाणी होता है, आंख अध्वर्यु हैं, प्रजापति सदस्य है, अन्य अंग होत्राशंसी हैं, आत्मा यजमान है।"[3] छान्दोग्य उपनिषद् के एक प्रकरण में मानव शरीर के यज्ञ का वर्णन इस रूप में मिलता है—"पुरुष शरीर एक यज्ञ है, जिसकी आयु के प्रथम चौबीस वर्ष प्रातः सवन हैं। अगले चौवालीस वर्ष माध्यन्दिन सवन हैं...उससे आगे के अड़तालीस वर्ष तृतीय सवन हैं....इस प्रकार यह एक सौ सोलह वर्ष चलने वाला यज्ञ है। इस भावना से जो अपने शरीर को चलाता है वह एक सौ सोलह वर्ष जीवित रह सकता है।"[4]

यह ऋषिभूमि है

यह शरीर ऋषियों की भूमि भी है। यजुर्वेद ३४,५५ में कहा है कि "इस शरीर में सात ऋषि बैठे हु है, वे सातों बिना प्रमाद किये इस शरीर की रक्षा कर रहे हैं। जब यह शरीर सोता है तब वे सातों ऋषि आत्मलोक में चले जाते हैं, पर दो देव ऐसे हैं जो उससमय भी शरीरमें जागते रहते हैं।"[5] निरुक्त की व्याख्या के अनुसार पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, छठा मन और सातवीं बुद्धि ये ही शरीर के सात ऋषि हैं। ये सदैव शरीर की रक्षा में तत्पर रहते हैं। यदि शरीर में से ये ऋषि निकल जायें और मनुष्य आंख से देख न सके, नासिका से गन्ध ग्रहण न कर सके, कान से सुन न सके, जिह्वा से स्वाद का ज्ञान और त्वचा से स्पर्श का ज्ञान न कर सके, मन से चिन्तन और बुद्धि से विवेचन न कर सके तो कोई भी आकर उसकी हिंसा कर सकता है। आंख आदि के अभाव में उसे ज्ञान तक न होगा कि कोई उसकी हिंसा करने आया है। जब यह शरीर सोता है तब आँख आदि ऋषि स्थूलरूप में अपना कार्य करना बन्द कर देते हैं, उस समय वे आत्मलोक में चले जाते हैं। किन्तु उस समय भी आत्मा और प्राण ये दो देव शरीर में जागते रहते हैं, क्योंकि ये भी कहीं चले जायें तो शरीर मृत ही हो जावे।

अथर्व १०, ८, ६ में शरीर के विषय में यह वर्णन मिलता है कि "यह एक चमस (चम्मच या पात्र) है जिसका बिल नीचे की ओर और पृष्ठ ऊपर की ओर है; तो भी इसमें सब प्रकार का यश निहित है। इस चमस में सात ऋषि भी बैठे हुए हैं जो इसकी रक्षा कर रहे हैं।"[6] यह

१ अस्थि वा एतत् यत् समिधः। एतद् रेतो यदाज्यम्। तै० ब्रा० १, १, ६, ४॥

२ येन यज्ञस्तायते सप्तहोता।

३ पुरुषो वै यज्ञस्तस्य ...मन एव ब्रह्मा, प्राण उद्गाता, अपानः प्रस्तोता, व्यानः प्रतिहर्ता, वाग् होता, चक्षुरध्वर्युः प्रजापतिः सदस्यः, अङ्गानि होत्राशंसिनः आत्मा यजमानः—गोपथ उ० ५,४॥

४ देखो छान्दोग्य उप० अध्याय ३, खंड १६॥

५ सप्त ऋषयः प्रतिहिताः शरीरे सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम्। सप्तापः स्वपतो लोकमीयुस्तत्र जागृतो अस्वप्नजौ सत्रसदौ च देवौ॥

६ तिर्यग्बिलश्चमस ऊर्ध्वबुध्नो यस्मिन् यशो निहितं विश्वरूपम्।

चमस शरीर का मूर्धा (गर्दन से ऊपर का हिस्सा) ही है। साधारण चमसों का पृष्ठ नीचे और छिद्र ऊपर रहता है, नहीं तो उनमें रखी वस्तु गिर जावे, पर यह ऐसा अद्भुत चमस है कि इसका छिद्र (मुख) नीचे की ओर है और पृष्ठ (खोपड़ी) ऊपर है, तो भी इसमें विश्वरूप यश (सर्वविध-ज्ञान) भरा हुआ है, गिरता नहीं। सात ऋषि पूर्वोक्त सात इन्द्रिय रूपी ऋषि हैं जो इसमें बैठे हुए इसकी रक्षा कर रहे हैं। ये सात ऋषि दो कान, दो नासिका छिद्र, दो आंखें और एक मुख ये भी हो सकते हैं जैसा कि अथर्व वेद १०,२,६[१] में परिगणित किये गये हैं। शतपथ ब्राह्मण (१४-४-२) में भी इस चमस में रहने वाले ये ही ऋषि बताये गये हैं और यह कहा गया है कि दो गौतम और भारद्वाज हैं, दो नासिकायें वसिष्ठ और कश्यप हैं. दो आंखें विश्वामित्र और जमदग्नि हैं, मुख अत्रि है।

एवं वैदिक विचार के अनुसार हमें शरीर के प्रति यह भाव रखना चाहिये कि यह ऋषियों की पवित्र तपोभूमि है और इसे किसी प्रकार दूषित नहीं होने देना चाहिये।

यह रथ है

वैदिक साहित्य में इस शरीर को रथ भी कहा गया है। कठ उपनिषद् में यह रूपक इस प्रकार है—'शरीर एक रथ है, आत्मा रथस्वामी है, बुद्धि उसका सारथि है, मन लगाम है, इन्द्रियां घोड़े हैं; विषय चरागाह हैं। जो बुद्धि रूपी सारथि का उपयोग नहीं करता और मन रूपी लगाम को ताने नहीं रखता उसकी इन्द्रियां वश से बाहर हो जाती हैं जैसे दुष्ट घोड़े सारथि के वश से बाहर जाते हैं। पर जो बुद्धि रूपी सारथि का उपयोग करता है और मन रूपी लगाम को ताने रखता है उसकी इन्द्रियां वश में रहती हैं जैसे सधे घोड़े सारथि के वश में रहते हैं।[२]

शरीर की रथसे उपमा वेदोंमें भी दी गई है। ऋग्वेद २-१८-१ में कहा है—"मनुष्य शरीर इन्द्र का रथ है जिसमें चार युग हैं तीन कशायें (चाबुक) हैं, प्रातःकाल साफ-सुथरा और नया करके जोता जाता है, सदिच्छाओं और बुद्धियों से चलाया जाता है।[३] ऋग्वेद १०, ५९, १० में इसी शरीर-रथ के लिए कहा गया है कि "हे इन्द्र! तू शरीर रथ को खींचने वाले बैल को ठीक प्रकार से चला जो कि उशीनराणी के रथ को खींचता है। सूर्य और पृथिवी तेरे इस रथ के दोषों को दूर करते रहें जिससे कि कोई भी रोग तुझे न सताये।"[४] इस मन्त्र में यह कल्पना की गई प्रतीत होती है कि यह शरीर एक रथ है जिसमें देवराज इन्द्र (आत्मा) अपनी रानी उशीनरानी[५] (बुद्धि) सहित बैठे हुए हैं, प्राण रूपी बैल (अनड्वान[६]) इस रथ को खींच रहा है। इन्द्र (आत्मा) को कहा गया है कि तू इस प्राण रूपी

१ कः सप्त खानि विततर्द शीर्षणि कर्णाविमौ नासिके चक्षणी मुखम्।

२. कठ, तृतीय वल्ली, श्लोक ३–६॥

३. प्राता रथो नवो योजि सस्निश्चतुर्युगस्त्रिकशः सप्तरश्मिः।
दशारित्रो मनुष्यः स्वर्षाः स इष्टिभिर्मतिभी रंह्योभूत्॥
इन्द्र=आत्मा। चार युग=दो भुजाएं, दो टांगें। तीन चाबुकें=मन, बुद्धि, प्राण। सात लगामें=सप्त शीर्षण्य प्राण। दस घोड़े=दस इन्द्रियां।

४. समिन्द्रेरय गामनड्वाहं य आवहदुशीनराण्या अनः।
भरतामप यद् रपो द्यौः पृथिवि क्षमा रपो मो षु ते किञ्चनाममत्॥

५. उशी=इच्छावान्, नरः=आत्मा, तस्य पत्नी उशीनराणी बुद्धिः।

६. अनः शरीररथं वहतीत्यनड्वान् प्राणः। "अनड्वान प्राण उच्यते" अथर्व ११, ४, १३॥

बैल को ठीक प्रकार से चला, नहीं तो यह शरीर-रथ को रोगादि के गढ़ों में गिरा देगा। सूर्य की किरणों से और पृथिवी की ओषधि-वनस्पतियों से इस रथ के मलों को दूर करते रहना चाहिये अन्यथा यह रथ रोगग्रस्त हो कर चलना बन्द कर देगा।

ऋग्वेद १०-१३५-३ में मनुष्य को सम्बोधन कर कहा है—'हे कुमार, बिना पहियों के ही चलनेवाले एक ईषादण्ड वाले, चारों ओर वेग से चलने फिरने वाले जिस नवीन रथ को तूने मन से पसन्द किया उस पर तू बिना समझे बूझे ही बैठा हुआ है[1]।" यह बिना पहियों के चलने वाला नवीन रथ शरीर ही है जिसमें मेरुदण्ड रूपी एक ईषादण्ड है। वेदमन्त्र मनुष्य को कहता है कि हे कुमार! जिस रथ को लोग जन्म-जन्मान्तरों की तपस्या के बाद कभी पाते हैं, ऐसा उत्तम मानव शरीर रूपी रथ तुझे मिला है, तो भी आश्चर्य की बात है कि उस पर बिना देखे भाले, बिना सोचे समझे तू बैठा हुआ है। तेरी स्थिति वैसी ही है जैसी उस मनुष्य की जो रथ पर तो बैठा हुआ है, परन्तु जिसे यह नहीं मालूम कि जाना कहां है तुझे चाहिये कि तू जीवन में अपना कोई उच्च लक्ष्य निर्धारित करे और उस तक पहुँचने के लिये शरीर रूपी इस उत्तम रथ का उपयोग करे।

इससे अगले मन्त्र में कहा है कि "हे कुमार, यदि तू अपने इस शरीर-रथ को विप्रजनों के निर्देश के अनुसार चलायेगा तभी यह समगति के साथ चल सकेगा और तभी विघ्न बाधाओं की नदियां बीच में पड़ने पर नौका पर चढ़ाये रथ की तरह यह कुशलता के साथ उन नदियों को पार कर सकेगा[2]।"

आर्य ध्वज गीत का संशोधित स्वरूप

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की २८-८-५५ की अन्तरङ्ग के निश्चयानुसार आर्य ध्वज गीत निम्न प्रकार संशोधित होकर प्रचारित किया गया है। भविष्य में उक्त गीत का संशोधित रूप में ही प्रयोग होना चाहिये।

—सम्पादक

जयति ओ३म् ध्वज व्योम विहारी।
विश्व प्रेम सरिता अति प्यार ॥ध्रुव॥
सत्य सुधा बरसाने वाला, स्नेह लता सरसाने वाला।
सौख्य सुमन विकसाने वाला, विश्व विमोहक रिपु भयहारी॥
इसके नीचे बढ़ें अभय-मन सत्पथ पर सब धर्म धुरी जन।
वैदिक रवि का हो शुभ उदयन आलोकित होवें दिशि सारी॥
इसी ध्वजा के नीचे आकर नीच ऊंच का भेद भुला कर।
मिले विश्व मुद मंगल गाकर घोर अविद्या तम संहारी॥
इस ध्वज को लेकर हम कर में भर दें वेदज्ञान जग भर में।
सुभग शान्ति फैले घर घर में मिटे अविद्या की अंधियारी।
आर्यजाति का यश अक्षय हो आर्यध्वजा की अविचल जय हो।
आर्यजनों का ध्रुव निश्चय हो, आर्य बनावें वसुधा सारी॥

---

१. यं कुमार नवं रथमचक्रं मनसाकृणोः एकेषं विश्वतः प्राञ्चमपश्यन्नधितिष्ठसि॥
२. यं कुमार प्रावर्तयो रथं विप्रेभ्यस्परि। तं सामानु प्रावर्तत समितो नाव्याहितम्॥ ऋग्० १०,१३५,४॥

महर्षि दयानन्द और 'हिन्दू' शब्द

[लेखक—श्री आचार्य भद्रसेन जी, अजमेर]

किसी भी देश व जाति को अपनी सभ्यता व संस्कृति की उच्चता और महत्ता एवं अपने गौरवपूर्ण नाम का अभिमान होता है। इसीलिये सभ्य देश तथा जातियां ऐसा काम नहीं करतीं कि उसके पवित्र नाम को धब्बा लगे, वे अपने नाम की लाज रखने के लिये अपना सिर तक देती हैं।

ऋषि दयानन्द ने इस मर्म को भली प्रकार से समझा था। उन्होंने सहस्रों वर्षों से भूले हुए वैदिक आदर्श को हमारे सम्मुख रखा। हमारे पुनीत नाम को हम सदियों से भूल चुके थे। ऋषि ने हमें बताया कि विधर्मियों की देन रूप निन्दित 'हिन्दू' नाम को भूल से हमने ग्रहण कर लिया है। वह तुम्हारा असली नाम नहीं। वास्तविक नाम 'आर्य' है। जिसका अर्थ श्रेष्ठ, धर्मात्मा सदाचारी और सदा कर्तव्य मार्ग पर चलने वाला।

खेद है कि आज हम ऋषि के बताये वैदिक मार्ग से भ्रष्ट हो रहे है। उनके दर्शाये पवित्र नाम को भी तिलाजलि देते जा रहे है। क्या व्यक्तिगत और क्या सभाओं और उत्सवों में 'आर्य' शब्द की अपेक्षा 'हिन्दू' शब्द की ही अधिक गूंज सुनाई देने लगी है। आज एक आर्य अपने को 'हिन्दू' कहने में कुछ भी संकोच नहीं करता। इतना ही नहीं प्रत्युत कई आर्य तो अपने को बड़े गर्व से हिन्दू कहने लगे हैं।

किसी समय हमारे उत्सवों आदि पर 'हम आर्य', हमारी आर्य जाति, हमारी आर्य सभ्यता आदि नामों की गूंज हुआ करती थी। अब हमारे ही उत्सवों में हमारे विद्वान् उपदेशक महानुभावों के मुख से हिन्दू, हिन्दू जाति, हिन्दू धर्म आदि नामों का ही बोलबाला हो रहा है। आर्य विद्वान् पहिले अपने लेखों आदि में हिन्दू शब्द का खण्डन करते और आर्य शब्द का मण्डन किया करते थे। वे ही विद्वान् हिन्दू शब्द के पक्ष में लेख लिख रहे हैं और 'हिन्दू' शब्द को तोड़ मरोड़ कर 'सिन्धु' से बिगड़ा हुआ सिद्ध कर रहे हैं। भला इससे बढ़ कर और दुःख की बात क्या होगी ?

'हिन्दू' शब्द के समर्थकों का कहना है कि सिन्धु नदी के किनारे पर रहने वालों का नाम पहले सिन्धु पड़ा' और फिर धीरे २ 'स' के स्थान में 'ह' हो कर सिन्धू से हिन्दू बन गया इत्यादि। तर्क तीर से बाल की खाल निकालने वाला हिन्दू पक्षपाती आर्य विद्वान् इतना भी नहीं सोचता कि सिन्धू नदी के नाम का सकार हकार नहीं बना, सिन्धू देश के 'स' का परिवतन नहीं हुआ, और तो क्या आज भी सिन्ध नदी के निकट सिन्ध देश के रहने वाले सिन्धी के 'स' को 'ह' ने नहीं बदला, वह अब भी अपने को सिन्धी' ही कहता है, न कि हिन्दी। फिर राजस्थान, उत्तरप्रदेश, बङ्गाल, महाराष्ट्र, मद्रास आदि प्रान्त जो कि सिन्ध नदी से बहुत दूर हैं, इनमें रहने वालों के 'स' का ही क्रूर कर हकार रूप राहू ने कैसे ग्रस लिया।

कई 'हिन्दू' शब्द के समर्थकों का कहना है कि ऋषि दयानन्द ने 'आर्य' शब्द का समर्थन तो किया है, 'हिन्दू' शब्द का अन्य बुराइयों की तरह स्पष्ट और जोरदार शब्दों में कहीं खण्डन नहीं किया। ऋषि दयानन्द भी हिन्दू शब्द को इतना बुरा नहीं समझते थे जितना कि आज कल

आर्य समाजी समझते हैं। लीजिये आज हम दयानन्द की 'हिन्दू' शब्द की स्पष्ट और जोरदार शब्दों में व्याख्या पाठकों के सम्मुख उपस्थित करते हैं पाठक ध्यान पूर्वक पढ़ेंगे। ऋषि दयानन्द ने पूना में रहकर जो पन्द्रह व्याख्यान दिये वे पुस्तक रूप में "उपदेश मंजरी" के नाम से छपे हुए हैं। ऋषि के ८वें दिवस के व्याख्यान का विषय 'इतिहास' था। उस व्याख्यान में ऋषि ने हमारे अपने देश के नाम के सम्बन्ध में बोलते हुए ये वाक्य अपने मुखारविन्द से कहे—"ऐसी व्यवस्था होते हुए हमारे देशका नाम 'आर्यस्थान' अथवा 'आर्यखण्ड' होना चाहिये, सो उसे छोड़ कर न जाने 'हिन्दुस्थान' यह नाम कहां से निकला? भाई श्रोतागण! 'हिन्दू' शब्द का अर्थ तो 'काला' 'काफिर' और 'चोर' इत्यादि है, और हिन्दुस्थान कहने से 'काले' 'काफिर' 'चोर' लोगों की जगह अथवा देश ऐसा अर्थ होता है। तो भाई! इस प्रकार का बुरा नाम क्यों ग्रहण करते हो? और 'आर्य' अर्थात् श्रेष्ठ, अभिज्ञात और 'आवर्त' कहने से ऐसे लोगों का देश, अर्थात् 'आर्यावर्त्त' का अर्थ है श्रेष्ठों का देश। सो भाई! ऐसे श्रेष्ठ नाम को तुम क्यों स्वीकार नहीं करते। क्या तुम अपना मूल का नाम भी भूल गये? हा! हम लोगों की ऐसी स्थिति देख कर किसके हृदय को क्लेश न होगा। अस्तु; सज्जन जन! अब 'हिन्दू' इस नाम का त्याग करो और आर्य तथा आर्यावर्त्त इन नामों का अभिमान करो। गुणभ्रष्ट तो हम लोग हुए, परन्तु नाम भ्रष्ट तो हमें न होना चाहिये ऐसी आप लोगों से मेरी प्रार्थना है।"

पाठक देखें ऋषि ने हिन्दू शब्द का कितना स्पष्ट शब्दों में खण्डन किया है। क्या अब भी कोई कहने का साहस करेगा कि ऋषि ने स्पष्ट तथा जोरदार शब्दों में 'हिन्दू' शब्द को निन्दा नहीं की।

जब ऋषि पूना में चौथे दिन व्याख्यान दे रहे थे तो उनके मुख से भूल से 'हिन्दू' शब्द निकल गया, तब उन्हें बड़ा पश्चात्ताप हुआ और भरी सभा में कहा—'मेरे मुख से भूल और मूर्खता से 'हिन्दू' शब्द निकल गया है। ऋषि के अपने शब्द निम्न प्रकार हैं—"इसका विचार हम हिन्दुओं को—नहीं नहीं, मैं भूला—हम आर्यों को अवश्य करना चाहिये। 'हिन्दू' शब्द का उच्चारण मैंने भूल से किया। क्योंकि 'हिन्दू' यह नाम तो हम को मुसलमानों ने दिया है जिसका अर्थ काला, काफिर और चोर इत्यादि है। सो मैंने मूर्खता से इस शब्द को ग्रहण किया था, हमारा असली नाम तो 'आर्य' अर्थात् श्रेष्ठ ही है।"

कितने खेद की बात है कि ऋषि दयानन्द तो भूल से भी अपने मुखारविन्द से हिन्दू शब्द निकलने पर अपनी मूर्खता तक समझें और उसका पश्चात्ताप करें। आज कल अपने को ऋषि का अनुयायी कहने वाले जान बूझकर अपने को 'हिन्दू' कहते भी न शरमावें। आज हजारों वर्ष बीतने पर बौद्ध, जैन, ईसाई, मुसलमान आदि धर्मावलम्बियों ने अपने नामको नहीं बदला किन्तु हम अभी से अपने नाम को तिलांजलि देते जा रहे हैं। भला इससे बढ़ कर दुःख और खेद का विषय और क्या होगा।

आर्य पुरुष तथा आर्य नेता इस विषय पर गम्भीरता से विचार करेंगे और आर्यसमाज में बढ़ते हुए हिन्दू रूपी इस भयङ्कर रोग को दूर करने का भरसक प्रयत्न करेंगे।

साम्यवाद और वैदिक आदर्श

[लेखक—श्री० भवानीलाल 'भारतीय' एम० ए० सि० वाचस्पति]

(गतांक से आगे)

गत लेख में हमने साम्यवाद के प्रवर्तक कार्ल मार्क्स और उनकी विचार धारा का किंचित परिचय दिया था। हिन्दी मे साम्यवाद पर वृहद् साहित्य तो नहीं मिलता परन्तु श्री यशपाल लिखित 'मार्क्सवाद', श्री सम्पूर्णानन्द लिखित 'समाजवाद' तथा भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा प्रकाशित 'मैनिफेस्टो' का हिन्दी अनुवाद आदि साहित्य साम्यवाद की परिचयात्मक रूपरेखा देने के लिये पर्याप्त है। मार्क्सवाद के विचारों की समीक्षा करने से पूर्व हम उसके प्रमुख सिद्धांतों की एक सूची यहां प्रस्तुत कर देना चाहते हैं।

(१) संसार में प्रधान (प्रकृति या Matter) के अतिरिक्त और कोई जीव या ईश्वर जैसी पृथक चेतन सत्ता नहीं है।

(२) सृष्टि रचना में 'स्वभाव' के अतिरिक्त कोई और कारण नहीं है।

(३) मनुष्य की समस्त प्रवृत्तियां और प्रगतियां 'अर्थ' के द्वारा ही संचालित हैं।

(४) इतिहास की व्याख्या आर्थिक आधार पर ही करनी चाहिये।

(५) वर्ग संघर्ष ही समाज की प्रगति का माप दण्ड है।

(६) धर्म का विश्वास मनुष्य समाज के लिये घातक है।

यों तो मार्क्सवाद की आलोचना और उसमें नवीन संशोधन आदि का श्रीगणेश काफी पहले ही हो गया था, परन्तु बर्न्सटाइन नामक विद्वान ने इस सिद्धान्त की कुछ प्रमुख त्रुटियों की ओर संकेत किया है। उसके कथन का अभिप्राय यह है कि इतिहास की आर्थिक व्याख्या का सिद्धान्त समीचीन नहीं है। यह सत्य है कि इतिहास की अनेक घटनाओं का कारण आर्थिक परिस्थितियां भी होती हैं, परन्तु इतिहास को बदलने में वे ही एकमात्र कारण नहीं होतीं। इसके अतिरिक्त राजनैतिक, धार्मिक तथा सामाजिक परिस्थितियों का भी बड़ा भारी प्रभाव होता है। अतः यह समझना भूल होगी कि केवलमात्र आर्थिक व्यवस्था को सुधारने से सारी समस्या हल हो जायगी।

इसके अतिरिक्त बर्न्सटाइन साम्यवादी दर्शन में निम्न दोष देखता है—

(१) मार्क्स का यह कथन उचित नहीं है कि पूंजीवाद स्वयं अपनी कब्र खोद रहा है। वस्तुतः बात यह है कि छोटे और बड़े सभी पूंजीवादी पनप रहे हैं और निकट भविष्य में यह आशा दिखाई नहीं देती कि संसार समाजवादी व्यवस्था को अपना लेगा।

(२) मार्क्स का यह कथन भी उचित नहीं कि श्रमिक जीवन दरिद्रतापूर्ण हो रहा है और उसे जीवन यापन के लिए पर्याप्त वेतन नहीं मिलता। भारत में यह दशा भले ही हो, परन्तु अमेरिका, ब्रिटेन आदि के श्रमिक आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हैं।

(३) मार्क्स का यह कथन भी युक्तिसंगत नहीं है कि वाद, प्रतिवाद और युक्तवाद (Thesis, Antithesis, Synthesis) की स्थिति में होकर संसार का विकास हो रहा है।

यदि निकट भविष्य में स्थापित होने वाली समाजवादी व्यवस्था को स्वीकार कर लिया जाय तो क्या इससे यह परिणाम नहीं निकलता कि उस युग के बीत जाने पर मनुष्य पुनः जंगली बन जायगा ? क्या उस युग का स्वागत करने के लिये मार्क्सवादी तैयार हैं ?

(४) मार्क्स ने वर्ग संघर्ष का सिद्धांत तो स्थापित किया परन्तु उसने माल्थुस द्वारा प्रवर्तित जनसंख्या और खाद्य पदार्थों के अनुपात के सिद्धांत को भुला दिया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मार्क्स के सिद्धांत ऐसे नहीं हैं जो अखण्डनीय हों या संशोधन से परे हों। मार्क्स ने जिस द्वन्द्वात्मक दर्शन का प्रतिपादन किया वह हीगेल के दर्शन की ही संशोधित प्रक्रिया है। हीगेल के अनुसार भी एक ही चरम सत्ता है जिसे उसने Logos कहा है। मार्क्स से उसका अन्तर यही है कि मार्क्स ने उसे जड़ माना है जहां हीगेल उसे चेतन मानता है। वस्तुतः केवल जड़ या चेतन सत्ता को ससार का एकमात्र कारण मान लेने से ही विश्व की दार्शनिक पहेली को नहीं सुलझाया जा सकता। जिस प्रकार अद्वैतवादी दार्शनिकों के सम्मुख संसार की रचना किस प्रकार हुई यह समस्या आती है उसी प्रकार मार्क्स जैसे केवल भौतिक पदार्थ को ही एकमेव सत्ता मानने वाले दार्शनिक विश्व रचना की समुचित व्याख्या नहीं कर सकते। यह कह देने से काम नहीं चलता कि जड़ से ही चेतन की उत्पत्ति हो जाती है। जड़ और चेतन दो पृथक २ तत्व हैं जिनमें मौलिक अन्तर है। इसका उत्तर विकासवादियों के पास भी नहीं है। अत: अभौतिक आत्मा को स्वीकार करना आवश्यक है।

फिर यह कह देना भी पर्याप्त नहीं है कि सृष्टि रचना स्वभाव से ही हो जाती है। यह स्वभाववाद का सिद्धांत प्राचीन चार्वाक सिद्धांत है जिसके विषय में श्वेताश्वतर ऋषि ने कहा है—

"स्वभावमेके कवयो वदन्ति कालं तथान्ये परिमुह्यमाना।
देवस्य एषः महिमा तु लोके येनेदं भ्राम्यते ब्रह्म चक्रम् ॥"

अर्थात् कई विद्वान् लोग स्वभाव को ही 'संसार चक्र' का कारण बताते हैं और अन्य लोग 'काल' को उसका कारण मानते हैं। परन्तु वस्तुतः यह तो परम पिता की महिमा ही है जिस के कारण यह ब्रह्म चक्र प्रवर्तित हो रहा है। बिना चेतन शक्ति के जड़ प्रकृति में गति नहीं हो सकती और न सृष्टि ही अणु परमाणुओं के स्वतत्र मिश्रण से बन ही सकती है। प्रसिद्ध नैयायिक दार्शनिक उदयनाचार्य ने अपनी कुसुमाञ्जली' की प्रसिद्ध कारिका 'कार्योयोजन धृत्यादे' में सृष्टि रचना का प्रवर्तक और संसार का पालक ईश्वर को ही सिद्ध किया है। अतः भौतिकवाद की एकांगी विचारधारा पर आधारित होने के कारण साम्यवाद वैदिक आदर्श की तुलना में कदापि श्रेष्ठ सिद्ध नहीं होता।

मार्क्स का यह कथन भी युक्ति और प्रमाण की अपेक्षा रखता है कि मनुष्य की समस्त प्रवृत्तियां अर्थमूलक होती हैं। वैदिक सिद्धांत के अनुसार तो मनुष्य जीवन का उद्देश्य पुरुषार्थ चतुष्टय—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति माना गया है। यह स्वीकार करते हुये भी कि 'अर्थ' मनुष्य के जीवन में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है, उसे जीवन की एकमात्र आवश्यकता नहीं माना जा सकता। धर्म, मोक्ष आदि पारलौकिक उन्नति के लिये भी मनुष्य का उत्सुक रहना स्वाभाविक है। मनुष्य के अनेक कार्य सर्वथा अर्थ निरपेक्ष होते हैं। देशभक्तों का आत्म बलिदान, धर्म प्रचारकों का सर्वस्व त्याग, मानवतावादी महापुरुषों की "वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना अर्थ की कहां अपेक्षा रखती है ?

वर्ग संघर्ष और हिंसा को प्रोत्साहन देना भी युक्तिसंगत नहीं कहा जा सकता। पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार के कथन में हमें एक अद्भुत सत्य के दर्शन होते हैं, जब वे कहते हैं कि शूद्र वह व्यक्ति है जो दूसरों की उन्नति और अपनी अधोगति देख कर दुखी होते हैं (शोचयति इति शूद्रः) और अपने उत्थान के लिये द्विज सेवा को अपना साधन बनाता है। इसके विपरीत कम्युनिस्ट वह है जो दूसरे की सम्पत्ति और उन्नति को देख कर जलता है और हिंसा द्वारा उसे लूटना चाहता है। पुरुषार्थ और कर्मनिष्ठ जीवन के महत्व को स्वीकार करते हुये भी वैदिक आदर्श में कर्म सिद्धांत की प्रतिष्ठा है जिसके अनुसार अमीर, गरीब, पूंजीपति, मजदूर और किसान जमींदार होना अपने-अपने पूर्व या इस जन्म के कर्मों का फल माना गया है, परन्तु उद्योग के द्वारा इसमें परिवर्तन भी सम्भव है।

मार्क्स ने धर्म को अफीम कहा है परन्तु उस का धर्म से अभिप्राय सम्प्रदाय और विशेषः ईसाई मतवाद से है। वस्तुतः धर्म के मूल तत्वों व सिद्धान्तों का खण्डन करना किसी के लिये सम्भव नहीं है। श्री सम्पूर्णानन्द जी ने ठीक ह लिखा है—"समाजवादी धर्म के प्रति क्या करेंगे इस सम्बन्ध में बहुत लोगों को चिंता है। ऐसे प्रसंग में धर्म का अर्थ मजहब या सम्प्रदाय से होता है। जहाँ तक धर्म का अर्थ मनुप्रोक्त, धृति क्षमादि दशलक्षणात्मक वस्तु से है वहां तक कोई बात नहीं। वह तो सचमुच सनातन है पर वैष्णव, शैव, शाक्त, इस्लाम, ईसाईमत, हीनयान आदि सम्प्रदायों के विषय में यह बात नहीं कही जा सकती।" समाजवाद पृ० २५७, पञ्चम आवृत्ति सं० २००४ काशी विद्यापीठ से प्रकाशित।

यह भी सत्य है कि रूस में क्रान्ति के तुरन्त बाद ही धर्म के प्रति घोर घृणा और विद्वेष का प्रचार हुआ और ईसाई पादरियों, गिरजों और चर्च व्यवस्था का सामूहिक बहिष्कार हुआ, परन्तु अब वहां पुनः ईसाई धर्म का प्रचार हो रहा है। मार्क्सवाद का धर्म के प्रति जो यह आक्रोश है उसका कारण ईसाई सम्प्रदाय का विज्ञान और प्रगति विरोधी रवैया ही था। यूरोपीय राजनीति और सामाजिक जीवन में चर्च का कितना महत्वपूर्ण भाग रहा है यह तो इतिहास के विद्वानों से छिपा हुआ नहीं है, परन्तु साथही हमें यह भी याद रखना चाहिये कि इसी ईसाई मतान्धता ने ब्रूनो और गैलीलियो जैसे विज्ञान प्रेमियों को अमानुषिक यन्त्रणायें देकर स्वर्ग लोक का मार्ग दिखाया था। ऐसी परिस्थिति में यदि मार्क्स द्वारा सम्प्रदायों और अन्धविश्वासों का विरोध नहीं होता, तभी आश्चर्य हो सकता था। परन्तु यह नहीं भूल जाना चाहिये कि मार्क्स का विरोध इसी मतवाद का विरोध था।

वैदिक धर्म के सम्मुख ऐसी कोई अड़चन नहीं है जो उसे विज्ञान विरोधी बना दे। यहां तो विज्ञान के सत्य का आध्यात्मिकता के साथ समन्वय किया जाता है और इसके फलस्वरूप उसे मानव के लिये अधिक ग्राह्य बना दिया जाता है। परिवार का विरोध, सदाचार का विरोध, नैतिक उच्छृङ्खलता आदि आक्षेप साम्यवाद पर लगाये अवश्य जाते हैं, परन्तु वे उसकी विचारधारा के मूलभूत अंग नहीं हैं, अतः इस पर विचार करना अनावश्यक है। रूसी समाजवादी व्यवस्था के प्रारम्भिक युग में स्वतन्त्रता की अतिवादिता के कारण भले ही नैतिक मर्यादाओं का नाश हो गया हो, परन्तु अब तो वहां भी इन नियमों का कड़ाई से पालन किया जाता है।

साम्यवाद का आलोचनात्मक ज्ञान प्राप्त करने के लिये निम्न साहित्य पठनीय है—

(१) साम्यवाद-ले० श्रीनारायण स्वामी। (२) प्राचीन और नवीन समाजवाद—ले० श्रीनारायण स्वामी। (३) कम्युनिज्म—पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय। (४) कायाकल्प—पं० बुद्धदेव विद्यालङ्कार।

महर्षि दयानन्द के जन्म-दिवस के सम्बन्ध में विवाद

[लेखक—श्रीयुत प० इन्द्र विद्यावाचस्पति]

(१) यह वस्तुतः दुःख-मिश्रित आश्चर्य की बात है कि महर्षि की जीवन तिथि के सम्बन्ध में भी अब तक विवाद जारी है। महर्षि ने थ्योसोफिस्ट पत्र में प्रकाशित आत्म-चरित में लिखा था कि "सम्वत् १८८१ के वर्ष में काठियावाड़ देश के मौर्वीय राज्य के एक नगर में औदीच्य ब्राह्मण के घर में मेरा जन्म हुआ था।" अपने जन्म के सम्बन्ध में इससे अधिक सूचना देना महर्षि ने उचित नहीं समझा। क्योंकि उन्हें डर था कि पूरा परिचय पाकर उनके सम्बन्धी प्रचार कार्य में बाधक न हो जायें।

महर्षि की दी हुई सूचना के अनुसार यह बात तो निश्चित हो गई कि उनका जन्म सम्वत १८८१ विक्रमी में हुआ था। आश्चर्य की बात यह है कि महर्षि के जीवन काल में किसी उद्योगी व्यक्ति ने मौर्वी में जाकर स्वामीजी के जन्मस्थान, माता पिता और जन्म दिवस के सम्बन्ध में कोई छानबीन न की। उस समय प्रयत्न करने से ऐसे बहुत से व्यक्ति मिल जाते जो स्वामी जी के बाल्यकाल के परिचित होते, जिनकी सहायता से सचाई तक पहुँचना आसान हो जाता।

महर्षि के निर्वाण के पश्चात् उनके जीवन से सम्बन्ध रखने वाली घटनाओं की खोज का काम पण्डित लेखराम जी ने अपने हाथ में लिया। उन्होंने वर्षों तक अनथक परिश्रम करके जो मसाला एकत्र किया वह आर्य पथिक के असीम परिश्रम और अटल भक्ति भाव का एक जीता-जागता नमूना है। वह मौर्वी में गये और महर्षि की जन्म सम्बन्धी घटनाओं की जांच पड़ताल की। वह केवल इतना ही मालूम कर सके कि स्वामी जी का प्रारम्भिक नाम मूलशंकर था। इसके अतिरिक्त कोई ठीक जानकारी उन्हें न मिल सकी। इसके दो कारण थे। एक तो पण्डित जी काठियावाड़ की भाषा से सर्वथा अनभिज्ञ थे और मौर्वी में कोई अच्छी हिन्दुस्तानी जानने वाला व्यक्ति नहीं। दूसरा कारण यह हुआ कि पंडितजी का रहन सहन पेशावरी ढंग का था। भारत के पश्चिम आदि भागों में कोट, पाजामा और पेशावरी पगड़ी का वेश मुसलमान का चिन्ह समझा जाता था। मौर्वी के लोगों ने समझा होगा यह सज्जन या तो मुसलमान है या ईसाई। किसी ने खुलकर पंडित जी से बातें न कीं। परिणाम यह हुआ कि पंडित जी की छान बीन अधूरी रही। वह उससे अधिक कुछ न मालूम कर सके जो कुछ अपनी जन्म तिथि के सम्बन्ध में महर्षि ने स्वयं बतलाया था।

महर्षि के दूसरे चरित लेखक श्री देवेन्द्रनाथ मुखर्जी टंकारा तक तो पहुँच गये, परन्तु ठीक जन्म तिथि का पता वह भी न लगा सके।

(२) चिरकाल तक यह प्रश्न उपेक्षित ही बना रहा। १९६७ विक्रमी (१९१० ईस्वी) में कवि-रत्न प० अखिलानन्द शर्मा का 'दयानन्द दिग्विजय' नाम का ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। उसमें कवि-रत्न जी ने महर्षि के जन्म सम्बन्धी सब प्रश्नों का अन्तिम सा निर्णय एक दम ही कर दिया। कवि-रत्न जी ने अम्बाशंकर नाम के औदीच्य ब्राह्मण के आचार्य बृहस्पति के समान गुणों का अत्युक्ति-पूर्ण वर्णन करते हुए उनकी पत्नी का भी अत्यन्त रुचिकर वर्णन कर दिया और उसी प्रकरण में निम्नलिखित तीन श्लोकों द्वारा जन्म, तिथि सम्बन्धी सब प्रश्नों का समाधान कर दिया।

मासि भाद्रपदे पक्षे सिते वारे बृहस्पतेः।
नवम्यां मध्यमाया ते भास्करेपि विहायसः ॥१॥
नक्षत्रेति शुभे मूले योगेति प्रीतिवर्धने।
चन्द्राष्टवसुराकेशयोजनाल्लब्धभावने ॥२॥
विक्रमादित्यनृपतेर्वत्सरे जगतां गुरुः।
निर्गत्य जननीकुक्षेरागतो जगतीतले ॥३॥

"अंकों की नाम से गति हुआ करती है, इस नियम से चन्द्र १ अष्ट ८ वसु ८ राकेश १ इनके योजन से निकले हुए १८८१ विक्रम संवत् भाद्रपद मास, शुक्लपक्ष, नवमी, बृहस्पतिवार, मध्यान्ह के समय मूल नक्षत्र और प्रीति योग में जगद्गुरु ऋषि दयानन्द माता की कुक्षि से निकलकर भूतल में पधारे" ॥ १-३ ॥

निरंकुशाः कवयः" कवि निरंकुश होते हैं, यह उक्ति प्रसिद्ध है। यह स्पष्ट है कि कविरत्न जी ने उस उक्ति को पूरी तरह चरितार्थ कर दिया। काव्य भूमिका में उन्होंने यह भी लिखने का कष्ट नहीं उठाया, कि जन्म तिथि का निश्चय करने में उन्हें किन-किन प्रमाणों से सहायता मिली है। फिर भी यह आश्चर्य की बात है कि कई वर्षों तक कविरत्न जी की कल्पना सत्य मानी जाती रही। पंडित मेधाव्रत जी ने महर्षि दयानन्द के जीवन पर जो काव्य लिखा उसमें भी वही तिथि स्वीकार कर ली गई। उनकी देखा देखी अन्य भी बहुत से लेखकों और कवियों ने १८८१ विक्रम संवत् भाद्रपद मास, शुक्लपक्ष, नवमी, बृहस्पति वार को ही महर्षि को जन्म तिथि स्वीकार कर लिया।

(३) इस मत को अधिक प्रमाणिकता मिल गई जब बम्बई के आर्य समाज ने इसे स्वीकार कर लिया। १९५३ ई० में महर्षि दयानन्द जन्म-दिवसोत्सव के अवसर पर समाज के प्रधान पं० विजयशंकर जी ने बतलाया कि वह टंकारा जाकर स्वामी ओंकार सच्चिदानन्द जी के साथ महर्षि के पिता करसन जी की कन्या के वंशज श्री पोपट लाल जी से मिले थे। उस समय पोपटलाल जी के घर की एक वृद्धा ने बताया था कि मूल जी का जन्म भादवां मास में हुआ था। इसी आधार पर खोज करते हुए उन्होंने यह सम्मति बनाई कि ऋषि का जन्म १८८१ के भाद्रपद शुक्ल पक्ष की नवमी गुरुवार को मूल नक्षत्र में हुआ। काठिया-वाड़ की रीति के अनुसार मूल नक्षत्र में होने के कारण ही उनका नाम मूलशंकर रखा गया। पं० विजयशंकर जी ने यह अनुमान भी लगाया कि प० अखिलानन्द जी के पिता पं० टीकाराम जी स्वामीजी के सहाध्यायी तथा मित्र थे। किसी प्रसंग पर स्वामी जी ने पं०टीकारामजी को अपनी जन्म-तिथि बतलाई होगी। पं० अखिलानन्द जी ने अपने काव्य में वही लिखी है अतः माननीय है।

(४ आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् पं० भग-वद्दत्त जी ने ऋषि दयानन्द के स्वरचित जन्म चरित के पृष्ठ १६ की टिप्पणी में लिखा है "संवत् १९०३ में उनकी (महर्षि) आयु का २२वां वर्ष आरम्भ हो गया था। सो उनका जन्म अनुमान से १८८१ के अन्त में हुआ होगा, और उसका एक आध मास या कुछ दिन शेष होंगे, माघ या फाल्गुन होगा, ऐसा निश्चित होता है।" पंडित भगवद्दत्त जी ने यह अनुमान महर्षि के स्वयं लिखे हुए आत्म-चरित में वर्णित की हुई घट-नाओं के आधार पर लगाया था। पं० भगवद्दत्त जी ने ही अपने दूसरे ग्रन्थ वैदिक वाङ्मय में १८८१ आश्विन बदी ७ को महर्षि का जन्म दिन बताया है।

(५) इस प्रकार विद्वानों में महर्षि की जन्म तिथि के सम्बन्ध में एक बार मतभेद होने के पश्चात् वाद-विवाद का द्वार सा खुल गया। पं० हरिश्चन्द्र विद्यालंकार ने स्व-रचित आर्य समाज के इतिहास में महर्षि का जन्म १८८१ ई० के पौष मास में निर्णीत किया। पं० इन्द्रदेव जी आर्योपदेशक ने सम्मति प्रगट

की कि विक्रमी १८८१ फाल्गुन शुक्ला १ को ऋषि का जन्म हुआ। राजपूताने के इतिहासज्ञ ने नगर आर्य समाज जोधपुर में फाल्गुन बदी ८ गुरुवार (१० फरवरी १८८५) को ऋषि की जन्मतिथि के रूप में अंकित कराया था।

(६) कुछ महीने हुए प्रो० भीमसेन शास्त्री विद्याभूषण एम० ए० (राजस्थान) ने महर्षि की जन्मतिथि के सम्बन्ध में एक लेख माला दिल्ली के 'वेद प्रकाश' में लिखी थी। उसमें अन्य सब मतों की आलोचना करते हुए अन्त में निम्न-लिखित मत की स्थापना की है—

"हमारी उपर्युक्त आलोचना से स्पष्ट है कि महर्षि की जन्मतिथि सं० १८८१ में फाल्गुन वदी अष्टमी तथा त्रयोदशी के मध्य में अर्थात् ६ दिन में सीमित हो जाती है। पर अधिक सावधानता बरतते हुए हमने सं० १८८१ की माघ पूर्णिमा को उच्च सीमा तथा शिवरात्रि को अधः सीमा निरूपण किया है।

यह भी हमें निश्चित ज्ञात है कि महर्षि का जन्म मूल नक्षत्र में हुआ था अतएव उनका नाम मूलशंकर पड़ा था।

उपर्युक्त जन्म सीमाओं में मूल नक्षत्र फाल्गुन बदी १० तथा ११ को है। दशमी में इसका बहुत थोड़ा भाग है। मूल नक्षत्र का अधिकांश एकादशी में है।

इस प्रकार सं० १८८१ फाल्गुन बदी ११, रविवार (१३-२-१८२५) वेद-प्रमाण महर्षि दयानन्द की जन्मतिथि है। सूर्योदय समय की तिथि कहनी हो तो यह स० १८८१ फाल्गुन बदी १० शनिवार (१२-२-१८२५) कही जायगी।"

इन सब सम्मतियों को पढ़ने से प्रतीत होगा कि महर्षि की जन्मतिथि के सम्बन्ध में सर्वथा निश्चित बात एक ही है और वह यह है कि उन का जन्म १८८१ विक्रमी में हुआ। यह सूचना महर्षि ने स्वयं अपने आत्म-चरित में दी है।

दूसरी सम्मति, जो सर्वथा निश्चयात्मक रूप से दी गई है उसका प्रारम्भ पं० अखिलानन्द जी के काव्य से होता है। वह सम्मति किस आधार पर बनाई गई, इस प्रश्न का उत्तर अब तक नहीं मिल सका। आर्यसमाज बम्बई के प्रधान महोदय की कल्पना है कि सम्भवतः महर्षि ने अपनी जन्मतिथि प० अखिलानन्द जी के पिता पण्डित टीकाराम जी को बता दी होगी। यह एक कल्पना है जो सम्भावना पर आश्रित है। इसे निश्चित रूप नहीं दिया जा सकता। इसमें यही विशेषता है कि यह एक निश्चयात्मक कल्पना है।

पण्डित भगवद्दत्त जी, पं० इन्द्रदेव जी और पं० भीमसेन शास्त्री के मत अनुमान और गणना पर आश्रित हैं। महर्षि ने आत्म चरित में अपने बाल्यकाल की घटनाओं का वृत्तान्त सुनाते हुए आयु के विषय में जो निर्देश किये हैं, उपर्युक्त विद्वानों ने उनके आधार पर जन्मतिथि का अनुमान लगाया है। निर्देश वही हैं परन्तु उनसे परिणाम भिन्न भिन्न निकाले गये हैं। कौन सा परिणाम ठीक है, अभी तक इसका निश्चयात्मक उत्तर देना कठिन है। गणना-सम्बन्धी अनुमानों को निश्चयात्मक रूप देने के लिए यह आवश्यक होता है कि न्यून से न्यून कोई एक बिन्दु सर्वथा निश्चित हो। वर्ष का बिन्दु तो निश्चित है, परंतु तिथि का निश्चित बिन्दु कोई नहीं। इस कारण इतिहास लेखक के लिए किसी तिथि पर निश्चयात्मक अंगुली रख देना सम्भव नहीं। जब तक हम किसी निश्चयात्मक सम्मति पर न पहुचें तब तक प्रतीत होता है कि हमारा तिथि सम्बन्धी प्रश्न पर खोज करते रहना ही उचित है। व्यावहारिक रूप में जैसे अब शिवरात्रि को ऋषि बोधोत्सव के रूप में मनाया जाता है, मनाया जाता रहे। क्योंकि वह मूलशंकर के आध्यात्मिक जीवन का जन्मदिवस था।

———

प्रश्नों के उत्तर

आर्यसमाज और राजनीति

नारायण पेठ से श्री रामनाथ जी लिखते हैं:–

"आज की इस घड़ी में आर्य समाजियों को राजनीति में प्रवेश करना चाहिए या नहीं ? क्योंकि आर्य समाज अपने सार्वभौम वैदिक धर्म के अनुसार 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' इस महामन्त्र को कृति में लाने को कटिबद्ध है, तथा 'गोवध बन्दी' और ईसाइयों में शुद्धि करना अपना परम कर्त्तव्य समझता है। इसके विपरीत कांग्रेस संस्था तथा कांग्रेसी के पग पदे-पदे उठ रहे हैं। आर्य समाजी के लिये कांग्रेस में प्रवेश होने के बाद कांग्रेस नीति का अवलम्बन करना अनिवार्य हो जाता है। जब कांग्रेस नीति का अवलम्बन होगा तब आर्य समाज के नीति नियमों को धक्का पहुँचेगा। ऐसी दशा में आर्य समाजियों का कांग्रेस में प्रवेश कहां तक उत्तम रहेगा ? संशय निवारणार्थ आपसे प्रार्थना है।"

उत्तर—यह ठीक है कि प्रत्येक आर्य का कर्त्तव्य है कि वह मनुष्य मात्र तक आर्य धर्म का सन्देश पहुँचाये। कोई सरकार या अन्य सांसारिक शक्ति उसके इस कर्त्तव्य के पालन और अधिकार के प्रयोग में बाधा नहीं डाल सकती। भारत के संविधान में ऐसी कोई धारा नहीं है जो भारत की सरकार को वैदिक धर्म के प्रचार के मार्ग में रुकावट डालने का अधिकार देती हो। यदि उचित उपायों से प्रचार किया जाय तो कोई राज नियम बाधक नहीं हो सकता। यदि कोई आर्यसमाजी कांग्रेस में जाकर अपनी धार्मिक भावना को शिथिल कर देता है तो यह उसकी आत्मिक निर्बलता का प्रमाण है। कांग्रेस के नियमों में किसी भी सदस्य के धार्मिक विचारों अथवा धार्मिक अधिकारों पर प्रतिबन्ध डालने की गुञ्जायश नहीं। अनुभव ने बतलाया है कि यदि राजनैतिक विचारों में कांग्रेस का अनुयायी होता हुआ भी कोई व्यक्ति दृढ़ वैदिक धर्मी रहना चाहे तो उसे किसी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता। विचारों में दृढ़ता चाहिए धर्म और राष्ट्र में विरोध की कोई संभावना नहीं रहती। यह विचार भी निर्मूल है कि कांग्रेस गोवध के पक्ष में है। कांग्रेस का मूल है 'अहिंसा' महात्मा गांधी गोवध के विरोधी थे और स्वतन्त्र भारत के संविधान में दूध देने वाले और कृषि के लिए उपयोगी पशुओं की रक्षा का विधान किया गया है। ऐसी दशा में वह कांग्रेसी सच्चा कांग्रेसी नहीं है जो किसी प्रकार से भी गोवध का समर्थन करे। रही ईसाइयों अथवा अन्य मतावलम्बियों के आर्य धर्म में प्रवेश की बात। देश के संविधान में जिस धर्म प्रचार की स्वाधीनता का विधान है, वह सभी के लिये समान है। एक वैदिक धर्मी उससे वंचित कैसे रह सकता है ? ऐसी परिस्थिति के कारण मेरी सम्मति है कि जो आर्य समाजी कांग्रेस के राजनैतिक मन्तव्यों से सहमत हो और वह राजनीति में भाग लेना चाहे, उसे कांग्रेस में अवश्य प्रविष्ट होना चाहिये। परन्तु हृदय में यह दृढ़ संकल्प कर लेना चाहिये कि कोई भी प्रलोभन या भय उसे अपने धर्म के मार्ग से च्युत न कर सकेगा।

(शेष पृष्ठ ४५० पर)

* दक्षिण भारत प्रचार *

ता० ५-१०-५५ बुधवार को बंगलौर में प्रतिनिधि प्रकाशन समिति की अन्तरङ्ग सभा का अधिवेशन हुआ। सभा ने कन्नड़ सत्यार्थप्रकाश के सम्बन्ध में निम्न निश्चय किये:—

१. सत्यार्थप्रकाश पर कुल व्यय ६५००, रु० आने की सम्भावना है अत: प्रत्येक प्रति का विक्रय मूल्य ३।) रखा जाय। जो व्यक्ति २५-१०-५५ तक पेशगी धन भेज देवें उनको २।=) वास्तविक मूल्य पर पुस्तकें दे दी जावें। परन्तु २५ प्रतियों से कम लेने वालों को यह सुविधा न होगी। विजया दशमी के पश्चात् इकट्ठी २५ प्रति लेने वालों को २॥।) प्रति के मूल्य पर पुस्तकें दी जावें।

२. ५०) तथा इससे ऊपर दान देने वाले सहायकों को एक २ कैलिको Bound पुस्तक उपहार स्वरूप दी जावे। प्रति २५०) पर एक प्रति अधिक उपहार में दी जावे।

३. श्री पं० सुधाकर जी, श्री पं० सुब्बनरसिंह जी शास्त्री, श्री पं० मञ्जुनाथ जी व श्री पं० विश्वमित्र जी इन सम्पादक मण्डल के पण्डितों को दक्षिणा रूप में पुस्तकें भेंट दी जावें।

प्रदर्शिनी में

मैसूर राज्य को भारत प्रसिद्ध प्रदर्शिनी में सार्वदेशिक सभा की सहायता से प्रतिनिधि प्रकाशन समिति की ओर से दूकान खुल गई है। इस अवसर पर विक्रयार्थ श्रीमती सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड, श्री गोविन्दराम हासानन्द, श्री शिवपूजनसिंह जी कुशवाहा पथिक, श्री बत्ती दासप्पा शैनै, श्री मोहन प्या तिब्बलाय मंगलूर ने पुस्तकें भिजवा कर बहुत बड़ी सहायता की है। आर्य समाज गुलबर्गा ने प्रदर्शनार्थ १५ विभिन्न भाषाओं में सत्यार्थप्रकाश भिजवाये हैं। समिति सब का बहुत-बहुत धन्यवाद करती है।

समिति ने सभा की सहायता से प्रचारार्थ निम्न करपत्र एवं पुस्तिकायें भी छपवाई हुई हैं—

१. Back to the Veuas.

२. Do you know Rishi Dayanand?

३. सत्यार्थप्रकाश महापुरुषर दृष्टियल्लि। (कन्नड़)

४. सत्यमेव जयते नानृतम् (कन्नड़)

५. Arya samaj and Cnristianity.

ता० १६-१०-५५ को मैसूर राज्य के लेजिस्लेटिव कौन्सिल के उपाध्यक्ष तथा मैसूर दशहरा प्रदर्शिनी समिति के उपाध्यक्ष श्री गोपाल कृष्ण शेट्टी ने यजमान बनकर एक बृहद् यज्ञ किया तथा दूकान का उद्घाटन किया। प्रचारार्थ लिखित बोर्डों, करपत्रों व पुस्तकों को देखकर बड़े हर्षित हुए। उन्होंने कहा—'मैंने ऐसा प्रयत्न केवल उत्तर भारत में देखा है। मुझे प्रसन्नता है कि आप उत्तर भारत की चीज को दक्षिण भारत में भी ले आये हैं। इतने वर्षों में यह प्रथम अवसर है कि मैं मैसूर प्रदर्शिनी में इस प्रकार की उत्तम दूकान देख रहा हूँ।" उन्होंने भविष्य में समिति की ओर से प्रदर्शिनी का उद्घाटन बृहद्यज्ञ द्वारा करने तथा समिति व आर्य समाज को दूकान किराया व अन्य विषयक रियायतें व सुविधा देने का आश्वासन दिया।

ईसाई युवक की आत्मशुद्धि

मलाबार प्रदेश के टानूर नामक ग्राम में डाकखाने में क्लर्क का काम करने वाला एक ईसाई युवक आर्य साहित्य द्वारा प्रभावित होकर स्वयं कालीकट समाज में जाकर १८-६-५५ को शुद्ध हो कर आर्य समाज में दीक्षित हो गया। दो-तीन मास से मेरे साथ उसका प्रश्नोत्तरात्मक पत्र-व्यवहार चल रहा था। अन्ततः मैंने उसे Arya-samaj and Christianity तथा मलयालम् का सत्यार्थप्रकाश पढ़ने को भिजवाया। वह आर्यसमाज के सिद्धान्तों से इतना प्रभावित है कि वह आर्य समाज का मिशनरी बनना चाहता है।

उसने अपना नाम जोसेफ से बदल कर ही सत्यानन्द रख लिया है।

दशहरा और ईसाई मिशनरी

प्रतिवर्ष दशहरे के अवसर पर ईसाई मिशनरियों का गली २ में प्रचार आरम्भ हो जाता था। परन्तु पुराने अनुभवों से भयभीत होकर उन्होंने अपना कार्य इस बार बन्द ही रखा है। संस्कृति पुनरुत्थान सभा के युवक पर्यवीक्षण में लगे रहते हैं कि कहीं किसी गली में प्रचार तो नहीं हो रहा। यदि हो रहा होता है तो बहुत से प्रश्न पूछकर व जनता को समझा कर उन्हें सफल नहीं होने दे पाते। सभा ने प्रचारार्थ A word to Christian Missionaries व अन्य बहुत से कन्नड़ भाषा के करपत्र छपवाये हुए हैं।

सत्यपाल शर्मा स्नातक
दक्षिण भारत, आर्यसमाज आर्गेनाइजर

(पृष्ठ ४४८ का शेष)

परामर्श की आवश्यकता

इन्दौर से श्री वीरसेन जी लिखते हैं—

श्रीमन्नमस्ते !

निवेदन है कि देश एवं विश्व की राजनीति एवं शासन को वैदिक विचार धारा से प्रभावित करने के लिए सार्वदेशिक सभा एवं प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं की ओर से यदि निम्नलिखित प्रभावशाली प्रयत्न किये जावें तो बहुत सफलता प्राप्त हो सकती है:—

(१) सार्वदेशिक सभा प्रत्येक प्रमुख राष्ट्र के राजनीतिज्ञों, विधान सभा के सदस्यों व प्रमुख शासकों की नामावली पते सहित ज्ञात करके प्रतिमास या प्रति तीसरे मास विश्व की वर्तमान समस्याओं को हल करने में वैदिक विचार धारा या आर्य समाज के दृष्टिकोण से क्या समुचित हो सकता है इसकी चर्चा करे। वैदिक आदर्श एवं लक्ष्य की भी इसमें समुचित ढंग से चर्चा हो। विषय व्यापक हों और १-२ विषयों ही की चर्चा हो (पारस्परिक या राष्ट्र विशेष की चर्चा को उसमें स्थान न दिया जावे)।

(२) इसी प्रकार प्रान्तीय प्रतिनिधि सभायें अपने प्रान्त के विधान सभाइयों, शासकों, राजनैतिक पार्टियों के प्रमुख व्यक्तियों के पास प्रतिमास अपने देश की शिक्षा, सदाचार, संस्कृति, धर्म व नीति के सम्बन्ध में विशुद्ध वैदिक विचार धारा के आधार पर अपने विशेष पत्रों द्वारा सम्पर्क स्थापित करते रहें तो आर्य समाज देश व विश्व की राजनीति को प्रभावित कर सकेगा।

भवदीय
वीरसेन

(श्री वीरसेन जी का सुझाव विचार योग्य है। अखिल भारतीय आर्य सम्मेलन की उपयोगिता में सन्देह नहीं, परन्तु उसकी सफलता इसी मे है कि आर्य जगत् का ध्यान एक विशेष दृष्टिकोण अथवा आन्दोलन में केन्द्रित किया जाय। दृष्टिकोण का निश्चय करना सम्मेलन जैसी संस्था के लिए संभव नहीं। सार्वदेशिक सभा तथा प्रान्तीय सभायें इस समय प्रबन्ध को चलाने का साधन बनी हुई हैं। इन दोनों के बीच में ऐसा आयोजन अवश्य होना चाहिए कि समय-समय पर आर्य समाज की आन्तरिक और बाह्य नीति पर परामर्श हो सके। उस परामर्श में सभाओं के सदस्यों के अतिरिक्त अन्य आर्य विचारकों तथा नेताओं को सम्मिलित करना भी आवश्यक हो। आशा है प्रतिनिधि सभायें इस सुझाव पर गम्भीरता पूर्वक विचार करेंगी।

—सम्पादक

चयनिका

शब्द प्रतियोगिता

मानव बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण होती है और उसका उपयोग दो प्रकार से किया जा सकता है। मानव बुद्धि द्वारा ऐसे आविष्कार भी हुए हैं, जिनसे समाज का भारी कल्याण हुआ है। किन्तु मानव ने दूसरों को सताने, उनका शोषण करने और उनके धन का अपहरण करने के लिये भी अपनी बुद्धि का उपयोग किया है। राज्य को समाज के कल्याण की चिन्ता करनी पड़ती है। उसे न्याय-तुला को ठीक प्रकार से थामना पड़ता है ताकि कोई व्यक्ति या व्यक्ति समूह दूसरे व्यक्तियों के स्वत्वों का अपहरण न करने पाए, उनके भोलेपन का अनुचित लाभ न उठा सके। समाज में कुछ बुराइयां ऐसी होती हैं, जिनको पहचानने में कोई कठिनाई नहीं होती। जिसको आम तौर पर बुराई मान लिया जाता है, उस पर आसानी से रोक लगाई जा सकती है। किन्तु कुछ काम ऐसे होते हैं, जिनमें बुराई प्रच्छन्न रूप में रहती है। चतुर आदमी कभी कभी उसे अच्छाई का रूप देने में भी सफल हो जाते हैं। उस दशा में बुराई का प्रसार काफी तेजी से होने लगता है।

समाज में शब्द प्रतियोगिताओं के रूप में ऐसा ही एक बुराई ने अपना स्थान बना लिया इन प्रतियोगिताओं के लिये बड़े बड़े पुरस्कारों की घोषणा की जाती है। अभी हमने देखा कि एक शब्द प्रतियोगिता के लिए दो लाख रुपये के प्रथम पुरस्कार की घोषणा की गई थी। इन प्रतियोगिताओं के समाचार पत्रों में आकर्षक विज्ञापन प्रकाशित किए जाते हैं, ताकि अधिक से अधिक व्यक्ति अपने हल भेजें। प्रत्येक हल के लिये कुछ शुल्क निर्धारित होता है। अतः प्रतियोगिता आयोजकों को इस शुल्क से काफी आमदनी हो जाती है। घोषित पुरस्कार वितरित कर देने के बाद भी उनको काफी रकम बच रहती है। यह उनके लिए काफी लाभ का सौदा हो जाता है। कुछ समाचार पत्रों ने अपना प्रसार बढ़ाने केलिए इन प्रतियोगिताओं को माध्यम बनाया है। चूंकि हल भेजने के लिए समाचार पत्र में प्रकाशित कूपन के उपयोग की शर्त रहती है, इसलिए भी समाचार पत्र को खरीदना आवश्यक हो जाता है। शब्द प्रतियोगिताओं का आयोजन आर्थिक दृष्टि से लाभदायक व्यवसाय है, किन्तु उसमें निहित बुराई को अनुभव करके ही इस पत्र ने अपने को इस प्रलोभन से अलग रखा है और न तो शब्द प्रतियोगिताओं का आयोजन किया है और न उनके विज्ञापन ही प्रकाशित किए हैं।

इन प्रतियोगिताओं के आयोजकों का कहना है कि उनसे बुद्धि का विकास और मनोरंजन होता है। एक हद तक यह स्वीकार किया जा सकता है कि इस कथन में सत्य का अंश है। किन्तु भारी भारी पुरस्कारों के जो प्रलोभन उपस्थित किए जाते हैं, उनके कारण इन प्रतियोगिताओं ने एक प्रकार से जुए का ही रूप धारण कर लिया है। इन प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाला

(शेष पृष्ठ ५४ पर)

महिला-जगत्

स्त्री पुरुषों के पवित्र कर्त्तव्य

[लिय टालसटाय]

जो पुरुष अपना जीवन विविध पुरुषोचित कार्यों के करने में बिताते हैं और जो स्त्रियां अपना जीवन बच्चे पैदा करने और उनका पालन पोषण करने में बिताती हैं वे सदा अनुभव करेंगे कि उन्होंने अपना जीवन पुण्य कार्यों में बिताया और मनुष्य समाज सदा उन्हें आदर की दृष्टि से देखेगा क्योंकि उन्होंने अपने कर्तव्यों का पालन किया। पुरुषों का कार्य बहुमुखी और विस्तृत है और स्त्रियों का कार्य सीमित पर ठोस है।

पुरुष को शरीर तथा बुद्धि से ईश्वर की सेवा करनी चाहिये, उपासना करनी चाहिये। वह अनेक क्षेत्रों से अपने कर्तव्य की पूर्ति कर सकता है परन्तु स्त्री के लिये ईश्वर सेवा तथा उपासना का विशेष आधार बच्चों का लालन पालन है।

पुरुष को अपने कार्यों से ईश्वर और मनुष्य जाति की सेवा करने का आदेश दिया गया है पर स्त्री तो उत्तम सन्तान निर्माण के द्वारा ही सेवा कर सकती है। इसलिये स्त्रियों का अपने बच्चों को विशेष रीति से प्यार करना स्वाभाविक है। इसके विरुद्ध जो दलीलें दी जाती हैं वे व्यर्थ हैं। माता सदा अपने बच्चे को विशेष रीति से प्यार करेगी। माता का अपने बच्चों को विशेष रीति से प्यार करना अहंवृत्ति का द्योतक नहीं है जैसा कि उल्टी सीख कुछ लोग देते हैं। यह प्यार वैसा ही है जैसे कोई कारीगर अपने हाथ से बनाई वस्तु को प्यार करता है। यदि वह प्यार छीन लिया जाय तो फिर उसके लिये काम करना असम्भव हो जाय। मेरी समझ में इस तरह स्त्रियों और पुरुषों की पूर्ण रूप से समानता सिद्ध होती है क्योंकि दोनों समान रूप से ईश्वर तथा मनुष्य जाति की सेवा करते हैं यद्यपि उनके कार्यक्षेत्र भिन्न भिन्न हैं। दोनों की समानता इस बात से भी सिद्ध है कि दोनों का योग समान रूप से महत्वपूर्ण है। एक की दूसरे के बिना कल्पना नहीं की जा सकती। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं तथा दोनों को अपने अपने कार्य सम्पन्न करने के लिये सत्य का जानना आवश्यक होता है और उसे जाने बिना कार्य मानव जाति के लिये लाभदायक होने के बदले हानिकारक हो जाता है।

पुरुष को विविध कार्य करने का आदेश दिया गया है, पर उसका सारा शारीरिक श्रम उसका मानसिक कार्य तथा उसका धार्मिक कार्य तभी लाभदायी होता है जब वह अनुभूत सत्य के आधार पर किया जाता है। यही बात स्त्रियों पर भी चरितार्थ होती है। उनका बच्चे पैदा करना तथा उनका पालन पोषण करना मनुष्य जाति के लिये तभी लाभदायी होगा जब वह अपने सुख के लिये बच्चों का पालन पोषण नहीं करेगी बल्कि वह उन्हें मानव जाति का भावी सेवक बनायेगी, उन्हें सत्य की शिक्षा देगी और सिखलायेगी कि वे मनुष्य से कम से कम लें और अधिक से अधिक दें। मैं उस स्त्री को आदर्श स्त्री कहूँगा जो जीवन सिद्धान्तों को अच्छी तरह समझ लेने के बाद अधिक से अधिक संख्या में बच्चे पैदा कर तथा पाल पोस कर उन्हें मानवजाति की सच्ची सेवा कर सकने के योग्य बना देने की शिक्षा देती है। जीवन सिद्धांतों की शिक्षा महिला विद्यापीठों में अथवा आँख कान बन्द रखने से नहीं मिलती। वह हृदय का द्वार मुक्त रूप से खोल देने पर प्राप्त होती है।

(संकलित)

* बाल-जगत् *

जीजी की ओर से

नन्हे मुन्नो !

तुम तो अभी अपनी जीजी को जानते नहीं हो—पर खैर धीरे धीरे जान ही जाओगे। नन्हे मुन्ने भाई बहिनो क्या तुम कहानी सुनोगे ? अच्छा तो अब मैं तुम्हें एक कहानी सुनाऊंगी—ऐसी देश भक्त लड़की की जो अपनी मृत्यु के बाद भी आज तक सब संसार वासियों को याद है।

बहुत पहले की बात है फ्रांस और ब्रिटेन में बड़ा भारी संग्राम हो रहा था। फ्रांसीसी सेना कमजोर थी अत: ब्रिटेन की सेना देश में बराबर बढ़ती आ रही थी। देश भर में सनसनी फैली हुई थी। उन दिनों फ्रांस के 'ओरलीन' नामक गाँवमें एक किसान रहता था। उसकी एक लड़की थी—नाम था 'जोन'। जोन साहसी, परिश्रमी और दयालु लड़की थी। प्रतिदिन वह अपने पिता की बकरियों को चराने जंगल में ले जाती और शाम तक लौटती थी।

एक दिन जब वह जंगल में बैठी अपने देश की दशा के विषय में सोच रही थी, तो उसको किसी की आवाज सुनाई दी—जैसे कोई उसे पुकार रहा हो। उसने चारों ओर देखा, कोई नहीं था। उसने फिर से आवाज सुनी कि—'जोन तुम्हारे देश पर आपत्ति आई हुई है। तुम जाओ, लड़ो और अपने देश को स्वतन्त्र करो।"

जोन को बड़ी प्रेरणा मिली। जब वह शाम को घर लौटी तो उसने अपने पिता को सब कुछ बताया। पहले तो सब गांव वालों ने उसकी बात की हंसी उड़ाई पर जब वह बार बार सरलता से घटना सुनाती गई तब उसका पिता उसे लेकर फ्रांस के राजा के पास पहुँचा।

फ्रांस का राजा, डाफिन,तनिक भी समझदार व बुद्धिमान न था। वह भी पहले जोन की बात सुन कर हंसा, क्योंकि जोन को लड़ना तो क्या घोड़े पर चढ़ना और तलवार चलाना भी नहीं आता था। फिर भी जरा आशा की बात सुनकर राजा ने सोचा— चलो देख लें क्या होता है ?" और जोन को लड़ाई के मैदान की ओर भेज दिया।

जोन बड़ी बुद्धिमती थी। उसने बहुत जल्दी अस्त्र शस्त्र चलाने सीख लिये और फिर संग्राम भूमि में जाकर बड़े साहस से काम लिया। अन्य सब सैनिक भी एक स्त्री की इतनी अधिक साहसिकता देख कर उत्तेजित हो उठे और वीरता के साथ ब्रिटेन की सेना पर टूट पड़े। देश भर में मातृभूमि के प्रति भक्ति और स्नेह उमड़ आया और देश का प्रत्येक व्यक्ति लड़ने के लिए तैयार हो उठा। लड़ाई का पासा पलट गया। हारता हुआ फ्रांस अचानक जीत गया और ब्रिटेन हार गया।

इसके बाद जोन ने और भी कई लड़ाइयों में भाग लिया और अपने देश को जिताती गई। अन्त में वह ब्रिटिश साम्राज्य से पेरिस वापिस लेने के लिये युद्ध में उतरी पर ब्रिटिश सैनिकों ने युद्ध में उसे पकड़ लिया और बाजार के मध्य खड़ा करके उसे जला डाला। जलते समय भी वह अपने देश की जय जय कार बोल रही थी। उसके मुंह पर मुस्कान थी क्योंकि उसका जीवन अपने देश के लिये समाप्त हो रहा था। वह जल गई किन्तु उसका नाम आज तक संसार में अमर है। वह देश भक्तों की पंक्ति में आदर्श है।

पत्रों के उत्तर

प्रिय भाई दिनेश ! तुम्हारा पत्र मिला। यह जान कर बड़ी प्रसन्नता हुई कि तुम कहानी कविता और लेख लिखते हो। तुम अपनी कोई रचना भेजना चाहते हो तो जरूर भेजो, भाई, नन्हें मुन्नों का अपने इस पत्र पर पूरा अधिकार है। वे जो कुछ भेजेंगे, उसको अवश्य छपवायेंगे, यदि रचना सुन्दर हुई तो।

प्रिय बहिन कान्ता—तुम्हारी गुड़िया का ब्याह कब है ? ठीक २ तारीख लिखो न। आ सकी तो जरूर आऊंगी, नहीं तो इस गुड़िया को मेरी तरफ से बधाई देना।

भाई अरविन्द— तुम पूछते हो दुनिया देखने में चकोर लगती है। फिर गोल क्यों कहलाती है ? वास्तव में दुनिया गोल है, पर हम उससे उतने ही छोटे हैं जितनी एक फुटबाल पर चींटी, इसी लिये हमें उसके आकार का ठीक ज्ञान नहीं हो पाता।

तुम्हारी जीजी उषा

चयनिका

(पृष्ठ ४५१ का शेष)

व्यक्ति उनके द्वारा एक रात में धनवान बनने का स्वप्न देखता है और चूंकि शब्द प्रतियोगिताओं में अनेक अर्थी शब्द रखे जाते हैं, इसलिए किसी भी हल का सही निकलना भाग्य पर ही निर्भर करता है। इन प्रतियोगिताओं के प्रबन्ध में अप्रामाणिकता की भी गुंजाइश रहती है। कुछ 'भले' आदमी घोषित नियमों की भी अवहेलना कर सकते हैं। अनेक राज्य सरकारों ने यह अनुभव किया कि शब्द प्रतियोगिताओं की इस बीमारी पर कुछ न कुछ अंकुश लगाया जाना चाहिये, ताकि समाज में जुए की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन न मिले और लोग बिना किसी परिश्रम के धनवान् बनने के स्वप्न न देखें। संविधान के अनुसार राज्यों को इस विषय में कानून बनाने का हक हासिल है, किन्तु वे केन्द्र से भी इस विषय पर कानून बनाने का अनुरोध कर सकते हैं। कुछ राज्यों की विधान सभाओं ने केन्द्र से ऐसा कानून बनाने का अनुरोध किया भी है और केन्द्र ने उसे स्वीकार करके लोकसभा में एक विधेयक प्रस्तुत कर दिया है। यह विधेयक काफी क्रान्तिकारी है और उसमें पुरस्कार की राशि की अधिकतम सीमा एक हजार रुपया मासिक निर्धारित कर दी गई है। यही नहीं एक हजार रुपये तक की शब्द प्रतियोगिताओं का आयोजन करने वालों को सरकार से लाइसेंस प्राप्त करना होगा और बाकायदा हिसाब रखना होगा। इस हिसाब की सरकार छानबीन कर सकेगी। इस विधेयक की मूल धाराओं का उल्लंघन करने पर तीन महीने कैद या एक हजार रुपया जुर्माना या दोनों प्रकार की सजाओं की व्यवस्था की गई है। यदि कोई आयोजक गलत या झूठा हिसाब पेश करेगा तो उसे पाँच सौ रुपये तक जुर्माने की सजा दी जा सकेगी। हम इस विधेयक का स्वागत करते हैं। इससे शब्द प्रतियोगिताओं के समाज पर होने वाले हानिकर परिणामों की सफलतापूर्वक रोक हो सकेगी। हम यह आशा करेंगे कि अन्य राज्य भी इस कानून से लाभ उठायेंगे और उसे अपने यहां लागू करके इस सामाजिक बुराई की रोक-थाम करने में सक्रिय होंगे। —हिन्दुस्तान

हर्ष है कि यह विधेयक पास हो गया है।

—सम्पादक

* ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन *

हिन्दुओं को ईसाई बनाने का जाल फैलाया जा रहा है

सन् १६५६ के अन्त में आम चुनाव होने वाले हैं, इन चुनावों में ईसाइयों का रुख किधर का होगा इससे हमें कोई प्रयोजन नहीं, वह भी स्वतन्त्र भारत के नागरिक हैं अपनी बुद्धि के अनुसार स्वतन्त्रता पूर्वक वह अपना मत चाहे जिसे दें और अवश्य उन्हें देना चाहिये। किन्तु इन मिशनरियों की भाग दौड़ कुछ और ही प्रयाजन लिये हुए है और वह यह कि अधिक से अधिक ईसाइयों के वोट बनें और अधिकाधिक भोले हिन्दुओं को ईसाई लिखाया जाय।

हम अनेक बार कह चुके हैं कि इन ईसाइयों के चर्चों के रजिस्टरों में लाखो हरिजन एवं आदिवासी हिन्दुओं के नाम धोखे से लिखे हुए हैं। जिन अनपढ़ लोगों को इन्होंने किसी मुसीबत के समय रुपया, वस्त्र व अन्न बांटा है, उनके अगूठे धोखे से ईसाई मत में प्रवेश करने सम्बन्धी फार्मों पर कराये हैं। मिशन अस्पतालों में भी यह कुचक्र भयंकर रूप से चला है। सहस्रों गरीब भोले हिन्दुओं से ऐसे ही फार्मों पर अंगूठे आदि लिये हैं।

आज दिन जो अमेरिका से आये हुए दूध के डिब्बे बांट रहे हैं तथा चावल गेहूं व घी ग्रामों के हरिजनों में वितरित किया जा रहा है इस जनसेवा के कार्य का भी भयंकर दुरुपयोग इन मिशनरी लोगों द्वारा किया जा रहा है।

हमें अनेकों ऐसे ग्राम मिले हैं जहां ईसाई अपने को कहने वाले ४ या ५ व्यक्ति केवल हैं किन्तु चर्च के रजिस्टरों में २०० या २५० के लगभग ईसाई दर्ज हैं। पिछली मर्दुम शुमारी के समय इन्होंने अपने रजिस्टरों को दिखला-दिखला कर इन भोले हिन्दुओं को ईसाई लिखवाया है।

अनूपशहर : बुलन्दशहर यू० पी० : के गत नगरपालिका के चुनाव के अवसर पर दो हरिजन सदस्यता के लिये भिन्न-भिन्न टिकटों पर खड़े हुए। दोनों के विरुद्ध जांच के समय चुनाव अधिकारी के समक्ष एक दूसरे के ईसाई होने की आपत्ति उठाई गई और चर्च का रजिस्टर पेश किया गया। यह दोनों ही प्रत्याशी १६ हों आना हिन्दू थे किन्तु चर्च में इनको ईसाई लिखा था। योग्य चुनाव अधिकारी ने ईसाई चर्च के रजिस्टरों को जाली और अप्रमाणित घोषित किया और आपत्तियां रद्द कर दीं।

अतः हम भारत सरकार से तथा प्रादेशिक सरकारों से यह अनुरोध करते हैं कि वह भारत के प्रत्येक ईसाई मिशन के चर्च रजिस्टरों की जांच करावें और हमारा दावा यदि सत्य प्रमाणित हो जाये तो जालसाजी के अभियोग इन मिशनरियों अथवा चर्च के पादरियों पर चलाये जायें।

इस धोखे धड़ी से ही देश में इस समय ईसाइयों की संख्या ८० लाख है। यथार्थ में इनकी संख्या ५० लाख से ऊपर नहीं है। इस जांच पड़ताल का एक परिणाम यह भी होगा कि जो अंग्रेजी पढ़े लिखे बहुत से हिन्दू इन मिशनरियों को देवता समझते हैं और निष्काम भाव से जनता की सेवा करने वाला मानते हैं, उनकी भी आंखें खुल जायेंगी। हम तो पूर्ण विश्वास के आधार पर कहते हैं कि मिशनरियों के अस्पताल व स्कूल भोले हिन्दुओं को ईसाइयत के जाल में फांसने वाले अड्डे मात्र हैं। इनको शीघ्र से शीघ्र सरकार को अपने हाथ में ले लेना चाहिये। रूस,

चीन, अर्जनटीन, बेल्जियम, पोलैण्ड, पूर्वीय जर्मनी, आस्ट्रिया, हंगरी, रूमानिया, स्लोवाकिया आदि से भारत सरकार को सबक लेना चाहिये।

भारत सरकार के फैसले से विदेशी पादरी चिन्तित

कराची से निकलने वाला कैथालिक ईसाई पाक्षिक-पत्र क्रिश्चियन वायस अपने ८ सितम्बर के अंक में लिखता है कि भारत सरकार ने जो विदेशी मिशनरियों के सम्बन्ध में नई नीति अपनाई है उसके अनुसार अब भारत में कोई नया मिशनरी विदेश से न आ सकेगा। शिक्षा विशेषज्ञ, चिकित्सक एवं कलाकार के नाते ही अब विदेशी जन भारत में आ सकेंगे।

यह पत्र आगे लिखता है कि लगभग २०००० विदेशी ईसाई पुरोहित, भिक्षुनियाँ जो आज दिन भारत में कार्य कर रही हैं उनमें से १६००० के लगभग ४० वर्षों में समाप्त हो जावेंगी और इनकी स्थान पूर्ति भारतीय मिशनरियों द्वारा की जानी पड़ेगी।

मद्रास के आर्क विशप श्री मैथियस ने इस खतरे का सामना करने के लिये पूरा २ आंदोलन आरम्भ कर दिया है और पुरोहित शिक्षक-केन्द्रों के स्थान-स्थान पर खोलने की योजना की जा रही है!

हम भारत सरकार की विदेशी मिशनरियों को रोकने सम्बन्धी नीति से पूर्णतया सन्तुष्ट नहीं क्योंकि यह मिशनरी अब शिक्षा विशारद, कलाविद 'टैकनिशियन्स' तथा डाक्टरों के रूप में आयेंगे और भारी संख्या में आयेंगे। भारत में लगभग १० लाख बालक बालिकाओं की शिक्षा इन विदेशी मिशनरियों के हाथों में है। इनके शिक्षणालयों में लगभग ५०००० शिक्षक कार्य करते हैं, अब भारतीय अध्यापकों के स्थान पर विदेशी मिशनरी अध्यापकों के रूप में धड़ाधड़ आ रहे हैं, इसी प्रकार भारत में लगभग १००० ईसाइयों के छोटे-बड़े अस्पताल चिकित्सालय आदि हैं जिनमें १०००० के लगभग डाक्टर नर्स आदि काम करते हैं वहां भी विदेशी मिशनरी रूप बदल कर आ रहे हैं।

भारत में काम करने वाले विदेशी मिशनों ने तेजी के साथ कला कौशल उद्योग धन्धों के केन्द्र स्थान २ पर खोलने आरम्भ कर दिये हैं और उनमें विदेशी मिशनरी कलाविदों के रूप में सहस्रों खप सकेंगे।

अभी हाल में ६ से ९ सितम्बर १९५५ ई० तक बेकराबाद (गाजियाबाद) जिला मेरठ में मैथाडिष्ट चर्च की संरक्षता में नेशनल क्रिश्चियन कौन्सिल का अखिल भारतीय अधिवेशन हुआ जिसमें भारत के प्रायः सभी प्रान्तों से ९० प्रतिनिधियों ने पधार कर भाग लिया। इस अधिवेशन में केन्द्रीय सरकार के एक मिनिस्टर तथा दो उच्च सरकारी अधिकारी भी सम्मिलित थे। यह अधिवेशन अखिल भारतीय आर्थिक-उन्नति सम्मेलन के नाम से किया गया था। इसमें भारत सरकार की पंच वर्षीय योजना के अनुरूप कार्यक्रम बनाया गया और नये-नये केन्द्र खोलकर सरकार से आर्थिक सहायता प्राप्त करने के लिये उद्योग करना निश्चित हुआ।

अभी हाल में उत्तर प्रदेश की सरकार ने सालेनगर (टटीरी मंडीक्षेत्र) में काम करने वाले विदेशी मैथाडिष्ट चर्च को ५०००० रुपये की सहायता क्रीम उद्योग-शाला के निमित्त दी है।

इन संस्थाओं का उपयोग यह मिशनरी अपनी प्रचार योजना को सफल बनाने के लिये निरन्तर करते रहे हैं और अब अधिक वेग के साथ करेंगे।

भारत में न तो कमी शिक्षा विशारदों की है और न चिकित्सकों की। अतः इन पेशे वालों का विदेशों से भारत में आना किसी भी रूप में वांछनीय नहीं है। सम्प्रति कलाविदों को आने दिया जा सकता है किन्तु उनको भी स्वतन्त्र रूप

से मिशनों के आधीन काम न करने दिया जाये। अपितु वह सरकार की संरक्षता में ही काम करें।

किसी भी विदेशी मिशन को भारत से कला-उद्योग आदि के निमित्त आर्थिक सहायता सरकार की ओर से नहीं दी जानी चाहिये। हां स्वतन्त्र भारतीय ईसाई संघ को यह सहायता दी जा सकती है और दी जानी चाहिये। किन्तु प्रश्न तो यह है कि भारत के ईसाई तो विदेशी मिशनों व मिशनरियों के दास बने बैठे हैं। स्वतन्त्र भारतीय संघ बनावे कौन ?

जब सरकार विदेशी मिशनरियों व मिशनों पर पूरी रोक लगा देगी तब ही यह संघ बन सकेगा।

कथालिक चर्च द्वारा शराब की हिमायत

पटना से प्रकाशित होने वाले कथालिक साप्ताहिक संजीवन ने अपने १८ सितम्बर के अग्रलेख में भारत सरकार के मानव शरीर-रचना विभाग की किसी रिपोर्ट का हवाला देकर यह लिखा है :—

"वियर में काफी पुष्टिकारक पदार्थ है और कि इसके निषेध से स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ेगा।" आप आगे लिखते हैं कि **"इस रिपोर्ट को पढ़कर संकीर्ण-दिमागी निषेध कारियों को गहरा आघात पहुँचेगा।"**

अर्थात् मद्य-निषेध का आन्दोलन करने वाले संकीर्ण दिमागी हैं और यह शराबी और चर्चों में पूजा बलिदान में १५००० गैलन प्रतिवर्ष का प्रयोग करने वाले वाममार्गी उदार-दिमागी हैं।

आगे आप लिखते हैं कि:—**राष्ट्र पिता के प्रति हमारी पूरी श्रद्धा है लेकिन हर महापुरुष की हर राय सही ही नहीं होती।"** राष्ट्रपिता के प्रति इनकी पूरी श्रद्धा का यह सुन्दर नमूना है कि शराब बन्दी सम्बन्धी उनकी राय की भी यह भर्त्सना करते हैं। इसी लेख में आगे सम्पादक जी लिखते हैं कि **"जिस चीज पर ईश्वर (यीसु मसीह) ने आशीष दी है उसको कौन बुरा कह सकता है,"** यीसुमसीह को जो स्वयं मदिरा सेवी था और शराब का प्रचारक था उसको यह महापुरुष से भी ऊपर मानते हैं और उसकी दुहाई देकर शराब का खुला समर्थन करते हैं। अच्छा होता महात्मा गांधी की तरह महात्मा यीसु की हर राय को भी सही न मानने की घोषणा कर देते किन्तु करें कैसे मतान्धता और अन्ध विश्वास इनको ऐसा करने कब दे सकता है।

ईसाई महाशय इस शराब को ईश्वर-प्रदत्त उपकारी वस्तु मानते हैं किन्तु इनकी यह मान्यता निरी मूर्खता है। शराब न उपकारी वस्तु है न ईश्वर-प्रदत्त है और न ईश्वर-कृत है। शराब को बनाने वाले तो शैतान के बन्धु-बान्धव ही हैं।

आप लिखते हैं कि **"कांग्रेस ने आंख मूंद कर अपने नेता का अनुसरण किया।"** कांग्रेस ने आंख मूंद कर नेता का अनुसरण किया होता तो आज तक भारत में ढूंढे भी शराब न पाती और ईसाई चर्चों के लिये १५००० गेलन वार्षिक विलायती शराब के आयात कर में छूट न दी जाती। किसी मान्य नेता की सही राय पर अमल करना अन्धानुकरण नहीं। अन्धानुकरण तो अपने मसीहा की बुद्धि और तर्क-शून्य बातों पर अक्ल को ताक में रखकर ईमान लाने में है।

शराब की हिमायत में आगे लिखते हैं— **"इसलिये गिरजा नशाबाजी को पाप कह कर उसकी निन्दा करता है और मद्यपान को लाभदायक कहता है।"** इस बेहयाई की समालोचना करना तो हमारी शक्ति के बाहर है।

आपने अपने लेख में शराब के पक्ष में वेदों को भी घसीटने की कृपा की है लिखते हैं— **"हमारे वेदों से भी यह प्रत्यक्ष हो जाता है कि उस युग के लोग भी अपने सोमरस का उपयोग किया करते थे !"** हमें हर्ष है कि इन ईसाइयों ने वेदों को आज अपना कहा तो सही। आज तक तो यह बाइबिल को ही केवल अपना मानते थे। हम यह-जानना चाहते हैं कि इन महाशय ने सोमरस का अर्थ शराब कैसे लिया। इनके गुरु मैक्समूलर, ग्रीफिथ, विलसन, ब्लूमफील्ड आदि को भी वेदों का अर्थ करते समय सोमरस का अर्थ शराब करने की जुर्रत न हुई थी।

२७००० कथालिक मिशनरी लोह-बन्धन में

१८ सितम्बर के अंक में कलकत्ते का अंग्रेजी साप्ताहिक हेरेल्ड लिखता है कि केवल हंगरी, जेकोस्लावाकिया, लिथुआनिया तथा बाल्कन देशों में २७००० कथालिक पुरोहित बन्धु तथा भगनियां या तो जलावतन कर दी गई हैं या सींखचों में बन्द हैं या फिर श्रमिक शिविरों में रखकर उनसे कड़ी मेहनत ली जाती है। रूस, चीन वियतनाम आदि की संख्या जो इससे भी कहीं अधिक है इनसे पृथक है।

प्रश्न यह है कि यह साम्यवादी देश इन कथालिकों के पीछे ही क्यों पड़े हुए हैं प्रोटेस्टेन्टों के भी अनेकों पन्थ है उनकी सतावट की चर्चा कहीं सुनने को नहीं मिलती। हमारा उत्तर तो स्पष्ट शब्दों में यह है कि संसार भर के कथालिक ईसाई रोम के पोप से जुटे हुए हैं। पोप को ईसा मसीह के बाद मान्यता देते हैं। पोप को जो नहीं मानते जैसे चीन और वियतनाम के कुछ कथालिक जिन्होंने स्वतन्त्र राष्ट्रीय चर्च संगठित करना आरम्भ किया है उनको इनके कथनानुसार मुक्ति नहीं मिल सकती। इस सम्बन्ध में प्रमाण के रूपमें कार्डीनल फूमासोनी ब्योन्दी का वह पत्र जो उन्होंने वियतनाम के कथालिकों को लिखा है और जिसका हवाला हेरेल्ड ने अपने १८ सितम्बर के अंक पृष्ठ ६ कालम १ में दिया है हम प्रस्तुत करते हैं। उनके शब्द हैं "If bond of Unity (with the Pope) is strained and broken and the branch of the Vine ......withered and is no longer capable of bearing the fruits of salvation."

अर्थात् यदि यह एकता 'पोप के साथ' का बन्धन ढीला कर दिया जाता है और तोड़ दिया जाता है और लता की डाली सूख जाती है तो उसमें मुक्ति रूपी फलों को उत्पन्न करने की शक्ति नहीं रहती।

भाषा बहुत संयत और चातुर्य पूर्ण है किन्तु भाव छिपाये छिपता नहीं। बिना पोप पर ईमान लाये मुक्ति नहीं, ताप्पर्य यही है।

दूसरे पोप के आदेश संसार के प्रत्येक कथालिक के लिये किसी भी देश की सरकारी आज्ञाओं, विधान तथा आदेशों के ऊपर हैं जिसका परिणाम स्पष्ट है कि एक कथालिक की देश के प्रति वफादारी संदिग्ध है और जब भी कभी पोप का आदेश शासन के आदेश से भिन्न होगा तो वहां के कथालिक बगावत करने पर निश्चय उतारू हो जावेंगे। एक कथालिक के लिए देश प्रेम अथवा राष्ट्र भक्ति का कोई मूल्य नहीं और जो उसकी डींग हांकते हैं जैसा कि आज दिन स्थान २ पर यह लोक सम्मेलन कान्फ्रेंस कर करके शपथें खा रहे हैं और नेहरू जी की आंखों में धूल झोंकने का प्रयत्न कर रहे हैं वह धोखा देते हैं।

यह बात कथालिकों के ही सम्बन्ध में है हम यह भी नहीं कहते। हमारा दावा है कि जितने भी मतान्धता के पुजारी और एक चाल के अनुवर्ती हैं उन सबों की ही देश भक्ति संदिग्ध है।

साम्यवादी देशों में इन कथालिकों की सता-

वट का तीसरा कारण इनका दुराचार, क्रूरता, छल और कपट है। इनके मठ व्यभिचार के अड्डे बन गये थे। चीन आदि देशों के बच्चों को जबरदस्ती पकड़ पकड़ कर ईसाई बनाना इनका नित्य का कार्यक्रम बन गया था।

चौथे संसार भर में यह कथालिक अन्ध-विश्वासों तथा बुद्धि शून्य मान्यताओं के सब से बड़े प्रचारक हैं, जिनके कारण राष्ट्र में मानवता और नैतिकता का बुद्धि वाद एवं विश्व बन्धुत्व का विस्तार होना सम्भव नही।

तो अब प्रश्न यह है कि अफ्रीका, जापान, भारत, फिलिपाइन्स आदि में इनका विरोध क्यों नहीं होता ?

इसका उत्तर हमारी दृष्टि में इन देशों का साम्राज्य वाद की चक्की में दला जाना है अथवा अंग्रेजों का मानस पुत्र होना है। अफ्रीका में बृटिश, फ्रांस, इटली आदि के उपनिवेशवाद का बोलबाला है। जापान, फिलिपाइन्स में अमेरिका का साम्राज्य कायम है तथा भारत के नेताओं के सर पर अंग्रेजी मत की दासता सवार है। जैसे ही इन देशों में विदेशी साम्राज्यवाद तथा अंग्रेजीयत के विरुद्ध ज्वाला धधकेगी यह कथालिक पन्थ काफूर की तरह उड़ जायगा। इस प्रकाश के युग में कोई भी मत या सम्प्रदाय जो मतान्धता, अन्धविश्वास तथा एक एक चाल के अनुवर्तन का राग अलापता है अधिक समय तक टिक न सकेगा।

अमेरिकन मिशन की सालेनगर शाखा को उ० प्र० सरकार द्वारा ५००००)का अनुदान

सालेनगर हल्का लौनी में एक छोटा सा ग्राम है जिसकी जनसंख्या लगभग ५०० होगी। इस ग्राम में प्रायः सब ही हरिजन रहते हैं, अमेरिकन मिशन बेकराबाद (गाजियाबाद) का पादरी एम० एल० जोहन जो लौनी में रहता है अर्से से इन हरिजनों के पीछे था उसने अधिकतर हरिजनों को ईसाई बना लिया। भारत के स्वतन्त्र होनेके उपरान्त इस ग्राममें चर्च भी बनाया गया।

पिछले दिनों इस ग्राम के लगभग सब ईसाई शुद्ध हो गये थे किन्तु उन पर मिशन वालों ने नाना प्रकार के दबाव डालकर फिर गिरजा घर में खेंचना आरम्भ कर दिया है। आये दिन बेकराबाद व देहली के मिशनरी आते हैं और इन पर दबाव व लालच का जाल बिछाया जाता है।

अमेरिकन मिशन ने सालेनगर में एक क्रीम फैक्टरी की योजना बनाकर और फैक्टरी में इन हरिजनों को रखकर कट्टर ईसाई बनाने का जाल रचा है। पता चला है कि उत्तर प्रदेश की सरकार ने इस विदेशी मिशन को फैक्टरी के लिए ५०००० रुपये की सहायता दी है।

हमने जब यह समाचार सुना और लौनी जाकर इसकी जांच की तो हमारे आश्चर्य की सीमा न रही। एक ओर सरकार विदेशी मिशनरियों को सुगमता से भारत से विदा करना चाहती है तो दूसरी ओर उनके द्वारा हिन्दुओं को ईसाई बनाने में मोटी सहायता देती है। टटीरी में भी एक क्रीम फैक्टरी खुल रही है और वह नियोजनाधिकारी की देख रेख में ही खुलेगी फिर सालेनगर की यह फैक्टरी विदेशी अमेरिकन मिशन की देख रेख में कैसी ?

हमें यह भी पता लगा है कि विदेशी मिशनरी लोनी ब्लाक डवलपमेन्ट अधिकारी के पास आते जाते हैं, वहीं ठहरते हैं और अधिकारी जी को हर प्रकार से प्रसन्न करने का प्रयत्न करते हैं। इन्हीं अधिकारी जी ने ग्राम पंचायत पर जोर डालकर १० बीघा भूमि अमेरिकन मिशन को दिलवाई है।

उ० प्र० सरकार की यह विदेशी मिशन को सहायता देने की नीति हमारी समझ में सर्वथा निन्दनीय एवं घृणित है। हम स्वयं ही यदि इन विदेशी मिशनों की जड़ें भारत में जमायेंगे तो फिर विनाश निकट है ऐसा समझना चाहिये।

(शेष पृष्ठ ४६१-४६२ पर देखें)

साहित्य समीक्षा

वेदोद्यान के चुने हुये फूल

सम्पादक—पंडित प्रियव्रत, वेदवाचस्पति, आचार्य गुरुकुल विश्वविद्यालय, कांगड़ी।

प्रकाशक—प्रकाशन मन्दिर, गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी, हरिद्वार।

आकार—२०×२६, पृ० सं० २५३, मूल्य सजिल्द ४)

यह ग्रन्थ चुने हुये वेद मन्त्रों का संग्रह है जो 'वेद खंड, ईश्वर खंड, सृष्टि खंड, उपासना खंड, स्वाध्याय खंड और जीवन शक्ति खंड, ब्रह्मचर्य खंड, गृहस्थ खंड, राष्ट्र निर्माण खंड और विविध खंड, इन ६ विभागों में विभाजित है। मन्त्र के साथ २ उसका शब्दार्थ और व्याख्या दी गई है। संग्रह उत्तम और व्याख्या उपादेय है। निश्चय ही इस प्रकार के संग्रह से वेद के पठन-पाठन में रुचि उत्पन्न होती और बढ़ती है।

ग्रन्थ के प्रारम्भ में ८२ पृष्ठों की पढ़ने योग्य भूमिका है जिसमें पाश्चात्य भौतिक संस्कृति और वदिक संस्कृति पर बड़े अच्छे ढंग से विचार करते हुए भौतिक संस्कृति के अभिशाप और वैदिक संस्कृति के वरदान दिखाये गये हैं और यह सामयिक चेतावनी दी गई है कि भारत का नव-निर्माण विशुद्ध वैदिक संस्कृति के सांचे में होना चाहिये तभी भारतवर्ष संसार का आध्यात्मिक नेतृत्व कायम रखने में अपनी परम्परा की रक्षा कर सकेगा और अपना चहुँमुखी कल्याण करने में समर्थ हो सकेगा।

भूमिका के पृष्ठ १५ पर विद्वान् लेखक लिखते हैं :—

"इन पंक्तियों का लेखक अपनी पुरानी चली आ रही परम्परा के अनुसार वेद को ईश्वरीय ज्ञान स्वीकार करता है परन्तु यहां इस बहस में पड़ने की आवश्यकता नहीं है कि वेद परमात्मा का दिया हुआ है या वह प्राचीन ऋषियों की रचना है।······ वेद को भी पारिभाषिक रूप में ईश्वरीय ज्ञान न मानते हुये भी उसमें ईश्वरीय ज्ञान की सी श्रद्धा रखी जा सकती है।"

यह उद्धरण जितना वेद की महत्ता का प्रतिपादक है उतना उसकी अपौरुषेयता का द्योतक प्रतीत नहीं होता। वेद निश्चित रूपसे ईश्वरीय ज्ञान है।

पुस्तक की छपाई, सफाई, कलेवर आदि उत्तम हैं। कहीं कहीं प्रूफ सशोधन की त्रुटियां रह गई हैं जिसके लिये शुद्धि पत्र जोड़ दिया गया है।

आचार्य प्रियव्रत जी वेद के पंडित हैं। इस संग्रह और इसकी व्याख्या में स्थल स्थल पर उन का वेद ज्ञान का गाम्भीर्य्य और पांडित्य प्रतिलक्षित हो रहा है।

* विदेश प्रचार *

लन्दन में आर्यसमाज का प्रचार कार्य

यहां आर्य समाज के अवैतनिक मंत्री श्री धीरेन्द्रशील शास्त्री और रिसर्च स्कालर ब्रह्मचारी उषर्बुध के प्रयत्नों से आर्य समाज ने विविध गतिविधियों में पर्याप्त भाग लिया है। गत अगस्त मास में ब्रिटेन-स्थित पुर्तगाली दूतावास के सामने गोआ मुक्ति के लिए सत्याग्रह के अतिरिक्त इन्होंने भारत में बाढ़पीड़ितों की सहायतार्थ घर घर जाकर हजारों की संख्या में वस्त्र एकत्र किये हैं। ये वस्त्र 'सिंधिया कम्पनी' की निःशुल्क सहायता से 'जलराजेन्द्र' जहाज से भारत भेजे जा रहे हैं।

२६ अक्टूबर से लन्दन के किंग्सवे हाल में शरत्कालीन भाषण-माला आरम्भ की जा रही है। इसमें प्रथम भाषण श्री ऋषिराम जी का हुआ, जो अभी हाल ब्रिटिश गायना, ट्रिनिडाड आदि में हिन्दु मिशनरी के रूप में प्रचार करके लन्दन लौटे थे।

यहां के ईसाई कन्वेंटों और सरकारी शिक्षण संस्थाओं में श्री धीरेन्द्र शील के भाषण हुए, जबकि श्री उषर्बुध जी ने विश्वधर्म सम्मेलन में आर्य समाज का प्रतिनिधित्व किया।

सितम्बर मास में लन्दन से २० मील दूर एक रोमन कैथोलिक मोनेस्टरी (मठ) ने श्री धीरेन्द्र शील को आमंत्रित किया था, जहां दो घंटे तक एब्बट (गुरु) तथा दूसरे साधुओं से 'ईसाई व हिन्दू धर्म के दर्शन-सिद्धान्तों' पर खुली चर्चा हुई। अन्त में शील जी ने एक मठाधिकारी की लालसा का, कि शील जी को ईसाई बना लिया जाए, उत्तर दिया—"क्या यह सत्य नहीं कि आप लोगों के मस्तिष्क में यह भी एक प्रकार का धार्मिक साम्राज्यवाद है, जिसका विरोध हमें करना होगा। आप क्यों दूसरे धर्म और विचारों को पृथ्वी पर रहने का अधिकार नहीं मानते? हम तो कभी आपको अपने विचारों में नहीं बदलते। एक अच्छा ईसाई भी उतना ही मुक्ति का अधिकारी है जितना कि एक अच्छा हिन्दू या मुसलमान।"

मठ के ३०० वर्ष के इतिहास में यह प्रथम अवसर था कि एक बाहरी एवं अदीक्षित अतिथि (धीरेन्द्रशील) को दीक्षित साधुओं ने अपने सायंकालीन स्वल्पाहार में सम्मिलित किया।

इसी तरह के कई आमंत्रण आर्य समाज को प्राप्त होते रहते हैं और आर्यसमाज यथाशक्ति भारतीय संस्कृति के ज्ञान-प्रसार में अग्रसर रहता है।

(पृष्ठ ४५६ का शेष)

एक व्यापक आन्दोलन का श्रीगणेश

हम अपने मानव धर्म के प्रचारक भारतीय राष्ट्र में किसी भी शिक्षा संस्था में तथा किसी भी बालक को मतमतान्तर सम्बन्धी शिक्षा देने के विरुद्ध हैं। साथ ही भारत राष्ट्र के प्रत्येक बालक, बालिका, युवा एवं युवती को स्कूल कालिजों में नैतिक शिक्षा Moral education को अनिवार्य रूप से देने के पक्षपाती हैं। नैतिक शिक्षण का पाठ्यक्रम भारतीय संस्कृति के मूल ग्रन्थों में वर्णित धर्म के मूल तत्वों के आधार पर बनाया जाना हम नितान्त आवश्यक समझते हैं।

हमें आश्चर्य होता है कि भारत के ईसाई स्कूल व कालेजों में जिनमें १० लाख से ऊपर हिन्दू बच्चे शिक्षा पाते हैं अनिवार्य रूप से ईसाई मत की शिक्षा दी जाती है और हिन्दू-धर्म से

घृणा उत्पन्न की जाती है।

कहने को समय विभाग में इस मतवादी शिक्षा का घंटा प्रायः नहीं रखा जाता किन्तु स्कूल लगने से पहले अन्त में या बीच में लम्बा अवकाश करके उसमें यह शिक्षा निश्चित दी जाती है। ईसा मसीह पर ईमान लाने और कुंवारी मरियम के तराने गाने इस शिक्षा का मूल होता है।

यदि हिन्दू बच्चों को हिन्दू-धर्म की शिक्षा दी जाये और ईसाई बालकों को ईसाई मत की, तब भी किसी रूप में क्षन्तव्य हो सकता है किन्तु होता इसके सर्वथा विपरीत है। स्वतन्त्र देश के हिन्दू अब अधिक समय तक इस अत्यन्त लज्जा जनक व्यापार को सहन न कर सकेंगे। यदि हिन्दु बालकों को हिन्दुत्व विरोधी शिक्षा देने पर कड़ा प्रतिबन्ध शीघ्र न लगा तो विवश होकर इन ईसाई शिक्षा संस्थाओं के विरुद्ध खुला प्रदर्शन किया जायगा और जो परिणाम होगा उसका उत्तरदायित्व भारत सरकार पर तथा विदेशी ईसाई मिशनों पर जो इन संस्थाओं को चला रहे हैं, होगा।

हम आशा करते हैं कि आप भारत के शिक्षा मंत्री अविलम्ब भारत के प्रत्येक प्रादेशिक शिक्षा मन्त्रालय को यह आदेश देंगे कि वह अपने अपने आधीन साम्प्रदायिक Denominational)शिक्षा संस्थाओं में किसी भी बालक बालिका को उसके धर्म से भिन्न किसी मत वा सम्प्रदाय की शिक्षा देने पर कड़ा प्रतिबन्ध लगा दें।

साथ ही भारत की प्रत्येक धार्मिक,राजनैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक आर्य हिन्दू धर्मी समाज से हमारा यह अनुरोध है कि वह इस दिशा में अपने अपने यहां आन्दोलन आरम्भ करें और जब तक भारत सरकार स्पष्ट रूप से हिन्दू धर्म का विनाश कराने से अपना हाथ न खींचे, आंदोलन को चालू रखें तथा आवश्यकता पड़ने पर कड़ा पग उठाने के लिए भी तैयार रहें।

हमारे देश में और हमारे ही बच्चों को हमारे ही धर्म के विरुद्ध यह विदेशी और विधर्मी ईसाई मत की शिक्षा दी जाये यह निश्चय हमारे लिये अत्यन्त लज्जा की बात है। —शिवदयालु (मेरठ)

* वैदिक धर्म प्रसार *

वेद प्रचार सप्ताह

आर्य समाज गंगानगर (राजस्थान) में उपर्युक्त सप्ताह ससमारोह मनाया गया। श्रीयुत पं० मुरारी लाल जी शास्त्री आलिम फाजिल आदि विद्वानों के प्रचार का अच्छा प्रभाव पड़ा।

दीना नाथ आर्य
मंत्री

शुद्धि

दिनांक १-१०-५५ को ग्राम पन्धाना तहसील खंडवा जिला निमाड़ में आर्यसमाज खंडवा के तत्वावधान में श्री स्वामी आत्मानन्द जी भारती तथा श्री प० रामचन्द्र जी तिवारी की अध्यक्षता में १६२ ईसाइयों ने सपरिवार अपनी स्वेच्छा से पुनः वैदिक धर्म ग्रहण किया जिनका शास्त्रोक्त विधि से वैदिक रीति अनुसार शुद्धि संस्कार हुआ। यज्ञ हवन का कार्य श्री सुखराम जी आर्य द्वारा सम्पन्न हुआ। तत्पश्चात् श्री पं० रामचन्द्र जी तिवारी ने वैदिक धर्म, मानव धर्म, जाति-पांति, छुआछूत आदि विषयों पर सारगर्भित भाषण दिया। जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा। श्री स्वामी आत्मानन्द जी भारती ने सबको आशीर्वाद दिया। शुद्ध हुए भाइयों के हाथ से प्रसाद वितरण किया गया जो सबने सहर्ष ग्रहण किया। इस सारे समारोह में श्री नरेन्द्र कुमार जी धारू का सहयोग सराहनीय था। प्रसाद वितरण के पश्चात् वैदिक धर्म के जयघोष के साथ कार्यक्रम समाप्त हुआ।

मन्त्री

मल्हार गंज आर्य समाज इन्दौर की ओर से ग्राम पाड़लिया जिला निमाड़ में प्रचारार्थ श्री पं० हून्दराज जी मदनानी व श्री पं० ब्रजमोहन शर्मा गये थे। इनके प्रचार से प्रभावित होकर १५० ईसाइयों ने प्रार्थना की कि हमको शुद्ध कर लीजिए अतः मल्हारगंज आर्य समाज इन्दौर की तरफ से पुनः वैदिक धर्म में प्रविष्ट किया गया।

परस राम आर्य
मंत्री

आर्यवीर दल

आर्य वीर दल दयानन्द मठ रोहतक की गत वर्षों की कार्य रिपोर्ट इस प्रकार है :—

३ शाखाएं स्थापित हुईं, २०० आर्य परिवार साप्ताहिक सत्संग हुए, २३ ईसाई परिवारों की शुद्धि, आर्य पत्रों के ६६ ग्राहक बनाये गये. आर्य समाजों के जलसों में ३६ वार योग दिया गया, २ आर्य समाजों की स्थापना हुई, ८० व्याख्यान कराए गए, ८१ वाद-विवाद सभायें हुईं, १४ सहभोज हुये।

विद्यार्थी एस. वी. प्रभाकर
सि० भास्कर

निर्वाचन

आर्यसमाज	दिनांक	अधिकारी
बम्बई ४	४-६-५५	प्रधान—श्री पं० विजय शंकर जी
		मंत्री—श्री अमृतलाल पटेल
रामनगर (नैनीताल)	१५-६-५५	प्रधान—श्री नारायणदत्तजी
		मंत्री—,, इन्द्र वर्मा एम.ए.

रक्षा कार्य

गत २४-७-५५ को आर्यसमाज श्री गंगानगर ने सरदार शहर की एक ब्राह्मण विधवा की रक्षा की जिसे स्वार्थी लोग गुण्डों के हाथ बेच रहे थे। यह देवी दृढ़तापूर्वक सूरत गढ़ के कुछ भले आदमियों के संसर्ग में पहुँच गई थी जिन्होंने देवी की रक्षा में विशेष योग दिया। देवी का विवाह एक

(शेष पृ० ४७० पर)

The Arya Samaj : A Re-interpretation

(By Prof. B. Bissoon Dayal M. A. Mauritius)

Neo-Hinduism is an important religious phenomenon in modern India. The most popular and fascinating neo Hindu movement is undoubtely the Arya Samaj. It believes in the eternity of God, soul and **prakriti** (matter) and condemns caste, child-marriage and other evil practices. It stands for a return to the Vedas. Its democratic appeal, love of action and humanitarianism entitle it to the praise of theists and atheistsalike.

Like the phoenix, Hinduism is rising from its ashes with renewed vigour to live gloriously as it did in the palmy days of India's history. The Brahmo Samaj (established by Ram Mohan Roy in 1830), with its firm determination to abolish caste, the Ramakrishna Mission (called after Parmahansa Ramakrishna, who died in 1886), with its ideal of service, and the Arya Samaj (society of noble people), with its programme of all-round progress, are all engaged in the constructive work of building up a new India. To crown all, Dr. Radhakrishnan, the new prophet of neo-Hinduism, is carrying the message of his religion beyond the borders of India.

There can be no question that the Arya Samaj is the most interesting movement of all. It has a more comprehensive programme than either the Brahmo Samaj or the Ramakrishna Mission. Besides, it always steers the middle course. It does not go to the extent of doubting the infallibility of the Vedas which, from times immemorial, have been the fountain-head of Hindu culture and civilisation, the foundation of Hindu religion, and thus breaking from Hinduism in at least one sense. Nor is it excessively idealistic like the Ramakrishna Mission. The Arya Samaj demonstrates that **dharma**, commonly translated by the word "religion" is that which leads to happiness in this world as well as in the next, "that which enables man to achieve not only material prosperity but spiritual welfare as well."(1)The Arya Samajist never loses sight of this world. His feet are on the **terra firma**. The Arya Samaj was founded in Bombay in the year 1875, by Swami Dayananda Saraswati (1824—83). The **Sannyasi** (monk)—for he was one, as his name indicates—He was the greatest Vedic scholar of modern times. He was no less great as a reformer. When he appeared on the scene the condition of affairs was such that the conviction that the Hindu should turn over a new leaf if he would live and prosper was forced upon him. After a deep study of the Vedas he was persuaded that India must go back to the

---

(1) Kanad,

Vedas, that a simple and spiritual life suited it best. He laboured hard to bring home to his countrymen that their salvation lay in the survival of the Vedic religion. He toured the country, delivered public speeches in Sanskrit and Hindi and holding discussions with orthodox Hindu and non-Hindu divines. He wrote scholarly commentaries on the Vedas, numerous books, pamphlets, tracts and articles. The most widely read of his works is the **Satyartha Prakasha (Torch of Truth)** which may be considered his **magnumopus**. The book has been translated into almost all the languages of India. The English translation has gone through four editions. A French translation has appeared in the popular "Les Trois Lotus" series.(1) The book has been translated into German too

The Arya Samaj has imbibed the spirit of its founder. It is monotheistic. It teaches that "God is one, sages call it by many names."(2) It believes that the Samhita portion of the Vedas, four in number (**Rig, Yaju, Sama** and **Atharva**), is the word of God. If God exists and his knowledge has been communicated to us, then that knowledge is embodied in the Vedas, the oldest books extant on the surface of the globe. It follows that the Vedas are the source of knowledge and contain "the germs of all sciences".(3) It is interesting to note that in the latter part of the nineteenth century, when Dayananda was making his researches and giving out to the world the conclusions, he arrived at, a French writer, Louis Jacolliot was independently coming to identical conclusions. He believed, among other things, that the scripture of the Hindus contained ideas which are in harmony with those of modern science.(4)

According to the new interpretation of the Vedas based on the oldest authorities extant, like **Nirukta**, a classic on etymology, philology and semantics, God, Soul and **Prakriti** (matter) are eternal. The difference between God and Soul is that whereas the former is a trinity of **Sat** (existence), **Chit** (awareness or consciousness) and **Ananda** (delight), the latter is only **Sat and Chit** It is thus still more distinct from God. Every student of Aristotle will be reminded here of the distinction made by the Greek philosopher between the first mover and the first matter. Matter is distinct from soul in that it is **Sat** without being either **Chit** or **Ananda**. The Arya Samaj, which has implicit faith in the new interpretation of Dayananda, rejects idol-worship as anti-Vedic. If the soul is to rise "higher and still higher," it must seek proximity with God from whom it can obtain **Ananda**, To worship stocks and stones is to go downward. **Prakriti** has nothing in its gift by which the soul may profit. On the contrary,

(1) Librairic Adrin Maisonneuve, Paris. French Sandbya has appeared in Mauritius.
(2) Rig Veda.
(3) Dayananda.
(4) Bible in India (**Flammarion**)

the soul may lose much of its consciousness by bowing to **Prakriti.** It will not be out of place to mention hat students of history have succeeded, in recent times, in proving on the authority of the old historians that image worship was unknown in ancient India. Clemens Romanus wrote: There are among the Bactrians in the Indian countries immense multitudes of Brahmins, who from the tradition of their ancestors and the peaceful customs and laws, neither commit murder nor adultery nor worship images (simulcra) nor have the practice of eating animal food, are never drunk and never do anything maliciously but always fear God."(1) The intelligent reader will not fail to find that the doctrine of karma and therefore that of the transmigration of souls are made rational as the result of the eternity of the three entities mentioned. The position of the Aray Samaj is that one reaps as one. "An act cannot wear away without bearing fruit, even in millions of years; a man must necessarily eat the fruit of his good and evil deeds." Once this is understood the doctrine of the tranmigration of souls becomes a corollary. It must not be supposed, however, that the Arya Samaj believes in Fate. "Man himself is the master of his destiny" is the point that the Arya Samaj stresses. Inaction leads to decrepitude and death. Dayananda was a man of action. There was nothing so repugnant to him as a life of inaction. The inactive man, he thought, was as good as dead because life is nothing but a round of duties. Mahatma Gandhi once bore eloquent testimony to the love of action that the Arya Samajists have inherited from Dayananda. He said that "wherever there are Arya Samajists there is life and energy."

The Arya Samaj considers one soul to be just like another. Hence the humanitarianism it preaches. "May we look upon all living creatures with the eye of a friend"(2) is a motto of the Samaj which enjoins vegetarianism on its members. Brotherhood among men is not enough The Arya Samaj extends the feeling brotherhood even to animals. This is indeed universal brotherhood. Louise Morin writes in the interesting preface to her French translation of Dayananda's **magnum opus** "One might well hold that Dayananda conceived the idea of a League of Nations for he makes allusion to 'a supreme international assembly representing the whole of the world". The attitude of the Samaj towards women cannot be that of orthodox Hinduism. Women has a free hand in the choice of her mate. The house and the household are completely under her control. She need not observe **pardah.** She enjoys equal rights with man so far as education goes. In short, she is in no way inferior to man. This view accords well with what the Rig Veda says, viz.: "Be thou (woman) a co-ruler with thy

---

(1) Clementine Recognitions. IX. 19.

(2) The Yajur Veda, XXXVI, 18.

father-in law and co-ruler with thy mother-in-law; co-ruler with thy sister-in-law and with thy brother-in-law." (X, 85-46) Nor is the attitude towards the 'untouchables" less worthy of superlative praise. The Arya Samaj is not content with abolishing caste and removing commensal and other restrictions. It supports the **Varna** (selection) system which, as is only natural, has found an ardent admirer in a modern thinker of Russia. This system requires that one should rise or fall according as one does noble deeds or ignoble ones. It thus provides ample scope for those who are at the lowest rungs of the social ladder to rise. At the same time, it warns those who have achieved greatness against falling from their ideal. This system of life is democratic. Dayananda saw that the caste system is a bar to progress. He raised the standard of revolt against it.

In their zeal to "preserve" Hinduism from "contamination" the orthodox Hindus had become narrow. It was left for the Arya Samaj to widen the outlook of the Hindus. It threw open the doors of Hinuism to all. It started **Shuddhi**(1) (conversion) and reminded the hesitating Hindu that it was not a new phenomenon. The Persians and the Greeks and, latter, the Sakas and the Huns, who conquered the country, were conquered and converted by its religion. The Rajputs of to-day, who are stalwart defenders of neo-Hinduism, are demonstrably the descendants of foreign conquerors who were religiously conquered and absorbed by Hinduism. The worship of aboriginal deities, the religion of music with its serpent worship, tree worship and so forth, was easily converted and elevated into a complex religion. We have distinct evidence that many "isms" are so converted.

The practice of cremating the bodies of the dead is the logical conclusion to which the Arya is driven, believing, as he does that the soul is eternal and dust must return to dust. When the cremation is over, nothing is done for the departed Fire plays an important part in the life of the Hindu. If after he is dead and gone his body is reduced to ashes by fire, during his lifetime he performs what is called **Havana** or **Home** by burning ghee (clarfied butter), and odoriferous articles (**Samgri**) in fire made by lighting small pieces of wood in a vessel of a particular shape. **Havana** is performed every morning and afternoon in every Aryan home, be it a hut or a palace. Vedic **mantras** are chanted while the ceremony is performed The strict observance of the ritual is again indicative of the Arya's strong belife in the Vedic culture. He has many explanations to give in defence of **Havana**. For one thing, it purifies the air; for another, it is not without a symbolical aspect. The **mantras** chosen for the purpose are those that lay stress on

(1) **Shuddhi** means "purification" literally.

sacrifice. Arya's life should be nothing but one long tale of sacrifice. Professor Sidney Webb, LL.D., observes :

> In the Arya Samaj we see developed two great qualities of personal character : **Self-effacement in the service of Hindu society** and self-reliance towards the outer world (The italics are ours).

Havana is only one of the five religious practices (**Mahayajnas**) observed daily. Prayer (**Brahma yajna**) is said twice, at the time of **Havana**. The three other **Yajnas** may be left out of account in this article. Besides these daily duties the Aryas perform sacred ceremonies known as **Sanskaras** from time to time. A study of the Sanskaras, sixteen in all, will prove highly interesting to students of eugenics. Their simplicity distinguishes them from the elaborate rituals of the orthodox Hindus. It is worthy of note that the Brahmo Samaj, which, for all practical purposes, has the same social programme as the Arya Samaj, could never bring itself to agree with the latter on the question of rituals. There was a time when the leaders of the two bodies were seriously thinking of welding the two into one; but unfortunately their efforts were not attended with the success they deserved. As has been pointed out at the outset, the Brahmo Samaj always fought shy of the belief in the infallibility of the Vedas. It is to this fact that we must trace the divergence of opinions on the subject of ritualism. If the Arya Samaj parts company with the Brahmo Samaj here, it continues an old tradition. The place occupied by fire in the rituals of almost all the great religions of the world is by no means insignificant. The Persians go so far as to offer worship to fire; the Buddhists light tiny lamps on the altar of their pagoda and the Roman Catholics candles in their church.

A reforming organisation, the Arya Samaj condemns child-marriage with the same bitterness as does the Brahmo Samaj. It is an influential member of the Arya Samaj and direct disciple of Dayananda who is responsible for the fact that a child marriage restraint act is on the statute book now. His name, Harbilas Sarda, is a hosuehold word in India. The Samaj is no less bitter in its condemnation of the dowry system and other evil practices that degraded the Hindu society It has revived the old **ashramas**. The life of man in ancient India was divided in four stages. The student belonged to the **Brahmcharya ashrama**. After marriage he became a householder and entered the second **ashrama**. When the time came for him to retire, he left the charge of the family to his grown-up son and wended his way to the forest to train himself there to the fourth and last **ashrama**. If the training was fully completed he got himself initiated into **Sannyasa**. He became, at this last stage, a **Parivrajaka** (wandering monk). Clad in an ochre-coloured garment, symbolical of the fact that only one **Sanskara** was left for him, that of cremation,

when his dead body would feed the flames, he would enrich the world by his life-long experience. This division made for harmony in the social order.

The educational activities of the Arya Samaj are amongst its glories. In the north of India it has the largest number of educational institutions next to the Government itself. This is no mean achievement Melancholy interest, however, attaches to Lahore, that was once a great educational centre of the Arya Samaj. The magnificent college and school buildings of the town, that belong to the Arya Samajists, was deserted by them when they migrated to East Punjab after the partition of India. The Arya Samaj is carrying on an interesting experiment in education by reviving the forest universities (**Gurukulas**) where the teacher and the taught live in communion with nature. This national system of education has found many supporters The **Vidyapithas** (centres of education) of the Indian National Congress are run on almost the same as the **Gurukulas**. The Gurukula was bracketed with Tagore's Santiniketan by the late J. Ramsay Macdonald. He wrote long ago in the **Daily** Chronicle :

"I went to see that educational embodiment of the Arya Samaj spirit, the Gurukula of Hardwar, and on my way from Delhi to Calcutta I spent a day at the Santiniketan (literally "the abode of peace"), near Bolpur, where Rabindranath Tagore has his school.

From what has been stated so far, it is evident that the Arya Samaj is liberal and at the same time conservative. This accounts for the possibility of contradictory views being held about it by its critics. If some find in it too much heterodoxy, others complain that it is too orthodox, that it stands too much in the ancient ways. Nothing can better give an idea of the liberalism of the Samaj than the conditions it lays down for membership, Everyone, irrespective of caste, sex and nationality, can become an Arya Samajist on subscribing to its ten principles.

The disinterested observer will admit that the conservatism of the Samaj is healthy conservatism, liberal conservatism. The Samaj does not break away with the past. Reverence for the past has always been a national trait in India. As Radhakrishnan puts it, "there is a certain doggedness of temperament, a stubborn loyalty to lose nothing in the long march of ages " This temperament can be proved to have been shared outside India, too. Not to speak of the Reformation, the Evangelical movement in England, the High Church movement, "a large element even in the French Revolution, the greatest of all breaches with the past, had for its ideal a return to Roman republican virtue or the simplicity of the national man." (1)

A glance at the census reports

(1) Gilbert Murray, Four stages of Greek Religion.

issued after the foundation of the Arya Samaj will show that this religious movement is very popular to-day. It has gone from strength to strength. From humble beginnings it has come to be an all world organisation. Professor Gilbert Murry couples its name with that of the Indian National Congress, the biggest organisation of the country. It has branches in far-off Fiji, Africa, British Guiana, Trinidad and other places where Indians have settled. Even Mauritius has its Arya Samaj. There are to day millions of Arya Samajists in the world who are busy spreading the message of the Vedas in the belief that it will bring relief to suffering humanity. The sight of the countless **Sannyasis** in its service roaming from place to place, fired with an enthusiasm comparable only to that of the **Bikkus** (mendicants) of the Buddhist order of the days of Asoka, fills one with admiration for the organisation that has called forth so much zeal and undertaking. While mentioning the service rendered by **Sannyasis**, it is not possible to forget that another neo Hindu movement, the Ramakrishna Mission, has similarly thrown up a band of monks who are famous in India and America for the work they are doing. Neo-Hinduism is out to bring a change for the better. When its history comes to be written, the Arya Samaj will be hailed as one of the most popular and most fascinating neo-Hindu movements. The democratic appeal of the Arya Samaj, its emphasis on action, its humanitarianism, amonst other things, deserve the praise of theists and atheists alike.

(पृ० ४६३ का शेष)

विधुर के साथ कर दिया गया जिसमें राज्य के कर्मचारियों एवं प्रतिष्ठित जनों ने सपरिवार भाग लेकर कार्य कर्त्ताओं को प्रोत्साहित किया। प्रायः सभी ने आर्य समाज के इस पुण्य कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की। मंत्री

शोक प्रस्ताव

आर्य समाज भोलेपुर (फतहगढ़) ने अपने मन्त्री श्री बाल गोविन्द सिंह आर्य की पत्नी और छोटे पुत्र के असामयिक निधन पर शोक प्रस्ताव पास किया।

आर्य समाज देवास ने अपने उपप्रधान श्री वासुदेव राव जी केशव राव जी विड़वई ऐडवोकेट के निधन पर एक विशेष शोक सभा की।

सार्वदशिक सभा की आर्य समाजों को सूचना

समस्त आर्य समाजों को सूचित किया जाता है कि यदि आपको शास्त्रार्थों, वार्षिकोत्सवों, कथाओं, यज्ञों अथवा अन्य किन्हीं धार्मिक कार्यों के लिये प्रसिद्ध तथा अनुभवी विद्वान् की किसी समय आवश्यकता हो तो आप शास्त्रार्थ महारथी श्री पं० लोकनाथ जी तर्क.वाचस्पति के लिये सार्वदेशिक प्रतिनिधि सभा दिल्ली से पत्र व्यवहार करें। सभा आपको आपके कार्य सम्पादन केलिये उक्त श्री पंडित जी को भेज देगी।

राम गोपाल, उपमन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
दिल्ली।

सार्वदेशिक पत्र (हिन्दी मासिक)

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश १० शिलिङ्ग। अर्द्ध वार्षिक ३) स्वदेश, ६ शिलिङ्ग विदेश।

२. एक प्रति का मूल्य ।।) स्वदेश, ।।≈) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क वा नमूने की प्रति का मूल्य ।।≈) स्वदेश, ।।।) विदेश।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये। चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा। पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने वा ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न देने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है कि उनकी इच्छा वी० पी० द्वारा चन्दा देने की है।

४. सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख को प्रकाशित होता है। किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय में अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा। डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं। अतः समस्त ग्राहकों को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये।

५. सार्वदेशिक का वर्ष १ मार्च से प्रारंभ होता है अंक उपलब्ध होने पर बीच वर्ष में भी ग्राहक बनाए जा सकते हैं।

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
६. पूरा पृष्ठ (२० × ३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा " ≡	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई ,,	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	२०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

७. सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

—व्यवस्थापक

'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली— से प्रकाशित।

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

ऋग्वेद

यजुर्वेद

वर्ष ३०

मूल्य स्वदेश ५)

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ।।)

अंक १०

मार्गशीर्ष २०१२

दिसम्बर १९५५

(जिनकी बलिदान जयन्ती २४-१२-५५ को मनाई जायगी)

सम्पादक—

सभा मन्त्री

सहायक सम्पादक—

श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषयानुक्रमणिका

❀ ओ३म् ❀

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३० } दिसम्बर १९५५, मार्गशीर्ष २०१२ वि०, दयानन्दाब्द १३१ { अङ्क १०

वैदिक प्रार्थना

सेमं नः काममा पृण गोभिरश्वैः शतक्रतो। स्तवाम त्वा स्वाध्यः ॥

ऋ० १।१।३१।९॥

व्याख्यान—हे "शतक्रतो" अनन्त क्रियेश्वर! आप असंख्यात विज्ञानादि यज्ञों से प्राप्य हो तथा अनन्तक्रियायुक्त हो, सो आप "गोभिरश्वैः" गाय, उत्तम इन्द्रिय, श्रेष्ठ पशु, सर्वोत्तम अश्वविद्या (विज्ञानादियुक्त) तथा अश्व अर्थात् श्रेष्ठ घोड़ादि पशुओं और चक्रवर्ती राज्यैश्वर्य से "सेमं, नः, काममापृण" हमारे काम को परिपूर्ण करो फिर हम भी "स्तवामः, त्वा, स्वाध्यः" सुबुद्धियुक्त हो के उत्तम प्रकार से आप का कोई स्तवन (स्तुति) करें। हमको दृढ़ निश्चय है कि आपके बिना दूसरा कोई किसी का काम पूर्ण नहीं कर सकता, आपको छोड़ के दूसरे का ध्यान वा याचना जो करते हैं, उनके सब काम नष्ट हो जाते हैं॥

ऐसा निराशावाद क्यों ?

स्वमान तीन प्रकार का होता है। पहला आत्माभिमान, दूसरा आत्मातिमान, और आत्मापमान। आत्माभिमान मनुष्य के श्रेष्ठ जीवन और उन्नति के लिए अत्यन्त आवश्यक है। उसके बिना मनुष्य अपनी स्वाधीन सत्ता को खो देता है। उसमें न जीवन की इच्छा रहती है और न उन्नति की महत्त्वाकांक्षा। आत्मातिमान का दूसरा नाम दुरभिमान है। दुरभिमान मनुष्य को ऊपर उठा कर नीचे गिरा देता है। यह सम्भव है कि दुरभिमानी पुरुष साधारण से ऊंचा उठा हुआ हो। प्रायः अयोग्य पुरुष का साधारण से ऊंचा उठ जाना ही उसके दुरभिमान का कारण होता है। अयोग्य दुरभिमानी व्यक्ति शीघ्र या देर में गिरता अवश्य है।

तीसरी कोटि के वह मनुष्य हैं जो आत्मापमान रूपी रोग के शिकार होते हैं। वह अपने को अत्यन्त दुर्बल और अशक्त समझ कर जीवन की इच्छा भी खो बैठते हैं, उन्नति की तो बात ही दूर है। वह सदा ऐसी भाषा में सोचते हैं "मैं नाचीज हूँ। मैं खलकामी हूँ। मेरे अन्दर आगे बढ़ने की शक्ति ही नहीं है। मेरी सब शक्तियां मर चुकी हैं। मुझसे और सब अच्छे हैं।" इस प्रकार सोचने वाला मनुष्य महत्वाकांक्षा खोकर निराशावादी बन जाता है। आशा में ही जीवन है निराश व्यक्ति जीता हुआ भी मृतक के समान हैं। आत्मापमान जीते जागते मनुष्य को मुर्दा बना देता है।

जो नियम एक व्यक्ति पर लागू होते हैं वही प्रायः समाज का भी संचालन करते हैं। आशावादी समाज निरन्तर उन्नति करता रहता है। परन्तु जिस समाज पर निराशावाद छा जाता है समझलो कि उसने जान बूझ कर क्षय का रास्ता चुन लिया। इस कारण व्यक्तियों और समाजों के लिए आवश्यक है कि सदा विवेक की सहायता से आत्म-निरीक्षण करता रहे। आत्म-निरीक्षण का फल यह होगा कि न तो वह आत्मापमानी बनने पायेगा और न आत्मदुरभिमान के ज्वर से पीड़ित होगा।

यह देख कर दुःख होता है कि कुछ समय से आर्यसमाज पर आत्मापमान और निराशावाद का प्रभाव बढ़ता जाता है। न जाने किस आधार पर लेखकों और वक्ताओं का यह तकियाकलाम बनता जाता है. कि आर्य समाज अकर्मण्य होकर पतन की ओर जा रहा है। आर्य समाज के एक प्रमुख विद्वान ने, आर्य समाज की वर्तमान स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा है। "आर्य समाज में धीरे २ अच्छे २ उपदेशकों अच्छे २ उत्तम कोटि के संस्कृत के पण्डितों का ह्रास होता जा रहा है।" कुछ दिन हुए आर्य समाज के एक बड़े नेता ने अपने लेख का शीर्षक यह दिया था—

"आर्य समाज सो गया।" लेख में उन्होंने यह दिखाया था कि आर्य समाज कुछ समय से बिलकुल निकम्मा हो गया है। उसमें न कोई नेतृत्व की शक्ति रही है और न काम करने की अभिलाषा। कई आर्य पत्रों के सम्पादकीय लेखों को पढ़ने से कभी २ अनुभव होने लगता है कि शायद हम अपने समाज का मर्सिया पढ़ रहे हैं।

ऐसे लेखों को पढ़ कर स्वभावतः मन में यह प्रश्न पैदा होता है कि हमारे इस निराशावाद का क्या कारण है ? जब वह नेता और विद्वान जीवन भर आर्य समाज की सेवा करके आयु के अन्तिम भाग में इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि आर्यसमाज सोया पड़ा है, वह अकर्मण्य होगया है तब वस्तुतः यह बात विचारणीय होजाती है कि यह परिस्थिति वास्तविक है या नहीं ? और जैसी भी है उसका कारण क्या है ? कहीं ऐसा तो नहीं कि हम लोग

अपनी व्यक्तिगत शक्तियों की क्षीणता का प्रतिबिम्ब सारे समाज में देखने लगें। बड़ी अवस्था में प्रायः ऐसा हो जाता है कि मनुष्य अपनी जरा जनित निर्बलता को समाज के सिरमढ़कर अपने मन को सन्तुष्ट करने का प्रयत्न करता है। समय है कि हम अपने विचारों का गम्भीरता पूर्वक विवेचन करें कहीं ऐसा न हो कि व्यर्थ में अपना अपमान करते २ हम अपमान के योग्य ही बन जायें।

आप ढाल के दूसरे पार्श्व पर भी दृष्टि डाल कर देखें। आर्यसमाज की जो दशा आज से ५० वर्ष पहले थी यदि आज की दशा से उसकी तुलना की जाय तो हमें अनुभव होगा कि सब अन्धकार ही अन्धकार नहीं है, प्रकाश भी है। निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि आज आर्यसमाज में संस्कृतज्ञों वेद के समझने वालों, लेखकों तथा वक्ताओं, की संख्या सन् १९०० की अपेक्षा दस गुनी से कम नहीं हैं। इसमें आर्यजनों का स्वाध्याय भी कारण है और गुरुकुलों का प्रयत्न भी। देश में आर्य सभासदों और आर्यसमाजों की संख्या में भी बहुत वृद्धि हुई है। राज्य में तथा समाज में अधिकार सम्पन्न आर्य समाजियों की संख्या गत ७-८ सालों में बहुत बढ़ी है। धार्मिक विषयों पर पहले से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो रही हैं और उनका स्तर भी कम नहीं। यह कहना कि संकट का अवसर आने पर आर्यसमाज ने आगे बढ़ना छोड़ दिया है सत्य पर आश्रित प्रतीत नहीं होता। कुछ लोग चाहते हैं कि भारत में जो भी आन्दोलन उठे, वह चाहे राजनीतिक हो या सामाजिक, आर्थिक हो या सांस्कृतिक, सबमें उस समय के लिए आर्य समाज की सारी शक्ति लगादी जाय। ऐसा सोचना ठीक नहीं है। आर्य समाज का अपना निश्चित कार्यक्रम है, उसे छोड़ कर यदि हम हर एक बजते हुए ढोल के पीछे भागने लग जायेंगे तो पथ-भ्रष्ट हो जायेंगे और अपने कार्यक्रम को नष्ट हो जाने देंगे। हां यह आवश्यक है कि अपने कार्यक्रम से सम्बद्ध जो समस्या उत्पन्न हो उसके हल करने में आर्य समाज किसी से पीछे न रहे, प्रत्युत अगुआ बना रहे।

आर्यसमाज में गतवर्षों के इतिहास के अनुशीलन के आधार पर मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि आर्यसमाज उचित अवसर पर रण भूमि में कूदने तथा संकटों में पड़ने से नहीं चूका। यह तो कहा जा सकता है कि आर्यजन और उनका संगठन अभी आदर्श से बहुत नीचे हैं। परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि आर्य समाज निरन्तर क्षीणता और अकर्मण्यता की ओर जा रहा है। निराशावाद का कोई कारण नहीं है। महर्षि दयानन्द की दी हुई प्रेरणा आज भी आर्य समाज में विद्यमान है। आर्य नेताओं की दी हुई चेतावनियों का असली उद्देश्य आर्य जनों को और अधिक पुरुषार्थ और कर्मण्यता के लिए प्रेरित करना है। हम अपने दोषों को देखने लगे हैं इसका यह कारण नहीं कि हममें दोष ही दोष हैं अपितु यह कारण है कि हममें आत्म-निरीक्षण की प्रवृत्ति पैदा हो गई है।

न आर्यसमाज सोया पड़ा है और न क्षय की ओर जा रहा है। उसमें जागृति भी है और उन्नत होने की अभिलाषा भी। आर्यजनों को इस विश्वास और आशा के साथ अपने असली कर्तव्यों की पूर्ति में लग जाना चाहिए। हममें जो न्यूनताएँ हैं उनके पूरा करने का एक यही उपाय है।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियां ❀

अणु शक्ति को ईश्वर मत बनाओ

जिनेवा में तथा अन्यत्र इस बात पर विचार हो रहा है कि औद्योगिक विकास का एक नया युग लाने के लिए अणुशक्ति का समुचित प्रयोग

किया जाय। जहां तक अणुशक्ति को संहारकारिणी क्षमताओं को नियन्त्रित करके मानव जाति को सम्पूर्ण विनाश से बचाने का प्रश्न है। इस प्रकार का उद्योग सराहनीय है। परन्तु प्रश्न यह है कि क्या उस औद्यौगिक विकास की अब भी आवश्यकता है जिसका भयंकरतम अभिशाप अणुबम के रूप में हमारे सामने उपस्थित हुआ है और जिसने मनुष्य को मानव से दानव बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। संसार ने एक शताब्दी पर्यन्त मानव जाति के औद्यौगिक विकास का ड्रामा देखा है और वह उस ड्रामें के दुःखान्त दृश्यों से भयभीत हो गया है। इस काल में औद्यौगिक विकास का स्तर जितना ऊंचा हुआ उतना सभ्यता का स्तर ऊंचा नहीं उठा है। इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध दार्शनिक हेनरीवर्ग सन की चेतावनी ध्यान देने योग्य है। उन्होंने कहा था।"

With the new techn'cal d's-coveries only the body of mankind has developed, but not its soul and its-sp'rits A weak and primitive soul in an over civi ized body, is this dwells the great da' ger We need a supplement d' a' me, then & then we by means of modern science become an instrument of high, performances une machine a creer des d'eud, a machine to make gods."

अर्थात् नवीन औद्यौगिक अनुसन्धानों से एक मात्र मानव समाज का शरीर विकसित हुआ है उसकी आत्मा और भावना का विकास नहीं हुआ। अत्यधिक सुसज्जित शरीर में दुर्बल और अविकिसित आत्मा निवास करती है यही सबसे बड़ा खतरा है। हमें एक पूरक वस्तु की आवश्यकता है तभी हम वर्तमान विज्ञान के द्वारा उच्च कार्यों को संपन्न करने वाले बन सकते हैं। हमें देवताओं का निर्माण करने वाली मैशीन की आवश्यकता है।

देवताओं का निर्माण करने वाली मैशीन क्या है? वह मैशीन है 'धर्म'। धर्म ही मनुष्य को देव बनाता है। धर्म ही मनुष्य को प्रकृति की दासता से मुक्त करके उसे पशुत्व पर विजय प्राप्त करने में समर्थ बनाता है। धर्म ही मनुष्य को विश्व बन्धुत्व सेवा और परोपकार की प्रेरणाएं देकर समाज में शान्ति प्रेम कर्मठता और पवित्रता का वातावरण उत्पन्न करने और बनाए रखने में समर्थ है। संसार में ईसाइयत, इस्लाम, जैन तथा बौद्ध मतादि अनेक मत प्रचलित हैं फिर भी नैतिक गुणों का ह्रास भय,संदेह, घृणा और असहिष्णुता का वातावरण व्याप्त क्यों है? भोग प्रधान बनती जा रही संस्कृति में धर्म की प्रेरणाओं को हृदयस्थ करने के लिए मनुष्य को न तो फुर्सत है और न इच्छा है। यदि इच्छा उत्पन्न भी हो तो वे प्रेरणाएं प्रायः उसके मस्तिष्क और हृदय को अपील नहीं करती। यदि धर्म की प्रेरणाओं का भौतिक प्रेरणाओं पर प्रभुत्व कायम होता तो अविश्वास, भय, घृणा, स्वार्थ परता, लोभ काम और क्रोध का प्राबल्य न हुआ होता जिसके परिणाम स्वरूप विश्व में तबाही मची हुई है, और न अणु शक्ति को ईश्वर तथा आतंक को उसके पैगम्बर का रूप धारण करलेने का खतरा ही उपस्थित हुआ होता। धर्म की प्रेरणाओं के ह्रास के लिए उपर्युक्त विविध मत जिम्मेवार हैं। इन मतों के सिद्धान्त और उपदेश इतने लचर और कुछ अवस्थाओं में इतने अनर्गल हैं कि इस रोशनी के जमाने में विज्ञान के इस युग में लोग उन पर मखोल उड़ाते हैं उन पर ध्यान देने की बात तो दूर रही। इन मतों की नैतिक उत्तरदायिता का दायरा उसी प्रकार सीमित होने से जिस प्रकार अभी कुछ दिन हुए पूर्वीय जर्मनी के एक बच्चे के पश्चिमी जर्मनी में एक दुर्घटना में घायल हो जाने पर वहां के हस्पतालों में इलाज नहीं करने दिया गया था, मनुष्य मनुष्य का विरोधी एवं शत्रु बनाया गया। मुक्ति धर्म्म और ईश्वर की ऊल

जलूल व्याख्याएं प्रस्तुत करके,आचार की श्रेष्ठता पर बल देने के स्थान में रूढ़ियों, अनुष्ठानों और मान्यताओं पर बल देने से धर्म तत्वों का प्राबल्य एवं व्यवहार नष्ट हुआ और लोगों में धर्म की उपेक्षा वा घृणा उत्पन्न हुई। यदि इन मतों के द्वारा अकेले मानवीय भ्रातृत्व का दायरा सीमित न किया जाकर विश्व व्यापी बना रहता तो बहुत संभवतः दूसरा महासमर टल गया होता और ५ करोड़ व्यक्तियों ने अपनी जान से हाथ न धोए होते।

अतः संसार के कल्याण एवं मनुष्य को देवता बनाने के लिए आवश्यक है कि भौतिक उत्थानके साथ २ मनुष्य के आध्यात्मिक उत्थान की भी अवस्थाएं उत्पन्न की जाएं। ये अवस्थाएं प्राणी मात्र से प्रेम करने, उनकी सेवा सहायता करने और सच्चरित्रता एवं परोपकार का जीवन व्यतीत करने से उत्पन्न होती हैं। यही वास्तविक धर्म है धर्म तत्वों का आदर और ईश्वर पूजा है। ईश्वर को किसी मन्दिर या मठ में बिठाया जाकर हमारी पूजा की आवश्यकता नहीं है वह तो हम सबको उसी प्रकार प्रेम करता हुआ देखना चाहता है जिस प्रकार गऊ अपने नवजात बच्चे से प्रेम करती है। यही उसकी सच्ची उपासना है।

धार्मिक भावनाओं के प्रबल होने एवं पारस्परिक प्रेम और सद्भाव को व्यवहार का आदर्श बनाने से ही विश्व में व्याप्त तनाव कम हो सकता है और अणुशक्ति ईश्वर का रूप ग्रहण करने से रुक सकती है।

गोवध निषेध कानून

उत्तर प्रदेश के राज्य ने अभी कुछ दिन हुए 'गोवध निषेध' कानून बनाया था। विहार राज्य ने भी इसी प्रकार का कानून बनवाकर अपने कर्त्तव्य का पालन किया है। विहार राज्य के प्रवर समिति द्वारा संशोधित गोवध निषेध विल में बैलों की हत्या निषिद्ध न थी परन्तु विहार राज्य ने लोकमत का आदर करते हुए बैलों की हत्या भी वर्जित करना स्वीकार कर अपने गोवध निषेध बिल की एक आधार भूत त्रुटि को दूर करने की दूर दर्शिता दिखाई। पंजाब राज्य में भी शीघ्र ही विधान सभा द्वारा गोवध निषेध कानून बनने वाला है। बिल गजट में प्रचारित हो चुका है। मध्यप्रदेश राज्य ने 'गोवध निषेध' का कानून पास करके समस्त राज्यों में पहल की थी परन्तु उनके कानून में बैलों की हत्या वर्जित नहीं है। आशा है वह राज्य अविलम्ब इस बड़ी कमी को दूर कर देगा। हिमाचल आसाम राजस्थान व मध्यभारत में सम्पूर्ण गोवध निषेध का कानून बना ही हुआ है। हैदराबाद राज्य में कानून बनवाने के लिए वहां की आर्य प्रतिनिधि सभा और उसके उत्साही एवं प्रभावशाली प्रधान श्रीयुत पं० नरेन्द्र जी एम० एल० ए० प्रयत्नशील हैं ही। हैदराबाद, बम्बई, बंगाल, उड़ीसा, मदरास प्रदेश ऐसे हैं जहां सम्पूर्ण गोवध निषेध का कानून बनवाने के लिए विशेष प्रयत्न करना होगा। कलकत्ता, बम्बई और मदरास के नगरों में दिल को दहला देने वाला गोवध होता है। कलकत्ता और बम्बई के भयंकर 'गोवध' को स्वयं भारत के प्रधान मन्त्री ने स्वीकार कर चिन्ता व्यक्त की थी। आशा है वहां की समस्या के हल के लिए बहुत प्रतीक्षा न करनी होगी। सम्पूर्ण देश में गोवध के विरुद्ध लोकमत इतना प्रबल हो चुका है कि राज्य सरकारें उसकी उपेक्षा न कर सकेंगी और उन्हें इच्छा से वा अनिच्छा से देर सवेर में उसके सामने झुक कर अपने यहां कानून बनाने होंगे।

परिवार नियोजन

सोशल ऐक्शन Social Action नामक पत्र अपने नवम्बर के अङ्क में लिखता है :—

"जबकि कृत्रिम साधनों से सन्तति निरोध

अन्य देशों में गजब ढारहा है, इस घातक बुराई के उपासक भारतवर्ष में इसका प्रचार कर रहे है। यदि ये लोग नितान्त मूर्ख न हों तो उन्हें जानना चाहिए कि कृत्रिम साधनों का प्रयोग अधिकांश रूप में परिवार नियोजन के लिए नहीं अपितु परिणामों के भय के बिना कामुकता की संतुष्टि के लिए होता है। युवकों के इस भ्रष्टाचार से देश का कल्याण नहीं हो सकता। यह दुर्भाग्य की बात है कि विनाश के इस कार्य्य में हमारे शासन का हाथ है।"

पुनर्जन्म की घटनाओं के प्रति विदेशों में प्रेम

म्यूनिच (जर्मनी) से श्री गार्डा बाल्यर पी० एच० डी० लिखते हैं :—

"पिछले दिनों जर्मनी के बहुत से समाचार पत्रों में शान्तिदेवी के पुनर्जन्म की घटना छपी थी जिससे प्रकट होता था कि वह घटना अभी हाल में हुई है। इससे जनता में बड़ा कौतूहल उत्पन्न हुआ और मनोवैज्ञानिक अन्वेषक के रूप में मुझ से बार २ पूर्ण विवरण मांगा जाने लगा। अतः मैंने बनारस विश्व विद्यालय के प्रो० बी० एल० ऐत्रेय से विवरण मांगा। उन्होंने मुझे लिखा कि मैं आपको लिखूं। तदनुसार प्रार्थना है कि शांतिदेवी के पुनर्जन्म की घटना की विवरण पुस्तिका भेजने की कृपा करें तथा इस विषय पर और कोई साहित्य भेज सकें तो वह भी अवश्य भेजने का कष्ट करें।"

सार्वदेशिक सभा के कार्यालय से उपर्युक्त पुस्तक अन्य साहित्य के साथ भेजदी गई है, तथा उन्हें निवेदन किया गया है, कि वे इस विषय में अपने विचारों से सभा को सूचित करने का कष्ट करें। उनके विचार प्राप्त होने पर (सार्वदेशिक) के पाठकों को उनसे अवगत कराने का प्रयत्न किया जायगा।

नैतिक विशेषताएं

कुछ वर्ष हुए ब्रिटेन में एक पुस्तक प्रकाशित हुई थी जिसमें १६०० से १६५० तक ५० वर्षों में ब्रिटेन के सदाचार के अन्वेषण का विवरण दिया गया था। अन्वेषण का कार्य सुप्रसिद्ध समाज शास्त्रियों एवं अर्थ विशारदों के द्वारा सम्पादित हुआ था। अन्वेषण का सार यह था कि उन ५० वर्षों के काल में जन साधारण का नैतिक स्तर बहुत नीचा होगया है। उक्त अन्वेषण नितान्त निष्पक्ष था। अब भारत में वह समय आगया है जबकि निष्पक्ष समाज शास्त्रियों के द्वारा उपर्युक्त प्रकार का अन्वेषण कराया जाय। हमारा विश्वास है कि इस प्रकार के अन्वेषण के परिणाम चौंका देने वाले होंगे :—

इस विषय पर लिखते हुए सहयोगी 'मौडर्न रिव्यू' अपने नवम्बर ५५ के अङ्क में देश व्यापी भयंकर भ्रष्टाचार के कारणों की इस प्रकार मीमांसा करता और कांग्रेस के कर्णधारों को चेतावनी देता है।

"देश में व्याप्त भयंकर भ्रष्टाचार का मूल कारण दल गत राजनीति और उसके फल स्वरूप कांग्रेस का पतन है। आज कांग्रेस केन्द्र में तथा राज्यों में भ्रष्टाचार की दलदल में फंसी देख पड़ती है। भ्रष्टाचार की बुराई सर्वोदय तथा तत्सम्बन्धी पुरोगम तक में प्रविष्ट हो गई है। जब तक कांग्रेस के वक्ता आत्म संवर्द्धन, चापलूसी और अन्धानुकरण की बुराई का परित्याग न करेंगे तब तक सर्वोदय, आत्मबल और भारत के द्वारा संसार के उद्धार की शेखी बघारने से काम न चलेगा। जहां तक राष्ट्र का सम्बन्ध है ये बुराइयां शराबखोरी और चोरी से भी निकृष्ट हैं। प्राचीनकाल के महा प्रभुओं ने भारत को सैकड़ों वर्ष की गुलामी और पतन में डाले रखा जो भौतिक दृष्टि से संसार में सर्वाधिक सम्पन्न और उन्नत देश था। हमारे आज के महा प्रभु भी चमत्कारों की धुन में विन-

म्रता और आत्म निरीक्षण के नितान्त अभाव में, देश को उसी मार्गपर ले जारहे हैं। भविष्य साफ दीख रहा है। क्या हमारे आज के महा प्रभु प्राचीन इतिहास से शिक्षा ग्रहण करेंगे।"

आर्य समाज की सभाओं में उपस्थिति कम क्यों होती है ?

प्रायः यह शिकायत सुनी जाती है कि आर्य समाज के सत्संगों, सभाओं और उत्सवों में उपस्थिति बहुत कम रहती है। यह शिकायत विशेष ध्यान देने योग्य है। उपस्थिनि के कम होने के कई कारण हो सकते हैं। मुख्यतम कारण यह है कि जन साधारण की रुचि विशुद्ध आध्यात्मिक एवं धार्मिक बातों के सुनने की ओर कम प्रवृत्त होती है और उसे जाग्रत व शान्त करने के लिये हमारी ओर से समुचित प्रयत्न नहीं किया जाता। हम भूल जाते हैं कि आज जनता को बौद्धिक प्रकाश की उतनी आवश्यकता नहीं है जिननी आत्मिक शान्ति की। हमारी वेदी का अधिकांश प्रयोग उच्चकोटि की वस्तु उच्चकोटि के लोगों के द्वारा दिये जाने के स्थान में निम्न कोटि की वस्तुओं के दिये जाने में होने लगा है। श्रोताओं के लाभ के स्थान में उनके मनोरंजन का विशेष ध्यान रखे जाने से जहां वेदी का गौरव क्षीण होता, सुयोग्य और अधिकारी उपदेशकों को पीछे छोड़ना पड़ता है वहां उन लोगों की बन आती है जो श्रोताओं के लिये न बोल कर अपने लिये बोलते हैं और विषय की महत्ता को पीछे रख कर अपनी महत्ता को आगे रखते हैं। हमें श्रोताओं को वह देना चाहिये जो हम उनके लिये उपयोगी समझें और जिस पर श्रोताजन गम्भीर विचार के लिये वाध्य हों। इस सम्बन्ध में विशप वर्नेट नामक एक ईसाई पादरी के विचार मनन करने योग्य हैं। वे लिखते हैं :—

That is not the best sermon which makes the hearers go away talking to one another and praising the speaker, but which makes them go away thoughtful and serious and hastening to be alone.

अर्थात् वह व्याख्यान वा धर्मोपदेश सर्वोत्कृष्ट नहीं होता जिसे सुन कर श्रोता लोग एक दूसरे से वार्तालाप वा वक्ता की प्रशंसा करते हुये घर जाते हैं परन्तु वह उपदेश उत्कृष्ट होता है जिसे सुनकर श्रोताजन गम्भीर विचार मुद्रा में बाहर निकलते और मनन के लिये शीघ्र से शीघ्र एक दूसरे से अलग होना पसन्द करते हैं। मनोरंजन की प्रवृत्ति का अप्रत्यक्ष दुष्प्रभाव यह भी होता है कि जब मनोरंजन करने वाले उपदेशक वा व्याख्याता का प्रबन्ध नहीं हो पाता तो जन साधारण अच्छे से अच्छे उपदेश को भी सुनने के लिये नहीं आते।

आर्य समाज की वेदी प्रबन्ध सम्बन्धी त्रुटियों की चर्चा का स्थान नहीं है परन्तु दुर्भाग्य से अनेक वार यह उक्त चर्चा का स्थान बनादी जाती है जिसका दूरवर्ती परिणाम श्रोताओं की उपस्थिति की दृष्टि से हानिकर होता है।

आर्य समाज की वेदी दल गत राजनीति के खंडन मंडन वा रस्साकशी का भी अखाड़ा नहीं है। परन्तु इसके अखाड़ा बना दिये जाने के कारण जहां अनेक कठिनाइयां बढ़ रही हैं वा बढ़ने की आशंका उत्पन्न हो रही है वहां आर्य समाज की वेदी का दुरुपयोग भी हो रहा है। इस वेदी से अनेक वार ऐसे भाषण होते हैं जो आर्य समाजके कार्यक्रम रीतिनीति और परम्पराके सर्वथा विरुद्ध होने के अतिरिक्त आर्य समाज के विशाल हितों के लिये घातक भी होते हैं। इससे किसी समय और किसी स्थान पर उपस्थिति बहुत बढ़ जाती है और अन्य समयों और स्थानों पर बहुत घट जाती है। विशुद्ध धार्मिक दृष्टि से जो बात अवांछनीय हो वह राजनैतिक दृष्टि से वांछ-

नीय नहीं हो सकती। जो बात धार्मिक और राजनैतिक दोनों दृष्टियों से वांछनीय हो उसकी समर्थन और जो ठीक न हो उसका खंडन होना ही चाहिये। इसके लिये आर्य समाज की वेदी प्रयुक्त हो सकती है परन्तु दलगत राजनैति से ऊपर रह कर। हमारा ध्येय किसी राजनैतिक दल वा व्यक्ति को ऊंचा उठाना वा गिराना न होकर भलाई को प्रतिष्ठित करना और बुराई को मिटाना होना चाहिये।

अशिक्षित और ग्रामीण जनता में भी उपरोक्त प्रचार की शैली अन्यरूप से रखी जा सकती है और रखी जानी चाहिये किन्तु उनकी अपनी भाषा और शैली में। यदि हम उनकी हलकी योग्यता के कारण हल्की वस्तु उन्हें देंगे तो उनके बौद्धिक विकास में बाधक सिद्ध होंगे और हम यह भी आशा नहीं कर सकते कि कभी भी उनको गम्भीर बात के सुनने के लिये प्रोत्साहित कर सकें। यह तो उपदेशक और विद्वान् की योग्यता की कसौटी है कि वह उच्चकोटि की वस्तु अपने श्रोता की योग्यता के अनुसार उनके हृदय में बैठा दे और उन्हें अपने विषय की ओर आकृष्ट कर सके।

संक्षेप में आर्य समाज की वेदी को पवित्र और प्रभावशाली रखा जाय जिससे वह देश के धार्मिक सामाजि और राष्ट्रीय जीवन के लिये यथापूर्व अधिकाधिक प्रेरणाप्रद बनी रहे। आर्य समाज के व्याख्यानों एवं उपदेशों का स्तर ऊंचा किया जाय जिन्हें सुन कर हृदय को शान्ति तथा बुद्धि को प्रकाश मिले। जनसाधारण में उच्चकोटि के उपदेश सुनने के लिये उत्सुकता पैदा हो। साथ ही आर्य समाज के सत्संग आदि लम्बे समय तक न चलने दिये जाये। थोड़े से थोड़े समय में श्रोताओं को अधिक से अधिक उपयोगी वस्तु दी जाया करे। ये तथा इस प्रकार के मोटे उपाय हैं जिनसे उपस्थिति बढ़ सकती तथा अधिकाधिक अच्छे श्रोता आकृष्ट हो सकते हैं।

गुरुकुल कांगडी में जर्मन विद्वान्

जर्मनी के कोलेन विश्व विद्यालय के दर्शन विभाग के प्रोफेसर डा० हैइन्स हैहम शोथ ने गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी में "सामयिक जर्मन दर्शन में मानव का स्वरूप" इस विषय पर गत मास (अक्टूबर) एक बड़ा खोजपूर्ण व्याख्यान दिया। उनके साथ जर्मन दूतावास देहली के प्रधान कर्म सचिव भी सपरिवार गुरुकुल पधारे थे। प्रो० नन्द लाल जी तथा आचार्य प्रियव्रत जी ने गुरुकुल की स्थापना तथा कार्य प्रणाली का विद्वान् महमान को परिचय दिया। प्रो० नन्द लाल जी ने जर्मन दार्शनिकों की विशेषता का परिचय देते हुए शंकराचार्य और महर्षि दयानन्द की विचारधारा पर विवेचन किया।

पादरी वर्टन की स्वीकारोक्ति

भारत वासी ऐसे भोले मनुष्य नहीं हैं जो झट ईसाई हो जावें। ये संसार के एक सब से अधिक सूक्ष्म दर्शी और तीव्र बुद्धि राष्ट्र के व्यक्ति हैं। भारतवासी फिजी के लोगों की तरह जिनके पुरखे थोड़े दिन पहले नर मांस खाते थे, नहीं हैं, ये लोग उस समय में पूर्ण सभ्य होने का अभिमान कर सकते हैं जब हमारे पूर्वज भेड़ियों की खाल पहने हुए अपने शरीर को चित्रित किये हुए जंगलों में घूमते थे। भारतीयों का इतिहास धर्म सम्बन्धी घटनाओं से भरा पड़ा है। इस समय भी भारतवासी दुनिया भर में सब से अधिक धार्मिक हैं। इन्हीं लोगों ने पृथ्वी पर स्वर्ग है और सब स्थानों में परमात्मा व्यापक है इस बात का अनुभव किया है। जब तक वेद, रामायण, महाभारत और गीता मौजूद हैं, तब तक भारत को अपना माथा नीचा करने की आवश्यकता नहीं। भला हम भारतीयों क्या धर्म सिखायेंगे ?"

फिर ईसाई मिशन को भारतीयों को ईसाई बनाने में करोड़ों रुपया क्यों खर्च कर रहा है ?

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

तस्मै देवाय हविषा विधेम

[लेखक—अध्यापक श्री विष्णुदयाल जी एम० ए० मारीशस]

ऐसे लोगों की संख्या बढ़ने लगी है, जो प्रचलित वेद मन्त्रों को या स्वयं उच्चारित करते हैं, या सुनते हैं। मन्त्रों को कण्ठाग्र करके भक्तजनों में यह इच्छा बलवती हो जाती है कि हम इनके अर्थ समझ जायें। इस इच्छा की पूर्ति के लिए प्रयत्न करते वक्त बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। श्रेष्ठ धार्मिक एवं दार्शनिक पत्रिकाओं और उत्तम ग्रन्थों के अभावों से लोग पश्चिमीय विद्वानों की शरण में चले जाते हैं। वे ख्याल करते हैं कि जैसे उपन्यासों का अनुवाद मूल पुस्तक के समान ही उत्तम होता है, वैसे यूरोपीय विद्वानों द्वारा अनूदित वेद में वेद ही वाणी मिलती है।

अनुवादक ने "य आत्मदा,, आदि का अनुवाद करके यही लिखा कि भक्त लोग कहते हैं, "किस देव के लिए हविः अर्पित की जाय ?" असमञ्जस में पड़ कर पाठक मन ही मन कहने लगते हैं कि वेदमन्त्र बे सिर पैर की कहता है। साहित्य से परिचय न होने के कारण ये विचारे किये गये अनुवाद को वेद ही मान लेते हैं। उन्हें ज्ञात नहीं कि उपन्यास में वस्तुकथा, घटनाएँ और कुछ पात्र होते हैं। उपन्यासकार चरित्र चित्रण करता है। उसका उपन्यास बहुत शीघ्र अनूदित होता है।

वेद का अनुवाद करना शिला लेखों को पढ़ कर समझने की अपेक्षा भी बहुत कठिन है। कई लेख लोगों के अनेक वर्षों के परिश्रम के पश्चात पढ़े जा सके हैं।

वेद न केवल श्रेष्ठतम ग्रन्थ है, वरन प्राचीनतम भी है। वेद को समझने के लिए हमें अपने को वेदकालीन भारत या उपनिषत्कालीन मानवसमाज में ले जाना पड़ता है। उपनिषत्काल से लेकर वर्तमान काल तक जो कुछ बीता, उसे भूल कर हमें वेद का गहन अर्थ खोजना है। हम वेद को तब समझ सकेंगे, जब हम इस पवित्रतम ग्रन्थ को उस दृष्टि से देखने का प्रयत्न करेंगे जिस दृष्टि से प्राचीनकाल के ऋषि लोग इन्हें देखा करते थे।

यदि हमारे पास महाभारत,रामायण गीता न हो; यदि केवल वेद और ग्यारह उपनिषदों के साथ ब्राह्मण ग्रन्थ और कुछ प्राचीन ऋषिकृत ग्रन्थ ही शेष रह जायें, तो क्या हम वेद को पढ़कर मन्त्रों के अर्थ जान सकेंगे ? हाँ।

उदाहरणार्थ केनोपनिषद् का अध्ययन 'य आत्मदा, को समझने के लिए सहायक सिद्ध होता है। इन पंक्तियों के लेखक की तुच्छ सम्मति में कथा वाचकों को इनकी कथा करते हुए इस के समस्त मन्त्रों का पाठ करके प्रथम मन्त्र का पुनर्वार पाठ करना चाहिये। मानो कोई 'य आत्मदा, को समझना चाहे तो वह उसे निम्न रूप में रखकर पढ़ता है :—

"तस्मै (कस्मै) देवाय हविषा विधेम य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः यस्य-च्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः"

अर्थ यह होगा, उस देव के लिए हविः अर्पित की जाय जो यह अद्भुत ज्ञान देता है कि मनुष्य शरीर नहीं है, आत्मा है; जो इस ज्ञान को देकर मनुष्य को समझा देवे कि उसे ज्ञान क्या दिया, बड़ा बल दे दिया। बलवान होकर मानव निर्भीक हो जाता है और समझता है कि मैं अमर हो गया; मृत्यु भी आ

जाय तो उस देव की प्राप्ति के कारण उसे भी अमृत ही समझूँगा।

इस मन्त्र का अर्थ करते हुए गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने लिखा है कि ईश्वर आत्मदा है क्योंकि वह अपने आप को लेकर भक्त को दान में दे देता है।

मानव को जो आत्मा से हीन रह कर भटकता फिरता है, नया ज्ञान प्राप्त होते ही आत्मा मिल सा जाता है; साथ साथ आत्मा का सखा परमात्मा भी मिल जाता है।

इतना बढ़िया दान लेकर क्या यह पूछता रहेगा कि मैं किस देव के लिए हविः अर्पित करूं ?

'हरिजन' में एक सज्जन ने बापू जी के महाप्रयाण के बाद एक लघु लेख प्रकाशित करवाया था, जिसमें उन्होंने बताया कि मैं सन १६१५ ई० से एक महात्मा की खोज में निकला था। उस साल से १६४७ तक मैं बापू जी से मिलता रहा, पर मुझे भान न हुआ कि जिसे मैं ढूँढ़ रहा था उसे पा चुका था ! महाप्रयाणके पश्चात् मैं जाग उठा और कहने लगा कि महात्मा प्राप्त हो चुके थे और मैं व्यर्थ ही घूमता रहा महात्मा की खोज में।

"य आत्मदा" के पाठक की भी यही दशा रहती है जब तक "कस्मै" का अर्थ प्रश्न के रूप में किया जाता है।

'कः' के अनेक अर्थों में से एक अर्थ 'ईश्वर' भी है। उपन्यास के अनुवादक ऐसी भाषा में रचित उपन्यास का भाषान्तर नहीं करते जो संस्कृत के समान हो। उपन्यास में दार्शनिक विचार कम होते हैं। वेद के यूरोपीय भाष्यकार तक इस तथ्य को भूल कर अनुवाद और भाष्य करते रहे हैं।

हमारे पाठक अब समझ जायेंगे कि क्यों केनोपनिषद् के प्रथम मन्त्र को आरम्भ और अन्त में पढ़ना चाहिये। आरम्भ में 'कः' का अर्थ 'कौन' होगा या 'केन' का 'किससे' और अन्त में 'कः' का अर्थ 'ईश्वर' या 'केन' का 'ईश्वर से'।

उपनिषद् के आरम्भ में यह प्रश्न आता है **"किससे प्रेरित होकर इष्ट वस्तु के प्रति यह मन भागा जाता है ? मुख्य प्राण किसमे जोड़ा हुआ विशेषता से चलता है ? इस वाणी को किसकी प्रेरणा से जन बोलते हैं ! और आँख-कान को कौन देव कार्यों में जोड़ता है ?"**

समस्त उपनिषद् इन प्रश्नों का उत्तर रूप है। यह कह कर कि ईश्वरप्रदत्त शक्ति से सब इन्द्रियां काम करती हैं वह भक्तों को मानों शक्ति के स्रोत तक पहुँचने को प्रेरित करतो हैं। यही कारण है कि केनोपनिषद् की कथा सुनाने वाले को योग दर्शन के विषय को भी समझना चाहिये। जब ईश्वर सब कुछ करने वाला है; जब उसकी कृपा से कान सुनता है और नेत्र देखता है, हमको कहना पड़ता है कि उसकी आज्ञा से ही सब कुछ होता है। ईश्वर का साथी आत्मा है। जो नर आत्मा वाला अपने को जाने वही वास्तव में मनुष्य है। मनुष्य यह जाने कि मेरा शरीर एक बड़ा नगर है जिसमें आठ चक्र हैं।[1] इस नगर में आज्ञा देने वाला आत्मा है। आज्ञा नाम वाले चक्र में "उत्तेजना आने से शरीर पर प्रभुत्व, नाड़ी और नसों में स्वाधीनता आती है और यह अनुभव होने लगता है कि आत्मा की आज्ञा ही से समस्त शरीर व्यापार चल रहा है।" नगर[2] में आज्ञा देता है तो विश्व में परमात्मा। इस उपनिषद् में जहां अधिदैवत भाव प्रकट किया गया है वहां

१. अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या। तस्यां हिरण्ययः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः॥
—आठ चक्र और नौ द्वार वाली अयोध्या देवों की पुरी है, आनन्द रूप प्रकाश से युक्त। (अथर्व)
२ महात्मा नारायण स्वामी

अध्यात्म भाव को भी प्रगट किया गया है। पं० गङ्गाप्रसाद ने इस उपनिषद् के अपने भाष्य में ठीक ही लिखा है :—

"Thers is a wel known Vedanta maximviz यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' i. e., this humau body which is aptly described as a microcosm or 'little world" is an exact prototype of the macrocosm or the "biggest world" All physical forces have their caunterparts among the mental powers. Both are called devas in Vedic pharseology."

दिये गये उत्तर को स्पष्ट करने के लिए एक रूपक दिया गया है। अग्नि देवता ने यक्ष को देखा पर उसने उसे पहचाना नहीं। यक्ष ने अग्नि के सामने एक तृण रखा और कहा, 'इसे जलाओ।' अग्नि देवता में एक तिनके को जलाने की भी शक्ति न रही। वायु देवता भी शक्तिहीन होगया।[3] दोनों चकित हो गये और कहने लगे कि हम तो जान ही न सके कि यह यक्ष कौन है।

तब देवराज इन्द्र यक्ष को देखने के लिये निकले। यक्ष तो दिखाई न दिया। इन्द्र को एक देवी देखने में आई, जिसके शरीर पर बहुमूल्य वस्त्र और आभूषण थे। वह मनोहारिणी देवी उमा थीं। जिस प्रकार विद्या की अपनी चमक है, उसी प्रकार उमा रूपी ब्रह्मविद्या में अद्भुत आकर्षण था। वह मन प्राण चुराने वाली थी।

ब्रह्मविद्या को प्राप्त करके ही मनुष्य को ईश्वर के दर्शन होते हैं। श्री स्वामी सत्यानन्द जी का मत है कि "यहाँ उमा से अधिदैवत में जगमगाती सूर्य की ज्योति से तात्पर्य है अध्यात्म में शुद्ध बुद्धि समझी गई है।"

देवों को केवल एक झलक मिली थी। "देवों में ब्रह्म की सत्ता का चिन्ह तो बिजली की चमक के समान है और आंख के चमकने के सदृश है। तत्वों के ज्ञान से ब्रह्म ज्ञान की धारणा पूर्ण नहीं होती। वे भगवान् की सत्ता का संकेत मात्र करते हैं। सृष्टि की रचना उसकी सत्ता का परिचय देती है।"

आत्मा उच्चावस्था को प्राप्त हो जाए तो वह परमात्मा के दर्शन इह लोक में ही कर सकेगा।

---

३. बहुतों का कथन है कि यह अत्युक्ति है। अलंकार में अतिशयोक्ति होती ही है। पञ्चतन्त्र की कहानियों में बताया गया है कि कुत्ते, मुर्गे, सियार, सिंह बोलते हैं। बच्चे भी नहीं मानते कि पशु-पक्षी बोलते हैं; परन्तु कथा रोचक हो जाती है जब इस रूप में पेश की जाती है।

केनोपनिषद् की आख्यायिका के सम्बन्ध में म० नारायण स्वामी लिखते हैं:—

"ऊपरी दृष्टि के साथ देखने से तो यह बात कुछ अत्युक्ति की सी मालूम देती है, परन्तु सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो इस कथन की सत्यता प्रकट हो जाती है। अग्नि, वायु आदि जब तक सूक्ष्म भूत के रूप में रहते हैं, अव्यक्त (अप्रकट) रहते हैं। लकड़ी में अग्नि मौजूद है परन्तु है सूक्ष्म भूत के रूप में, इसलिए अप्रकट है। जब तक अग्नि इस सूक्ष्म रूप में रहती है, एक तिनके को भी नहीं जला सकती परन्तु जब संघर्षण द्वारा उसको व्यक्त (प्रकट) करते हैं, तब वह समस्त संसार को भी भस्म कर देने की योग्यता वाली हो जाती है। यदि कोई कहे कि लकड़ी में अग्नि मौजूद ही नहीं, तो यह बात सर्वथा मिथ्या होगी क्योंकि यदि मौजूद नहीं, तो संघर्षण से कहाँ से आ जाती है, संघर्षण से भी नहीं उत्पन्न होनी चाहिये थी। निष्कर्ष यह है, कि पंच भूत जब तक सूक्ष्म और अव्यक्त रहते हैं अपना-अपना काम नहीं कर सकते, परन्तु जब उनका परिवर्तन स्थूल और व्यक्त रूप में हो जाता है, तब वे अपना काम करने लगते हैं।"

अब मालूम हुआ कि परमात्मा केवल ब्रह्मांड का ही निवासी नहीं है अपितु पिण्ड के अन्दर भी विद्यमान है। वह अति स्थूल है और साथ ही अति सूक्ष्म। पिण्ड के अङ्ग २ में, मानव शरीर के नेत्र, कान दि में उसी की शक्ति काम करती रहती है।

प्रथम मन्त्र शिष्य द्वारा सुनाया गया था। गुरू ने शिष्य को पूरा उत्तर दिया। उपसंहार के रूप में गुरू उसी मन्त्र को उत्तर में उच्चारित करके शिष्य को समझा सकता है :—

"ईश्वर की प्रेरणा से मन इच्छित विषय पर गिरता है। ईश्वर से नियुक्त हुआ फैला हुआ प्राण चलता है। ईश्वर से प्रेरित हुई ये वाणी बोलती है। ईश्वर रूपी देव आँखों और कानों को चलाता है।"

इस उपनिषद् का आधार प्रथम गिने जाने वाली उपनिषद् अर्थात ईशोप नषद् के एक मन्त्र के अंश में है। ईश नामक मन्त्रोपनिषद् में कहा गया है कि ईश्वर इन्द्रियों से प्राप्त होने योग्य नहीं है। तलवकार (केन) उपनिषद् दूसरी उपनिषद् है।

केन और ईश—दोनों से "य आत्मदा" का अर्थ करने का तरीका सीखा जा सकता है। वेद में गुरू और शिष्य में संवाद नहीं होता। वहां स्वयं परमात्मा बोल रहा है। वहां "कस्मै देवाय" प्रश्नात्मक नहीं है।

यदि पाश्चात्य विद्वानों का अनुवाद न देखकर कोई भक्त निम्न अनुवाद से मिलता जुलता अनुवाद पढ़े, जो अनुवाद और भावानुवाद है, उसे वेद से निराश होने की आवश्यकता न होगी:—

"उस देव के लिए, उस परमपिता परमात्मा के लिये जिसके प्रति प्रत्येक मानव प्राणी को कृतज्ञ होना चाहिये, हविः को अर्पण किया जाय।

जो अपने को दान रूप में अपने भक्त को दे दिया करता है जब उसे जताता है कि तू तो आत्मा मात्र है, जो इस प्रकार का ज्ञान देकर जीवन शक्ति जन-जन में फूंकता है, जिसे प्राप्त कर असली अर्थों में मानव बली बनता है, जिसकी विद्वान् लोग उपासना करते हैं और जिसका प्रत्यक्ष सत्य स्वरूप शासन और न्याय अर्थात शिक्षा को मानते हैं, जिसका आश्रय ग्रहण करना ही अमृतपान करना है अर्थात् मरणधर्मा न रहना है, जिसका आश्रय पाना मृत्यु को भी अमृत में परिणत करना है, मृत्युञ्जय होता है।"

यह भावार्थ उस युग में किया जा सकता था जब दुनिया में केवल चार वेद, ग्यारह उपनिषदें और अन्य ऋषिकृत इने गिने ग्रन्थ विद्यमान थे।

उपनिषदों से सहायता प्राप्त कर यह अर्थ किया जा सकता है। केन के प्रथम मन्त्र को उत्तर समझा जाय और 'कः' का अर्थ 'ईश्वर' किया जाय तो 'य आत्मदा' का अति सुन्दर अर्थ होता है। महर्षि दयानन्द ने भी "कस्मै देवाय" को प्रश्नात्मक नहीं माना था। उनके किये गये अर्थ हैं :—

१. हम लोग उस सुखस्वरूप सकल ज्ञान के देने हारे परमात्मा की प्राप्ति के लिए आत्मा और अन्तःकरण से भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें।

२. हम उस सुख स्वरूप सकलैश्वर्य के देने हारे परमात्मा के लिए अपनी सकल उत्तम सामग्री से विशेष भक्ति करें।

३. हम लोग उस सुखदायक, कामना करने के योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिए सब सामर्थ्य से विशेष भक्ति करें।" तीन बार "उसके लिए" पढ़ कर भी क्या हम इतना स्वीकार करने के लिए तैयार न होंगे कि "कस्मै" को समझाने के लिए उसकी जगह में "तस्मै" रखा जाय तो ठीक होगा? "तस्मै" का अर्थ है "उसके लिए" ही।

यदि उस युग में हम रहते जब कि अभी

उपनिषदों की रचना ऋषियों द्वारा अरण्यों की निस्तब्धता में न हुई थी क्या हम "कस्मै देवाय" रख सकते थे।

हां, रख सकते थे। वेद को समझाने के लिए वेद पर्याप्त है। अथर्व वेद में एक पूरा सूक्त है जिसे केन सूक्त कहा जाता है। केनोपनिषद् के अभाव में हम इस सूक्त से संकेत पा लेते।

संस्कृत के पण्डित जान जायेंगे कि एक सर्व नाम [कः] की जगह में दूसरे सर्वनाम [सः] को प्रयुक्त किया गया। वे उपनिषदों का पाठ करते होंगे तो यह भी जान जायेंगे कि यह 'सः' ऐसे स्थल पर आ चुका है। ईशोपनिषद् में जब बता दिया गया कि ईश्वर सम्पूर्ण जगत् में निवास करता है तब यह कहा गया कि उसके द्वारा त्यागे गये या दिये गये पदार्थों का उपभोग करना चाहिये। वे शब्द हैं "तेन त्यक्तेन"।" 'तेन', 'तस्मै' आदि 'सः' [तद्] से ही बनते हैं।

यदि उस युग में 'य आत्मदा' का अर्थ किया जाता जब कि ईशोपनिषद् रची न गई थी, क्या हम 'तस्मै' को व्यवहृत करके वेद मन्त्र का अर्थ समझा सकते ? हां। क्योंकि ईशोपनिषद् यजुर्वेद का मानो उपसंहार है, उपनिषद् के न रहते "तेन त्यक्तेन" शब्द देखने में आते।

'तेन' और 'तस्मै' दोनों एक ही सर्वनाम के रूप हैं। फिर क्या 'तेन' की जगह वेद में 'तस्मै' कहीं पर भी नहीं आया ? वेद काव्यमय भाषा में लिखा गया है। अनेक मन्त्रों में जैसे विचार सादृश्य पाया जाता है, वैसे शब्द सादृश्य भी देखने में आता है। 'तस्मै' शब्द 'य आत्मदा' समझाने के लिए उपयुक्त हो, तो कहीं न कहीं 'तस्मै' ही आना चाहिये।

यह जान कर पाठकों के आनन्द की सीमा न रहेगी कि 'तस्मै' आया है और अनेक बार आया है जिस भांति 'कस्मै' अनेक मन्त्रों में आया है। निम्न मन्त्रों में इस शब्द को हम पाते हैं :—

(१)

**"यस्य भूमिः प्रमा अन्तरिक्षमुतोदरम् ।
दिवं यश्चक्रे मूर्धानं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ।**

(२)

**यस्य सूर्यश्चक्षुश्चन्द्रमाश्च पुनर्णवः ।
अग्नि यश्चक्र आस्यं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणेनमः ॥**

(३)

**यस्य वातः प्राणापानौ चक्षुरङ्गिरसोभवन् ।
दिशो यश्चक्रे प्रज्ञानीस्तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ।**

(४)

**यो भूतञ्च भव्यञ्च सर्वं यश्चाधितिष्ठति ।
स्वर् यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥**

(१)

—भूमि जिसका पैर है और अन्तरिक्ष उदर है, द्युलोक को जिसने अपना सिर बनाया है, उस महान ब्रह्म को हमारा प्रणाम है।

(२)

—सूर्य और बार-बार नया होने वाला चन्द्रमा जिसका नेत्र है, अग्नि को जिसने अपना मुख बनाया है, उस परम ब्रह्म को हमारा प्रणाम है।

(३)

—वायु जिसका श्वास प्रश्वास है, अङ्गिरस (प्रकाशमान-किरणावली) जिसका नेत्र है, दिशाओं को जिसने ज्ञान का साधक (श्रोत्र) बनाया है, उस परम ब्रह्म को हमारा प्रणाम है।

(४)

—जो भूत और भविष्य सब का अधिष्ठाता जिसका अपना स्वरूप केवल प्रकाश और आनन्द है, उस महान् ब्रह्म को हमारा प्रणाम है।"

'यस्य' 'यो' और 'यः' एक ही सर्वनाम के अनेक रूप हैं। 'य आत्मदा' में वही सर्वनाम आया है। 'यः' 'यो' बनकर अथर्ववेद में आया। यदि हम अब 'य आत्मदा' को उसी ढंग से लिखना चाहें, जिस ढंग से अथर्ववेद में 'तस्मै ज्येष्ठाय'

वाले मन्त्र लिखे गये हैं, हम यह मन्त्र पेश कर सकते हैं :—

> य आत्मदा बलदा यस्य विश्व
> उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
> यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः
> तस्मै देवाय हविषा विधेम॥

—जो आत्मिक शक्ति और बल देने वाला है, सब जिसकी उपासना करते हैं देव जिसकी आज्ञा में चलते हैं, जिसकी शरण में जाना अमर होना है, जो मृत्यु का भी अधिष्ठाता है, उस सुखस्वरूप देव का हम त्याग से पूजन करते हैं।

अथर्व वेद की भाषा में इस मन्त्र को लिखा गया। इसमें जो विचार है, वह अथर्व वेद के ऊपर दिये गये चौथे मन्त्र के विचार से मेल खाता भी है। परमात्मा को प्राप्त करना आनन्द को उपलब्ध करना है। जब आनन्द का आगमन होता है मृत्यु कोई सत्ता नहीं रखती, मृत्यु छाया बन जाती है। स्व० राजाराम शास्त्री ने—

यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः

का अर्थ यह किया भी है :—

"जिसकी छाया अर्थात् शरण अमृत है, मृत्यु जिसका है जो मृत्यु का मालिक है। अथवा अमृत जिसकी छाया है छाया की नाईं अधीन है।"

हिन्दुओं के एक प्रचलित मत के अनुकूल होने से यह अर्थ ठीक जंचता है। भारत में सर्वोच्च मानव मृत्यु से इतना डर खाता नहीं जितना कि वह जन्म से भय खाता है* यह सोच कर कि कहीं हम फिर जन्म ग्रहण न कर लें। वह मुक्तिपद को प्राप्त करने का एक दीर्घ प्रयास करता है, वह परमात्मा का संगी बन कर अमर लोगों के बीच अपना नाम लिखवाने के लिए उत्सुक है। वह एक आत्मा है। आत्मा है तो अमर, परन्तु जब तक वह प्रकृति का साथी रहता है इस बात में उसे सन्देह होता है कि क्या मैं सचमुच अमर हूँ? प्रकृति भी अमर है, लेकिन उसके साथ बस कर आत्मा आनन्द से शून्य होता है और आनन्द के सागर परमात्मा को एक मात्र अमरधाम मानने लगता है।

---

*You see here (in India) the fear of another-life, the fear, not of death, but of birth, which runs through the whole of Indian philosophy.
Max Muller, The Vedanta Philosophy

चुने हुए फूल

—जो अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए दूसरों को हानि पहुंचाए वह पशु तुल्य होता है।

—ज्ञान और धर्म की अभिवृद्धि करने वाली वस्तु प्रारम्भ में विष तुल्य जान पड़ती है परन्तु अन्त में अमृत बन जाती है।

—उपदेश और उदाहरण दोनों से वेद का शिक्षण होना चाहिये।

—क्षत्रिय वह है जो देश के लिये अपना जीवन दे डालता है।

धर्म्म के स्तम्भ

अक्रोध

(१)

[लेखक—रघुनाथ प्रसाद पाठक]

क्रोधादि दोषों को छोड़ कर शान्त्यादि गुणों को ग्रहण करना अक्रोध कहलाता है। क्रोध मन के विकारों में से है जो मनुष्य को धर्म्म मार्ग से च्युत कर देते हैं।

क्रोध के अभिशाप

एक स्त्री ने एक नेवला पाल रखा था जिसे वह बहुत प्यार करती थी। एक दिन वह अपने बच्चे को पालने में सुलाकर और उसे नेवले की देख रेख में छोड़कर कुएँ से पानी लेने गई। इसी बीच में एक भयंकर साँप कमरे में आ निकला। ज्योंही उसने बच्चे को खाना चाहा त्योंही नेवले ने उस पर हमला कर दिया। दोनों में देर तक लड़ाई हुई और अन्त में नेवला विजयी रहा। उसने साँप को मारकर उसके कई टुकड़े कर डाले। जब वह स्त्री पानी भरकर लौटी और नेवले को लहूलुहान पाया तो उसने सोचा कि नेवले ने उसके बच्चे को मार डाला है। क्रोध में आकर उसने नेवले को घड़ा दे मारा और वह तत्काल मर गया। नेवले को मारकर जब वह स्त्री कमरे में घुसी बच्चे के पालने के पास साँप के टुकड़े देखऔर अपने बच्चेको ठीक पाया तो उसे अपनी भूल ज्ञात हुई और वह फूट २ कर रोने लगी। निश्चय ही क्रोध का आरम्भ मूर्खता और अन्त पश्चात्ताप के साथ हुआ करता है। क्रोध की अवस्था में मनुष्य का विवेक जाता रहता है और मनुष्य स्वयं ऐसी अवस्था उत्पन्न कर लेता है जब वह क्रोधके पात्रके स्थान में स्वयं अपने पर क्रोध करने लग जाता है। अतः क्रोध आजाने पर मनुष्य को उसके परिणामों पर विचार कर लेना चाहिए। जो व्यक्ति विवेक के द्वारा अपने क्रोध पर विजय प्राप्त करते हैं वे मनुष्यों में उत्तम माने जाते हैं।

क्रोध एक प्रकार का नशा होता है

क्रोध एक प्रकार का नशा होता है जो मनुष्य के आभ्यन्तर को मनुष्य से तो छिपाता परन्तु दूसरों पर प्रकट कर देता है। क्रोधी जन अपनी आत्मा का विकाश करने में न केवल असमर्थ ही रहते प्रत्युत अपनी आत्मा के विनाश का कारण बनकर दुःख पाते हैं। नीतिकार ने ठीक ही कहा है :—

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत॥

अर्थात् काम क्रोध तथा लोभ ये आत्म नाशक तथा नरक (दुःख मयी गति) के तीन प्रकार के द्वार है इस लिए मनुष्य इन तीन का त्याग करे।

क्रोध स्वास्थ्य विनाशक है

क्रोध का मनुष्य के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। शरीरकी शोभा नष्ट हो जाती और आयु क्षीण हो जाती है। क्रोध से पराभूत हुआ सुन्दर से सुन्दर व्यक्ति भी असुन्दर देख पड़ता है।

क्रोध ही अपना शत्रु होता है

काम और लोभ की भाँति क्रोध भी मनुष्य का शत्रु होता है जिसके कारण मनुष्य के अमित्रों की संख्या बढ़ती और मित्रों की संख्या घटती है जिसके परिणाम स्वरूप मनुष्य का सामाजिक एवं वैयक्तिक विकाश कुंठित हो जाता है। इतना ही नहीं अपने भी पराए हो कर मनुष्य के अनिष्ट

का कारण बन जाते हैं। रावण के क्रोध ने विभीषण को पराया बनाकर उसके सर्वनाश की भूमि तय्यार कर दी थी। रावण ने अहंकार कामुकता पशुबल और क्रोध के वशीभूत होकर जो आग जलाई उससे बचने के लिए महात्मा विभीषण ने सत्प्रयत्न किया परन्तु रावण को जलाई हुई आग में जल कर नष्ट होना था और वह नष्ट होकर रहा।—बालि ने क्रोध और अनीति का आश्रय लेकर अपने सहोदर भाई सुग्रीव पर ज्यादती की जिसका परिणाम प्रायः सबही जानते हैं। यदि सुग्रीव के साथ अन्याय न हुआ होता और बालि उसके उद्‌बोधन को मानकर अनीति का मार्ग त्याग देता तो वह राम के हाथों से न मारा जाता। विभीषण और सुग्रीव रावण और बालि के शत्रु न थे अपितु इन दोनों का पशुबल और क्रोध ही उनका शत्रु था।

क्रोध के ८ व्यसन

चुगली करना, बिना विचारे किसी की स्त्री के साथ बलात्कार करना, वैर रखना, ईर्ष्या करना, दोषों में गुण, गुणों में दोषारोपण करना, अधर्म युक्त बुरे कामों में धनादि व्यय करना, कठोर वचन बोलना और बिना अपराध के कड़ा वचन बोलना या विशेष दंड देना, ये आठ दुर्गुण क्रोध से उत्पन्न होते हैं।

चुगली करना, पीठ पीछे किसी की बुराई करना और कड़वे वचन बोलना, ये दुर्गुण वाणी के विष समझे जाते हैं। कल्याण के अभिलाषियों को इस विष से बचना चाहिये। चुगली करना वा पीठ पीछे बुराई करना कायरता है। जिन लोगों में नैतिक बल नहीं होता, वे ही इस प्रकार के निन्दनीय व्यापार में रत होते हैं। जिन व्यक्तियों से किसी की चुगली वा निन्दा की जाती है यदि वे समझदार हों तो उनकी दृष्टि में चुगली वा निन्दा करने वालों का कोई मूल्य नहीं होता। निर्बुद्धि व्यक्ति ही चुगलियों और पर-निन्दा से प्रभावित होकर अपना अहित कर बैठते हैं। ईर्ष्या और वैर की आग में दूसरों को जलाने के बजाय मनुष्य स्वयं जलता और अपना विनाश उपस्थित करता है। कठोर वचनों के प्रयोग से मनुष्य शांत व्यक्तियों के पुण्य में और अपने पाप में वृद्धि कर देता है। हम ऐसे व्यक्तियों को जानते हैं जिनमें आपस में बड़ा प्रेम था। दुर्भाग्य से किसी बात पर उनमें मन-मुटाव हुआ और तीखे एवं कड़वे वचनों के प्रयोग ने उन्हें एक दूसरे से ऐसा अलग कर दिया मानो उनमें कभी प्रेम रहा ही न था। तभी कहा जाता है कि तलवार का घाव भर सकता है परन्तु वाणी का घाव कभी नहीं भरता।

क्रोध का स्वभाव मत बनाओ

क्रोध छोटे से छोटे और बड़े से बड़े प्रायः सब प्राणियों में होता है। बहुत से व्यक्ति जरा जरा सी बात पर क्रोध कर बैठते हैं। बहुत से व्यक्तियों को छोटी बातों पर क्रोध नहीं आता और आता भी है तो बहुत कम। बहुतसे व्यक्तियों को बहुत देर में क्रोध आता है। जरा २ सी बात पर अकारण क्रोध करना लड़कपन होता है। क्रोध में आपे से बाहर होकर भयानक रूप धारण करना पाशविक माना जाता है। क्रोध को निरन्तर बनाए रखना राक्षसों का स्वभाव और व्यवहार होता है। छोटी २ बातों पर आवेश में आ जाने से क्रोध का स्वभाव बन जाया करता है जिसका अन्त प्रायः कटुता और शत्रुता में होता है। बढ़ते हुए क्रोध को दबा लेना बुद्धिमत्ता और गौरवपूर्ण होता है और ऐसे व्यक्ति वीर और दिव्य होते हैं। क्रोध को दबाना अच्छा और क्रोध को रोकना उससे भी अच्छा होता है। गुणवान और वीर पुरुष हीन गुण वालों पर क्रोध नहीं किया करते। ऐसे ही व्यक्तियों को बहुत कम क्रोध आता है। प्रसन्न चित्त, बुद्धिमान और तबीयत में लापरवाह व्यक्तियों का क्रोध विवेकपूर्ण हुआ

करता है और वह बहुत देर में आता और बहुत शीघ्र समाप्त हो जाता है। निर्बुद्धि और कायर व्यक्ति जब भूल करता और उस भूल को स्वीकार नहीं करता तो वह सदा तैश में आ जाता है। वह अपनी बुद्धि की कमी को क्रोध के द्वारा पूरा करने का विफल यत्न करता है। बुद्धिमान व्यक्तियों के क्रोध का गुब्बार निकल जाने पर वह क्षमा का रूप ग्रहण कर लेता है परन्तु क्रोध को छिपाने से वह प्रायः बदले की भावना में परिणत हो जाता है। क्रोध को मन में रखकर उसे पी लेने से कम समझदार व्यक्ति मन ही मन कुढ़ता है जिससे उसके स्वास्थ्य पर घातक प्रभाव पड़ता है। क्रोध को पी जाना अच्छा है परन्तु यह अत्यन्त समझदार और सज्जन पुरुषों का काम होता है। वे इस बात से प्रभावित होते हैं कि मनुष्य को शत्रुता मोल लेने और दूसरों की गलतियों एवं अपराधों का लेखा रखने के लिये ही जीवन प्रदान नहीं किया जाता।

क्रोध कब आवश्यक होता है ?

सुधार और नियन्त्रण के लिये क्रोध आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी होता है। उस अवस्था में वह विकारों से नहीं अपितु उच्च भावनाओं से अर्थात् हित भावना से प्रेरित और शासित रहता है। वैर, द्वेष, बदले की भावना और अन्य निम्न विकारों से प्रेरित होने पर वह दोषपूर्ण बन जाता है। सुधार और हित से प्रेरित सकारण क्रोध में पूर्ण सामर्थ्य का होना आवश्यक है। तभी उसकी उपादेयता होती है। इसके लिये क्रोध गुणों से तेजमय बनना चाहिये।

क्रोध किन-किन से न करना चाहिये ?

निर्बलों, असहायों, रोगियों, गुरुजनों, बूढ़ों, बच्चों और स्त्रियों पर क्रोध करने से बचना चाहिये वा क्रोध को पूर्ण नियन्त्रण में रखना चाहिये।

बालि वध के पश्चात् राज्य पा लेने पर सुग्रीव भोग विलास में निमग्न होकर सीता जी की खोज के कार्य को भूल गया। लक्ष्मण उसकी कृतघ्नता का दण्ड देने के लिये किष्किन्धा पुरी में गये। जब सुग्रीव को अपने भृत्यों से यह पता लगा कि लक्ष्मण ने रौद्र रूप धारण कर रखा है तो वह बहुत डरा और लक्ष्मण के सामने जाने का उसका साहस न हुआ। उसने अपनी पत्नी तारा को लक्ष्मण का क्रोध शान्त करने के लिये प्रेरणा की। परन्तु वह स्वयं भी लक्ष्मण के सामने जाते हुए डरी और जब वह जाने से इन्कार करने लगी तो सुग्रीव ने कहा, "डरो मत, लक्ष्मण महान् पुरुष हैं। वे स्त्रियों पर कोप नहीं किया करते।* तारा गई और तारा के सामने होते ही लक्ष्मण का क्रोध शान्त हो गया।

बहुत से व्यक्ति अपने से निर्बल व्यक्तियों पर अपना क्रोध निकाला करते हैं यह उनकी बड़ी भारी भूल है।

सहनशील व्यक्ति के क्रोध से सावधान रहो

सहनशील व्यक्ति को बहुत कम और बहुत देर में क्रोध आता है। ऐसे व्यक्तियों के क्रोध से बहुत सावधान रहना चाहिये क्योंकि वह क्रोध भयंकर होने के साथ २ बहुत देर में शांत होता है। सहनशीलता का दुरुपयोग होने पर वह बड़ी भयावनी आँधी का रूप ग्रहण कर लेती है।

अंग्रेजों ने महारानी लक्ष्मीबाई के दत्तक पुत्र को राज्याधिकार से वंचित किया। महारानी इस अन्याय को सहन कर गई। इतना होने पर

---

* त्वद्दर्शन विशुद्धात्मा न स कोपं करिष्यति।
न हि स्त्रीषु महात्मानः क्वचित्कुर्वन्ति दारुणम्॥
(वाल्मीकि रामायण सुन्दर कांड)

भी डलहौजी ने रानी का राज्य अंग्रेजी राज्य में मिला लिया। इस अत्याचार पर भी वे मौन रहीं। महारानी ने अपने दत्तक पुत्र के उपनयन संस्कार के लिए उसके लिए सुरक्षित ६ लाख रुपये में से एक लाख रुपये की माँग की। दुष्ट अंग्रेज शासकों ने इस राशि को भी देने से इन्कार कर दिया। रानी ने आग्रह किया तो उस राशि को देने की यह शर्त रखी गई कि यदि कोई महाजन अपनी जमानत देने को उद्यत हो तो यह राशि दी जा सकती है। रानी ने अपमान की यह घूंट भी शान्ति पूर्वक पी ली। जमानत दी गई और रानी ने राशि प्राप्त करके अपने प्यारे पुत्र का उपनयन संस्कार किया। रानी उस समय तक भी अपनी सहनशीलता का परिचय देती हुई अंग्रेजों के प्रति निष्ठावान रहीं। परन्तु जब कुचक्रियों के षडयन्त्र और शासकों की अदूरदर्शिता के कारण वह देवी राज विद्रोही घोषित करदी गई जिन्होंने अंग्रेज स्त्री-बच्चों को अपने महल में शरण देकर उनकी प्राण-रक्षा की थी तब उनकी सहन शीलता का बाँध टूटते देर न लगी और उन्होने जो भयंकर रूप धारण किया वह इतिहास के प्रत्येक विद्यार्थी को ज्ञात है। जिन महापुरुषों और वीरांगनाओं ने अंग्रेजी दासता से भारत को मुक्त करने के सत्प्रयत्न एवं अपने रक्त से स्वराज्य भवन की नींव पक्की की, उनमें लक्ष्मी बाई का नाम मूर्द्धन्य स्थान रखता है।

क्रोध को शान्त करने के उपाय

क्रोध का सामना क्रोध से न करना चाहिये। ऐसा करने से क्रोध शान्त होने के स्थान में बढ़ता है घटता नहीं। मीठे और कोमल शब्दों से क्रोध सहज ही शान्त होजाता है। कहावत है कि कोमल वचन पत्थर को भी पिघला देते हैं। विलम्ब क्रोधकी सर्वोत्तम दवाई मानी जाती है। जब मनुष्य स्वयं क्रोध का शिकार होने लगे तो उसे ठंडा पानी पीना चाहिए वा दस तक गिनती गिन लेनी चाहिए। यदि क्रोध चढ़ता जाय तो १०० तक गिनती गिन लेने से क्रोध शान्त होने लगता है। क्रोध से पागल हो जाने पर मनुष्य को यह सोचना चाहिये कि मेरे क्षण भर के क्रोध से मेरा पूरा दिन, पूरा सप्ताह वा इससे अधिक समय अशान्त बना रह सकता है। मेराजीवन क्षणभंगुर है। परमात्मा मेरे इस अवांच्छनीय व्यवहार को देख रहा है जो मुझ से रुष्ट हो जायगा।

उदाहरण

आर्यसमाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द जब गुरु विरजानन्द जी के यहाँ पढ़ते थे तब एक दिन वे किसी अपराध पर दयानन्द से रुष्ट होकर उन्हें पीटने लगे। विद्यार्थी दयानन्द ने गुरुदेव के क्रोध को शान्त करने के लिए कहा "महाराज! क्षमा करें, मुझे पीटते हुए आपके हाथों को कष्ट हो रहा होगा।" ज्यों हीं दयानन्द के मुख से ये शब्द निकले त्यों ही गुरुदेव का क्रोध पानी २ होगया।

नादिरशाह की क्रोधाग्नि में देहली जल रही थी। बड़े भयंकर रूप में कत्ले आम जारी था। हताहतों के करुणक्रन्दन और चीत्कार से आकाश भी रो रहा था। नादिर शाह के खूनी सैनिक लोगों के रक्त से दिल खोलकर फाग खेल रहे थे। निस्सहाय मुगल सम्राट मुहम्मद शाह रनवास में पड़ा हुआ अपनी बेबसी का मरसिया पढ़ रहा था। नादिरशाह के हुक्म पर वह बाहर लाया गया और सिर झुकाकर नादिर शाह के पास बैठा। हरमसरा में विलास करने वाले बादशाह को नादिरशाह की अविनय पूर्ण बातें सुनने को मिलीं, पर मजाल न थी कि जुबान खोल सके। उसे अपनी ही जान के लाले पड़े थे। पीड़ित प्रजा की रक्षा कौन करे। वह सोचता था मेरे मुंह से कुछ निकले और वह मुझी को डाट बैठे तो ?

अन्त को जब सेना की पैशाचिक क्रूरता पराकाष्ठा को पहुँच गई। बादशाह के वजीर से न

(शेष पृष्ठ ४६६ पर)

गाय और संगीत

[लेखक श्री आशु कुमार]

संगीत सौम्य शान्तिप्रद तथा आह्लादक कला होने के कारण ज्ञानतंतु के ऊपर मधुर और शीतल प्रभाव उत्पन्न करता है। इसलिए वह रोते हुए बालक से लेकर फणिधर नाग तक सब पर एक सा चमत्कारिक प्रभाव डालता है। अमेरिका जैसे देशों में विद्यार्थी गृहों के कलह तक का समाधान संगीत के द्वारा होता है। किसी प्रकार का झगड़ा शुरु हुआ कि संगीत का क्रम चालू हो जाता है इस के बाद भी यदि कुछ झगड़ा बच रहता है तो वह सुनकर मिटा दिया जाता है। अधिकतर तो संगीत की सुरीली ध्वनि से ही क्लेश और झगड़े फसाद का वातावरण बदल जाता है और सब सगे भाई से भी बढ़कर भाई समझकर एक दूसरे को आलिङ्गन करने लगते हैं।

हृदय की मृदुता के अनुसार संगीत का अधिक प्रभाव होता है और कठोरता कर्कशता के अनुसार कम होता है। जिसका जैसा ऊर्मि तन्त्र मज्जातन्त्र होता है असर भी वैसा ही होता है। विज्ञान के द्वारा ऐसा जाना गया है कि संगीत का असर कीट पतंग से लेकर मनुष्य तक तथा बनस्पति पुष्प जड़ धातु पत्थर आदि तक पर पड़ता है। बारीकी और मार्मिकता से खोजने पर तो विश्व के तमाम जड़ चेतन तत्वों में ताल बद्धता और संगीत की संगति की ही ध्वनि चलती प्रतीत होगी। एक कटोरी में जल भरा हो और भजन की धुन चलती हो तो संगीत के द्वारा आन्दोलित वायु से उस पानी में ऐसेटिक एसिड का असर आजाता है। तारा मण्डल आकाश की संध्या और पृथ्वी आदि ग्रह मंडलों के परिभ्रमण में तो स्वरों की सजावट होती ही है समाज, व्यापार, राज्य और अर्थ नीति का भी तालक्रम होता है। जब इस क्रम में बाधा पड़ती है तभी अशान्ति उत्पन्न होती है।

प्रत्येक वस्तु और धन्वे की नस को परखना उसके मर्म को समझना और उसकी हृदय वीणा के तारको पकड़ना ही उसकी साधना और सफलता की कुंजी है। अहीर गडरियों की बांसुरी, किसानों का उच्च स्वर से भजन गान या दोहे सोरठे की रंग-रेल ये सभी उनके धंधे जीवन और वातावरण के रस और स्वरों के परदे हैं।

गाय जैसे कोमल, चपल और चौकन्ने प्राणी में दुग्ध प्रधान ऊर्मि प्रधान प्रकृति में रहने वाले ज्ञानतंतु सितार तथा वायलिन के तार से उत्पन्न होने वाली झन झनाहट के समान तीव्र और वेगवान होते हैं। दूध देने की पेन्हाने वाली (Sympathy) क्रिया संवेदन तन्तु (Sympathetic nerve) के आधीन होती है इसलिए यदि गाय प्रसन्न हो या प्रसन्न की जा सके तो उसके दूध भी अधिक आता तथा उस दूध में अधिक स्वाद और मिठास होता है। पर यदि वह अप्रसन्न हो, चिढ़ी हो, हैरान या दुखी हो तो दूध नहीं देती है। उसे चढ़ा जाती है। यह बहुतों के अनुभव की बात है।

जर्मनी, अमेरिका आदि देशों में कितने ही पशु वैज्ञानिकों ने गोशाला में खासकर दूध दुहने के समय संगीत प्रारम्भ करके उसकी स्वर लहरी से दूध की कुल उपज में छः से सात भाग की वृद्धि की है। इसके विपरीत पशु को चिढ़ाकर दूध खो बैठने के प्रमाण तो घर २ मिलते हैं। इस प्रकार संगीत का अच्छा और बुरा-भावात्मक और ऋणात्मक प्रभाव देखा जाता है। अपने यहां भी प्रयोग करके देखना चाहिए।

महर्षि के जीवन के सम्बन्ध में कुछ विवाद-ग्रस्त विषय

[श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति]

आर्य समाज का स्थापना दिवस

महर्षि दयानन्द के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले जो विषय अभी तक अनिश्चित हैं उनमें से सब से अधिक विवाद-ग्रस्त विषय आर्यसमाज के स्थापना-दिवस का है।

इस विषय में तीन मत हैं।

(१) आर्यसमाज की सबसे पहली स्थापना राजकोट में हुई, बम्बई में नहीं।

(२) पहले आर्यसमाज की स्थापना बम्बई में चैत्र शुक्ला ५, सम्वत १९३१ (१० अप्रैल १८७५ ई०) में हुई।

(३) बम्बई में पहले आर्य समाज की स्थापना चैत्र शुदी १, सम्वत् १९३१ (७ अप्रैल १८७५ ई०) बुधवार के दिन हुई।

इन तीनों में से पहले मत का आधार बहुत निर्बल है। बड़ौदा के श्री पं० चन्द्रमणि जी ने साप्ताहिक 'आर्य मित्र' में लिखा था कि उन्हें बम्बई से भी पहले राजकोट में आर्यसमाज की स्थापना होने का प्रमाण मिला है। प्रमाण यह था कि काठियावाड़ के धर्मोपदेशक पं० श्रीकृष्ण शर्मा ने उन्हें राजकोट में आर्यसमाज की स्थापना की बाबत बतलाया था। श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने पं० श्रीकृष्ण जी से तथा राजकोट के आर्य लोगों से पूछताछ की तो वह इस परिणाम पर पहुँचे कि राजकोट में विधि पूर्वक आर्यसमाज की स्थापना नहीं हुई थी। उनका यह भी मत है कि जब महर्षि राजकोट में गये थे तब तक उनके मन में नियमित रूप से आर्यसमाज की स्थापना का

पृष्ठ ४६४ का शेष)

रहा गया। वह जान पर खेलकर नादिरशाह के सामने पहुँचा और उसने यह शेर पढ़ा :—

कसे न मांद कि दीगर बतेगे नाज कुशी।
मगर कि जिंदा कुनी खल्क रा व बाज कुशी॥

अर्थात् तेरी निगाहों की तलवार से कोई नहीं बचा। अब यही उपाय है कि मुर्दों को फिर जिला कर कत्ल कर।

शेर ने दिल पर चोट की। पत्थर में भी सुराख होते हैं। पहाड़ों में भी हरियाली होती है। पाषाण हृदयों में भी रस होता है। इस शेर ने पत्थर को पिघला दिया। नादिर शाह ने सेनापति को बुला कर कत्ले आम बंद करने का हुक्म दिया। एक दम तलवारें म्यान में चली गई। कातिलों के, उठे हुए हाथ उठे ही रह गये। जो सिपाही जहा था वहीं बुत बन गया।

उपसंहार

संसार [लोगों के दिलों पर शान्ति और अक्रोध का शासन हुआ करता है। शान्त और चरित्रवान् व्यक्तियों को ही सुख और आदर प्राप्त होता है। वे व्यक्ति धन्य हैं जो क्रोध को रोक कर शान्ति का प्रसाद देते हैं। ऐसे ही महाभागों को महात्माओं की पदवी मिलती है। मानव जीवन की सफलता और सुन्दरता समाज में भय और आतंक व्याप्त करने में नहीं अपितु शान्ति और आनन्द की धारा प्रवाहित करने में निहित है। जो व्यक्ति संसार में भय आतंक और अत्याचार व्याप्त करते हैं लोग उनके नाम पर थूकते और वे अपने ही पाप से विनष्ट हो जाते हैं।

— ———

विचार भी दृढ़ नहीं हुआ था। स्वामी जी राजकोट में १८७५ ई० के दिसम्बर मास में गये थे। उस समय तक आर्यसमाज के कोई नियमोपनियम भी नहीं बने थे। सम्भव है राजकोट की यात्रा में स्वामी जी की वहां के आर्य सज्जनों से आर्य समाज की स्थापना के सम्बन्ध में बात चीत हुई हो। इससे अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता।

दूसरे मत का सूत्रपात आर्य-पथिक पं० लेखराम जी द्वारा संगृहीत महर्षि के जीवन चरित से हुआ। उन्होंने बम्बई जाकर जो छानबीन की, उससे वह इस परिणाम पर पहुँचे कि बम्बई के गिरगांव मुहल्ले में सायंकाल के समय डा० माणिकचन्द जी की वाटिका में महर्षि दयानन्द की उपस्थिति में चैत्र शुक्ला ५, सम्वत् १९३१ को नियमपूर्वक आर्यसमाज स्थापित हुआ और उसी दिन समाज के अधिवेशन में आर्यसमाज के नियम बनाये गये। पं० देवेन्द्रनाथ मुकर्जी ने भी आर्य समाज की स्थापना की इसी तिथि को स्वीकार किया। श्री रामविलास शारदा तथा अन्य अनेक लेखक और विद्वान् अपने लेखों और व्याख्यानों में इसी तिथि की घोषणा करते रहे। पहले सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने पर्वों की जो सूची प्रकाशित की, उसमें चैत्र सुदी ५ को ही स्थापना दिवस के रूप में स्वीकार किया।

सन् १९३९ में बम्बई प्रान्त की ओर से इस मत के सम्बन्ध में आपत्ति उठाई गई। आपत्ति का पोषण बड़ौदा के कुमार महा सभा आर्य कुमार आश्रम के उपमन्त्री श्री चन्द्रमणि जी के उस पत्र से प्रारंभ हुआ प्रतीत होता है जो उन्होंने सन् १९३९ के नवम्बर मास में सार्वदेशिक सभा के मन्त्री के नाम लिखा। वह पत्र श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के एक नोट के उत्तर में था। पत्र में श्री चन्द्रमणि जी ने लिखा था:

"बड़ौदे में २०० वर्ष का गुजराती पंचांग मैंने देखा। इसके अनुसार ७वीं अप्रैल १८७५ के दिन विक्रम संवत् १९३१ चैत्र शुक्ला प्रतिपदा की तिथि आती है।

बम्बई समाज का शिला लेख निम्न प्रकार से है:—

संवत् १९३२ ई० सन् १८७५
चैत्र शुक्ल १ स्थापित हुआ ता० ७ अप्रैल
बुधवार

इस शिलालेख में संवत् १९३२ का उल्लेख है। गुर्जर और बम्बई प्रान्त में नवीन वर्ष कार्तिक प्रतिपदा से प्रारम्भ होता है और उत्तरीय भारत में वर्ष का प्रारम्भ चैत्र प्रतिपदा से होता है। तदनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि गुर्जर प्रान्त में संवत् १९३१ की चैत्र शुक्ला प्रतिपदा उत्तरीय भारत में संवत् १९३२ की चैत्र शुक्ला प्रतिपदा होगी।

पत्र के अन्त में श्री चन्द्रमणि जी ने यह स्पष्टीकरण लिखा है कि शिलालेख में संवत् १९३२ का उल्लेख उत्तरीय भारत की पद्धति के अनुसार है। उत्तरीय भारत में नव वर्ष चैत्र शुक्ला १ से प्रारम्भ होता है। गुजराती पंचांग के अनुसार आर्यसमाज की स्थापना संवत् १९३१ में हुई।

श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के जिस नोट का निर्देश मैंने किया है वह निम्नलिखित है:—

"पर्व पद्धति में आर्यसमाज का स्थापना दिवस चैत्र शुक्ला पंचमी है और मुम्बई आर्यसमाज में जो शिला ऋषि के समय की है उसमें स्थापना चैत्र शुक्ला प्रतिपदा लिखी है।

यह विषय अन्तरंग सभा में रखकर निश्चय किया जाय कि भविष्य में कौनसी तिथि मानी जाय।

यह विषय प्रान्तीय सभाओं को लिखकर उन से सम्मति मंगवाई जाय।"

(हस्ताक्षर)
४—१२-३९

ऐतिहासिक अन्वेषण में शिलालेख का बहुत बड़ा महत्व माना जाता है। श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी उन दिनों सार्वदेशिक सभा के कार्यकर्ता, प्रधान और हैदराबाद सत्याग्रह के सर्वाधिकारी थे। शिला लेख के आधार पर दी गई उनकी सम्मति को अन्तिम प्रमाण मानकर सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा ने, २७ जनवरी १९४० ई० के अधिवेशन में निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकार किया :—

"नोटिस का विषय सं० ४ आर्य समाज स्थापना दिवस तथा वीर तृतीया की ठीक ठीक तिथियों के निर्धारण का विषय पेश हुआ। प्रगट किया गया कि इस समय आर्यसमाज स्थापना दिवस चैत्र शुक्ल ५ को मनाया जाता है। परन्तु बम्बई के आर्यसमाज के शिलालेख पर स्थापना तिथि चैत्र शुक्ल १ अङ्कित है, तथावत प्रमाणित है। इसलिए स्थापना तिथि चैत्र १ रखनी चाहिए। यह भी प्रगट किया गया कि प्रो० ताराचन्द जी गाजरा इस सम्बन्ध में विशेष खोज और छान-बीन कर रहे हैं। निश्चय हुआ कि सम्प्रति यह विषय स्थगित किया जाय और पूरी २ छानबीन होने के बाद यह विषय पुनः पेश किया जाय।"

इस प्रस्ताव के अनुसार १९४० से आर्य समाज का स्थापना दिवस चैत्र सुदी प्रतिपदा के दिन ही मनाया जाता है।

जिन दिनों सार्वदेशिक सभा आर्य समाज की स्थापना के विषय में अन्तिम निश्चय करने के लिए लोकमत का संग्रह कर रही थी उन दिनों कई महानुभावों की ओर से यह सम्मति भेजी गई कि आर्य समाज की स्थापना चैत्र शुक्ला ५ को ही हुई थी। उनमें से प्रथम महानुभाव सिन्ध के आर्य नेता श्री ताराचन्द गाजरा थे। गाजरा जी ने सार्वदेशिक सभा के मन्त्री को निम्नलिखित पत्र भेजा था :—

आर्य प्रतिनिधि सभा सिन्ध
१०-१९-५४

श्रीमन्नमस्ते !

इस समय आर्यसमाज स्थापना दिवस के सम्बन्ध में यह विचार चल रहा है कि स्थापना चैत्र शुदी एकम पर हुई थी अथवा चैत्र शुदी पंचमी पर। मेरा यह निश्चित मत है कि स्थापना चैत्र शुदी पंचमी शनिवार बराबर १० अप्रैल १८७५ पर हुई थी। और यही तिथि धर्मवीर पं० लेखराम जी तथा मुखोपाध्याय देवेन्द्र ने अपनी पुस्तकों में जतलाई है। यह बराबर है कि समाज के पत्थर पर चैत्र शुदी एकम् लिखी हुई है पर यह पत्थर समाज की स्थापना से आठ वर्ष पीछे बना था। जब यह सवाल एकम् तथा पंचम का सार्वदेशिक सभा के सामने आया था तब ने बम्बई में आकर "जामए जमशेद" आदि पुराने गुजराती पत्रों के फाइल देखे थे और वहाँ से उद्धरण निकालकर सार्वदेशिक सभा के पास भेजे थे। उनमें स्पष्ट लिखा हुआ था कि पंचमी के दिन समाज की गिरगाम में स्थापना होगी। मुझे आशा है वे प्रमाण सभा के कार्यालय में मौजूद होंगे। यदि हों तो उनकी प्रतियां कृपाकर मुझे भिजवा दें। इस सम्बन्ध में मैं अधिक जांच कर रहा हूँ।"

भवदीय
(हस्ताक्षर)

इस प्रसंग का दूसरा पत्र आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् पं० महेशप्रसाद जी का था। आपने अपने एक पत्र में सार्वदेशिक सभा के मन्त्री को लिखा था कि आर्य समाज की स्थापना बम्बई में चैत्र शुदी ५ संवत् १९३२ को हुई थी। चैत्र शुक्ला १ को मनाना ठीक नहीं।

तीसरे विद्वान् जिन्होंने चैत्र शुक्ला १ को स्थापना दिवस मनाने का विरोध किया श्री युधिष्ठिर मीमांसक थे। मीमांसक जी ने अजमेर से सभा मन्त्री को लिखा था:—"आपका पत्र सं०

१९७६ ता० १४-९-४५ का प्राप्त हुआ। आपने लिखा है कि चैत्र शुक्ला १ आर्य समाज स्थापना दिवस बम्बई समाज में लगे शिला लेख के अनुसार है तथा तात्कालिक पत्रों में भी यही तिथि छपी थी। कृपा करके लिखें कि किस पत्र में किस तारीख में यह उल्लेख है। क्योंकि यह एक ऐतिहासिक घटना है। इसमें किंचिन्मात्र विपर्याय न होना चाहिये। तथा सब बातें रिकार्ड में रहनी चाहियें। मुझे एक पुस्तक में लिखने के लिए इसकी आवश्यकता है। स्वामी जी ने चैत्र शुक्ला ६ रविवार सं० १९३१ को बम्बई से गोपालराव हरिदेशमुख को लिखा था—"आगे बम्बई में चैत्र शुदी ५ शनिवार के दिन सायंकाल के साढ़े पाँच बजे आर्यसमाज का आनन्द पूर्वक आरम्भ हुआ... ...।" देखो स्वामी दयानन्द के पत्र व विज्ञापन भा० ३ पृ० १ आर्य प्रादेशिक सभा लाहौर द्वारा प्रकाशित। आप इस पर सम्यक विचार करके लिखें। उत्तर अवश्य दें।"

यह तीन निर्देश मैंने यह प्रगट करने के लिए दिये हैं कि स्थापना दिवस की तिथि के सम्बन्ध में प्रारम्भ से ही मतभेद चला आता है। सार्वदेशिक की अन्तरंग सभा ने जब यह निश्चय किया कि स्थापना दिवस चैत्र शुक्ला ५ के स्थान पर चैत्र शुक्ला १ के दिन मनाया जाय तब उसके सामने या तो वह सब युक्तियां जो पीछे से चैत्र शुक्ला ५ के पक्ष में दी गईं, लाई ही नहीं गई थीं अथवा सभा ने बम्बई समाज के शिलालेख को उन युक्तियों से अधिक प्रबल समझा।

स्थापना दिवस सम्बन्धी वाद विवाद और पत्र व्यवहार तक ही सीमित न रहा। धीरे-धीरे वह समाचार पत्रों में आ गया। शुक्ला ५ के पक्ष में गाजरा जी और मीमांसक जी ने खोज और आन्दोलन को जारी रखा। और शुक्ला १ का समर्थन आर्यसमाज बम्बई की ओर से होता रहा और अब तक भी हो रहा है। अन्तिम निर्णय पर पहुँचने के लिये यह आवश्यक प्रतीत होता है कि दोनों ओर की युक्तियों पर ऐतिहासिक दृष्टि से गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाय।

चैत्र शुक्ला १ के पक्ष में युक्तियां

विवेचन से पूर्व यह आवश्यक है कि संक्षेप से दोनों पक्षों की युक्तियों का सार अलग-अलग दे दिया जाय। आर्यसमाज बम्बई के 'आर्यज्योति' नामक साप्ताहिक पत्र के २३-९-४० के अंक में आर्य समाज स्थापना दिवस के शीर्षक से एक लेख प्रकाशित हुआ था। उसे हम बम्बई आर्यसमाज की सम्मति का प्रतिबिम्ब मान सकते हैं। उसमें अपने मत की पुष्टि में चार युक्तियाँ दी गई हैं।

(१) बम्बई आर्यसमाज के १५-२० साल के हस्तलिखित वार्षिक विवरणों में संवत् १९३१ चैत्र शुक्ला १ बुधवार के दिन आर्य समाज की स्थापना का उल्लेख है।

(२) बम्बई आर्य समाज (काकड़वाड़ी) पर निम्नलिखित शिलालेख लगा हुआ है :—

आर्य समाज मुंबई

परमेश्व राय नमः

संवत् १९३१, स्थापित हुआ इं० सन् १८७५
चैत्र शुक्ल १ ता० ७ अप्रैल
बुधवार

(३) इस मुख्य शिलालेख के अतिरिक्त एक और गुजराती लेख भी विद्यमान है जिसका हिन्दी रूपान्तर यह है :—

आर्य्य स्थान

श्रीमत्पण्डित दयानन्द सरस्वती स्वामी जी के सदोपदेश से सज्जन आर्य वैदिक जनों ने वेदानुकूल व्याख्यान और पठन पाठनादि कर्म्म करने के लिए यह स्थान बनाकर आर्यसमाज अधिकार में रक्खा है।

मिती फाल्गुन सुदी १ शनि० सं० १९३८

(४) ऋषि के अनन्य भक्त बाबू देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय द्वारा बंगला में लिखित दयानन्द चरित्र का अनुवाद स्वर्गीय बाबू घासीराम जी एम. ए. एल. एल बी. ने किया है। उसके पृष्ठ २४६ में लिखा है—"इस प्रकार चैत्र शुदी प्रतिपदा संवत् १९३१ को बम्बई नगर में आर्य समाज ने जन्म ग्रहण किया।"

यह चारों युक्तियाँ वस्तुतः एक ही युक्ति के रूपान्तर हैं। और वह युक्ति है आर्य समाज मन्दिर में लगा हुआ शिला लेख। बम्बई समाजकी रिपोर्टों में जो निर्देश दिये गये हैं और श्री देवेन्द्र नाथ जी ने जो सम्मति दी है उन दोनों का आधार शिलालेख ही प्रतीत होता है।

चैत्र शुक्ला ५ के पक्ष में युक्तियां

पं० लेखराम जी द्वारा लिखित जीवन चरित में आर्य समाज की स्थापना का दिवस चैत्र शुक्ला ५, १९३१ वि० को बताया गया है। इसके समर्थन में निम्नलिखित युक्तियां दी जाती हैं:—

(१) श्री मीमांसक जी ने अपने पत्र में महर्षि दयानन्द के गोपालराव हरिदेश मुख को लिखे गये पत्र का निम्नलिखित भाग उद्धृत किया है :—

"आगे बम्बई में चैत्र शुदी ५ शनिवार के दिन सायंकाल साढ़े पाँच बजे आर्य समाज का आनन्द पूर्वक आरम्भ हुआ ....।" इस पत्र पर टिप्पणी करते हुए मीमांसक जी ने लिखा है— यही दिन (चैत्र शुक्ला ५) और समय ऋषि दयानन्द के चैत्र शुक्ला ६ रविवार के पत्र में लिखा है। चैत्र शुक्ला १ को शनिवार नहीं था बुधवार था।" इसी प्रकार स्थापना के दूसरे दिन लिखे हुए महर्षि के पत्र से सिद्ध होता है कि स्थापना शुक्ला ५ शनिवार के दिन हुई। इसी सन के अनुसार वह १० अप्रैल १८७५ होता है।

(२) १० अप्रैल की पुष्टि प्रो० ताराचन्द गाजरा ने प्रयत्न से अन्वेषण किये हुए बम्बई के उस समय के दो दैनिक समाचार पत्रों से की है। टाइम्स आफ इण्डिया के १० अप्रैल १८७५ ईस्वी शनिवार के प्रभात संकरण के पृष्ठ ३, कालम ३ पर निम्न लिखित सूचना छपी है।

"A meetting will be held at 5-30 p.m. today in the Giegrm back road, in the bangalow belonging to Dr. Maneck ji Aderjer, when Pandit Dayanand Sarswati Swami will perform the ceremonies for the formation of Arya Samaj. All well wishers of the cause are invited to attend."

प्रो० ताराचन्द जी ने दैनिक "जमाए जमशेद" और बोम्बे गजट के स्तम्भों से इसी आशय की सूचना उद्धृत की है। इन सूचनाओं से विदित होता है कि आर्य समाज की स्थापना स्वामी जी की उपस्थिति में १० अप्रैल १८७५ ईस्वी के सायंकाल साढ़े पांच बजे विधि पूर्वक होने वाली थी। इससे स्पष्ट है कि विधिपूर्वक स्थापना उससे चार दिन पूर्व नहीं हुई। यदि हो गई होती तो समाचार पत्रों में शनिवार के सायंकाल को होने वाले आयोजन की सूचना न निकलती।

(३) महर्षि की मृत्यु के पश्चात् जीवन चरित की सामग्री के संग्रह के लिए जो व्यक्ति सब से पहले बम्बई गये वह पं० लेखराम जी थे। उस समय महर्षि की जीवन सम्बन्धी घटनाएँ ताजा थीं। उन्हें बम्बई में जो सूचनाएँ मिलीं वह उन लोगों से प्राप्त हुई होंगी जो स्थापना के समय विद्यमान थे। तभी तो पंडित जी ने स्थापना का दिवस सर्वथा निश्चयपूर्वक लिखा है।

(४) माघ २०१० वि० के 'वेद वाणी' के अंक में श्री मीमांसक जी ने अपने पक्ष की पुष्टि में एक और प्रमाण दिया है। आप लिखते हैं:—

"सन् १९५२ के अक्टूबर मास के अन्त में

बम्बई निवासी श्री सेठ शूरजी वल्लभदास जी के सुपुत्रों द्वारा आयोजित चतुर्वेद ब्रह्मपारायण यज्ञ में मैं भी निमन्त्रित होकर गया। उस समय आर्य-समाज गिरगाँव में मेरे मित्र श्री पं० पद्मदत्त जी रहते थे। उनसे मैंने आर्य समाज स्थापना दिवस के अनुसन्धान के लिए आर्य समाज का पुराना रिकार्ड देखने की अभिलाषा प्रकट की। बहुत अनुसन्धान करके उन्होंने दो दिन पश्चात् एक अत्यन्त छोटी पुस्तिका मुझे दिखाई। उस पुस्तिका में आर्य समाज बम्बई के प्रथम वर्ष के प्रथम ११ मासों की संक्षिप्त कार्यवाही गुजराती भाषा में मुद्रित है।

यह लघु पुस्तिका २०×३० बत्तीस पेजी आकार के ३२ पृष्ठों में छपी है। (ऊपर हरे रंग का टाइटल पेज पृथक है) बाह्य टाइटल पेज के पश्चात् इस कार्यवाही के प्रथम पृष्ठ पर आभ्यन्तरिक (अन्दरूनी) टाइटल छपा है। द्वितीय पृष्ठ खाली है। तृतीय पृष्ठ पर स्थूल अक्षरों में "श्री आर्यसमाज स्थापना सं० १९३१ ना (गुजराती पंचांग के अनुसार) चैत्र शुक्ला ५ शनिवार स्पष्ट रूप से छपा है। (शुद्ध अर्थात् शुक्ल)।"

आर्य समाज स्थापना दिवस के सम्बन्ध में यह सब से पुराना मुद्रित उपलब्ध रिकार्ड है और वह भी उसी आर्य समाज द्वारा प्रकाशित होने से अत्यन्त प्रामाणिक है।"

इसी प्रकरण में चैत्र शुक्ला १ के समर्थकों की ओर से आर्यसमाज के ट्रस्ट डीड का प्रमाण भी उपस्थित किया गया था। ट्रस्ट डीड के गुजराती तथा अंग्रेजी में दी गई तिथियों और दिनों में बहुत से परस्पर विरोध दिखाये गये हैं। बम्बई आर्यसमाज के सार्वदेशिक सभा को भेजे गये एक स्पष्टीकरण में भी उन परस्पर विरोधों को स्वीकार किया गया है। उनमें वार और तिथि परस्पर मेल नहीं खाते। उस कारण ऐतिहासिक दृष्टि से विश्वास योग्य न समझ उनकी चर्चा मैंने छोड़ दी है।

जो महानुभाव चैत्र शुक्ला ५ के समर्थक हैं उन्होंने शिलालेख की अप्रामाणिकता को सिद्ध करने के लिए अनेक युक्तियाँ दी हैं और उसे काल्पनिक कहा है। उनका कथन है कि शिलालेख आर्यसमाज की स्थापना के छः वर्ष पश्चात् निर्मित हुआ, और उक्त शिलालेख भवन निर्माण के साथ ही लगाया गया अथवा पीछे से इसका भी कोई प्रमाण नहीं। शिलालेख सम्बन्धी यह वाद विवाद एक मौलिक भूल से उत्पन्न हुआ है। वह मौलिक भूल यह है कि उस शिला लेख को उन ऐतिहासिक शिला लेखों के समान महत्व दिया गया है जिनके आधार पर प्रायः पुराना इतिहास बनाया जाता है। यह निर्विवाद है कि जिस समय प्रथम आर्यसमाज की स्थापना हुई उस समय आर्यसमाज का भवन विद्यमान नहीं था। लगभग छः वर्षों के पश्चात् हौल तैयार हो जाने पर उस पर एक पत्थर लगाया गया जिस पर आर्य समाज मन्दिर की आधार शिला रखने की तिथि अंकित की गई। सम्भव है, विधिपूर्वक धूमधाम से आधार शिला न रखी गई हो। परन्तु प्रतीत होता है कि स्थान के निश्चित हो जाने पर आर्य समाज और आर्य-समाज मन्दिर के उस स्थान पर बनाये जाने का निश्चय महर्षि ने चैत्र शुक्ला १ को कर दिया था। इस प्रकार आर्यसमाज की तथा आर्यसमाज मन्दिर की मानसिक स्थापना का वही दिन है जो समाज मन्दिर के शिलालेख में दिया गया है। वह शिला-लेख काल्पनिक नहीं है। उसमें दी गई वास्तविक है, भेद केवल इतना है कि वह तिथि आर्य समाज के विधिपूर्वक आरम्भ होने की न होकर योजना रूप में आरम्भ होने की है।

प्रतीत होता है कि योजना तैयार हो जाने पर उसके विधिपूर्वक आरम्भ करने का निश्चय किया गया और उसके लिए चैत्र शुक्ला ५ शनिवार का दिन नियत किया गया और उसकी सूचना

(शेष पृष्ठ ५०७ पर)

अमेरिकन राजदूत से भेंट

[ले०—श्री शिवचन्द्र जी, आजीवन सदस्य, भूतपूर्व मन्त्री, सार्वदेशिक आर्य रक्षा समिति तथा भूतपूर्व उपमन्त्री, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा]

जब से मेरा सम्बन्ध सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा से हुआ है, इन गत २३ वर्षों में मुझे प्रशंसित सभा की ओर से कई विदेशी राजदूतों, विदेशी राजनीतिज्ञों, विदेशी पत्रकारों तथा विदेशी यात्रियों से समय २ पर भेंट कर वैदिक धर्म, महर्षि दयानन्द तथा आर्य समाज के सम्बन्ध में बातचीत करने का अवसर मिला है। परन्तु इस बार अक्तूबर मास में जो मैंने अमेरिका के वर्तमान नये राजदूत श्री जान शर्मन कूपर से भेंट कर बातचीत की, वह इससे पूर्व विदेशियों के साथ हुई भेंटों के मुकाबले में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण थी।

कुछ मास से सभा के माननीय, विद्वान् तथा सुयोग्य प्रधान श्री पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति ने सभा सम्बन्धी कुछेक अन्य महत्वपूर्ण कार्यों के साथ २ विदेशी राजदूतों से मिलकर सभा की ओर से उन्हें वैदिक धर्म, महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाज विषयक अंग्रेजी साहित्य भेंट कर, उनके अन्दर वार्तालाप द्वारा उक्त विषयक रुचि उत्पन्न कराना भी नियमित रूप से मेरे सुपुर्द किया।

सर्व प्रथम इस प्रकार की भेंट का करना अमेरिका के राजदूत के साथ ही उचित समझा। तदनुसार सभा के माननीय प्रधान जी की ओर से अमेरिकन राजदूत श्री जान शर्मन कूपर को निम्न पत्र भेजा गया :—

Dear Sir,

"I hope, in addition to your diplomatic obligations and their functioning, you will also be feeling interested in gaining accurate knowledge of the important movements and institutious working in the philosophical, cultural, religious, educational, political and social spheres in this country.

"I am not sure, whether you have yet had an opportunity of studying the movement of Arya Samaj which has during the last seventy years profoundly revolutionised the outlook of the people in almost all branches of life in this country.

"The Aryasamaj was founded by the great Maharshi Swami Daya Nand Saraswati, about whnm the famous French savant the late Romain Rolland wrote :—

"This man with the nature of a lion is one of those, whome Europe is too apt to forget when she judges India, but whom she will probably be forced to remember to her cost, for he was that rare combination, a thinker of action with a rare genious for leadership"

"The Aryasamaj has an invigorating and unifying message, based on Eternal, Universal and Cosmo-

politan Truths for the entire Humanity hankering after peace, international understanding and spiritual perspection. I hope, you and other members of the staff of your Embassy would be glad to study such a movement, which could be made accessible to you all through literature, personal contacts and meetings.

"I have deputed S. Chandra, Representative and Honorary Arya Missionary of our institution to meet you personally, to present terature and furuish you with all such information that you would like to have from him regarding the movement This will also afford an opportunity of exchanging views on matters of mutual interest

"I shall feel highly obliged if you could very kindly spare some moments of your precious time to Shri S. Chandra I hope to hear soon from you as to when and where he should meet you"

Yours faithfully,
Indra Vidyavachaspati, M.P.
President.

अर्थात्– प्रियवर !

मैं आशा करता हूँ कि आप अपने राजनीतिक कर्तव्यों के अतिरिक्त उन महत्वपूर्ण आन्दोलनों तथा संस्थाओं के सम्बन्ध में, जो इस देश के दार्शनिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, शैक्षणिक, राजनैतिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में कार्य कर रही हैं, ठीक ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा अनुभव करते होंगे।

मुझे निश्चय नही कि जिस आर्य समाज के आन्दोलन ने इस देश के जीवन के लगभग सब क्षेत्रों में गत ७० वर्षों में मनुष्य की विचार धारा में गहरी क्रान्ति की, उसे अध्ययन करने का अब तक आपको अवसर प्राप्त हुआ अथवा नहीं ?

आर्य समाज की स्थापना उन महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने की थी जिनके विषय में फ्रांस के सन्त स्वर्गीय श्री रोमा रोलां ने लिखा था :—

"यह मानवसिंह का स्वभावधारी उनमें से था जिसेयोरुप भुलाना चाहेगा परन्तु जिसे मूल्य चुका कर भी स्मरण रखने के लिए विवश होना पड़ेगा क्योंकि वह विचारक और कर्तव्यपरायणता के साथ साथ नेतृत्व करने की निराली योग्यता का एक निराला सम्मिश्रण था।

समस्त मानवता जो शान्ति, अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना और आत्म दर्शन के लिए तीव्र लालसा रखती है, उसके लिये आर्यसमाज सनातन, सार्वभौम और सर्वतन्त्र सत्यों के आधार पर शक्ति और एकीकरण का सन्देश रखता है। मुझे आशा है आप और आपके दूतावास के स्टाफ के अन्य सदस्य ऐसे आन्दोलन के विषय में अध्ययन कर प्रसन्न होंगे, जिसकी जानकारी आप सब को साहित्य, व्यक्तिगत सम्पर्कों तथा मिलने जुलने के द्वारा कराई जा सकती है।

मैंने अपनी सभा के प्रतिनिधि तथा अवैतनिक आर्य मिशनरी श्री एस. चन्द्र को आपसे मिलकर आपको साहित्य भेंट करने तथा आपको वह सब जानकारी जो आप उनसे आन्दोलन के सम्बन्ध में प्राप्त करना चाहें उसे आपको प्राप्त कराने के लिये नियुक्त किया है। इस प्रकार आपसी लाभ के लिए कई विषयों पर भी विचार विनिमय करने का अवसर मिलेगा !

मैं आपका आभारी हूँगा यदि आप श्री एस०

चन्द्र को अपने मूल्यवान समय में से कुछ क्षण प्रदान कर सकेंगे। मुझे आशा है कि इस विषय में कि वह आपसे कब और कहाँ मिले आप शीघ्र उत्तर देंगे।"

भवदीय—
इन्द्र विद्यावाचस्पति एम० पी०, प्रधान

उनका उत्तर आने पर मैं नियत समय पर अमेरिकन राजदूतावास में पहुँच गया। अपने साथ अंग्रेजी की १७ पुस्तकें राजदूत महोदय को सभा की ओर से भेंट करने के लिये ले गया था। स्वागत करने वाले सज्जन के पास पूर्व से ही मेरा नाम आदि था और उसने राजदूत महोदय के प्राइवेट सेक्रेटरी को मेरे आगमन की सूचना दी। तुरन्त ही एक युवती देवी आई और स्वागत करने वाले ने मेरा उनसे परिचय कराया। यही देवी राजदूत महोदय की प्राइवेट सेक्रेटरी थी। परिचय के समय मैंने इस देवी का अभिवादन "नमस्ते" शब्द से किया तो इस देवी ने भी उत्तर "नमस्ते" शब्द से दिया। देवी मुझे अपने कमरे में ले गई और राजदूत महोदय को मेरे आने की सूचना दी। तुरन्तही राजदूत महोदय अपने कमरेसे बाहर आए और जब देवी ने उनके साथ मेरा परिचय कराया तो इनके साथ भी "नमस्ते" शब्द के साथ ही अभिवादन का आदान प्रदान हुआ। "नमस्ते" शब्द को जब मैंने अमेरिकन राजदूत महोदय के मुख से उत्तर में सुना तो एक सहस्र वर्ष की दासता के पश्चात् स्वतन्त्र भारत की एक सुनहरी रेखा आँखों के सामने खिंच गई।

१७ पुस्तकों का अच्छा खासा बोझ हो गया था चूँकि उनमें "Life of Dayanand" dy Shri Har Vilas Sarda तथा "Philasophy of Dayanand" by Pt. Ganga-Prasad Upadhaya जैसी भारी पुस्तकें भी थी। जैसे ही मैं उन समस्त भारी पुस्तकों को उठा कर श्री राजदूत महोदय के साथ उनके कमरे में जाने लगा तो वह हँस कर कहने लगे कि आप तो मेरे लिये एक लाइब्रेरी ले आये हैं।

हम लोगों के बैठते ही राजदूत महोदय ने मुझ से पूछा कि आपको चाय पसन्द है अथवा काफी और अपने लिये तो उन्होंने कहा कि मुझे तो कोफी पसन्द है। उन्होंने तुरन्त यह भी कहा कि इस विषय में आप किसी प्रकार का संकोच न करें, इनमें से जो भी वस्तु आपको रुचिकर हो, आपके लिए वही मैं मंगाऊँ। चूँकि सभा की ओर से दक्षिण भारत में प्रचारार्थ तीन वर्ष रह कर चाय के मुकाबले में कोफी अधिक रुचिकर प्रतीत होने लगी थी अतः कोफी को ही अधिक रुचिकर बताया।

दोनों के लिए कोफी आ गई और कौफी पीते हुए बात चीत आरम्भ हुई। मैंने पूछा कि क्या आने पूर्व कभी महर्षि दयानन्द और आर्य समाज के विषय में कुछ पढ़ा अथवा सुना था? उन्होंने उत्तर दिया कि नहीं। आगे कहा कि जिस समय आपकी संस्था के प्रधान का पत्र (जिसका पूर्णरूपेण उल्लेख ऊपर हो चुका है) मैंने पढ़ा तो मुझे महर्षि दयानन्द और आर्य समाज के विषय में जानने की लालसा उत्पन्न हुई और मैंने विचार किया कि इनकी चर्चा मिस्टर नेहरू द्वारा लिखित पुस्तक "भारत की खोज" (Discovery of India) में अवश्य होनी चाहिये और उसी समय मैंने यह पुस्तक अपने पुस्तकालय से निकलवाई और उसमें वह प्रकरण तलाश कर पढ़ा। उससे अधिक मुझे इस विषय में कुछ भी ज्ञान नहीं है। यह सब सुनकर आर्य समाज की स्वदेश और विदेश प्रचार व्यवस्था और प्रणाली कितनी त्रुटिपूर्ण अब तक रही है और इससे भी अधिक कि इस विषय में इसके कर्णाधारों ने कितनी अवहेलना की है इस सब का ध्यान कर एक बार पुनः हृदय में तीर जैसा चुभ गया और तीव्र वेदना हुई।

इसके पश्चात् मैंने उन्हें एक-एक कर पुस्तक भेंट करनी आरम्भ की और प्रत्येक पुस्तक के विषय का सार उन्हें बताता गया। इसी बीच में वह किसी - पुस्तक को खोल कर कहीं से पढ़ने भी लगते थे। जब वह अपनी इस क्रिया को बन्द कर देते थे, तो तब ही मैं उन्हें दूसरी पुस्तक भेंट कर उसके विषय को समझाता था। इस प्रकार जब मैं उन्हें समस्त पुस्तकें भेंट कर चुका तो उन्होंने कहा कि यह तो सब ही बहुत उपयोगी पुस्तकें हैं। अब उन्होंने मुझ से "आर्य समाज" शब्द का अर्थ तथा उसके उद्देश्य पूछे। उत्तर में उन्हें बताया गया कि "आर्य" शब्द का अर्थ है—ईश्वर पुत्र, श्रेष्ठ, सदाचारी, प्रगतिशील, सुसंस्कृत आदि तथा सनातन, सार्वभौम और सर्वतन्त्र सत्यों पर आचरण करने वाला मनुष्य और "समाज" का अर्थ है—मनुष्यों का समुदाय। अर्थात उपरोक्त गुणों से परिपूर्ण मनुष्यों के समुदाय को आर्य समाज कहते हैं।

आर्य समाज का उद्देश्य समझाते हुए राजदूत महोदय का ध्यान उसके दश नियमों की ओर आकर्षित किया जोकि उन्होंने आद्योपान्त पढ़े। इन नियमों की सार्वभौमिक व्याख्या समझाते हुए मैंने उन्हें बताया कि इन नियमों के आधार सार रूप से आर्य समाज का उद्देश्य समस्त संसार को श्रेष्ठ तथा एकता की लड़ी में एक विशाल मानव परिवार के रूप में बनाना है। यह सुनकर उन्होंने कहा कि यह तो बहुत शानदार उद्देश्य है।

श्री राजदूत महोदय कहने लगे कि इस देश में "धर्म" शब्द की बहुत चर्चा रहती है। इस "धर्म" शब्द का क्या अर्थ है ? मैंने उनसे कहा कि "धर्म" शब्द का शाब्दिक अर्थ तो कर्तव्य है, परन्तु यह शब्द बहुत व्यापक अर्थों में प्रयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ, प्रत्येक व्यक्ति का स्वयं अपने प्रति कर्तव्य होता है और एक दूसरे के प्रति कुछ कर्तव्य होता है जिसका प्रभाव उस स्वयं पर भी पड़ता है और समाज पर भी। इसी प्रकार समाज और राष्ट्रों का एक दूसरे के प्रति कर्त्तव्य होता है। मनुष्यको कुछ कर्त्तव्य देश, काल और पात्र के अनुसार भी करने पड़ते हैं। यह समयानुसार अथवा परिस्थिति अनुसार धर्म कहा जाता है। जड़ पदार्थों जैसे सूर्य, चन्द्र, आकाश, अग्नि, वायु, जल, पृथ्वी, वनस्पति आदि का भी धर्म होता है।

परन्तु इन धर्मों से पृथक् एक कार्य और भी होता है और वह धर्म सनातन, सार्वभौम और सर्वतन्त्र सत्यों के आधार पर उन कर्तव्यों को कहते हैं जो मनुष्य को उस प्रकार की सांसारिक उन्नति की ओर ले जाते हैं जो सांसारिक उन्नति अन्त में मनुष्य को मोक्ष प्राप्त कराती है जो कि मनुष्य जीवन का अन्तिम ध्येय है और आर्य धर्म तथा आर्य संस्कृति की चरम सीमा है। इस प्रकार के कर्तव्य मनु के बताये हुए धर्म के दश लक्षणों में जो निहित हैं मैंने उन्हें बताये।

इतनी बात चीत होने के पश्चात् उन्होंने घड़ी की ओर देखा और कहने लगे कि यह तो बड़ी ही रुचिकर और मनुष्य जीवन को ऊंचा बनाने वाली बातें हैं, परन्तु मुझे बहुत दुःख है कि इस सुन्दर बात चीत को आज यहीं समाप्त करना पड़ रहा है। चूँकि इसके बाद मुझे कुछ अन्य आवश्यक कार्य करने हैं। पूछने लगे कि क्या आप देहली में ही रहते हैं ? मैंने कहा कि अधिकांश तो यहीं रहता हूँ। कभी २ विशेष कार्यवश देहली से बाहर भी जाना पड़ता है। तो फिर कहने लगे मैं कभी २ आपको शनिवार के दिन आमन्त्रित किया करूंगा और आपसे इस प्रकार के विषयों को एकाँत स्थान में बैठकर समझा करूंगा।"

उठते-उठते उन्होंने मुझ से मेरी आयु पूछी। मैंने उनसे कहा कि मेरी आयु के विषय में आपका अनुमान क्या है तो कहने लगे कि मेरे अनुमान में तो आप ४०-४२ वर्ष के प्रतीत होते हैं। जब मैंने उन्हें अपनी आयु ५२ वर्ष बताई तो

* दक्षिण भारत प्रचार *

इस मास मैसूर में दशहरे के अवसर पर प्रदर्शनी में संलग्न होने के कारण मैसूर ही रहना पड़ा।

सरल प्रचार

प्रदर्शनी १६ अक्टूबर से प्रारम्भ होकर ६ नवम्बर तक रही। इसमें प्रचारार्थ जो दुकान पुस्तकों के विक्रयार्थ मिली वह परमात्मा की कृपा से अच्छे मौके पर थी। इन २२ दिनों में आर्य समाज व महर्षि दयानन्द के नामों से बहुत सी जनता परिचित हो गई।

दुकान में तीन प्रकार की सामग्री जुटाई गई थी।

१—प्रदर्शनात्मक सामग्री—इसमें वेदमन्त्रों के सन्देशप्रद भाग जो सरल और छोटे थे (जैसे केवलाघो भवति केवलादी, ईशा वास्यमिदं सर्वम् आदि) कन्नड़ भाषा में अर्थ सहित लिखवा कर १२ बोर्ड लटकाए गये। दुकान की ओर जनता को आकर्षित करने व आर्य समाज का वेदमूलक सन्देश उन तक संक्षेप में पहुँचाने में इन्होंने बड़ा काम किया। बहुत से मान्य व्यक्ति इन मन्त्रों व अर्थों को लिख कर भी ले गए। इनके अतिरिक्त चारों वेद, शतपथ ब्राह्मण, उपनिषद्—एवं १५ विभिन्न भाषाओं में सत्यार्थप्रकाश भी प्रदर्शनार्थ रखा गया था। अनुभव यह बताता है कि यह प्रदर्शन विभाग अत्यन्त संक्षिप्त रहा फिर भी बड़ा प्रभावोत्पादक रहा। अगले वर्ष आर्थिक-स्थिति अधिक अच्छी होने की अवस्था में आर्य समाज की ओर से एक प्रदर्शन विभाग ही पृथक् खोलने का विचार है जिसमें कर्म व्यवस्था, वर्ण-व्यवस्था, आश्रम-व्यवस्था, मूर्ति पूजा निषेध आदि आर्य सिद्धान्तों को चित्रों द्वारा समझाया गया हो। निश्चित है कि जन सामान्य में प्रचार करने के लिये पुस्तकों की अपेक्षा यही रीति अधिक लाभप्रद है।

२ छोटे छोटे ट्रैक्ट्स—आंग्लभाषा, हिंदी, व कन्नड़ भाषा के छोटे छोटे ट्रैक्ट्स पर्याप्त संख्या में बिके।

३—विक्रयार्थ पुस्तकें - प्रदर्शनी में कुल १२५ के लगभग कन्नड़ सत्यार्थप्रकाश एवं २५ के लगभग हिन्दी एवं आंग्लभाषा व अन्य भाषीय सत्यार्थप्रकाश की बिक्री हुई।

इस प्रचार से जो लाभ हुआ उसको संक्षेप में निम्न रूप में कहा जा सकता है:—

१. आर्य समाज एवं उसके सिद्धान्तों से अपरिचित व्यक्तियों को उनका परिचय मिला।

उन्हें आश्चर्य होने लगा। जब मैंने उनसे उनकी आयु पूछी तो उन्होंने ५४ वर्ष बताई अर्थात् मुझ से २ वर्ष अधिक।

जब मैं उठ खड़ा हुआ तो मुझसे कहने लगे कि आप इन पुस्तकों का मूल्य मुझ से ले लें। मैंने कहा कि यह पुस्तकें तो मैंने आपको अपनी सभा की ओर से भेंट रूप प्रदान की हैं। इनका मूल्य यही है कि आप जब भी इन पुस्तकों के लिये समय निकाल सकें उस समय आप इन पुस्तकों को पढ़ने और समझने की कृपा करें और उसके पश्चात् उन विचारों को अन्यों में प्रसारित करें।

वह मुझे अपने कमरे के बाहर तक छोड़ने के लिए आये और अन्त में हाथ मिलाने के पश्चात् जब मैंने चलते समय उन्हें नमस्ते की तो उन्होंने बड़े ध्यान से मेरे नमस्ते करने के प्रकार को देखा और उन्होंने भी उसी प्रकार उत्तर में नमस्ते की।"

२. वैदिक साहित्य के वास्तविक सन्देश से जनता परिचित हुई।

३. इसी सिलसिले में कई पौराणिक पंडितों व ईसाई पादरियों से भी वाद-विवाद चलता रहा जिसका अच्छा फल रहा।

आर्थिक दृष्टि से भी कोई हानि नहीं उठानी पड़ी। कुल २७८८॥) की सहायता प्राप्त हुई। २०७८=) व्यय हुए। ५०३।-) की बिक्री हुई। इस दक्षिण भाग में परिचय अधिक न होने के कारण बिक्री से होने वाली आय इतनी कम रही। आशा है अगले वर्ष बहुत अच्छी रहेगी। उत्तर भारत से यह बहुत ही अधिक सफल हो सकता है इसमें कोई सन्देह नहीं। मेरठ जैसी समाजें यदि अपने पुरोहितों की क्रियात्मक सहायता से इस काम को करें तो उनको प्रचार में बड़ा लाभ होगा।

अगला कार्य-क्रम

२६ नवम्बर से तुमकूर, चित्रदुर्ग, शिमोगा, हासन व चिकमगलूर के दौरे पर जा रहा हूँ। उस के पश्चात् ७ जनवरी तक मद्रास पहुंच रहा हूं। क्योंकि ४ जनवरी से श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती का भ्रमण मद्रास से प्रारम्भ होगा जो सम्भवतः १ मास तक रहेगा। इसका विस्तृत कार्यक्रम अगले मास प्रकाशित कर दिया जायगा।

प्रतिनिधि प्रकाशन समिति

प्रकाशन का काम अब भी निरन्तर चल रहा है। महर्षि दयानन्द जी के जीवन चरित्र की बहुत मांग रही। अगले वर्ष की प्रदर्शनी पर ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका एवं महर्षि दयानन्द जी के जीवन चरित्र के कन्नड़ भाषा में अनुवाद दक्षिण भारतीय आर्य जनता को भेंट करने का संकल्प है। इन दोनों के प्रकाशन में लगभग १०००० दस हजार रुपये का व्यय होने का अनुमान है जो आशा है परमात्मा की कृपा से आर्य जनता अवश्य एकत्रित कर देगी। दोनों ग्रन्थों का लेखन प्रारम्भ हो चुका है।

सत्यपाल शर्मा स्नातक
दक्षिण भारत
आर्य समाज आर्गेनाइजर

(पृष्ठ ५०१ का शेष)

"टाइम्स आफ इण्डिया" जामये "जमशेद" आदि स्थानीय दैनिक पत्रों में दी गई। महर्षि की उपस्थिति में यज्ञ हुआ, आर्य समाज के नियम स्वीकृत हुए अधिकारियों का चुनाव हुआ। इस प्रकार विधि पूर्वक आर्य समाज की संस्था का जन्म चैत्र शुक्ल ५ के सायंकाल की इस सभा में हुआ जिसका प्रारंभ ५॥ बजे हुआ था। समाज मन्दिर के तय्यार हो जाने पर उसपर जो पट्टिका लगाई गई वह उस दिन की सूचना देने वाली थी जिस दिन ऋषि ने उस स्थान पर समाज मन्दिर बनाने का निर्णय किया था।

सब सग्रहित प्रमाणों के बहुत ध्यान से चिरकाल तक अनुशीलन करने से मुझे जो वस्तुस्थिति मालूम हुई है वह मैंने इस लेख में प्रगट कर दी है। स्थापना दिवस के रूप में किस दिन को मनाया जाय—योजना के दिन को या विधिपूर्वक प्रारंभ के दिन को?—इसका निश्चय तो सार्वदेशिक सभा करेगी। इस लेख द्वारा मेरा यह निवेदन है कि विद्वान् लोग स्थापना दिवस के प्रश्न को यथार्थता के चित्र फलक पर रख कर विचार करें तो संभवतः किसी विशेष मतभेद अथवा वाद विवाद की आवश्यकता नहीं रहेगी। मेरी सम्मति में चैत्रशुक्ला १ आर्य समाज की तथा बम्बई के आर्य समाज मन्दिर की योजना बनने का और चैत्र शुक्ला ५ आर्य समाज की विधिपूर्वक स्थापना का दिन है।

———

आर्य समाज के इतिहास की झलक

[अप्रैल ५५ के अंक से आगे]

परोपकारिणी सभा, अजमेर

उसमें तत्काल भारतवासियों में सर्वाग्रणी राजनीति विशारद समाज सुधारक, अधाश्रित रूढी विध्वसंक, वरिष्ठ, न्यायालय के न्यायाधीश आने वाली पीढी के अग्रणी नेताओं के राजनीतिक गुरु महामान्य महादेव गोविन्द रानाडे महोदय ने प्रस्ताव किया कि दयानन्द आश्रम का निर्माण किया जावे जिसमें पुस्तकालय, अंग्रेजी वैदिक पाठशाला, विक्रयार्थ पुस्तकों का भंडार, अनाथाश्रम, अदभुत वस्तु संग्रहालय, यन्त्रालय और व्याख्यानगृह हों।

इस प्रस्ताव का समर्थन किया महामहोपाध्याय कविराज श्यामल दास जी ने जो सभा से अपने प्रभाव पूर्ण व्यक्तित्व के साथ साथ महाराणा श्री मेवाड़ाधिपति का प्रतिनिधित्व किया करते थे। प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार हुआ और सभा में उपस्थित केवल १६–१७ सदस्यों में से अनेकों ने स्वयं अथवा जिन की ओर से प्रतिनिधि थे उनकी ओर से २४०००) के लगभग चन्दा लिखवा दिया। प्रतिज्ञात चन्दे की सर्व प्रथम छपी सूची से ज्ञात होता है कि उस सूची में १८०००) से कुछ अधिक की राशियां छपवाकर वह सूचि समस्त आर्य समाजों और आर्य पत्रों के पास वृद्धि के लिये भेजी गई थी। इस सत्र उद्योग और उत्साह स्वरूप जो धन एकत्रित हुआ उसका उल्लेख आगे किया जावेगा।

दयानन्द आश्रम निर्माण का निश्चय हो जाने के उपरान्त यह आश्रम कहां बने इस पर दूसरे अधिवेशन में विचार हुआ, राजा श्री जयकृष्ण दास जी ने प्रस्ताव रखा कि दयानन्द आश्रम कहीं पृथक् बनने के स्थान में आगरा के शामिल बनाया जावे। राय मूलराज जी ने सब की सम्मति से वे सब शर्तें विदित की कि जिन पर परोपकारिणी सभा कालेज को अपने हाथ में ले सके, इस पर भले प्रकार विवाद होकर निश्चय हुआ कि गर्वनमेंट उन शर्तों पर उक्त कालेज का सर्वाधिकार सहित परोपकारिणी सभा को संभालने नहीं देवेगी। अतः अधिवेशन में उपस्थित समस्त आर्य समाजों के प्रतिनिधि और परोपकारिणी सभा की ओरसे यही निश्चय रहा कि श्रीमद्दयानन्दाश्रम का जितना धन एकत्र होगा तदानुसार पृथक् ही बनाया जावे।

फिरोजपुर अनाथालयके मन्त्रीजी ने २२-१२-८७ को सुझाव भेजा कि दयानन्द आश्रम के अनाथालय सम्बन्धि योजना पृथक् न रख कर फिरोजपुर अनाथालय को पुष्ट करें। निश्चय यही रहा कि आश्रम का कोई अंग भग न किया जावे।

अन्त में सब सम्मति से यही निश्चय रहा कि आश्रम अजमेर में ही बनाया जाये। यह उल्लेख योग्य है कि इस निश्चय के समय परोपकारिणी सभा के सदस्य में एक भी अजमेर निवासी नहीं था और इस स्थानके निर्णयका मुख्य हेतु स्वामीजी महाराज का अजमेर में स्वर्गवास होना है।

आश्रम निर्माण के हेतु स्वामी जी के परम

भक्तराजाधिराज नाहरसिंह जी वर्मा शाहपुराधीश ने अपना बगीचा जो स्वामी का बाग अथवा ऋषि उद्यान करके प्रसिद्ध है और जिसका मूल्य उन दिनों की कूत के अनुसार १५०००) उदयपुरी था समर्पण किया। सुझाव रखा गया कि आश्रम के समस्त अंगणों के निर्माण के लिये यह बगीचा अपर्याप्त है इसलिये राजाधिराज इस बगीचे का मूल्य नकद प्रदान करादें जिससे अन्यत्र भूमि खरीदी जा सके।

राजाधिराज को यह स्वीकार नहीं था अतः राजाधिराज की बगीचे की भेंट ही स्वीकार की गई और सर्वप्रथम दयानन्द आश्रम की नींव इसी बगीचे में स्थापित की गई और आश्रम के कतिपय अंगों के निमित्त कैसर गंज अजमेर के गोल चक्कर की परिधि में भूमि प्राप्त करने का कार्य राव साहब श्री बहादुर सिंह जी मसूदा अजमेर आर्य समाज के प्रधान लाला पद्म चन्द जी और आर्य समाज अजमेर की अन्तरंग सभा के आधीन हुआ।

सभा का तीसरा अधिवेशन जो पौष शुक्ल १३ और १४ स० १९४४ ता० २८ और दिसम्बर १८८७ को हुआ। वह सभा के इतिहास में महत्व का स्थान रखता है।

इस अधिवेशन में सभा के सदस्यों के अतिरिक्त भारत वर्ष की आर्य समाजों में से जिन की संख्या का अनुमान उस समय १७४ था ४५ आर्य समाजों के ८० के लगभग प्रतिनिधि बाहर पधारे। पंजाब से लाहौर, फिरोजपुर, तरनतारन और मुल्तान के प्रतिनिधि थे, जिन में मुनिवर गुरुदत्त जी विद्यार्थी, महात्मा हंसराज जी, लाला जीवन दास जी, लाला लाजपतराय जी, आर्य पथिक लेखराम जी आदि थे। सब से अधिक प्रतिनिधि वर्तमान की उत्तरप्रदेश की आर्य समाजों से आये थे। राजस्थान की जयपुर, रामगढ़ मसूदा आदि आर्य समाजों के प्रतिनिधि थे। अजमेर आर्यसमाज के तो प्रायः प्रत्येक समासद और अन्य अनेकों सज्जन इस अधिवेशन में उपस्थित थे।

इस अधिवेशन का आकर्षण अन्य कार्यों के अतिरिक्त आश्रम की आधारशिला स्थापित किया जाना था जिसकी सूचना निम्नोक्त मांगलिक विज्ञापन द्वारा पूर्व से ही देदी गई थी।

मांगलिक विज्ञापन

विदित हो कि श्रीमती परोपकारिणी सभा ने अपने प्रथम और द्वितीय अधिवेशनों से सर्वानुमति से यह बात तो निश्चय कर ही दी थी, कि अजमेर में श्री मद्दयानन्द आश्रम बनाया जावे, परन्तु यह स्पष्ट रीति से निश्चय नहीं हुआ था वह वहां कहां और किस प्रकार बनाया जाये इस विषय में कई बार सब सदस्यों की सम्मति ली गई किन्तु वह भी पांच प्रकार की हुई। अतएव यह अत्युत्तम समझा गया कि उन सबको श्रीयुत उपसभा पति जी की सम्मति सहित श्रीमान् १०८ श्री संरक्षक-सभापति जी महोदय की सेवा में निरधारार्थ प्रवेश करके अंतिम निश्चय करालिया जाये कि जिसमें वह सबको मान्य हो। बड़े हर्षकी बात है कि श्री मान् १०८ श्री संरक्षक सभापति जी महोदय ने सर्वसम्मतियों में से दोहन और संगृहीत करके नीचे लिखे प्रमाण अंतिम निश्चय किया है कि जिस की यह सूचना सब के ज्ञातार्थ पालनार्थ और प्रयोग में लाने के लिये प्रकाश की जाती है।

१—श्रीमद्दयानन्द आश्रम शाहपुरे के श्रीयुत राजाधिराज श्रीनाहर सिंह जी वर्मा महाशय के भेंट किये हुये बगीचे में बनाया जावे। उसमें इतने कार्य किये जावें, कि,

(क) स्वामी जी महाराज की अस्थि भस्म यथा योग्य रीति से पधरा कर उस पर कुछ थोड़ा सा सुन्दर कमठाणा, जैसा कि उचित हो करा दिया जावे।

(ख) उससे विद्यार्थी तथा सन्यासियों के रहने

के लिये स्थान बनवा दिये जावें।

(ग) उसमें उपदेशक लोगों के प्राचीन रीति से वेद वेदांगादि पढ़ने के लिये पाठशाला बन जावे।

(घ) अनाथ बालकों के पालन पोषण के लिये अनाथालय बनाया जाये और वह सब आश्रम कहलाये।

(२)-जो कि शाहपुरे का बगीचा अजमेर नगर से कुछ दूर है, अतएव कैसर गंज में (जहां आर्य समाज अजमेर का स्थान है और मसौदे राव सहाब की हवेली है, गोल चक्कर के चारों तरफ जो जमीन के टुकड़े बिकाऊ है वे सब तुरन्त मोल ले लिये जावें उनके तुरन्त खरीदने के लिये मसौदे ठाकुर साहब के नाम मन्त्री आज ही पत्र लिख देवें और रुपया जो वे मंगावे उसकी हुंडी भी मन्त्री मेवाड़ राज की दुकान से लेकर तुरन्त उनके पास भिजवा देवें। इस भूमि में,

(क) स्वामी जी के नाम से वर्तमान समय की प्रणाली के अनुसार बालकों के पढ़ने के लिये पाठशाला,

(ख) यन्त्रालय

(ग) पुस्तक की विक्री का स्थान

(घ) पुस्तकालय

(ङ) व्याख्यानालय

(च) आर्य चिकित्सालय बनाया जावे और यह स्थान उक्त श्रीमद्दयानन्दाश्रम की नगर की शाखा के नाम से प्रसिद्ध हो।

३- उक्त आश्रम और उसकी शाखा की नीव इसी वर्ष जब श्रीमति परोपकारिणी सभा ता० २८ तथा २९ दिसम्बर सन् १८८७ ई को एकत्र हो, तब आनन्द मंगल से रख दी जावे। नीव जिन भद्रपुरुष के हाथ से रखवाई जावेगी उनका नाम दो सप्ताह पहिले विज्ञापन पत्र द्वारा प्रकाशित कर दिया जावेगा।

४-उक्त आश्रम सम्बन्धी उक्त सब कार्य संपादन करने और कराने के लिये एक भद्रपुरुष पश्चिमोत्तर देश की प्रतिनिधि सभा से दो तीन महीने के लिये अवश्य मांग कर मसौदे ठाकुर साहब के पास तुरन्त भेज दिया जावे कि राव साहब को विशेष श्रम न पड़े और उक्त पुरुष की तनख्वाह जो प्रतिनिधि सभा कहेगी यहां से देदी जावेगी और आर्य समाज अजमेर को भी लिख दिया जावे कि वह भी ठाकुर साहब की सेवा में तन मन से उपस्थित रहे।

५-जितना चन्दा मेवाड़ राज की दुकान पर वसूल होकर जमा हो, वह आश्रम के लिये खर्च होने के लिए मंजूर हो और वसूल होना बाकी है वह प्रदातृ महाशय सब अपने २ साथ लेते आवें अथवा प्रथम से ही मन्त्री के पास भेज देवें। क्यों कि अब चन्दे के विषय में बिलकुल देर नहीं होनी चाहिये। इसके अतिरिक्त समस्त प्रतिनिधि सभाओं को यह भी सर्वरीत्या उचित है कि अब आश्रम के सहायतार्थ शीघ्र चन्दा एकत्र करने में तन मन और धन से पूर्ण पुरुषार्थ करें। इस वर्ष में मुख्य आश्रम और उसकी शाखाओं में २५०००) खर्च के लिये साबित किये जाते हैं।

६—आर्य समाज अजमेर और उक्त भद्रपुरुष जितने स्थान की कलम १ तथा २ में बनने तजवीज हुए उनके नकशे और लागत के तखमीने शीघ्र तैयार कराकर और मसौदे ठाकुर साहब को दिखा कर मन्त्री के पास तुरन्त भेज देवें।

७—श्रीमती परोपकारिणी सभा के सब सभासद (१) समस्त प्रतिनिधि सभा (२) और समस्त आर्य समाजें श्रीमद्दयानन्द परोपकारिणी के आश्रम की नींव रखने के उत्सव से प्रसन्नता पूर्वक पधारें।

श्रीमान् श्री १०८ श्री संरक्षक—सभापति
महोदय की आज्ञानुसार
ह० मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या
मन्त्री, श्रीमती परोपकारिणी सभा

राजस्थान जयपुर
ता० १३-१०-१८८७ ई०

———

महिला-जगत्

रमाबाई रानडे

[लेखक—इतिहास का एक विद्यार्थी]

एक सुशिक्षित पुरुष अपनी निरक्षर पत्नी को कितना उन्नत कर सकता है यदि स्त्री उसके साथ सहयोग करे—यह रमाबाई के चरित्र से स्पष्ट हो जाता है। रमाबाई का जन्म सातारा जिले के कुर्लेकर कुटुम्ब में श्री माधवराव जी के यहां हुआ था। सन् १८७३ में ११ वर्ष की अवस्था में न्याय-मूर्ति महादेव गोविन्द रानडे के साथ उनका विवाह हुआ।

रमाबाई ने अपनी पूजनीया माता उमाबाई के सम्बन्ध में लिखा है कि "वे दिन भर औषधियों की गोलियां बनाया करती थीं। उन्हें वैद्यक का अच्छा ज्ञान था। रोगियों की सेवा-शुश्रूषा तथा उनको औषधि देने में वे व्यस्त रहती थीं। असमर्थ रोगियों को घर पर रख कर उनकी चिकित्सा करतीं तथा रहने और पथ्य का प्रबन्ध भी। रोगियों के मल मूत्रादि को धोने में उन्हें कभी ग्लानि न होती थी। औषधि तथा घर पर रोगियों के पथ्य का व्यय वे स्वयं अपने पास से देती थी। माधव राव जी ने इस परोपकार में यथेष्ट व्यय करने की अनुमति दे रखी थी।"

रमाबाई ने माता के सम्बन्ध में और लिखा है कि "सायंकाल बच्चों को साथ बिठा कर वे धार्मिक कथाएँ सुनाया करतीं। बुआ उनका उपहास करती थीं कि बच्चे इन गम्भीर चरितों को क्या समझेंगे। वे बड़ी सरलता से उत्तर दे देतीं कि मुझे तो कुत्ते बिल्लियों की कहानियाँ आती ही नहीं। पवित्र चरित्रों को सुनने से अपना हृदय तो पवित्र होता है। साथ ही बच्चों के हृदयों में उत्कृष्ट बीज बोया जाता है। जैसी भूमि होगी, वैसा पौधा हो जायगा। कम से कम खराब पौधों से तो खेत बचा रहेगा।"

रमाबाई के पति गृह जाते समय उनके पिता ने जो उपदेश दिया था, वह भी अनुकरणीय है। उन्होंने कहा था—"**पुत्री! तू जिस परिवार में जा रही है, वह बड़ा परिवार है। घर में विभिन्न प्रकृति के लोग होंगे। तू अपनी कुलीनता का परिचय देना। तुझे चाहे जितना कष्ट हो, सहन करना। किसी को उत्तर मत देना। किसी से लड़ना मत। नौकरों को भी डाटना मत। अपने पति की किसी से निन्दा मत करना। इस प्रकार की चुगली विनाश की जड़ है। मेरी इन बातों पर ध्यान रखोगी तो मुझे प्रसन्नता होगी।**"

ऐसे सुयोग्य माता पिता की पुत्री धार्मिक, परोपकारी एवं सहनशील होनी ही चाहिये।

पति गृह पहुँचने पर जस्टिस रानडे ने देखा कि पत्नी अशिक्षिता है। उसी दिन से उन्होंने उसे पढ़ाना आरम्भ किया। रमाबाई की सास तथा ननदें इस शिक्षा की विरोधी थीं। वे बार २ रमाबाई को समझातीं कि पढ़ना बन्द कर दो। इस विरोध से बचने के लिए रमाबाई पतिदेव से रात्रि के पिछले पहर में पढ़ा करती थीं। रानडे जी ने एक शिक्षिका रख दी और रमाबाई का अध्ययन तीव्रगति से चल पड़ा। मराठी का अभ्यास पूरा होने पर अंग्रेजी प्रारम्भ हुई। रमाबाई एक दिन बर्तन मल रही थी। पास के पड़े अंग्रेजी समाचार-पत्र के टुकड़े को वे कुतूहलवश

पढ़ने लगी। घर वालों को उनके अंग्रेजी पढ़ने का पता लग गया। स्त्रियों में हलचल मच गई। अनेक प्रकार के व्यंग और ताने सुनने पड़े। रमाबाई ने सब सह लिया। पति से उन्होंने कभी किसी की शिकायत न की।

जस्टिस रानडे की बदली पूना से नासिक हो गई। यहाँ आने पर घर का पूरा भार रमाबाई पर पड़ा। वे प्रातः चार बजे उठ जातीं। अब भी स्वयं चौका-बर्तन करती थीं, भोजन बनातीं और पतिदेव को भोजन कराके उनके कोर्ट जाने के वस्त्र ठीक करके उन्हें देतीं। पुस्तकें तथा लिखने-पढ़ने की सामग्री भी पति की वही ठीक करती। भोजनादि से निवृत्त होकर पढ़ने बैठ जाती और जस्टिस साहब के लौटने से पूर्व पाठ सम्पूर्ण कर लेतीं। जज साहब का आठ सौ रुपया मासिक वेतन उनके हाथ में आता था। घर के व्यय का पूरा प्रबन्ध तथा हिसाब रखना उन्हीं के जिम्मे था। पति से पूछे बिना अतिरिक्त व्यय में कभी एक पैसा भी उन्होंने व्यय नहीं किया। इस प्रकार घर की पूरी व्यवस्था का संचालन करते हुए उनका अध्ययन चलता रहा।

इस समय रावबहादुर गोपालराव देशमुख संयुक्त जज थे, रमाबाई को इनके कुटुम्ब का अनुकूल संग प्राप्त हुआ। दक्षिण में चैत्र तथा श्रावण में स्त्रियां परिचित स्त्रियों के यहाँ जाकर उनको सौभाग्यसूचक हल्दी तथा कुंकुम देती हैं। बदले में उनका अंचल भीगे गेहूँ और चने से भरने की प्रथा है। पति की सम्मति से रमाबाई ने हल्दी-कुंकुम के बहाने स्त्रियों को आमन्त्रित करना प्रारम्भ किया। वे उन्हें सीता, सावित्री, अनसूया, दमयन्ती प्रभृति के पवित्र चरित्र सुना कर धर्म शिक्षा देती थीं।

इसी समय सेशन जज मिस्टर कागड़ अपनी स्त्री, सास तथा साली के साथ नासिक आये। कन्या पाठशालाओं का निरीक्षण करके उन्हें पुरस्कार देने का समारोह हुआ। नासिक में एक सभा में स्त्री-पुरुषों के एकत्र होने का यह प्रथम अवसर था। पुरस्कार वितरित होने के पश्चात् अध्यक्ष के प्रति आभार प्रदर्शन का भार रमाबाई पर था, उन्होंने एक लिखित भाषण पढ़ दिया। इसी समय गोडबोले नामक एक डिप्टी इन्स्पेक्टर ने पुष्पहारों का थाल रमाबाई के सम्मुख कर दिया। रमाबाई ने थाल उठाया। एक २ हार तीनों यूरोपियन महिलाओं को पहिना कर वे बैठ गईं। थाली में हार अछूता पड़ा रहा। डिप्टी साहब ने उसे मिस्टर कागड़ को पहनाने को कहा तो रमाबाई ने डाँट दिया—"आपको लज्जा नहीं आती!" तुरन्त ही देशमुख जी ने उठ कर वह माला मिस्टर कागड़ को पहना दी।

पति के पूछने पर रमाबाई ने कहा—"मैं ईसाई होती तो मुझे संकोच न होता। मुझे तो क्रोध आ रहा था कि पढ़ा लिखा ब्राह्मण गोडबोले मुझसे ऐसा अनुरोध कर कैसे सका?"

अनेक स्थानों में घूम फिर कर जस्टिस रानडे की बदली पूना में हो गई। यहाँ पण्डिता रमाबाई से इनका परिचय हुआ।

सन् १८८६ में रानडे सरकारी काम से कलकत्ता गये थे। वहां कुछ महीने रुकने की अवधि में दम्पति ने बँगला सीख लिया। वे भली प्रकार समाचार पत्र पढ़ लेते थे। देश को शोक समुद्र में निमग्न करके जस्टिस रानडे सन् १९०१ में परलोक वासी हुए। उस समय रमाबाईकी अवस्था अड़तीस वर्ष की थी। पति की मृत्यु के पश्चात् उन्होंने अपना पूरा जीवन परोपकार में लगाया। सन् १९०६ से वे नगर की हलचलों में भाग लेने लगीं और सन् १९०८ में श्रीयुत गोपालकृष्ण देवधर की सहायता से पूना में उन्होंने 'सेवासदन' की स्थापना की। अपना सर्वस्व उन्होंने इसी संस्था में लगा दिया।

सन् १९२४ के पिछले भाग में उन्होंने शरीर छोड़ा। अपने को वे 'पतिदेव के श्रीचरणों का निर्माल्य' कहा करती थीं। अपने आदर्श पतिदेव के चरण-चिन्हों का अनुगमन करते हुए सम्पूर्ण जीवन उनका ज्ञान की प्राप्ति तथा परोपकार में ही व्यतीत हुआ।

———

* बाल-जगत् *

स्वावलम्बी बालक किलएनथिस

प्राचीन काल में ग्रीस देश में किलएनथिस नाम का एक युवक रहता था। वह अखाड़े में कुश्ती लड़ने और मुक्के बाजी में बड़ा ही दक्ष था। अच्छे २ लोगों को हरा देता था, पर कुछ दिनों के बाद इस काम से उसे अरुचि हो गई और उसके मन में दर्शन शास्त्र पढ़ने की धुन सवार हुई। एथेन्स निवासी तत्त्ववेत्ता जीनोकी उस समय दार्शनिक के रूप में अच्छी ख्याति थी। वह जीनो के पास गया, उस समय उसकी हालत बड़ी दयनीय थी, शरीर के वस्त्र फटे थे और पास सिर्फ छः आने पैसे थे। जीनीके विद्यालय में थोड़ी फीस प्रतिदिन लगती थी, उसे देकर यह युवक ध्यानपूर्वक पढ़ता था। पढ़ने में वह इतना रस लेता था कि दूसरे विद्यार्थी उससे डाह करने लगे। उनको शङ्का होने लगी कि ऐसा चीथड़े हाल युवक पढ़ने के लिये इतने दिनों से फीस कहाँ से लाता है। उन्होंने उसके विरुद्ध चोरी का आरोप गढ़ लिया, और न्यायाधीश के सामने उसे उपस्थित किया।

निर्दोष किलएनथिस ने निर्भयता पूवक उत्तर दिया—"मैं निर्दोष हूं, मेरे ऊपर जो चोरी का आरोप लगाया गया है, वह निर्मूल है। मैं अपने बयान की पुष्टि में गवाह पेश करना चाहता हूं।"

गवाह बुलाये गये। पहला गवाह एक माली था, उसने बयान दिया कि:—'यह युवक प्रतिसवेरे मेरे बाग में आकर कुएं से पानी खींचता है और उसके बदले में उसको कुछ मजदूरी देता हूं। दूसरा गवाह एक विधवा थी, उसने बयान दिया कि:—"मैं वृद्धा हूं और लड़कोंकी देखभालमें मेरा सारा समय लग जाता है, इससे घर की दाल भी मैं नहीं दल पाती, यह युवक मेरे घर आकर दाल दल जाता है, और मैं उसको मेहनत के बदले पैसे दे देती हूं।"

इस प्रकार मेहनत मजदूरी करके पाये हुए पैसों से किलएनथिस विद्याभ्यास करता था। न्यायाधीश उसके आत्म बल से प्रसन्न हो गया। उसने उसकी मदद के रूप में थोड़ी रकम मंजूर करनी चाही, जिससे भविष्य में पाठशाला की फीस के लिए मजदूरी नहीं करनी पड़े।

परन्तु युवक ने इस मदद के लेने से साफ इन्कार कर दिया और कहा:—"मैं अपने शारीरिक श्रम से विद्याभ्यास करने की अनुमति मांगता हूं। किसी से दान लेना नहीं चाहता।"

अध्यापक जीनोके ने भी उसका समर्थन करते हुए कहा कि—"ठीक है, इसको किसी की मदद बिना ही विद्याभ्यास करने दें। स्वावलम्बन का महान् पाठ यह इसी प्रकार सीखेगा।"

———

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली की अन्तरंग सभा
दिनांक ६-११-५५ की
कार्यवाही

समय—२ बजे मध्यान्होत्तर
स्थान—श्रद्धानन्द बलिदान भवन

उपस्थिति

१-श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति (प्रधान)
२- ,, ,, यशःपाल जी सिद्धान्तालंकार
३- ,, डा० महावीर सिंह जी
४- ,, पं० भीमसेन जी विद्यालंकार
५- ,, ला० बालमुकन्द जी आहूजा
६- ,, पं० नरेन्द्र जी
७- ,, पं० जियालाल जी
८- ,, चौ० जयदेव सिंह जी ऐडवोकेट
९- ,, पं० वासुदेव जी शर्मा
१०- ,, बा० पूर्णचन्द्र जी ऐडवोकेट
११- ,, बा० कालीचरण जी आर्य
१२- ,, पं० विजय शंकर जी
१३- ,, पं० भगवती प्रसाद जी
१४- ,, ला० चरणदास जी पुरी ऐडवोकेट
१५- ,, स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज

शोक प्रस्ताव

१—यह सभा इस सभा के भूतपूर्व सदस्य, राजस्थान के सुयोग्य विद्वान् एवं पुराने अनुभवी कार्यकर्ता श्रीयुत प्रो० घीसू लाल जी के असामयिक निधन पर दुःख का प्रकाश करती हुई, उनके परिवार के प्रति हार्दिक समवेदना प्रकट करती है।

२—गताधिवेशन की कार्यवाही प्रस्तुत होकर सम्पुष्ट हुई।

३—विज्ञापन का विषय सं० २—श्री मदन मोहन जी विद्यासागर की सेवायें उपदेशक विद्यालय घटकेश्वर को १ वर्ष के लिये और देने के सम्बन्ध में श्रीयुत पण्डित नरेन्द्र जी प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद का २६-९-५५ का पत्र प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि आगामी अप्रैल तक के लिये पण्डित जी की सेवायें उक्त विद्यालय को और दे दी जांय तथा आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद को लिखा जाये कि इस अवधि में आगे वृद्धि न हो सकेगी। पण्डित मदन मोहन जी की दक्षिणा अप्रैल ५६ तक यथापूर्व इस सभा से दी जाती रहे।

४—विज्ञापन का विषय सं० ४—दयानन्द पुरस्कार की राशि तथा उसकी वितरण विधि में परिवर्तन का विषय प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि पुरस्कार की राशि १५००) के स्थान में १०००) की जाय और प्रतिवर्ष निम्न राशियों के तीन पुरस्कार दिये जाया करें।

५००) प्रथम पुरस्कार
३००) द्वितीय ,,
२००) तृतीय ,,

पुरस्कार की नियमावली में उपर्युक्त संशोधन कर दिया जाय। यह भी निश्चय हुआ कि इस वर्ष के पुरस्कार के लिये जो घोषणा हुई है वह स्वीकार की जाती है परन्तु भविष्य में नियमानुसार नियत २ या ३ विषयों पर पुस्तकें मंगाई जाया करें।

५—विज्ञापन का विषय सं० ४—सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की रजत जयन्ती मनाने के सम्बन्ध में धर्मार्य सभा की २८-८-५५ की अन्तरंग का निश्चय प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि यह सभा धर्मार्य सभा की पृथक् रजत जयन्ती मनाने का औचित्य अनुभव नहीं करती। सभा की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर एक आर्य विद्वत सम्मेलन किया जा सकता है।

६—विज्ञापन का विषय सं० ५—श्रीयुत पं० धीरेन्द्र जी शील का लंदन से लिखा हुआ २३-४-५५ का पत्र प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि आर्य समाज के उपनियमों में सदाचार की जो व्याख्या की गई है उसके विरुद्ध आर्य समाज लंदन का सदस्य बनने के लिये किसी भी व्यक्ति को मांसाहार की छूट नहीं दी जा सकती।

७—विज्ञापन का विषय सं० ६—श्री ब्र० श्रुतिकान्त जी का ब्रिटिश गयाना से भेजा हुआ २-८-५५ का पत्र प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि ब्रिटिश गयाना में आर्य समाज के प्रचार कार्यार्थ उन्हें सभा का अंग्रेजी का पोर्टेबिल टाइप राइटर भेज दिया जाय और लिखा जाय कि जब वे भारत लौटें तो अपने साथ टाइप राइटर ले आएँ और सभा को वापिस कर दें।

८—विज्ञापन का विषय सं० ७—कार्यकारिणी की नियुक्ति का विषय प्रस्तुत होकर सभा की नियमावली की धारा सं० ३२ पढ़ी गई। निश्चय हुआ कि अन्तरंग सभा के निश्चयों को क्रियान्वित करने तथा आवश्यकतानुसार अन्तरंग सभा की स्वीकृति के लिये विविध आवश्यक विषयों को तैयार करने के लिये एक कार्यकारिणी नियुक्त की जाती है जिसका निर्माण इस प्रकार किया जाय—

(क) १—सार्वदेशिक सभा के समस्त अधिकारी
२—श्रीयुत चौ० जयदेव सिंह जी
३— „ चरण दास जी पुरी
४— „ पं० जियालाल जी

(ख) इस समिति का कौरम ५ का होगा।

९—विज्ञापन का विषय सं० ८—आर्य समाज के इतिहास के प्रथम भाग की छपाई आदि के लिये व्यय की स्वीकृति का विषय प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ :—

१—आर्य समाज के इतिहास की छपाई आरम्भ की जाय।
२—प्रथम भाग प्रेस में दिया जाय।
३—३००० के स्थान में ५००० प्रतियां छपाई जायें।
४—इस कार्य के लिये ३६००) के स्थान में बढ़ी हुई प्रतियों के अनुपात से ६०००) तक का व्यय स्वीकार किया जाय। प्रेस का निर्णय तथा छपाई आदि की व्यवस्था श्री प्रधान जी के सुपुर्द की जाय।

१०—विज्ञापन का विषय सं० ९—उड़ीसा में ईसाई प्रचार निरोध कार्य को अधिक प्रगतिशील बनाने का विषय प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि यह विषय श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी के उड़ीसा से लौटने पर उनकी विस्तृत रिपोर्ट के साथ आगामी बैठक में प्रस्तुत किया जाय।

११—विज्ञापन का विषय सं० १०—श्रीयुत बा० पूर्णचन्द्र जी ऐडवोकेट आगरा के २-१०-५५ के चरित्र निर्माण सम्बन्धी पत्र पर विचार का विषय प्रस्तुत होकर आर्य महा सम्मेलन हैदराबाद का निश्चय सं० २ सार्वदेशिक सभा द्वारा स्वीकृत एवं प्रचारित कार्यक्रम तथा बा० पूर्णचन्द्र जी द्वारा निर्मित योजना पढ़ी गई। निश्चय हुआ कि बा० पूर्णचन्द्र जी को इस सभा की ओर से चरित्र-निर्माण का आन्दोलन करने के लिये अध्यक्ष नियत किया जाय और उन्हें प्रचार यात्राओं का मार्ग व्यय दिया जाय।

१२—विज्ञापन का विषय सं० ११—देहली में महर्षि बोधोत्सव मनाने के सम्बन्ध में आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली के २०-९-५५ के पत्र पर

विचार का विषय प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि इस विषय को कार्यकारिणी के सुपुर्द किया जाय।

१३—विज्ञापन का विषय सं० १२—श्री गुरु विरजानन्द जी दंडी का निर्वाण दिवस मनाये जाने के सम्बन्ध में धर्मार्य सभा की २७-८-५५ की अन्तरंग का निश्चय प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि गुरु विरजानन्द जी की जन्म तिथि की खोज की जाय और खोज हो जाने पर धर्मार्य सभा के निश्चय पर विचार किया जाय।

१४—विज्ञापन का विषय सं० १३—पण्डित मदन मोहन विद्यासागर जी सभा उपदेशक के ग्रेड परिवर्तन विषयक२४-१०-५५ के प्रार्थना पत्र पर विचार का विषय प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि ३०-४-५५ की अन्तरंग सभा उनकी अपील पर विचार करके निश्चय कर चुकी है। यह सभा उसमें परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं समझती। अतः यह विषय समाप्त समझा जाय।

१५—विज्ञापन का विषय सं० १४—उप-समितियों की रिपोर्ट पर विचार का विषय प्रस्तुत होकर निम्नलिखित उपसमितियों की रिपोर्ट निम्न प्रकार प्रस्तुत हुई और स्वीकार हुई।

(१) गोरक्षा समिति दिनांक ५-११-५५ की बैठक की
(२) अनुसंधान समिति दिनांक ६-११-५५
(३) सभा की स्वर्ण जयन्ती दिनांक ६-११-५५

(१) गोरक्षा समिति

१—स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात् भारतीय जनता अपनी केन्द्रीय सरकार से निरन्तर अनुरोध करती रही है कि भारत में गोवध सर्वथा बन्द कर दिया जाय क्योंकि अनादि काल से गौ भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति की प्रतीक रही है। आर्य समाज ने भारत में गोवध बन्द करने के लिये सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रबल आन्दोलन किया। अन्य धर्म वालों ने भी इस आन्दोलन में आर्य समाज को योग दिया। यह हर्ष का विषय है कि भारतीयों ने जनता की भावनाओं का आदर करते हुये बिना किसी विशेष संघर्ष के उत्तर प्रदेश और बिहार राज्यों की सरकारों ने अपने अपने राज्यों में गोवध निषेध विधेयक पारित कर दिए। इसके लिये उपर्युक्त दोनों सरकारें धन्यवाद की पात्र हैं।

२—सार्वदेशिक सभा के निरन्तर प्रयत्न करते रहने पर भी अब तक हैदराबाद, बम्बई और बंगाल की सरकारों ने इस दिशा में कोई संतोष जनक पग नहीं उठाया। इस सभा को पूर्ण आशा थी कि उपरोक्त दो प्रांतों में गोवध निषेध विधेयक के स्वीकृत हो जाने पर अन्य राज्य भी अपने प्रांतों में गोवध विषेध विधेयक स्वीकार करेंगे परंतु पर्याप्त प्रतीक्षा करने पर भी अन्य राज्यों ने अभी तक इस दिशा में कोई पग नहीं उठाया है। इस सभा की यह दृढ़ सम्मति है कि सम्पूर्ण भारत में अविलम्ब यह कानून स्वीकृत हो जाना चाहिये। सार्वदेशिक सभा ने आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद राज्य द्वारा हैदराबाद राज्य के अधिकारियों के साथ इस सम्बंध में निरंतर प्रयत्न किया है किंतु इसका भी अभी तक संतोषजनक परिणाम नहीं निकला। इस सभा का इस सम्बंध में दृढ़ संकल्प है कि यह विधेयक सम्पूर्ण भारत में लागू हो। इसके लिये यह सभा यह निश्चय करती है कि सम्प्रति हैदराबाद में यह विधेयक स्वीकार कराने का प्रयत्न किया जाय और यदि हैदराबाद राज्य जनता की इस मांग का आदर न करे तो इस कार्य के लिये विशेष पग उठाने के लिये यह सभा विवश होगी।

३—यह समिति सार्वदेशिक सभा से अनुरोध करती है कि उपर्युक्त प्रस्ताव को स्वीकार किया जाय और इसे क्रियान्वित करने के लिये जिन उपायों की आवश्यकता है उन पर विचार करने के लिये गोरक्षा समिति के सदस्यों तथा हैदराबाद आर्य प्रतिनिधि सभा के अन्तरंग सदस्यों की एक

सम्मिलित बैठक हैदराबाद में शीघ्र बुलाई जाय।

४ - इस समिति को यह जान कर संतोष हुआ है कि पंजाब विधान सभा में शीघ्र ही गोवध निषेध विधेयक प्रस्तुत किया जा रहा है। यह समिति पंजाब राज्य सरकार से अनुरोध करती है कि वह इस विधेयक को सर्वसम्मति से शीघ्रातिशीघ्र पास करके जनता की भावनाओं का आदर करे।

(२) अनुसन्धान समिति

(१) वैदिक अनुसन्धान के नाम से एक त्रैमासिक पत्रिका निकाली जाय जिसमें उच्चकोटि के लेखों व अनुसन्धान सामग्री के अतिरिक्त आर्य समाज के सिद्धान्तों के विरुद्ध साहित्य का निराकरण किया जाया करे।

(२) वेद का सरल हिन्दी भाषा में अनुवाद कराया जाय जिसका आधार स्वामी दयानन्द सरस्वती का संस्कृत भाष्य रहे।

(३) कार्यकर्ताओं की तत्काल नियुक्ति करके कार्यारम्भ करने का अधिकार प्रधान जी को दिया जाय।

(३) सभा स्वर्ण जयन्ती

२८-८-५५ की अन्तरंग सभा में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्वर्ण जयन्ती विषयक श्री मदनमोहन जी सेठ का प्रस्ताव पास हुआ था कि जयन्ती मनाई जाय। सभा ने विस्तृत कार्यक्रम बनाने के लिए एक उपसमिति नियुक्त की थी श्री सेठ जी के सुझावों को दृष्टि में रखते हुए निम्न योजनायें प्रस्तुत की जाती हैं :—

(१) सभा के लिये भवन

वर्तमान भवन कार्यालय के लिए उपयुक्त नहीं है। दिल्ली के किसी अच्छे स्थान पर एक भवन निर्माण किया जाय या क्रय किया जाय जहां सभा का कार्यालय रह सके। इस भवन पर लगभग ढाई लाख रुपये व्यय होने का अनुमान है।

(२) आर्यसमाज हींगकी मंडी में स्मारक बनाया जाय

हींग की मंडी में कोई ऐसा स्थान नहीं है जहां कमरा बनाया जासके। उस जगह का निरीक्षण करने के बाद यह विचार है कि यज्ञकुण्ड के पास एक कलापूर्ण स्तम्भ स्थापित किया जाय उसमें एक ओर आर्य समाज के दस नियम तथा दूसरी ओर सार्वदेशिक सभा की स्थापना की बैठक में सम्मिलित होने वाले सज्जनों के नाम अंकित कराये जायें। स्तम्भ का नक्शा सुयोग्य व्यक्तियों से बनवाया जाय। इस पर लगभग ३०००) व्यय किया जाय। इसी स्तम्भ के एक भाग पर इस बात को अंकित कर दिया जाय कि महर्षि अमुक-अमुक सन् में अमुक २ तारीख को आगरा पधारे थे। उक्त जयन्ती के कार्यक्रम में इस स्तम्भ के उद्घाटन का समय निश्चित कर दिया जाय।

(३) महर्षि का डाक्यूमेन्ट्री फिल्म

महर्षि का डाक्यूमेन्ट्री फिल्म तैयार कराया जाय उसमें महर्षि के जीवन की विशेष घटनायें और टंकारा तथा मथुरा के गुरुओं की कुटियों की भी झांकी रहे। इसके साथ २ आर्य समाज के अन्य कार्यों सम्बन्धी फिल्म भी तैयार कराई जाय। गुरुकुल, कालेज आदि संस्थाएँ, आर्य सत्याग्रह, हैदराबाद व सिन्ध के चित्र तथा अब तक के हुतात्माओं के चित्र तथा विशेषतया स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के कार्य के भी चित्र दिखाये जाएं। समय२ पर बाढ़ आदि के समय आर्यसमाज का जो कार्य हुआ है उनके चित्र भी संग्रह करके दिखाये जायें। इस पर अनुमानतः एक लाख रुपया खर्च किया जाय। डाक्यूमेन्ट्री फिल्म तैयार करने वाली अच्छी से अच्छी कम्पनियों का सहयोग प्राप्त किया जाय। इस संबंध में श्री पृथ्वीराज कपूर या अन्य विशेषज्ञ से विशेष रूप से योग प्राप्त किया जाय।

(४) सार्वदेशिक संग्रहालय

(१) श्री सेठ जी का यह प्रस्ताव बड़ा उचित है। परोपकारिणी सभा से महर्षि के हस्त लिखित ग्रन्थ तथा अन्य वस्तुएं प्राप्त करके सार्वदेशिक सभा के वर्तमान भवन को संग्रहालय के प्रयोग में लाया जाय।

(२) स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के कमरे को उनकी स्मृति के योग्य बनाया जाय।

(३) दूसरे कमरे में आर्यसमाज के हुतात्माओं के तैल चित्र तैयार कराके लगवाये जाएँ।

(४) वर्तमान भवन के सामने के भाग (कोलोनेड) में लाइब्रेरी के साथ २ वाचनालय भी रखा जाय।

(५) ऊपर के भाग में वेद के अनुसन्धान के लिए विद्वानों के लिए रहने का प्रबन्ध किया जाय।

(६) संग्रहालय तथा तैल चित्रादि की व्यवस्था में लगभग ६०००) व्यय किया जाय।

(५) सार्वदेशिक पत्र

वर्तमान सार्वदेशिक को साप्ताहिक बना दिया जाय और इसका विभाग अलग स्थापित किया जाय। एक उत्तम और श्रेष्ठ साप्ताहिक की मांग जनता में है। इसके अतिरिक्त एक उत्तम मासिक वैदिक अंग्रेजी मैग्जीन के ढंग का पत्र भी निकलवाया जाय। इस कार्य के लिए एक अच्छा योग्य सम्पादक रखा जाय। साप्ताहिक के लिए प्रारम्भ में प्रतिमास १५००) मासिक का व्यय किया जाय। अंग्रेजी पत्र लगभग ७००) मासिक व्यय से प्रारम्भ किया जाय।

(६) विशेष प्रचार व्यवस्था

साप्ताहिक, मासिक के अतिरिक्त दो उच्चकोटि के संस्कृत-अंग्रेजी के उत्तम वक्ता विद्वान् उपदेशक सभा के आधीन रखे जाएँ जो समय २ पर भारत भ्रमण करके प्रचार कार्य करें तथा कालिजों आदि में विद्यार्थियों से सम्पर्क कायम करके वैदिक विचारों को फैलायें। इन्हें प्रत्येक को ३००) मासिक दक्षिणा दी जाय।

सार्वदेशिक सभा में एक विशेष विभाग खोला जाय जो विदेशी दूतावासों तथा अन्य देशों से अपना सम्बन्ध जोड़कर समय २ पर समाज की गतिविधि तथा आर्य सिद्धान्तों से उन्हें परिचित कराये।

(७) आर्यसमाज का इतिहास

श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति लिखित तीनों भाग प्रकाशित करा दिये जाएँ। इसी अवसर पर इतिहास के तीनों खण्डों का संक्षिप्त अंग्रेजी में भी प्रकाशित कराया जाय।

(८) अनुसन्धान विभाग को विस्तृत किया जाय

सभा के अनुसन्धान विभाग को विस्तृत किया जाय। आर्य सिद्धान्तों के विरुद्ध लिखे गये साहित्य का उत्तर तथा नव साहित्य के प्रकाशन की योजना की जाय।

(९) सार्वदेशिक सभा का इतिहास

सार्वदेशिक सभा का ५० वर्षीय इतिहास प्रकाशित होना चाहिये जिसमें सम्बन्धित प्रतिनिधि सभाओं के संक्षिप्त इतिहास भी दे दिये जाएँ।

(१०) विविध

(१) तमाम कामों के लिए पांच लाख रुपया एकत्र किया जाय, शिष्ट मंडल बनाया जाय जो भारत तथा भारत के बाहर धन संग्रहार्थ भेजा जाय।

(२) इस राशि में से विदेश प्रचारार्थ दो लाख रुपया सुरक्षित किया जाय। सभा योग्य व्यक्तियों द्वारा जयन्ती के समय से पूर्व ही विशेष प्रचार का कार्य आरम्भ कर देवे। उपदेशकों को ट्रेनिंग दिलानी हो तो अभी से इस कार्य को आरम्भ कर दिया जाय।

(३) बलिदान भवन के नीचे की दूकानें खाली कराके एक औषधालय (डिस्पेंसरी) खोली जाय।

(४) ओरियण्टल कान्फ्रेंस के ढंग पर एक कान्फ्रेंस की जाय।

निश्चय हुआ कि :—

(१) ५ लाख रुपया एकत्र किया जाय।

(२) वर्तमान उपसमिति भंग करके यह कार्य कार्यकारिणी के सुपुर्द किया जाय।

१६—विज्ञापन का विषय सं० १५ आर्यसमाज के उपनियमों के संशोधन का विषय प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के पत्र सं० ७८६३ दिनांक १२-७-२०१२ के अनुसार उक्त सभा को अपने संशोधन भेजने के लिए एक

अवसर और दिया जाय और यह विषय पुनः आगामी बैठक में प्रस्तुत किया जाय।

१७—विशेष रूप से प्रधान जी की आज्ञा से दी ओरियण्टल बैंक आफ कामर्स नया बाजार देहली में सभा का चलत खाता खोलने के सम्बन्ध में कोषाध्यक्ष जी का प्रस्ताव प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि सम्प्रति इस बैंक में सभा का चलत खाता खोले जाने की आवश्यकता नहीं है।

१८— विशेष रूप से विद्यार्य सभा के संगठन के अनुसार इस सभा के ७ प्रतिनिधि सदस्यों के निर्वाचन का विषय प्रस्तुत होकर निम्न लिखित महानुभाव सदस्य निर्वाचित हुए :—

१. श्रीयुत बाबूलाल जी (मध्यभारत)
२. ,, पं० भीमसेनजी विद्यालंकार(संयोजक)
३. ,, आचार्य प्रियव्रत जी
४. ,, डा० मथुरालाल जी
५. ,, पं० धर्मपाल जी विद्यालंकार
६. ,, बा० कालीचरण जी आर्य
७. ,, प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति

१९—विशेष रूप से बलिदान भवन की मरम्मत, सफेदी आदि का श्रीयुत बा० हरिवंश जी द्वारा प्रस्तुत १४६२) का एस्टीमेट पेश होकर स्वीकृत हुआ। निश्चय हुआ कि यह कार्य शीघ्र से शीघ्र कराया जाये।

२०—विशेष रूप से तेलगु सत्यार्थप्रकाश के नये संस्करण की छपाई में सहायता देने विषयक आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के प्रधान श्रीयुत पं० नरेन्द्र जी का १-११-५५ का पत्र प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। २२-२-५३ की अन्तरंग सभा का निश्चय सं० ८ भी पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि २०००) दो हजार रुपये ऋण रूप में दिया जाय और शीघ्र से शीघ्र इस राशि को वापस मंगाया जाय।

२१—विशेष रूप से श्रीयुत घनश्यामसिंह जी गुप्त का सभा के उपप्रधान पद से त्यागपत्र प्रस्तुत होकर पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ। निश्चय हुआ कि उनके स्थान में श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज को उपप्रधान निर्वाचित किया जाय।

२२—विशेष रूप से श्रीयुत शिवचन्द्र जी की सेवाओं की अवधि आगे बढ़ाने के सम्बन्ध में कार्यालय का ५-११-५५ का नोट पढ़ा गया। निश्चय हुआ उनकी १००) मासिक पारिश्रमिक पर पार्ट टाइम कार्यकर्ता के रूप में २६-७-५५ से नियुक्ति स्वीकृत की जाय और आगामी अप्रैल के अन्त तक के लिये उनका सेवाकाल बढ़ाया जाय। यह भी निश्चय हुआ कि उन्हें १ नवम्बर ५५ से १२५) मासिक पारिश्रमिक दिया जाय।

२३—विशेष रूप से सभा कार्यालय की छुट्टियाँ बढ़ाने के सम्बन्ध में सभा कार्यालय के कर्मचारियों का १९-११-५५ का प्रार्थना पत्र प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि दशहरा की छुट्टियाँ १ दिन के स्थान में ३ दिन की की जाया करे।

२४—विशेष रूप से प्रस्तुत होकर निश्चय हुआ कि धर्मार्य सभा के लिए इस सभा के प्रतिनिधि सदस्यों की सूची में जो स्थान रिक्त है उसकी पूर्ति की जाय और श्री आचार्य द्विजेन्द्रनाथ जी का नाम उस स्थान के लिये स्वीकृत किया जाय।

२५—विशेष रूप से पं० वासुदेव शर्मा ने मठगुलनी (घटना) की दुर्घटना के सम्बन्ध में एक वक्तव्य दिया। निश्चय हुआ कि मठगुलनी की दुर्घटना में गिरफ्तार हुए आर्य भाइयों के मुकदमे के लिये १०००) एक हजार मात्र तक इस सभा से सहायता दी जाये।

२६—विशेष रूप से श्री कन्हैयालाल रैगड़ के सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड के ३०००) के शेयर्स का जिनका २२५०) पेडअप हो चुका है सभा के मार्गेज लोन के १८५०) बकाया की अदायगी के लिये स्वीकार कर लिये जाने का विषय प्रस्तुत हुआ। सभा कोषाध्यक्ष जी ने उस अवस्था पर प्रकाश डाला जिससे वाध्य होकर उन्हें यह व्यवस्था स्वीकृत करनी पड़ी। निश्चय हुआ कि कोषाध्यक्ष जी की यह व्यवस्था स्वीकार की जाये और नियमित रूप से सभा के नाम में शेयर्स परिवर्तित करा लिये जाएँ।

———

* धर्म्मार्य सभा *

"यज्ञरूप प्रभो हमारे" भजन पर धर्म्मार्य सभा का निर्णय

"यज्ञरूप प्रभो हमारे भाव उज्ज्वल कीजिये" इस भजन के सम्बन्ध में बार बार पत्र आते रहते हैं। ऐसा भी प्रतीत होता है कि कोई एक व्यक्ति ही भिन्न २ स्थानों से पत्र डलवाता है। सब की जानकारी के लिये इस विज्ञप्ति द्वारा स्पष्टीकरण कराता हूँ।

किसी भी भजन को मान्यता देना, न देना धर्मार्य सभा का काम नहीं और न धर्मार्य सभा ने इस भजन को या किसी भी भजन को कोई मान्यता प्रदान की है। जो भजन जिसको प्रिय हो और सिद्धांतानुकूल हो, अपनी२ रुचि के अनुसार सब गाते हैं गावें। यदि हम भजनों को मान्यता प्रदान करने लगेंगे तो आर्य जगत् में सैकड़ों आर्य भजन बनाने वाले हैं, सब ही अपने अपने भजनों को मान्यता देने के लिये भेजेंगे। उन हजारों भजनों को, सिद्धांतानुकूल हैं या नहीं, यही एक कार्य धर्मार्य सभा का हो जायेगा। सम्भवतः और बातों के विचार का अवसर ही न रहेगा। कुछ पत्र लेखक "यज्ञरूप प्रभो" भजन में और गलतियां लिख कर भेज रहे हैं। ऐसे पत्र हमारे पास भेजना अनावश्यक हैं। यदि उन्हें किसी भी भजन में कोई अशुद्धि प्रतीत होती है तो जिसने उसे बनाया है उससे पूछे। धर्मार्य सभा ने "यज्ञरूप प्रभो" भजन नहीं बनाया और न पूरे भजन को शुद्ध अशुद्ध होने का निर्णय ही दिया है और न धर्मार्य सभा ने यह निर्णय किया है कि यज्ञ के अवसर पर या किसी अन्य अवसर पर इसे गाया करो या न गाया करो।

धर्मार्य सभा का इस भजन से केवल एक ही सम्बन्ध है कि प्रश्न यह उठा था कि परमात्मा के प्रति हाथ जोड़ झुकाये मस्तक कह सकते हैं या नहीं। इस पर निर्णय धर्मार्य सभा का यह है कि ऋषि के ग्रन्थों में पाये जाने से यह शैली अवैदिक नहीं है। इस भजन का यज्ञ से ही कोई सम्बन्ध नहीं है अतः सभा ने भजन लेखक को आदेश दिया कि इस भजन का नाम यज्ञ पुरुष महिमा ठीक नहीं और यज्ञ रूप प्रभो के स्थान पर पूजनीय प्रभो करने से वह भ्रांति निकल जाती है। अतः यज्ञ पर बैठ कर जो यज्ञ कुंड के आगे भक्त लोग हाथ जोड़ झुकाये मस्तक होकर मिथ्या भ्रांति आर्य जगत् में फैलाते थे वह धर्मार्य सभा ने हटा दी। अब यह भजन जब कि इसमें यज्ञ रूप शब्द नहीं है तब कहीं भी बैठ कर परमात्मा के जैसे और भजन हैं "हे दयामय हम सबों को शुद्धताई दीजिये" आदि गाये जाते हैं ऐसे यह या और भजन सर्वत्र गाये जाते हैं गाये जायें। धर्मार्य सभा की ओर से किसी को मान्यता देने या न देने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। यज्ञ कुंड पर बैठ कर ही गाने के लिये यह भजन है इस भ्रांति को हटाना धर्मार्य सभा का काम था।

आचार्य विश्वश्रवाः
मंत्री
सार्वदेशिक धर्मार्य सभा, दिल्ली

* ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन *

तुर्की में ईसाइयत का खात्मा

अंकारा का समाचार, जो १६ अक्टूबर सन् १६५५ ई० के संजीवन कथालिक साप्ताहिक पटना में प्रकाशित हुआ, है कि आधुनिक तुर्की गिरजा के मिशन कार्यों का विरोध कर रहा है और यहां मिशन-कार्य करीब करीब असम्भव हो गया है, तुर्की की २२०००००० की जनता में ६८ प्रतिशत मुसलमान हैं।

१६३५ ई० में तुर्की में २२६००० ईसाई थे और अब १६५५ में उनकी सं० केवल २२००० है अर्थात २० वर्षों में ६० प्रतिशत से भी अधिक कमी हुई है अर्थात् इस गति से सन् १६५७ ई० में तुर्की की भूमि से ईसाइयत का नाम तक मिट जायेगा।

एशिया-माइनर तुर्की प्रथम मिशनों में से एक था तथा कांस्टांटी नोपिल जिसे आजकल इस्तान बुल कहते हैं ईसाई धर्म का एक महान केन्द्र था। तुर्की में एफेसुस नामक वह स्थान भी है जहां कुंवारी मरियम का सदेह स्वर्ग गमन बतलाया जाता है।

तुर्की में ईसाई तथा मुसलमानों के सम्बन्ध से जो सन्तान उत्पन्न होती है उनको प्रायः मुसलमान ही बना लिया जाता है। यदि कोई मुसलमान ईसाई बनता है तो उसे नाना प्रकार की सतावटों का अनिवार्य सामना करना पड़ता है। तुर्की में केवल मुसलमान को वहां का राष्ट्रीय, नेशनल, माना जाता है।

तुर्की में जो इस समय ४०० कथालिक पुरोहित, धर्मबन्धु तथा धर्म भगनियां हैं उनके स्थान पर दूसरे किसी का विदेश से आना प्रायः असम्भव बना दिया गया है। अस्तु :

अब जब हम अपने देश भारत की ओर दृष्टि उठा कर देखते हैं तो पता चलता है कि यहां स्वतन्त्रता के युग में बजाय घटने के यह विदेशी मत बढ़ा है। लाखों हिन्दुओं को विदेशी मिशनरियों ने ईसाई बनाया है। विदेशी मिशनरियों की संख्या भी घटी नहीं, बढ़ी है। बाहिर की आर्थिक सहायता भी निरन्तर वृद्धि पर है।

किसी हिन्दू के ईसाई बन जाने पर उसको सताए जाने का तो प्रश्न ही क्या, यहां की उदार कही जाने वाली सरकार छात्रवृत्ति आदि की सब सुविधायें तक दे रही है।

भारत में ८८ प्रतिशत जन संख्या हिन्दू की है दूसरे शब्दों में भारत हिन्दू राष्ट्र है किन्तु इस राष्ट्रीयता को साम्प्रदायिक कहकर उसकी अवहेलना नाना प्रकार के प्रोत्साहन आदि देना यहां की आज की राष्ट्रीय सरकार अपना कर्त्तव्य समझती है।

हम बलपूर्वक फिर कहते हैं कि विदेशी मिशनों तथा मिशनरियों के प्रभाव क्षेत्र के ईसाई राष्ट्रीय नहीं माने जा सकते तथा दारूल हरब के सिद्धांत में विश्वास रखने वाला और मक्के मदीने के गीत गाने वाला मुसलमान भी निश्चय अराष्ट्रीय हैं।

भारत-भूमि के लिये जीने और उसके हित मरने की जिसमें भावना नहीं भारतीय महापुरुषों के प्रति जिसे श्रद्धा नहीं, भारतीय संस्कृति, वेषभूषा तथा आचार से जो घृणा करता है उसे राष्ट्रीयता के साथ खिलवाड़ करना है और भारत

के भविष्य को अन्धकार में ढकेलना है।

विदेशी पादरियों को कड़ी चेतावनी

२३ अक्टूबर के इन्क्वायरी नामक अंग्रेजी साप्ताहिक में उपर्युक्त शीर्षक से एक लेख किसी कथालिक विशप के किसी सरक्यूलर के आधार पर लिखा गया है और यह सरक्यूलर उस विशप ने अपने आधीन पुरोहितों तथा धर्म बहिनों को भेजा है।

विशप का नाम अंकित न करने से इसकी वास्तविकता संदिग्ध है तथापि लेख विचारणीय है। ऐसा प्रतीत होता है कि मध्य प्रदेश के प्रधान मंत्री श्री रविशंकर शुक्ला ने जो पिछले दिनों किसी नागपुर के पादरी को कड़ी चेतावनी दी थी और डा० काटजू आदि ने जो विदेशी मिशनरियों की गतिविधि की कड़ी आलोचना की है उससे प्रभावित होकर यह लेख लिखा गया है। लेख के आरम्भ में ही विदेशी मिशनरियों को यह चेतावनी दी गई है कि वह पत्रों तथा लेखों के लिखने में पूरी २ सावधानी बरतें। भारतीय चाहे शासन की अथवा किसी भी व्यक्ति की कितनी भी समालोचना करें वह उससे अपने को पृथक् रक्खें। भारत समाज के दोषों पर नुकता चीनी करने से हाथ खेंचें और केवल गुणों की चर्चा करें। यह भी लिखा गया है कि भारत से बाहिर कोई ऐसा चित्र धनादि प्राप्ति की दृष्टि से न भेजें जिससे भारत का अपमान होता हो।

शास्त्रार्थों से सर्वथा हाथ खेंच लें तथा शासन की किसी भी प्रकार की समालोचना आदि में अथवा राजनीति में भाग न लें। किसी अन्य देश की भारत के साथ तुलना कर भारत को गिरा हुआ बताने का प्रयत्न न करें। आर्थिक प्रलोभनादि द्वारा किसी को ईसाई बनाने से हाथ खेंच लें। केवल ईसाइयत को हृदय से स्वीकार करने वाले को ही धर्म की दीक्षा दें। अन्य धर्मों की समालोचना करते समय उनके आदरणीय महापुरुषों, ग्रन्थों, संस्कारों तथा प्रथाओं की अवहेलना न करें।

अपने चिकित्सा तथा शिक्षा आदि कार्यों द्वारा सबको समान रूप से किसी भी भेदभाव को स्थान न देते हुए सहायता पहुँचाएँ तथा दान वितरण में भी इसी प्रकार उदारता का व्यवहार करें।

देश के प्रति प्रेम रखें तथा उसके नैतिक सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास संबंधी कार्यों में पूरा २ सहयोग दें।

भारतीय संस्कृति के संरक्षण एवं विकास में शासन तथा दूसरे वर्गों का साथ दें।

हम इन विचारों का अधिकांश में स्वागत करते हैं। देखें इस परिपत्र पर कहां तक अमल होता है।

भारत में आज किसी भी दृष्टि से विदेशी मिशनरियों की आवश्यकता शेष नहीं रह गई है। कोई विशेष व्यक्ति ही किन्हीं विशेष गुणों के कारण भारत के निमन्त्रण पर ही पधारें तो उन का स्वागत किया जा सकता है। शेष विदेशी पादरियों को समय रहते भारत से सम्मानपूर्वक बिदायगी मिल जानी चाहिये।

कैथालिक धर्माध्यक्षों के आरोप

कैथालिक धर्माध्यक्षों का भारतीय सम्मेलन जो २२ अक्टूबर सन् १९५५ ई० तक प्रयाग में हुआ है उसकी रिपोर्ट जो कैथालिक समाचार पत्र हैरेल्ड व इन्क्वायरी आदि में प्रकाशित हुई है हमारे सामने है।

इस सम्मेलन में भारत के प्रायः सभी कैथालिक धर्म प्रान्तों के अध्यक्ष उपस्थित थे। रिपोर्ट में रायगढ़ के स्कूलों पर जिला शिक्षा अधिकारी द्वारा पुलिस की सहायता से धावा करने का भी वर्णन है। हम नहीं समझते कि जब इन ईसाइयों के स्कूलों में हिन्दू बच्चों के नाम बदल-बदल कर पीटर, एनथोनी, लुइस आदि रखे जाते हैं और

अनाथ हिन्दू बच्चों को तो ईसाई तक लिखा जाता है और इस सम्बन्ध में भारत के विभिन्न प्रान्तों से निरन्तर शिकायतें आ रही हैं तो इनके स्कूलों के रजिस्टरों की जांच क्यों न की जाय। यदि कोई अधिकारी जाँच करने जाता है तो यह ताला लगा कर चम्पत हो जाते हैं तब सिवाय इसके कि पुलिस की सहायता से ताला खुलवाया जाय और रजिस्टर काबू में किये जाएँ और क्या चारा है। हम भारत सरकार से अनुरोध करेंगे कि सब प्रान्तों के ईसाई स्कूलों के रजिस्टरों की जाँच की जाय और हिन्दू बच्चों के ईसाई नाम सिद्ध होने पर इन स्कूलों के संचालकों के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही की जाये। इतना ही नहीं, चर्च रजिस्टरों की भी जाँच की जाये। क्योंकि छल से अनेकों हरिजनों, आदिवासियों के अंगूठे आदि लेकर उनको ईसाई लिखा गया है जब कि वह यथार्थ में हिन्दू हैं।

यदि ईसाइयों में सच्चाई है तो इनको हर्ष पूर्वक अपने रजिस्टर चैक करा देने चाहिएँ। ताले लगा कर भागने की क्या आवश्यकता है?

रिपोर्ट में मत परिवर्तन सम्बन्धी उस बिल का भी विरोध किया गया है जो लोक-सभा के सामने विचाराधीन है। इस बिल के पास हो जाने पर जहाँ तक असुविधा का प्रश्न है वह तो सब ही मत एवं सम्प्रदायों के लिए समान रूप में है। यदि कोई समाज या हिन्दू सभा किसी अंग्रेज आयरिश आदि की शुद्धि करती है तो उसको भी आवश्यक स्वीकृति लेनी पड़ेगी। इस बिल को ईसाइयों की प्रचार सम्बन्धी गतिविधि पर रोक लगाना कैसे माना जा सकता है। ईसाई यीसु-मसीह की शिक्षाओं का खुल कर प्रचार करें, किसको आपत्ति है। हाँ आपत्ति तब होती है जब मानवोत्थान सम्बन्धी सिद्धान्तों का प्रचार न कर मतान्धता एवं अन्धविश्वास का प्रचार किया जाता है और रोम के पोप की आज्ञा को राष्ट्र की आज्ञा से ऊपर बतलाया जाता है।

रिपोर्ट में वर्धमान नगर 'गया' की घटना को भी काफी रंगा गया है और अब सीधा आर्य-समाज पर आक्रमण किया गया है, घटना सम्बन्धी पहली रिपोर्ट में अनिश्चयात्मक रूप से आर्य-समाजियों का नाम लिया गया था तो अब निश्चित रूप से उनका नाम लिया जा रहा है। पहली रिपोर्ट में चर्च सम्बन्धी किसी खेत का तार हटाने व हल चटाने का वर्णन था अब उसको बिलकुल छिपा दिया गया है। हमारी यह शंका इससे और पुष्ट हो चली है कि यह झगड़ा वास्तव में भूमि सम्बन्धी है जिसको रंगत दी जा रही है। हम फिर कहते हैं कि इसकी पूरी २ जाँच की जानी चाहिये।

नियोगी जांच समिति की कार्यवाही को लक्ष्य में रख कर उस पर पुनः आपत्ति की गई है और यह कहा गया है कि यह पूछ ताछ ईसाइयों से ही क्यों की जाती है, इसका उत्तर हमारी दृष्टि में तो साफ यह है कि भारत के ईसाई चर्च विदेशियों के हाथों में हैं भारत के ईसाई विदेशी धर्माध्यक्ष एवं पुरोहितों के क्रीत बना दिये गये हैं, और इन विदेशियों ने हर दृष्टि से भारत की भाषा, भेष, आचार-विचार, पर्व, त्यौहार एवं पूर्वजों की अव-हेलना अपमान करना इनको सिखाया है। यदि भारत के ईसाई विदेशी मिशन मिशनरियों के चंगुल से मुक्त हो जायें, स्वतन्त्र भारतीय चर्च खड़ा करें तथा सांस्कृतिक दृष्टि से अपने को भारतीय बनालें तो फिर इस निगरानी और जाँच पड़ताल की आवश्यकता न रहेगी।

अन्त में इस सम्मेलन ने लोभ, लालच, छल, कपट तथा आतंक आदि द्वारा ईसाई बनाने से स्पष्ट इन्कार किया है। किन्तु इस इन्कार करने का का कोई मूल्य नहीं। जब स्वयं श्री डूबियस, बूशम्प, एलफैन्जोडीसोज़ा आदि जिम्मेदार विदेशी मिशनरियों एवं अधिकारियों ने इसे

स्वीकार किया है और रात दिन इस प्रकार की घटनाएँ देश के कोने-कोने में घट रही हैं, हमें आश्चर्य है कि इतने प्रतिष्ठित धर्माध्यक्ष एकत्र होकर इस नग्न सत्य पर धूल क्यों फेंक रहे हैं। इन्हें अपने इस पाप को स्वीकार करना चाहिये और भविष्य के लिए तोबा करनी चाहिये। इसी में इनका हित है।

श्री बूशम्प के शब्दों में हम पुनः कहते हैं कि अब भारत में ईसाइयत के प्रचार का यह युग लद चुका है, हां ईसाई चाहें तो इस बदली हुई परिस्थिति में ईसाई मत की मौलिक शिक्षाओं का जो मतान्धता और अन्धविश्वासों से ऊपर है मानवता के नाम पर प्रचार करें और भारत की संस्कृति और राष्ट्रीयता को सच्चे हृदय से अपनावें तो वह अपने प्रचार कार्य में सफल हो सकते हैं। अन्यथा गौतम, कपिल, कणाद और दयानन्द के देश में उनके लिये अब स्थान नहीं।

श्री ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी की सिंह-गर्जना

आर्य समाज सदर मेरठ के उत्सव पर ओजस्वी भाषण

१६ नवम्बर बुधवार

स्वतन्त्रता की प्राप्ति के पश्चात् भारत राष्ट्र ने भौतिक दृष्टि से जो उन्नति की है वह अद्वितीय एवं प्रशंसनीय है नदियों के विशाल-काय बांध, बड़े २ कारखाने और औद्योगिक प्रगति इस उन्नतिके स्पष्ट प्रमाण हैं। परंतु दुर्भाग्यवश भारतकी कुछ ऐसी जटिलतम समस्यायें भी हैं जो कि भारतीय राष्ट्रीयता को सीधी चुनौती दे रही हैं। यदि इनका शीघ्र ही समाधान न किया गया तो यह किसी भी दिन बारूद का काम देकर हमारी इस भौतिक उन्नति को भस्मी भूत कर देगी। यही वह समस्यायें हैं कि जिन्होंने एक दिन महान् आर्य जाति को मुट्ठी भर विदेशियों से पद दलित करवा दिया था।

यह समस्यायें हैं हमारी प्रान्तीयता, जातिवाद, छूतछात, आदिवासी समस्या, अन्ध-विश्वास, जड़-पूजा, रूढ़िवाद एवं विधर्मियों द्वारा निर्मित पंचमांगी दस्ते जो कि रहते, खाते और सोते यहाँ हैं परन्तु उनके दिल और दिमाग विदेशों के साथ हैं।

इन समस्याओं के समाधान करने में चाहते हुए भी हमारी सरकार सर्वथा असमर्थ ही नहीं रही अपितु इसके द्वारा न चाहते हुए भी यह समस्यायें और भी जटिल बनती जा रही हैं। सैक्युलरिज्म की इसकी नई परिभाषा ने तो इसे और भी असमर्थ बना दिया है। देश की समस्त राजनैतिक संस्थाओं के सम्मुख मन्त्री-पद और वोटों की इतनी प्रबल भूख है कि वह इन समस्याओं पर बोलते हुए भी घबराते हैं क्योंकि यदि वह ऐसा करते हैं तो रूढ़िवादी और अन्ध-विश्वासी हिन्दू उनके विरुद्ध बगावत करने को तैयार हैं। इसके अतिरिक्त उनके सन्मुख इन समस्याओं का कोई समाधान भी नहीं है।

इन समस्याओं का सही और स्थायी समाधान यदि किसी संस्था के पास है तो वह महर्षि दयानन्द द्वारा स्थापित आर्यसमाज के पास ही है। अतः जब तक देश की जनता, संस्था तथा सरकार समस्त पक्षपातों को छोड़ महर्षि के निर्देशानुसार कार्य नहीं करते तब तक देश का सच्चा उत्थान होना सर्वथा असम्भव है। हमें क्षणिक लाभ व विरोध से विचलित न होकर सामाजिक क्रान्ति का बिगुल बजाना ही होगा और इस क्रान्ति की सफलता ही हमारी अधूरी स्वतन्त्रता को पूर्ण बना सकेगी और हमारे राष्ट्र की भावी संकटों से रक्षा कर सकेगी।

शिव दयालु
तिलक पार्क, मेरठ।

मठगुलनी ग्राम में रोमन कैथलिक पादरियों के अत्याचार एवं धांधली से हिन्दू जनता ऊब चली

आठ आदमी नवादा जेल में नजरबन्द, अनेकों पर वारण्ट जारी,
लगभग २२०० ईसाई पुनः हिन्दू बनाये गये।

गया जिला के नवादा सब डीविजन थाना एक टीबरावां के अन्तर्गत मठगुलनी ग्राम तथा इस इलाके में लगभग २२०० चमार हरिजन आदि भाइयों को रुपया, अमेरिकन घी, औषधि, निम्बूचूस, चाकलेट, वस्त्र आदि नाना प्रकार का प्रलोभन देकर अवैधानिक ढंग से ईसाई बनाया था और पादरियों ने इस इलाके में अपना जाल बिछा रखा था। इस बात की सूचना बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधानमन्त्री को प्राप्त हुई। आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान मन्त्री जी ने इन ईसाइयों के बिछाये हुए जाल को विफल बनाने के लिए अपने प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री पंडित भूपनारायण सिंह जी को नवादे के ईसाई क्षेत्र में भेज दिया। पंडित भूपनारायणसिंह जी ने इस इलाके में घूम - कर चमार हरिजन बस्तियों में वैदिक धर्म एवं अपने बाप दादे एवं राम कृष्ण के नामों का स्मरण दिलाया और इन विदेशी रोमन कैथलिक पादरियों की कूटनीति एवं भारत को ईसाई स्थान बनाने के षड्यन्त्र का भण्डा फोड़ करते हुए चमार हरिजन जो कुछ धन के लोभ से पादरियों के प्रलोभन में आकर ईसाई बन गये थे। श्री पंडित भूप नारायण जी ने अपील की कि आप लोग पुनः हिन्दू धर्म में मिल जांय। इनकी अपील पर २०८ ईसाई हिन्दू बन गये हैं और उन्हीं हरिजन भाइयों में से आर्य समाज मन्दिर बनाने के लिये ११ कट्ठा भूमि आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार के नाम से रजिस्ट्री कर दी है। यह जमीन ठीक चर्च के सामने है। इस जमीन में आर्य समाज मन्दिर भी बना दिया गया है। इस क्षेत्र में नया ईसाई होना बिल्कुल बन्द हो गया है। ईसाइयों ने अपने पैर को उखड़ते देखकर यहां आर्य समाजियों को एवं ईसाई से पुनः हिन्दू बने हुए चमार हरिजन भाइयों को झूठे मुकदमे दायर करके परेशान कर रखा है। पं० भूपनारायण जी के ऊपर १५१ दफा और १०७ पादरियों की ओर से चलाया गया। अन्त में नवादा कोर्ट से पंडित भूपनारायण जी निर्दोष पाये गये और पादरी अपनी गलती को देख कर लज्जित हो गये। पुनः मठगुलनी के आर्य समाजी एवं ईसाई से पुनः हिन्दू बने हुए चमार हरिजन भाइयों पर दफा १०७ और डकैती का मुकदमा किया किन्तु इस मुकदमे में भी आर्य समाजियों की जीत हुई और पादरी को हार खानी पड़ी। इसी वर्ष में चर्च के ईसाई मुहल्ले में रहने वाले बंसी बर्नर्ड नामक ईसाई को सपरिवार हिन्दू बनाया गया। इस परिवार में सात आदमी हैं। बंसी बर्नर्ड ने ग्राम के आर्य समाजी भाइयों को अपने मकान में हवन यज्ञ एवं अपने मकान पर 'ओ३म' का झण्डा फहराने के लिए निमन्त्रण दिया। मठगुलनी के आर्य समाजी और ईसाई से पुनः हिन्दू बने हुए चमार हरिजन लोग बंसी के घर के आँगन में हवन कर रहे थे।

इतने ही में फादर मैथिडल मैभुकनाल ने जो यहाँ के पादरी हैं, बंसी के मकान के बाहर के दरवाजे में ताला लगा दिया। २४ घंटे तक आर्य समाजी लोग मकान ही के भीतर बन्द रहे। इसकी सूचना पकरी बरावां थाने को मिली। बरावाँ के दरोगा साहब ने आकर पाँच पंचों के सामने गवाह रख के ताला तोड़ा और आर्य समाजियों को मकान से निकाला गया। पुलिस ने पादरी से बयान लिया तो जेम्स ने स्वीकार किया कि मैंने ही ताला बन्द किया है। इस मुकदमे में सरकार बहादुर मुद्दयी हो गई और केस प्रारम्भ हो गया। गया जज के यहाँ से बंसी आर्य समाजी की जीत हुई। जज ने फैसला दिया कि यह मकान बंसी का है चर्च का नहीं है। इसी तरह से यहाँ के ईसाई से पुनः हिन्दू बने हुए चमार हरिजन एवं आर्य समाजियों पर झूठा २ चार बार मुकदमा किया। चारों मुकदमों में आर्य समाजियों की जीत हुई और पादरी को हार खानी पड़ी। ये सब मुकदमे लगभग चार वर्षों से चले आ रहे हैं। पांचवीं बार फिर भी ५-१०-५५ को यहां के आर्य समाजियों

विभिन्न सूचनाएँ

क्षेत्र जन सम्मेलन

आर्य समाज नया बांस देहली में श्री प्रो० रामसिंह जी एम० ए०, एम० एल० ए० के सभा पतित्व में -३-१०-५५ को क्षेत्र जन सम्मेलन हुआ जिसमें क्षेत्र के अनेक प्रतिष्ठित जन व विद्वान् लोग पधारे। इस सम्मेलन का उद्देश्य क्षेत्र के व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करके पारस्परिक सहयोग से समाज को शक्तिशाली बनाना है। मन्त्री

बाढ़ पीड़ित रक्षा

आर्य वीर दल, आर्य कुमार सभा तथा आर्य केन्द्रीय सभा रोहतक के सहयोग से श्री दयानन्द मठ रोहतक ने रोहतक नगर से ३१ मन अन्न, २३०० कपड़े, ८७३)॥। एकत्र करके तथा आर्य वीर दल करोल बाग से प्राप्त २४ मन अन्न और ७०० कपडे दिलाकर कुल ३००० कपड़े ५५ मन अन्न तथा ८७३)॥। श्री स्वा० सुरेन्द्रानन्द जी के द्वारा बाढ़ पीड़ितों की सहायना के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को भिजवाये।

शोक प्रस्ताव

आर्य समाज मेरठ ने ६—११—५५ को अपने मान्य नेता श्रीयुत् बा० मोतीलाल जी की मृत्यु पर शोक प्रस्ताव पास किया। स्व० बाबू मोतीलाल जी उक्त आर्य समाज के गौरव थे।

उत्सव

आर्य समाज सोहनगंज दिल्ली का १६ वां वार्षिकोत्सव गत अक्टोबर मास में ससमारोह सम्पन्न हुआ। १ सप्ताह तक पण्डित शिवकुमार जी शास्त्री की वेद-कथा हुई तथा सामवेद यज्ञ भी हुआ। रामकृष्ण भारती, मन्त्री

संस्कार

धर्मार्य सभा के मन्त्री श्रीयुत आचार्य विश्वश्रवाः जी के पुत्र वेदश्रवाः का यज्ञोपवीत संस्कार १६-१०-५५ को श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज के द्वारा बरेली में हुआ। श्री आचार्य देवदत्त शर्मा प्राध्यापक दर्शन शास्त्र क्वींस कालिज बनारस, श्री आचार्य सदानन्द जी शास्त्री बिहार, श्री पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०, पं० जियालाल जी अजमेर, श्री प० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु, आदि महानुभावों ने भाग लिया। संस्कार बड़े रोचक प्रभावशाली और शास्त्रीय ढंग से हुआ।

— — —

तथा ईसाई से पुनः हिन्दू बने हुए चमार हरिजन भाइयों पर झूठा मुकदमा दायर कर दिया है। आठ आदमी नवादा जेल में नजर बन्द हैं और अनेकों पर वारण्ट जारी है। मठगुलनी ग्राम में त्रावनकोर, मद्रास, राँची, हजारी बाग, पटना से पादरी लोगों ने आना शुरू कर दिया है और ये लोग हाथ में बन्दूक लेकर ईसाई से पुनः हिन्दू बने हुए चमार हरिजन भाइयों को धमकाना शुरू कर दिया है। इस बात से यहाँ की जनता में आतङ्क फैला हुआ है।

पादरियों की ओर से प्रचार किया जा रहा है कि आप लोग पुनः ईसाई नहीं बने तो आप लोगों का भी नाम मुकदमे में लिखा देंगे। देखो हमारी ताकत को। इस समय तो आठ ही आदमी जेल में बन्द हैं, किन्तु ईसा मसीह के खिलाफ जो प्रचार करेगा या बोलेगा उसको हम मुकदमे में फंसा देंगे।

नोट—३०८ ईसाई आर्य समाज के पास प्रार्थना पत्र देकर हिन्दू बने हैं और इन ईसाइयों के हिन्दू हो जाने से लगभग इस इलाके में ७००० ईसाई अपने हिन्दू धर्म में मिल गया है।

सरकार से निवेदन है कि इन ईसाइयों के अवैध प्रचार एवं धन का प्रलोभन देकर बनाना और ईसाई से हिन्दू बने हुए चमार हरिजन भाइयों के ऊपर इन ईसाई पादरियों की धांधली एवं अत्याचार को रोके।

निवेदकः—
प्रधान मन्त्री, गोविन्दप्रसाद
हिन्दू संस्कृति संरक्षण संघ,
नवादा सबडीविजनल (गया)

— — — —

विदित हुआ है कि १० आर्य समाजियों की जमानत स्वीकृत हो गई है। - सम्पादक

सार्वदेशिक पत्र (हिन्दी मासिक)

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश १० शिलिङ्ग। अर्द्ध वार्षिक ३) स्वदेश, ६ शिलिङ्ग विदेश।

२. एक प्रति का मूल्य ॥ स्वदेश, ॥=) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क वा नमूने की प्रति का मूल्य ॥=) स्वदेश, ॥।) विदेश।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये। चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा। पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने वा ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न देने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है कि उनकी इच्छा वी० पी० द्वारा चन्दा देने की है।

४. सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख को प्रकाशित होता है। किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय में अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा। डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं। अत: समस्त ग्राहकों को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये।

५. सार्वदेशिक का वर्ष १ मार्च से प्रारंभ होता है अंक उपलब्ध होने पर बीच वर्ष में भी ग्राहक बनाए जा सकते हैं।

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
६. पूरा पृष्ठ (२० × ३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा " "	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई ,,	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	२०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

७ सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

—व्यवस्थापक

'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली—से प्रकाशित।